आवश्यक सूचनायें

(१) हमने प्रथम खण्ड की समाप्ति पर उसके साथ एक महाभारत-कालीन भारतवर्ष का प्रामाणिक सुन्दर मानचित्र भी देने की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में हम ग्राहकों को सूचित करते हैं कि पूरा महाभारत समाप्त हो जाने पर हम प्रत्येक ग्राहक को एक परिशिष्ट अध्याय बिना मूल्य भेजेंगे जिसमें महाभारत-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण खोज, साहित्यिक आलोचना, चरित्र-चित्रण तथा विश्लेषण आदि रहेगा। उसी परिशिष्ट के साथ ही मानचित्र भी लगा रहेगा जिसमें पाठकों को मानचित्र देख कर उपरोक्त बातें पढ़ने और समझने आदि में पूरी सुविधा रहे।

(२) महाभारत के प्रेमी ग्राहकों को यह शुभ समाचार सुन कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हमने कानपुर, उन्नाव, काशी (रामनगर), कलकत्ता, ग़ाज़ीपुर, बरेली, मथुरा (वृन्दावन), जोधपुर, बुलन्दशहर, प्रयाग और लाहौर आदि में ग्राहकों के घर पर ही महाभारत के अङ्क पहुँचाने का प्रबन्ध किया है। अब तक ग्राहकों के पास यहीं से सीधे डाक-द्वारा प्रतिमास अङ्क भेजे जाते थे जिसमें प्रति अङ्क तीन चार आना खर्च होता था पर अब हमारा नियुक्त किया हुआ एजेंट ग्राहकों के पास घर पर जाकर अङ्क पहुँचाया करेगा और अङ्क का मूल्य भी ग्राहकों से वसूल कर ठीक समय पर हमारे यहाँ भेजता रहेगा। इस अवस्था पर ग्राहकों को ठीक समय पर प्रत्येक अङ्क सुरक्षित रूप में मिल जाया करेगा और वे डाक, रजिस्टरी तथा मनीआर्डर इत्यादि के व्यय से बच जायँगे। इस प्रकार उन्हें प्रत्येक अङ्क केवल एक रुपया मासिक देने पर घर बैठे मिल जाया करेगा। यथेष्ट ग्राहक मिलने पर अन्य नगरों में भी शीघ्र ही इसी प्रकार का प्रबन्ध किया जायगा। आशा है जिन स्थानों में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है, वहाँ के महाभारतप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अधिक संख्या में ग्राहक बन कर इस अवसर से लाभ उठावेंगे। और जहाँ इस प्रकार की व्यवस्था हो चुकी है वहाँ के ग्राहकों के पास जब एजेंट अङ्क लेकर पहुँचे तो ग्राहकों को रुपया देकर अङ्क ठीक समय पर ले लेना चाहिए जिसमें उन्हें ग्राहकों के पास बार बार आने जाने का कष्ट न उठाना पड़े। यदि किसी कारण उस समय ग्राहक मूल्य देने में असमर्थ हों तो अपनी सुविधानुसार एजेंट के पास से जाकर अङ्क ले आने की कृपा किया करें।

(३) हम हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जनों से एक सहायता की प्रार्थना करते हैं। वह यही कि हम जिस विराट् आयोजन में संलग्न हुए हैं आप लोग भी कृपया इस पुण्य-पर्व में सम्मिलित होकर पुण्य-सञ्चय कीजिए, अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी का साहित्य-भाण्डार पूर्ण करने में सहायक हूजिए और इस प्रकार सर्वसाधारण का हित-साधन करने का उद्योग कीजिए। सिर्फ़ इतना ही करें कि अपने दस-पाँच हिन्दी-प्रेमी इष्ट-मित्रों में से कम से कम दो स्थायी ग्राहक इस वेद-तुल्य सर्वाङ्गसुन्दर महाभारत के और बना देने की कृपा करें। जिन पुस्तकालयों में हिन्दी की पहुँच हो वहाँ इसे ज़रूर मँगवावें। एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न रह जाय जिसके घर यह पवित्र ग्रन्थ न पहुँचे। आप सब लोगों के इस प्रकार साहाय्य करने से ही यह कार्य्य अग्रसर होकर समाज का हितसाधन करने में समर्थ होगा।

—प्रकाशक

विषय-सूची

सैन्यनिर्याणपर्व

रङ्गीन चित्रों की सूची

गालव के साथ गरुड़ का ऋषभ पहाड़ की चोटी पर उतरना—पृ० १७१६

एक सौ तेरह अध्याय

शाण्डिली ब्राह्मणी से भेंट

नारदजी कहते हैं—इसके बाद गालव के साथ गरुड़ ऋषभ पहाड़ की चोटी पर उतरे। वहाँ उन्हें तपस्या में लगी हुई शाण्डिली नाम की ब्राह्मणी देख पड़ी। गरुड़ और गालव ने उस ब्राह्मणी से यथोचित सम्भाषण कर उसका पूजन किया। ब्राह्मणी ने स्वागत और कुशल-प्रश्न करके उन्हें बैठने के लिए आसन दिया। जब दोनों जने बैठ गये तब ब्राह्मणी ने उन्हें भोजन के लिए बलि-मन्त्र से पवित्र अन्न दिया। उस अन्न से तृप्त और अचेत से होकर गालव और गरुड़ दोनों सो रहे। जागकर चलते समय गरुड़ ने देखा कि उनके पङ्ख झड़ गये हैं और वे मुख-चरण-युक्त मांस के लोंदे के समान हो गये हैं। गरुड़ की यह दशा देखकर महर्षि गालव बहुत खिन्न हुए। उन्होंने पूछा—हे पक्षिराज गरुड़, यहाँ आने से तुम्हारी यह कैसी दशा हो गई?

हम यहाँ, इसी दशा में, कब तक रहेंगे? तुमने कोई अशुभ अधर्म सोचा होगा, और वह तुम्हारा पाप थोड़ा नहीं होगा, जिसका यह फल तुम्हें मिला है।

गरुड़ ने कहा—हे विप्र, मैंने सिद्धावस्था को पहुँची हुई इन ब्राह्मणी को यहाँ से प्रजापति के पास ले जाने की इच्छा की थी। मैंने सोचा था कि ये भगवान् शङ्कर, सनातन विष्णु, धर्म और यज्ञ के पास रहें। अब इन देवी को प्रणाम और प्रार्थना से सन्तुष्ट करना मेरा कर्तव्य है। फिर गरुड़ ने ब्राह्मणी से कहा—देवी, मैंने मोहवश आपकी इच्छा के विरुद्ध काम करना चाहा था, यह मेरा बड़ा भारी अपराध है। आप अपने माहात्म्य का विचार करके मुझे क्षमा कर दें। ११

गरुड़ के अनुनय-विनय के वचनों से सन्तुष्ट होकर शाण्डिली ने कहा—हे गरुड़, तुम डरो नहीं। तुम्हें पहले से भी अच्छे पङ्ख मिलेंगे। हे वत्स, मैं निन्दा नहीं सह सकती। तुमने मेरी निन्दा की थी, उसी का यह फल तुम्हें भोगना पड़ा। जो पापी मेरी निन्दा करता है वह

पुण्यलोक से भ्रष्ट हो जाता है। मैंने सब अशुभ लक्षणों को छोड़कर और सदाचार में लगी रहकर यह उत्तम सिद्धि पाई है। सदाचार से धर्म, धन और ऐश्वर्य मिलता है और सब प्रकार के अशुभ नष्ट होते हैं। अब तुम अपनी इच्छा के अनुसार जाओ। स्त्रियाँ जो निन्दा के योग्य हों तो भी उनकी निन्दा न करनी चाहिए। तुम्हें फिर पहले का बल-वीर्य मिल जायगा। शाण्डिली के यों कहते ही गरुड़ का रूप और बल पहले का सा हो गया। अब वे शाण्डिली से विदा होकर फिर श्यामकर्ण घोड़ों की खोज में घूमने लगे किन्तु उन्हें कहीं सफलता नहीं प्राप्त हुई।

इसी बीच में, राह में, गालव और गरुड़ को महर्षि विश्वामित्र मिल गये। वे गरुड़ के सामने ही गालव से कहने लगे—हे शिष्य, तुमने अपने आप मुझे जो गुरु-दक्षिणा देने का वादा किया था उसके देने का समय आ गया। वादे से अब तक जितना १० समय बीता है उतना ही अवसर मैं तुमको और देता हूँ। तुम उतने घोड़े लाने का यत्न करो।

पक्षिराज ने बहुत ही दीन और दुःखित होकर कहा—हे ब्राह्मण, विश्वामित्र ने जो कहा सो मैंने भी सुना। अब वह यत्न सोचना चाहिए जिसमें जल्दी से घोड़े मिल जायँ। गुरु १३ को देने के लिए स्वीकृत पदार्थ दिये बिना निश्चिन्त रहना ठीक नहीं।

एक सौ चौदह अध्याय

गरुड़ और गालव का ययाति राजा के पास जाकर धन माँगना

गरुड़ ने कहा—हे तपोधन, भूगर्भ के कण अग्नि से शुद्ध और वायु से परिवर्द्धित होते हैं। वे ही सुवर्ण हैं। हितकारी और रमणीय होने के कारण वह हिरण्य कहलाता है। इस जगत् में हिरण्य ही प्रधान है, इसी से जगत् को हिरण्मय कहते हैं। उस हिरण्य से सबका निर्वाह होता है, इसी से उसका नाम धन है। वह धन त्रिभुवन में, पूर्वाभाद्रपद और उत्तरा-

भाद्रपद नक्षत्रों में शुक्रवार का योग होने पर मिल सकता है। सुवर्ण अग्नि में और कुबेर के पास है। हिरण्यरेता अग्नि अपने सङ्कल्प से सिद्ध धन मनुष्यों को देते हैं। अजैकपात्, अहिर्बुध्न्य और कुबेर उस धन की रक्षा करते हैं। इसलिए हे द्विजश्रेष्ठ, धन प्राप्त करना किसी के लिए सहज नहीं है। धन के बिना तुम्हें श्यामकर्ण घोड़े मिलने की भी सम्भावना नहीं। प्रजा को सताये बिना जो राजा हमें धन दे सकता हो उसी के पास चलकर धन माँगना चाहिए। चन्द्रवंशी नहुष राजा के पुत्र ययाति मेरे सखा हैं। राजा ययाति पृथ्वी पर धनपति कुबेर के समान ऐश्वर्यशाली हैं। चलो, हम उनके पास चलें। मैं स्वयं उनसे तुम्हारे लिए धन माँगूँगा। वे अवश्य हमारी आशा पूरी कर सकेंगे। उनसे धन पाकर तुम गुरु-दक्षिणा दे देना।

यों सलाह करके गरुड़ और गालव राजा ययाति के पास गये। महात्मा ययाति ने पाद्य, अर्घ्य आदि से यथोचित सत्कार करके उनसे आने का कारण पूछा। गरुड़ ने कहा—राजन्, ये तपस्वी गालव मेरे प्रिय सखा हैं। इन्होंने हज़ारों वर्ष तक महर्षि विश्वामित्र से विद्या पढ़ी है। उन्होंने जब इनसे घर जाने के लिए कहा तब इन्होंने उन्हें गुरु-दक्षिणा देने का आग्रह किया। विश्वामित्र ने कई बार कहा कि गुरु-दक्षिणा की कोई ज़रूरत नहीं, तुम जाओ; किन्तु इन्होंने न माना। इनके बहुत हठ करने पर विश्वामित्र कुपित हो उठे। उन्होंने ऐश्वर्यहीन निर्धन जानकर भी इनसे गुरु-दक्षिणा में सफ़ेद रङ्ग के, काले कानवाले, आठ सौ घोड़े माँगे। उनकी आज्ञा का पालन करने में असमर्थ होकर ये दुःख के मारे मेरी शरण में आये हैं। अब ये आपसे भिक्षा लेकर गुरु-दक्षिणा देने की आशा से यहाँ आये हैं। हे राजर्षि, आप इनको अभीष्ट भिक्षा देंगे तो ये भी अपने तप का कुछ अंश देकर आपके तप को बढ़ावेंगे। घोड़े के शरीर में जितने रोएँ होते हैं उतने ही पुण्यलोक घोड़ा दान करनेवाले को मिलते हैं। ये ब्राह्मण लेने के योग्य पात्र हैं और आप भी देने के योग्य पात्र हैं। इसलिए इन्हें अभीष्ट धन देकर आप अपने योग्य कार्य कीजिए। २०

एक सौ पन्द्रह अध्याय

ययाति का गालव को अपनी माधवी नाम की कन्या देना

नारदजी ने कहा—राजन्, हज़ार यज्ञ करनेवाले सर्वकाशीश महाराज ययाति ने गरुड़ के युक्तियुक्त वचन सुनकर सोचा कि प्रिय सखा गरुड़ और ब्राह्मणश्रेष्ठ गालव आकर मुझसे याचना कर रहे हैं, यह बड़े सौभाग्य की बात है। भिक्षा देना यों भी बड़ी बात है। ये लोग सूर्यवंशी राजाओं को छोड़कर मेरे पास आये हैं। अब ययाति ने गरुड़ से कहा—हे पक्षिराज, आपके द्वारा इस समय मेरा जन्म सफल और देश तथा कुल पवित्र हो गया। हे निष्पाप,

इस समय यद्यपि मेरे पास पहले की सी सम्पत्ति नहीं रही है तो भी मैं आपकी आशा को व्यर्थ नहीं कर सकता। मैं आपको ऐसी कोई वस्तु दूँगा, जिससे आपकी इच्छा पूरी होगी। भिक्षा माँगनेवाला भिक्षा माँग करके जिसके यहाँ से विमुख चला जाता है उसका सारा कुल भस्म हो जाता है। प्रार्थी को निराश करने से बढ़कर कोई पातक नहीं है। प्रार्थी हताश १० होकर लौट जाता है तो निराश करनेवाले के पुत्र-पौत्र आदि मर जाते हैं। इसलिए आप धर्म में रुचि रखनेवाली मेरी इस कन्या को ग्रहण करें। देव, दानव, मनुष्य आदि इसके रूप पर मुग्ध होकर इसे पाने की प्रार्थना करते हैं। इस देवकन्या जैसी कन्या का नाम माधवी है। इससे चार वंश चलेंगे। जो राजा लोग इसे पावें तो श्यामकर्ण आठ सौ घोड़ों की कौन कहे, अपना सारा राज्य तक देने को तैयार हो जायँ। इसलिए आप इस कन्या को ले जायँ। इसके गर्भ से उत्पन्न पुत्र मेरा नाती होगा। इसके सिवा मुझे दूसरी इच्छा नहीं है।

तब तपस्वी गालव माधवी को लेकर और गरुड़ से 'मैं फिर तुमसे मिलूँगा' कहकर वहाँ से चल दिये। गरुड़ भी गालव के घोड़े पाने का उपाय करके अपने भवन को चले गये। उनके चले जाने पर गालव उस कन्या को लेकर सोचने लगे कि यह कन्या किसे दूँ जिससे मेरा मनोरथ सिद्ध हो। अन्त को उन्होंने निश्चय किया कि अयोध्या के राजा, इक्ष्वाकुवंशी हर्यश्व बड़े बली, धर्मात्मा, पराक्रमी, चतुरङ्गिणी सेना रखनेवाले, ऐश्वर्यशाली, प्रजावत्सल, पुरवासियों और ब्राह्मणों को प्रिय हैं। पुत्र पाने के लिए वे श्रेष्ठ तप भी कर रहे हैं। उनके यहाँ जाने से मेरा मनोरथ पूरा हो जायगा। यह निश्चय करके तपस्वी गालव राजा हर्यश्व के पास गये। वहाँ जाकर उन्होंने राजा से कहा—हे राजेन्द्र, मेरी यह कन्या आपका वंश बढ़ावेगी। आप शुल्क (मूल्य) देकर इसको स्त्री-रूप से ग्रहण कीजिए। इसे ग्रहण करने २१ से जो शुल्क देना पड़ेगा वह मैं कहता हूँ—सुनिए।

एक सौ सोलह अध्याय

गालव का हर्यश्व राजा से दो सौ घोड़े पाना

नारदजी कहते हैं कि कोई सन्तान न होने के कारण राजा हर्यश्व को बड़ी चिन्ता थी। वे कुछ देर सोचकर, लम्बी साँस लेकर, गालव से कहने लगे—हे द्विजश्रेष्ठ! देवता, गन्धर्व आदि भी इस परम सुन्दरी कन्या को अपनी भार्या बनाने के लिए लालायित होंगे। इस लोक-सुन्दरी रमणी के हाथों और पैरों की पीठ, स्तन, नितम्ब, कपोल और नेत्र ऊँचे हैं। कमर, केश, दाँत, हाथों और पैरों की उँगलियाँ पतली हैं। स्वर, नाभि और स्वभाव गम्भीर है। हथेली, नेत्रों के कोए, तालु, जीभ और ओठ लाल हैं। इन सब सुलक्षणों से सूचित होता है

कि इसके गर्भ से उत्पन्न बालक चक्रवर्त्ती राजा होगा। इसलिए आप मेरी सम्पत्ति का ख़याल करके इसका शुल्क बताइए।

गालव ने कहा—महाराज! चन्द्रमा के समान सफ़ेद रङ्ग के, सर्वाङ्गसुन्दर और एक कान के काले आठ सौ घोड़े इस कन्या का शुल्क हैं। जैसे वन से आग उत्पन्न होती है वैसे ही इसके गर्भ से आपके बहुत पुत्र उत्पन्न होंगे।

अब काम-मोहित राजा हर्यश्व ने गालव के वचन सुनकर नम्रता के साथ कहा—हे ऋषिश्रेष्ठ, आपके मतलब के दो सौ श्यामकर्ण घोड़े मेरे यहाँ हैं। उनके सिवा और तरह के हज़ारों घोड़े हैं। मैं वे दो सौ घोड़े देकर इस रमणी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न करना चाहता हूँ। आप मेरी यह प्रार्थना स्वीकार कीजिए।

उस सुन्दरी कन्या ने गालव से कहा—भगवन्, एक ब्रह्मचारी मुझे यह वर दे गये हैं कि 'तुम प्रसव के बाद फिर कन्या हो जाओगी'। इसलिए आप ये दो सौ घोड़े लेकर मुझे राजा को दे दीजिए। इस तरह आप चार राजाओं से आठ सौ घोड़े पा जायँगे और मेरे भी चार पुत्र उत्पन्न होंगे। यह सुनकर महर्षि गालव ने कहा—राजन्, इस कन्या को लेकर शुल्क का चतुर्थांश मुझे दीजिए और इस सुन्दरी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न कर लीजिए। १०

राजा हर्यश्व ने गालव ऋषि का अभिनन्दन किया। घोड़े देकर यथासमय उन्होंने माधवी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न किया। उस पुत्र का नाम वसुमना हुआ। कुछ दिनों बाद वही वसुप्रद वसुमना अयोध्या की गद्दी पर बैठे।

इसके बाद गालव मुनि ने फिर हर्यश्व के पास जाकर कहा—राजन, आप सूर्यतुल्य तेजस्वी एक पुत्र प्राप्त कर चुके। अब मैं भी और घोड़ों के लिए यह कन्या लेकर अन्य राजाओं के पास जाना चाहता हूँ। इसलिए माधवी को मेरे साथ कर दीजिए।

पौरुषशाली राजा हर्यश्व ने सत्य का पालन करके मुनि को माधवी लौटा दी; क्योंकि वैसे घोड़े और मिल नहीं सकते थे। माधवी अपनी इच्छा से उत्तम राज्यलक्ष्मी छोड़कर, कुमारीभाव धारण करके, गालव के साथ चलीं। गालव मुनि धरोहर के तौर पर अपने दो सौ घोड़े राजा हर्यश्व के पास ही छोड़कर महाराज दिवोदास के यहाँ गये। २० २२

एक सौ सत्रह अध्याय

गालव का दिवोदास राजा से दो सौ घोड़े पाना

महर्षि गालव ने माधवी से कहा—भद्रे, महावीर भीमसेन के पुत्र दिवोदास काशी के राजा हैं। मैं तुमको अब उन्हीं के पास लिये चलता हूँ। तुम कुछ शोक न करो, धीरे-धीरे

मेरे साथ चली आओ। वे राजा बड़े धर्मात्मा, संयमी और सत्यवादी हैं। नारदजी कहते हैं कि अब महर्षि गालव राजा दिवोदास के पास पहुँचे। राजा ने उनका यथोचित सत्कार किया। तब गालव ने उनसे, पुत्र उत्पन्न करने के लिए, माधवी को ग्रहण करने का अनुरोध किया।

दिवोदास ने कहा—हे द्विजवर, आपको अधिक कुछ न कहना पड़ेगा, मुझे पहले से ही सब हाल मालूम है; मैं तो इस सुन्दरी को प्राप्त करने के लिए उत्सुक हूँ। आप अन्य राजाओं को छोड़कर मेरे पास आये हैं, यह मेरे लिए बड़े गौरव की बात है। इसे भावी ही कहना चाहिए। किन्तु, मेरे पास भी आपके मतलब के केवल दो सौ घोड़े हैं। मैं वे घोड़े देकर इस सुन्दरी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न करूँगा। गालव ने राजा का कहा मान करके माधवी उन्हें दे दी।

महाराज दिवोदास ने विधिपूर्वक माधवी को ग्रहण किया। जैसे प्रभावती को सूर्य, स्वाहा को अग्नि, इन्द्राणी को इन्द्र, रोहिणी को चन्द्र, उर्मिला को यमराज, गौरी को वरुण, १० ऋद्धि को कुबेर, लक्ष्मी को नारायण, गङ्गा को सागर, रुद्राणी को रुद्र, सरस्वती को ब्रह्मा, अदृश्यन्ती को वशिष्ठ के पुत्र, अक्षमाला को वशिष्ठ, सुकन्या को च्यवन, सन्ध्या को पुलस्त्य, वैदर्भी को अगस्त्य, सावित्री को सत्यवान्, पुलोमा को भृगु, अदिति को कश्यप, रेणुका को यमदग्नि, हैमवती को कौशिक, तारा को बृहस्पति, शतपर्वा को शुक्र, भूमि को भूमिपति, उर्वशी को पुरूरवा, सत्यवती को ऋचीक, सरस्वती को मनु, शकुन्तला को दुष्यन्त, धृति को धर्म, दमयन्ती को नल, सत्यवती को नारद, जरत्कारु को जरत्कारु, प्रतीची को पुलस्त्य, मेनका को ऊर्णायु, रम्भा को तुम्बुरु, शतशीर्षा को वासुकि, कुमारी को धनञ्जय, जानकी को राम और रुक्मिणी को कृष्णचन्द्र प्रिय हैं वैसे ही माधवी को दिवोदास प्रिय थे। कुछ समय के बाद माधवी के गर्भ से दिवोदास के एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम हुआ प्रतर्दन।

अब महर्षि गालव ने राजा दिवोदास के पास आकर कहा—राजन्, मेरी कन्या मुझे लौटा दीजिए। आपके दिये हुए मेरे घोड़े अभी आपके ही पास रहेंगे। मुझे अभी और घोड़ों के लिए अन्य राजाओं के पास जाना है। सत्यपरायण धर्मशील राजा ने २१ समय देखकर गालव मुनि को वह कन्या फेर दी।

एक सौ अठारह अध्याय

गालव का उशीनर नरेश से दो सौ घोड़े पाना

नारदजी कहते हैं—सत्यवादिनी यशस्विनी माधवी फिर कन्या होकर, वह राज्यलक्ष्मी छोड़कर, गालव के साथ चलीं। अपना कार्य सिद्ध करने के लिए चिन्तित गालव ऋषि भोज

नगर में उशीनर राजा के पास गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने सत्यपरायण राजा उशीनर से कहा—राजन्, मेरी इस कन्या के गर्भ से आपके चन्द्र-सूर्य के समान तेजस्वी दो पुत्र उत्पन्न होंगे। वे आपको इस लोक और परलोक में कृतार्थ करेंगे। इस कन्या का शुल्क आपको चार सौ श्यामकर्ण सफ़ेद घोड़े देने पड़ेंगे। महाराज, मैं गुरु-दक्षिणा देने के लिए यह यत्न कर रहा हूँ; नहीं तो घोड़ों की मुझे कोई ज़रूरत न थी। जो आप चार सौ श्यामकर्ण घोड़े मुझे दे सकते हों तो शीघ्र इस कन्या को ले लीजिए। आपके कोई पुत्र नहीं है। इसके गर्भ से उत्पन्न दोनों पुत्र आपके पितरों को और आपको तार देंगे। हे राजर्षि, जिसके पुत्र हैं वह कभी स्वर्ग से भ्रष्ट नहीं होता। उसे पुत्र-हीन पुरुष की तरह कभी नरक नहीं भोगना पड़ता।

गालव के वचन सुनकर राजा उशीनर ने कहा—हे गालव, आपकी बातें मैंने सुनीं। इस सुन्दरी को पाने के लिए मैं भी बहुत उत्कण्ठित हो रहा हूँ। हे द्विजश्रेष्ठ, आपके मतलब के केवल दो सौ घोड़े मेरे घर में हैं। मैं इस रमणी के गर्भ से केवल एक पुत्र उत्पन्न करके सज्जनों की राह पर चलूँगा। आप भी इसका उचित शुल्क मुझसे ले लीजिए। हे ब्रह्मन्, मेरे पास जो धन-सम्पत्ति है वह अपने भोग के लिए नहीं, पुरवासी और जनपदवासी लोगों के लिए ही सञ्चित है। जो राजा प्रजा के धन को लेकर अपनी इच्छा के अनुसार ख़र्च करता है, वह कभी धर्म और यश पाने का अधिकारी नहीं हो सकता। इससे आप मुझे केवल एक पुत्र उत्पन्न करने के लिए यह देवकन्या सी सुन्दरी दे दीजिए। राजा के वचनों से सन्तुष्ट होकर गालव ने वह कन्या राजा को दे दी। फिर वे वन को चले गये। जैसे पुण्यात्मा लोग श्रेष्ठ ऐश्वर्य पाकर बड़े सुख से समय बिताते हैं वैसे ही राजा उशीनर ययाति की कन्या माधवी को लेकर कभी पर्वत-कन्दराओं में, कभी नदियों के झरनों में, कभी विमानों में, कभी अन्तःपुर में, कभी विचित्र उद्यानों में, कभी वन में, कभी उपवन में, कभी महलों में, कभी महलों की छतों पर और कभी झरोखों तथा तहख़ानों में विचरते हुए सुख भोगने लगे। यथासमय

राजा उशीनर के, माधवी के गर्भ से, एक सूर्य-सदृश तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। वही कुमार प्रसिद्ध शरणागतरक्षक महाराज शिवि हुए। समय पर महर्षि गालव फिर राजा उशीनर
२१ के पास आये और उनसे माधवी को लेकर गरुड़ से मिले।

एक सौ उन्नीस अध्याय

शेष दो सौ घोड़ों के बदले में विश्वामित्र का माधवी को ग्रहण करना

नारदजी कहते हैं कि तब गरुड़ ने हँसकर गालव मुनि से कहा—हे गालव, बड़े भाग्य की बात है कि आज मैं तुमको कृतकार्य देख रहा हूँ।

गालव मुनि ने कहा—मित्र, अभी तक पूरे आठ सौ घोड़े नहीं मिले। दो सौ की अभी कमी है। बताओ, उनके लिए क्या करना चाहिए?

तब गरुड़ ने कहा—हे गालव, अब शेष दो सौ घोड़े प्राप्त करने के लिए यत्न करने की कोई ज़रूरत नहीं। और घोड़े अब मिल भी नहीं सकते। पूर्व-समय में ऋचीक ऋषि ने कान्यकुब्ज देश के राजा से उनकी 'सत्यवती' कन्या को अपनी स्त्री बनाने के लिए माँगा था। राजा ने कन्या का शुल्क ऐसे ही श्यामकर्ण हज़ार घोड़े उनसे माँगे थे। ऋचीक तथास्तु कहकर वरुण के भवन में गये और वहाँ के अश्वतीर्थ से वैसे हज़ार घोड़े लेकर राजा गाधि के पास आये। उन्होंने वे हज़ार घोड़े राजा को दे दिये। गाधि राजा ने पुण्डरीकाक्ष यज्ञ का अनुष्ठान करके वे घोड़े ब्राह्मणों को दे दिये। आप तीन राजाओं से जो छः सौ घोड़े लाये हैं, वे घोड़े दो-दो सौ करके उन्होंने उन्हीं ब्राह्मणों से मोल लिये थे। बाक़ी चार सौ घोड़े वितस्ता नदी पार होते समय जल में डूब गये थे। आपको अब किसी तरह वे घोड़े नहीं मिल सकते। इसलिए महर्षि विश्वामित्र को शेष दो सौ घोड़ों के बदले यही कन्या दे दीजिए। तब आपकी
१० सब चिन्ता दूर हो जायगी और आप कृतकार्य हो जायँगे।

गरुड़ के वचन सुनकर महर्षि गालव, वह कन्या लेकर उनके साथ, विश्वामित्र के आश्रम में गये। छः सौ श्यामकर्ण घोड़े और वह कन्या देकर गालव मुनि ने विश्वामित्र से कहा—गुरुजी! आप ये छः सौ घोड़े और, दो सौ घोड़ों के बदले में, यह कन्या ले लीजिए। तीन राजर्षि इस कन्या से तीन परम धार्मिक पुत्र उत्पन्न कर चुके हैं। अब आप इसके गर्भ से एक श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न कीजिए।

गालव, गरुड़ और माधवी को देखकर विश्वामित्र ने कहा—हे गालव, तुमने पहले ही यह कन्या मुझको क्यों नहीं दे दी? कुल को पवित्र करनेवाले चार पुत्र इससे पाकर मैं अपने

को कृतार्थ करता। ख़ैर, मैं इस समय एक पुत्र पाने के लिए इसे ग्रहण करता हूँ। ये सब घोड़े छोड़ दो, मेरे आश्रम में चारों ओर विचरें। महातेजस्वी विश्वामित्र ने इस तरह माधवी को ग्रहण किया। यथासमय माधवी के गर्भ से उनके, अष्टक नाम से प्रसिद्ध, एक महायशस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। विश्वामित्र मुनि ने उत्पन्न होते ही उस बालक को धर्म-अर्थ की शिक्षा देकर वे घोड़े दे दिये। फिर वे माधवी को गालव के पास छोड़कर वन को चले गये। महाप्रतापी अष्टक चन्द्रलोक के समान शोभाशाली अपने पुर में जाकर प्रजा का पालन करने लगे। २०

ऋषिश्रेष्ठ गालव, गरुड़ की सहायता से, इस तरह गुरु-दक्षिणा देकर बहुत प्रसन्न हुए। फिर उन्होंने माधवी से कहा—हे सुन्दरी! तुम्हारे गर्भ से एक दाता, एक शूर, एक सत्यवादी और एक याज्ञिक, चार पुत्र उत्पन्न हुए हैं। तुमने उन पुत्रों से अपने पिता की, चार पतियों की और मेरी रक्षा की। अब तुम अपने पिता के पास जाओ। अब वह कन्या राजा ययाति को सौंपकर और गरुड़ से विदा होकर महामुनि गालव वन को चल दिये। २४

एक सौ बीस अध्याय

राजा ययाति का स्वर्ग से गिरना

नारदजी कहते हैं—राजा ययाति अपनी कन्या का स्वयंवर करने के लिए उसे बढ़िया माला-कपड़े-गहने आदि से सजा करके बढ़िया रथ में बिठाकर गङ्गा-यमुना के सङ्गम पर स्थित आश्रम में लाये। पुरु और यदु अपनी बहन के साथ उक्त आश्रम में आये। स्वयंवर की ख़बर पाकर अनेक देश, पर्वत, वन आदि स्थानों से बहुत से मनुष्य, नाग, यक्ष, गन्धर्व, मृग और पक्षी उस आश्रम में आकर जमा हुए। बहुतेरे राजाओं और ब्रह्मतुल्य महर्षियों से वह आश्रम भर गया। किन्तु सुन्दरी माधवी ने वहाँ असंख्य योग्य पात्र रहने पर भी उन्हें छोड़कर वन को पतिरूप से स्वीकार किया। वे रथ से उतरकर, बन्धुओं को प्रणाम करके, वन में चली गईं और वहाँ तपस्या करने लगीं। क्रमशः बहुत से उपवास, दीक्षा और नियमों के द्वारा राग-द्वेष आदि दूर करके उन्होंने मन को एकाग्र किया। वैदूर्य मणि के अंकुर सी श्याम, कोमल, तीखी और मीठी घास खाकर और झरनों का पवित्र निर्मल शीतल जल पीकर, बाघ आदि हिंसक जीवों से रहित, दावानल-हीन, निर्जन वन में हरिणों के साथ हरिणी की तरह भ्रमण करती हुई माधवी ब्रह्मचर्य के द्वारा श्रेष्ठ धर्म का उपार्जन करने लगीं। ११

इधर राजा ययाति भी अपने पुरखों के ढङ्ग पर राज्यशासन करके कई हज़ार वर्ष के बाद परलोकवासी हुए। पुरु और यदु से महाराज ययाति के दो वंश चले, जिनसे पृथ्वी-

मण्डल परिपूर्ण हो गया। महर्षि-तुल्य राजा ययाति परलोक में प्रतिष्ठा के साथ स्वर्ग के भोग भोगने लगे। इसी तरह बहुत वर्ष बीतने पर एक समय ययाति ने राजर्षियों और महर्षियों के सामने मूढ़ की तरह देवताओं, ऋषियों और मनुष्यों का अपमान किया। यह जानकर इन्द्र और सब राजर्षि ययाति को धिक्कार देने लगे। अब ययाति के बारे में उस महासभा में विचार होने लगा। सब लोग कहने लगे—यह व्यक्ति कौन है? किस वंश में उत्पन्न है? किस तरह, किस कर्म के फल से, यहाँ आया है? यह व्यक्ति किस पुण्य से इस सिद्धि को पहुँचा है? इस देवपुरी में कैसे इसका परिचय मिलेगा? कौन इसे जानता है? स्वर्ग के निवासी लोग
२० इसी तरह राजा ययाति के बारे में विचार करते हुए परस्पर पूछने लगे। सैकड़ों विमानपालक, स्वर्गद्वाररक्षक और आसनपाल आदि से ययाति के बारे में पूछा गया। सबने कहा—हम नहीं जानते। सबका ज्ञान कुण्ठित हो गया। कोई भी राजा ययाति को नहीं जान सका।
२२ घड़ी भर में राजा ययाति का तेज फीका पड़ गया।

एक सौ इक्कीस अध्याय

ययाति का स्वर्ग से नैमिषारण्य में, अपने नातियों के बीच, गिरना

नारदजी कहते हैं—स्वर्गवासी लोगों के द्वारा न पहचाने जाने पर राजा ययाति उसी समय शोकविह्वल होकर अपने स्थान से भ्रष्ट हो गये। उनका हृदय धड़कने लगा। उनको ज्ञान न रहा। उनके गले की दिव्य माला सूख गई। कपड़े और मुकुट, अङ्गद आदि सब गहने शरीर से गिर पड़े। देवगण कभी तो उनको देख पड़ते थे, और कभी नहीं देख पड़ते थे। वे अदृश्य होकर उदासी से पृथ्वी की ओर देखकर सोचने लगे कि मैंने अपने मन में कौन ऐसा अधर्म सोचा है, जिसके कारण मुझे स्वर्ग से भ्रष्ट होना पड़ा। उसी समय स्वर्गनिवासी राजा, अप्सरा और सिद्ध आदि ने देखा कि राजा ययाति स्वर्ग से भ्रष्ट हो रहे हैं।

पुण्य क्षीण होने पर लोगों को पृथ्वी पर गिराने के लिए जो देवदूत नियुक्त हैं, उनमें से एक ने इन्द्र की आज्ञा के अनुसार ययाति से कहा—राजन्, तुम अत्यन्त घमण्डी हो। तुमने सबका अनादर किया, इसी से तुम्हारा पुण्य क्षीण हो गया और स्वर्गभोग भी समाप्त हो गया। तुम स्वर्ग में रहने योग्य नहीं हो। यहाँ तुम्हें कोई पहचानता भी नहीं। इसलिए इसी दम पृथ्वी पर जाओ। गिरते समय ययाति ने तीन बार पुकारकर कहा—"मैं सज्जनों की मण्डली के बीच गिरूँ।" अब अपनी गति के बारे में सोचते हुए राजा ययाति ने नैमिषारण्य में
१० यज्ञ कर रहे अपने नाती प्रसिद्ध राजा प्रतर्दन, वसुमना, शिवि और अष्टक को देखा। ये

राजा ययाति का अपनी कन्या को स्वयंवर के लिए लाना—पृ० १७२७

राजा ययाति का स्वर्ग-लोक को जाना—पृ० १७३१

ा
ाय में
खा। ये

लोकपाल-सदृश राजा, इन्द्र की प्रसन्नता के लिए, वाजपेय यज्ञ कर रहे थे। यज्ञ-कुण्ड से उठा हुआ धुआँ स्वर्ग के द्वार तक पहुँचकर धुएँ की नदी या स्वर्ग से पृथ्वी पर गिरनेवाली मन्दाकिनी की धारा के समान जान पड़ता था। महाराज नहुष के पुत्र ययाति वह परम पवित्र यज्ञ का धुआँ सूँघकर, उसी के सहारे, उक्त चारों राजाओं के बीच में गिरे।

प्रतर्दन आदि नरपतियों ने अपने नाना ययाति को देखकर पूछा—हे महात्मा; आप कौन हैं? किसके भाई या पुत्र हैं? किस देश या नगर से यहाँ आये हैं? हमें आप मनुष्य नहीं जान पड़ते। देवता, गन्धर्व, यक्ष अथवा राक्षस कोई होंगे। बताइए, आप किसलिए हमारे पास आये हैं?

ययाति ने कहा—हे महात्माओ, मैं ययाति नाम से प्रसिद्ध राजा हूँ। पुण्य क्षीण हो जाने के कारण स्वर्ग से भ्रष्ट होकर पृथ्वी पर आया हूँ। मैंने गिरते समय प्रार्थना की थी कि मैं सज्जन पुरुषों के बीच में गिरूँ। इसी से यहाँ गिरा हूँ।

राजाओं ने कहा—हे पुरुषश्रेष्ठ, आपकी इच्छा सत्य हो। हम आपको अपने यज्ञों का फल और धर्म का फल देते हैं; आप लीजिए।

ययाति ने कहा—महाशयो, मैं अर्थ ग्रहण करनेवाला अर्थात् धन आदि का दान लेनेवाला ब्राह्मण नहीं हूँ। मैं तो क्षत्रिय हूँ। ख़ासकर पराया पुण्य क्षीण करना मुझे पसन्द नहीं—उधर मेरी प्रवृत्ति ही नहीं है।

नारदजी कहते हैं—इसी समय ययाति की कन्या माधवी मृगों की तरह, मृगों के साथ विचरती हुई, वहाँ पर पहुँची। प्रतर्दन आदि राजाओं ने माता को देखकर प्रणाम किया और कहा—माता, हम सब आपके पुत्र हाज़िर हैं। आज्ञा दीजिए, आपकी क्या सेवा करें। यह सुन- २० कर माधवी बहुत प्रसन्न हुई। उसने पास जाकर पिता ययाति को प्रणाम किया। फिर पुत्रों के मस्तक सूँघकर कहने लगी—हे पिताजी, ये मेरे चार पुत्र और आपके नाती हैं। ये आपका उद्धार करेंगे। राजन्, मैं मृगों की तरह वन में फिरनेवाली आपकी बेटी माधवी हूँ। मैंने भी धर्म-सञ्चय किया है। मैं उसका आधा फल आपको देती हूँ। मनुष्यों को पुत्रों के किये धर्म का फल मिलता है, और इसी से लोग इच्छा करते हैं कि हमारे नाती, पुत्र आदि हों।

अब प्रतर्दन आदि राजाओं ने माता और मातामह (नाना) को प्रणाम किया। फिर वे ऊँचे और गम्भीर स्वर से पृथ्वीमण्डल को प्रतिध्वनित करते हुए स्वर्ग-भ्रष्ट नाना को अपने पुण्य-फल से तारने की इच्छा प्रकट करने लगे। इसी समय महर्षि गालव भी वहाँ आ गये और राजा ययाति से कहने लगे—महाराज, आप मेरी तपस्या के आठवें हिस्से को लीजिए और उसके बल से स्वर्ग को लौट जाइए। २८

एक सौ बाईस अध्याय

ययाति का फिर स्वर्ग को जाना

नारदजी कहते हैं—इस प्रकार सब महात्माओं के तप के बल से, दिव्य माला और दिव्य वस्त्र-आभूषण पहने हुए, ययाति राजा फिर स्वर्ग को चले। दिव्य स्थिति में स्थित राजा ययाति का खेद जाता रहा। वे बहुत प्रसन्न हुए। स्वर्ग से भ्रष्ट होने पर भी दिव्यरूपधारी राजा ययाति ने अभी तक पृथ्वी पर पैर नहीं रक्खे थे। दिव्य गुणों से युक्त ययाति के शरीर से दिव्य गन्ध निकल रही थी।

संसार में सुप्रसिद्ध दानी और यशस्वी वसुमना ने सबसे पहले, ऊँचे स्वर से, ययाति से कहा—हे महात्मा, मैंने किसी वर्ण की निन्दा नहीं की और किसी वर्ण का पुरुष मेरी निन्दा नहीं करता। उसका फल और दान, क्षमा, अग्निहोत्र का फल मैंने आपको दिया; आप उसे ले लीजिए।

अब क्षत्रियश्रेष्ठ प्रतर्दन ने राजा ययाति से कहा—महाराज! मैंने धर्म पर अनुराग, युद्ध की प्रवृत्ति और वीर-पद की प्राप्ति से जो क्षत्रियोचित यश पाया है वह मैं आपको देता हूँ। आप मेरे धर्मपालन और सत्यनिष्ठा के बल से स्वर्ग को जाइए।

फिर उशीनर राजा के पुत्र बुद्धिमान् शिवि ने मधुर वाणी से ययाति से कहा—महाराज! मैं बालक, स्त्री, सम्बन्धी, साले आदि से बातचीत करते समय, युद्धस्थल में, किसी सङ्कट के समय अथवा द्यूत-क्रीड़ा आदि व्यसनों के समय भी झूठ नहीं बोला हूँ। मेरे उसी सत्य के प्रभाव से आप स्वर्ग को जाइए। मैं राज्य, प्राण, काम-सुख आदि को सहज ही छोड़ सकता हूँ, केवल सत्य को नहीं छोड़ सकता। १० मेरे उसी सत्य के प्रभाव से आप स्वर्ग को जाइए। मेरे सत्य से धर्म, अग्नि और इन्द्र सन्तुष्ट हुए हैं। उसी सत्य के प्रभाव से आप स्वर्ग को जाइए।

शिवि के बाद माधवी के पुत्र धार्मिकश्रेष्ठ और कई सौ यज्ञ करनेवाले अष्टक ने कहा—राजन्! मैंने सैकड़ों पुण्डरीक, गोमेध और वाजपेय यज्ञ किये हैं। आप उन सब यज्ञों

का फल भोगिए। रत्न, धन और अन्य सब सामग्री मैंने यज्ञों में लगा दी है। उसके फल से आप स्वर्ग-लोक को चले जाइए।

अपने नातियों के कहने के अनुसार महाराज ययाति पृथ्वी छोड़कर स्वर्ग-लोक को चले गये। इस तरह चार राजवंशों में उत्पन्न उन राजाओं ने स्वर्ग से भ्रष्ट नाना को अपने पुण्य के बल से फिर स्वर्ग पहुँचा दिया। १७

एक सौ तेईस अध्याय

नारद का दुर्योधन को समझाना

नारदजी कहते हैं—सरल स्वभाववाले यज्ञकर्ता अपने नातियों के पुण्य-बल से महामति ययाति फिर स्वर्ग को गये। उस समय उनके शरीर में परम पवित्र सुगन्धित हवा लगने लगी और उनके मस्तक पर फूलों की वर्षा होने लगी। नातियों के पुण्य-फल से प्राप्त अचल अक्षय स्थान में स्थित होकर वे उज्ज्वल श्रेष्ठ कान्ति से शोभित हुए। गन्धर्वों और अप्सराओं के झुण्ड उनके आगे नाचने-गाने लगे। चारों ओर देवताओं के नगाड़े बजने लगे। देवर्षि, राजर्षि और चारण उनकी स्तुति और पूजा करने लगे। देवताओं ने उनका अभिनन्दन किया।

महाराज ययाति को स्वर्ग में पहुँचकर जब शान्ति मिल गई तब लोकपितामह भगवान् ब्रह्मा उन्हें समझाते हुए कहने लगे—राजन्, तुमने अपने अलौकिक कर्मों से सम्पूर्ण धर्म का उपार्जन करके इस लोक में सबसे श्रेष्ठता और विजय पाई थी। स्वर्ग में भी तुम्हें अक्षय यश प्राप्त हुआ था; किन्तु तुम्हारे ही कर्म के दोष से वह सब नष्ट हो गया। स्वर्गवासियों का ज्ञान तमोगुण से ढका होने के कारण वे तुम्हें पहचान नहीं सके। इसी कारण तुम्हें स्वर्ग से भ्रष्ट होकर पृथ्वी पर जाना पड़ा। अब तुम फिर अपने नातियों की प्रसन्नता और पुण्य के फल से परम पवित्र अनादि अविनाशी स्थान में आ गये हो। यह स्थान तुम अपने कर्मों से ही जीत चुके थे। १०

ययाति ने कहा—भगवन्! मुझे एक बड़ा भारी संशय है, कृपा करके उसे दूर कर दीजिए। आपके सिवा और किसी से वह बात पूछने को मेरा जी नहीं चाहता। हे पितामह! मैंने कई हज़ार वर्ष तक प्रजापालन, यज्ञ, दान आदि करके जो महापुण्य प्राप्त किया था उसका फल इतने थोड़े समय में कैसे समाप्त हो गया? जो वह पुण्य क्षीण न होता तो मुझे स्वर्ग से क्यों नीचे गिरना पड़ता? हे ब्रह्मन्, आपसे छिपा नहीं है कि मैंने धर्म करके अक्षय सनातन लोक प्राप्त किये थे। वे लोक छोड़कर मुझको पृथ्वी पर क्यों जाना पड़ा?

ब्रह्माजी ने कहा—हे ययाति! तुमने कई हज़ार वर्ष तक प्रजा-पालन, यज्ञ और दान करके जो पुण्य प्राप्त किया था, वह तुम्हारे अभिमान के कारण नष्ट हो गया। इसी कारण तुम्हें स्वर्ग

से भ्रष्ट होना पड़ा। जो पुरुष अभिमान, बल, हिंसा का भाव, शठता या कपट प्रकट करता है वह इस अनादि लोक में नहीं ठहर सकता। अपने से उत्तम, समान या निकृष्ट, किसी का अपमान नहीं करना चाहिए। अभिमान की आग में जले हुए लोग कभी शान्ति नहीं पा सकते। हे ययाति, जो कोई तुम्हारे इस स्वर्ग से पतन और फिर स्वर्गारोहण का वृत्तान्त सुनेगा, वह महासङ्कट में पड़कर भी उससे सहज ही छुटकारा पा जायगा।

नारदजी कहते हैं—पहले महाराज ययाति अभिमान के कारण और गालव ऋषि हठ के कारण इस तरह महाविपत्ति में पड़ चुके हैं। इसलिए हे दुर्योधन, तुम्हें अपने हित चाहनेवाले इष्ट-मित्रों की बातों पर ध्यान देना चाहिए। यही तुम्हारा कर्तव्य है। किसी बात के लिए २० अत्यन्त हठ करना सर्वथा अनुचित है। मनुष्य दान, तप या होम आदि जो पुण्य-कार्य करता है उनका क्षय या सम्पूर्ण विनाश नहीं हो जाता। जो व्यक्ति धर्म करता है वही उसका फल भोगता है। जो पुरुष यह बहुत से शास्त्रज्ञान से सम्पन्न, रागद्वेष-रहित सज्जनों के शास्त्र-निश्चय से युक्त, उपाख्यान सुनता है और युक्ति के साथ धर्म-अर्थ-काम के कार्य करता है, २३ वह सहज ही सारी पृथ्वी का राज्य पा सकता है।

एक सौ चौबीस अध्याय

श्रीकृष्ण का दुर्योधन को समझाना

[नारदजी के यों कह चुकने पर] धृतराष्ट्र ने कहा—हे देवर्षिश्रेष्ठ, आपका कहना बहुत ठीक है। मैं भी यही चाहता हूँ; किन्तु इच्छा रहने पर भी उसके अनुसार काम करना मेरी शक्ति के बाहर है। वैशम्पायन कहते हैं कि अब धृतराष्ट्र ने श्रीकृष्ण से कहा—हे केशव! तुम्हारे ये वचन लोकहितकारी, स्वर्गदायक, धर्मसङ्गत और न्यायपूर्ण हैं; किन्तु हे तात, मैं स्वाधीन नहीं हूँ। दुर्बुद्धि दुर्योधन मेरा कहा नहीं मानता, मेरा प्रिय नहीं करता। इसलिए तुम्हीं इसको समझाओ। महामति विदुर, गान्धारी, भीष्म पितामह या अन्य शुभचिन्तकों के प्रिय वचन यह पापी नहीं सुनता। इसलिए हे जनार्दन, तुम्हीं इस पापबुद्धि अज्ञानी दुर्योधन का शासन करो। जो तुम इसे राह पर लगा सकोगे तो बन्धुओं के योग्य बड़ा भारी काम करोगे।

वैशम्पायन कहते हैं कि तब धर्म-अर्थ के तत्त्वों को जाननेवाले श्रीकृष्ण क्रोधी दुर्योधन की ओर फिरकर मृदु मधुर स्वर से कहने लगे—हे कुरुश्रेष्ठ! तुम युद्ध के लिए हठ कर रहे हो, यह अच्छा नहीं है। मैं तुम्हारे हित और शान्ति के लिए जो कुछ कहता हूँ उसे मन लगाकर सुनो। हे भरतश्रेष्ठ, तुम उस श्रेष्ठ वंश में उत्पन्न हुए हो जिसमें बुद्धिमान् पुरुष ही होते आये हैं। खुद तुम भी शास्त्र-ज्ञान से सम्पन्न, सदाचारी और ऐश्वर्य आदि गुणों से भूषित हो। इस-

लिए मेरा कहना मानकर पाण्डवों से अच्छा व्यवहार करो। भैया! तुम जिसको कर्तव्य समझ रहे हो उसका अनुमोदन सिवा नीच कुल में उत्पन्न, दुरात्मा, नराधम, निर्लज्ज लोगों के और कोई नहीं करेगा। यह युद्ध का हठ ऐसे ही लोगों के योग्य कार्य है। इस संसार में सज्जनों १० की प्रवृत्ति धर्म और अर्थ के कामों में ही पाई जाती है। इसके विपरीत दुर्जनों का चरित्र प्राय: अधर्म और अनर्थ से परिपूर्ण होता है। इस समय तुम्हारी बुद्धि में भी वही विपरीत भाव देख पड़ता है। किन्तु ऐसी बुरी प्रवृत्ति अत्यन्त भय का कारण, अधर्म-सङ्गत और महा अनिष्ट पैदा करनेवाली है। ऐसे कामों या विचारों से मनुष्य के प्राण तक चले जाते हैं। तुम्हारी ऐसी अनर्थमयी प्रवृत्ति का कोई विशेष कारण भी नहीं देख पड़ता। ख़ासकर युद्ध में विजय ही प्राप्त कर लेना तुम्हारे हाथ की बात नहीं है। हे महाबाहु, जो यह अनर्थ का विचार छोड़ दोगे तो तुम अपना ही भला करोगे। साथ ही अपने भाइयों, भृत्यों और मित्रों का भी कल्याण करोगे। इसलिए अधर्म और अयश के कारणरूप इस विचार को छोड़ दो। पाण्डवों में असीम शूरता, उत्साह, बुद्धि, ज्ञान और धैर्य है। इसलिए उनसे मेल कर लो। मेल करने से राज्य-वृद्धि आदि तुम्हारी सब इच्छाएँ पूरी होंगी। बुद्धिमान् महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, महामति विदुर, कृपाचार्य, सोमदत्त, बाह्लीक, अश्वत्थामा, विकर्ण, सञ्जय, विविंशति आदि जाति-वालों, भाइयों और मित्रों का हित और प्रिय होगा। तुम कौरवों और पाण्डवों में मेल हो जाने से सारे जगत् को कल्याण और शान्ति प्राप्त होगी।

हे भरतश्रेष्ठ! तुम अच्छे कुल में उत्पन्न, श्रीमान्, शास्त्र-ज्ञानसम्पन्न और दयालु हो। इसलिए माता और पिता की आज्ञा मानो। सपूत का यही लक्षण है कि वह पिता की आज्ञा को अपने लिए परम कल्याण का कारण समझता है। न मानोगे तो आपत्ति के समय तुम्हें पिता का कहना याद आवेगा। तुम्हारे पिता यही चाहते हैं कि इस समय पाण्डवों से मेल २० कर लिया जाय। इसलिए मन्त्रियों सहित तुमको भी यही मान लेना चाहिए। जो आदमी हितचिन्तक सुहृदों की बात नहीं मानता वह अपने कर्म का फल उपस्थित होने पर अन्त को बहुत कष्ट पाता है। वह उसका हठ, खाये हुए महाकाल के फल की तरह, उस समय उसके हृदय को जलाता है। जो व्यक्ति मोहवश होकर प्रियजन के वचनों को श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखता, वह दीर्घसूत्री (काम में बहुत देर लगानेवाला) अर्थ से हीन होकर, कार्य सिद्ध न होने पर, पछताता है। जो बुद्धिमान् पुरुष अपने मत को छोड़कर हितचिन्तकों के हितकारी वचनों को मानता और उनके अनुसार काम करता है, वह इस लोक में परम ऐश्वर्य भोगकर सुखी होता है। जो पुरुष अपने प्रतिकूल समझकर मित्रों की बात का अनादर करता है, और दुष्टों के वचनों पर—जो कि उसके प्रतिकूल और अनर्थ की जड़ होते हैं—श्रद्धा दिखाता है, वह अपने शत्रुओं के हाथ में पड़कर घोर कष्ट पाता है। मतलब यह कि अभागा आदमी सच्चरित्र मित्रों

काम से उसकी जड़ कट जाती है। जिसकी हानि न चाहे उसे बुरी सलाह न दे। जिसकी ४० बुद्धि भ्रष्ट हो गई है वह कभी कल्याणकारी काम में प्रवृत्त नहीं होता।

हे दुर्योधन, जो पुरुष जितेन्द्रिय और अपना भला चाहनेवाला है वह—वीर पाण्डवों की कौन कहे—अत्यन्त साधारण आदमियों का भी अनादर नहीं करता। क्रोध के वश होनेवाले पुरुष को हित-अहित के विवेक का ज्ञान नहीं रह जाता। लोक और वेद के प्रसिद्ध प्रमाण भी उसे तुच्छ समझ पड़ते हैं। भैया, इस समय असत् पुरुषों का साथ छोड़कर पाण्डवों से मेल कर लेना ही तुम्हारे लिए सर्वथा कल्याण की बात है। पाण्डव जो तुम्हारा प्रिय करने के लिए तैयार हो जायँगे तो तुम अपनी सब आकांक्षाओं को सहज ही पूर्ण कर लोगे। हे नृपश्रेष्ठ! सोच-कर देखो, तुम जिन पाण्डवों के बाहु-बल से जीते हुए साम्राज्य का भोग कर रहे हो उन्हीं को वञ्चित करके अन्य पुरुषों से अपनी रक्षा की आशा कर रहे हो। दुष्टमति दुःशासन, कर्ण और शकुनि आदि कुमन्त्रियों को साम्राज्य का भार सौंपकर कल्याण प्राप्त करना चाहते हो, यह तुम्हारी भारी भूल है। ये तुम्हारे मन्त्री ज्ञान, धर्म, अर्थ, पराक्रम आदि किसी बात में पाण्डवों के समान नहीं हैं। अधिक क्या कहें, तुम्हारी ओर से लड़ने के लिए जमा हुए ये राजा लोग युद्ध के समय क्रोधित भीमसेन के भयानक मुख की ओर देख तक नहीं सकते। यह सच है कि ये सेनासहित राजा और भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य आदि प्रधान-प्रधान वीर योद्धा तुम्हारे सहायक हैं; किन्तु इनमें से कोई भी युद्ध में अर्जुन का सामना नहीं कर सकेगा। ये ही क्यों, सब देवता, दानव, गन्धर्व आदि त्रिभुवन के निवासी भी अर्जुन को परास्त नहीं कर सकते। इसलिए भैया, तुम युद्ध के लिए हठ न करो। ५०

ग़ौर करके देखो, इन एकत्र हुए योद्धाओं में कौन आदमी युद्ध-भूमि में अर्जुन के सामने पड़कर सकुशल जीता-जागता अपने घर को लौट सकता है? इसलिए पहले उस वीर पुरुष को देखकर ठीक कर लो, जिसके विजय प्राप्त करने से तुम विजयी हो सकते हो। व्यर्थ मनुष्यों का विनाश करने से क्या लाभ है? खाण्डव वन को जलाते समय यक्ष, गन्धर्व, असुर, नाग आदि सहित सब देवताओं को हरानेवाले, असाधारण वीर और पराक्रमी अर्जुन से तुम्हारे पक्ष का कौन वीर युद्ध कर सकता है? विराट नगरी में जो अद्भुत युद्ध-घटना हुई थी, उसी से तुम यह निश्चय कर लो कि अकेले अर्जुन असंख्य मनुष्यों से युद्ध करके उन्हें परास्त कर सकते हैं या नहीं। और मनुष्यों की बात जाने दो, स्वयं त्रिपुर-दहन महादेव भी अर्जुन के युद्ध-कौशल और पराक्रम से सन्तुष्ट हो चुके हैं। तुम उन्हीं अलौकिक योद्धा, शूरश्रेष्ठ, अजेय, दुर्धर्ष अर्जुन को जीतने की आशा करते हो यह तुम्हारी निरी दुराशा है। जब मेरे साथ अर्जुन शत्रुओं से लड़ने को खड़े होंगे, तब कौन वीर उन्हें युद्ध के लिए ललकारने का साहस करेगा? तब मनुष्यों की कौन कहे, साक्षात् इन्द्र भी तो उनसे युद्ध नहीं कर सकेंगे।

जो आदमी युद्ध में अर्जुन को हरा सकता है वह, समझ लो कि, दोनों हाथों से पृथ्वीमण्डल को ऊपर उठा सकता है, क्रोधित होकर त्रिलोकी की प्रजा को भस्म कर सकता है, अथवा सब देवताओं को भी स्वर्ग से नीचे गिरा सकता है।

इसलिए भैया! अपने पुत्र, भाई, जातिवाले और अन्य सम्बन्धी स्वजन आदि की ओर देखो। ये तुम्हारे कारण चौपट न हों; यही तुम्हारा कर्तव्य है। तुम वही करो जिसमें यह प्रतिष्ठित और विस्तृत कुरुवंश बिलकुल परास्त और निःशेष न हो जाय और लोग कीर्तिहीन तथा कुल-घातक कहकर तुम्हारी निन्दा न करें। सन्धि हो जाने पर पाण्डवश्रेष्ठ युधिष्ठिर तुम्हीं
६० को युवराज बनावेंगे और धृतराष्ट्र महाराज बने रहेंगे। इस कारण गले लगने आ रही राजलक्ष्मी को विमुख मत करो, ढकेलो नहीं। पाण्डवों को आधा राज्य देकर आप भी विशाल ऐश्वर्य प्राप्त करो। मेरी आख़िरी बात यही है कि हितैषियों की बात मानकर पाण्डवों से मेल कर लेने में
६२ ही तुम्हारे आत्मीय प्रसन्न होंगे और तुम्हारा कल्याण स्थिर होगा।

एक सौ पचीस अध्याय

भीष्म, द्रोण और विदुर का दुर्योधन को समझाना

वैशम्पायन कहते हैं कि वासुदेव के चुप होने पर पितामह भीष्म ने असहनशील दुर्योधन से कहा—बेटा, बन्धुओं के कल्याण की इच्छा से महात्मा श्रीकृष्ण ने जो आज्ञा दी है उसे मान लो। क्रोध के वश न होओ। महात्मा वासुदेव के इस श्रेष्ठ उपदेश को न मानने पर किसी तरह तुम्हारा निस्तार नहीं है। न मानोगे तो किसी तरह सच्चा सुख और कल्याण नहीं मिलेगा। श्रीकृष्ण ने जो कहा है वह धर्म और अर्थ के अनुकूल और यथार्थ अभीष्ट को सिद्ध करनेवाला है। इसलिए व्यर्थ प्रजा का नाश न करके हृदय से सन्धि का प्रस्ताव मान लो। महामनस्वी वासुदेव, प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र और बुद्धिमान् विदुर के सत्य और अर्थयुक्त वाक्यों का अनादर करने से बड़ा बुरा होगा। पिता के सामने ही तुम अपनी करतूत से इस असीम समृद्धिशालिनी भरतकुल की राजलक्ष्मी को नष्ट कर दोगे, और अभिमान से बावले होकर पुत्र, भाई, बन्धु, मित्र आदि का और अपना भी जीवन सङ्कट में डाल दोगे। इसलिए मैं बारम्बार मना करता हूँ कि तुम कुलघाती, कायर, कुमति और कुपथगामी होकर माता-पिता को शोकसागर में मत डालो।

भीष्म इतना कहकर चुप हो रहे। दुर्योधन क्रोध के मारे लम्बी साँसें छोड़ने लगा। तब द्रोणाचार्य ने उससे कहा—भीष्म और वासुदेव, दोनों ही महाप्राज्ञ, मेधावी, दम-सम्पन्न और शास्त्र का बहुत ज्ञान प्राप्त किये हुए हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इनके वचन धर्म-अर्थ से सङ्गत
११ होने के सिवा तुम्हारे लिए हितकारी हैं। तुम अनन्य भक्ति के साथ उन वचनों को मान लो।

श्रीकृष्ण और भीष्म ने जो कहा है उसे बेखटके कर डालो; बुद्धिभ्रम में पड़कर वासुदेव का अनादर मत करना। कर्ण आदि जो दुर्बुद्धि पुरुष तुम्हें युद्ध के लिए उत्तेजित कर रहे हैं, वे कभी तुमको विजय नहीं दिला सकेंगे। युद्ध छिड़ जाने पर वे औरों के ऊपर युद्ध का बोझ डालकर आप निश्चिन्त हो जायँगे। इसलिए पुत्र, भाई आदि आत्मीयों और प्रजा का अनर्थक विनाश मत कराओ। तुम यह निश्चय जानो कि जिस सेना के रक्षक वासुदेव और अर्जुन हों उसे कभी कोई हरा नहीं सकता। इस समय जो प्रधान हितचिन्तक श्रीकृष्ण और भीष्म के वचनों को नहीं मानोगे तो तुम्हें पछताना पड़ेगा। महात्मा परशुरामजी ने अर्जुन के बारे में जो कहा है, अर्जुन उससे भी हज़ार गुना श्रेष्ठ हैं। श्रीकृष्ण के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं है। देवता भी उनके प्रताप की आँच नहीं सह सकते। अब और तुमसे प्रिय या हित की बात का प्रस्ताव करना बेकार है। बन्धुओं को जैसा कहना चाहिए था वैसा कहा जा चुका। अब जैसी रुचि हो, वैसा करो। मैं तुमसे अधिक कुछ कहा नहीं चाहता।

वैशम्पायन कहते हैं कि अब महामति विदुर ने क्रोधी दुर्योधन की ओर देखकर कहा—हे भरतश्रेष्ठ, मैं तुम्हारे लिए कुछ शोक नहीं करता। मैं तो तुम्हारे इन बूढ़े पिता और माता के लिए शोक से विह्वल हो रहा हूँ। हाय! ये तुम्हारे ऐसे कुलाङ्गार, पापी, कुपुत्र को उत्पन्न करने के कारण, अन्त को हतमित्र, हतभाग्य और अनाथ होकर, भिक्षावृत्ति स्वीकार करके, कटे पङ्खवाले पक्षी की तरह, शोक से विह्वल होकर इधर-उधर भटकेंगे। २१

इसके बाद धृतराष्ट्र ने कहा—बेटा, महात्मा श्रीकृष्ण ने जो योगक्षेम-सम्पादक शुभ वचन कहे हैं उन्हें तुम सुनो और मानो। ऐसा करोगे तो इन अद्भुत कर्म करनेवाले श्रीकृष्ण की सहायता से हमारी सब इच्छाएँ पूरी होंगी; सब राजा तुम्हारे अधीन होकर तुम्हारा सम्मान करेंगे। इस समय तुम श्रीकृष्ण के साथ युधिष्ठिर के पास जाओ। भरतकुल की भलाई के लिए पूर्ण रूप से शान्ति स्थापित करो। बेटा, मेरी समझ में सन्धि करने का यही ठीक समय है। इस कारण इस समय को हाथ से जाने न दो। दयालु श्रीकृष्ण ने तुम्हारे कल्याण की इच्छा से शान्ति की प्रार्थना करते हुए ये बातें कही हैं। जो तुम न मानोगे तो युद्ध में अवश्य तुम्हारी हार होगी। २७

एक सौ छब्बीस अध्याय

भीष्म और द्रोण का दुर्योधन को फिर समझाना-बुझाना

वैशम्पायन कहते हैं कि धृतराष्ट्र के कह चुकने पर समान रूप से व्यथित भीष्म और द्रोणाचार्य दुर्योधन से कहने लगे—हे दुर्योधन, अभी वासुदेव और अर्जुन ने युद्ध की तैयारी नहीं

की है। अभी गाण्डीव धनुष पर डोरी नहीं चढ़ी है। अभी पुरोहित धौम्य ने शत्रु-सेना के विनाश के लिए हवन नहीं किया है। जब तक क्रोधित होकर युधिष्ठिर तुम्हारी सेना को नहीं देखते हैं उससे पहले ही वैर को शान्त कर लो। अभी प्रचण्ड धनुषवाले गदा-पाणि भीमसेन तुम्हारे पक्ष के योद्धाओं के सामने नहीं आये हैं। अभी वे भीमसेन दण्ड-पाणि यमराज की तरह गदा हाथ में लिये तुम्हारी सेना के समुद्र को मथते हुए इधर-उधर नहीं विचरे हैं। अभी हाथियों पर चढ़कर लड़नेवाले वीरों के मस्तक, पके हुए फलों के समान, भीमसेन की गदा की चोट से समरभूमि में नहीं गिरे हैं। अभी नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, विराट, शिखण्डी, धृष्टकेतु आदि अस्त्रज्ञ वीर—महासागर में मगर की तरह—तुम्हारी सेना के भीतर नहीं घुसे हैं। अभी राजाओं के सुकुमार शरीर तीक्ष्ण बाणों से घायल नहीं हुए हैं। अभी फुरतीले महायोद्धा अस्त्रज्ञ वीरों ने चन्दन-चर्चित अगुरु-सुगन्धित हार-पदक आदि आभूषणों से अलङ्कृत वक्षस्थलों में १० लोहे के तीक्ष्ण हथियार नहीं मारे हैं। आगे होनेवाला भयानक हत्याकाण्ड इसी दम रोक दो। तुम सिर झुकाकर राजाधिराज युधिष्ठिर को प्रणाम करो और वे दोनों हाथों से तुमको गले से लगा लें। वे शान्ति के लिए ध्वजा-अङ्कुश-पताका आदि के चिह्नों से युक्त और रत्नौ-षधियुक्त तथा जड़ाऊ अँगूठियों से शोभित अपना दाहना हाथ तुम्हारे कन्धे पर रक्खें और पीठ पर फेरें। साखू-सदृश कन्धोंवाले महाबाहु भीमसेन शान्ति के साथ तुमसे कुशल-प्रश्न करें और अर्जुन, नकुल, सहदेव तुमको प्रणाम करें। तुम स्नेह के साथ उनका मस्तक सूँघो और उनसे प्रेम से बोलो। ये सब राजा तुम्हें पाण्डवों से मिलते देखकर आनन्द से आँसू बहावें। सब राजधानी में कुशल-समाचार की घोषणा हो और तुम सन्ताप-रहित १८ होकर भ्रातृस्नेह के साथ इस साम्राज्य के सुख भोगो।

एक सौ सत्ताईस अध्याय

दुर्योधन का उत्तर

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, कौरव-सभा के बीच अप्रिय वचन सुनकर राजा दुर्योधन ने श्रीकृष्ण से कहा—हे केशव, सोच-समझकर तुमको ऐसी बातें कहनी चाहिए थीं। तुम पाण्डवों का पक्ष लेकर नाहक़ मेरी निन्दा करते हो। किन्तु मैं पूछता हूँ कि तुम क्या बलाबल का विचार करके मेरी निन्दा कर रहे हो? न केवल तुम्हीं प्रत्युत विदुर, महाराज, आचार्य और पितामह भी मेरी निन्दा किया करते हैं। परन्तु मैं बहुत सोचकर भी अपना रत्ती भर अपराध नहीं देखता। तो भी तुम सब लोग मुझे भला-बुरा कहते हो।

युधिष्ठिर में जूआ खेलने की लत थी। शकुनि ने उनको खेल में जीत लिया तो उसमें मेरा क्या दोष ? बल्कि मैंने उस समय उनकी जीती हुई सब सम्पत्ति फेर देने की आज्ञा दी थी। हे मधुसूदन ! पाण्डव फिर जुए में सब हारकर वन जाने के लिए बाध्य हुए, तो उसमें ही मेरा क्या दोष है ? वे किस कारण हमें शत्रु समझकर स्वयं अत्यन्त असमर्थ होकर भी हमसे वैर ठानते हैं और युद्ध करने को तैयार हैं ? हमने उनका क्या बिगाड़ा है ? वे हमारे किस अप- १० राध से पाञ्चालों के साथ मिलकर हमारे अनिष्ट की चेष्टा कर रहे हैं ? हम लोग युद्ध या धमकी से डरकर इन्द्र के आगे भी नहीं झुक सकते। हे कृष्ण, युद्ध में हमको हराने की हिम्मत रखने-वाला कोई क्षत्रिय पृथ्वी पर नहीं देख पड़ता। पाण्डवों की कौन कहे, देवता भी युद्ध में भीष्म, द्रोण और कर्ण को मार नहीं सकते। हे केशव, अपना धर्म पालते हुए यथासमय युद्ध में मरने से भी हमें स्वर्ग प्राप्त होगा। युद्ध-भूमि में शर-शय्या पर सोना ही क्षत्रियों का प्रधान धर्म है। हम शत्रुओं के सामने न झुककर अगर युद्ध के मैदान में शरशय्या पर सदा के लिए सो रहेंगे तो भी हमें कुछ परवा नहीं। वीर वंश में उत्पन्न क्षत्रिय जाति का कौन पुरुष, डर के मारे, शत्रु के आगे सिर झुका सकता है ? मातङ्ग मुनि का मत है कि उद्यम को ही पौरुष कहते हैं। इसलिए सदा उद्यम का सहारा लेना चाहिए, दबना अनुचित है। बीच से टूट जाना अच्छा, झुकना ठीक नहीं। हित और मान चाहनेवाले लोग मातङ्ग मुनि के इस उपदेश पर ही चलते हैं। मुझ सरीखे लोग भक्तिवश केवल ब्राह्मणों के ही आगे सिर झुकाते हैं और अन्य २० सारी चिन्ताएँ छोड़कर ऐसा ही व्यवहार करते हैं। यही क्षत्रिय का धर्म है। मुझे यही पसन्द है। मेरे पिता ने पहले जो पाण्डवों को राज्य का अंश देने की अनुमति दी थी, वह मेरे जीते जी पूरी नहीं होगी। हे जनार्दन, धृतराष्ट्र जब तक जीते हैं तब तक हम लोग या पाण्डव कोई राजा नहीं हो सकता; इनके पीछे निबट लेंगे। हे केशव ! मैं जब बालक और पराधीन था, तब चाहे अज्ञान से हो चाहे भय से, मेरा अदेय राज्य पाण्डवों को दे दिया गया था। इस समय मेरे जीते जी पाण्डव उसको नहीं पा सकते। यहाँ तक कि सुई की नोक भर भी ज़मीन मैं, युद्ध के बिना, पाण्डवों को नहीं दूँगा। २५

एक सौ अट्ठाईस अध्याय

दुर्योधन का सभा से उठ जाना

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, दुर्योधन के यों कह चुकने पर महात्मा श्रीकृष्ण ने क्रोध से आँखें लाल करके मुसकुराकर कहा—हे दुर्योधन ! धैर्य धरो, बहुत जल्द घोर सङ्ग्राम होगा। तुम भाइयों और मन्त्रियों के साथ युद्ध-भूमि में वीर-शय्या पर सोओगे। हे मूढ़, तुम समझते

हो कि पाण्डवों से तुमने कोई बुरा व्यवहार नहीं किया। अच्छा, इस बारे में सभा के लोग ही विचार करके देखें। यह कौन नहीं जानता कि तुम वीर पाण्डवों के असीम ऐश्वर्य को देखकर जल उठे और फिर शकुनि के साथ षड्यन्त्र करके कपट-द्यूत रचकर तुम्हीं ने पाण्डवों को खेलने के लिए बुलाया? सरलस्वभाव तुम्हारे श्रेष्ठ सजातीय और आत्मीय भी तुम्हारे अन्याय-पूर्ण कपट-व्यवहार को देखते रहे। शास्त्र में लिखा है कि पाँसों के खेल में मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, भेदभाव बढ़ता है और उससे दुष्टों को विपत्ति का सामना करना पड़ता है। तुमने यह सब जानकर भी दुष्टों की सलाह से कपट के पाँसों का खेल रचकर यह घोर अनर्थ खड़ा कर दिया है। कुल और शील में श्रेष्ठ, पाण्डवों को प्राण से भी प्यारी, रानी द्रौपदी को तुमने भरी सभा में बुलवाकर कटु, असह्य वचन कहकर उनका जैसा अपमान किया है वैसा अपनी भाभी का अपमान और कौन करेगा? पाण्डवों के वन जाते समय दुःशासन ने जो बातें कही थीं उन्हें किस कुरुवंशी ने नहीं सुना? तुमने पाण्डवों के साथ जैसा बुरा व्यवहार किया है वैसा व्यवहार अपने भाइयों के साथ और कौन करेगा? हे दुर्योधन! तुमने, कर्ण और दुःशासन ने नृशंस अनार्य पुरुषों की तरह बारम्बार पाण्डवों के लिए, उनके सामने, कटु वचन कहे हैं।

देखो, तुमने लड़कपन में पाण्डवों को उनकी माता कुन्ती के साथ जला डालने का यत्न किया था; परन्तु पाण्डवों के सौभाग्य से तुम्हारा मनोरथ सफल नहीं हुआ। पाण्डव उस विपत्ति से छुटकारा पाकर अपनी माता के साथ एकचक्रा नगरी में बहुत दिनों तक ब्राह्मण के घर छद्मवेष से रहे। तुमने विष, साँप आदि अनेक उपायों से पाण्डवों को मार डालने का यत्न किया, किन्तु कृतकार्य नहीं हो सके। तुमने इस तरह बारम्बार पाण्डवों के अनिष्ट की चेष्टा की है। फिर तुम्हारा यह कहना कैसे ठीक हो सकता है कि तुमने पाण्डवों का कोई अपराध नहीं किया?

पाण्डवों के प्रार्थना करने पर भी तुम उन्हें उनका पैतृक अंश, आधा राज्य, नहीं देते हो। किन्तु तुम्हें शीघ्र ही ऐश्वर्यहीन और जीवनरहित होकर सारा राज्य उन्हें दे देना पड़ेगा। कैसे आश्चर्य की बात है कि सदा नराधम और नीच की तरह, तरह-तरह से, पाण्डवों के अनिष्ट की चेष्टा करके भी तुम इस समय अपने को निर्दोष सिद्ध कर रहे हो! तुम्हारे पिता, माता, भीष्म, द्रोण और विदुर तुमसे बारम्बार शान्ति के लिए कह रहे हैं, पर तुम नहीं मानते। हे दुर्योधन, इस समय सन्धि होने से दोनों पक्षों का लाभ है। किन्तु तुम उस पर राज़ी नहीं होते इससे बढ़कर मूर्खता और क्या हो सकती है! तुम हितैषियों के वाक्य न मानकर धर्म और यश को मिटानेवाला कार्य करना चाहते हो। इससे स्पष्ट जान पड़ता है कि तुम्हारा भला न होगा।

वैशम्पायन कहते हैं कि श्रीकृष्ण के यों कहने पर दुःशासन ने असहनशील दुर्योधन से कहा—राजन्, जो आप राज़ी-ख़ुशी से पाण्डवों के साथ सन्धि नहीं करेंगे तो कुरुवंश

के लोग आपको बाँधकर पाण्डवों को सौंप देंगे। पिता, पितामह और आचार्य कर्ण को, आपको और मुझे बाँधकर पाण्डवों के पास भेज देंगे।

मर्यादा का उल्लङ्घन करनेवाला, निर्लज्ज, दुर्मति दुर्योधन भाई की इन बातों से और भी उत्तेजित और क्रोधित होकर अजगर की तरह साँसें लेने लगा। फिर असभ्य पुरुष की तरह श्रीकृष्ण, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य और सोमदत्त आदि माननीय पुरुषों का अनादर करके वह सभा से उठकर चल दिया। उसके पीछे और भाई भी चले गये।

दुर्योधन को क्रोध के मारे भाइयों के साथ सभा से उठकर जाते देखकर पितामह भीष्म ने वासुदेव से कहा—हे जनार्दन, जो पुरुष धर्म-अर्थ का ध्यान छोड़कर क्रोध के अधीन हो जाता है उसके शत्रु उसे शीघ्र ही सङ्कट में पड़ा देखकर हँसते हैं। यह दुरात्मा राजपुत्र दुर्योधन उपाय से अनभिज्ञ, वृथा राज्याभिमानी और क्रोध-लोभ आदि शत्रुओं के हाथ का खिलौना है। इसके अनुगामी राजा भी काल से पके हुए फल की तरह [मौत के मुँह में] गिरनेवाले हैं। ३०

ये वचन सुनकर श्रीकृष्ण ने भीष्म, द्रोण आदि महात्मा वृद्ध पुरुषों को सम्बोधन करके कहा—हे महात्माओ, आप लोग इस ऐश्वर्य-मदोन्मत्त दुर्योधन का दमन नहीं करते, यह बड़ा अन्याय हो रहा है। जो उपाय करने से कुल का कल्याण हो सकता है वह इस समय के योग्य कर्तव्य मैंने सोच लिया है। हे भरतवंशियो, जो आप लोगों को रुचे तो मैं आपके सामने अनुकूल और हितकारी वचन कहता हूँ, सुनिए। बूढ़े भोजराज उग्रसेन का पुत्र दुरात्मा कंस पिता की ज़िन्दगी में ही उनका अधिकार और ऐश्वर्य छीनकर आप राजा बन बैठा था। मृत्यु के वशीभूत और बन्धु-बान्धवों के द्वारा त्यागे गये कंस को मैंने, सबके भले के लिए, युद्ध में मार डाला। फिर जातिवालों के साथ सत्कारपूर्वक महात्मा आहुक के पुत्र उग्रसेन को उनका राज्य मैंने अर्पण कर दिया। सब यादव, अन्धक और वृष्णिगण, कुल की रक्षा के लिए, एक कंस को छोड़कर परस्पर मिलकर सुख-समृद्धि भोग रहे हैं। ४०

देवासुर-संग्राम के समय हथियारों के उठने और लोकों का विनाश होने से पहले प्रजापति ब्रह्मा ने कहा था कि इस युद्ध में दैत्य, दानव, असुर हारेंगे, और आदित्य, वसु, रुद्र आदि देवता विजयी होंगे। देवता, असुर, मनुष्य, गन्धर्व, नाग और राक्षस क्रुद्ध होकर परस्पर एक दूसरे का विनाश करेंगे। ब्रह्मा ने यों सोचकर धर्म से कहा—तुम दैत्यों और दानवों को बाँधकर वरुण के हाथ में सौंप दो। ब्रह्मा की आज्ञा पाकर धर्म ने दैत्यों और दानवों को बाँधकर वरुण के हाथ में सौंप दिया। जलेश्वर वरुण ने उन्हें अपने पाश और धर्म के पाश से बाँधकर यत्नपूर्वक समुद्र के भीतर रख दिया। हे महात्माओ! आप लोग भी कर्ण, शकुनि, दुःशासन और दुर्योधन को बाँधकर पाण्डवों को सौंप दीजिए। कुल की रक्षा के लिए एक व्यक्ति को, गाँव की रक्षा के लिए कुल भर को, जनपद की रक्षा के लिए सारे गाँव को और

आत्म-रक्षा के लिए सारी पृथ्वी को त्याग देना चाहिए। इसलिए हे महाराज धृतराष्ट्र, आप दुर्योधन को बाँधकर पाण्डवों के पास भेज दीजिए और उन्हें अपनाइए। हे क्षत्रिय-
५० श्रेष्ठ, दुर्योधन के कारण सब क्षत्रियों का संहार न होने पावे।

एक सौ उनतीस अध्याय

दुर्योधन को गान्धारी का समझाना

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, प्रजापालक राजा धृतराष्ट्र श्रीकृष्ण के वचन सुनकर जल्दी से सब धर्मों के ज्ञाता विदुर से बोले—हे तात, तुम दूरदर्शिनी गान्धारी के पास जाकर उन्हें यहाँ ले आओ। मैं और वह दोनों मिलकर दुर्योधन को समझावेंगे। जो गान्धारी दुर्बुद्धि, दुष्टों की सङ्गति में भूले हुए, दुरात्मा दुर्योधन को शान्त करके सुमार्ग पर ला सकीं तो हम अपने परम हितैषी वासुदेव की आज्ञा का पालन कर सकेंगे। गान्धारी यदि दुर्योधन की बुलाई हुई इस घोर विपत्ति को टाल सकेंगी तो हम लोग सदा सुख से रहकर जीवन बिता सकेंगे।

हे जनमेजय, धृतराष्ट्र की आज्ञा पाते ही विदुर दूरदर्शिनी गान्धारी को वहाँ ले आये। धृतराष्ट्र ने कहा—देखो गान्धारी, तुम्हारा उद्दण्ड पुत्र ऐश्वर्य के लोभ से बावला होकर ऐश्वर्य और जीवन तक गँवाने को तैयार है। मर्यादा का उल्लङ्घन करनेवाला मूढ़मति दुर्योधन हितैषियों के श्रद्धेय वचनों का अनादर करके, अत्यन्त अशिष्टता के साथ, पापी और दुराचारी सहायकों को साथ लेकर सभा से उठ गया है।

वैशम्पायन कहते हैं कि स्वामी के वचन सुनकर यशस्विनी गान्धारी कल्याण की इच्छा से कहने लगीं—महाराज! राज्य की इच्छा रखनेवाले, मरने के लिए तैयार, उस अपने बेटे को जल्दी बुलाइए। धर्म-अर्थ को मिटानेवाला, शान्ति-शून्य, असन्तुष्ट पुरुष कभी राज्य नहीं पा
१० सकता; तथापि विनय-विहीन दुर्योधन को राज्य मिल गया है। आप उसके बुरे चरित्र को जानकर भी पुत्रस्नेह के कारण उसका साथ देते जाते हैं। इस कारण इस बारे में आप ही निन्दा के पात्र हैं। महाराज! पापी दुर्योधन पूर्ण रूप से काम, क्रोध, मोह के वश में है। इस समय बलपूर्वक उसे मना करना आपकी शक्ति के बाहर है। आपने जैसे मूढ़बुद्धि, बुरे मन्त्री और सहायकों को साथ रखनेवाले, दुरात्मा और लोभी को राज्य का अधिकार दिया है वैसे ही उसका फल आप भोग रहे हैं। मैं कह नहीं सकती कि आप किस कारण इस घर की फूट को लापरवाही से देख रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि स्वजन आपको त्याग देंगे, और शत्रु आपका उपहास करेंगे। देखिए, आत्मीय लोगों के साथ साम और दान का व्यवहार करने से अगर आई हुई विपत्ति टल सकती हो और सब काम बनता हो, तो फिर कौन बुद्धिमान् पुरुष दण्डनीति का प्रयोग करने को तैयार होगा?

वैशम्पायन कहते हैं कि वृद्ध राजा-रानी की आज्ञा से विदुर फिर दुर्योधन को सभा-भवन में बुला लाये। दुर्योधन की आँखें लाल हो रही थीं। वह क्रोध के मारे साँप की तरह फुफकारता हुआ लम्बी साँसें ले रहा था। माता के वचन सुनने के लिए दुर्योधन फिर सभा में आया। तब पतिव्रता गान्धारी शान्ति की इच्छा से उस, सुमार्ग से हटकर कुपथगामी हो रहे, पुत्र की निन्दा करके कहने लगीं—बेटा, मेरी बातों को मन लगाकर सुनो। सुनोगे और मानोगे तो अन्त को भाई-बन्धुओं के साथ सुख से सब भोग भोगोगे। भैया! तुम्हारे पिता महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और विदुर आदि अन्य आत्मीय लोगों ने तुमसे जो कहा है उसे मान लो। सन्धि कर लोगे तो भीष्म पितामह, महाराज धृतराष्ट्र, मैं और द्रोण आदि सब तुमसे सन्तुष्ट रहेंगे—सब की बात रह जायगी। बेटा! केवल इच्छा करने पर ही राज्य का लाभ, राज्य की रक्षा और राज्यसुख का उपभोग निर्भर नहीं है। जितेन्द्रिय बुद्धिमान् पुरुष ही राज्यभोग के योग्य होता है। काम और क्रोध मनुष्य के कार्य को बिगाड़ देते हैं—अर्थ का नाश कर देते हैं। जो भाग्यशाली राजा इन दोनों शत्रुओं को जीत लेता है वही पृथ्वी के राज्य का सच्चा अधिकारी है।

२०
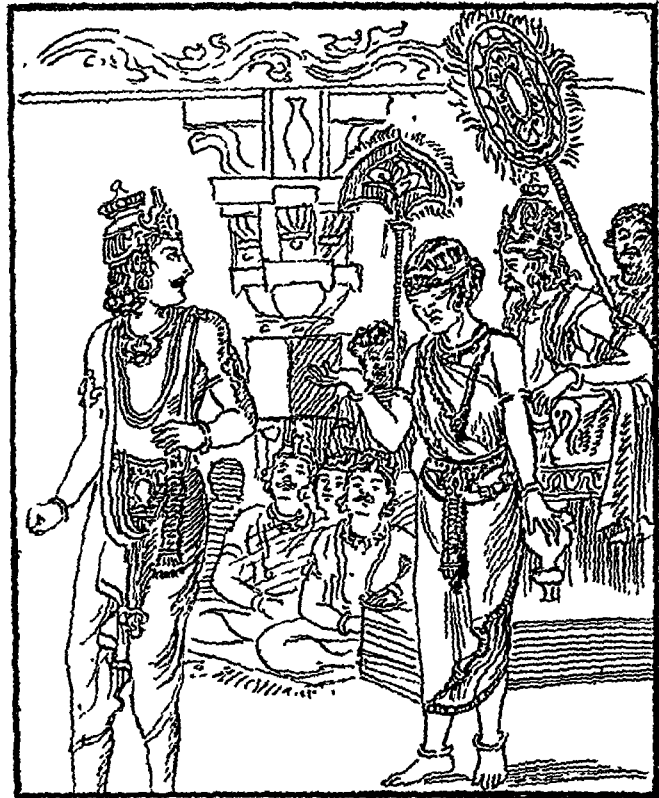
प्रभुता करना टेढ़ी खीर है। दुरात्मा लोग सहज ही राज्य पा जाते हैं, किन्तु वे उसे अपने पास रखने में समर्थ नहीं होते। उच्च पद की इच्छा रखनेवाले को चाहिए कि पहले अपनी सब इन्द्रियों को वश में करके धर्म और अर्थ के कामों में लगावे। इन्द्रियों का निग्रह हो जाने पर, ईंधन से बढ़ी आग की तरह, मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है। अशिक्षित और दुष्ट घोड़ा जैसे अनाड़ी सवार को गिराकर मार डालता है वैसे ही वश में न रहनेवाली इन्द्रियाँ मूढ़ पुरुष के प्राणनाश का कारण होती हैं। जो मनुष्य मन को जीते बिना मन्त्रियों को वश में रखना चाहता है, अथवा मन्त्रियों को अपने क़ाबू में किये बिना शत्रुओं को जीतना चाहता है, वह विवश होकर ऐश्वर्य से भ्रष्ट होता है। अपना हित चाहनेवाले को

चाहिए कि पहले मन को ही शत्रु समझकर उस पर आक्रमण करे और फिर मन्त्रियों तथा शत्रुओं को वश करने की चेष्टा में लगे।

जो मनुष्य जितेन्द्रिय है, धीर है, मन्त्रियों को वश में किये हुए है, और जो देखभाल तथा सोच-समझकर काम करता है और अपने विरोधियों को यथायोग्य दण्ड देता है, उसी के पास
३० राजलक्ष्मी दृढ़ता के साथ रहना चाहती है। महीन छेदवाले जाल को जैसे बड़ी मछलियाँ छिन्न-भिन्न कर देती हैं, वैसे ही शरीर में ही रहनेवाले काम और क्रोध मनुष्य के ज्ञान को नष्ट कर देते हैं। रागद्वेष-शून्य होने के कारण मनुष्य स्वर्ग को आवेंगे, इसी डर के मारे, देवताओं ने काम और क्रोध से स्वर्ग का द्वार बन्द कर दिया है। इसी से मनुष्य के हृदय में स्वभाव से ही काम और क्रोध की अधिकता होती है। जो बुद्धिमान् राजा काम, क्रोध, लोभ, दम्भ और दर्प को अच्छी तरह जीतना जानता है वही पृथ्वी का शासन करता है। जो राजा धर्म और अर्थ प्राप्त करने की इच्छा रखता हो और शत्रुओं को हराना चाहता हो उसे सदा इन्द्रियों के दबाने में लगे रहना चाहिए। जो पुरुष काम और क्रोध के वशीभूत होकर आत्मीय स्वजनों और अन्य लोगों से कपट का व्यवहार करता है उसे कभी सहायक नहीं मिलते।

बेटा! पाण्डव महाबुद्धिमान्, शत्रुनाश की शक्ति रखनेवाले और असाधारण पराक्रमी शूर हैं। उनसे मेल करके ही तुम सुख से पृथ्वी का राज्य भोग सकोगे। बेटा दुर्योधन, पितामह भीष्म और आचार्य द्रोण ने ठीक ही कहा है; अर्जुन और वासुदेव को कोई नहीं जीत सकता। इसलिए तुम श्रीकृष्ण की शरण लो। ये महाबाहु सहज ही बड़े से बड़े काम कर सकते हैं। इनको प्रसन्न रखने से निःसन्देह दोनों पक्ष सुखी होंगे। दुर्बुद्धि पुरुष का लक्षण यही है कि वह प्राज्ञ, हित चाहनेवाले, विद्वान् बन्धुओं और स्वजनों का कहा न मानकर ऐसे काम करता है जिनसे शत्रुओं का आनन्द बढ़े। भैया, युद्ध में कुछ भी कल्याण की या धर्म-अर्थ के सिद्ध होने की सम्भावना नहीं है। फिर उससे किस तरह सुख मिल सकता है? विशेषकर युद्ध में इसका कुछ भी निश्चय नहीं कि कौन पक्ष जीतेगा।
४० इसलिए ऐसे अनर्थ के काम में मन न लगाओ।

हे शत्रुदमन! तुम्हारे पिता महाराज, भीष्म और बाह्लीक आदि ने इसी भेदभाव के डर से पाण्डवों को न्याय से प्राप्य उनका हिस्सा दे दिया था। तुम जो इस समय शूर पाण्डवों के बल से शत्रुहीन हो गई पृथ्वी का निष्कण्टक राज्य कर रहे हो सो उसी व्यवहार का फल है। इसलिए यदि तुम मन्त्रियों और भाइयों के साथ सुख से राज्यसुख भोगना चाहते हो तो पाण्डवों को आधा राज्य दे दो। आधा राज्य पाण्डवों का प्राप्य अंश है। भैया, पृथ्वी का आधा राज्य तुम्हारे लिए काफ़ी है। उससे तुम मज़े से भाई, मन्त्री, भृत्य आदि के साथ अपनी जीविका चला सकते हो। इस प्रकार हितैषियों का कहा मानने से संसार में तुम्हारा यश फैल जायगा।

श्रीमान्, बुद्धिमान्, धीर, जितेन्द्रिय पाण्डवों से विरोध और युद्ध करोगे तो तुम्हें अवश्य इस महाराज्य के सुख और जीवन से हाथ धोने पड़ेंगे।

मेरा कहा मानो, पाण्डवों को उनका हिस्सा दे दो, मित्रों और भाइयों के क्रोध को शान्त करो और यथोचित रूप से प्रजा-पालन में लगे रहो। राज्य से भ्रष्ट होकर पाण्डव तेरह वर्ष तक वन में रहे हैं। तुम यह उनका बड़ा भारी अपकार कर चुके हो। उस अपकार के कारण पाण्डवों के हृदय में जो क्रोध की आग धधक रही है उसे इस समय शान्त कर दो। यही बुद्धिमानी का काम होगा। तुम पाण्डवों का राज्य हज़म कर लेना चाहते हो, पर यह कभी नहीं हो सकता। क्रोधी कर्ण या तुम्हारा भाई दुःशासन, ये तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं कर सकेंगे। भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण, भीमसेन, अर्जुन और धृष्टद्युम्न आदि वीर योद्धा अगर क्रुद्ध होकर एक दूसरे से युद्ध करने खड़े होंगे तो यह निश्चय है कि घोर लोकक्षय होगा। इस कारण क्रोध के वश होकर व्यर्थ कुरुवंश का नाश मत कराओ। तुम्हारे कारण संसार चौपट न होने पावे। ५० हे मूढ़, तुम समझते हो कि भीष्म, द्रोण आदि योद्धा तुम्हारे लिए पूरी शक्ति लगाकर पाण्डवों से लड़ेंगे; किन्तु तुम्हारा यह समझना भूल है। ये महात्मा समझते हैं कि इस राज्य पर तुम्हारा और पाण्डवों का समान स्वत्व है। इसके सिवा भीष्म, द्रोण आदि योद्धा कौरवों और पाण्डवों पर समान प्रीति रखते हैं। पाण्डवों में इतनी विशेषता है कि वे तुमसे बढ़कर धर्मात्मा और विनीत हैं। ये महात्मा वीर लोग तुम्हारे राज्य से वृत्ति पाते हैं, इसलिए तुम्हारी ओर से लड़कर युद्ध में प्राण भले ही दे दें किन्तु युधिष्ठिर पर क्रोध नहीं करेंगे। मेरा कहना इतना ही है कि कोई मनुष्य लोभ से पराई सम्पत्ति नहीं ले सकता। यदि लेता भी है तो उसे भोग नहीं सकता। इसलिए लोभ छोड़कर सन्धि कर लो। ५४

एक सौ तीस अध्याय

दुर्योधन आदि का श्रीकृष्ण को क़ैद कर लेने की सलाह करना

वैशम्पायन कहते हैं—दुर्योधन ने माता के अर्थयुक्त मधुर उपदेश को भी अनादर की दृष्टि से देखा। क्रोध से विह्वल दुर्योधन फिर सभा से उठकर अपने साथी नराधमों के पास चल दिया। वहाँ वह द्यूतप्रिय धूर्त शकुनि के साथ सलाह करने लगा। दुर्योधन, दुःशासन, शकुनि और कर्ण ने आपस में सलाह करके यह निश्चय किया कि राजा धृतराष्ट्र और भीष्म पितामह से मिलकर चतुर श्रीकृष्ण हमें पकड़ने की इच्छा कर रहे हैं। इसलिए हम उससे पहले ही, इन्द्र ने जैसे बलि राजा को पकड़ लिया था वैसे, बलपूर्वक पुरुषसिंह कृष्ण को क़ैद कर लें। कृष्ण के पकड़े जाने की ख़बर पाकर पाण्डव लोग, जिसके दाँत तोड़ दिये गये हों उस साँप

की तरह, बिलकुल उत्साह-हीन और किंकर्तव्यविमूढ़ हो जायँगे। क्योंकि ये वासुदेव ही उनके रक्षक और सब कल्याणों की प्राप्ति के सहायक हैं। ऐसा होने पर सोमक भी कुछ उद्योग न करेंगे। महाराज धृतराष्ट्र के हाय-हाय करते रहने पर भी हम चतुर और अकेले कृष्ण को बलपूर्वक पहले पकड़कर फिर शत्रुओं से युद्ध करेंगे।

महाबुद्धिमान् और इशारे के जानने में प्रवीण सात्यकि ने उन लोगों का यह दुष्ट विचार १० जान लिया। वे उसी समय सभा-भवन के बाहर निकल गये और कृतवर्मा से सलाह करके कहने लगे कि मैं महाबाहु श्रीकृष्ण को यह ख़बर देने जाता हूँ। तब तक तुम कवच पहनकर, यादव सेना को युद्ध के लिए सुसज्जित करके, व्यूह-रचना के साथ शीघ्र सभा के द्वार पर आ जाओ। अब पर्वत-कन्दरा में प्रवेश कर रहे सिंह की तरह सात्यकि सभा-भवन के भीतर गये। वहाँ जाकर उन्होंने पहले महात्मा श्रीकृष्ण से और फिर राजा धृतराष्ट्र और विदुर से दुर्योधन के इस दुष्ट विचार का हाल कहा। सात्यकि ने हँसकर कहा—ये दुरात्मा लोग धर्म-अर्थ-काम से हीन और सज्जनों के द्वारा निन्दित, दूत के पकड़ने का, नीच कर्म करना चाहते हैं। परन्तु उनकी यह इच्छा सफल नहीं हो सकती। काम, क्रोध और लोभ के वशीभूत इन दुष्टों का अवश्य, अपने इस बुरे विचार के कारण, विनाश होगा। बालक या जड़मति उन्मत्त पुरुष जैसे जलती हुई आग को कपड़े से बाँधना चाहे वैसे ही ये लोग भी अपनी कुबुद्धि के कारण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण को क़ैद करना चाहते हैं।

दूरदर्शी महाप्राज्ञ विदुर सात्यकि के ये वचन सुनकर सब सभासदों के सामने राजा धृतराष्ट्र से कहने लगे—महाराज, आपके पुत्रों के सिर पर काल मँडला रहा है। देखिए, वे इन्द्र के छोटे भाई नारायण के अवतार श्रीकृष्ण को क़ैद करने की सलाह करके अत्यन्त अयश देने- २० वाला अनुचित काम करने को तैयार हैं। किन्तु वे मूढ़, प्रज्वलित आग में गिरनेवाले पतङ्ग की तरह, श्रीकृष्ण के सामने आकर क्षण भर भी जीते नहीं रह सकते। प्रभावशाली वासुदेव इच्छामात्र से, हाथियों को मारने के लिए उद्यत क्रोधान्ध सिंह की तरह, दम भर में उन दुष्टों को मार सकते हैं। किन्तु धर्मात्मा वासुदेव कभी ऐसा लोकनिन्दित काम न करेंगे।

अब महात्मा श्रीकृष्ण ने मित्रों के सामने ही धृतराष्ट्र की ओर देखकर कहा—महाराज! या तो दुर्योधन आदि मेरा निग्रह करें, अथवा मैं उन लोगों का दमन करूँ, आप दोनों बातों के लिए अनुमति दे दीजिए। मैं अकेला ही इन दुष्टों को दण्ड दे सकता हूँ; किन्तु ऐसा निन्दित काम मैं न करूँगा। पाण्डवों की सम्पत्ति लेने का उद्योग करके आपके पुत्र अपना राज्य भी खो देंगे। कौरव जो युद्ध करना चाहते हैं तो युधिष्ठिर का काम सिद्ध हुआ समझना चाहिए। अनुचर, मन्त्री, सहायक आदि समेत आपके पुत्रों को पकड़कर मैं अभी पाण्डवों के हाथ में सौंप सकता हूँ। यह मेरे लिए असाध्य नहीं है और ऐसे दुष्टों के साथ ऐसा व्यवहार करना बुरा भी नहीं।

किन्तु हे भरतश्रेष्ठ, क्रोध और पापबुद्धि से उत्पन्न होने के कारण यह काम मेरे लिए निन्दित है। इसलिए आपके आगे मैं ऐसा नहीं करूँगा। दुर्योधन की जो इच्छा है वही हो। उसमें मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं; बल्कि मैं वैसा करने के लिए आपके पुत्रों को अनुमति देता हूँ।

श्रीकृष्ण के वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा—हे विदुर, राज्यलोभी दुर्योधन को उसके मन्त्री, मित्र, भाई, अनुचर आदि के साथ शीघ्र यहाँ ले आओ। देखूँ, शायद फिर कुछ चेष्टा करके उसे सुमार्ग पर ला सकूँ। ३१

बूढ़े राजा की आज्ञा पाकर विदुर फिर दुर्योधन को, उसकी इच्छा न रहने पर भी, सभा-भवन में बुला लाये। कर्ण, दुःशासन और अन्य दुष्ट राजाओं के साथ रहनेवाले दुर्योधन से धृतराष्ट्र ने कहा—अरे पापी, क्रूर, तू नीच कर्म करने में तत्पर पापी सहायकों के साथ मिलकर दारुण पाप करना चाहता है! मैंने सुना है, इन पापी नराधमों की सहायता से तू दुर्धर्ष श्रीकृष्ण को पकड़ने के लिए तैयार है। तेरे ऐसे मूढ़ कुलाङ्गार के सिवा और कौन ऐसे सज्जनों द्वारा निन्दित, अकीर्त्ति के कारणरूप और असाध्य कार्य को करने का दुराग्रह कर सकता है? हाय! इन्द्र सहित देवता भी जिनको बलपूर्वक पकड़ नहीं सकते उन्हीं केशव को तू, चन्द्रमा को पकड़ने की इच्छा करनेवाले बालक की तरह, पकड़ लेने की इच्छा करता है! तू क्या नहीं जानता कि देव, गन्धर्व, असुर, मनुष्य, नाग आदि कोई भी प्राणी युद्ध में वासुदेव के सामने नहीं ठहर सकता? तू अच्छी तरह समझ ले कि हाथ से हवा या आग को पकड़ना जैसे दुष्कर है, सिर पर पृथ्वीमण्डल को लाद लेना जैसे असाध्य है, वैसे ही बलपूर्वक वासुदेव को पकड़ना भी त्रिकाल में असम्भव है।

अन्धे राजा धृतराष्ट्र जब समझा चुके तब महामति विदुर ने असहनशील दुर्योधन को लक्ष्य करके कहा—हे भरतश्रेष्ठ, वानरों का राजा महाबली द्विविद सौभ विमान के द्वार पर पूरे पराक्रम के साथ यत्न करके जिन्हें पकड़ने की इच्छा से शिलाएँ बरसाकर भी सफलता नहीं प्राप्त कर सका, उन्हें तुम बलपूर्वक पकड़ना चाहते हो! निर्मोचन नगर में छः हज़ार महाबली असुर अनेक यत्न करके भी जिन्हें पाशों से नहीं बाँध सके, उन्हें तुम क़ैद करना चाहते हो! प्राग्ज्योतिषपुर में महापराक्रमी नरकासुर अनेक दानवों के साथ कोटि यत्न करके भी जिन्हें नहीं पकड़ सका, उन्हें तुम पकड़ना चाहते हो! जिन असाधारण प्रभाववाले पुरुषोत्तम ने लड़कपन में ही निशाचरी पूतना, पक्षी का रूप रखनेवाले कागासुर और बकासुर को मार डाला; जिन्होंने गोकुल की रक्षा के लिए बायें हाथ पर इतना बड़ा गोवर्द्धन पहाड़ उठा लिया और जिन्होंने अनिष्ट करनेवाले अरिष्टासुर, धेनुकासुर, चाणूर, केशी आदि महाबली असुरों को मार डाला, उन पराक्रमी श्रीकृष्ण को तुमने अब तक नहीं पहचाना? जिन्होंने महायुद्ध में कंस, जरासन्ध, शिशुपाल, दन्तवक्र आदि राजाओं को नष्ट कर दिया; जिनसे महाबाहु बाणासुर, ४०

४६ वरुण और अग्नि ने हार मान ली; जिन्होंने कल्पवृक्ष लाकर इन्द्र का घमण्ड चूर कर दिया; जो स्वयं सबके विधाता हैं और जिनका विधाता दूसरा नहीं है, उन पराक्रमी श्रीकृष्ण को तुमने अब तक नहीं पहचाना? जो सब पौरुषों के आधार हैं, जो अपनी इच्छामात्र से सहज ही सब काम कर सकते हैं, जो प्रलयकाल के महासागर में शेषशय्या पर सोकर योगनिद्रा को स्वीकार करते हैं, जिन्होंने मधु-कैटभ नाम के असुरों को और हयग्रीव दानव को मारा है, उन महापराक्रमी नारायण वासुदेव को तुम अब तक नहीं पहचान सके? क्रुद्ध विषैले नाग के तुल्य, प्रचण्ड तेज-राशि, अनिन्दित श्रीकृष्ण को पकड़ने के लिए उनके पास जाते ही तुम अपने अनुचरों ५३ और सहायकों समेत वैसे ही भस्म हो जाओगे जैसे पतङ्ग आग में कूदकर जल जाते हैं।

एक सौ इकतीस अध्याय

श्रीकृष्ण का अपनी महिमा दिखाकर सभा से जाना

वैशम्पायन कहते हैं कि अब शत्रुदमन महाप्रभावशाली वासुदेव ने दुर्योधन की ओर देखकर कहा—हे दुर्योधन! तुम बड़े मूर्ख हो, इसी कारण मुझे अकेला समझकर हराना या पकड़ना चाहते हो। तुम सच समझो, मैं अकेला नहीं हूँ। सब पाण्डव, अन्धक और वृष्णिवंश के यादव, आदित्य, रुद्र, वसु आदि देवता और ऋषि इसी स्थान पर मेरे समीप हैं। इसके बाद शत्रुसेना का संहार करनेवाले वासुदेव ऊँचे स्वर से हँसे। उस समय उनके शरीर से तेज के समूह निकलने लगे। उनके शरीर से बिजली के समान तेजस्वी, अँगूठे बराबर, देवता प्रकट होने लगे। उनके मस्तक में ब्रह्मा, हृदय में रुद्र, भुजाओं में लोकपाल, मुख में अग्नि और अन्य अङ्गों में आदित्य, विश्वेदेवा, वसुगण, अश्विनीकुमार, साध्यगण और इन्द्र आदि अन्य सब देवता देख पड़ने लगे। इसी तरह बहुत से यक्ष, राक्षस और गन्धर्व उनके शरीर में देख पड़े। दाहने हाथ में धनुर्धर अर्जुन और बाएँ हाथ में हल-मूसल लिये बलराम प्रकट हुए। उनके पृष्ठ भाग में युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल और सहदेव शस्त्र ताने हुए देख पड़े। उनके अग्रभाग में सशस्त्र अन्धक और वृष्णिवंश के यादव देख पड़े। शङ्ख, चक्र, गदा, शक्ति, शार्ङ्ग धनुष, हल और नन्दक आदि सब प्रज्वलित शस्त्र उनके हाथों में थे। उनके कान, नाक, नेत्र और रोम आदि के छिद्रों से सूर्य की प्रचण्ड किरणों के समान धुएँ सहित आग की लपटें निकलने लगीं। विश्वमूर्ति वासुदेव का यह घोर रूप देखकर भीष्म, विदुर, सञ्जय और तपस्वी ऋषियों के सिवा सब लोग डर गये और उन्होंने अपनी आँखें मूँद लीं। भगवान् नारायण ने उस समय १५ द्रोणाचार्य आदि को दिव्य दृष्टि दे दी, जिससे वे निर्भय होकर भगवान् के उस रूप को देखते रहे। हे भरतश्रेष्ठ, कौरवों की सभा में नारायण के उस अद्भुत रूप को देखकर देवता लोग आकाश से फूल बरसाने और नगाड़े बजाने लगे।

तब राजा धृतराष्ट्र ने कहा—हे वासुदेव, हे यादवश्रेष्ठ, कृपा करके मुझे इस समय नेत्र दे दीजिए। मैं केवल आपका रूप देखना चाहता हूँ। आप अपना रूप दिखाकर फिर मेरी दृष्टि हर लीजिएगा। मैं और किसी को देखना नहीं चाहता। वासुदेव ने कहा—हे कुरुश्रेष्ठ, तुम्हारे दो दिव्य नेत्र हो जायँ।

वासुदेव का विश्वरूप देखने की इच्छा रखनेवाले धृतराष्ट्र को नेत्र प्राप्त हो गये। उनके नेत्र प्रकट होते देख सब राजाओं और ऋषियों को बड़ा विस्मय हुआ। सब लोग मधुसूदन की स्तुति करने लगे। उस समय पृथ्वी काँप उठी, समुद्र विचलित हो उठे, सब राजा विस्मित और चकित हो गये। तब पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ने अपनी वह विचित्र दिव्य मूर्ति अदृश्य करके पहले का रूप धारण कर लिया। अब वे ऋषियों से आज्ञा लेकर, कृतवर्मा और सात्यकि का हाथ पकड़े हुए, सभा-भवन से निकलकर जाने को तैयार हुए। उस समय बड़ा कोलाहल हुआ। नारद आदि महर्षि उसी समय वहाँ से अन्तर्द्धान होकर अपने अभीष्ट स्थानों को चल दिये। उन ऋषियों का एकाएक अन्तर्द्धान होना भी एक आश्चर्य की बात हुई।

इधर कौरवों ने जब वासुदेव को जाते देखा, तब इन्द्र के पीछे चलनेवाले देवताओं की तरह वे उनके पीछे हो लिये। किन्तु महात्मा वासुदेव ने उनकी ओर देखा भी नहीं। वे धुएँ सहित आग की तरह आगे बढ़ने लगे। द्वार पर पहुँचकर श्रीकृष्ण ने देखा कि दारुक सारथी किंकिणी-जाल-मण्डित, सुवर्णजालयुक्त, सफ़ेद, व्याघ्रचर्म से शोभित, शैव्य सुग्रीव आदि चार घोड़ों से युक्त, मेघ के समान गम्भीर शब्दवाला दिव्य रथ लिये खड़ा है। महात्मा श्रीकृष्णचन्द्र यादवश्रेष्ठ कृतवर्मा के साथ उस रथ पर बैठ गये।

रथ पर बैठकर जब वासुदेव चलने लगे तब महाराज धृतराष्ट्र ने उनसे कहा—हे जनार्दन, पुत्रों पर जितनी मेरी प्रभुता है सो आपने अपनी आँखों देख लिया। यह भी आपने जान लिया कि कौरवों के भले की इच्छा से मैंने अनेक यत्न किये। सब बातों को देखकर

आप मुझे किसी तरह का दोष न दीजिएगा। हे केशव, पाण्डवों के बारे में मेरे हृदय में कोई बुरा विचार नहीं है। मैं हृदय से शान्ति चाहता था। उसके लिए मैंने दुर्योधन से जो कुछ कहा सो आपको और सब कौरवों को अच्छी तरह मालूम है।

वैशम्पायन कहते हैं कि तब महाबाहु जनार्दन ने महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म पितामह, द्रोण, कृपाचार्य, वाह्लीक और विदुर को सम्बोधन करके कहा—कौरव-सभा में कैसी घटना हुई, दुर्मति दुर्योधन ने क्रोध के वश होकर अशिष्ट की तरह कैसा निन्दित काम करने की चेष्टा की और महाराज धृतराष्ट्र ने कैसे अपने को असमर्थ बताया, सो सब आप लोगों ने प्रत्यक्ष देख लिया। अब मैं युधिष्ठिर के पास जाने के लिए आप लोगों से विदा होता हूँ।

फिर सबसे बिदा होकर कृष्णचन्द्र ने अपना रथ हँकवा दिया। भीष्म, द्रोण, कृप, विदुर, वाह्लीक, धृतराष्ट्र, अश्वत्थामा, विकर्ण, युयुत्सु आदि महाधनुर्द्धर महारथी योद्धा कुछ दूर तक उनको पहुँचाने गये। भगवान् वासुदेव कौरवों के सामने ही रथ ठहराकर देवी कुन्ती के पास, उनसे विदा होने को, गये। ४१

एक सौ बत्तीस अध्याय

कुन्ती और श्रीकृष्ण की बातचीत

वैशम्पायन कहते हैं कि वासुदेव ने बुआ के घर में जाकर उनके चरणों में प्रणाम किया, और फिर संक्षेप में कौरवों की सभा का हाल यों कह सुनाया—बुआ, मैंने और ऋषियों ने बहुत से युक्तियुक्त हितकारी श्रेष्ठ वचन कहकर सन्धि का प्रस्ताव किया, परन्तु दुर्बुद्धि दुर्योधन ने नहीं माना। इससे जान पड़ता है कि वह पापी अपने अनुगामी दुर्बुद्धि राजाओं के साथ शीघ्र ही, पके हुए फल की तरह, युद्धभूमि में मरकर गिरेगा। अब मैं आपसे विदा होकर पाण्डवों के पास जाऊँगा। आप उनसे जो कुछ कहना चाहती हों, सो बताइए। मैं आपका सन्देश सुनना चाहता हूँ।

कुन्ती ने कहा—भैया, तुम धर्मात्मा युधिष्ठिर से मेरी ओर से कहना कि हे पुत्र, पृथ्वी-पालन रूप तुम्हारे महान् धर्म की हानि हो रही है। धर्मपालन के अवसर को तुम वृथा न जाने दो। जैसे वेद के अर्थ को न जाननेवाले अज्ञ वेदपाठी की बुद्धि केवल वेदमन्त्रों का लगातार पाठ करने से नष्ट हो जाती है वैसे ही तुम्हारी बुद्धि भी शान्ति-धर्म को ही देखती है। तुम विधाता के द्वारा विहित अपने क्षत्रिय धर्म को देखो। बाहुबल से अपनी जीविका चलाना ही क्षत्रिय का धर्म है। ब्रह्मा ने क्षत्रिय जाति को अपनी भुजाओं से उत्पन्न करके उसकी यही वृत्ति नियत कर दी है। युद्धरूपी क्रूर कर्म और प्रजापालन ही क्षत्रिय का धर्म है। मैंने वृद्धों के

मुँह से इस विषय की एक कथा सुनी है। वह मैं तुमको सुनाती हूँ। पूर्व समय में धनपति कुबेर राजर्षि मुचुकुन्द पर प्रसन्न होकर उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल का राज्य देने लगे थे, किन्तु उन्होंने नहीं लिया। मुचुकुन्द ने कहा—मैं अपने बाहुबल से जीता हुआ राज्य भोग करने की इच्छा रखता हूँ। राजा के ये वचन सुनकर कुबेर बहुत विस्मित और प्रसन्न हुए। क्षत्रियधर्मनिष्ठ मुचुकुन्द ने अपनी इच्छा के अनुसार बाहुबल से सब पृथ्वीमण्डल को जीतकर साम्राज्य-भोग किया।

१०

राजा यदि अच्छी तरह प्रजा की रक्षा करता है, तो उसे प्रजा के किये धर्म का चतुर्थांश फल मिलता है। वह यदि धर्म का पालन करता है तो उसे स्वर्ग में देवपद मिलता है। और, अगर वह अधर्म करता है तो नरक में जाता है। राजा यदि यथोचित रूप से दण्डनीति का प्रयोग करता है तो ब्राह्मण आदि चारों वर्ण अपने-अपने धर्म में लगे रहकर पुण्य-सञ्चय कर सकते हैं। जब राजा भली भाँति अपने धर्म के नीतिसङ्गत कार्य करता है तभी श्रेष्ठ सत्य युग का आविर्भाव होता है। हे धर्मज्ञ, समय के अनुसार राजा होता है या राजा के अनुसार समय होता है, यह सन्देह तुम न करना। राजा के अनुसार ही समय होता है। राजा ही सत्य युग, त्रेता युग, द्वापर युग और कलियुग का प्रवर्त्तक है। जो राजा अपने अच्छे कर्मों से सत्य युग को प्रवृत्त करता है, वह पूर्ण रूप से स्वर्गभोग करता है। ऐसे ही त्रेता युग को प्रवृत्त करनेवाला राजा आंशिक रूप से स्वर्ग भोग करता है। द्वापर युग को प्रवृत्त करनेवाला राजा यथासम्भव पुण्यफल पाता है। किन्तु कलियुग को प्रवृत्त करनेवाला राजा अत्यन्त पापभागी होकर अनन्त समय तक नरक भोगता है। राजा का दोष सारे जगत् को लगता है और जगत् का दोष राजा को लगता है। इसलिए बेटा, तुम अपने बाप-दादे के समय से चले आ रहे राजधर्म को देखो। तुम जिस धर्म को ग्रहण करना चाहते हो वह राजधर्म नहीं है। करुणा के वश होकर लगातार कायरपना, दीनता या सरल भाव ग्रहण करने से, प्रजा-पालन से प्राप्त होने-

२०

वाला फल नहीं मिल सकता। तुम इस समय अपनी बुद्धि के अनुसार जो कर रहे हो वह मेरी, महाराज पाण्डु की और पितामह की आशा और आशीर्वाद के विरुद्ध है। मैं नित्य यही प्रार्थना करती रही हूँ कि तुम यज्ञ, दान, तप, शूरता, प्रज्ञा, सन्तान, महिमा, बल और बड़ी आयु से सम्पन्न रहो। ब्राह्मण भी तुम्हारी बड़ी आयु, धन और वंशवृद्धि के उद्देश्य से सदा देवताओं और पितरों के लिए स्वाहा और स्वधा का अनुष्ठान करते रहे हैं। देवता और पितर भी क्षत्रिय-कुमारों से दान, वेदपाठ, यज्ञ और प्रजापालन की आशा करते हैं। मेरा यह कहना धर्मसङ्गत है या अधर्मयुक्त, सो तुम स्वभाव से ही जानते हो।

हे कृष्णचन्द्र, मेरे पुत्र पाण्डव विद्वान् और अच्छे कुल में उत्पन्न होकर भी इस समय जीविका बिना क्लेश पा रहे हैं। दान देनेवाले शूर राजा के पास भूखे-प्यासे लोग आकर आश्रय प्राप्त करें और प्रसन्न हों, इससे बढ़कर और धर्म क्या होगा? इस संसार में राज्य पाकर धार्मिक पुरुष को चाहिए कि किसी को धन देकर, किसी को बल से और किसी को मधुर वाणी से अपने अनुगत बना ले। ब्राह्मण भिक्षावृत्ति से जीविका चलावे, क्षत्रिय प्रजा-
३० पालन करे, वैश्य धनोपार्जन करे और शूद्र तीनों वर्णों की सेवा करे; यही सनातन धर्म है। भिक्षा माँगने की तुम्हारे लिए मनाही है और खेती-बारी करना तुम्हारे लिए निषिद्ध है। तुम क्षत्रिय हो, इसलिए तुम्हें बाहुबल से ही अपनी जीविका प्राप्त करनी चाहिए। हे महा-बाहु! साम, दान, भेद, दण्ड, नीति आदि किसी उपाय से तुम शत्रु के हाथ में पड़े हुए अपने पिता के राज्य को प्राप्त करो। हे मित्रों को आनन्द देनेवाले, इससे बढ़कर दुःख और क्या होगा कि तुम्हें पैदा करके भी मैं पराये अन्न से पेट भर रही हूँ! इससे तुम राजधर्म के अनुसार युद्ध करो। कायरों की वृत्ति स्वीकार करके अपने पुरखों का नाम डुबाना अथवा क्षीणपुण्य होकर भाइयों
३४ के साथ पापमयी नरक-यातना या बुरी गति प्राप्त करना तुम्हारे लिए सर्वथा अयोग्य है।

एक सौ तेंतीस अध्याय

कुन्ती का विदुला की कथा कहना

कुन्ती ने कहा—हे शत्रुदमन, यहाँ पर मैं उदाहरण के तौर पर विदुला-सञ्जय-संवाद कहती हूँ। यह बहुत प्राचीन इतिहास है। इसे कल्याणदायक समझकर तुम अच्छी तरह युधिष्ठिर के आगे कहना। अच्छे कुल में उत्पन्न बुद्धिमती एक विदुला नाम की राजकुमारी थी। वह क्षत्रिय-धर्म में निरत, आत्माभिमानिनी, उग्र स्वभाववाली और राजसमाज में बहुत जानकार कहलाती थी। विदुला का पुत्र युद्ध में सिन्धुराज से हारकर घर में पड़ा हुआ था। दीनभाव से अपने

विदुला का अपने पुत्र को फटकारना—पृ० १७९२

ह युधिष्ठि
वह क्षत्रि
कहलाती थी।
ाव से अपने

पुत्र को पड़े देखकर कठिन स्वभाववाली विदुला इस प्रकार उसको फटकारने लगी—अरे शत्रुओं का आनन्द बढ़ानेवाले, तू मेरा पुत्र नहीं है। तू मेरे गर्भ और अपने पिता के वीर्य से नहीं उत्पन्न हुआ। तू कुलाङ्गार कहाँ से इस कुल में आ गया है? तुझमें तनिक भी पौरुष नहीं। तेरा आकार, बुद्धि और प्रकृति नपुंसकों की सी है। मर्दों में तेरी गिनती करना भी अनुचित है। हाय! तू बिलकुल निराश हो गया है। तेरी भुजाओं में बल नहीं है। अरे दुर्बुद्धि, जो तू अपना भला चाहता है तो पुरुषों के योग्य युद्ध का भार ग्रहण कर। थोड़े में सन्तुष्ट मत हो। अपने को भूल मत जा। डर छोड़कर उत्साह और तत्परता के साथ शङ्का से व्याकुल चित्त को दृढ़ कर। अरे कायर, हारकर स्वाभिमान गवाँकर बन्धुओं को शोकाकुल और शत्रुओं को आनन्दित करता हुआ इस तरह पड़ा न रह। शीघ्र युद्ध के लिए कमर कसकर उठ खड़ा हो। सच है, छोटी नदियाँ थोड़े जल में ही भर जाती हैं, चूहे की अञ्जलि थोड़े ही पदार्थ में भर जाती है और कायर लोग थोड़े ही लाभ में तृप्त और सन्तुष्ट हो जाते हैं।
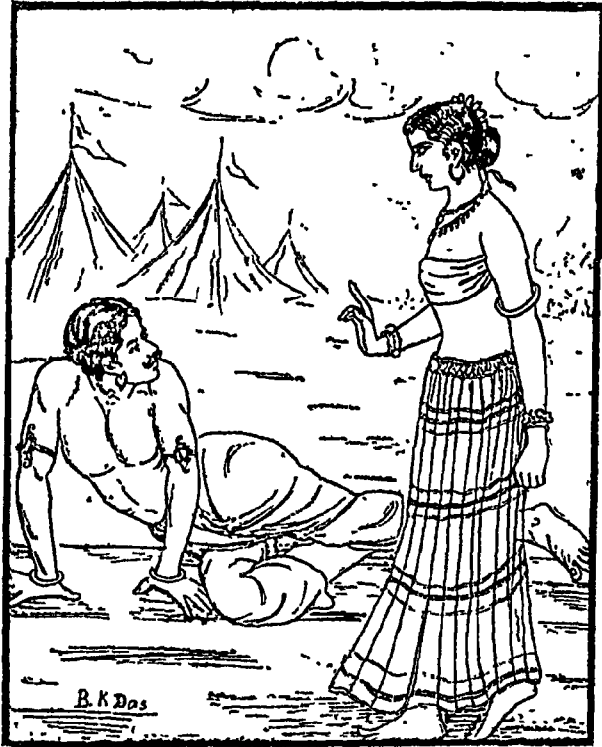
अरे कुलघातक! साँप के मुँह में हाथ डालकर उसके दाँत उखाड़ने में जल्दी प्राण भले ही दे दे, पर कायरपन के साथ मौत के मुँह का कौर न बन। जीवन की आशा छोड़कर पराक्रम दिखा। बाज़ पक्षी की तरह बेखटके इधर-उधर घूमकर, लड़-झगड़कर या चुपचाप, शत्रुओं पर वार करने का अवसर देखता रह। वज्रपात से मरे हुए पुरुष की तरह तू क्यों पड़ा हुआ है? जल्द उठ। शत्रु से हारकर यों सोना ठीक नहीं है। तू इस तरह दीनभाव से अस्त न हो, बल्कि अपने पौरुष से सर्वत्र प्रसिद्ध होने की चेष्टा कर। सन्धि मध्यम उपाय है, भेद अधम और दान नीच उपाय है। इन नीतियों का सहारा लेने की इच्छा मत कर। दण्ड ही उत्तम उसी दण्डनीति के प्रयोग की चेष्टा कर। तेंदू की लकड़ी की तरह घड़ी भर ही रह, परन्तु जीवन की आशा से ज्वालाहीन भूसी की आग की तरह विषाद के धुएँ छिपा मत। बहुत समय तक धुआँ देते रहने की अपेक्षा घड़ी भर का प्रज्वलित रहना है। किसी राजा के घर में गधे की तरह सब सहनेवाला, तेज से हीन, कोमल- १०

प्रकृति का पुत्र कभी न उत्पन्न हो। रण-निपुण वीर पुरुष शत्रु से युद्ध ठानकर, पौरुष दिखाकर, धर्म के ऋण से उरिन हो जाते हैं। वे आत्मग्लानि के भागी न होकर प्रसन्न रहते हैं। सफलता मिले चाहे न मिले, उसके लिए समझदार आदमी शोक नहीं करते। वे लगातार बल से सिद्ध होनेवाले काम करते रहते हैं; उन्हें धन की तृष्णा नहीं होती। इसलिए हे पुत्र, या तो अपनी भुजाओं का बल दिखा, नहीं तो मर जा। धर्म से विमुख होकर क्यों जीना चाहता है? अरे नपुंसक! तेरे इष्टापूर्त कर्म, कीर्ति और भोगमूल राज्य का ऐश्वर्य, सब कुछ नष्ट हो चुका है। फिर तू क्यों वृथा जी रहा है? वीर पुरुष, गिरते समय भी, शत्रु को लेकर गिरते हैं। अपनी

२० जड़ कट जाने पर भी पुरुष को कभी खेद न करना चाहिए। इसलिए साहसी और बली घोड़ों की तरह उद्योग और विक्रम दिखा; भार वहन कर और पौरुष-सत्व-स्वाभिमान आदि गुणों को ग्रहण कर। तेरे कारण कुल डूब रहा है, उसका उद्धार कर।

जन-समाज में जिसके अद्भुत महत् चरित्र की चर्चा नहीं होती, उसकी गिनती न तो स्त्रियों में है और न मर्दों में; उसका जन्म मनुष्यों की गिनती बढ़ाने का कारण मात्र है। दान, सत्य, तप, विद्या और अर्थ प्राप्त करने के कामों में जिसका यश नहीं प्रसिद्ध हुआ, वह माता की विष्ठा के समान है। जो पुरुष वेद-शास्त्र का पढ़ना, तप, संपत्ति और पराक्रम आदि बातों में औरों से बढ़ सकता है, वही असली पुरुष है। हे पुत्र, मूर्ख और कायर की तरह अयश बढ़ानेवाली भिक्षावृत्ति का सहारा लेना तेरा कर्तव्य नहीं है। लोगों के अनादर-पात्र, भोजन-वस्त्र से मोहताज, नीच-हृदय, हीन-वीर्य और शत्रुओं का आनन्द बढ़ानेवाले पुरुष को पाकर उसके बन्धु कभी सुखी नहीं होते।

जान पड़ता है, हमें स्थान से भ्रष्ट, राज्य से निर्वासित, सब इच्छाओं से वञ्चित और दीन होकर बिना जीविका के मरना पड़ेगा। हे पुत्र, तू कुलाङ्गार और अपने कुल के अयोग्य काम करनेवाला है। तुझे अपने गर्भ में रखने के कारण मैं पुत्ररूपी कलियुग को पैदा करनेवाली समझी

३० जाऊँगी। मेरी तरह कोई भी स्त्री ऐसे क्रोधशून्य, निरुत्साही, वीर्यरहित पुत्र को न पैदा करे! बेटा, अब पड़े-पड़े धुआँने (शोक से मलिन होने) का समय नहीं है; प्रज्वलित होकर, शत्रुओं का विनाश कर। शत्रुओं के सिर पर क्षणभर प्रज्वलित होकर बुझ जाना भी अच्छा है। [शत्रुओं के प्रति] क्रोधी और क्षमाहीन पुरुष ही सच्चा मर्द है। जिसमें क्षमा तो है किन्तु क्रोध नहीं है उसकी गिनती मर्दों में क्या, स्त्रियों में भी न करनी चाहिए। सन्तोष, दया, शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध की तैयारी न करना और डर, ये चार बातें लक्ष्मी को नष्ट करती हैं। जो मनुष्य निरीह अर्थात् आलसी है, उसको कभी महत्त्व नहीं मिलता। इस कारण तू इस समय पराभव के दोष से आत्मा को बचाकर फिर स्वार्थसाधन में लग जा। हृदय को लोहे की तरह कड़ा करके गई हुई सम्पत्ति लेने की चेष्टा कर। प्रजापालन आदि कठिन कामों का भार ढोने में समर्थ होने के

कारण या शत्रु का मुक़ाबला करने से ही मनुष्य का नाम पुरुष पड़ा है। जो मर्द औरतों के ढंग से जीवन बिताता है वह निरर्थक पुरुष है। शूर, पराक्रमी, सिंह सा बली पुरुष अगर मर जाता है तो भी उसके अधिकार में रहनेवाली प्रजा आनन्द से रहती है। जो क्षत्रिय राजा अपने भोग, सुख और प्रिय परिवार को छोड़कर राजलक्ष्मी की खोज में रहता है वह झट-पट अपने साथियों और बन्धु-बान्धवों को आनन्दित करता है।

तब विदुला के पुत्र सञ्जय ने कहा—माता! मैं जो तुम्हारी आँखों के आगे से चला जाऊँगा या मर जाऊँगा, तो तुम आभूषण, सुख-भोग, सारी पृथ्वी या जीवन लेकर क्या करोगी?

विदुला ने कहा—पुत्र, मेरी इच्छा यही है कि तेरे शत्रु निरादर पानेवाले निन्दित पुरुषों के लोकों में जायँ और तेरे मित्र आदर पानेवाले लोगों के लोकों को प्राप्त करें। तू बिना नौकर- ४० चाकरों के, पराये अन्न से पेट पालनेवाले, दीन, हीन पुरुषों की वृत्ति को न ग्रहण कर। जैसे सब प्राणी मेघों से और देवता इन्द्र से आशा लगाते और जीविका पाते हैं, वैसे ही ब्राह्मण और मित्र तेरे आश्रय में जीविका पावें। पके हुए फलों से लदे हुए पेड़ के समान जिस मनुष्य का आश्रय लेकर लोग अपनी जीविका चलाते हैं उसी का जीवन सार्थक है। जो पुरुष अपने बाहुबल से अपनी जीविका चलाता है वह इस लोक में भारी यश और परलोक में अच्छी गति पाता है। ४५

एक सौ चौंतीस अध्याय

विदुला का फिर पुत्र को उत्तेजित करना

विदुला ने कहा—बेटा, जो ऐसी दुर्दशा के समय तू पौरुष को छोड़ देगा तो तुझे जल्दी ओछे लोगों के नीच मार्ग में पैर रखना पड़ेगा। जो क्षत्रिय वृथा जीवन की आशा में फँसकर यथाशक्ति पराक्रम के साथ तेज नहीं दिखाता, उसे पण्डित लोग चोर कहते हैं। हाय! जैसे मृत्यु के मुँह में पड़े हुए पुरुष को दवा नहीं रुचती वैसे ही सच्चे स्वार्थ को सुझानेवाले, गुणपूर्ण, सुभाषित (अच्छे वचन) तुझे नहीं रुचते। सिन्धुराज के पास सहायक और सेना है सही किन्तु कोई उस पर प्रेम नहीं रखता। कमज़ोरी और उपाय न सूझने के कारण अपनी रक्षा में असमर्थ प्रजा लगातार उस पर विपत्ति आने के समय की बाट जोह रही है। इसके सिवा जो उसके प्रकट शत्रु हैं वे भी, तुझे पौरुष की राह पकड़ते देखकर, यत्न के साथ अपनी सम्पत्ति और सेना बढ़ाकर, उसके विरुद्ध उठ खड़े होंगे। इसलिए तू भी उन लोगों के साथ मिलकर शत्रु के बुरे दिन की राह देखता हुआ पर्वत-दुर्ग का आश्रय ले।

बेटा! तेरा नाम सञ्जय अवश्य है, किन्तु जय पाने का कोई काम या उद्योग तुझमें नहीं देख पड़ता। इसी लिए कहती हूँ कि अपना नाम सार्थक कर। एक चतुर विद्वान् ब्राह्मण ने

तेरे जन्म के समय कहा था कि यह बालक पहले बड़ा दुःख पाकर अन्त को परम समृद्धि प्राप्त करेगा। आज उस ब्राह्मण की बात याद कर ही तेरी विजय की सम्भावना से मैं ऐसे आग्रह के साथ तुझे उत्तेजित कर रही हूँ। मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि जो आदमी आप यथार्थ नीति के अनुसार काम करता है उसके कार्य की सिद्धि में और-और लोग भी सहायक बन जाते हैं, उसका मनोरथ अवश्य पूरा होता है। हार हो या जीत, राज्य मिले या न मिले, दोनों को समान समझकर दृढ़ सङ्कल्प से युद्ध कर। बार-बार हारना भले पड़े, परन्तु युद्ध का उद्योग न छोड़। शम्बर का कहना है कि जब आज या कल खाने का ठिकाना न हो, उससे बढ़कर बुरी दशा नहीं है। उन्होंने ऐसी अवस्था को पति और पुत्र के मरने से भी बढ़कर कष्ट देनेवाली बताया है। मतलब यह कि दारिद्र्य का दुःख मरने का ही दूसरा रूप है।

देख, मैं श्रेष्ठ कुल की बेटी और श्रेष्ठ कुल की बहू हूँ। कमलिनी जैसे एक सरोवर से दूसरे सरोवर में जाती है वैसे ही मैं भी एक कुल से दूसरे कुल में आई हूँ। ससुराल में आकर मैं घर की मालकिन हुई। पति ने भी मेरा बड़ा आदर और प्यार किया। पहले सुहृद्गण मुझे सदा बहुमूल्य माला आदि गहने पहने, शरीर में गन्धद्रव्य लगाये और प्रसन्न देखते थे; वे ही इस समय मेरी यह दारुण दुर्दशा देख रहे हैं। हे सञ्जय, तू जब मुझे और अपनी भार्या को दीन-हीन दुर्बल दशा में देखेगा, तब तुझे जीने से मरना ही अच्छा मालूम होगा! दास, दासी, आचार्य पुरोहित आदि सब जीविका के बिना जब तुझे छोड़ देंगे तब तेरे जीवन का प्रयोजन भी समाप्त हो जायगा। मैं जो फिर तुझे पहले की तरह यश और गौरव बढ़ानेवाले श्रेष्ठ कार्य करते न देखूँगी तो मेरे ही हृदय को कैसे शान्ति मिलेगी? कोई ब्राह्मण यदि मुझसे कुछ माँगेगा तो उससे 'नाहीं' करते मेरी छाती फट जायगी। अब से पहले कभी मेरे या मेरे स्वामी के मुँह से नकार नहीं निकली। इस समय जो औरों के आश्रय में रहकर पेट पालना पड़ेगा तो मैं अवश्य अपने प्राण दे दूँगी। इसलिए इस समय तू ही नाव की तरह हम सबको इस विपत्ति-सागर के पार लगा। उसके लिए अगर तुझे रहने के अयोग्य स्थान अथवा स्थिति में रहना पड़े, या घोर सङ्कट में पड़ना पड़े, तो वह भी तुझे स्वीकार करना पड़ेगा। हम सब परिवार के लोग इस चिन्ता से मृत-सदृश हो रहे हैं; हमारे शरीर में जान डालना तेरा काम है। यदि जीने की इच्छा है तो शत्रुओं को हराने का उद्योग कर; नहीं तो इस तरह नपुंसक-वृत्ति ग्रहण करके सदा खिन्न और दीन रहने से तो मर जाना ही अच्छा है। शूर पुरुष केवल एक शत्रु को जीतकर भी यश प्राप्त कर सकता है। देख, देवताओं के राजा इन्द्र ने वृत्रासुर को मारकर ही महेन्द्र नाम पाया है और वे सब देवताओं के प्रभु होकर सब लोकों के स्वामी हुए हैं। उत्साही वीर पुरुष समर में अपना नाम सुनाकर शत्रु को ललकारते हैं। युद्ध में पराक्रम दिखाकर, शत्रु-सेना के अगले भाग को भगाकर, या उधर के किसी प्रधान योद्धा को मारकर यश प्राप्त कर लेते

र अन्य शत्रु आप ही आप दबकर अधीन हो जाते हैं। रण में मरने-मारने को उद्यत शूर पुरुष
ी सब इच्छाएँ कायर लोग पूरी करते हैं। साहसी सच्चरित्र पुरुष, राज्य या जीवन की परवा
ा करके, शत्रु को पाकर उसे मारे बिना नहीं शान्त होते। बेटा, केवल पराक्रम प्रकट करने से
ो स्वर्ग का द्वार अथवा राज्य प्राप्त हो सकता है। यह सोचकर जलती हुई लकड़ी के चक्र की
ारह शत्रुसेना में घुस पड़। शत्रुओं को मारकर अपने धर्म का पालन कर। मैं तुझे शोक से
याकुल मित्रमण्डली, और आनन्द से उछल रहे शत्रुदल, के बीच अत्यन्त खिन्न और दीन हीन
ुरुष की तरह रोते न देखूँ। अपने सौवीर देश की कन्याओं द्वारा पहले की तरह तू बड़ाई ३१
ओर आनन्द प्राप्त कर। दीन होकर शत्रु के देश—सिन्धु देश—की कन्याओं के उपहास का पात्र
न बन। तू रूप, गुण, विद्या, कुल, यश और प्रतिष्ठा से युक्त नौजवान है। बैल की तरह पराया
ोझ ढोने के निन्दित कार्य से तो तेरे लिए मरना ही भला है। तुझे दीन भाव से औरों का आसरा
ेते देखकर मुझे भी शान्ति न मिलेगी। इस कुल में कोई भी औरों के पीछे चलनेवाला अनुचर
ुरुष नहीं उत्पन्न हुआ। इसलिए औरों के अधीन होकर जीना तेरे लिए उचित नहीं है।

विधाता ने जैसा चिरप्रसिद्ध सनातन धर्म क्षत्रियों के लिए नियत कर दिया है, और पहले के और अब के पण्डित उसके बारे में जैसा वर्णन करते हैं, सो सब मैं जानती हूँ। जो व्यक्ति प्रसिद्ध क्षत्रियवंश में जन्म लेकर सब धर्मों के यथार्थ मर्म को जानता हो, उसे प्राणों के डर से शत्रु के आगे झुकना कभी उचित नहीं। यह उसका कर्तव्य नहीं है। उद्योग ही पौरुष है। इसलिए सदा उद्योग करते रहना चाहिए, सिर नीचा करना सदा निन्दित है। असमय ही मर जाना अच्छा, किन्तु शत्रु के अधीन होना ठीक नहीं। महात्मा वीर पुरुष मस्त गजराज की तरह विचरते हैं। वे केवल धर्म के अनुरोध से ब्राह्मणों के आगे सिर झुकाते हैं। बलपूर्वक और वर्णों को अपने अधीन करना और अधर्म को बंद करना उनका कर्तव्य होता है। वे चाहे सहाय-वान् हों चाहे निराश्रय, सदा यही किया करते हैं। ४१

एक सौ पैंतीस अध्याय

सञ्जय और विदुला के उत्तर-प्रत्युत्तर

सञ्जय ने कहा—हे करुणाहीन, क्रोधी और वीर स्वभाववाली माता, जान पड़ता है कि तुम्हारा हृदय विधाता ने लोहे से बनाया है। अहो! क्षत्रियों के आचार-व्यवहार कैसे विचित्र हैं! मैं तुम्हारा एकलौता बेटा हूँ, तो भी तुम दूसरे की माता के समान कठोर वचन कहकर मुझे घोर युद्ध की भूमि में भेजने का उद्योग कर रही हो। मैं पूछता हूँ, जो मैं तुम्हारा प्रिय पुत्र युद्ध में मारा गया तो तुम सारी पृथ्वी, गहने, भोग-सुख या जीवन लेकर क्या करोगी?

विदुला ने कहा—बेटा, धर्म और अर्थ के उद्देश्य से ही मनुष्य सब कार्यों का आरम्भ करते हैं। मैं उसी धर्म और अर्थ की सिद्धि के लिए तुझे युद्ध-भूमि में भेजती हूँ। देख, तेरे पराक्रम दिखाने का यही ठीक समय है। इस समय कर्तव्य-पालन में विमुख होने से लोक-समाज में तेरा अपमान होगा। तू आप ही अपना और मेरा घोर अनिष्ट करेगा। फिर धन-सम्पत्ति या प्रतिष्ठा प्राप्त करने की आशा नहीं रहेगी। यदि तेरी अकीर्ति की सम्भावना समझकर मैं पुत्रस्नेह के कारण मैं तुझे अनुचित कार्य से न रोकूँ तो वह सच्चे स्नेह का काम न होगा। पण्डितों ने ऐसे स्नेह को सामर्थ्य और कारण से हीन गर्दभी-वात्सल्य (गधी का पुत्रस्नेह) कहा है। इसलिए तू सज्जनों द्वारा निन्दित मूढ़ जनों के मार्ग को छोड़ दे। देख, इस पृथ्वी पर अनेक लोग अविद्या के अँधेरे में डूबे पड़े हैं। तू [उस अविद्या (मोह) के अन्धकार से निकलकर] सदाचार ग्रहण कर। ऐसा करने से ही तू मेरा दुलार पा सकेगा और मैं तुझ पर प्रसन्न होऊँगी। जो कोई ऐसे सदाचारी विनीत पुत्र-पौत्र आदि पर ही प्रीति प्रकट करता है उसी की प्रीति सच्चा
१० स्नेह है। जो कोई उद्योग और विनय से हीन पुत्र-पौत्र आदि पर प्रीति करता है, उसका पुत्रवान् होना बिलकुल ही नष्ट हो जाता है। जो नराधम मनुष्य के योग्य कर्तव्य न करके निन्दित काम करते हैं, उनको न तो इस लोक में सुख मिलता है और न परलोक में। मतलब यह कि युद्ध और विजय के लिए ही क्षत्रिय का जन्म हुआ है। शत्रु को जीतने से या युद्ध में मरने से, दोनों तरह, क्षत्रिय को इन्द्रलोक मिलता है। शत्रुओं को अपने अधीन करने से क्षत्रिय को जो सुख और समृद्धि मिलती है वह इन्द्रलोक में भी मिलना असम्भव है। मनस्वी पुरुष यदि शत्रु से हार जाता है तो भीतर ही भीतर क्रोध की आग से जला करता है और विजय पाने की इच्छा से या तो युद्ध में लड़कर मर जाता है या शत्रु को मार लेता है। दोनों में से एक बात हुए बिना उसे कल नहीं पड़ती। प्रभावशाली उच्च हृदय के पुरुष थोड़े विभव को नहीं चाहते। जो स्वल्प ऐश्वर्य में सन्तुष्ट और तृप्त हो जाता है उसका विनाश जल्दी हो जाता है। प्रिय वस्तु के अभाव में पुरुष को कभी कल्याण नहीं प्राप्त होता। वह पुरुष उसी तरह चौपट होता है, जिस तरह सागर में जाकर गङ्गा लीन हो जाती है।

सञ्जय ने कहा—माता, पुत्र से तुम्हें ऐसी कठोर बातें न कहनी चाहिएँ। तुम जड़ और गूँगे की तरह चुप रहकर मुझसे करुणा का ही व्यवहार करो।

विदुला ने कहा—बेटा, तेरे ये वचन सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। तू मुझे माता के कर्तव्य
२० में लगाता है, मैं भी तुझे तेरा कर्तव्य सुझाती हूँ। बेटा, तू जब सिन्धुराज के सारे वंश का विनाश करके विजय प्राप्त कर लेगा तब मैं तेरा अभिनन्दन करूँगी और तुझे आदर की दृष्टि से देखूँगी।

सञ्जय ने कहा—माता! मेरे पास न तो धन है, और न सेना है। फिर मैं किस तरह जय प्राप्त करूँ? अपनी हालत देखकर मैं इस बारे में हताश हो चुका हूँ। दुष्कर, स्वर्ग

भ की तरह राज्य पाने का इरादा मैंने छोड़ दिया है। हाँ, जो मेरी कार्य-सिद्धि का कोई ाय हो तो बताओ। मैं उसी के अनुसार आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

विदुला ने कहा—सिद्धि नहीं होगी, यह पहले ही सोचकर अपना अनादर करना ठीक हीं। क्योंकि घटना-क्रम से कभी असिद्ध प्रयोजन भी पूरा हो जाता है, अर्थात् बिगड़ी बात बन जाती है। ऐसे ही कभी बना-बनाया खेल बिगड़ जाता है। मतलब यह कि ठीक ाय करने से सिद्धि प्राप्त हो सकती है। अज्ञान के कारण केवल क्रोध के वश होकर ही ई काम कर बैठना ठीक नहीं। हर एक काम के फल के बारे में स्थिरता नहीं देख पड़ती; श्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि फल क्या होगा। जो पुरुष इस तरह फल को अनिचत समझकर भी काम करना नहीं छोड़ता उसका मनोरथ सिद्ध हो भी सकता है और नहीं । किन्तु जो आदमी फल को अनिश्चित समझकर कार्य का उद्योग ही नहीं करता उसके ोरथ का सिद्ध न होना निश्चित ही है। परन्तु चेष्टा करने से सिद्धि और असिद्धि नों हो सकती हैं। काम में हाथ लगाने के पहले ही सफलता के बारे में अनिश्चय ख़याल करके जो पुरुष उद्योग नहीं करता वह वृद्धि और समृद्धि दोनों को अपने से मुख कर देता है। इसलिए सफलता पाने का निश्चय करके, हृदय की व्याकुलता ाकर, उद्यम के साथ हर एक काम में लग जाना चाहिए।

जो बुद्धिमान् राजा पहले देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा-आराधना, स्वस्त्ययन-पाठ आदि ङ्गलिक कृत्यों का अनुष्ठान करके फिर अभीष्ट प्राप्त करने का उपाय करता है वह अवश्य अपने ोरथ को पूरा कर लेता है। पूर्व दिशा जैसे सूर्य को गले से लगाती है वैसे ही राजलक्ष्मी ३० अपनाती है। हे सञ्जय, मैंने उपदेश के तौर पर उपाय और उत्साह बढ़ानेवाले जो वचन हैं उनका प्रभाव तुझ पर पड़ा देख पड़ता है। तू पौरुष करके अच्छी तरह से उद्योग में जा। तू यत्न के साथ क्रोधी, लोभी, धनहीन, अपमानित, गर्वित और स्पर्धाशील पुरुषों अपने पक्ष में कर। पेशगी धन देकर, प्रिय वचन कहकर, उपकार करके अपने सहांका संग्रह कर। तो फिर, पवन जैसे प्रचण्ड वेग से घनी घटाओं को छिन्न-भिन्न देता है, वैसे ही तू शत्रुसेना को नष्ट-भ्रष्ट कर सकेगा। उस समय तुझे सब लोग ुआ समझेंगे और तुझसे प्रीति का व्यवहार करेंगे।

जब शत्रु समझ लेता है कि मेरा विपक्षी हथेली पर जान लिये मरने-मारने को मुस्तैद ब वह इस तरह डर जाता है जिस तरह घर में साँप के घुस जाने पर मनुष्य बेचैन हो जाते पराक्रमी शत्रु को वश में करना असाध्य हो तो दूत के द्वारा उसके पास 'सन्धि' अथवा न' का प्रस्ताव भेजना चाहिए। इससे वह वश में हो जायगा। इस प्रकार शत्रु के खटके चकर अपने स्थान में जमने से राजा अपने धन-बल को सुखपूर्वक बढ़ा सकता है। मित्र

भी धनी का ही आश्रय लेते हैं, उसी का आदर करते हैं। वही धनी यदि निर्धन हो जाता है तो वेही मित्र उसके पास नहीं फटकते। उस समय बन्धु-बान्धव भी छोड़कर अलग हो जाते हैं। मित्र और बान्धव उस अवस्था में साथ ही नहीं छोड़ देते बल्कि निन्दा तक करने लगते हैं। जो पुरुष शत्रु को मित्र समझकर उसका विश्वास करता है उसका राज्य पाना असम्भव
४० है, या यों कहो कि वह अपनी राजलक्ष्मी को अपने पास बहुत समय तक नहीं रख सकता।

एक सौ छत्तीस अध्याय

विदुला के उपाख्यान का उपसंहार

विदुला ने कहा—बेटा! किसी तरह की कोई आपत्ति क्यों न आ पड़े, किन्तु राजा को डरना न चाहिए। अगर डर लगता भी हो तो उसे अपने आकार से प्रकट न करना चाहिए। राजा का डर यदि प्रकट हो जाता है तो राज्य के निवासी, मन्त्री, सैनिक आदि सब अलग-अलग मनमानी करने लगते हैं। कोई शत्रु से जाकर मिल जाता है, कोई उसे छोड़कर चला जाता है और कोई कहा नहीं मानता। जिनका पहले अपमान किया जा चुका है वे बदला लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। जो अत्यन्त हितचिन्तक सुहृद् होते हैं वे ही पास रहते हैं। वे भी, जिसका बछड़ा अलग बँधा हुआ है ऐसी गाय की तरह, कुछ उपाय करने में असमर्थ होकर केवल भला चाहते हैं। प्रभु के साथ-साथ वे भी शोक करते हैं; और कुछ नहीं कर सकते। तूने पहले जिनका आदर-सत्कार किया है वे सुहृद् अभी तेरे पास मौजूद हैं। वे मन-वाणी-काया से तेरे राज्य की रक्षा चाहते हैं। तू स्वयं डर से व्याकुल होकर उन्हें भी डर से विह्वल न बना। तू वही कर जिसमें वे तुझे शङ्कित देख छोड़कर चल न दें।

बेटा! मैंने तेरे पौरुष, प्रभाव और बुद्धि की परीक्षा करने के लिए, तुझे ढाढ़स देने और तेरा उत्साह बढ़ाने के लिए, ऐसे वचन कहे हैं। यदि तू मेरे उपदेश का मतलब समझा हो, और तुझे वह ठीक जान पड़ा हो, तो धैर्य के साथ विजय प्राप्त करने का उद्योग कर! हे सञ्जय, तुझे नहीं मालूम कि तुझसे छिपा हुआ मेरे पास बहुत सा धन है। उसे मेरे सिवा और कोई नहीं जानता। मैं वह धन तुझे दूँगी। धन के सिवा तेरे ऐसे अनेक सहायक और बन्धु-
१० बान्धव भी हैं, जिन्होंने सैकड़ों सुख-दुःख सहकर भी अभी तक तेरा साथ नहीं छोड़ा। ऐसे सुहृद्गण कल्याण और ऐश्वर्य की इच्छा रखनेवाले पुरुष के सहायक और सचिव होते हैं।

विदुला का पुत्र स्वभाव से ओछे जी का आदमी था। उसमें साहस कम था। तो भी माता के विचित्र, उत्साहवर्धक, मनोहर, हितकारी वचनों को सुनकर उसने अपने हृदय

डर और उदासी को बिलकुल दूर कर दिया। सञ्जय ने कहा—हे माता, आप मुझे भावी कल्याण की आशा दिलाकर उत्साहित कर रही हैं, इससे मैं या तो जल में डूबी हुई पृथ्वी की तरह अपने पिता के राज्य का उद्धार करूँगा या युद्ध में प्राण दे दूँगा। मैंने केवल तुम्हारे अन्यान्य उपदेशों को सुनने के लिए ही बीच-बीच में वैसा उत्तर दिया था। दुर्लभ अमृत पीने से जैसे जी नहीं भरता वैसे ही तुम्हारे सुमधुर वाक्यों का रस पीने की प्रवल लालसा बनी रहने के कारण ही मैं अब तक चुप था। अब मैं शत्रु को दण्ड देने और विजय पाने के लिए उद्योग करूँगा।

कुन्ती कहती हैं—हे श्रीकृष्ण! अपनी माता के तीक्ष्ण वाक्य-बाणों के लगने से, सधे हुए घोड़े की तरह, उत्तेजित होकर सञ्जय ने उसी उपदेश के अनुसार काम किया। राजा यदि शत्रु से पीड़ित होकर उदास हो जाय तो मन्त्री को चाहिए कि उसे यह तेज को बढ़ानेवाला उपाख्यान सुनावे। यह शत्रुदल के दलन का श्रेष्ठ उपाय है। जय की इच्छा रखनेवाले को यह 'जय' नाम का इतिहास अवश्य सुनना चाहिए। इसे एक वार सुननेवाला शीघ्र ही शत्रुओं को मारकर पृथ्वी को अपने अधिकार में कर लेता है। यह उपाख्यान सुनने से गर्भिणी स्त्री शूर-वीर पुत्र पैदा करती है; क्योंकि यह उपाख्यान पुंसवनरूप है। क्षत्रिय की स्त्री एकाग्र होकर इसे सुनती है तो ऐसा सत्यपराक्रमी वीर पुत्र पैदा करती है जो विद्वान्, दानी, तपस्वी, ब्रह्मतेज से युक्त, साधुसम्मत, तेजस्वी, महावली, भाग्यशाली, महारथी, धीर, दुर्धर्ष, विजयी और अजेय होता तथा दुष्टों को दण्ड देनेवाला और धार्मिकों की रक्षा करनेवाला होता है। २२

एक सौ सैंतीस अध्याय

पाण्डवों को कुन्ती का उपदेश

कुन्ती ने कहा—हे श्रीकृष्ण! तुम मेरी ओर से अर्जुन से कहना कि बेटा, तुम्हारे जन्म लेने के बाद मैं आश्रम में स्त्रियों के बीच में बैठी हुई थी। उसी समय मुझे यह आकाशवाणी सुन पड़ी कि "हे कुन्ती, तुम्हारा यह पुत्र साक्षात् इन्द्र के तुल्य होगा। इसका यश स्वर्गलोक तक फैलेगा। यह भीमसेन की सहायता से सारी पृथ्वी को जीतेगा और शत्रुओं को नष्ट-भ्रष्ट करेगा। यह वासुदेव की सहायता से संग्राम में कौरव-कुल को निर्मूल करके छिने हुए अपने पिता के राज्य को ले लेगा और फिर भाइयों के साथ तीन अश्वमेध करेगा"। हे यदुनाथ! सत्यसन्ध, दुर्धर्ष, बली, सव्यसाची के बल को केवल तुम्हीं जानते हो। ईश्वर करे, उक्त आकाशवाणी सत्य हो। यदि पृथ्वी पर धर्म है तो वह आकाशवाणी पूरी होगी ही। तुम्हीं

उसे सफल करोगे। मैं आकाशवाणी पर दोषारोप नहीं कर सकती। सब प्रजा को धारण करनेवाले धर्म को मेरा प्रणाम है।

हे केशव, तुम सदा उद्योगतत्पर भीमसेन से कहना कि क्षत्रियों की स्त्रियाँ जिसलिए पुत्र पैदा करती हैं वह समय आ गया है। श्रेष्ठ पुरुष वैर (युद्ध) के समय कभी ढीले या १० उत्साहहीन नहीं होते। हे माधव, तुम भीमसेन के स्वभाव और निश्चय को अच्छी तरह जानते हो। वे जब तक शत्रुओं का विनाश नहीं कर लेते तब तक शान्त नहीं होते।

हे कृष्णचन्द्र! तुम महाराज पाण्डु की बहू, सब धर्मों को विशेष रूप से जाननेवाली, यशस्विनी द्रौपदी से कहना—हे मनस्विनी भाग्यशालिनी, तुम श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुई हो। तुम जो मेरे पुत्रों के साथ पतिव्रता स्त्रियों का सा व्यवहार करती हो सो तुम्हारे योग्य ही है।

हे पुरुषोत्तम, तुम माद्री के पुत्रों से कहना—बेटा नकुल, पुत्र सहदेव, तुम वीर पुरुष हो इसलिए जी-जान होमकर पराक्रम से प्राप्त किये हुए सुख भोगने की इच्छा करो। जो क्षत्रिय धर्म धारण किये हुए हैं वे वीर पराक्रम से पाये हुए धन से ही सन्तुष्ट होते हैं। देखो, तुम लोग धर्म का पालन और उन्नति करते हो। तुम्हारे सामने ही शत्रुओं ने द्रौपदी से कठोर वचन कहे थे। भला कौन पुरुष स्त्री के अपमान को सह सकता है? तुम वनवासी हुए और तुम्हारा राज्य छीन लिया गया, इससे मुझे कुछ भी दुःख नहीं हुआ। किन्तु पतिव्रता द्रौपदी को सभा में रोते-रोते उन दुष्टों की जो सख़्त बातें सुननी पड़ीं वे ही मेरे मर्मस्थल में दर्द पहुँचाया करती हैं। पाँच पतियों के रहने पर भी साध्वी द्रौपदी अनाथ की तरह अपमानित हुई, यही मेरे अधिक दुःख का कारण है।

हे महाबाहु! तुम सब धनुर्द्धर पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन से फिर कहना कि हे वीर, तुम २० द्रौपदी के दिखाये मार्ग पर चलो, उसकी सलाह से काम करो। हे वासुदेव, यह तुमसे छिपा नहीं है कि भीमसेन और अर्जुन कुपित होकर देवताओं को भी मार सकते हैं। इससे बढ़कर उनका अपमान और क्रोध का कारण क्या हो सकता है कि उनकी प्यारी पत्नी द्रौपदी उस तरह भरी सभा में खींचकर लाई गई, और दुःशासन ने कौरव-समाज के सामने भीमसेन को वैसे कटु वचन कहे?

भैया, तुम मेरे पुत्रों को फिर ये सब बातें याद करा देना। मेरी ओर से पाण्डवों, द्रौपदी और उनके पुत्रों से उनकी कुशल पूछना और उनसे मेरे कुशल समाचार कहना। अब तुम जाओ। मार्ग में तुम्हें कोई विघ्न न हो। देखो, मेरे पुत्रों की रक्षा करते रहना।

वैशम्पायन कहते हैं—इसके बाद महाबाहु केशव ने कुन्ती को प्रणाम करके उनकी प्रदक्षिणा की। फिर सिंह की सी चाल से वहाँ से निकलकर उन्होंने भीष्म आदि बड़े-बूढ़ों और प्रधान कौरवों को विदा किया। इसके बाद भगवान् कृष्ण ने सात्यकि को और कर्ण को भी

अपने रथ पर बिठा लिया। अब वे वहाँ से चल दिये। वासुदेव के चले जाने पर सब कौरव एकान्त में बैठकर उनके अद्भुत कामों की चर्चा करने लगे। वे कहने लगे—सारी पृथ्वी इस समय मोह और मृत्यु के वश में हो रही है। दुर्योधन की मूर्खता के मारे यह राज्य नष्ट हो जायगा।

इधर यदुकुलश्रेष्ठ श्रीकृष्ण नगर के बाहर पहुँचकर देर तक कर्ण से बातचीत करते रहे। इसके बाद कर्ण को विदा करके वे बड़ी तेज़ी से अपना रथ हँकवाने लगे। मन के समान तेज़ी से चलनेवाले घोड़े ऐसे दौड़ने लगे मानों हवा से बातें कर रहे हों। फुर्ती से बाज़ की झपट की तरह चलकर, घोड़े ही समय में बहुत सी राह तय करके, उन घोड़ों ने श्रीकृष्ण को उपप्लव्य नगर में पाण्डवों के पास पहुँचा दिया। ३० ३२
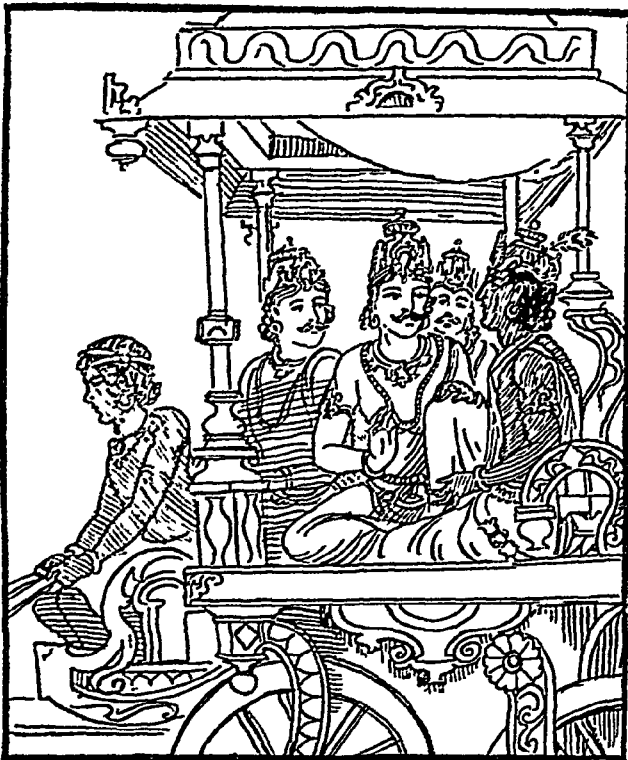
एक सौ अड़तीस अध्याय

भीष्म और द्रोण की दुर्योधन से बातचीत और उसे समझाना

वैशम्पायन कहते हैं कि देवी कुन्ती ने श्रीकृष्ण से जो कुछ कहा, उसे सुनकर भीष्म और द्रोण ने बड़ों का शासन न माननेवाले दुर्योधन से कहा—हे पुरुषसिंह, कुन्ती ने केशव से जो धर्म और अर्थ से युक्त, श्रेष्ठ तथा उग्र वचन कहे उन्हें तुमने भी सुना। कुन्ती की बातों से कृष्णचन्द्र भी सहमत हैं। पाण्डव अपनी माता की आज्ञा का पालन अवश्य करेंगे। वे धर्मबन्धन में बँधे हुए थे, इसी से अब तक सब क्लेश सहते रहे। अब राज्य प्राप्त किये बिना कभी शान्त न होंगे। तुमने सभा में द्रौपदी को जो क्लेश पहुँचाया है उसे केवल धर्म के डर से पाण्डवों ने चुपचाप सह लिया था। इस समय वे प्रतिज्ञा के अनुसार वनवास और अज्ञातवास कर चुके हैं। अब वह धर्म का डर नहीं है। अस्त्रविद्या में प्रवीण अर्जुन, दृढ़ निश्चयवाले भीमसेन, श्रेष्ठ धनुष गाण्डीव, अक्षय तरकस, वानर की ध्वजावाला रथ, असाधारण बलशाली नकुल और सहदेव और अकुण्ठित-शक्ति वासुदेव आदि सहायकों को पाकर राजा युधिष्ठिर कभी

क्षमा नहीं करेंगे। हे महाबाहु, यह बात तुमसे छिपी नहीं है कि अबसे पहले विराट-नगरी में वीर अर्जुन अकेले ही हम सबको हरा चुके हैं। इसके सिवा निवातकवच आदि दानवों को भी उन्होंने मार डाला है। घोषयात्रा के समय तुम सबको जब गन्धर्व-राज चित्रसेन पकड़ ले चला था तब अर्जुन ने ही छुड़ाया था। इन्हीं बातों को अर्जुन के पराक्रम का नमूना समझ लो। इस कारण अपने भाइयों सहित तुम पाण्डवों से मेल कर लो और मृत्युमुख में पड़ी इस पृथ्वी १० को बचा लो। देखो, युधिष्ठिर तुमसे बड़े, धर्मात्मा, प्रिय वचन बोलनेवाले और समझदार हैं। इस कारण पापबुद्धि छोड़कर उनसे मेल कर लेने में ही भला है। युधिष्ठिर तुम्हें जब शस्त्रहीन, शान्तमूर्त्ति प्रसन्नमुख देखेंगे तभी कुरुकुल की रक्षा होगी। इसलिए तुम पहले की तरह मन्त्रियों के साथ युधिष्ठिर के पास जाकर उन्हें प्रणाम करो और गले से लगाओ। भीम के बड़े भाई युधिष्ठिर स्नेह के साथ दोनों हाथों से तुम्हें गले से लगा लें। घुटनों तक लम्बी और स्थूल भुजाओंवाले भीमसेन तुमसे गले मिलें, और कमल-नयन अर्जुन तुम्हें अभिवादन करें। नकुल और सहदेव तुम्हें बड़ा मानकर प्रसन्नतापूर्वक तुम्हारी आराधना करें और श्रीकृष्ण आदि राजा लोग तुम्हें इस तरह पाण्डवों से मिलते देखकर आनन्द के आँसू बहावें।

भैया, तुम अभिमान छोड़कर पाण्डवों से सन्धि कर लो और सब भाई एक साथ सारी पृथ्वी का साम्राज्य-भोग करो। युद्ध के लिए एकत्र हुए ये सब राजा लोग हर्ष के साथ एक दूसरे को गले से लगाकर अपने-अपने घर को लौट जायँ। युद्ध में कुछ भी लाभ नहीं है। इसलिए २० मित्रों का रोकना मान लो। संग्राम में क्षत्रियों का सर्वनाश अवश्य होगा। लक्षण ऐसे ही देख पड़ते हैं। देखो, नक्षत्र-तारा-ग्रह आदि ज्योतिर्मण्डल प्रतिकूल देख पड़ता है। मृग और पक्षी भयङ्कर भाव धारण किये नज़र आते हैं। क्षत्रियों के नाश की सूचना देनेवाले और भी अनेक भयङ्कर उत्पात देख पड़ रहे हैं। देखो, हमारे ही रहने के स्थानों में या उनके आस पास अधिकतर ऐसे असगुन और उत्पात प्रकट हो रहे हैं। प्रज्वलित उल्कापात देखकर तुम्हारे पक्ष के सैनिक व्याकुल हो रहे हैं। हमारे सब वाहन उदास होकर रो रहे हैं। नगर और राजभवन में पहले की वह रौनक़ नहीं है। सियारनियाँ प्रज्वलित दिशा की ओर मुँह करके अशुभ शब्द करती हैं। अशुभसूचक गिद्ध आदि पक्षी सैनिकों के ऊपर मँडराते देख पड़ते हैं।

इसलिए तुम पिता, माता, इष्ट-मित्रों और हितैषी बन्धुओं की बात मानो। शान्ति और युद्ध सब तुम्हारे हाथ में है। मित्रों और हितचिन्तकों की बात न मानोगे तो अर्जुन के तीक्ष्ण बाणों से अपनी सेना को पीड़ित और नष्ट होते देखकर तुम्हें पछताना पड़ेगा। संग्राम में आग के समान भयानक तेजवाले भीमसेन का भयङ्कर गर्जन और अर्जुन के गाण्डीव धनुष का शब्द सुनने पर हमारा यह कथन तुमको याद आवेगा। जो तुम हमारे इस समझाने २७ को अपने प्रतिकूल समझोगे तो ऐसा ही होगा।

एक सौ उनतालीस अध्याय

द्रोणाचार्य्य का कथन

वैशम्पायन कहते हैं—भीष्म और द्रोण की राय सुनकर दुर्योधन उदास हो गया। उसने सिर झुका लिया। वह भौंहें सिकोड़कर चुपचाप टेढ़ी नज़र से पृथ्वी की ओर ताकने लगा। उसे उदास देखकर भीष्म और द्रोण ने एक दूसरे की ओर देखा। फिर दुर्योधन से भीष्म ने कहा—बड़ों की सेवा करनेवाले, असूया-हीन, सत्यवादी, ब्रह्मनिष्ठ युधिष्ठिर से हमें युद्ध करना पड़ेगा, इससे बढ़कर दुःख की बात क्या हो सकती है ?

द्रोण ने कहा—मैं अश्वत्थामा की तरह अर्जुन को भी प्यार करता हूँ। अर्जुन अश्वत्थामा से भी अधिक नम्रता के साथ मेरा सम्मान करते हैं। तथापि क्षत्रिय-धर्म के अनुरोध से, पुत्र से भी अधिक प्यारे, उन्हीं अर्जुन के साथ मुझे युद्ध करना होगा! क्षत्रिय-जीविका कैसी निन्दनीय है! अद्वितीय धनुर्द्धर अर्जुन मेरी ही बदौलत सर्वश्रेष्ठ योद्धा हुए हैं। यज्ञस्थल में आये हुए मूर्ख की तरह मित्रद्रोही, दुष्ट-प्रकृति, नास्तिक, शठ और कुटिलहृदय पुरुष सज्जनों के समाज में पूजनीय नहीं हो सकता। पापी मनुष्य बार-बार मना करने पर भी पाप ही करता है। वैसे ही पुण्यात्मा पुरुष सदा पुण्य करने की ही इच्छा रखता है। हे भरतश्रेष्ठ, तुमने शठता से पाण्डवों को धोखा दिया, तब भी उन्होंने तुम्हारे अनिष्ट का उपाय नहीं किया। तुम इस अपने ही दोष से नीचा देखोगे। देखो, कुरुश्रेष्ठ पितामह, मैं, विदुर और वासुदेव, सबने तुम्हारे हित की बातें कहीं, पर तुमने किसी की बात नहीं मानी। तुम अपने को महाबलशाली समझकर १० वैसे ही पाण्डवसेना-सागर के पार जाना चाहते हो जैसे मगर, घड़ियाल और तिमि आदि जल-जन्तुओं से पूर्ण समुद्र को गङ्गा का वेग लाँघ जाना चाहे।

जैसे कोई दूसरे की पहनी माला या कपड़ा पहनकर उसे अपना ही समझे, वैसे ही तुम युधिष्ठिर की राजलक्ष्मी लेकर लोभ के मारे उसे अपनी ही समझ रहे हो। द्रौपदी और अस्त्र-विद्या के पारदर्शी समझदार भाइयों के साथ धर्मराज युधिष्ठिर वन में रहें, तो भी कोई राजा उन्हें परास्त नहीं कर सकता। सब यक्ष दास की तरह जिनकी आज्ञा में चलते हैं उन कुबेर के आगे भी युद्ध में धर्मराज युधिष्ठिर अपनी प्रतिभा का प्रभाव दिखा चुके हैं। कुबेर के भवन से सब रत्न पाकर पाण्डव लोग इस समय तुम्हारे विशाल साम्राज्य पर हमला करना चाहते हैं।

हमने अब तक यथाशक्ति दान, हवन और अध्ययन किया है; धन-दान से ब्राह्मणों को भी प्रसन्न करके हम कृतकार्य हो चुके हैं। हमारी आयु भी समाप्त हो चली है। इसलिए पाण्डवों के साथ जूझने से तुम्हारे ही राज्य, धन, सुख, मित्र आदि का विनाश होगा और तुम्हीं पर विपत्ति आवेगी। तप और व्रत करनेवाली सत्यवादिनी द्रौपदी जिनकी विजय मनाती हैं, वासु-

देव जिनके मन्त्री हैं, धनुष धारण करनेवालों में प्रधान पराक्रमी अर्जुन जिनके भाई हैं, जितेन्द्रिय धोर ब्राह्मण जिनके सहायक हैं, उन कठोर तप करनेवाले, उग्रवीर्य युधिष्ठिर को तुम कैसे जीत
२० सकोगे ? मित्र पर कोई कठिन विपत्ति आ रही हो तो उस समय कल्याण की इच्छा रखनेवाले शुभचिन्तक को जैसा काम करना चाहिए उसके अनुसार मैं फिर तुमसे कहता हूँ कि युद्ध की ज़रूरत नहीं है। पाण्डवों से सन्धि करके कौरववंश का अभ्युदय होने दो। देखो,
२२ पुत्र, मित्र, मन्त्री और सेना को लेकर आप भी न डूबो।

एक सौ चालीस अध्याय

कर्ण से श्रीकृष्ण का प्रस्ताव

धृतराष्ट्र ने कहा—सञ्जय ! मधुसूदन श्रीकृष्ण राजपुत्रों और मन्त्रियों के साथ जब लौटे तब उन्होंने महारथी कर्ण को भी अपने रथ पर बिठा लिया। उस समय उन्होंने कर्ण से मेघ-गम्भीर स्वर में जो कुछ कोमल और तीक्ष्ण वचन कहे उन्हें मैं सुनना चाहता हूँ।

सञ्जय ने कहा—महाराज, वासुदेव ने कर्ण से कोमल और कठिन दोनों तरह की बातें कहीं। उनकी बातें प्रिय, धर्मसङ्गत, सत्य, हितकारी और हृदय में बैठ जानेवाली थीं। मैं श्रीकृष्णचन्द्र के वचन आपको सुनाता हूँ।

वासुदेव ने कहा—हे कर्ण, तुमने बहुत से वेदपारगामी ब्राह्मणों की सेवा की है; असूया छोड़कर निष्ठा और श्रद्धा के साथ अनेक तत्त्व उनसे समझे हैं। तुम सनातन वेद का ठीक-ठीक मर्म समझ चुके हो। अत्यन्त सूक्ष्म और जटिल धर्मशास्त्र का ज्ञान भी तुम्हें पूरा-पूरा है। देखो, स्त्रियाँ जब क्वारी होती हैं तब दो तरह के पुत्र पैदा करती हैं—एक कानीन (कन्यावस्था में ही उत्पन्न), दूसरा सहोढ़ (ब्याह के बाद जन्म लेनेवाला)। शास्त्रकारों ने उनका पिता उसी कन्या के होनेवाले पति को माना है। तुम भी कन्यावस्था में कुन्ती के गर्भ से पैदा हुए हो। धर्म के अनुसार महाराज पाण्डु ही तुम्हारे पिता हैं। इसलिए चलो, राज्य के स्वामी तुम्हीं होगे। पाण्डव तुम्हारे पिता के कुल के और यादव लोग तुम्हारी माता के कुल के हैं। ये दोनों
१० वंश राज्य प्राप्त करने में तुम्हारी सहायता करेंगे। आओ, मेरे साथ चलो। पाण्डव भी तुम्हें कुन्ती का पुत्र और युधिष्ठिर का बड़ा भाई जानें। तुम्हारे छोटे पाँचों भाई, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, विजयी अभिमन्यु, आये हुए राजा लोग, राजपुत्र, अन्धक और वृष्णि वंश के सब यादव तुम्हारे चरणों में प्रणाम करेंगे। राजा और राजकुमारियाँ तुम्हारे अभिषेक के लिए सोने, चाँदी और मिट्टी के कलश, सब तरह की ओषधियाँ, बीज, रत्न, लता आदि अभिषेक की सामग्री लेकर उपस्थित हों। ब्राह्मणश्रेष्ठ पुरोहित धौम्य अग्निहोत्र करें और चारों वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण

तुम्हारा राज्याभिषेक करें। धर्मात्मा युधिष्ठिर युवराज पद पर बैठकर, रथ पर सफ़ेद चवँर हाथ में लिये, तुम्हारे पीछे-पीछे चलें। महाबली भीमसेन तुम्हारे सिर के ऊपर सफ़ेद छत्र लगावें। २० अर्जुन किंकिणीजाल-शोभित, व्याघ्रचर्म-मण्डित, सफ़ेद घोड़ों द्वारा सञ्चालित तुम्हारा रथ हाँकें। अभिमन्यु सदा तुम्हारी सेवा में खड़े रहें। नकुल, सहदेव, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, पाञ्चालगण, महारथी शिखण्डी और मैं, सभी तुम्हारे अनुगामी होंगे। दाशार्ह और दाशार्णकुल तुम्हारे परिवार में सम्मिलित हो जायँगे। इसलिए हे महाबाहु! जप, होम और अन्य मङ्गलकार्य करते हुए तुम पाण्डवों के साथ राज्यसुख भोगो। द्राविड़, कुन्तल, अन्ध्र, तालचर, चूचुप और रेणुप देश के वीर तुम्हारे आगे चलें। वन्दीजन अनेक वचनों से तुम्हारी स्तुति करें और पाण्डव तुम्हारी जय की घोषणा करें। हे कुन्तीपुत्र, तुम नक्षत्रों से शोभित चन्द्रमा की तरह पाण्डवों के बीच रहकर राजकाज करते हुए कुन्ती का आनन्द बढ़ाओ। आज तुम्हारे मित्र लोग प्रसन्न हों, शत्रु दुखी और शङ्कित हों। तुममें और पाण्डवों में भ्रातृभाव स्थापित हो। २९
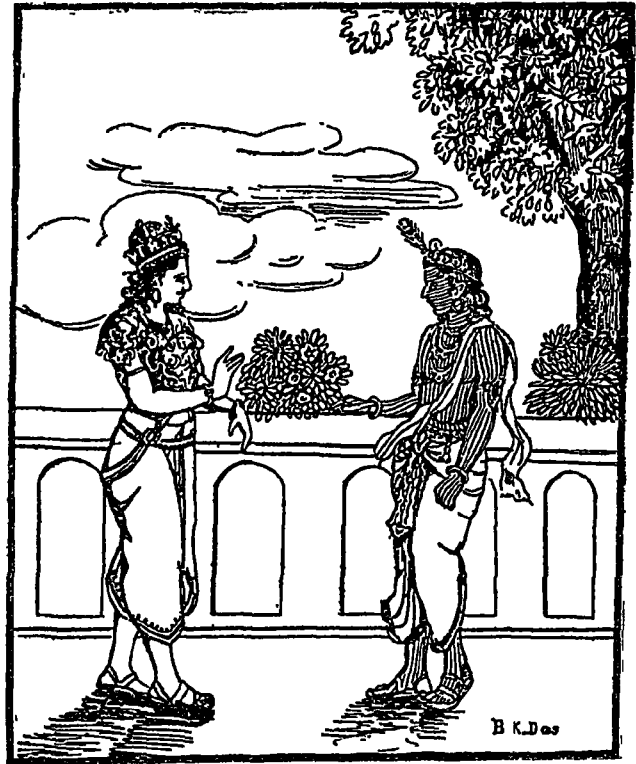
एक सौ इकतालीस अध्याय

श्रीकृष्ण को कर्ण का उत्तर

कर्ण ने कहा—हे श्रीकृष्ण! इसमें सन्देह नहीं कि तुम सौहार्द, प्रणय, मित्रता और मेरे भले के लिए ही ऐसी बातें कह रहे हो। मैं यह सब जानता हूँ। मैं धर्म के अनुसार महाराज पाण्डु का ही पुत्र हूँ। माता कुन्ती ने कन्यावस्था में मुझे अपने गर्भ में धारण किया था और जन्म होते ही सूर्यनारायण की आज्ञा के अनुसार बहा दिया था। इससे महात्मा पाण्डु ही मेरे पिता हैं। किन्तु कुन्तीदेवी ने मेरी भलाई के बारे में कुछ भी ध्यान न देकर मुझे त्याग दिया। अधिरथ सूत ने मुझे देखते ही नदी से निकालकर अपनी स्त्री राधा को सौंप दिया।

हे केशव, उस समय स्नेह के मारे राधा के स्तनों में दूध पैदा हो गया। उन्होंने अपने लड़के की तरह मेरा मल-मूत्र उठाया। तब फिर आप ही बताइए, मुझ सरीखा धर्म का जानकार किस तरह उनसे कृतघ्नता कर सकता है? इस समय उन्हें छोड़कर उनका पिण्डलोप करना क्या मेरे लिए ठीक होगा? राधा की तरह अधिरथ भी मुझे अपना बेटा जानते हैं और मैं भी उन्हें पिता की तरह मानता हूँ। पुत्रवात्सल्य के वश होकर अधिरथ ने शास्त्रविधि से ब्राह्मणों के द्वारा मेरे जातकर्म आदि संस्कार कराये और मेरा नाम वसुषेण रक्खा। जब मैं जवान हुआ १० तब उन्होंने अपनी जाति की कन्याओं के साथ मेरा ब्याह भी कर दिया। इस समय उन स्त्रियों के गर्भ से पुत्र और पोते तक पैदा हो चुके हैं। मेरा हृदय उन्हीं के स्नेह से भरा हुआ है। इसलिए मैं अमित सुवर्ण और अखण्ड भूमण्डल के लालच से अथवा हर्ष या डर से किसी तरह इन सबको नहीं छोड़ सकता।

ख़ासकर धृतराष्ट्र के घराने में दुर्योधन के आश्रित रहकर मैंने तेरह वर्ष तक अकण्टक राज्य भोगा है। अपनी जाति के सूतों के साथ कई यज्ञ भी मैं कर चुका हूँ। मेरा विवाह-सम्बन्ध सूतों के साथ हुआ है और सूतों की ही रीतियाँ मेरे घर में प्रचलित हैं। दुर्योधन मेरे ही भरोसे पाण्डवों से भिड़ने की तैयारी कर चुके हैं। मेरे ही बल-बूते पर उन्होंने पाण्डवों से विरोध करने की हिम्मत की है। द्वन्द्वयुद्ध में मैं ही अर्जुन से भिड़ने को चुना गया हूँ। इसलिए इस समय वध, बन्धन, डर या लोभ के वश होकर मैं दुर्योधन को धोखा न दे सकूँगा। अर्जुन से यदि मैं युद्ध नहीं करूँगा तो उनकी और मेरी बदनामी होगी। हे कृष्णचन्द्र, मुझे इसमें सन्देह नहीं कि तुम मेरे हित की बात कह रहे हो। यह भी सत्य है कि पाण्डव तुम्हारे उपदेश के अनुसार चलकर सब काम सिद्ध कर लेंगे। हे यदुश्रेष्ठ, मुझे यही ठीक जान पड़ता है कि तुम २० इन बातों को, जो मुझसे और तुमसे हुई हैं, पाण्डवों से न कहना। धर्मात्मा युधिष्ठिर मुझे अपना बड़ा भाई जानेंगे तो सब राज्य मुझे दे देंगे; किन्तु मैं पहले की प्रतिज्ञा के अनुसार सब साम्राज्य दुर्योधन को सौंप दूँगा। मैं चाहता हूँ कि धर्मराज युधिष्ठिर ही इस साम्राज्य के राजा हों। वासुदेव जिसके नेता हैं, भीम और अर्जुन जिसकी ओर से लड़नेवाले हैं, नकुल-सहदेव और द्रौपदी के पाँच कुमार जिसके पृष्ठरक्षक हैं, वह क्यों नहीं अखण्ड पृथ्वीमण्डल का राज्य बहुत समय तक भोगेगा? युधिष्ठिर ने जैसा अपार क्षत्रियों का बल एकत्र किया है उसे देखकर कहना पड़ता है कि उन्हें और किसी की सहायता की ज़रूरत नहीं। पाञ्चालराज के पुत्र धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, उत्तमौजा युधामन्यु, महारथी सात्यकि, सत्यधर्मा सोमक-पुत्र, धृष्टकेतु, चेकितान, लोहितवर्ण केकयगण, इन्द्रधनुष के समान विचित्र रङ्गवाले घोड़ों से शोभित महात्मा कुन्तिभोज, महाबली श्येनजित्, विराट के पुत्र शंख और तुम, ये सब प्रधान-प्रधान क्षत्रिय युधिष्ठिर के सहायक हैं।

युधिष्ठिर

इस समय दुर्योधन का शस्त्र-यज्ञ होगा। तुम उस यज्ञ के उपदेशक और 'अध्वर्यु' होगे। कवचधारी कपिध्वज अर्जुन 'होता' बनेंगे। गाण्डीव धनुष 'स्रुवा' होगा। पौरुष 'घी' होगा। अर्जुन के चलाये पाशुपत आदि अस्त्र यज्ञ में पढ़े जानेवाले 'वेदमन्त्र' होंगे। अर्जुन के सदृश या उनसे भी अधिक पराक्रमी अभिमन्यु 'स्तोता' और गरज रहे भीमसेन 'उद्गाता' बनेंगे। जप-होम-निरत युधिष्ठिर 'ब्रह्मा' की जगह होंगे। शङ्ख, मुरज, नगाड़े आदि के शब्द और वीरों के सिंहनाद ब्राह्मणों के मङ्गलपाठ के समान सुन पड़ेंगे। यशस्वी नकुल और सहदेव 'पशु-बन्धन' का कार्य करेंगे। विचित्र पताका-दण्ड-युक्त रथ 'यूप' से दिखाई पड़ेंगे। कर्णी, नालीक, नाराच, वत्सदन्त आदि बाण 'चमस' के स्थान को पूर्ण करेंगे। तोमर शस्त्र 'सोमरस' के कलश के समान, धनुष 'पवित्री' के समान, तलवारें 'कपालपात्र' के समान, मस्तक 'पुरोडाश' के पाक-पात्र के समान और रुधिर 'हवि' के समान होगा। स्वच्छ गदा, परिघ और शक्ति आदि शस्त्र हवन की लकड़ियों का काम देंगे। द्रोण और कृपाचार्य के शिष्य 'सदस्य' होंगे। महावीर अर्जुन, द्रोण और अश्वत्थामा आदि के बाण 'परिस्तोम' होंगे। महारथी सात्यकि 'प्रतिप्रास्थानिक' कर्म करेंगे। दुर्योधन इस यज्ञ की दीक्षा लेंगे। यह महासेना उनकी पत्नी होगी। महाबली घटोत्कच बलिदान करेगा। श्रौत यज्ञ में अग्निकुण्ड से उत्पन्न राजकुमार धृष्टद्युम्न को इस यज्ञ की दक्षिणा समझिए। ३० ४०

हे कृष्णचन्द्र, मैंने दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए पाण्डवों को कड़ुवे वचन कहकर जो बेजा काम किया है, उसके लिए मुझे बड़ा पश्चात्ताप हो रहा है। तुम जब अर्जुन के हाथ से मुझे मरा हुआ देखोगे तब इस यज्ञ का 'पुनश्चिति' कर्म होगा। भीमसेन जब छाती पर चढ़कर दुःशासन का खून पियेंगे तब इस यज्ञ के 'सोमपान' का कार्य होगा। शिखण्डी और धृष्टद्युम्न जब भीष्म और द्रोण को मारेंगे तब इस यज्ञ की समाप्ति होगी। धृतराष्ट्र के पुत्रों और पोतों की स्त्रियाँ जब स्वामी-पुत्र आदि के मरने से अनाथ होकर गान्धारी के साथ विलाप करेंगी तब इस कुत्ते-कौए-गिद्ध आदि की क्रीड़ा-भूमि शस्त्र-यज्ञ का 'अवभृथ स्नान' होगा। हे केशव! इस समय ऐसा करो जिसमें युद्ध की सराहने योग्य मृत्यु से बचकर विद्या-वयो-वृद्ध क्षत्रिय फिर पड़े-पड़े वृथा मृत्यु से न मरें। उन्हें अत्यन्त पवित्र कुरुक्षेत्र में जमा होकर शस्त्र-मृत्यु से मरने दो। वह उपाय करो, जिसमें सब क्षत्रिय युद्ध में मरकर स्वर्गलोक को जायँ। ऐसा करोगे तो जब तक पर्वत-नदी-वन सहित यह पृथ्वी रहेगी तब तक तुम्हारी कीर्त्ति रहेगी। ब्राह्मण लोग शुभ अवसरों पर इस महाभारत युद्ध की कथा कहेंगे। इसलिए शान्ति का उद्योग छोड़कर अर्जुन को युद्ध-भूमि में क्षत्रिय-धर्म-पालन के लिए ले आओ। ५१ ५७

एक सौ बयालीस अध्याय

श्रीकृष्ण का प्रत्युत्तर

वैशम्पायन कहते हैं कि वीर कर्ण की बातें सुनकर श्रीकृष्ण मुसकाये और कहने लगे—हे कर्ण! तुम कभी राज्य नहीं पा सकते; क्योंकि मैं तुमको पृथ्वी का राज्य देता हूँ, परन्तु तुम उसे लेने को तैयार नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि पाण्डवों की अवश्य जीत होगी। विश्वकर्मा ने अपनी माया से जिसे इन्द्रधनुष के समान बनाया है, जिसमें जय-दायक भयानक भूत रहते हैं और जो चारों ओर योजन भर फैली होने पर भी वृक्ष आदि में नहीं अटकती, वह आग जैसी वानर-चिह्नित अर्जुन की ध्वजा इस समय उनके रथ पर फहराने लगी है। जब मेरे साथ अर्जुन को ऐन्द्र-आग्नेय-वायव्य दिव्य अस्त्र चलाते देखोगे और गाण्डीव धनुष का मेघगर्जन-तुल्य घोर शब्द सुनोगे तब सत्य, त्रेता या द्वापर नहीं होगा—साक्षात् कलियुग मौजूद होगा। जब देखोगे कि जप-होम-तत्पर दुर्धर्ष महाराज युधिष्ठिर युद्ध-भूमि में आकर अपनी सेना की रक्षा करते हैं और अपने सूर्य के से प्रताप से शत्रु-सेना को पीड़ित कर रहे हैं तब सत्य, त्रेता या द्वापर नहीं रहेगा। जब देखोगे कि भीमपराक्रमी भीमसेन मतवाले गजराज की तरह दुःशासन का ख़ून पीकर समर-भूमि में नाच रहे हैं तब सत्य, त्रेता या द्वापर कोई युग नहीं रहेगा। जब देखोगे कि भयानक धनुषवाले सव्यसाची अर्जुन समर में सामने आये हुए द्रोणाचार्य, भीष्म पितामह, कृपाचार्य, दुर्योधन और जयद्रथ आदि वीर महारथियों को अपने बाणों से पीछे हटा रहे हैं, तब सत्य, त्रेता या द्वापर नहीं रहेगा। जब देखोगे कि शत्रुपक्ष के वीरों को मारनेवाले महाबली नकुल और सहदेव युद्ध-भूमि में घोर शस्त्र बरसा-बरसाकर दुर्योधन की सेना का नाश कर रहे हैं तब सत्य, त्रेता या द्वापर नहीं रहेगा।

११

हे कर्ण! तुम भीष्म, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य से कहना कि युद्ध के लिए यही महीना अच्छा है। इस महीने में घास, ईंधन, खाने-पीने की सामग्री, सब तरह के फल, ओषधि आदि सामग्री (रसद) सहज में बहुत सी मिल सकती है। मक्खियों का उपद्रव भी आजकल कम है। कीचड़ का नाम नहीं है। पानी भी साफ़ और मीठा है। ऋतु न तो बहुत गर्म है न बहुत ठण्डी। आज से सातवें दिन अमावास्या तिथि होगी, जिसके स्वामी इन्द्रदेव हैं। उसी दिन युद्ध का आरम्भ हो जाना चाहिए। युद्ध के लिए आये हुए अन्य राजाओं से भी कहना कि मैं तुम्हारी इच्छा अच्छी तरह पूरी करूँगा। दुर्योधन के सहायक राजा और राजपुत्र शस्त्रों के प्रहार से मरकर वीरों की गति पावेंगे।

२०

एक सौ तेंतालीस अध्याय

कर्ण का लौट जाना

सञ्जय कहते हैं कि श्रीकृष्ण के हितकारी वचन सुनकर कर्ण ने उनकी प्रशंसा की और फिर कहा—हे महाबाहु कृष्णचन्द्र, तुम सब जान-बूझकर भी मुझे चक्कर में डालने का उपाय क्यों कर रहे हो? मैं, दुर्योधन, दुःशासन और शकुनि, यही चार आदमी इस होनहार लोकक्षय का मूल-कारण हैं। इसमें संशय नहीं कि कौरवों और पाण्डवों का विकट युद्ध होगा। पृथ्वी में रक्त की नदी बहेगी। दुर्योधन की ओर से लड़नेवाले राजा और राजपुत्र शस्त्रों की आग में भस्म होकर अवश्य काल के मुँह का कौर होंगे। रोंगटे खड़े कर देनेवाले बुरे सपने और दारुण उत्पात सदा देख पड़ते हैं। उनसे साफ़ जान पड़ता है कि दुर्योधन की हार और युधिष्ठिर की जीत होगी। देखो, क्रूर ग्रह शनैश्चर प्राणियों के क्लेश पाने की सूचना देता हुआ, प्रजापति जिसके देवता हैं उस, रोहिणी नक्षत्र को पीड़ित कर रहा है। मङ्गल ग्रह वक्री होकर ज्येष्ठा से अनुराधा नक्षत्र में जा रहा है। इसका फल मित्रों का संहार ही है। पापग्रह राहु विशेष रूप से चित्रा नक्षत्र को पीड़ित कर रहा है। यह उत्पात भी इस बात की सूचना दे रहा है कि कौरवों के ऊपर घोर विपत्ति आनेवाली है। चन्द्रमण्डल में कलङ्क का चिह्न फैलता जा रहा है। राहु सूर्य को ग्रसने के लिए तैयार है। घोर शब्द के साथ आकाश से उल्कापात हो रहे हैं। पृथ्वी बार-बार चलायमान हो रही है। हाथी अशुभ शब्द कर रहे हैं और घोड़ों के आँसू बह रहे हैं। घोड़े जी लगाकर दाना-पानी नहीं खाते-पीते। इन दारुण उत्पातों का फल यही है कि प्राणियों के लिए भयङ्कर डर हो और उनका विनाश हो। १०

हे माधव! दुर्योधन की सेना के मनुष्य, हाथी और घोड़े थोड़ा भोजन करके बहुत मल-त्याग करते हैं। ये सब कौरवों की हार के चिह्न हैं। इसके विरुद्ध पाण्डव-सेना के वाहन (सवारी) और मनुष्य प्रसन्न देख पड़ते हैं और मृग आदि शुभ पशु पाण्डवों की दाहनी ओर जाते और फिरते देख पड़ते हैं। यह पाण्डवों की जीत का सगुन है। बाईं ओर देख पड़नेवाले मृग और आकाशवाणी दुर्योधन के हारने की सूचना दे रही है। मोर, हंस, सारस, पपीहा और चकोर आदि शुभ पक्षी पाण्डवों के अनुगामी देख पड़ते हैं। गिद्ध, कौए, बगले, बाज़, राक्षस, भेड़िये और मक्खियाँ कौरवों के पीछे चलती देख पड़ती हैं। दुर्योधन की सेना में नगाड़े, बजाने से भी, अच्छी तरह नहीं बजते। उधर पाण्डवों की सेना के नगाड़े बिना बजाये ही बज उठते हैं। हे श्रीकृष्ण, दुर्योधन की सेना के पड़ाव में जो जलाशय हैं उनसे बैलों के डहकने का सा शब्द निकलता है। दुर्योधन की सेना के ऊपर आकाश से मांस और ख़ून बरसता है। यह दुर्योधन की हार का लक्षण है। आकाश में दीवार, फाटक, खाई आदि सहित गन्धर्वनगर एका- २०

एक सूर्य सहित प्रकट होते देख पड़ते हैं। सवेरे-शाम दोनों सन्ध्याओं में, उदय और अ[illegible] के समय, सूर्यबिम्ब में काला घेरा पड़ते देख पड़ता है। यह उत्पात भी विकट डर की सूचना देता है। सियारनी घोर शब्द करती है। यह भी कौरवों की हार का लक्षण है। एक पङ्ख, एक आँख और एक पैरवाले पक्षी ज़ोर से चिल्लाते देख पड़ते हैं। यह हार का लक्षण है। काली गरदन और लाल पैरोंवाले भयानक पक्षी शाम को घोर शब्द करते हुए पश्चिम की ओर जाते देख पड़ते हैं। यह भी हार का लक्षण है। दुर्योधन पहले से ही ब्राह्मणों, गुरुओं और भक्त सेवकों से द्वेष करते हैं। यह भी उनकी हार का लक्षण है। पूर्व दिशा का लाल रङ्ग, दक्षिण दिशा का शस्त्रों का सा श्याम रङ्ग, पश्चिम दिशा का कच्चे मिट्टी के बरतनों का सा रङ्ग और उत्तर दिशा का शङ्ख का सा रङ्ग देख पड़ता है। दुर्योधन की छावनी के चारों ओर आकाश में दिग्दाह की लाली देख पड़ती है। ये सब उत्पात आनेवाले भारी डर की सूचना दे रहे हैं।

हे वासुदेव, मैंने स्वप्न में देखा है कि राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ हज़ार खम्भे-
३० वाले महल में जा रहे हैं। पाँचों पाण्डव सफ़ेद पगड़ी बाँधे, उसी रङ्ग के कपड़े पहने और सफ़ेद ही आसनों पर बैठे मुझे देख पड़े। मैंने यह भी स्वप्न में देखा कि तुम्हारी देह ख़ून से लथपथ हो रही है और उसमें बहुत सी आँतें लिपटी हुई हैं। महापराक्रमी युधिष्ठिर को देखा कि वे हड्डियों के ढेर पर खड़े, सोने के पात्र में रक्खा हुआ, घी और खीर प्रसन्नता से खा रहे हैं। मैंने युधिष्ठिर को मिट्टी खाते देखा है। इससे मुझे निश्चय है कि वे तुम्हारी सहायता से सारी पृथ्वी प्राप्त करके राज्य करेंगे।

फिर मैंने सपने में देखा कि पराक्रमी भीमसेन गदा हाथ में लिये ऊँचे पहाड़ की चोटी पर चढ़कर सहज ही सारी पृथ्वी को लीले लेते हैं। इससे भी जान पड़ता है कि वे संग्राम में हम सबको मारेंगे। हे वासुदेव, मैं समझता हूँ कि जहाँ धर्म है वहीं जय है। मैंने यह भी स्वप्न में देखा कि अर्जुन तुम्हारे साथ सफ़ेद हाथी पर सवार हैं। इसलिए इसमें सन्देह नहीं कि तुम लोग युद्ध में सब राजवंशों का विनाश करोगे। मैंने फिर देखा कि सफ़ेद कवच, केयूर, माला और कपड़े पहने नकुल, सहदेव और महारथी
४० सात्यकि बढ़िया रथ पर चढ़े हुए हैं; उनके सिर पर सफ़ेद छत्र लगा हुआ है। मैंने स्वप्न में दुर्योधन के सैनिकों को भी देखा। मैंने देखा कि अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा सफ़ेद पगड़ी बाँधे हुए हैं, बाक़ी सबके सिर पर लाल पगड़ियाँ हैं। मैंने यह भी देखा कि महावीर भीष्म और द्रोणाचार्य मुझे और दुर्योधन को साथ लिये ऊँट की सवारी से दक्षिण दिशा को जा रहे हैं। हम सब शीघ्र मौत के मुँह में जायँगे, ये बातें उसी की पूर्व-सूचना हैं। मतलब यह कि मैं, सब राजा और क्षत्रिय अवश्य ही गाण्डीव धनुष की आग में भस्म हो जायँगे।

श्रीकृष्ण ने कहा—हे कर्ण! मेरा कहना तुम्हें नहीं रुचा, इसलिए मनुष्यों का नाश होगा ही। मालूम हो गया, जब विनाश का समय आता है तब बुरी नीति अच्छी जान पड़ती है, और वह हृदय में ऐसी जम जाती है कि हटाये नहीं हटती।

कर्ण ने कहा—हे जनार्दन, हम जो इस वीर-वंश-विनाशक महायुद्ध से सकुशल जीते बचे तो फिर तुमसे भेंट होगी। और, जो मर गये तो स्वर्ग में तुमसे मिलेंगे। मुझे तो जान पड़ता है कि स्वर्ग में ही हम लोगों की भेंट होगी।

वैशम्पायन कहते हैं—कर्ण ने यों कहकर श्रीकृष्ण को गले से लगा लिया। फिर वे उनसे विदा होकर, उनके रथ से उतरे और अपने सुनहरे रथ पर बैठकर, उदास भाव से हस्तिनापुर लौट आये। उधर सात्यकि के साथ श्रीकृष्ण फुर्ती से अपना रथ हँकवाते हुए युधिष्ठिर के पास चले। ५२

एक सौ चवालीस अध्याय

कुन्ती और विदुर की बातचीत

वैशम्पायन कहते हैं कि कौरवों के यहाँ सन्धि का प्रस्ताव व्यर्थ होने पर श्रीकृष्ण जब लौट गये तब विदुर ने कुन्ती के पास जाकर शोक प्रकट करते हुए धीमे स्वर में कहा—हे चिरजीवी पुत्रोंवाली कुन्तीदेवी, यह तुमसे छिपा नहीं है कि युद्ध का रुक जाना ही मुझे अभीष्ट था; किन्तु मेरे बार-बार चिल्लाकर मना करने पर भी दुर्योधन मेरी बात नहीं सुनता। धर्मराज युधिष्ठिर असाधारण बली हैं और धृष्टकेतु, पाञ्चालराज, केकयराजकुमार, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, श्रीकृष्ण और सात्यकि आदि महारथी उनके सहायक हैं। वे कहीं दूर नहीं, उपप्लव्य नगर में ही ठहरे हुए हैं। किन्तु प्रबल होकर भी भ्रातृस्नेह और जाति-प्रेम के कारण दुर्बल की तरह धर्म ही चाहते हैं अर्थात् जातिभाइयों की हत्या से बचने के लिए सन्धि का प्रस्ताव कर रहे हैं। परन्तु राजा धृतराष्ट्र बूढ़े होकर भी शान्ति नहीं चाहते और बेटे के मद से मतवाले होकर अधर्म के मार्ग में बढ़े जा रहे हैं। जान पड़ता है कि जयद्रथ, कर्ण, दुःशासन

और शकुनि की दुर्बुद्धि से यह आपस का युद्ध हुए विना न रहेगा। जो लोग धर्मात्मा के साथ ऐसा अधर्म का आचरण करते हैं उनका विनाश होता ही है। दुर्योधन अधर्म से धर्मात्मा युधिष्ठिर का राज्य हज़म करना चाहता है, इसलिए वह अधर्म ही उसका नाश करेगा। कौरव लोग ज़बर्दस्ती अधर्म को धर्म बताते हैं। उनके इस आचरण को देखकर किसे सन्ताप न होगा? श्रीकृष्ण मेल कराने आये थे, पर उनका उपाय सफल नहीं हुआ। अब ज्योंही वे लौटकर पहुँचेंगे त्योंही पाण्डव युद्ध की तैयारी कर देंगे। लड़ाई में कौरवों का नाश होगा। उनके अन्याय से और भी असंख्य वीर युद्धभूमि में मरेंगे। इसी चिन्ता के मारे न तो मुझे दिन को नींद आती है न रात को।

हित चाहनेवाले विदुर के ये वचन सुनकर कुन्ती बहुत ही दुःखित हुई। वे लम्बी साँसें लेती हुई सोचने लगीं कि अनर्थ के कारणरूप अर्थ (राज्य-ऐश्वर्य) को धिक्कार है! उसी के कारण यह असंख्य जाति-भाइयों का नाश होगा! आत्मीय लोग ही अपने सगे लोगों की हत्या करेंगे। पाण्डव, चेदि, पाञ्चाल, यादव आदि सब जातिवाले और नातेदार कौरवों से युद्ध करेंगे। इससे बढ़कर दुःख की बात और क्या होगी? युद्ध में जातिनाश का दोष देख पड़ता है और युद्ध न करने से मेरे पुत्रों को दुःख और पराभव सहना पड़ेगा। यह सच है कि निर्धन जीविकाहीन पुरुष का मरना ही अच्छा है, किन्तु असंख्य जाति-भाइयों की हत्या करके जय प्राप्त करना भी सराहनीय नहीं है। इन दोनों सङ्कटों की चिन्ता से मेरा मन दुःख के समुद्र में गोते खा रहा है। इधर महायोद्धा भीष्म, द्रोण और कर्ण को दुर्योधन के पक्ष में देखकर मुझे बड़ा डर लगता है। किन्तु यह निश्चय है कि आचार्य द्रोण शिष्यों पर कृपा करते हैं; वे अपने प्यारे शिष्यों से जी लगाकर युद्ध नहीं करेंगे। पितामह भीष्म भी पाण्डवों को स्नेह की दृष्टि से देखते हैं। [वे भी पाण्डवों का बुरा नहीं कर सकते।] एक पापबुद्धि कर्ण ही ऐसा है जो दुर्बुद्धि दुर्योधन के मोह में पड़कर सदा पाण्डवों से कुढ़ता रहता है। वह

महावीर व्रतधारी कर्ण का गायत्री का जप समाप्त होने पर कुन्तीदेवी को देखना—पृ० १७७९

पाण्डवों के अनिष्ट की चिन्ता किया ही करता है। कर्ण बलवान् और वीर है। एक उसी से मुझे बड़ा खटका है। इससे इस समय कर्ण से जाकर मिलूँगी। मैं पता लगाऊँगी कि पाण्डवों के सम्बन्ध में उसका क्या इरादा है। फिर सब गुप्त वृत्तान्त सुनाकर ऐसा उपाय करूँगी जिससे वह पाण्डवों का विरोध करना छोड़ दे। उसके जन्म का हाल आदि से अन्त तक उसे बता दूँगी। जब मैं पिता कुन्तिभोज के रनिवास में कन्यावस्था में थी तब दुर्वासा ऋषि ने मेरी सेवा से सन्तुष्ट होकर मुझे एक मन्त्र का उपदेश देकर यह वरदान दिया था कि तुम पुत्र की इच्छा करके, इस मन्त्र के बल से, चाहे जिस देवता को अपने पास बुला सकोगी। वह वरदान मिलने पर स्त्रीस्वभावसुलभ चञ्चलता और लड़कपन के मारे मैंने उस मन्त्र की जाँच करनी चाही। मन्त्र और ब्राह्मण के वचन की सचाई जाँचने के लिए मेरे मन में ऐसा कौतूहल उत्पन्न हुआ कि मुझसे रहा नहीं गया। विश्वासपात्र धाय और सखियाँ सदा मेरी देखभाल रखती थीं। ख़ासकर पिता की बदनामी, अपने लिए कलङ्क और अधर्म के डर से पहले तो मैं हिचकी, पर अन्त को कौतूहल को न रोक सकी। कन्यावस्था में ही दुर्वासा को प्रणाम करके मैंने वही मन्त्र पढ़ा और सूर्यदेव का आवाहन किया। उन्हीं सूर्य से कर्ण का जन्म हुआ है। कर्ण कन्यावस्था में उत्पन्न मेरा पुत्र है। फिर वह भाइयों के हित के लिए मेरी बात क्यों नहीं मानेगा! २०

यह निश्चय करके कुन्ती कर्ण के पास गङ्गातट पर गईं। वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि सत्यव्रत महावीर कर्ण पूर्व को मुँह किये, ऊपर को हाथ उठाये, सूर्य की उपासना में लगे हैं और गायत्री का जप कर रहे हैं। कुन्ती उनके पास जाकर पीछे खड़ी खड़ी जप समाप्त होने की बाट जोहने लगीं। जब प्रचण्ड सूर्य की किरणों से कमलमाला के समान कुन्ती मुरझाने लगीं तब कर्ण के दुपट्टे की छाँह में हट आईं।

जब तक पीठ नहीं तपी तब तक गायत्री का जप करके महातेजस्वी, बलवान्, व्रतधारी कर्ण ने मुँह फिराया तो कुन्तीदेवी को खड़े देखा। एकाएक उन्हें वहाँ देखकर कर्ण को अचरज हुआ। उन्होंने यथोचित रूप से हाथ जोड़कर कुन्ती को प्रणाम किया। ३१

एक सौ पैंतालीस अध्याय

कर्ण और कुन्ती का संवाद

वैशम्पायन कहते हैं कि राजन्, कर्ण ने कहा—देवी, मैं राधा और अधिरथ का पुत्र कर्ण आपको प्रणाम करता हूँ। आप किसलिए मेरे पास आई हैं? कहिए, मैं आपकी क्या सेवा करूँ?

कुन्ती ने कहा—कर्ण, तुम सूत-कुल में नहीं उत्पन्न हुए। न तुम्हारी माता राधा हैं और न अधिरथ तुम्हारे पिता हैं। तुम मेरे—कुन्ती के—पुत्र हो। तुम मेरे कानीन और बड़े बेटे हो। मैंने कन्यावस्था में अपने पिता कुन्तिभोज के घर तुम्हें उत्पन्न किया है। हे वीर, अब

जगत् को प्रकाशित करनेवाले भगवान् सूर्य ने तुम्हें मेरे गर्भ से उत्पन्न किया है। तुम सब शस्त्र धारण करनेवाले वीरों में श्रेष्ठ हो। तुम जन्म के समय ही कवच और कुण्डल पहने, देवकुमार-सदृश शोभाशाली और बड़े दुर्धर्ष थे। तुम अपने भाइयों को नहीं जानते इसी से मोहवश दुर्योधन की सेवा कर रहे हो; यह तुम्हारे योग्य नहीं है। धर्मशास्त्र में लिखा है कि माता-पिता को प्रसन्न करना ही मनुष्य का मुख्य धर्म है। इसलिए जो राजलक्ष्मी अर्जुन ने अपने बाहुबल से जीतकर युधिष्ठिर को दी थी, और जिसे दुष्टों ने युधिष्ठिर के हाथ से ले लिया है, वह तुम्हारी ही है। तुम दुर्योधन से वह राजलक्ष्मी लेकर राज्यसुख भोगो। कौरव लोग आज कर्ण और अर्जुन का मिलना देखें। तुम दोनों भाइयों को परस्पर भाई-चारे के बन्धन में बँधते देखकर दुष्ट लोग शोक से सिर झुका लें। कृष्ण-बलराम की तरह कर्ण-
१० अर्जुन में स्नेह हो। तुम दोनों भाई मिलकर क्या नहीं कर सकते? बेटा, जैसे महायज्ञ में वेदी पर देवताओं के बीच ब्रह्मा की शोभा होती है, वैसे ही पाँचों भाइयों के बीच तुम्हारी शोभा होगी। कर्ण, तुममें सब गुण हैं और तुम अपने श्रेष्ठ भाइयों में बड़े हो। मैं चाहती हूँ कि
१२ पराक्रमी कुन्तीपुत्र को लोग अब सूतपुत्र न कहें।

एक सौ छियालीस अध्याय

कर्ण का कुन्ती को उत्तर

वैशम्पायन कहते हैं कि हे जनमेजय, इसी समय सूर्यदेव ने अपने मण्डल से पिता की तरह प्रेमपूर्ण स्वर में कर्ण से कहा—हे पुरुषसिंह, कुन्ती सच कहती हैं; तुम माता का कहा मानो। माता का कहा मानने से सब तरह तुम्हारा भला होगा।

माता कुन्ती और पिता सूर्य के यों कहने पर भी सत्यव्रत कर्ण अपने निश्चय से तनिक भी नहीं डिगे। कर्ण ने कुन्ती से कहा—हे क्षत्रियाणी, आपकी आज्ञा मानना मेरे लिए धर्म का द्वार अवश्य है, पर मुझे उस पर विश्वास नहीं होता। आपने लड़कपन में मुझे त्याग दिया, जाति से भ्रष्ट कर दिया। यश से तो मुझे अलग कर ही दिया, किन्तु एक प्रकार से मेरे प्राण भी ले लिये थे। मैं क्षत्रिय के कुल में उत्पन्न होकर भी आपके कारण क्षत्रिय के योग्य संस्कारों से हीन रहा। पापबुद्धिवाला शत्रु भी आपसे बढ़कर मेरा अहित नहीं कर सकता। पहले समय पर दया न करके इस समय आप अपने मतलब से मेरे पास आई हैं और दुर्योधन का साथ छोड़ने को कहती हैं। पहले तो आपने माता की तरह मेरे हित का उपाय नहीं किया, और अब केवल अपने स्वार्थ के लिए आप मा-बेटे का सम्बन्ध जताने आई हैं। श्रीकृष्ण-समेत अर्जुन से किसे डर न होगा? इस कारण, इस समय, जो मैं भाई-चारा प्रकट करके पाण्डवों से मिल जाऊँ तो कौन यह न समझेगा कि मैंने डरकर ऐसा किया है? कोई नहीं जानता कि मैं

पाण्डवों का भाई हूँ। अब युद्ध के समय भाई-चारा प्रकट करके जो मैं पाण्डवों से मिलूँ तो सब क्षत्रिय मुझे क्या कहेंगे? दुर्योधन आदि धृतराष्ट्र के बेटे सब तरह की सुखभोग की १० सामग्री देकर बराबर मेरा आदर और सत्कार करते आ रहे हैं, उसे मैं इस समय विफल कैसे कर सकता हूँ? जो लोग शत्रुओं से वैर बाँधकर सदा मेरी ख़ुशामद करते हैं; जो लोग—वसुगण जैसे इन्द्र को मानते हैं वैसे ही—मुझे माननीय मानकर प्रणाम करते हैं, और जो लोग मुझे दुस्तर समर-समुद्र के पार जाने की नाव समझकर—उसके पार जाने की आशा से—मेरा आश्रय लिये हुए हैं, उन्हें मैं कैसे छोड़ सकता हूँ? उनकी आशा को मैं कैसे चौपट कर सकता हूँ? जो लोग दुर्योधन के आश्रय में थे उनके कर्तव्य-पालन का समय आ गया है। मैं प्राणों की ममता छोड़कर उनकी सहायता करने में मन लगाऊँगा। जो चञ्चल

बुद्धिवाले दुराचारी लोग सदा स्वामी के द्वारा अच्छी तरह प्रतिपालित और निहाल होकर ऐन मौके पर, उसके उपकार भुलाकर, उसे छोड़ देते हैं उनका न तो यह लोक बनता है और न परलोक।

मैं झूठ नहीं कहता, दुर्योधन आदि के लिए अपना सब बल और शक्ति लगाकर आपके बेटों से मैं युद्ध करूँगा। मतलब यह कि सज्जनों की तरह दया, धर्म और चाल-चलन की रक्षा करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। इस कारण आपकी आज्ञा को, सचमुच हितकारिणी समझकर भी, मैं नहीं मान सकता। पर आपका मेरे पास आना और सिफ़ारिश करना वृथा न होगा। मैं युद्ध में एक अर्जुन को छोड़कर आपके अन्य चार पुत्रों—युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव—को जान से नहीं मारूँगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि युद्ध में युधिष्ठिर, भीम, नकुल और २० सहदेव को मारने की शक्ति रखकर भी उन्हें छोड़ दूँगा। मैं युधिष्ठिर की सेना में एक अर्जुन से ही मरने-मारनेवाला युद्ध करूँगा। क्योंकि अर्जुन को मार लेने से ही मैं अपने को निहाल समझूँगा। अथवा अर्जुन जो मुझको मार सके तो मुझे अपार यश और स्वर्ग प्राप्त होगा। हे यशस्विनी, आपके पाँच बेटे हर हालत में बने रहेंगे। मैंने जो अर्जुन को मारा तो भी और अर्जुन ने मुझको मारा तो भी पाँच पाण्डव रहेंगे।

पुत्रों के नाश की शङ्का और दुःख से काँप रही कुन्ती ने अपने इरादे से न डिगनेवाले वीर कर्ण को हृदय से लगाकर कहा—बेटा, तुम जो कहते हो वही होता देख पड़ता है; कौरवों का नाश रुक नहीं सकता। क्या किया जाय, होनी बड़ी प्रबल है। हे शत्रुदमन, तुमने अर्जुन को छोड़कर बाक़ी चार भाइयों को न मारने की प्रतिज्ञा करके उन्हें अभय दिया है—यह भूल न जाना। हे कर्ण, तुम आरोग्य रहो; तुम्हारा भला हो। मैं जाती हूँ।

कर्ण ने फिर प्रणाम करके कुन्ती का सत्कार किया। कुन्ती अपने घर को गईं और २७ कर्ण अपने महल की ओर गये।

एक सौ सैंतालीस अध्याय

श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर के पास पहुँचना

वैशम्पायन कहते हैं—उधर शत्रुओं को पीड़ा पहुँचानेवाले भगवान् वासुदेव ने उपप्लव्य नगर में पाण्डवों के पास पहुँचकर हस्तिनापुर का सब हाल कह सुनाया। बहुत देर तक बात-

चीत और सलाह करके कृष्णचन्द्र विश्राम करने को अपने डेरे में गये। पाण्डवों ने सन्ध्या के समय विराट आदि राजाओं को विदा करके, सन्ध्याव दन करके श्रीकृष्ण को बुलाया। फिर उसी बारे में श्रीकृष्ण और पाण्डवों से बातचीत होने लगी।

युधिष्ठिर ने कहा—हे श्रीकृष्ण, कौरव-सभा में दुर्योधन के साथ आपकी जो बातचीत हुई उसे फिर कहिए।

श्रीकृष्ण ने कहा—मैंने दुर्योधन से सत्य, रोचक और हित की ही बातें कहीं, किन्तु उस दुर्बुद्धि ने एक न सुनी।

युधिष्ठिर ने कहा—हे वासुदेव, पितामह भीष्म और आचार्य द्रोण ने उस अनीति-परायण क्रोधी दुर्योधन से क्या कहा? पिता धृतराष्ट्र और माता गान्धारी ने क्या कहा? हमारे ९ लिए सदा शोक करनेवाले, श्रेष्ठ धर्मात्मा, चाचा विदुर ने और अन्य राजाओं ने क्या कहा?

हे जनार्दन! कुरुश्रेष्ठ भीष्म, धृतराष्ट्र और अन्य सभासद राजाओं ने काम-लोभ-क्रोध के वशीभूत दुर्मति दुर्योधन से जो कुछ कहा सो आप सुना तो चुके हैं किन्तु मैं उन बातों को अच्छी तरह समझ नहीं सका। इसलिए उन्हें दुबारा कहिए। हे प्रभु, आप ही हमारे लिए एकमात्र आश्रय हैं। हम आपको ही प्रभु और गुरु समझते हैं। इसलिए वह उपाय कीजिए जिसमें व्यर्थ समय नष्ट न हो।

वासुदेव ने कहा—हे धर्मराज! कौरव-सभा में दुर्योधन से लोगों ने जो कुछ कहा, सो मैं सुनाता हूँ; सुनकर विचार कीजिए। दुर्योधन से मुझे जो कुछ कहना था वह कह चुकने पर वह हँस पड़ा। तब भीष्म ने क्रोधित होकर कहा—दुर्योधन, कुल को बचाने के लिए जो कुछ मैं कहता हूँ, उसे मन लगाकर सुनो। मेरी बातें सुनकर तुम अपने कुल की रक्षा और भलाई का उपाय करो। भैया, मेरे पिता महाराज शान्तनु सब लोकों में प्रसिद्ध थे। पहले उनके मैं ही एक पुत्र था। पण्डित लोग एक पुत्र का होना और न होना बराबर बताते हैं। इसी से एक और पुत्र के लिए पिताजी बहुत ही उत्कण्ठित हो उठे। किस तरह दूसरा पुत्र उत्पन्न करके मैं कुल की रक्षा कर सकूँगा, किस तरह मेरी नामवरी होगी, यही सोच उन्हें रहता था। पिता के हृदय का हाल जानकर मैं [व्यासदेव की माता] सत्यवती को अपनी माता बनाने के लिए दाशराज से ले आया। मैंने गद्दी छोड़ने और क्वारे ही बने रहने की कठिन प्रतिज्ञा करके पिता का यह दूसरा ब्याह करा दिया। उसी प्रतिज्ञा के कारण मैं राजगद्दी पर नहीं बैठा और जन्म भर ब्रह्मचारी रहा। यह बात तुम अच्छी तरह जानते हो। मुझे राज्य न करने से कभी खेद नहीं हुआ। मैंने बराबर प्रसन्नता के साथ अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया। २०

हे राजकुमार, कुछ समय के बाद माता सत्यवती के गर्भ से धर्मात्मा महाबाहु विचित्रवीर्य का जन्म हुआ। पिता का स्वर्गवास होने पर मैंने अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य को गद्दी पर बिठाया और आप सेवक-भाव से गद्दी के नीचे बैठकर उनकी सेवा और सहायता करने लगा। जब विचित्रवीर्य विवाह योग्य हुए तब मैं बहुत से राजाओं को जीतकर स्वयंवर-सभा से उनके योग्य दो स्त्रियाँ ले आया और ब्याह भी कर दिया। यह हाल भी तुम कई बार सुन चुके हो। उसके बाद परशुराम से मुझे द्वन्द्व युद्ध करना पड़ा। उस समय परशुरामजी के डर से नगरनिवासियों ने विचित्रवीर्य को नगर से बाहर भेज दिया। अबोध भाई विचित्रवीर्य को, अधिक स्त्रीसङ्ग करने के कारण, यक्ष्मा रोग हो गया। इस प्रकार विचित्रवीर्य का देहान्त हो जाने पर कौरवों की राजगद्दी ख़ाली हो गई। इन्द्र ने वर्षा करना बन्द कर दिया। तब सारी प्रजा भूख और डर से व्याकुल होकर मेरे पास दौड़ी आई। सब लोग जमा होकर मुझसे आग्रह कर कहने लगे—हे शान्तनुकुलवर्द्धन, राजा के न होने से आपकी प्रजा नष्ट-भ्रष्ट हो रही है। इस कारण हमारी भलाई के लिए अब आप राज्य को सँभालिए। आपकी कृपा

और प्रताप से यह अनावृष्टि का उत्पात शान्त हो जायगा। हे भीष्मजी, भयङ्कर व्याधियों ने प्रजा को घेर रक्खा है। रोगों से भी असंख्य प्रजा मर रही है। जो प्रजा अभी जीती जागती है उसकी रक्षा का उपाय कीजिए। हे वीर, आपकी दया के सिवा हमारे कष्ट मिटने का दूसरा उपाय नहीं है। इसलिए कृपा करके धर्म के अनुसार प्रजा का पालन कीजिए। आपके रहते साम्राज्य का विध्वंस न होना चाहिए।

प्रजा के इस तरह दीनता के साथ बहुत-बहुत विनय करने पर भी मेरा मन नहीं डिगा। क्योंकि, मैं समझता था कि अपनी प्रतिज्ञा तोड़ना सदाचार के विरुद्ध है। तब सब नगरवासी लोग, मेरी सौतेली मा सत्यवती, नौकर-चाकर, पुरोहित और बहुत शास्त्रों के ज्ञाता ब्राह्मण, दु:खित चित्त से, मेरे पास आये और अनुरोध करते हुए कहने लगे—हे सत्यव्रत, हमारे भले के
३० लिए तुम राजगद्दी पर बैठो। तुम्हारे मौजूद रहते यदि तुम्हारे पितामह महाराज प्रतीप का सुरक्षित यह विशाल साम्राज्य तहस-नहस हो जाय तो नि:सन्देह बड़े खेद की बात होगी।

तब मैं बहुत ही दु:खित और व्याकुल हो हाथ जोड़कर उनसे बारम्बार कहने लगा कि मैंने पिता के बड़प्पन और कुल की रक्षा के लिए राजगद्दी पर न बैठने की और विवाह न करने की प्रतिज्ञा कर रक्खी है। उसे तोड़कर इस समय कैसे राजा बन जाऊँ? साधारण भाव से सबसे यों कहकर अन्त को हाथ जोड़कर माता को प्रसन्न करने के लिए मैंने कहा—हे जननी, मैं कुरुवंश में उत्पन्न महात्मा शान्तनु का पुत्र होकर कैसे अपनी प्रतिज्ञा तोड़ूँ? विशेष कर मैंने आपके लिए ही यह प्रतिज्ञा की थी। माता! मैं आपका दास हूँ, आपका ही अन्न खाकर पलता हूँ, तो भी आपकी यह आज्ञा मानना मेरी शक्ति के बाहर है।

हे दुर्योधन, माता और पुरवासियों को इस प्रकार शान्त करके मैंने अपने भाई की स्त्री के गर्भ से पुत्र उत्पन्न करने के लिए महर्षि वेदव्यास से प्रार्थना की। इसके लिए माता ने भी उनसे बहुत कुछ कहा। हे भरतश्रेष्ठ, तब महर्षि ने मेरी प्रार्थना और माता की आज्ञा मानकर तीन बेटे उत्पन्न किये। उनमें तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र सबसे बड़े होने पर भी अन्धे हुए; इसी से उन्हें राज्य नहीं मिला। सब लोकों में प्रसिद्ध वीर पाण्डु को राजगद्दी मिली। इसलिए इस समय उनके बेटे पाण्डव ही गद्दी के वारिस हैं। अब तुम झगड़ा न करके आधा राज्य उनको
४० बाँट दो। सच पूछो तो मेरे जीते इस राज्य पर किसी का अधिकार नहीं है। इसलिए मेरी बात न टालो। मैं पाण्डवों और कौरवों का समान हितैषी हूँ। बेटा, मैं पाण्डवों पर और तुम पर एक सा स्नेह रखता हूँ। तुम्हारे पिता-माता और महात्मा विदुर का भी यही मत है। तुम्हें बूढ़ों की बात माननी चाहिए। इसलिए बेखटके मेरे कहे के अनुसार काम करो। अपने
४३ प्राण और सर्वस्व को तथा और लोगों को व्यर्थ नष्ट करनेवाला हठ छोड़ दो।

एक सौ अड़तालीस अध्याय

द्रोणाचार्य, विदुर और गान्धारी के वचनों का वर्णन

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे युधिष्ठिर, भीष्म की बात पूरी होने पर सब राजाओं के सामने द्रोणाचार्य ने दुर्योधन से कहा—भैया, महाराज प्रतीप के वंशधर शान्तनु और उनके पुत्र देवव्रत भीष्म ने कुल की रक्षा और भलाई के लिए आज तक जैसा उपाय किया है वैसा ही सत्यप्रतिज्ञ, जितेन्द्रिय महाराज पाण्डु ने भी किया है। उन्होंने छोटे भाई विदुर और बड़े भाई धृतराष्ट्र को राज्य का सब काम सौंप दिया और आप दोनों स्त्रियों को साथ लेकर वन को चले गये। बुद्धिमान् विदुर विनीत भाव से सिंहासन के नीचे बैठकर धृतराष्ट्र की सेवा करने और चँवर डुलाने लगे। सारी प्रजा भी महाराज धृतराष्ट्र को राजा समझकर उनका सम्मान करने लगी।

हे दुर्योधन, इस प्रकार वीर पाण्डु राजा धृतराष्ट्र और विदुर को, धरोहर के तौर पर, राज्य सौंपकर पृथ्वी में विचरने लगे। ख़ज़ाना जमा करना, धन देना, सेवकों की देख-रेख और सबका भरण-पोषण, ये काम ईमानदार विदुर के सिर आ पड़े। शत्रुदमन भीष्म ने सुलह, लड़ाई और राजाओं से बर्ताव आदि का भार अपने ऊपर ले लिया। महाबली धृतराष्ट्र गद्दी पर बैठकर विदुर की सहायता से राज्य के और सब काम करने लगे। तुम्हारे पिता और चाचा ने यों मिलकर राज्य की रक्षा की है। उसी श्रेष्ठ कुल में तुम भी उत्पन्न हुए हो। तुम्हें इस तरह अपने कुल में फूट डालना या झगड़ा खड़ा करना कभी उचित नहीं। अब बुरी प्रवृत्ति को छोड़कर अपने भाई पाण्डवों से मेल कर लो और आनन्द के साथ राज्य करो। मैं डर या लोभ से ऐसा नहीं कहता। इसमें मेरा कोई स्वार्थ भी नहीं। मुझे भीष्म से जीविका मिलती है। मैं तुमसे जीविका भी नहीं चाहता। याद रक्खो, जिधर भीष्म हैं उधर ही द्रोण हैं। इस कारण जो भीष्म ने कहा है वही करो। पाण्डवों को आधा राज्य दे दो। मैं तुम लोगों का भी गुरु हूँ और पाण्डवों का भी। मुझे दोनों के ऊपर एक सा स्नेह है। अश्वत्थामा के समान ही अर्जुन मुझे प्यारे हैं। अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। स्मरण रहे, जहाँ धर्म है वहीं जय है।

महात्मा द्रोणाचार्य जब चुप हो गये तब विदुर ने भीष्म पितामह की ओर देखकर कहा—हे पितामह देवव्रत, मैं जो कहता हूँ वह ध्यान देकर सुनिए। पहले आप डूब रहे कुरुवंश को विनाश से बचा चुके हैं, फिर इस समय मेरी बात पर क्यों नहीं ध्यान देते? मैं बार-बार चिल्लाकर कह रहा हूँ, पर आप उपेक्षा कर रहे हैं। श्रेष्ठ कुरुकुल में इस कुलाङ्गार दुर्योधन को क्या अधिकार है? यह होता कौन है? यह लोभी और कृतघ्न है। प्रकृति इसकी नीच है। लोभ ने इसकी बुद्धि को बिगाड़ दिया है। यह सब जानकर भी आप इसकी पापबुद्धि का विरोध नहीं करते। यह धर्म और अर्थ के ज्ञान में निपुण पिता के शास्त्रानुकूल उप-

देश को भी नहीं सुनता। मैं सच कहता हूँ, अकेले इस दुर्योधन के कारण सब कौरवों का नाश होनेवाला है। महाराज, आप ऐसा कीजिए जिसमें कुरुकुल सर्वनाश से बच जाय। चित्रकार जैसे बड़े यत्न से रङ्ग भरकर चित्र बनाता है वैसे ही आपने इस राज्य की रचना और रक्षा की है। आपकी ही सहायता से मैं और धृतराष्ट्र दोनों इस राज्य को चलाते रहे हैं। प्रजापति जैसे प्रजा को उत्पन्न करके फिर उसका संहार करते हैं वैसे आपको अपने बढ़ाये इस राज्य और कुल का क्षय न करना चाहिए—अर्थात् कुल का सर्वनाश न होने देना चाहिए। जो आप यह समझते हों कि कुल का नाश होने ही वाला है, और आपकी बुद्धि नष्ट हो गई हो तो मुझे और धृतराष्ट्र को साथ लेकर वन को चल दीजिए; नहीं तो कपटी दुर्मति दुर्योधन को बाँधकर क़ैद में डाल दीजिए और पाण्डवों के साथ स्वयं इस साम्राज्य की रक्षा कीजिए। हे वीर, ध्यान देकर कुछ उपाय कीजिए। इस युद्ध में पाण्डवों, कौरवों और अन्य राजाओं का सर्वनाश होता देख पड़ता है। महामति विदुर यों कहकर चुप हो गये और चिन्ता में डूबकर बारम्बार लम्बी साँसें लेने लगे।

अब सुबल की बेटी देवी गान्धारी वंश-नाश के डर से व्याकुल और कुपित होकर सब राजाओं के सामने दुर्योधन से कहने लगीं—अरे पापबुद्धि दुर्योधन! मैं सभा में बैठे हुए इन राजाओं, ब्रह्मर्षियों

और अन्य लोगों के आगे तेरे और तेरे मन्त्रियों के दोष कहती हूँ, उन्हें सुन। अरे दुरात्मा, हमारे कुल का धर्म यही है कि कुल-परम्परा से कुरुवंश के लोग राज्य करें। पर तू उस रीति को नहीं मानता और इस राज्य को नष्ट करने पर तैयार है। अरे मूढ़, बुद्धिमान् महाराज धृतराष्ट्र और उनके भाई दूरदर्शी विदुर की ज़िन्दगी में तू राजा कैसे बनना चाहता है? यह तेरा मोह है। महात्मा भीष्म के जीते रहते महानुभाव धृतराष्ट्र और विदुर भी पराधीन हैं, वे भी अपने मन से कुछ नहीं कर सकते। महात्मा भीष्म धर्मज्ञ हैं, इसी से अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर राज्य नहीं करना चाहते। इसी कारण महात्मा पाण्डु को यह राज्य मिला था। पाण्डु के पुत्र पाण्डव और उनके पुत्र-पौत्र ही

३०

इस राज्य के सच्चे वारिस हैं। इस समय सत्यप्रतिज्ञ भीष्म, महामति विदुर और महाराज धृतराष्ट्र जो कह रहे हैं वही करना चाहिए। अपने धर्म का पालन करते हुए अर्थ-नाश न होने देना—पाण्डवों को राज्य दे देना—ही ठीक है। इस समय इन हित-चिन्तक स्वजनों के कहे अनुसार काम करने से ही धर्म का सम्मान होगा। महात्मा भीष्म और धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर को राजा बनाकर, न्याय की रक्षा करें और धर्मराज भी धर्म के अनुसार इस राज्य का पालन करें। ३६

एक सौ उनचास अध्याय

धृतराष्ट्र का उपदेश

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे धर्मराज, गान्धारी के कह चुकने पर सब राजाओं के सामने महाराज धृतराष्ट्र ने दुर्योधन से कहा—बेटा, जो तुम्हारे जी में कुछ भी पिता की भक्ति हो तो मेरी बातों को मन लगाकर सुनो और उन्हीं के अनुसार काम करो। प्रजापति सोम इस कुरु-वंश के आदि-पुरुष हैं। सोम से छठी पीढ़ी में महाराज नहुष के पुत्र ययाति हुए। ययाति के पाँच पुत्र थे। उनमें महातेजस्वी यदु सबमें बड़े थे। सबमें छोटे राजा पुरु से यह कौरव-वंश चला है। दानवों के राजा वृषपर्वा की बेटी शर्मिष्ठा के गर्भ से पुरु का जन्म हुआ था।

महात्मा यदु देवयानी के पुत्र और शुक्राचार्य के नाती थे। दुर्बुद्धि और घमण्ड के मारे यदु ने पिता की आज्ञा नहीं मानी। वे पिता, भाई और अन्य क्षत्रियों को अपमानित करके, अपने बाहुबल से सब राजाओं को जीतकर, हस्तिनापुर में रहने लगे। हे दुर्योधन, श्रेष्ठ राजा ययाति ने यह देखकर बड़े बेटे यदु को शाप देकर राज्य के अधिकार से भी अलग कर दिया। १० यदु के जो और भाई बल के घमण्ड से उनके अनुगामी हुए उन्हें भी, नाराज़ होकर, ययाति ने शाप दिया। सबसे छोटे पुत्र पुरु ने पिता का कहना माना और वही राजगद्दी पर बैठे। यदि बड़ा बेटा बड़ों की आज्ञा न मानता हो और उद्दण्ड हो तो उसे राज्य नहीं मिलता और अच्छे स्वभाववाला छोटा बेटा बड़े-बूढ़ों की सेवा करने और पिता की आज्ञा मानने से राज्य पा सकता है, जैसा कि यदु के रहते पुरु का राजा होना प्रसिद्ध है।

इस राज्य पर तुम्हारा या मेरा अधिकार क्यों नहीं है, सो सुनो। मेरे प्रपितामह, जगत्प्रसिद्ध, सब धर्मों के जानकार महाराज प्रतीप धर्मानुसार राज्य करते थे। उनके देवतुल्य तीन पुत्र हुए। सबसे बड़े देवापि, मँझले बाह्लीक और छोटे मेरे बाबा बुद्धिमान् शान्तनु थे। महातेजस्वी देवापि बालक-बूढ़े-जवान स्त्री-पुरुष सबके प्रीतिपात्र थे। धर्मात्मा, सत्यवादी, सत्य-प्रतिज्ञ, पिता की सेवा और आज्ञा का पालन करनेवाले, उदार और सच्चरित्र होने के कारण पुर तथा नगर की प्रजा उन्हें बहुत चाहती थी और प्रसिद्ध प्रतिष्ठित सज्जन लोग उनको मानते थे; परन्तु उनके शरीर में एक दोष यह था कि कोढ़ के चिह्न थे। तीनों भाइयों में परस्पर बड़ा स्नेह था। २०

यथासमय बूढ़े महाराज प्रतीप ने बड़े बेटे को राजगद्दी देने के लिए सब सामग्री मँगाकर इकट्ठी की। तब ब्राह्मण लोग, बड़े-बूढ़े और पुरवासी-नगरनिवासी लोग राजा के पास आकर देवापि को गद्दी पर न बैठाये जाने के लिए कहने लगे—महाराज, राजकुमार देवापि में सभी गुण हैं, परन्तु उनको कोढ़ है। इस कारण वे गद्दी पर बैठने के अधिकारी नहीं हैं। अङ्गहीन राजा को देवता बधाई नहीं देते। हे दुर्योधन, प्रजा के द्वारा प्यारे बेटे का राज्याभिषेक रुकते देखकर महाराज प्रतीप के आँसू भर आये। वे अपने बेटे के लिए खेद प्रकट करने लगे। ब्राह्मणों ने देवापि का राज्याभिषेक रोक दिया। दुःख के मारे राजा मर गये। तब तप करने के लिए देवापि वन को चले गये। मँझले भाई वाह्लीक पहले ही पिता, माता, भाई और राज्य छोड़-छाड़कर नाना के पास रहने लगे थे; क्योंकि नाना ने उन्हें गोद लेकर अपने भरे-पूरे राज्य का वारिस बना दिया था। इस कारण पिता के मरने पर, मँझले भाई वाह्लीक की राय से, जगत्प्रसिद्ध महाराज शान्तनु राजगद्दी पर बैठकर धर्म के अनुसार प्रजा का पालन करने लगे। भैया, वैसे ही अङ्गहीन—अन्धा—होने के कारण मैं भी राजगद्दी पर नहीं बैठ सका। पाण्डु यद्यपि मुझसे छोटे थे, तो भी उन्हें राजा का पद मिला। इसलिए पाण्डु के बाद उनके बेटों के ३० सिवा इस राज्य पर और किसी का दावा नहीं चल सकता। जब मैंने राज्य नहीं पाया तब तुम भी राजा या राजपुत्र नहीं हो। फिर किस कारण तुम राज्य लेना चाहते हो? सच तो यह है कि तुम ज़बर्दस्ती करके पराई सम्पत्ति छीन लेना चाहते हो। महात्मा युधिष्ठिर राजा के बेटे हैं और न्याय के अनुसार यह राज्य उन्हीं का है। इस कुरुकुल के शासक और स्वामी वही हैं। देखो, राजा युधिष्ठिर सत्यवादी, सावधान, शास्त्र की आज्ञा पर चलनेवाले, बन्धुओं का उपकार करनेवाले, प्रजा के प्यारे, मित्रों पर दया रखनेवाले, जितेन्द्रिय और सज्जनों के सहायक हैं। क्षमा, सहनशीलता, दम, सरलता, सत्य, शास्त्रज्ञान, सावधानी, विवेक, दया और बड़ों की आज्ञा मानना आदि सभी राजगुण युधिष्ठिर में हैं। किन्तु तुम राजपुत्र न होने के सिवा लोभी, भाइयों और बन्धुओं के प्रति पापबुद्धि रखनेवाले, खोटे स्वभाव के और घमण्डी हो। यह राज्य क्रम से पाण्डवों का ही है। तुम पराया राज्य कैसे ले सकते हो? इसलिए मोह छोड़कर वाहन, वस्त्र, धन आदि के साथ आधा राज्य पाण्डवों को बाँट दो, और आधा राज्य लेकर अपने ३६ भाइयों के साथ अपना निर्वाह करो। यही उचित है और तुम्हारे लिए हितकर है।

एक सौ पचास अध्याय

श्रीकृष्ण की सलाह

श्रीकृष्ण कहते हैं—हे धर्मराज! भीष्म, द्रोण, धृतराष्ट्र और गान्धारी के समझाने पर भी दुर्योधन को होश नहीं हुआ। क्रोध से आँखें लाल किये हुए वह पापी उन सबका अनादर

दुर्योधन का धृतराष्ट्र के पाण्डवों को राज्य देने की सम्मति पर सभा से क्रुद्ध होकर जाना—पृ० १७८४-८५
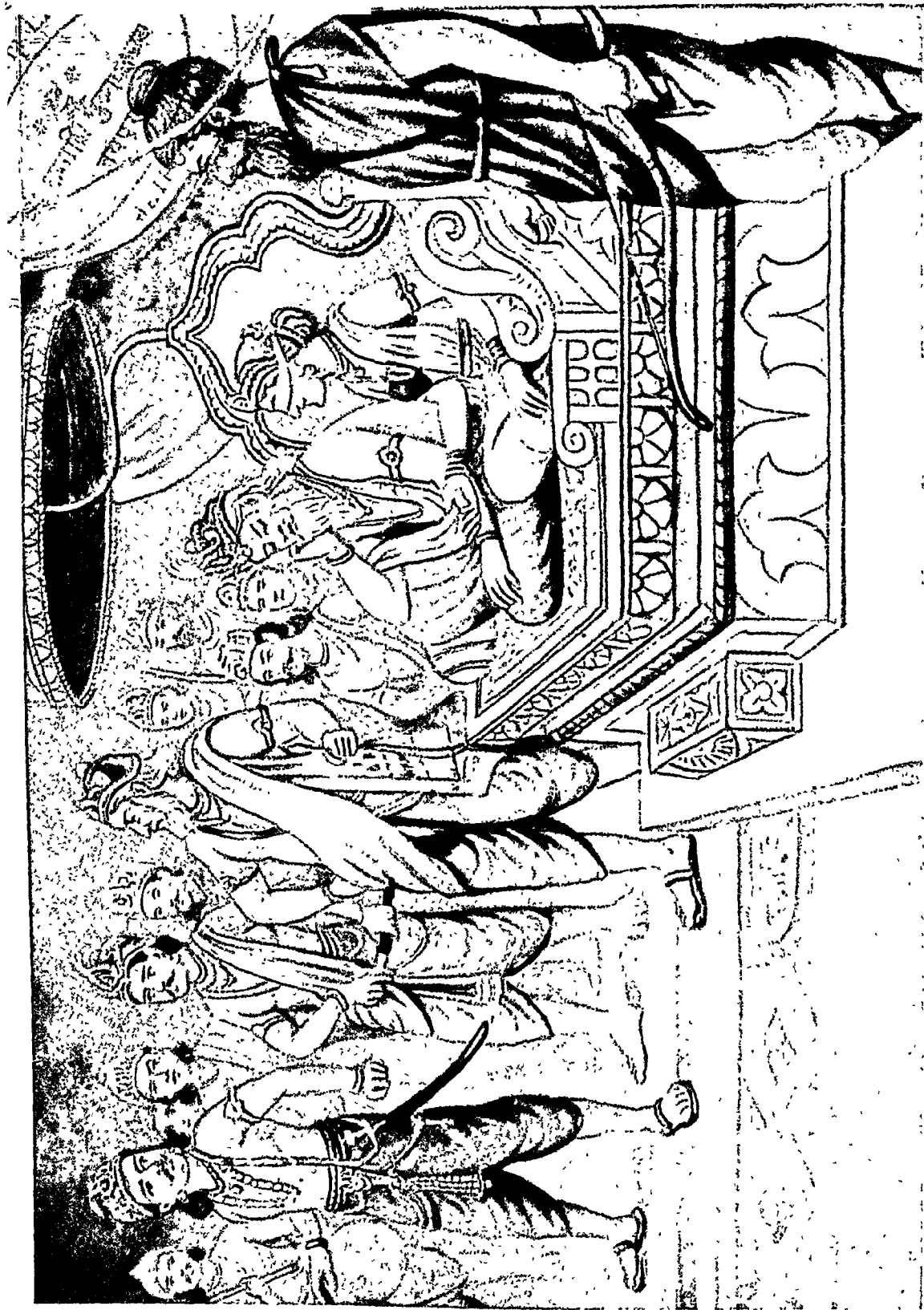
करके वहाँ से उठकर चल दिया। काल के मुँह के कौर हो रहे अन्य राजा भी उठकर उसके पीछे चल खड़े हुए। दुर्बुद्धि दुर्योधन ने मोह के वश हो रहे उन राजाओं को आज्ञा दी कि आज पुष्य नक्षत्र है, इसलिए तुम लोग आज ही कुरुक्षेत्र को रवाना हो जाओ। काल के वश हो रहे सब राजा उसकी आज्ञा से प्रसन्नतापूर्वक भीष्म को सेनापति बनाकर अपनी सब सेना के साथ फुर्ती से कुरुक्षेत्र को जाने लगे। कौरव पक्ष की ग्यारह अक्षौहिणी सेना के आगे तालचिह्न-युक्त ध्वजावाले रथ पर बैठे हुए भीष्म पितामह चले।

राजन्, कुरुसभा में जो कुछ हुआ; भीष्म, द्रोण, विदुर, धृतराष्ट्र और गान्धारी ने मेरे सामने दुर्योधन से जो कुछ कहा; सो मैंने तुमसे कह दिया। अब तुमको जो करना हो वह करो। महाराज, मैंने कौरवों और पाण्डवों में मेल कराने की इच्छा से, और कुरुवंश में सत्यानाशी फूट को रोकने तथा प्रजा का नाश न होने देने के लिए, पहले देवताओं और मनुष्यों के ऐसे तुम लोगों के कामों का वर्णन करके सामनीति का प्रयोग किया। जब उसमें सफलता न हुई तब भेद डालने की इच्छा से सब राजाओं को एकट्ठा करके मैंने घोर, दारुण, अलौकिक करतब दिखाये। सभा में स्थित सब राजाओं को झिड़ककर, दुर्योधन को तिनके की तरह तुच्छ बताकर, और शकुनि तथा कर्ण को धमकाकर काम निकालना चाहा। बारम्बार जुए आदि का वर्णन करके मैंने दुर्योधन वग़ैरह की निन्दा की और ऐसे वचनों से राजाओं को दुर्योधन के पक्ष से फोड़ने का उपाय किया। भेद नीति से भी जब काम नहीं चला तब मैंने दाननीति से काम लिया। वंश का घरेलू झगड़ा मिटाने और काम सिद्ध करने के लिए मैंने कहा—"हे दुर्योधन! पाण्डव लोग बड़े पराक्रमी होकर भी मान और प्रभुता छोड़कर, तुम्हीं को राज्य देकर, धृतराष्ट्र, विदुर और भीष्म के अधीन रहने को तैयार हो जायँगे। राज्य के स्वामी तुम्हीं बने रहो। उन पाँचों भाइयों को जीविका और रहने के लिए पाँच गाँव दे दो। पाण्डवों का पालन करना तुम्हारा और तुम्हारे पिता का कर्तव्य है"। हे धर्मराज, दुर्योधन इस पर भी राज़ी न हुआ। अब चौथे उपाय दण्डनीति के सिवा काम बनने का कोई उपाय नहीं रह गया।

११

काल के वश हो रहे सब राजा अपनी सेना लेकर दुर्योधन की आज्ञा से युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र को गये हैं। हे धर्मपुत्र, कुरुसभा का सब वृत्तान्त मैंने कह दिया। सत्यानाश के लिए उद्योग २० करनेवाले, काल के वश हो रहे, कौरवगण विना युद्ध के तुम्हें राज्य न देंगे।

सैन्यनिर्याणपर्व

एक सौ इक्यावन अध्याय

पाँचों पाण्डवों की बातचीत और युद्ध की तैयारी

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, श्रीकृष्ण के वचन सुनकर उनके सामने ही धर्मराज युधिष्ठिर अपने भाइयों से बोले—भाइयो, कुरुसभा में जो बातचीत हुई और श्रीकृष्ण ने जो विचार प्रकट किये, सो सब तुमने अच्छी तरह सुन लिया। इसलिए अब तुम लोग युद्ध के लिए मेरी सेना को अलग-अलग हिस्सों में बाँटकर तैयार करो। विजय प्राप्त करने के लिए यह सात अक्षौहिणी सेना जमा हुई है। महाराज द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, चेकितान, सात्यकि, शिखण्डी और भीमसेन, ये सात आदमी इस सात अक्षौहिणी सेना के भिन्न-भिन्न भागों के सञ्चालक बनाये जायँ। ये सातों सेनापति वेद के जानकार, युद्धविद्या में निपुण, शूर, वीर, युद्ध में प्राण देने के लिए तैयार, सच्चरित्र, नीति के ज्ञाता, लोकलज्जा से युक्त होने के कारण युद्ध से मुँह न मोड़नेवाले, बाण-विद्या और अस्त्र-विद्या के अच्छे ज्ञाता और सब प्रकार के शस्त्रों से युद्ध करने में होशियार हैं। सहदेव! अब एक ऐसा आदमी बताओ, जो सातों सेनापतियों का मुखिया—प्रधान सेनापति—बनाया जाय; जो बाणरूप चिनगारियाँ बरसानेवाले भीष्म-रूप अग्नि की आँच को युद्ध में सह सकता हो। बतलाओ, ऐसा प्रधान सेनापति कौन बनाया जाय?

सहदेव ने कहा—राजन्, जिनका सहारा पाकर हम अपने पैतृक राज्य को पाने का उद्योग कर रहे हैं, जो हमारे सुख या दुःख को अपना ही सुख-दुःख समझते हैं, ऐसे रणबाँकुरे अस्त्र-१० निपुण महावीर मत्स्यराज विराट इस महायुद्ध में भीष्म आदि महारथियों से टक्कर ले सकते हैं।

वैशम्पायन कहते हैं कि नकुल ने कहा—महाराज! अवस्था में बड़े, धीर, शास्त्रज्ञानी, कुलीन, लोकलज्जा रखनेवाले, महाबली, पराक्रमी, महर्षि भरद्वाज से सब अस्त्र सीखनेवाले, बड़े दुर्धर्ष, सत्यपरायण, महावीर भीष्म और द्रोण की बराबरी का दावा रखनेवाले, पिता की तरह सदा हम लोगों की रक्षा और देखरेख करनेवाले, श्रेष्ठ अस्त्रों के जानकार, सैकड़ों शाखाओं से युक्त महावृक्ष की तरह पुत्र-पौत्र-परिवार से पूर्ण और सब राजाओं से मान पानेवाले महाराज द्रुपद हमारे पक्ष के प्रधान सेनापति हों। वे भीष्म और द्रोण के हमले को सहज ही सँभाल सकते हैं।

अर्जुन ने कहा—महाराज, मेरी समझ में अग्नि-तुल्य दिव्य पुरुष महाबाहु धृष्टद्युम्न प्रधान सेनापति होने योग्य हैं। वे ऋषियों की प्रसन्नता और तपोबल के प्रभाव से दिव्य घोड़ों-

वाले रथ पर सवार, धनुष और कवच धारण किये अग्निकुण्ड से प्रकट हुए हैं। उनके रथ का शब्द मेघ के गरजने के समान गम्भीर है। उनका डीलडौल, पराक्रम, हृदय, भुजा, कन्धे और गरजना सिंह का सा है। वे वीर, बली और तेजस्वी हैं। भौंहें, दाँत, ठोढ़ी, बाहु, मुँह, आँखें, चरण आदि उनके सब अङ्ग सुडौल हैं। गजराज-सदृश धृष्टद्युम्न पर कोई शस्त्र कारगर होने का नहीं। फुरतीले, विचित्र युद्ध करनेवाले, सत्यवादी और जितेन्द्रिय धृष्टद्युम्न का जन्म आचार्य द्रोण को मारने के लिए ही हुआ है। मेरी समझ में भीष्म के वज्र जैसे, सर्पसदृश, प्रज्वलित और यमदूत के समान बाणों को धृष्टद्युम्न ही सह सकते हैं। भीष्म पितामह के भयङ्कर बाणों को या तो परशुराम ने सहा था, और या अभेद्य कवच पहननेवाले धृष्टद्युम्न सह सकते हैं। और कोई ऐसा वीर नहीं जो भीष्म के पराक्रम को सह सके। मेरी समझ में दलपति मस्त हाथी के समान धृष्टद्युम्न को ही प्रधान सेनापति बनाना ठीक होगा। २०

अब भीमसेन ने कहा—हे राजेन्द्र, सिद्धों और महर्षियों का कहना है कि शिखण्डी का जन्म भीष्म पितामह को मारने के लिए ही हुआ है। वे जब संग्राम में अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करेंगे तब महात्मा परशुराम के समान जान पड़ेंगे। राजन्, मुझे ऐसा कोई वीर नहीं देख पड़ता जो शिखण्डी को घायल कर सके या युद्ध से हटा सके। द्वन्द्वयुद्ध में भीष्म को मारनेवाला शिखण्डी के सिवा और कोई नहीं। मेरी राय है कि शिखण्डी को प्रधान सेनापति बनाया जाय। ३०

सबकी सलाह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा—महात्मा वासुदेव सारे संसार के बल और पराक्रम को जानते हैं। इस समय वे जिसे बतावेंगे उसी को मैं अपना प्रधान सेनापति बनाऊँगा। चाहे अस्त्रविद्या में निपुण हो और चाहे अस्त्रकला को बिलकुल न जानता हो, बूढ़ा हो चाहे जवान, जिसे श्रीकृष्ण बतावेंगे उसी को मैं प्रधान सेनापति का पद दूँगा। श्रीकृष्ण ही हमारी जीत या हार की जड़ हैं। हमारे प्राण, राज्य, भाव-अभाव, सुख-दुःख और सिद्धि या असिद्धि सब कुछ श्रीकृष्ण के ही हाथ में है। हमारे लिए यही धाता और विधाता हैं। श्रीकृष्ण जिसे कहें वही हमारा सेनापति हो। अब रात हो गई। हम लोग श्रीकृष्ण के अधीन हैं; इन्हीं के बताये हुए पुरुष को अपना सेनापति बनाकर सवेरे स्वस्त्ययन करके पूजे हुए शस्त्र-अस्त्र लेकर हम युद्ध-भूमि को चलेंगे।

वैशम्पायन कहते हैं कि धर्मराज के वचन सुनकर, अर्जुन की ओर देखकर, श्रीकृष्ण ने कहा—राजन्, इन लोगों ने सेनापति बनाने के लिए जिन पुरुषों के नाम लिये वे सब सेनापति-पद के लायक, युद्ध में निपुण और शत्रुओं को हराने में समर्थ हैं। लोभी और पापी धृतराष्ट्र के बेटों की तो कोई बात ही नहीं, युद्ध में इन्हें देखकर इन्द्र आदि देवता भी डर जायँगे। हे भरतकुलतिलक! शान्ति स्थापित करने के लिए यद्यपि मैंने कोई बात उठा नहीं रक्खी, पर कुछ फल नहीं हुआ। इतना लाभ अवश्य हुआ कि हम अपने धर्म का पालन कर चुके और इसी कारण इस युद्ध के लिए लोग हमें बुरा न कहेंगे। अबोध और बालप्रकृति दुर्योधन अपने को ४१

अस्त्र-शस्त्र-विद्या का बेजोड़ जानकार और बलवान् समझता है। मौत उसके सिर पर नाच रही है, इसी से उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। अब तुम अपनी सेना सजाओ। महावीर अर्जुन, क्रोधी भीमसेन, कालसदृश नकुल, यमराज-तुल्य सहदेव, युयुधान, धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, राजा विराट, द्रुपद, द्रौपदी के पाँचों पुत्रों और अन्य अनेक अक्षौहिणीपति नरेन्द्रों से धृतराष्ट्र के बेटों का युद्ध करना कैसा, इन लोगों की ओर वे आँख उठाकर देख तक न सकेंगे। हमारे पक्ष के बलवान् दुर्धर्ष योद्धाओं की सेना युद्ध-भूमि में कौरवों को और उनकी सेना को मारकर विजय प्राप्त करेगी ही। मैं भी धृष्टद्युम्न को प्रधान सेनापति बनाने की सम्मति देता हूँ।

श्रीकृष्ण की राय सुनकर सब लोग प्रसन्नता से आनन्द-कोलाहल करने लगे। वह कोलाहल चारों ओर फैल गया। फुर्ती से इधर-उधर दौड़कर सब सैनिक "तैयारी करो, युद्ध की तैयारी करो" कहते हुए अपना उत्साह दिखाने लगे। घोड़ों की हिनहिनाहट, हाथियों की चिंघार, रथों के पहियों की घरघराहट, शङ्ख और नगाड़ों का शब्द चारों ओर दूर तक गूँज उठा। पैदल, रथ, हाथी, घोड़े आदि से भरी वह सेना लहरोंवाले और उमड़ रहे समुद्र के समान जान पड़ने लगी। कुछ लोग इधर से उधर दौड़े जा रहे थे, कुछ एक दूसरे को लाम पर चलने के लिए बुला रहे थे, और कुछ लोग कवच पहन रहे थे। युद्ध के लिए रवाना हो रहे पाण्डवों की दुर्धर्ष सेना गङ्गा की बाढ़ के समान जान पड़ने लगी। उस सेना के अगले हिस्से में भीमसेन, कवच पहने नकुल, सहदेव, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों बेटे, धृष्टद्युम्न, प्रभद्रक और पाञ्चाल देश के वीर चले। प्रसन्नतापूर्वक जा रहे वीरों के सिंहनाद का शब्द, पौर्णिमा के दिन बढ़े हुए समुद्र के गर्जन के समान, आकाश तक भर गया।

५०

कवच पहने हुए, प्रसन्नचित्त, शत्रुसेना का नाश करनेवाले योद्धाओं के बीच में राजा युधिष्ठिर चले। छकड़े, बाज़ार, डेरे, छोलदारियाँ, कनातें, वेश्याओं के डेरे, सवारियाँ, वाहन, ख़ज़ाना, यन्त्र (तोप वग़ैरह), शस्त्र-अस्त्र, घावों का इलाज करनेवाले वैद्य आदि उस फ़ौज के साथ थे। नौकर-चाकर, निकम्मे और दुबले सैनिक, सच बोलनेवाली द्रौपदी और उनके दास-

दासी आदि सबको राजा युधिष्ठिर ने उपप्लव्य नगर में ही रहने दिया। जगह-जगह दीवार, खाईं और शूरसेना के प्रबन्ध द्वारा धन और स्त्री आदि की रक्षा का बन्दोबस्त करके सेना लेकर पाण्डव युद्ध के लिए रवाना हुए। उन्होंने ब्राह्मणों से स्वस्त्ययन कराया और उन्हें गाय, सोना, रत्न आदि देकर प्रसन्न किया। फिर ब्राह्मणों के मुँह से अपनी बड़ाई सुनते हुए वे मणियों और सोने से सजे हुए रथों पर सवार हुए। केकयदेश के राजकुमार, धृष्टकेतु, काशिराज, विभूतिमान् और अजेय शिखण्डी आदि योद्धा गहने, अस्त्र-शस्त्र, कवच आदि पहनकर प्रसन्नता से महाराज युधिष्ठिर के साथ चले। सेना के पिछले हिस्से में राजा विराट, महाराज द्रुपद, सुधर्मा, कुन्तिभोज और धृष्टद्युम्न के सब बेटे चले। इस सेना में चालीस हज़ार रथ, साठ हज़ार हाथी, दो लाख घोड़े और चार लाख पैदल थे। अर्जुन और श्रीकृष्ण के साथ अनाधृष्टि, चेकितान, धृष्टकेतु और सात्यकि चले। ६०

साँड़ और सिंह की तरह गरजते हुए पाण्डव लोग कुरुक्षेत्र में पहुँचकर शङ्ख बजाने लगे। वासुदेव और अर्जुन ने भी अपने-अपने शङ्ख बजाये। वज्र की ध्वनि के समान गम्भीर श्रीकृष्ण के पाञ्चजन्य शङ्ख का शब्द सुनकर सब सैनिक प्रसन्न और उत्साहित हुए। उन वीरों के सिंहनाद और शङ्ख की ध्वनि से पृथ्वी, अन्तरिक्ष और समुद्र आदि स्थान गूँजने लगे। ७१

एक सौ बावन अध्याय

कुरुक्षेत्र में पाण्डवों का पड़ाव

वैशम्पायन कहते हैं—राजा युधिष्ठिर ने मसान, देवस्थान, ऋषियों के आश्रम और तीर्थ-भूमि को बचाकर ऐसे समतल स्थान में अपनी सेना का पड़ाव डाला जिसमें बहुत सी घास और ईंधन मौजूद था। हज़ारों राजाओं को साथ लिये हुए राजा युधिष्ठिर ने जब देखा कि सब वाहन और मनुष्य सुख से विश्राम कर चुके हैं तब वे अपने सैनिकों के साथ उस अपार सेना के ठहरने का सुभीता देखने-भालने लगे। इधर-उधर दुर्योधन की सेना के जो सिपाही
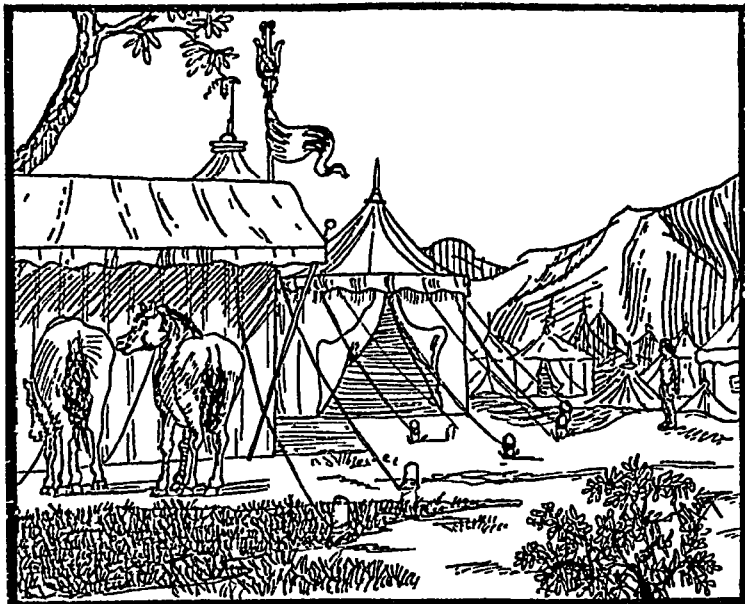
ठहरे थे उन्हें युधिष्ठिर के सैनिकों ने अपने ठहरने के स्थान से भगा दिया। अर्जुन सहित श्रीकृष्ण

चारों ओर घूम-फिरकर छावनी डालने योग्य स्थान देखने लगे। वीर धृष्टद्युम्न, सात्यकि और पराक्रमी युयुधान सेना के पड़ाव की नाप-जोख करने लगे। श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र में अच्छे जलवाली, पवित्र नदी हिरण्यवती के समीप खाई खुदवाई। इस नदी में न कङ्कड़ थे और न कीचड़ था। वहाँ पर कुछ सेना भी अपने बचाव के लिए तैनात कर दी गई, जिसमें शत्रुपक्ष के लोग न तो पड़ाव में घुसकर हाल-चाल ले सकें और न गुप्त रूप से कुछ उपद्रव कर सकें। पाण्डवों के ऐसे ही अन्य राजाओं के भी डेरे बनाये गये। खाने-पीने की सामग्री, चारा, ईंधन १० (रसद) आदि से भरे-पूरे और सुरक्षित सैकड़ों-हज़ारों डेरे अलग-अलग लगाये गये। उन्हें देखने से जान पड़ता था मानों पृथ्वी पर हज़ारों विमान आकाश से उतर आये हैं।

उन डेरों में तलब पानेवाले सैकड़ों चतुर कारीगर और शास्त्र के जानकार चिकित्सक (वैद्य) नियुक्त हुए। उन वैद्यों के पास सब तरह का चिकित्सा का सामान था। महाराज युधिष्ठिर ने हर एक डेरे में धनुष, डोरी, कवच, अन्यान्य अस्त्र, घी, गुड़, सर्जरस के बुरादे के बड़े-बड़े ढेर, पानी, घास, ईंधन, भूसी, आग, महायन्त्र, नाराच, तोमर, परश्वध, कवच, तरकस और ऋष्टि आदि सामग्रियों के ढेर लगवा दिये। वहाँ कँटीले कवच पहने सैकड़ों पहाड़ के समान ऊँचे हाथी झूमते देख पड़ते थे। पाण्डवों के वहाँ पड़ाव डालने की ख़बर पाकर हरएक देश से सोमपान करनेवाले, बहुत-बहुत दक्षिणा देकर यज्ञ करनेवाले, ब्रह्मचर्य में रहकर विद्या पढ़नेवाले राजा लोग—सेना और वाहन साथ लेकर—पाण्डवों को विजयी बनाने के लिए १८ उनकी सहायता करने को वहाँ आने लगे।

एक सौ तिरपन अध्याय

कुरुक्षेत्र के लिए दुर्योधन की यात्रा

जनमेजय ने कहा—भगवन्! अपने बेटों के साथ विराट और द्रुपद, केकय, वृष्णिगण और आदित्यों के समान तेजस्वी अन्य अनेक राजाओं के साथ, सूर्य से रक्षित इन्द्र की तरह, श्रीकृष्ण द्वारा पालित राजा युधिष्ठिर को युद्ध के लिए सेना लेकर कुरुक्षेत्र में आये हुए सुनकर राजा दुर्योधन ने क्या किया? युधिष्ठिर की सहायता के लिए जमा हुए सब महावीर क्षत्रिय इन्द्र को भी नीचा दिखाने में समर्थ थे; उन्हें युद्ध के लिए तैयार देखकर इन्द्र आदि देवता भी डर सकते थे। पाण्डव, श्रीकृष्ण, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, युधामन्यु और अभिमन्यु आदि लोक-प्रसिद्ध वीरों के ऊपर देवता भी हमला करने में असमर्थ थे। इसलिए उस समय कुरुक्षेत्र में भयङ्कर युद्ध की तैयारी होने पर आगे जो कुछ हुआ सो मैं विस्तार के साथ सुनना चाहता हूँ।

दुर्योधन की आज्ञा सुनकर राजा लोगों का युद्ध के लिए उत्साह प्रकट करना—पृ० १७६१
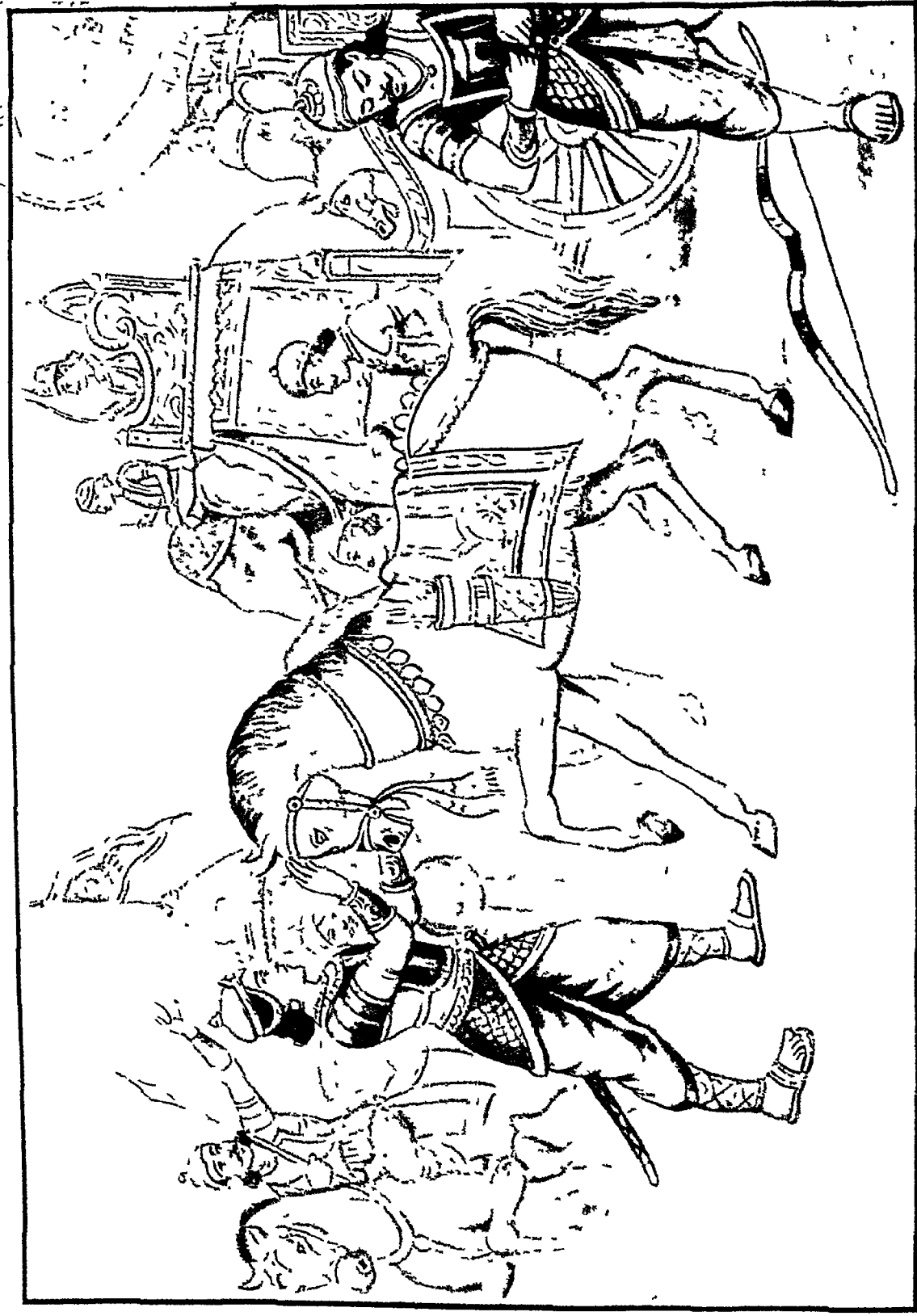
वैशम्पायन कहते हैं कि श्रीकृष्ण के लौट जाने पर राजा दुर्योधन ने कर्ण, दुःशासन और शकुनि से कहा—हे वीरो, श्रीकृष्ण जो काम करने आये थे उसमें सफलता न पाने के कारण वे क्रोधित होकर पाण्डवों के पास लौट गये हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वे अब हमारे पक्ष को अपने क्रोध की आग में भस्म करने की पूरी तैयारी करेंगे। पूरे तौर पर श्रीकृष्ण की मन्शा यही है कि मेरे साथ पाण्डवों का युद्ध हो। भीमसेन और अर्जुन उन्हीं के कहे पर चलते हैं। राजा १० युधिष्ठिर भीमसेन को बहुत मानते हैं। मैं उन्हें और उनके भाइयों को कपट के जुए में धोखा देकर कष्ट पहुँचा चुका हूँ। विराट और द्रुपद से भी मेरी पुरानी शत्रुता है। श्रीकृष्ण के आज्ञाकारी द्रुपद और विराट ही इस समय पाण्डवों की सेना के सञ्चालक हैं। इसलिए यह भयानक संग्राम बहुत जल्द होगा। अब तुम लोग भी आलस्य छोड़कर बड़ी लगन के साथ युद्ध की तैयारियाँ करो। कुरुक्षेत्र के मैदान में बहुत से लम्बे-चौड़े डेरे बनवाओ। वे ऐसे हों कि शत्रु लोग उन पर चढ़ाई न कर सकें। उनमें तरह-तरह के असंख्य शस्त्र भरवा दो। चारों ओर ऊँची पक्की दीवारें और खाइयाँ बनवाओ। हर एक छावनी पर ध्वजा-पताकाएँ लगवा दो। ऐसे स्थान पर छावनियाँ बनाओ जहाँ जल पास हो। उन शिविरों में युद्ध का सामान और रसद पहुँचाने के रास्ते ऐसे हों कि शत्रु चढ़ करके उन्हें बन्द न कर सकें। उन शिविरों में जाने के लिए नगर के बाहर चौड़ी और समतल सड़कें बनाओ। इस बात की घोषणा जल्दी कर दो कि सबेरे ही युद्ध के लिए कूच किया जायगा।

कर्ण आदि मन्त्रियों ने 'जो आज्ञा' कहकर सबेरे लाम पर जाने की घोषणा करा दी और कुरुक्षेत्र में राजाओं के रहने के लिए शिविर बनवाने का भी इन्तज़ाम कर दिया। इधर राजा की आज्ञा सुनते ही अन्य राजा लोग अपने सिंहासनों से उठ खड़े हुए। वे लोग सोने के बजुल्ला आदि पहने, चन्दन-अगुरु आदि सुगन्धित वस्तुओं से सुवासित, बेलन ऐसी दृढ़ भुजाओं को मलते हुए युद्ध के लिए उत्साह प्रकट करने लगे। सब वीर अच्छे

कपड़े, गहने पहनकर और कवच तथा तरह-तरह की पगड़ियाँ बाँधकर कूच की तैयारी करने
२० लगे। रथी लोग रथों को, घोड़ों के सवार घोड़ों को और हाथियों के सवार हाथियों को सजाने लगे। राजाओं के नौकर-चाकर लोग विचित्र सोने के कवच और शस्त्र-अस्त्र आदि युद्ध का सामान पहुँचाने में लग गये। पैदल सिपाही सोने से चित्रित अनेक शस्त्र बाँधकर युद्ध के लिए तैयार होने लगे। महाराज धृतराष्ट्र की राजधानी में प्रसन्न मुखवाले लोगों की इतनी भीड़-भाड़ हुई कि मेला सा जान पड़ने लगा। योद्धाओं से भरी दुर्योधन की राजधानी पूर्णिमा को बढ़े हुए समुद्र के समान जान पड़ने लगी। इधर-उधर आ-जा रहे लोग आवर्त (भँवर) के समान देख पड़ते थे। रथ, हाथी और घोड़े मछलियों के समान जान पड़ते थे। शङ्ख और नगाड़े आदि का शब्द समुद्र के गर्जन का शब्द समझ पड़ता था। धन-रत्नों का ख़ज़ाना ही समुद्र के भीतर के रत्नों का ढेर था। विचित्र गहने और कवच तरङ्गों के समान थे। बहुत से चमकीले शस्त्र फेने की जगह थे। बड़े-बड़े महल समुद्र के भीतर की पहाड़ों की क़तार जान पड़ते थे। नगर की सड़कें और बाज़ार
२७ समुद्र में मिलनेवाली नदियों के समान देख पड़ते थे।

एक सौ चौवन अध्याय

युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण और अर्जुन का संवाद

वैशम्पायन कहते हैं कि हे जनमेजय, धर्मराज युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के मुँह से सुनी हुई बातें याद करके फिर उनसे कहा—हे श्रीकृष्ण, दुर्योधन ने सन्धि के प्रस्ताव के उत्तर में ऐसी बातें कैसे कहीं! कृपा कर बताओ, इस समय हमें क्या करना चाहिए? क्या करने से हम धर्म की रक्षा कर सकेंगे? दुर्योधन, कर्ण और शकुनि का, मेरा और मेरे भाइयों का मतलब तुम अच्छी तरह जानते हो। बुद्धिमान् विदुर और महावीर भीष्म की बातें भी तुमने सुनी हैं। आर्या कुन्ती की इच्छा तुम्हें अच्छी तरह मालूम है। सब बातों पर अच्छी तरह ग़ौर करके, और युद्ध के सिवा जो और कोई भलाई का उपाय सूझ पड़े तो उस पर भी विचार करके, तुम मुझे कर्तव्य का उपदेश करो जिसमें हमारा भला हो और धर्म की हानि न हो।

युधिष्ठिर के वचन सुनकर वासुदेव ने ऊँचे स्वर से गम्भीर वाणी में कहा—हे धर्मराज, मैंने आपकी ओर से धर्मार्थयुक्त जो हितकारी वचन कहे, उन्हें कपटी दुर्योधन ने नहीं माना। बुद्धिमान् विदुर ने, पितामह भीष्म ने और मैंने उसे बहुत समझाया पर उसने ध्यान ही नहीं दिया। वह सबका अनादर करके अपने हठ पर अड़ा हुआ है। हे

युधिष्ठिर, वह दुरात्मा न तो धर्म ही चाहता है और न यश ही। वह समझता है कि एक कर्ण के बल से ही मैं सबको सहज में जीत लूँगा।

उस पापी ने मुझे पकड़ लेने की आज्ञा दी थी, पर कुछ नहीं कर सका। उस समय भीष्म या द्रोण ने भी कुछ युक्तिसङ्गत खण्डन नहीं किया। एक विदुर को छोड़कर और सब लोग दुर्योधन के वश में हैं। असहनशील दुर्योधन के पिट्ठू शकुनि, कर्ण, दुःशासन आदि मूढ़ों ने आपके सम्बन्ध में बहुत सी अनुचित बातें कहीं। दुर्योधन आदि ने आपके लिए जो कटु वचन कहे हैं उन्हें कहने की ज़रूरत नहीं। मैं आपसे संक्षेप में यह कहे देता हूँ कि दुर्योधन आपसे अच्छा सलूक नहीं करता और न कभी करेगा। आपके सैनिक राजाओं में जो पाप और अकल्याण नहीं है वह सब दुरात्मा दुर्योधन में मौजूद है। मेरी राय यही है कि राज्य छोड़कर सन्धि करना या चुप रहना उचित न होगा; इसलिए युद्ध करना ही ठीक है—यही धर्म है। १०

वैशम्पायन कहते हैं कि राजा लोग श्रीकृष्ण के ये वचन सुनकर चुपचाप राजा युधिष्ठिर के मुँह की ओर ताकने लगे; किसी ने कुछ नहीं कहा। राजा युधिष्ठिर ने राजाओं के अभिप्राय को समझकर और भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव आदि की इच्छा जानकर युद्ध के लिए तैयारी करने की आज्ञा दे दी। युद्ध की आज्ञा पाते ही पाण्डव-सेना में आनन्द और उत्साह का कोलाहल छा गया; चारों ओर हर्षसूचक शब्द और किलकारियाँ सुन पड़ने लगीं।

जिनको न मारना चाहिए उन जाति-भाइयों को मारना होगा, यह सोचकर युधिष्ठिर ने लम्बी साँस लेकर भीम और अर्जुन से कहा—भाइयो, जिस अनर्थ से बचने के लिए हमने वनवास आदि के अनेक दुःख चुपचाप सह लिये, वही अनर्थ आज सामने आ गया। इस भयङ्कर युद्ध को रोकने के लिए बारम्बार बहुत उपाय करके भी मैं कुछ नहीं कर सका। मैंने अपनी ओर से युद्ध की तैयारी नहीं की, फिर भी भयङ्कर संग्राम होनेवाला है। पूजनीय, मारे जाने के अयोग्य पुरुषों से हम लोग कैसे युद्ध करेंगे? यदि बड़े-बूढ़े पितामह गुरु, गुरुपुत्र आदि को मारकर जय प्राप्त करेंगे भी तो हमें उसमें क्या सुख मिलेगा? २०

वैशम्पायन कहते हैं कि युधिष्ठिर को यों चिन्ता से व्याकुल देखकर, श्रीकृष्ण के वचनों की याद दिलाते हुए, अर्जुन ने कहा—महाराज, महात्मा वासुदेव के मुँह से आर्या कुन्ती और विदुरजी की बातें सुनकर उन पर आप विचार कर चुके हैं। मुझे निश्चय जान पड़ता है कि उनका कहना सब तरह धर्म-सङ्गत है। इस कारण इस समय संग्राम से मुँह मोड़ना कभी आपके योग्य काम नहीं है। अर्जुन के ये वचन सुनकर मुसकाते हुए श्रीकृष्ण ने उनका अनुमोदन किया। अब युद्ध का पक्का इरादा करके पाण्डव उस रात को सुख से सो रहे। २७

एक सौ पचपन अध्याय

दुर्योधन की युद्ध की तैयारी

वैशम्पायन कहते हैं—उधर सवेरा होने पर राजा दुर्योधन ने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेना के मनुष्य, रथ, हाथी, घोड़े आदि को इकट्ठा करके उन्हें—योग्यता के अनुसार—अगले, पिछले और बीच के भाग में रहने की आज्ञा दी। ग्यारहों अक्षौहिणी सेना भिन्न-भिन्न भागों में बँट गई; सब सैनिक लोग युद्ध की सजावट के साथ कूच करने के लिए तैयार होने लगे। अनुकर्ष (रथ के नीचे की लकड़ी), बड़े-बड़े बाण-कोष, वरूथ (शस्त्र-विशेष), तोमर, उपासङ्ग (घोड़ों और हाथियों पर लादे जानेवाले बाणों के तरकस), शक्ति, निषङ्ग (पैदलों की कमर में रहनेवाले छोटे तरकस), तलवार, ध्वजा, पताका, बाण, धनुष, विचित्र रस्सियाँ, पाश, परिच्छद, कचग्रहक्षेप (वे शस्त्र, जिनसे शत्रु के बाल पकड़कर उसे पटक देते हैं), तेल, गुड़, बालू, साँपों से भरे घड़े, राल, जिनके अगले हिस्से में घण्टियाँ लगी रहती हैं ऐसे शस्त्र, पट्टिश, छुरे आदि लोहे के शस्त्र, गुड़ का गर्म शरबत (शत्रुओं पर फेंकने के लिए), यन्त्र से फेंके जानेवाले पत्थर के गोले, भिन्दिपाल (गोफिये), शूल, मोम, मुद्गर, बर्छी, हल के आकार के शस्त्र, ज़हर के बुझे तोमर, अङ्कुश और कुल्हाड़ी के आकार के तोमर, सूप (गर्म तेल आदि शत्रुओं पर डालने के लिए), पिटारियाँ (शस्त्र आदि रखने के लिए), काँटेदार कवच, काठ के भीतर छिपे हुए शस्त्र, लोहे के काँटे और कीलें, प्रास, कुल्हाड़ी, कुदाल, पुराना घी और तेल से तर रेशमी कपड़े (जिन्हें जलाकर उनकी राख घाव में भरी जाय), सींग, ऋष्टि, भाले आदि अनेक प्रकार के असंख्य युद्ध के सामान से सजे हुए योद्धा लोग, चमकदार मणि और गहने पहनकर, अपने शरीर पर सोने के जाल डालकर,
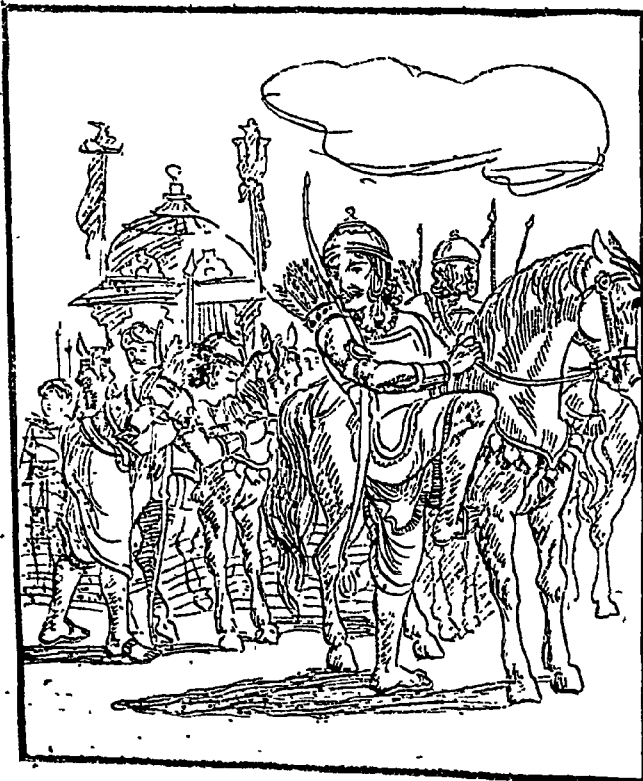
११ प्रज्वलित अग्नियों के समान, व्याघ्रचर्म से मढ़े हुए रथों पर सवार हुए। अच्छे कुलों में उत्पन्न, शस्त्र-कला में कुशल, अश्वविद्या के जानकार, कवचधारी वीर पुरुष सारथी के काम पर तैनात हुए।

धनुप-बाण आदि अस्त्र-शस्त्रों से भरे, पताकाओं से शोभित, ढाल-तलवार, पट्टिश, घण्टा, चामर आदि से युक्त और बढ़िया चार-चार घोड़ों से जुते असंख्य रथ देख पड़ने लगे। योद्धा लोग उन रथों में अशुभ हटानेवाले यन्त्र और ओषधियाँ बाँधने लगे। घोड़ों के मस्तकों पर कलँगी और मोतियों के गुच्छे आदि लगाये गये वे बड़े-बड़े रथ सुरक्षित सजे हुए नगरों के समान जान पड़ते थे। हर एक रथ में एक अश्वविद्या में चतुर सारथी और आस-पास दो अच्छे वीर चक्र-रक्षक थे। हाथियों का शृङ्गार किया गया और रत्न-जड़े गहने पहनाये गये। वे रत्न की खानोंवाले पहाड़ों के समान जान पड़ने लगे। हर एक हाथी की रक्षा के लिए दो अङ्कुश लिये, दो धनुप-बाण लिये, दो तलवारें लिये, एक त्रिशूल लिये और एक शक्ति लिये, इतने आदमी तैनात हुए। दुर्योधन की सेना में चारों ओर हाथियों के दल देख पड़ने लगे। उन हाथियों पर तरह-तरह के शस्त्र भी लदे थे। कवच पहने सवार लोग असंख्य घोड़ों पर सवार हुए। उनकी बरछियों में झण्डियाँ फहरा रही थीं। उनके घोड़े सब तरह की चालें चलनेवाले, अच्छी तरह सिखाये गये, सोने के गहने पहने और शक्तिशाली थे। तरह-तरह की पोशाकें पहने, कवचधारी, हथियार बाँधे, सोने की माला पहने पैदलों के दल भी युद्ध के लिए सज-धजकर तैयार हो गये। हर एक रथ के साथ दस हाथी, हर हाथी के साथ दस सवार और हर सवार के साथ दस पैदल उसकी रक्षा के लिए नियुक्त हुए। कहीं-कहीं ऐसा क्रम था कि हर एक रथ के साथ पचास हाथी, हर एक हाथी के साथ सौ घोड़े और हर एक घोड़े के साथ सात पैदल उसकी रक्षा करने को खड़े थे। पाँच सौ हाथियों, पाँच सौ रथों, पाँच सौ घोड़ों और पचीस सौ पैदलों की एक 'सेना' होती है। दस सेनाओं की एक 'पृतना' और दस पृतनाओं की एक 'वाहिनी' होती है। साधारण रूप से फ़ौज को सेना, वाहिनी, पृतना, ध्वजिनी, चमू, अक्षौहिणी और वरूथिनी कहते हैं। २०

इसी तरह अठारह अक्षौहिणी सेना सजकर लड़ाई के लिए तैयार हो गई। दुर्योधन की ओर ग्यारह अक्षौहिणी और पाण्डवों की ओर सात अक्षौहिणी सेना थी। पचपन पैदलों की टुकड़ी को 'पत्ति' कहते हैं। तीन पत्तियों का एक 'सेनामुख' होता है। उसे 'गुल्म' भी कहते हैं। तीन 'गुल्मों' का एक 'गण' होता है। कुरु-सेना में इस तरह के दस-दस हज़ार गण थे। पराक्रमी राजा दुर्योधन ने बुद्धिमान् राजा लोगों को छाँट-छाँटकर सेनापति बनाया। दुर्योधन ने पहले से ही अलग-अलग अच्छे वीर सेनापतियों को बुलाकर अपने यहाँ रख लिया था। इस समय वह नित्य सबके सामने दोनों वक़्त भीष्म, कृप, द्रोण, जयद्रथ, शल्य, काम्बोजनरेश सुदक्षिण, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, शकुनि और महाबली वाह्लीक, इन ग्यारह जनों का विशेष सत्कार और आदर करने लगा। इन वीर पुरुषों के साथी और अनुगामी लोग भी दुर्योधन की भलाई के लिए कौरव-सेना में शामिल हो गये। ३० ३५

एक सौ छप्पन अध्याय

दुर्योधन का भीष्म पितामह को प्रधान सेनापति बनाना

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, अब राजा दुर्योधन अन्य राजाओं के साथ पितामह भीष्म के पास गया और हाथ जोड़कर कहने लगा—हे पितामह, मेरी सेना लड़ने के लिए तैयार है, किन्तु एक उपयुक्त सेनापति के बिना वह सुस्त हो रही है। सेना कितनी ही अधिक क्यों न हो, योग्य सेनापति के बिना वह युद्ध में चींटियों के दल की तरह नष्ट हो जाती है। दो पुरुषों की बुद्धि कभी समान नहीं होती। यदि दोनों ओर योग्य और शूर सेनापति होते हैं तो वे परस्पर स्पर्धा करके अधिक वीरता और पराक्रम दिखाते हैं। सुना जाता है, पहले समय में कुशमयी ध्वजा लिये हुए ब्राह्मण लोग हैहयवंश के क्षत्रियों से लड़ने गये थे। उन ब्राह्मणों के साथ वैश्य और शूद्र भी थे। एक ओर तीनों वर्ण थे और दूसरी ओर केवल क्षत्रिय थे।

उनमें परस्पर युद्ध होने पर तीनों वर्ण क्षत्रियों से हारकर बारम्बार युद्धभूमि से भागने लगे। तब ब्राह्मणों ने क्षत्रियों से ही इसका कारण पूछा। धर्म के जानकार क्षत्रियों ने उनको ठीक बात बता दी। क्षत्रियों ने कहा—हम लोग युद्ध में एक बुद्धिमान् पुरुष को अगुआ बनाकर उसी की

राय से सब काम करते हैं; किन्तु तुम लोग अलग अलग ढाई चावल की खिचड़ी पकाते हो। यही तुम्हारे हारने का कारण है। हे पितामह, तब ब्राह्मणों ने एक नीति-विशारद पराक्रमी ब्राह्मण को सेनापति बना लिया। अन्त को ब्राह्मणों की जय हुई। इसी प्रकार जो लोग चतुर, शूर, हित-चिन्तक और ईमानदार व्यक्ति को अपना सेनापति बनाते हैं वे युद्ध में सहज ही अपने शत्रु को जीत लेते हैं। १०

हे पितामह! आप दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य के समान रण-नीति के जानकार, धर्मात्मा, मेरे हितचिन्तक और दुर्धर्ष हैं। शत्रुओं में से कोई आपको मार नहीं सकता; क्योंकि मृत्यु आपकी इच्छा के अधीन है। जैसे किरणवाले तेजस्वी पदार्थों के सूर्य, वृक्ष-ओषधियों के चन्द्रमा, यक्षों के कुबेर,

राजा दुर्योधन का भीष्मपितामह को सेनापति के पद पर अभिषेक करना—पृ० १७६७

देवताओं के इन्द्र, पहाड़ों के सुमेरु, पक्षियों के गरुड़, सब देवयोनियों के कार्त्तिकेय और वसुओं के अग्निदेव स्वामी और रक्षक हैं, वैसे ही आप हमारे रक्षक और सेनापति बनिए। इन्द्र द्वारा रक्षित देवताओं की तरह आपके द्वारा रक्षित हम लोगों पर सब देवता भी हमला करने में समर्थ न होंगे। देवताओं की सेना के आगे कार्त्तिकेय की तरह आप हमारी सेना के आगे चलिए। हम लोग बड़े साँड़ के पीछे बलवान् बैलों की तरह आपके पीछे चलेंगे।

दुर्योधन की प्रार्थना सुनकर भीष्म ने कहा—हे भरतकुलश्रेष्ठ, तुम्हारा कहना ठीक है। मेरी दृष्टि में जैसे तुम हो वैसे ही पाण्डव भी हैं। मैं अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार पाण्डवों को अच्छा उपदेश देना और तुम्हारी ओर से युद्ध करना अपना काम समझता हूँ और ऐसा ही करूँगा। पुरुषसिंह अर्जुन के सिवा पृथ्वी पर मेरे समान योद्धा कोई नहीं है। बुद्धिमान् अर्जुन यद्यपि बहुत से दिव्य अस्त्रों को जानते हैं, तथापि आमने-सामने वे मुझसे युद्ध नहीं करेंगे। देवता-असुर-राक्षस-मनुष्य आदि से भरे इस जगत् को मैं और वह, दोनों, अस्त्र-बल से क्षण भर में जीवहीन कर सकते हैं; किन्तु मैं प्रीतिपात्र पाण्डवों में से किसी की हत्या न करूँगा। हे दुर्योधन, यदि २० पाण्डव मुझे पहले ही युद्ध में मार न डालेंगे तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अस्त्र चलाकर नित्य उनके पक्ष के दस हज़ार योद्धाओं को मारूँगा। इसके सिवा मैं एक प्रतिज्ञा से तुम्हारा सेनापति होना भी अङ्गीकार कर सकता हूँ। प्रतिज्ञा यह है कि पहले चाहे कर्ण युद्ध कर ले और चाहे मैं कर लूँ; क्योंकि वह सदा युद्ध में मुझसे लाग-डाँट दिखाया करता है।

कर्ण ने कहा—राजन्, मैं पितामह भीष्म के जीवन-काल में युद्ध न करूँगा। इनके मारे जाने पर अर्जुन से लड़ूँगा।

अब राजा दुर्योधन ने विधि से सेनापति के पद पर पितामह भीष्म का अभिषेक किया और ब्राह्मणों को धन-रत्नों की दक्षिणा दी। उस समय भीष्म बहुत ही अच्छे लगे। राजा की आज्ञा से सावधान बाजे बजानेवाले लोग सैकड़ों-हज़ारों शङ्ख, तुरही और नगाड़े आदि बजाने लगे। वीरों के सिंहनाद और वाहनों के गम्भीर शब्द से चारों दिशाएँ गूँज उठीं। उस समय हाथियों की चिंघाड़ के साथ ही आकाश में बिना मेघ के बिजली की सी कड़क सुन पड़ी जिसे सुनकर योद्धा लोग मूर्च्छित से हो गये। बिना बादल के ही आकाश से रक्त की वर्षा हुई। आकाश से उल्का-पात हुआ और अशुभ आकाशवाणी सुनाई पड़ी। पृथ्वी में बारम्बार भूकम्प होने लगा। डर की सूचना देनेवाली सियारनियाँ बारम्बार अशुभ शब्द करने लगीं। राजा दुर्योधन ने जिस समय सेनापति के पद पर पितामह का ३० अभिषेक किया उसी समय ये भयङ्कर उत्पात होने लगे।

राजा दुर्योधन ने ब्राह्मणों को गाय-सोना-रत्न आदि देकर सन्तुष्ट किया। वे लोग स्वस्त्ययन पढ़कर उसे जय के आशीर्वाद देने लगे। भीष्म को सेनापति बनाकर, सबके आगे

करके, कुरुक्षेत्र के लिए दुर्योधन चल पड़ा। उसके भाई और वह असंख्य सेना उसके साथ चली। राजा दुर्योधन ने कुरुक्षेत्र में पहुँचकर, कर्ण के साथ इधर-उधर देख-भाल करके, समतल मैदान में सेना के रहने के लिए छावनी की रचना कराई। सुहावने, बहुत सी घास और ईंधन से भरे-पुरे स्थान में नाप-जोख के साथ डेरे खड़े किये गये। ऊसर स्थान छोड़ दिये गये।
३६ राजा दुर्योधन की सेना का महाशिविर दूसरा हस्तिनापुर सा बस गया।

एक सौ सत्तावन अध्याय

बलराम का आना और पाण्डवों से मिलकर तीर्थयात्रा के लिए चल देना

जनमेजय ने पूछा—भगवन्! शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ, भरतवंश के बाबा, राजाओं में ध्वजा के समान उच्च, बृहस्पति के समान बुद्धिमान्, पृथ्वी के समान क्षमा करनेवाले, समुद्र के समान गम्भीर, हिमालय के समान अचल, प्रजापति के समान उदार, सूर्य के समान तेजस्वी, इन्द्र के समान बाण-वर्षा करके शत्रु का नाश करने में समर्थ महात्मा भीष्म को भयानक रोमहर्षण रण-यज्ञ की दीक्षा लेते सुनकर महाबाहु राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और श्रीकृष्ण ने परस्पर क्या कहा?

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, आपत्ति-काल के धर्म और अर्थ को अच्छी तरह जाननेवाले बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने अपने भाइयों को और भगवान् वासुदेव को बुलाकर धैर्य के साथ कहा—हे वासुदेव, हे भीमसेन-अर्जुन-नकुल और सहदेव, तुम लोग कवच पहनकर सावधान रहो और चारों ओर घूम फिरकर अपनी सेना की देखभाल करते रहो। पहले हम लोगों को पितामह भीष्म से संग्राम करना होगा। इसलिए अब सातों अक्षौहिणियों के सात सेनापति निश्चित कर लो। इस पर श्रीकृष्ण ने कहा—राजन्, आपने इस समय के अनुकूल और अपने योग्य बात कही है। आपकी यह सावधानी उचित और काम सिद्ध करनेवाली होने के कारण मुझे भी पसन्द है। इसलिए, आप झटपट अपनी सेना के
१० सात दलों में सात सेनापति तैनात कर दीजिए।

अब राजा युधिष्ठिर ने महावीर द्रुपद, विराट, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु, शिखण्डी और जरासन्ध के बेटे सहदेव को सेनापति के पद पर स्थापित किया। ये सब महावीर, युद्ध के बारे में विशेष उत्साह रखनेवाले क्षत्रिय, सेनापति के पद पर अभिषेक होने से, बड़े अच्छे जँचने लगे। फिर द्रोणाचार्य को मारने के लिए अग्नि-कुण्ड से उपजे हुए धृष्टद्युम्न को राजा युधिष्ठिर ने प्रधान सेनापति बनाया। वीर अर्जुन इन सब सेनापतियों की देखभाल करनेवाले सेनापति-पति (सेनापतियों के अफ़सर) बनाये गये। धृष्टद्युम्न भी उनके मातहत हुए। अर्जुन को भी

भीष्म और द्रोण की राय सुनकर दुर्योधन का उदास होना—पृ० १७६९

बलरामजी का पाण्डवों के डेरे में पहुँचना—पृ० १७६६
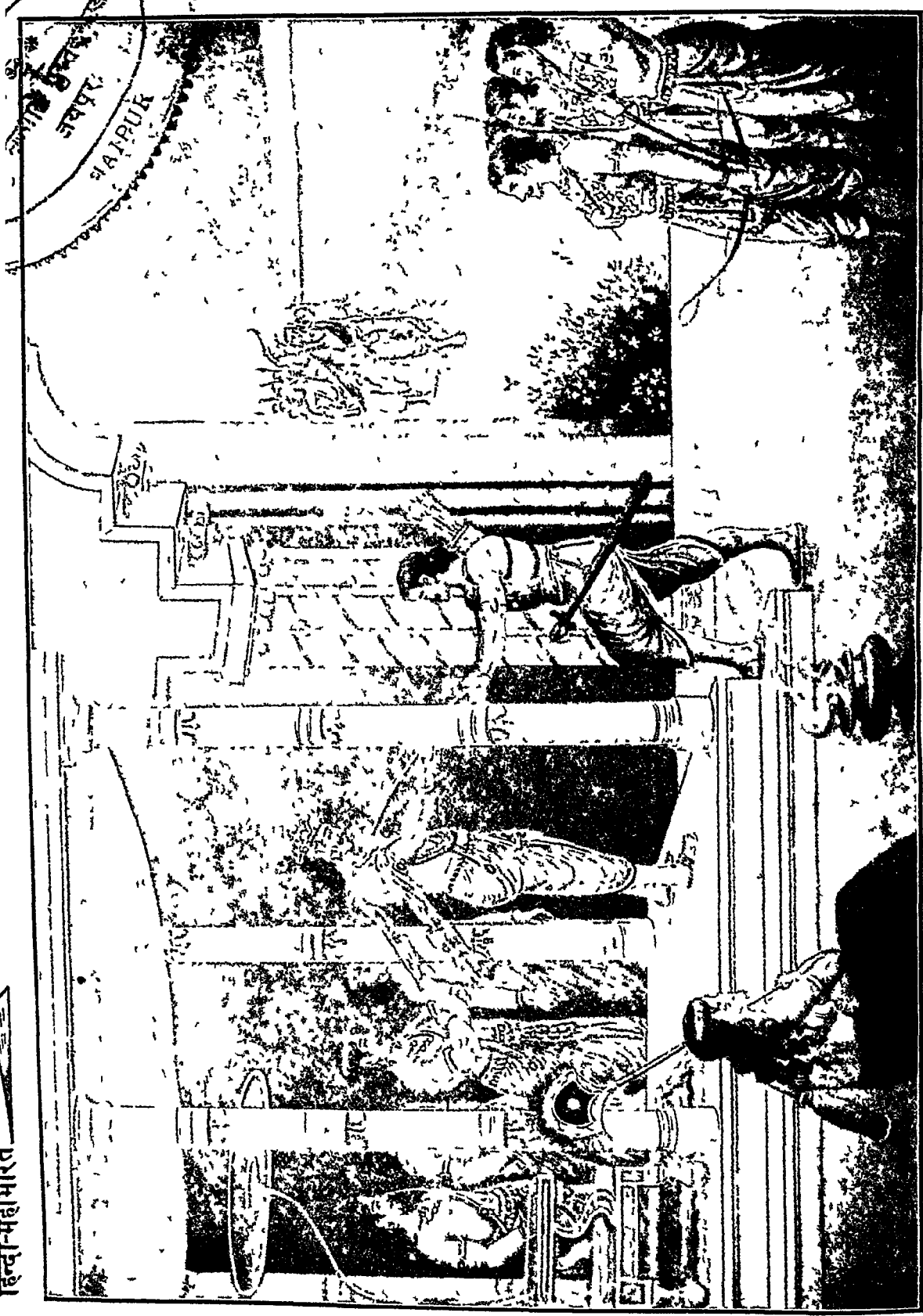
सलाह देने का भार कृष्णचन्द्र को दिया गया। महाबाहु श्रीकृष्ण ने इसके सिवा अर्जुन का रथ हाँकने का काम करना भी स्वीकार कर लिया। इस तरह सात सेनापतियों के ऊपर धृष्टद्युम्न, धृष्टद्युम्न के ऊपर अर्जुन और उन पर भी देख-रेख करने के लिए श्रीकृष्ण नियुक्त हुए।

हे जनमेजय! इसी समय नीलाम्बर पहने, कैलास पर्वत के समान गोरे, मदिरा-पान से लाल हो जानेवाली आँखों से मनोहर बलरामजी, वंश का नाशक भयङ्कर युद्ध उपस्थित देखकर, पाण्डवों के डेरे में पहुँचे। इन्द्र के साथ जैसे देवता होते हैं वैसे ही बलदेवजी के साथ अक्रूर, गद, साम्ब, उद्धव, प्रद्युम्न, आहुक, चारुदेष्ण आदि वृष्णिवंश के बलवान् वीर थे। वे सिंह की सी चाल से पैर रखते हुए ज्योंही पाण्डवों के डेरे में पहुँचे त्योंही उन्हें देखकर धर्मराज युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण, अर्जुन, भीमसेन और अन्य सब लोग, अपना-अपना आसन छोड़कर, खड़े हो गये। सब ने यथोचित रूप से बलभद्रजी का आदर-सत्कार किया। राजा युधिष्ठिर ने स्नेहपूर्वक उनसे हाथ मिलाया। फिर वे बूढ़े राजा विराट और द्रुपद को प्रणाम करके युधिष्ठिर के साथ बैठ गये। २१

बलभद्रजी ने श्रीकृष्ण की ओर देखकर कहा—बहुत जल्दी यह बड़ा भयङ्कर संग्राम होगा। यह होनी ही जान पड़ती है, इसलिए इसे टालना असम्भव है। मैं चाहता हूँ कि तुम लोग अपने भाई-बन्धुओं के साथ जीते-जागते इस युद्ध के पार लग जाओ। मुझे आशा है कि मैं लौटकर तुम सबको आरोग्य और राज़ी-ख़ुशी देखूँगा। मैं समझता हूँ, इन सब जमा हुए क्षत्रियों का अन्त समय आ गया है। यह बड़ा ही भयङ्कर संग्राम होगा; मांस और रक्त की कीच मच जायगी। मैंने वासुदेव को कई बार एकान्त में समझाया कि 'भैया, कौरव और पाण्डव दोनों तुम्हारे सम्बन्धी और समान स्नेह-पात्र हैं। सम्बन्धी जानकर दुर्योधन और पाण्डव दोनों की समान रूप से सहायता करो'। किन्तु कृष्ण को अर्जुन बहुत प्यारे हैं, इसलिए इन्होंने मेरे कहे पर ध्यान नहीं दिया। जब कृष्ण तुम्हारे पक्ष में हैं तब मुझे निश्चय है कि तुम्हीं जीतोगे। मैं कृष्ण को बहुत ही प्यार करता हूँ। इनके लिए मैं सारे संसार को छोड़ ३०

सकता हूँ। इसी लिए मैं कृष्ण की इच्छा का विरोध नहीं कर सकता। गदा-युद्ध में चतुर भीमसेन और दुर्योधन दोनों मेरे शिष्य हैं; इसलिए दोनों पर मेरा समान स्नेह है। मैं किसी का पक्ष न लेकर तीर्थ-यात्रा करने जाता हूँ। कौरवों का विनाश होते मुझसे न देखा जायगा, इसलिए तब तक सरस्वती-तट के तीर्थों में जाकर घूमूँगा।

वैशम्पायन कहते हैं—महाबाहु बलभद्र, पाण्डवों से विदा होकर, राह से श्रीकृष्ण को लौटाकर तीर्थयात्रा के लिए चले गये। ३५

एक सौ अट्ठावन अध्याय

रुक्मी का आना और लौट जाना

वैशम्पायन कहते हैं—राजन्! इसी समय बड़े यशस्वी, इन्द्र के मित्र, सत्यसङ्कल्प, दाक्षिणात्य के राजा, भोजवंशी भीष्मक के पुत्र रुक्मी पाण्डवों के पास आये। इन्होंने गन्धमादन पर्वत पर रहनेवाले एक श्रेष्ठ किंपुरुष से धनुर्वेद के चारों अङ्ग सीखे थे। संसार में गाण्डीव, विजय और शार्ङ्ग, यही तीन धनुष सबसे बढ़िया हैं। गाण्डीव धनुष वरुण का, विजय धनुष महेन्द्र का और शार्ङ्ग धनुष विष्णु का, यही तीनों दिव्य धनुष हैं। विजय धनुष शार्ङ्ग और गाण्डीव से किसी बात में कम नहीं है। खाण्डव-दाह में गाण्डीव धनुष अग्नि से अर्जुन को मिला था। दिव्य लक्षणोंवाला विजय धनुष कुबेर से रुक्मी को मिला था। शार्ङ्ग धनुष श्रीकृष्ण को उस समय मिला था जब उन्होंने मुर असुर के फन्दों को काटकर मुर और भौम नाम के दानवों को मारा था। वहीं उन्हें सोलह हज़ार अच्छी स्त्रियाँ और मणि-मय कुण्डल आदि रत्न भी मिले थे। रुक्मी उसी मेघ-सदृश गम्भीर ध्वनिवाले विजय धनुष को लिये सारे जगत् को कँपाते हुए पाण्डवों के पास आये।

रुक्मी की बहन रुक्मिणी को जब श्रीकृष्ण हर लाये थे तब रुक्मी ने श्रीकृष्ण को जीता न छोड़ने की प्रतिज्ञा करके उनका पीछा किया था। रुक्मी के साथ असंख्य वीरोंवाली चतुरङ्गिणी सेना भी, बढ़ी हुई गङ्गा के प्रवाह की तरह, श्रीकृष्ण पर चढ़ आई थी। परन्तु योगेश्वर श्रीकृष्ण ने रुक्मी को जीतकर पकड़ लिया और फिर छोड़ दिया। तब, प्रतिज्ञा पूरी न कर सकने से लजाकर, रुक्मी अपने पिता की राजधानी कुण्डिन नगर में नहीं गये। जहाँ श्रीकृष्ण ने उन्हें हराया था वहीं भोजकट नाम का नया नगर बसाकर वे रहने लगे। उसी भोजकट नगर से एक अक्षौहिणी सेना साथ लेकर रुक्मी आये। कवच, धनुष, तलत्राण, खड्ग, सूर्य के रङ्ग का रथ और ध्वजा आदि युद्ध के सामान समेत रुक्मी, कृष्णचन्द्र का प्रिय करने के लिए, पाण्डवों के पास उपस्थित हुए। ११

धर्मराज युधिष्ठिर ने आसन से उठकर उनका सत्कार किया। पूजा और प्रशंसा हो चुकने पर, पाण्डवों को बधाई देकर और कुछ विश्राम करके, रुक्मी ने सब वीर राजाओं के आगे अर्जुन से कहा—हे अर्जुन, जो तुम युद्ध से डरते हो तो तुम्हारी सहायता करने के लिए मैं २०

मौजूद हूँ। मैं तुम्हारी ओर से ऐसा युद्ध करूँगा कि शत्रु के छक्के छूट जायँगे। बल और पराक्रम में मेरे समान और कोई पुरुष नहीं है। जिन वीरों को तुम मेरे हिस्से में कर दोगे उन्हें मैं ज़रूर मारूँगा। द्रोणाचार्य कृपाचार्य, भीष्म या कर्ण, जिसे कहोगे उसे मैं सहज ही यमलोक भेज दूँगा। अथवा इन सब राजाओं को बैठे रहने दो, मैं अकेला ही तुम्हारे शत्रुओं को मारकर पृथ्वीमण्डल का राज्य तुम्हें दिला दूँगा।

धर्मराज, कृष्णचन्द्र और अन्य राजाओं के आगे रुक्मी के ये वचन सुनकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर की ओर देखा। फिर वे मित्रता का भाव प्रकट करके, हँसते हुए, रुक्मी से कहने लगे—हे भोजराज, मैंने कुरुवंश में जन्म लिया है। मैं वीर पाण्डु का पुत्र और द्रोणाचार्य का शिष्य हूँ। भगवान् वासुदेव मेरे सहायक हैं; गाण्डीव मेरा धनुष है। मुझ सरीखा यशस्वी पुरुष इस अयश के देनेवाले वाक्य को कैसे ज़बान पर ला सकता है कि मैं युद्ध से डरता हूँ? घोष-यात्रा के समय बड़े बली गन्धर्वों से जब मैं लड़ा था तब किसने मेरी सहायता की थी? खाण्डव-दाह के समय जब मैंने भयङ्कर युद्ध करके इन्द्र आदि देवताओं को हराया था तब मेरा कौन सहायक था? निवातकवच और कालकेय नाम के दानवों से युद्ध करते समय मुझे किसने सहायता दी थी? विराट नगर में जब कौरव-वीरों के साथ अकेले मैंने संग्राम किया था तब मेरी सहायता करनेवाला कौन था? मैंने रुद्र, इन्द्र, कुबेर, यम, वरुण, अग्नि, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और माधव से युद्ध की कला और अस्त्रविद्या सीखी है। मेरे पास दिव्य गाण्डीव धनुष, कभी ख़ाली न होनेवाले तरकस और दिव्य अस्त्र हैं। फिर मैं यह कैसे कह सकता हूँ कि युद्ध से मुझे डर लगता है? हे महाबाहु, न मैं युद्ध से डरता हूँ और न मुझे सहायता की ज़रूरत है। आप अपनी इच्छा के अनुसार चाहे यहाँ ठहरिए चाहे जाइए। ३०

हे जनमेजय, तब रुक्मी अपनी समुद्र-तुल्य अपार सेना उधर से लौटाकर राजा दुर्योधन के पास गये। दुर्योधन से भी रुक्मी ने वैसी ही बातें कीं जैसी पाण्डवों से की थीं। अपने को वीर समझनेवाले दुर्योधन ने भी वैसा ही उत्तर दिया जैसा अर्जुन ने दिया था। तब रुक्मी भी बलराम की तरह युद्ध से उदास होकर तीर्थयात्रा के लिए चले गये। रुक्मी और बलभद्र के जाने पर पाण्डव लोग फिर आपस में युद्ध के सम्बन्ध में तरह-तरह के प्रबन्ध और सलाह करने लगे। राजमण्डली से भरी हुई पाण्डवों की सभा चन्द्रमा और तारागणों से शोभित आकाश के समान देख पड़ती थी। ४०

एक सौ उनसठ अध्याय

धृतराष्ट्र और सञ्जय का संवाद

जनमेजय ने कहा—भगवन्, काल के वश हो रहे कौरवों ने कुरुक्षेत्र में दोनों ओर की सेनाएँ जमा होने पर फिर क्या किया? कृपा करके आगे का हाल कहिए।

वैशम्पायन कहते हैं कि राजन् ! उधर कुरुक्षेत्र में लड़ाई के लिए सब सेना जमा हुई, इधर राजा धृतराष्ट्र ने सञ्जय से कहा—हे सञ्जय, कौरवों और पाण्डवों की सेनाएँ जमा होने पर आगे जो कुछ हुआ सो मुझसे कहो। मेरी समझ में उपाय व्यर्थ है, दैव (होनी) ही मुख्य है। युद्ध का फल मौत अर्थात् विनाश जानकर भी जुए में फँस रहे दुर्योधन को मैं रोक नहीं सका और अपने वंश का हित करने में भी असमर्थ हो रहा हूँ। हे सूत, मेरी बुद्धि दोषों को देखकर भी दुर्योधन के आगे कुन्द हो जाती है। दुर्योधन के पास आ जाने पर पुत्र-स्नेह के मारे मेरी बुद्धि मोहित हो जाती है और मैं उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर पाता। अब जो कुछ होना है वह होगा ही। युद्ध में मरना क्षत्रिय का उत्तम धर्म माना गया है।

सञ्जय ने कहा—राजन्, आपने जो कहा और जो कुछ आप चाहते हैं सो आपके योग्य ही है। इस कुल-क्षय का दोष दुर्योधन के सिर मढ़ना भी ठीक नहीं। महाराज, जो मैं आपसे कहता हूँ उसे ध्यान देकर सुनिए। जो मनुष्य अपने बुरे आचरण से अशुभ फल पाता है वह दैव को या देवताओं को दोष नहीं दे सकता। जो व्यक्ति मनुष्यों के साथ बुरा व्यवहार
१० करता है वह सब लोगों का वध्य है। राजन्, अनुचरों-सहित पाण्डवों ने केवल आपके ख़याल से अथवा यों कहो कि आपके न बोलने के कारण जुए में हारकर तरह-तरह के तिरस्कार सहे थे। इस समय आप स्थिर और एकाग्र होकर घोड़े, हाथी, राजा, सैनिक आदि के विनाश का हाल मुझसे सुनिए। युद्ध में चौपट होने की घटनाएँ सुनकर अब उदास न हूजिए। देखिए, यह जीव पाप-पुण्य कर्मों का स्वाधीन कर्ता नहीं है। सूत में बँधी हुई कठपुतली की तरह विवश होकर हरएक मनुष्य हरएक काम करता है। कुछ काम ईश्वर के बनाये नियम के अनुसार अर्थात् ईश्वर की मर्ज़ी से किये जाते हैं; कुछ काम मनुष्य अपनी इच्छा से करता है और कुछ काम पूर्व-संस्कार के अनुसार होते हैं। इस तरह काम तीन प्रकार के होते हैं। इस कारण इस समय अनर्थरूप विपत्ति के आ पड़ने पर भी आप खेद न
१५ कीजिए और स्थिर होकर आगे का सब हाल सुनिए।

उलूकदूतागमनपर्व

एक सौ साठ अध्याय

दुर्योधन का उलूक को दूत बनाकर पाण्डवों के पास भेजना

सञ्जय ने कहा—महाराज, महात्मा पाण्डवों ने कुरुक्षेत्र में हिरण्वती नदी के किनारे अपनी सेना ठहराई और फिर कौरवों ने भी कुरुक्षेत्र में पहुँचकर दूसरी ओर अपनी सेना के डेरे डाल दिये। राजा दुर्योधन ने छावनी स्थापित करके आये हुए राजाओं को सम्मान के साथ ठहराया और मौके-मौके पर रक्षा के लिए सिपाहियों की चौकियाँ बिठा दीं। रसद और शस्त्र-

अस्त्र आदि की रक्षा का प्रबन्ध करके कर्ण, शकुनि और दुःशासन को बुलाकर उनसे आगे के काम के बारे में सलाह की। कर्ण आदि की सलाह से दुर्योधन ने एकान्त में उलूक को बुलाया। उलूक के आने पर उससे दुर्योधन ने कहा—हे कैतव्य, तुम सोमकों (पाञ्चालों) और पाण्डवों के पास जाकर वासुदेव के आगे युधिष्ठिर से कहो कि बहुत दिनों का सोचा हुआ संसार के लिए भयङ्कर कौरवों और पाण्डवों का युद्ध इस समय होनेवाला है। सञ्जय ने कौरवों के आगे वासुदेव की, तुम्हारी और तुम्हारे भाइयों की अपने मुँह की गई अपनी बड़ाई सुनाई थी; उसे ज्यों की त्यों कर दिखाने का समय आ गया है। इस समय तुम लोग अपनी प्रतिज्ञाएँ पूरी करो। हे उलूक, तुम बड़े पाण्डव युधिष्ठिर से कहना कि आप धर्मात्माओं में श्रेष्ठ होकर भी पाञ्चालों, केकयों और अपने भाइयों के साथ अधर्म करने पर क्यों उतारू हैं? आप निर्दय पुरुष ११ की तरह सारे जगत् का विनाश कैसे पसन्द करते हैं? मैं तो समझता था कि आप सब प्राणियों के रक्षक और उन्हें अभय देनेवाले हैं। सुना जाता है कि पहले देवताओं ने जब राज्य छीन लिया था तब प्रह्लाद ने यह गाथा कही थी कि हे देवगण, जो मनुष्य गुप्त रूप से पाप करके दिखावे के लिए झण्डे की तरह धर्म के चिह्न रखता है वह विड़ालव्रती कहलाता है। इस बारे में एक समय देवर्षि नारद ने मेरे पिता के आगे जो उत्तम उपाख्यान कहा था सो मैं सुनाता हूँ।

एक दुष्ट बिलाव गङ्गा के किनारे सब प्रकार की उछल-कूद छोड़कर, ऊपर को हाथ उठाये रहकर, लोगों को दिखाने के लिए तप कर रहा था। अपने शिकार पक्षी आदि को विश्वास दिलाने के लिए उसने यह प्रसिद्ध कर दिया कि मैंने हिंसा छोड़कर अब धर्म-कर्म करने का निश्चय कर लिया है। कुछ दिन तक उसकी यह लीला देखकर पक्षियों को विश्वास हो गया। वे लोग उसकी बड़ाई और आदर करने लगे। बिलाव ने सोचा कि इतने दिन के बाद अब मेरी कामना सिद्ध हुई और मुझे अपने इस कपट-व्रत का फल प्राप्त होगा।

कुछ दिन के बाद वहाँ कुछ मूसे आये। उन्होंने व्रत-धर्म कर रहे उस बिलाव को देखकर सोचा कि हमारे शत्रु भी बहुत हैं और परिवार भी बहुत बड़ा है। हमारे मामा ये बिलावराम २०

हम बूढ़ों और बच्चों की रक्षा करेंगे और हम इनके पास मज़े में रहेंगे। इससे पास आकर उन्होंने उस बिलाव से कहा—मामाजी, आप धर्मात्मा हैं; धर्म-कर्म किया करते हैं। आपको हम अपना शुभचिन्तक और आश्रयदाता समझते हैं। हम आपके भरोसे यहाँ सुख से रहना और विचरना चाहते हैं। इसी लिए हम लोग आपकी शरण में आये हैं। अब आप देवताओं की रक्षा करनेवाले इन्द्र की तरह हमारी रक्षा कीजिए।

मूसों के वैरी बिडाल ने उन मूसों की ये बातें सुनकर उनसे कहा—तपस्या और दूसरों की रक्षा, ये दोनों काम एक साथ नहीं हो सकते। किन्तु तुम लोग शरण में आये हो, इसलिए तुम्हारी रक्षा करना मेरा धर्म है। मैं एक शर्त पर तुम्हारी रक्षा करूँगा। इस अहिंसा का व्रत करने से और कठिन तप करने से मैं इतना निर्बल हो गया हूँ कि चल-फिर तक नहीं सकता। इसलिए तुम्हें मेरा एक काम यह करना होगा कि नित्य मुझे लादकर नदी-किनारे तक पहुँचाना पड़ेगा। मूसों ने यह शर्त मञ्जूर कर ली और अपने

३० परिवार को उस बिडाल के हाथ में सौंप दिया।

अब वह पापी बिलाव नित्य मूसों को खाने लगा और दिन-दिन मोटा, मज़बूत, बल-वान् और सुन्दर होने लगा। उधर मूसों की संख्या दिन-दिन कम होने लगी। सब मूसे
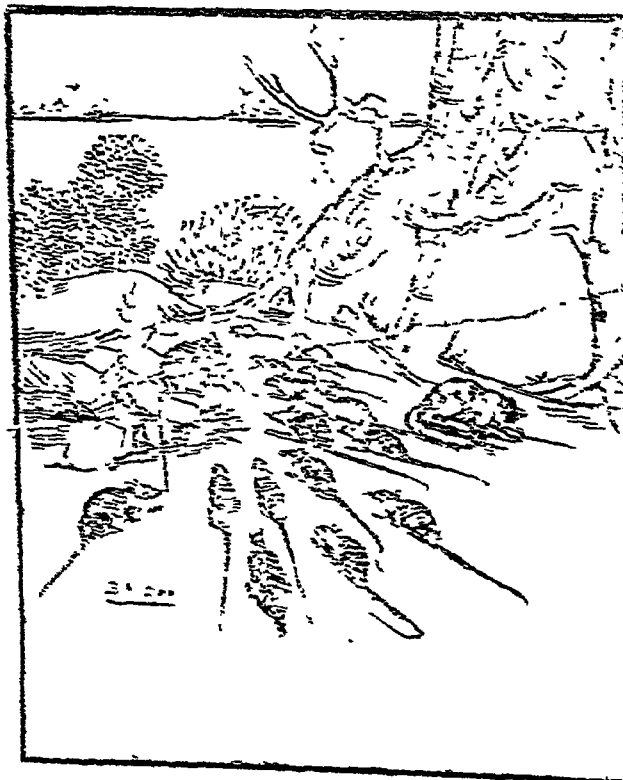
मिलकर तब आपस में कहने लगे—देखो, हमारे मामा बिडालराम दिन-दिन मोटे होते चले जा रहे हैं, और हमारा परिवार घटता जा रहा है। यह सुनकर डिण्डिक नाम के एक समझदार और होशियार मूसे ने कहा—तुम सब मिलकर नदी के किनारे चलो। आज मैं अकेला बिलाव के साथ जाऊँगा। सब मूसे उसकी बड़ाई करके उसकी आज्ञा से गङ्गातट पर गये। बिलाव को यह कुछ हाल मालूम न था। वह डिण्डिक को भी खा गया। तब मूसे फिर आपस में सलाह करने लगे। उस समय एक बूढ़े कोकिल नाम के मूसे ने कहा—हे भाइयो, हमारे मामा में धर्म का नाम तक नहीं है। वह कपट की मित्रता में अपने दुराचरण को छिपाये हुए है। धोखा देने के लिए उसने बड़ी-बड़ी जटाएँ बढ़ा रक्खी हैं।

मूल-फल खानेवाले की बीट में रोएँ नहीं होते। बिलाव नित्य मोटा होता जाता है और हम मूसे दिन-दिन घटते जाते हैं। आज सात-आठ दिन से डिण्डिक का भी पता नहीं है। कोकिल की बातें सुनकर सब मूसे प्राण लेकर इधर-उधर भाग गये। दुरात्मा बिलाव भी, भण्डाफोड़ हो जाने से, अपने स्थान को चला गया। ४०

हे युधिष्ठिर, आप भी बिड़ालव्रत धारण किये हुए हैं। बिलाव ने मूसों के साथ जो व्यवहार किया था, वही आप अपनी जातिवालों के साथ कर रहे हैं। आपकी बातें और तरह की हैं और काम और तरह के हैं। आपका वेद पढ़ना और शान्ति की निष्ठा बाहरी आडम्बर या दिखावा है। आप धर्मात्मा समझे जाते हैं, इसलिए कपट-व्यवहार छोड़कर, क्षत्रिय धर्म को ग्रहण कीजिए और अपने योग्य काम कीजिए। बाहुबल से पृथ्वी जीतकर ब्राह्मण-पितरों को दान आदि से सन्तुष्ट कीजिए। आप माता के हितैषी हैं। आपकी माता कई वर्षों से कष्ट पा रही हैं। इस समय युद्ध में शत्रुओं को जीतकर सपूत की तरह उनके आँसू पोंछिए और उनका हित तथा सम्मान कीजिए। आपने हमसे पाँच गाँव माँगे थे, किन्तु हमने दिये नहीं; यही आपके क्रोध और युद्ध की तैयारी का कारण है। मैंने आपके ही कारण दुष्ट भाववाले विदुर को त्याग दिया है। इस समय आप लाक्षाभवन में जलाये जाने का स्मरण करके मर्दों की तरह पराक्रम दिखाइए। आपने कृष्ण के मुँह से हमारे पास कहला भेजा था कि मैं शान्ति और युद्ध दोनों के लिए तैयार हूँ। इस समय उसी युद्ध का समय आ गया है। युद्ध ही क्षत्रिय के लिए परम लाभ और उसका धर्म है। यही सोचकर मैंने संग्राम का सब सामान जमा किया है और युद्ध करने को मैं तैयार हूँ। आप क्षत्रिय हैं। आपने भी द्रोणाचार्य और कृपाचार्य से अस्त्रविद्या सीखी है। समझ में नहीं आता कि तुल्य बलवाले और तुल्य वंश में उत्पन्न होकर भी आपने वासुदेव का आसरा क्यों लिया है! ५०

हे उलूक, तुम पाण्डवों के आगे ही वासुदेव से कहना कि हे केशव, आप अपने लिए और पाण्डवों के लिए मुझसे जी खोलकर युद्ध कीजिए। कुरुसभा में जैसे माया का रूप दिखाया था वैसे ही वह रूप रखकर अर्जुन के साथ युद्ध-भूमि में मेरे सामने आइए। इन्द्रजाल, माया या भयानक कपट-विद्या आदि बातें संग्राम में हथियारबन्द वीर का कोप बढ़ाने के सिवा उसे डरा नहीं सकतीं। हम भी माया के प्रभाव से इसी शरीर से बहुतेरे बहुरूप दिखाकर स्वर्ग, आकाश, रसातल और इन्द्र की पुरी आदि में जा सकते हैं। परन्तु यह कोई बहादुरी नहीं। माया से या डर दिखाने से सिद्धि नहीं मिलती और न कोई डर सकता है। एक विधाता ही इच्छा करने से सब प्राणियों को अपने वश में कर सकते हैं। हे यादव, आप जो कहा करते हैं कि मैं युद्ध में धृतराष्ट्र के पुत्रों का नाश कराकर पाण्डवों को राज्य दिलाऊँगा; मैं जिनका सहायक हूँ उन्हीं अर्जुन के साथ दुर्योधन का वैर हुआ है; सो आपकी ये बातें मैं सञ्जय के

मुँह से सुन चुका हूँ। हे कृष्ण! समय आ गया है, अब आप सब प्रकार की तैयारी के साथ
६० युद्ध में जुटकर, पराक्रम दिखाकर, अपना कहा पूरा कर दिखाइए। अब अपनी प्रतिज्ञा की रक्षा करना और पौरुष दिखाना आपका काम है। जो व्यक्ति पौरुष दिखाकर शत्रुओं के शोक को बढ़ाता है उसी का जन्म सफल है। हे कृष्ण, अभी तक तो आपका यश अकारण ही सब जगह फैल गया है, आपने उसके योग्य कोई काम नहीं किया है। हमें तो यह जान पड़ता है कि जिन लोगों में आपके बल और यश की प्रसिद्धि है वे पुरुषचिह्न धारण करनेवाले नपुंसक हैं। आप कंस राजा के नौकर हैं, इस कारण मुझ सरीखा चक्रवर्ती राजा आपके साथ युद्ध नहीं कर सकता। वह तो उसके लिए सब तरह अपमान की बात होगी।

हे उलूक! तुम उस बे-मूँछवाले, मूर्ख, पेटू, भीमसेन से बारम्बार कहना कि हे पार्थ, तुमको विराट नगर में बल्लव नाम से रसोइया बनकर जो रहना पड़ा था वह मेरी ही करामात थी। तुमने सभा में जो प्रतिज्ञा की थी वह देखो झूठ न होने पावे। इस समय हो सके तो दुःशासन का खून पियो। हे कुन्तीपुत्र, तुम कहा करते थे कि मैं धृतराष्ट्र के पुत्रों को लड़ाई में मारूँगा। अब उसका समय आ गया है, अपना कहना सत्य कर दिखाओ। तुम खाने-पीने में बहादुरी दिखा सकते हो, यह सच है; लेकिन कहाँ युद्ध और कहाँ खाना-पीना! अब मर्द बनकर युद्ध करो और हिम्मत दिखाओ। याद रक्खो, मेरे हाथ से मरकर छाती से गदा लगाकर तुम्हें युद्धभूमि में सोना पड़ेगा। तुमने सभा में जो शेखी मारी थी वह बेकार होगी।

७० हे कैतव्य, तुम मेरी आज्ञा से कहना कि हे नकुल, तुम जमकर युद्ध करो। हम तुम्हारा बल देखेंगे। तुम इस समय युधिष्ठिर पर अनुराग, मेरे साथ अपना द्वेष और द्रौपदी के क्लेश याद करो। हे उलूक, तुम राजाओं के बीच में सहदेव से कहना कि हे सहदेव, तुमने अब तक जो बहुत से क्लेश सहे हैं उन्हें याद करके लड़ने के लिए तैयार हो जाओ। हे दूत, विराट और द्रुपद से भी मेरा यह सन्देशा कहना कि जब से संसार में प्रजा उपजी है तब से आज तक महागुणी सेवकों ने स्वामियों को और स्वामियों ने सेवकों को नहीं पहचाना। इसी कारण तुम लोग मुझे निन्दा के योग्य समझकर गुणहीन युधिष्ठिर के पक्ष में चले गये हो। मेरे मारने और हराने के लिए तुम एकत्र हुए हो तो अच्छी बात है। अपनी ओर से और पाण्डवों की ओर से मेरे साथ युद्ध करने में कोई कसर न रखना। हे उलूक, मेरी ओर से तुम धृष्टद्युम्न से कहना कि हे पाञ्चाल-राजकुमार, तुम्हें समर में द्रोणाचार्य के सामने पहुँचने पर अपने हित का ज्ञान होगा। तुम्हें मालूम हो जायगा कि तुमने पाण्डवों का पक्ष लेकर अपनी बुराई ही की है। अपने मित्र पाण्डवों सहित मुझसे युद्ध करो और गुरु के मारने का कठिन पाप करने को तैयार रहो। हे कैतव्य, इसके बाद शिखण्डी से कहना कि धनुषधारियों में श्रेष्ठ, महाबाहु भीष्म तुमको स्त्री समझकर युद्ध में नहीं मारेंगे। इसलिए तुम बेखटके हौसले के साथ युद्ध करो। हम तुम्हारा पराक्रम देखेंगे।

अब दुर्योधन ने हँसकर उलूक से कहा—हे कैतव्य, तुम वीर होने का दम भरनेवाले अर्जुन से वासुदेव के सामने कहना कि हे धनञ्जय, तुम या तो हमें हराकर निष्कण्टक साम्राज्य करो ८० और या हमारे हाथ से मरकर पृथ्वी पर सदा के लिए सो जाओ। इस समय नगर से निकाले जाने, वनवास और द्रौपदी के दुःख आदि का स्मरण करके कुछ कर दिखाओ। क्षत्रियों की स्त्रियाँ जिस समय के लिए पुत्र पैदा करती हैं वह समय आ गया है। इस समय तुम बल, वीर्य, शूरता और अस्त्रकला दिखाकर युद्ध में अपना क्रोध ठण्डा करो। ऐश्वर्य से भ्रष्ट, क्लेशों से दुःखित, दीन और बहुत दिन तक अपनी जन्म-भूमि से निकाले जाने पर किसकी छाती नहीं फटेगी? पुश्तैनी राज्य छिन जाने पर किस कुलीन, पराई सम्पत्ति लेने से विमुख, पराक्रमी पुरुष के हृदय में क्रोध की आग नहीं जल उठेगी? तुम पहले जो डींग हाँक चुके हो उसे पूरा कर दिखाओ। जो पुरुष कहने के अनुसार काम न करके केवल अपने मुँह से अपनी बड़ाई करता है, उसे अच्छे लोग कायर कहते हैं। इस समय तुम शत्रुओं के हाथ में पड़े हुए राज्य को, और स्थान को फिर प्राप्त करो। युद्ध की इच्छा रखनेवाले के यही दो मतलब होते हैं, इस कारण इनके लिए तुम पौरुष दिखाओ। जुए में तुम लोग हारे और द्रौपदी भी दुर्दशा के साथ सभा में लाई गई। जो अपने को मर्द समझता है वह इन बातों को नहीं सह सकता। निकाले जाने के कारण तुम बारह वर्ष वन में और एक वर्ष छिपकर राजा विराट के यहाँ रहे हो। इस समय राज्य से निकाले जाने के क्लेश, वनवास के दुःख और द्रौपदी के अपमान को याद करके कुछ कर दिखाओ। जो लोग बारम्बार तुम्हारे लिए कड़वे वचन कहते हैं उन पर क्रोध दिखाओ; ९० क्योंकि क्रोध ही पौरुष है। हे पार्थ, तुम पौरुष के साथ हिम्मत करके युद्ध करो। संसार के सब लोग तुम्हारे क्रोध, बल, वीर्य, ज्ञान, उद्योग और अस्त्रकौशल को देखें। पुरुष बनकर युद्ध करो और पौरुष दिखाओ। सब अस्त्र-शस्त्र साफ़ किये जा चुके हैं। उनकी पूजा भी की जा चुकी है; कुरुक्षेत्र का मैदान साफ़ पड़ा है—कीचड़ वग़ैरह का नाम भी नहीं, तुम्हारे घोड़े मोटे-ताज़े हैं और सहायक योद्धा जमा हो चुके हैं। इसलिए तुम कल सवेरे केशव के साथ युद्ध के मैदान में उतरो। अभी संग्राम में पितामह भीष्म से तुम्हारा सामना नहीं हुआ। फिर तुम गन्धमादन की चोटी पर चढ़ने की इच्छा रखनेवाले किसी मन्दबुद्धि मनुष्य की तरह वृथा अपनी बड़ाई अपने आप क्या कर रहे हो! इस समय डींग हाँकना छोड़कर युद्ध में पौरुष दिखाओ। तुम दुर्धर्ष वीर कर्ण, श्रेष्ठ बली शल्य और इन्द्रतुल्य द्रोणाचार्य को परास्त किये बिना कैसे राज्य पाने की इच्छा कर रहे हो? धनुर्वेद और वेद के आचार्य, युद्ध करने में चतुर, अजेय, सेनापति द्रोणाचार्य को हराने की इच्छा बिलकुल ही बेकार है। हमने कभी यह नहीं सुना कि पर्वतराज सुमेरु को हवा ने गिरा दिया। तुम द्रोण आदि वीरों को हराने की डींग हाँकते हो; किन्तु जो तुम्हारा यह कथन सच हो तो सुमेरु का हवा के वेग से उड़ जाना, आकाश

का पृथ्वी पर गिर पड़ना और असमय में ही दूसरा युग हो जाना भी सम्भव समझा जायगा। हे अर्जुन! चाहे तुम हो चाहे और कोई हो, युद्ध में द्रोणाचार्य और पितामह भीष्म के सामने
१०० जाकर जीवन की इच्छा रखनेवाला कौन पुरुष घर को लौट सकता है? जिसे ये लोग मारना चाहें, या जिसको बाण मारें वह पृथ्वी पर रहकर कभी जीता नहीं बच सकता। हे मूढ़, तुम कुएँ के मेंढक की तरह क्या यह नहीं जानते कि—देवताओं द्वारा रक्षित सुरपुरी के समान—पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा के, काम्बोज; शक, खश, शाल्व, मत्स्य, मध्यकुरु, म्लेच्छ, पुलिन्द, द्रविड़, आन्ध्र और काञ्ची आदि देशों के नरेशों द्वारा रक्षित, देवसेना के समान जीती न जानेवाली, महासेना एकत्र हुई है? हम युद्ध में तुम्हारे ख़ाली न होनेवाले तरकस, अग्नि के दिये हुए रथ और दिव्य केतु की महिमा देखेंगे। तुम व्यर्थ का अहङ्कार छोड़कर युद्ध करो। वृथा अपनी बड़ाई आप क्यों कर रहे हो? डींग हाँकने से कुछ मतलब नहीं निकल सकता। हर एक पुरुष स्वयं अपनी बड़ाई कर सकता है, किन्तु जो ऐसा करने से ही कोई काम सिद्ध हो सकता तो सभी लोग वाहवाही लूट लेते। यद्यपि तुम्हारे सहायक वासुदेव, चार हाथ के लम्बे गाण्डीव धनुष और अप्रतिम प्रभाव को मैं जानता हूँ, तो भी देखो, तुम्हारा राज्य तुमसे छीनकर उसे भोग रहा हूँ।

एकमात्र विधाता में ही यह सामर्थ्य है कि जो चाहते हैं कर लेते हैं, मनुष्य कभी सङ्कल्पमात्र से हर एक काम को सिद्ध नहीं कर सकता। मैंने तेरह वर्ष तक तुम्हारे राज्य का भोग किया, तुम केवल विलाप करते हुए उसे देखते रहे, कुछ कर नहीं सके। इस समय तुम्हें
१० तुम्हारे भाइयों-सहित यमलोक को भेजकर फिर वह निष्कण्टक राज्य करूँगा। जब तुम दास-भाव की बाज़ी लगाकर हार गये थे, तब तुम्हारा गाण्डीव धनुष और भीमसेन का बल कहाँ चला गया था? उस समय तुम्हें द्रौपदी ने ही छुटकारा दिलाया था। मैंने जो तुमको निस्सार तिल कहा था, सो झूठ नहीं था; क्योंकि तुम लोगों ने विराट राजा के यहाँ सेवकों की नौकरी की। भीमसेन को जो विराट के यहाँ रसोइये का काम करके थकना पड़ा सो मेरे ही पौरुष का फल था। तुम भी राजा विराट की नाट्यशाला में हिजड़े के वेष से चोटी रखाकर उत्तरा को नाचना-गाना सिखाते रहे। क्षत्रिय लोग क्षत्रिय को ऐसा ही दण्ड देते हैं। मैं तुम्हारे या वासुदेव के डर से कभी तुम लोगों को राज्य न दूँगा। तुम केशव को साथ लेकर मुझसे युद्ध करो। संग्राम में शस्त्र लिये हुए पुरुष को माया, इन्द्रजाल, कुहक या और तरह की विभीषिका कभी नहीं डरा सकती। हज़ार कृष्ण या सौ अर्जुन भी युद्ध में मेरे सामने नहीं ठहर सकते। मेरे अमोघ बाणों से पीड़ित होकर उन्हें इधर-उधर भागना पड़ेगा। तुम चाहे भीष्म से युद्ध करो, चाहे सिर की टक्कर से पहाड़ तोड़ डालो और चाहे हाथों के सहारे
१२० अपार सेना-सागर के पार पहुँचने की चेष्टा करो, लेकिन मेरे हाथ से छुटकारा न पा सकोगे।

हे अर्जुन, मेरी सेना समुद्र के समान है। इसमें कृपाचार्य महामीन हैं। विविंशति महासर्प हैं। भीष्म इसका वेग हैं। द्रोणाचार्य महाग्राह के तुल्य हैं। कर्ण तिमिङ्गिल के समान हैं। शल्य भँवर के तुल्य हैं। काम्बोज-नरेश बड़वानल के समान हैं। बृहद्बल उबाल (ज्वार) के समान हैं। भगदत्त तूफ़ान के समान हैं। सोमदत्त के पुत्र भूरिश्रवा तिमि आदि भयानक जलचर जीवों के तुल्य हैं। श्रुतायु, कृतवर्मा और दुःशासन इस सागर का महाप्रवाह हैं। शल, सुषेण और विचित्र शस्त्र-अस्त्र नाग और घड़ियाल के समान हैं। युयुत्सु और दुर्मर्षण जल हैं। जयद्रथ पर्वत के तुल्य हैं। पुरुमित्र इसकी गहराई और शकुनि इसकी उत्पत्ति का स्थान हैं। तुम जब शस्त्र-प्रवाहवाले इस अक्षय महासागर में उतरोगे तब तुम्हारे बन्धु-बान्धव नष्ट होंगे और तुम थक जाओगे; इससे तुम्हें बहुत सन्ताप होगा। स्वर्ग से लौटाये गये पापी की तरह तुम्हारा मन पृथ्वी का राज्य पाने की आशा से फिर जायगा। जिसने तप नहीं किया वह जैसे स्वर्ग को नहीं पा सकता वैसे ही तुम्हें राज्य मिलना भी अत्यन्त दुष्कर और असम्भव है। १२५

एक सौ इकसठ अध्याय

उलूक का पाण्डवों के पास जाकर दुर्योधन का सँदेशा कहना

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, अब कैतव्य उलूक पाण्डवों के डेरे में गया और उनसे मिलकर युधिष्ठिर से कहने लगा—राजन्, आप जानते हैं कि दूत लोग अपनी ओर से कुछ नहीं कहते; स्वामी जो कुछ कहने को कहता है, वही कहते हैं। मैं आपके आगे महाराज दुर्योधन की बातें जैसी की तैसी कहता हूँ; सुनकर मुझ पर क्रोध न कीजिएगा।

धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—हे उलूक, तुम डरो नहीं। तुम बेखटके उस लोभी अदूरदर्शी दुर्योधन की बातें कहो।

तब उलूक ने यशस्वी श्रीकृष्ण, महात्मा पाण्डव, सृञ्जय, मत्स्य, पुत्र-सहित विराट, द्रुपद और अन्य राजा लोगों के सामने कहा—हे युधिष्ठिर, आप जुए में हारे और द्रौपदी भी सभा में सबके सामने लाई गई। इसके लिए हर एक पुरुष, जिसे पौरुष का अभिमान है, क्रोध कर सकता है। आप लोगों ने बारह वर्ष वनों में घूमकर बिताये; और एक वर्ष तक राजा विराट के घर में दास बनकर आप लोग छिपे रहे। इस समय पहले के क्रोध, राज्य-हरण, वनवास के कष्ट और द्रौपदी के अपमान तथा कष्ट को स्मरण करके अपना पौरुष दिखाइए। भीमसेन ने असमर्थ होकर भी दुःशासन का रक्त पीने की प्रतिज्ञा की थी। इस समय हो सके तो वे उस प्रतिज्ञा को पूरी करें। अस्त्र-शस्त्र साफ़ किये जा चुके हैं, उनकी पूजा भी हो चुकी है। कुरुक्षेत्र के मैदान में कीचड़ नहीं है। सब मार्ग समतल हैं। आप लोगों के घोड़े आदि वाहन भी नीरोग और हृष्ट-पुष्ट हैं। इसलिए कृष्ण को साथ लेकर कल से ही युद्ध आरम्भ कर दीजिए। १०

हे कुन्ती-नन्दन! आपने युद्ध के मैदान में भीष्म को नहीं देखा, फिर गन्धमादन पर चढ़ने की इच्छा रखनेवाले मूर्ख (लँगड़े) आदमी की तरह वृथा अपने मुँह अपनी बड़ाई क्यों कर रहे हैं? अहङ्कार छोड़कर पौरुष दिखाइए। अत्यन्त दुर्धर्ष कर्ण, श्रेष्ठ बली शल्य और इन्द्रतुल्य द्रोणाचार्य को युद्ध में हराये बिना आप कैसे राज्य प्राप्त करने की इच्छा करते हैं? ब्रह्मविद्या और धनुर्वेद के आचार्य, दोनों विद्याओं में पारदर्शी, युद्ध-सञ्चालन में समर्थ, क्षोभ से रहित, अक्षय बल से पूर्ण महात्मा द्रोणाचार्य को हराने की आपकी इच्छा वृथा और असम्भव है। सुमेरु को हवा के वेग से उखड़ जाते हमने कभी नहीं सुना। आपका कहना (प्रतिज्ञा करना) सच हो तो सुमेरु हवा के झोंकों से उखड़ जायगा, आकाशमण्डल पृथ्वी पर गिर पड़ेगा और असमय में ही दूसरा युग आ जायगा। द्रोण के हाथ में पड़कर कौन पुरुष जीने की आशा कर सकता है? घोड़े का सवार, हाथी का सवार या रथ का सवार, कोई भी योद्धा द्रोण के सामने पड़कर कुशल के साथ घर को लौटकर नहीं जा सकता। भीष्म या द्रोण जिसे मारना चाहें, या बाणों से जिस पर चोट करें वह जीता नहीं बच सकता। आप लोग कुएँ के भीतर रहनेवाले मेंढक की तरह क्या यह नहीं जानते कि देवताओं द्वारा सुरक्षित सुरपुरी की तरह पूर्व, पश्चिम, दाक्षिणात्य और उत्तर के काम्बोज, शक, खश, शाल्व, मत्स्य, म्लेच्छ, पुलिन्द, द्रविड़, आन्ध्र और काञ्ची आदि देशों के नरेशों से सुरक्षित, देवसेना-सदृश, अजेय महासेना मेरी ओर से लड़ने को जमा हुई है? हे अल्पबुद्धि पाण्डव, आप गङ्गा-प्रवाह की तरह असह्य असंख्य योद्धाओं और भयङ्कर हाथियों के दल से बलशाली मुझसे क्या समझकर युद्ध करना चाहते हैं? २२

महाराज, युधिष्ठिर से इतना कहकर उलूक ने फिरकर अर्जुन से कहा—हे अर्जुन, तुम भी वृथा अहङ्कार छोड़कर युद्ध करो। व्यर्थ अपनी बड़ाई क्यों कर रहे हो? शेख़ी मारना अनुचित है। अगर आप ही अपनी बड़ाई करने से कार्य सिद्ध हो सकता तब सभी लोग निहाल हो जाते। तुम्हारे सहायक वासुदेव, चार हाथ का धनुष और अप्रतिम प्रभाव मुझसे छिपा नहीं है। मैं जानता हूँ कि तुम बेजोड़ योद्धा हो। किन्तु इतने पर भी मैं तुम्हारा

राज्य छीनकर उसे भोग रहा हूँ। एकमात्र विधाता में ही सङ्कल्प से सब कार्य सिद्ध करने की सामर्थ्य है। मनुष्यों में यह शक्ति नहीं कि वे जो चाहें, कर लें। मैं तेरह वर्ष से तुम्हें शोक के समुद्र में डालकर तुम्हारा राज्य भोग रहा हूँ। इस समय तुम्हें और तुम्हारे भाइयों को मारकर आगे भी निष्कण्टक राज्य करता रहूँगा। जब तुम लोग जुए में हारकर दास हो गये थे तब तुम्हारा गाण्डीव धनुप, भीमसेन की गदा और बल-पराक्रम कहाँ चला गया था? उस समय द्रौपदी ने ही तुम्हें छुटकारा दिलाया था। मैंने तुम लोगों को निस्सार तिल कुछ झूठ नहीं कहा था; क्योंकि तुम लोग विराट के भवन में वीर क्षत्रिय के अयोग्य एक साल तक सेवकों का काम करते रहे हो। भीमसेन जो विराट के घर में रसोई का काम करके चूर-चूर हो जाते थे सो मेरे बल का ही फल था। तुमने भी नपुंसक का वेप बनाकर, चोटी रखाकर, कुमारी उत्तरा को नाचने-गाने की तालीम दी है। क्षत्रिय लोग क्षत्रिय को ऐसा ही दण्ड देते हैं। मैं तुम्हारे या वासुदेव के डर से कभी राज्य न दूँगा। तुम केशव को साथ लेकर युद्ध की तैयारी करो। माया, इन्द्रजाल, कुहक या अन्य प्रकार की विभीपिका आदि बातें युद्ध में हथियारबन्द पुरुप को कभी नहीं डरा सकतीं। हज़ारों वासुदेव और सैकड़ों अर्जुन भी मेरे सामने ठहर नहीं सकते। वे मेरे अचूक बाणों की चोट न सह सकने के कारण इधर-उधर भाग खड़े होंगे। तुम चाहे भीष्म से युद्ध करो, चाहे सिर की टक्कर से पहाड़ तोड़ डालो और चाहे हाथों के सहारे अपार सेना-समुद्र के पार जाने की चेष्टा करो, लेकिन मेरे सामने आने पर जीते न बचोगे। हे कुन्ती के पुत्र, मेरी सेना समुद्र के समान है। उसमें कृपाचार्य महामीन, विविंशति महासर्प, भीष्म वेग, द्रोण महाग्राह, कर्ण तिमिङ्गिल, शल्य भँवर, काम्बोज बड़वानल, बृहद्बल उवाल (तरङ्ग), भूरिश्रवा तिमि-तुल्य, युयुत्सु और दुर्मर्पण जल, भगदत्त आँधी (तूफ़ान), श्रुतायु, कृतवर्मा और दुःशासन महाप्रवाह, सुपेण, शल और विचित्र शस्त्र नाग और नक्र, जयद्रथ पर्वत, पुरुमित्र गहराई और शकुनि प्रपात हैं। तुम जब शस्त्रप्रवाह से भरे इस अपार समुद्र में उतरोगे—जब तुम्हारे भाई-बन्धु मारे जायँगे और तुम्हारा पौरुष शिथिल होगा, तब तुम्हें बहुत पछतावा होगा। स्वर्ग से भ्रष्ट अशुद्ध पापी की तरह तुम्हारा मन राज्य पाने की आशा को छोड़ देगा। जिसने तप नहीं किया वह जैसे स्वर्ग को नहीं पा सकता वैसे ही तुम्हें राज्य मिलना भी अत्यन्त कठिन और असम्भव है। ३०... ४३

एक सौ बासठ अध्याय

भीमसेन, युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण का प्रत्युत्तर

सञ्जय ने धृतराष्ट्र से कहा—महाराज, क्रोधित साँप के समान अर्जुन को वाक्य-बाणों से पीड़ा पहुँचाते हुए उलूक ने इस तरह सँदेशा कह सुनाया। पाण्डव लोग पहले से ही क्रोधित

हो रहे थे, इस समय दुर्योधन का सँदेशा सुनकर उनके क्रोध की सीमा नहीं रही। सभी मारे क्रोध के अपने आसनों से उठ खड़े हुए, हाथ मलने और क्रोधित साँप की तरह एक दूसरे के मुख की ओर ताकने लगे। क्रोधित साँप की तरह साँसें ले रहे भीमसेन सिर झुकाये, लाल-लाल आँखें किये, टेढ़ी दृष्टि से शकुनि के बेटे उलूक की ओर देखने लगे। केशव ने भीमसेन को क्रोध से अत्यन्त विह्वल देख मुसकाकर कहा—"हे उलूक, तुम जल्दी जाकर दुर्योधन से कहो कि हम उनकी बातें सुनकर उनका मतलब समझ गये। जो उनकी इच्छा है उसी के अनुसार काम होगा।" अब श्रीकृष्ण राजा युधिष्ठिर की ओर देखने लगे।

उलूक ने सृञ्जयगण, श्रीकृष्ण, पुत्रों-सहित राजा द्रुपद, राजा विराट और अन्य राजाओं के सामने अर्जुन से दुर्योधन के बाण-सदृश तीखे वचन कहे। इसके बाद श्रीकृष्ण और भीमसेन १० आदि को भी उसने वे वचन सुनाये जो उनसे कहने के लिए दुर्योधन ने कहे थे। क्रुद्ध विषैले साँप के समान उत्तेजित हो रहे अर्जुन उसके भयङ्कर पापमय वचन सुनकर बहुत ही बिगड़े और अपने माथे का पसीना पोंछने लगे। महारथी पाण्डवों की सभा में स्थित सब लोग अर्जुन की वह दशा देखकर क्रोध से अधीर हो उठे। महात्मा वासुदेव और अर्जुन के लिए दुर्योधन ने जिन

आक्षेपमय शब्दों का प्रयोग किया था उन्हें सुनकर उस सभा के सब शूरवीर क्रोध से जल उठे। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, महारथी सात्यकि, केकय देश के पाँचों राजकुमार, राक्षस घटोत्कच, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, धृष्टकेतु, पराक्रमी भीमसेन और महारथी नकुल-सहदेव की आँखें क्रोध के मारे लाल हो गईं। वे सब लाल चन्दन लगे और बजुल्ला आदि से सुशोभित हाथ उठाकर आसनों से उठ खड़े हुए और क्रोध के मारे ओठ चाटते हुए दाँत पीसने लगे।

उन सबके आकार और भाव को जाननेवाले भीमसेन क्रोध के मारे आग के समान लाल होकर वेग से खड़े हो गये और आँखें निकालकर दाँत कटकटाते तथा हाथ मलते हुए कहने लगे—रे मूर्ख कैतव्य, दुर्योधन ने हमें कमज़ोर समझकर भड़काने के लिए २० जो वचन कहे उन्हें हमने सुन लिया। सुन मन्दमति, मैं जो कहता हूँ उसे अपने बाप शकुनि,

दुरात्मा सूतपुत्र कर्ण और अन्य राजाओं के सामने दुर्योधन से कहना कि अरे दुष्ट, हम अपने बड़े भाई की प्रसन्नता के ख़याल से आज तक तेरे बुरे व्यवहारों को सहते रहे; इसे तू अपना सौभाग्य तो समझता नहीं और हमें असमर्थ मानता है। बुद्धिमान् महात्मा धर्मराज ने वंश की भलाई के लिए शान्ति स्थापित करने की इच्छा से वासुदेव को तेरे पास भेजा, पर तूने उनका कहना भी न माना। तेरे सिर पर मौत सवार है। कल सवेरे युद्ध छिड़ेगा। मैंने तुझे और तेरे भाइयों को मारने की प्रतिज्ञा की है। अरे पापी, मैं अपनी प्रतिज्ञा ज़रूर पूरी करूँगा। तू इसमें तनिक भी सन्देह न कर। समुद्र चाहे अपनी मर्यादा को छोड़ दे, पर्वत चाहे फट जायँ, मगर मेरी प्रतिज्ञा कभी झूठ न होगी। यदि यमराज, कुबेर या साक्षात् रुद्र भी तेरी सहायता करें, तो भी पाण्डव लोग अपनी प्रतिज्ञाओं के अनुसार काम किये विना न रहेंगे। मैं जी भरकर दुःशासन का ख़ून पियूँगा। उस समय कोई भी क्षत्रिय, साक्षात् भीष्म की सहायता लेकर, अगर मुझे रोकने आवेगा तो मैं उसे मारे विना नहीं छोड़ूँगा। मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि क्षत्रियों के बीच मैंने जो वचन कहे थे उन्हें मैं ज़रूर पूर्ण करूँगा।

भीमसेन के ये वचन सुनकर असहनशील सहदेव ने भी क्रोध से आँखें लाल करके वीर सैनिकों के सामने शूरवीरों के समान वचन कहे—अरे पापी उलूक! सुन, अपने पापी बाप शकुनि से कहना कि तेरे साथ अगर राजा धृतराष्ट्र का सम्बन्ध न होता तो हम सब कुरु-वंशियों में यह फूट और विरोध कभी न होता। तू बड़ा पापी और कुलघातक है। धृतराष्ट्र के कुल और संसार के विनाश के लिए ही तू साक्षात् वैर और पाप का अवतार उत्पन्न हुआ है। हे उलूक, तेरा पापी बाप जन्म से ही हम लोगों के साथ बुराई और उग्र व्यवहार करता आता है। अब मैं उस शत्रुता का अन्त कर दूँगा। पहले तुझे तेरे बाप के सामने ही मारूँगा; उसके बाद सब क्षत्रिय सैनिकों के सामने उस दुष्ट शकुनि की हत्या करूँगा। ३०

भीमसेन और सहदेव के कह चुकने पर अर्जुन ने तनिक मुसकाकर भीमसेन से कहा—हे वीर, जिन लोगों के साथ आपकी शत्रुता है वे यहाँ पर मौजूद नहीं हैं। वे मौत के फन्दे में फँसे होने पर भी इस समय अपने घरों में आराम से हैं। दूत अपने मालिक की बात ही कहता है। इसलिए उलूक को कुछ कठोर वचन कहना ठीक नहीं। भयङ्कर पराक्रमवाले भीमसेन से यों कहकर अर्जुन ने धृष्टद्युम्न आदि अपने वीर मित्रों से कहा—आप लोगों ने उस दुर्योधन के वचन, ख़ासकर वे वचन जो उसने मेरा और वासुदेव का तिरस्कार करके कहे हैं, सुन लिये। ४० हमारे हितैषी होने के कारण उन वचनों को सुनकर आप लोग क्रोध से अधीर हो उठे हैं। मैं वासुदेव के प्रभाव और आप लोगों की सहायता से सब राजाओं और क्षत्रियों को कुछ भी नहीं गिनता। मैं आप लोगों से अनुमति लेकर दुर्योधन को उसके वाक्यों का उत्तर उलूक के द्वारा भेजता हूँ। हे उलूक, तुम दुर्योधन से कहना कि अर्जुन ने कहा है—तुमने अपने मुँह अपनी

बड़ाई करके जो दुर्वचन कहे हैं उनका उत्तर मैं कल युद्धभूमि में गाण्डीव धनुप के द्वारा ही दूँगा। ऐसी बातों का जवाब ऐसी ही बातों से देना वीरों का नहीं, कायरों का काम है।

अर्जुन का यह उत्तर सुनकर सब राजाओं को बड़ा अचरज हुआ। वे उनकी बड़ाई करने लगे। फिर क्रोध से लाल आँखें करके, बारम्बार साँस लेते और ओठ चाटते हुए, श्रीकृष्ण ५० और भाइयों की ओर देखकर, हाथ उठाकर युधिष्ठिर ने कहा—हे उलूक, जो राजा अपने को तुच्छ समझ लेता है वह श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता। इसलिए दुर्योधन से कहने के वास्ते मैं जो उनकी बातों का उत्तर देता हूँ उसे सुनो। हे उलूक, तुम कुरुसभा में जाकर, सब सभासदों को उनकी अवस्था के अनुसार मेरी ओर से सम्मानित करके, कृतघ्न दुर्मति कुलघातक और वैर-विरोध के अवतार दुर्योधन से कहना कि हे पापरूप, तुम पाण्डवों के साथ सदा से नीच और क्रूर व्यवहार करते आ रहे हो। जो पुरुष बेखटके अपनी प्रतिज्ञा का पालन करता हुआ अपने बल-बूते पर शत्रुओं को युद्ध के लिए ललकारता है वही सच्चा क्षत्रिय है। हे कुलकलङ्क, तुम वैसे ही क्षत्रिय की तरह हमें युद्ध के लिए ललकारो। माननीय और अमाननीय लोगों को आगे करके युद्ध के लिए ललकारना ठीक नहीं। अपने और अपने भृत्य-सहचरों के बल-बूते पर युद्ध के लिए पाण्डवों को ललकारो और क्षत्रिय के योग्य काम करो। जो पुरुष आप असमर्थ होकर दूसरे के भरोसे पर शत्रु से भिड़ना चाहता है वही हिजड़ा है। तुम पराये बल-बूते पर अपने को बहुत कुछ समझते हो। इस कारण तुम ऐसे अशक्त का हम ऐसे बलवानों के आगे गरजना और हमें बुरा-भला कहकर युद्ध के लिए ललकारना बिलकुल कायरपन है।

अब श्रीकृष्ण ने कहा—हे उलूक, इसके उपरान्त तुम दुर्योधन से मेरे ये वचन कहना कि हे दुर्योधन, सबेरे ही युद्ध आरम्भ होगा। उसमें तुम अपना बल दिखाकर अपनी मर्दानगी साबित करना। हे दुर्मति, हे मूढ़, तुम यही सोचकर नहीं डरते कि श्रीकृष्ण ख़ुद युद्ध नहीं करेंगे, अर्जुन का रथ हाँकेंगे। मैं चाहूँ तो क्रुद्ध होकर दम भर में तुम्हारे दल के सब राजाओं को, आग जैसे घास के ढेर को जला देती है वैसे ही, नष्ट कर सकता हूँ। यह निश्चय समझो कि अन्त को तुम्हारे दल का कोई भी राजा जीता न बचेगा। मैं युधिष्ठिर की आज्ञा ६० से वीर अर्जुन को प्रसन्न करने के लिए उनका रथ हाँकूँगा। याद रक्खो, जो तुम तीनों लोकों में भागे-भागे फिरोगे, या पाताल में भी घुस जाओगे तो तुमको सबेरे वहाँ भी अर्जुन का रथ देख पड़ेगा। तुम भीमसेन की प्रतिज्ञा को कोरी बकवास समझते हो, यह तुम्हारी भूल है। तुम समझ लो कि भीमसेन दुःशासन का रक्त पीकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर चुके। तुम सदा से प्रतिकूल और कठोर वचन बोलते आ रहे हो; किन्तु अर्जुन, भीमसेन, युधिष्ठिर, ६३ नकुल या सहदेव, कोई भी तुम्हें कुछ नहीं समझता।

महाभारत के स्थायी ग्राहक बनने के नियम

(१) जो सज्जन हमारे यहाँ महाभारत के स्थायी ग्राहकों में अपना नाम और पता लिखा देते हैं उन्हें महाभारत के मूल्य पर २०) सैकड़ा कमीशन काट दिया जाता है। अर्थात् १।) प्रति अङ्क के बजाय स्थायी ग्राहकों को १) में प्रति अङ्क दिया जाता है। ध्यान रहे कि डाकख़र्च स्वादी और कटकर सभी तरह के ग्राहकों को अलग देना पड़ेगा।

(२) साल भर या छः मास का मूल्य १२) या ६), दो आना प्रति अङ्क के हिसाब से रजिस्ट्री ख़र्च सहित १३॥) या ६॥।) जो सज्जन पेशगी मनीआर्डर-द्वारा भेज देंगे, केवल उन्हीं सज्जनों को डाकख़र्च नहीं देना पड़ेगा। महाभारत की प्रतियाँ राह में गुम न हो जायँ और ग्राहकों की सेवा में वे सुरक्षित रूप में पहुँच जायँ, इसी लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजने का प्रबन्ध किया गया है।

(३) इसके प्रत्येक खंड के लिए अलग से बहुत सुन्दर जिल्दें भी सुनहले नाम के साथ तैयार कराई जाती हैं। प्रत्येक जिल्द का मूल्य ।॥) रहता है परन्तु स्थायी ग्राहकों को वे ॥) ही में मिलती हैं। जिल्दों का मूल्य महाभारत के मूल्य से बिलकुल अलग रहता है।

(४) स्थायी ग्राहकों के पास प्रतिमास प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होते ही बिना विलम्ब वी० पी० द्वारा भेजा जाता है। बिना कारण वी० पी० लौटाने से उनका नाम ग्राहक-सूची से अलग कर दिया जायगा।

(५) ग्राहकों को चाहिए कि जब किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार करें तो कृपा कर अपना ग्राहक-नम्बर जो कि पता की स्लिप के साथ छपा रहता है और पूरा पता अवश्य लिख दिया करें। बिना ग्राहक-नम्बर के लिखे हज़ारों ग्राहकों में से किसी एक का नाम ढूँढ निकालने में बड़ी कठिनाई पड़ती है और पत्र की कार्रवाई होने में देरी होती है क्योंकि एक ही नाम के कई-कई ग्राहक हैं। इसलिए सब प्रकार का पत्र-व्यवहार करते तथा रुपया भेजते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखना चाहिए।

(६) जिन ग्राहकों को अपना पता सदा अथवा अधिक काल के लिए बदलवाना हो, अथवा पते में कुछ भूल हो, उन्हें कार्यालय को पता बदलवाने की चिट्ठी लिखते समय अपना पुराना और नया दोनों पते और ग्राहक-नम्बर भी लिखना चाहिए। जिससे उचित संशोधन करने में कोई विघ्न न हुआ करे। यदि किसी ग्राहक को केवल एक दो मास के लिए ही पता बदलवाना हो, तो उन्हें अपने हलके के डाकख़ाने से उसका प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

(७) ग्राहकों से सविनय निवेदन है कि नया आर्डर या किसी प्रकार का पत्र लिखने के समय यह ध्यान रक्खें कि लिखावट साफ़ साफ़ हो। अपना नाम, गाँव, पोस्ट और ज़िला साफ़ साफ़ हिन्दी या अँगरेज़ी में लिखना चाहिए ताकि अङ्क या उत्तर भेजने में दुबारा पूछ-ताछ करने की ज़रूरत न हो। "हम परिचित ग्राहक हैं" यह सोच कर किसी को अपना पूरा पता लिखने में लापरवाही न करनी चाहिए।

(८) यदि कोई महाशय मनी-आर्डर से रुपया भेजें, तो 'कूपन' पर अपना पता-ठिकाना और रुपया भेजने का अभिप्राय स्पष्ट लिख दिया करें, क्योंकि मनीआर्डरफ़ार्म का यही अंश हमको मिलता है।

सब प्रकार के पत्रव्यवहार का पता—

मैनेजर महाभारत विभाग, इंडियन प्रेस, लिमिटेड प्रयाग।

आवश्यक सूचनायें

(१) हमने प्रथम खण्ड की समाप्ति पर उसके साथ एक महाभारत-कालीन भारतवर्ष का प्रामाणिक सुन्दर मानचित्र भी देने की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में हम ग्राहकों को सूचित करते हैं कि पूरा महाभारत समाप्त हो जाने पर हम प्रत्येक ग्राहक को एक परिशिष्ट अध्याय बिना मूल्य भेजेंगे जिसमें महाभारत-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण खोज, साहित्यिक आलोचना, चरित्र-चित्रण तथा विश्लेषण आदि रहेगा। उसी परिशिष्ट के साथ ही मानचित्र भी लगा रहेगा जिसमें पाठकों को मानचित्र देख कर उपरोक्त बातें पढ़ने और समझने आदि में पूरी सुविधा रहे।

(२) महाभारत के प्रेमी ग्राहकों को यह शुभ समाचार सुन कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हमने कानपुर, उन्नाव, काशी (रामनगर), कलकत्ता, गाज़ीपुर, बरेली, मथुरा (वृन्दावन), जोधपुर, बुलन्दशहर, प्रयाग और लाहौर आदि में ग्राहकों के घर पर ही महाभारत के अङ्क पहुँचाने का प्रबन्ध किया है। अब तक ग्राहकों के पास यहीं से सीधे डाक-द्वारा प्रतिमास अङ्क भेजे जाते थे जिसमें प्रति अङ्क तीन चार आना खर्च होता था पर अब हमारा नियुक्त किया हुआ एजेंट ग्राहकों के पास घर पर जाकर अङ्क पहुँचाया करेगा और अङ्क का मूल्य भी ग्राहकों से वसूल कर ठीक समय पर हमारे यहाँ भेजता रहेगा। इस अवस्था पर ग्राहकों को ठीक समय पर प्रत्येक अङ्क सुरक्षित रूप में मिल जाया करेगा और वे डाक, रजिस्टरी तथा मनीआर्डर इत्यादि के व्यय से बच जायँगे। इस प्रकार उन्हें प्रत्येक अङ्क केवल एक रुपया मासिक देने पर ही घर बैठे मिल जाया करेगा। यथेष्ट ग्राहक मिलने पर अन्य नगरों में भी शीघ्र ही इसी प्रकार का प्रबन्ध किया जायगा। आशा है जिन स्थानों में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है, वहाँ के महाभारतप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अधिक संख्या में ग्राहक बन कर इस अवसर से लाभ उठावेंगे। और जहाँ इस प्रकार की व्यवस्था हो चुकी है वहाँ के ग्राहकों के पास जब एजेंट अङ्क लेकर पहुँचे तो ग्राहकों को रुपया देकर अङ्क ठीक समय पर ले लेना चाहिए जिसमें उन्हें ग्राहकों के पास बार बार आने जाने का कष्ट न उठाना पड़े। यदि किसी कारण उस समय ग्राहक मूल्य देने में असमर्थ हों तो अपनी सुविधानुसार एजेंट के पास से जाकर अङ्क ले आने की कृपा किया करें।

(३) हम हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जनों से एक सहायता की प्रार्थना करते हैं। वह यही कि हम जिस विराट् आयोजन में संलग्न हुए हैं आप लोग भी कृपया इस पुण्य-पर्व में सम्मिलित होकर पुण्य-सञ्चय कीजिए, अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी का साहित्य-भाण्डार पूर्ण करने में सहायक हूजिए और इस प्रकार सर्वसाधारण का हित-साधन करने का उद्योग कीजिए। सिर्फ़ इतना ही करें कि अपने दस-पाँच हिन्दी-प्रेमी इष्ट-मित्रों में से कम से कम दो स्थायी ग्राहक इस वेद-तुल्य सर्वाङ्गसुन्दर महाभारत के और बना देने की कृपा करें। जिन पुस्तकालयों में हिन्दी की पहुँच हो वहाँ इसे ज़रूर मँगवावें। एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न रह जाय जिसके घर यह पवित्र ग्रन्थ न पहुँचे। आप सब लोगों के इस प्रकार साहाय्य करने से ही यह कार्य्य अग्रसर होकर समाज का हितसाधन करने में समर्थ होगा।

—प्रकाशक

विषय-सूची

भीष्मपर्व

(जम्बूखण्ड निर्माणपर्व)

रंगीन चित्रों की सूची

एक सौ तिरसठ अध्याय

उलूक का दुर्योधन के पास लौटकर जाना

सञ्जय कहते हैं—महाराज, दुर्योधन ने अर्जुन के लिए जो कठोर वचन कहला भेजे थे उन्हें उलूक के मुँह से सुनकर अर्जुन की आँखें लाल हो आईं। वे टेढ़ी नज़र से उलूक की ओर देखने लगे। फिर वासुदेव की ओर देखकर और उलूक का हाथ पकड़कर अर्जुन ने कहा—तुम दुर्योधन से कहना कि जो मनुष्य अपने बल पर भरोसा करके निडर होकर शत्रुओं को युद्ध के लिए ललकारता और उनसे भिड़ जाता है वही मर्द है। जो अधम क्षत्रिय दूसरों के बल-भरोसे पर शत्रु को युद्ध के लिए बुलाता है वह असमर्थ होने के कारण संसार में अधम गिना जाता है। हे दुर्योधन, तुम पराये बल पर अपने को बलवान् समझते हो और ख़ुद कायर असमर्थ होकर भी दूसरों को नपुंसक कहते हो। सब राजाओं का हित चाहनेवाले, जितेन्द्रिय, माननीय, बुद्धिमान्, बूढ़े पितामह भीष्म को मरण की दीक्षा देकर (अर्थात् सेनापति बनाकर) तुम इस तरह बढ़-बढ़कर बातें कर रहे हो। हे दुर्मति, हे कुल-घातक! तुम्हारे जी का भाव हम समझ गये हैं। तुमने सोचा है कि पाण्डव लोग दया और स्नेह के मारे वृद्ध पितामह की हत्या नहीं करेंगे। यही समझकर तुमने उन्हें युद्ध में आगे कर दिया है। किन्तु हे दुर्योधन, जिन भीष्म के बल पर तुम शेख़ी मार रहे हो उन्हें सब क्षत्रिय वीरों के सामने सबसे पहले मैं मारूँगा। हे उलूक, तुम जाकर कौरवों के सामने दुर्योधन से कहना कि तुमने जो सबेरे युद्ध आरम्भ होने की बात कही है वह अर्जुन को मञ्जूर है।

कौरव-सभा के बीच कौरवों को प्रसन्न करते हुए महापराक्रमी भीष्म ने दुर्योधन को सुनाकर कहा है—"हे उलूक, तुम पाण्डवों से जाकर मेरा सन्देश कहो कि सृञ्जय-सेना और शाल्वेय सेना को मारने का ज़िम्मा मैंने लिया है। मैं द्रोणाचार्य के बिना भी सारी सेना अथवा जगत् को नष्ट कर सकता हूँ। हे दुर्योधन, तुम पाण्डवों से मत डरो।" भीष्म के ये वचन सुनने से ही तुम समझ रहे हो कि पाण्डव विपत्ति में पड़ गये और तुम्हें राज्य मिल गया। इसी से हमें तुच्छ समझकर, ऐंठ में आकर, तुम अपने ऊपर आई हुई विपत्ति को देखकर भी नहीं देखते। हे दुर्योधन, मैं भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम सब लोगों के सामने सबसे पहले ही कौरवों के एकमात्र आश्रय वृद्ध पितामह को मारकर रथ से गिरा दूँगा। इसलिए तुम सूर्योदय के बाद ध्वजा लगे रथ पर बैठकर, अपनी सारी सेना साथ लेकर, यत्न के साथ वृद्ध पितामह की रक्षा करना। कल जब तुम पितामह के शरीर को मेरे तीक्ष्ण बाणों से घायल और जर्जर देखोगे तभी तुम्हें मालूम होगा कि मेरा यह कहना सच था या कोरी डींग थी। और, कुरु-सभा के बीच में कुपित भीमसेन ने तुम्हारे भाई अदूर- १०

दर्शी, अधर्मी, नित्य वैर का भाव रखनेवाले, पापी, पुरुषाभिमानी दुःशासन के बारे में जो प्रतिज्ञा की थी, उसे भी तुम शीघ्र ही सफल होते देखोगे।

हे दुर्योधन! तुम भी अपने अभिमान, क्रोध, कठोरता, निठुरता, आत्मसम्भावना (अपने को सबसे बढ़कर समझना), नीचता, क्रूरता, धर्मद्वेष, अधर्म, औरों की निन्दा, बड़े-बूढ़ों की बात न मानना, कर्ण आदि के विजय पाने की आशा पर विश्वास, अपनी सेना अधिक देखकर अकड़ना और सारी अनीति आदि दुर्गुणों का तीव्र फल देखोगे। वासुदेव मेरे सहायक हैं। हे नराधम! मैं जब क्रोधित हूँ तब तुम अपने जीवन की या राज्य पाने की २० आशा किस तरह कर रहे हो? जब तुम भीष्म, द्रोणाचार्य और सूतपुत्र कर्ण को वीरों की तरह संग्राम में मरते देखोगे तब तुम्हें अपने जीवन, अपने पुत्रों के जीवन और राज्य-लाभ की ओर से निराशा हो जायगी। हे दुर्योधन, तुम अपने भाइयों और पुत्रों के मरने की ख़बर सुनकर और ख़ुद भी भीमसेन के हाथ से मारे जाकर मौत की सेज पर अपने कुकर्मों को याद करके पछताओगे। हे उलूक, मैं कभी किसी बारे में दुबारा प्रतिज्ञा नहीं करता। मैं सच कहता हूँ, जो कुछ मैंने कहा है वह सब सत्य करके दिखा दूँगा।

युधिष्ठिर ने कहा—उलूक, तुम जाकर मेरी ओर से कहना कि हे दुर्योधन, तुम अपने चरित्र के समान मेरे चरित्र को मत समझो। झूठ और सच में जितना अन्तर है उतना ही अन्तर तुम्हारे और मेरे चाल-चलन में है। मैं तो चींटी और कीड़े-मकोड़ों का भी अनिष्ट करना नहीं चाहता। फिर मैं जाति-वध ऐसा भयङ्कर काम कैसे करना चाहता? इसी लिए मैंने पहले तुमसे सिर्फ़ पाँच गाँव माँगे थे कि तुम्हारी और सारे कुल की हत्या न करनी पड़े। किन्तु तुम अपनी मूर्खता के कारण राज्य के लोभ के वश होकर अपनी बड़ाई, और बढ़-बढ़कर बातें करते हो। तुमने वासुदेव की हित की बातें भी नहीं मानीं। अब बहुत कहना व्यर्थ है, अपनी इच्छा पूरी करने के लिए भाई-बन्धुओं से युद्ध करो। हे उलूक, तुम मेरा अहित करने में तत्पर दुर्योधन से कहना कि हे दुर्योधन, तुम्हारी बातें सुनकर मैं तुम्हारा मतलब समझ गया। तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही काम होगा।

३० अब राजकुमार भीमसेन ने कहा—हे उलूक! तुम पापी, दुर्बुद्धि, शठ, कपट-चतुर, दुराचारी दुर्योधन से कहना कि तुम या तो हस्तिनापुर के महलों में ही रहोगे या मरकर गिद्धों के पेट में जाओगे। मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं कुरु-सभा में जो प्रतिज्ञा कर चुका हूँ उसे ज़रूर पूर्ण करूँगा। समर में दुःशासन को मारकर उसका रक्त पियूँगा और तुम्हारी जाँघ तोड़कर तुम्हारे और भाइयों की भी हत्या करूँगा। अरे मूढ़, मैं धृतराष्ट्र के सब बेटों की और अभिमन्यु सब राजपुत्रों की साक्षात् मृत्यु है। अधिक क्या कहूँ, मैं तुमको तुम्हारे भाइयों सहित मारकर धर्मराज के सामने तुम्हारे सिर पर पैर रक्खूँगा।

नकुल ने कहा—हे उलूक, तुम दुर्योधन से कहना कि मैंने तुम्हारा सँदेशा सुन लिया; जैसा तुमने कहा है वैसा ही मैं सब काम करूँगा। सहदेव ने कहा—हे उलूक, तुम दुर्योधन से कहना कि हे धार्तराष्ट्र, तुम जो चाहते हो वही होगा। इस समय तुम जैसे खुशी से अपने मुँह अपनी बड़ाई करते हुए कड़वी बातें कह रहे हो वैसे ही पुत्र, जातिवाले, भाई और अनुचर आदि के साथ मरते समय तुम्हें शोक के समुद्र में डूबना पड़ेगा। बूढ़े राजा विराट और ४० द्रुपद ने कहा—सज्जनों की सेवा करना हमें सदा पसन्द है। कल यह बात प्रकट हो जायगी कि हम दास हैं या प्रभु। सबका पौरुष भी कल प्रकट हो जायगा। शिखण्डी ने कहा—हे उलूक, सदा पाप-विचार में डूबे हुए दुर्योधन से तुम कहना कि मैं युद्ध में जो भयानक और असाध्य काम करूँगा वह तुम प्रत्यक्ष देखोगे। जिनके बल पर तुम युद्ध में विजय का निश्चय किये हुए हो उन तुम्हारे बूढ़े पितामह को मारकर मैं रथ से गिराऊँगा। विधाता ने भीष्म को मारने के लिए ही मुझे पैदा किया है। इसलिए मैं सब वीरों के सामने ही महात्मा भीष्म को मारूँगा। धृष्टद्युम्न ने कहा—तुम मेरी आज्ञा के अनुसार दुर्योधन से कहना कि मैं युद्ध में अनुचरों-बान्धवों-सहित द्रोणाचार्य को अवश्य मारूँगा।

सबके पीछे युधिष्ठिर ने करुणा के भाव से कहा—हे उलूक, तुम दुर्योधन से कहना कि भाइयों को मारने की मेरी बिलकुल इच्छा नहीं थी; किन्तु तुम्हारी दुर्बुद्धि से वही होगा। धृष्टद्युम्न आदि प्रधान पुरुषों ने जो प्रतिज्ञाएँ की हैं, उनका अनुमोदन मुझे लाचार होकर करना पड़ेगा। उलूक, अब तुम जाओ, अथवा यहाँ रहना चाहो तो रह सकते हो। हम तुम्हारे हितैषी बान्धव हैं।

अब युधिष्ठिर से अनुमति लेकर उलूक चल दिया। उसने दुर्योधन के पास जाकर ५० उससे वासुदेव, भीमसेन, धर्मराज, नकुल, सहदेव, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी और अर्जुन के उत्तर तथा पौरुष आदि का हाल विस्तार के साथ कहा। उलूक के मुँह से सब हाल सुनकर दुर्योधन ने शकुनि, दुःशासन और कर्ण से कहा—तुम लोग सब राजाओं की, अपनी और मित्रों की सेना को आज्ञा दे दो कि वे सूर्योदय के पहले ही युद्ध के लिए तैयार

रहें। कर्ण ने उसी समय राजा की यह आज्ञा दूतों के हाथ सब सेना के पास भेज दी। दूत लोग रथ, ऊँट, घोड़े, खच्चर आदि पर बैठकर, छावनी भर में घूम-घूमकर सब राजाओं से ५७ कहने लगे कि आप लोग सूर्योदय के पहले ही युद्ध की तैयारी कर दें।

एक सौ चौंसठ अध्याय

युधिष्ठिर की युद्ध की तैयारी

सञ्जय कहते हैं—हे भरतश्रेष्ठ, इधर उलूक के जाने पर युधिष्ठिर ने भीमसेन आदि महारथी सेनापतियों के अधीन अपनी सेना को युद्ध की तैयारी के लिए आज्ञा दे दी। उस
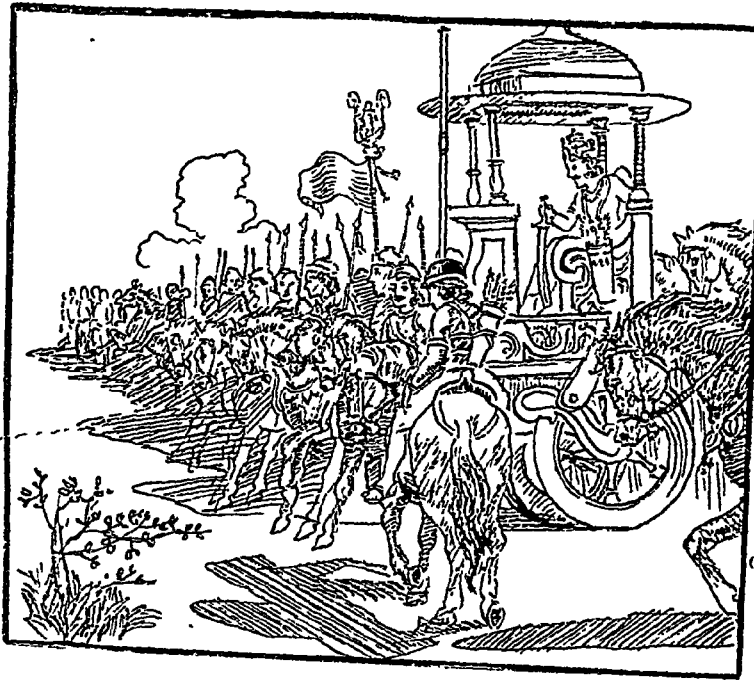
समय सेना की टुकड़ियाँ समुद्र की लहरों के समान जान पड़ने लगीं। अग्निवर्ण धृष्टद्युम्न सेना के अगले भाग में द्रोणाचार्य से युद्ध करने के लिए स्थिर हुए। धृष्टद्युम्न ने बल और उत्साह के अनुसार रथियों को उनके कर्तव्य का उपदेश किया। उन्होंने द्वन्द्वयुद्ध के लिए जोड़ियाँ बना दीं। कर्ण से अर्जुन का, दुर्योधन से भीमसेन का, शल्य से धृष्टकेतु का, कृपाचार्य से उत्तमौजा का, अश्वत्थामा से नकुल का, कृतवर्मा से शैब्य का, जयद्रथ से सात्यकि का, भीष्म से शिखण्डी का, शकुनि से सहदेव का, शल से चेकितान का, त्रिगर्त-गण के साथ द्रौपदी के पाँचों बेटों का, वृषसेन और अन्य राजाओं के साथ अभिमन्यु का युद्ध निश्चित हुआ। धृष्टद्युम्न अभिमन्यु को अर्जुन से भी बढ़कर समझते थे। सेनापति बुद्धिमान् धृष्टद्युम्न ने इस तरह अलग-अलग सेनाओं का विभाग करके अपने हिस्से में द्रोणाचार्य को रक्खा। युद्ध के लिए इस तरह निश्चय करके, व्यूह-रचना और सैन्य-संस्थापन करके, पाण्डवों की विजय की १२ इच्छा से धृष्टद्युम्न युद्ध-भूमि में तैयार हो रहे।

रथातिरथसंख्यानपर्व

एक सौ पैंसठ अध्याय

पितामह भीष्म और दुर्योधन का संवाद

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, महावीर अर्जुन जब युद्ध में भीष्म के वध की प्रतिज्ञा कर चुके तब मन्दमति दुर्योधन आदि मेरे पुत्रों ने क्या किया ? मैं पिता भीष्म को युद्ध में वासुदेव की सहायता से अर्जुन के बाणों से मरा पड़ा सा देख रहा हूँ। महा बुद्धिमान् भीष्म ने अर्जुन की यह प्रतिज्ञा सुनकर क्या कहा ? कौरव-श्रेष्ठ भीष्म ने सेनापति होकर आगे क्या यत्न किया ?

सञ्जय महातेजस्वी कुरुवृद्ध भीष्म की बातें धृतराष्ट्र को यों सुनाने लगे कि राजन्, महा-पराक्रमी भीष्म ने सेनापति का पद स्वीकार करके दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए कहा—हे दुर्योधन, आज मैं देवताओं के सेनापति शक्तिपाणि कुमार को नमस्कार करके तुम्हारा सेनापति होता हूँ। मैं सेना के सञ्चालन का जानकार और तरह-तरह के व्यूहों की रचना में निपुण हूँ। वृत्ति लेकर काम करनेवाले और अवैतनिक, दोनों तरह के सिपाहियों को काम में लगाना या उनसे काम लेना मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। हे कुरुनन्दन! मैं बृहस्पति के समान चढ़ाई, युद्ध और शत्रुओं के अस्त्रों को निष्फल करना पूर्ण रूप से जानता हूँ। देवता, गन्धर्व और मनुष्य, इन तीनों की व्यूह-रचना मुझे मालूम है। मैं अपने व्यूहों की सहायता से पाण्डवों को भ्रम में डालकर शास्त्र-विधि के अनुसार तुम्हारी सेना की रक्षा और शत्रुसेना से युद्ध करूँगा। अब तुम सब तरह की चिन्ता मन से हटा दो। ११

दुर्योधन ने कहा—हे पितामह, आपको सेनापति पाकर देवताओं और दैत्यों से भी मैं नहीं डरता। आप और द्रोण मेरे पक्ष में हैं, इसलिए मैं अवश्य विजय पाऊँगा। मैं आपकी सहायता से देवताओं का राज्य भी प्राप्त कर सकता हूँ। हे सेनापति, आप शत्रुओं की और हमारी सब बातें जानते हैं। मैं अपने और शत्रुपक्ष के रथी और अतिरथी योद्धाओं की संख्या सुनना चाहता हूँ। कृपा करके कहिए।

पितामह ने कहा—हे दुर्योधन, तुम्हारी सेना में हज़ारों लाखों रथी और अनेक अतिरथी हैं। उनकी संख्या सुनो। राजन् तुम, दुःशासन आदि भाइयों सहित, सबसे श्रेष्ठ रथी हो। तुम्हारे सब भाई वार करना और उससे बचना ब.खूबी जानते हैं। अस्त्र-विद्या में सभी द्रोणाचार्य के प्रिय शिष्य हैं और रथ या हाथी पर बैठकर गदा, प्रास, ढाल-तलवार आदि शस्त्रों का युद्ध कर सकते हैं। वे शत्रुसेना को रोक सकते हैं, उस पर प्रहार कर सकते हैं और अपनी सेना को सँभाल सकते हैं। उनका पाण्डवों से घोर वैमनस्य है। वे लड़ाके वीर पाञ्चालों की सेना को मारेंगे। २०

मैं तुम्हारी सेना का सञ्चालक हूँ। मैं पाण्डवों को तुच्छ समझकर शत्रु-सेना का नाश करूँगा। मेरे गुणों को तुम जानते ही हो। अपने मुँह से अपने गुणों का वर्णन करना ठीक नहीं। भोजपति कृतवर्मा श्रेष्ठ योद्धा और अतिरथी हैं। वे निस्सन्देह तुम्हारा कार्य सिद्ध करेंगे। बड़े-बड़े योद्धा उन पर आक्रमण नहीं कर सकते। उनका बाण बहुत दूर तक जाता है और उनका धनुप भी पक्का है। इन्द्र जैसे दानवों की सेना को मारते हैं वैसे ही कृतवर्मा पाण्डवों की सेना का विनाश करेंगे। मद्रराज शल्य भी अतिरथी हैं। वे हर युद्ध में श्रीकृष्ण की बराबरी का दावा रखते हैं। अपने सगे भानजों को छोड़कर वे तुम्हारे पक्ष में आये हैं। वे समुद्र की लहरों के समान शत्रुओं को बाण-वर्षा में बहाते हुए पाण्डवों से विकट युद्ध करेंगे। तुम्हारे परम हितचिन्तक मित्र और अस्त्रविद्या में निपुण भूरिश्रवा भी अतिरथी हैं। वे रथों के रक्षकों के भी समूह की रक्षा करनेवाले बड़े वीर हैं और युद्ध में शत्रुओं की बहुत सी सेना मार गिरावेंगे। सिन्धुराज जयद्रथ रथी से दूनी शक्ति रखते हैं। वे भी पाण्डवों से घोर युद्ध
३० करेंगे। वन में द्रौपदी-हरण करने पर पाण्डवों ने जयद्रथ को जीतकर बड़ा अपमान किया था। जयद्रथ ने घोर तप करके महादेव से दुर्लभ वर प्राप्त किया है। वे भी उस
३३ पिछले वैर को याद करके पाण्डवों से भयङ्कर युद्ध करेंगे।

एक सौ छाछठ अध्याय

दुर्योधन की सेना के और भी रथी, अतिरथी आदि का वर्णन

भीष्म पितामह ने कहा—राजन्, काम्बोज देश के राजा सुदक्षिण एकरथ हैं। वे तुम्हारे लिए शत्रुओं से विकट युद्ध करेंगे। उस समय कौरव लोग युद्ध के मैदान में उन्हें, वासुदेव के समान, पराक्रम प्रकट करते देखेंगे। उनके साथ काम्बोज देश के, बहुत तेज़ चलनेवाले, विचित्र शस्त्रों से युद्ध करनेवाले दुर्धर्ष वीर हैं। माहिष्मती पुरी के राजा नील रथी हैं। वे बहुत से वीरों के साथ पाण्डवों से युद्ध करेंगे। सहदेव के साथ उनकी पुरानी शत्रुता है। इस कारण इस समय वे तुम्हारा कार्य सिद्ध करने के लिए विशेष यत्न करेंगे। महाराज, जैसे क्रीड़ा कर रहे यूथपति दो गजराज हाथियों के झुण्ड में विचरते हैं, वैसे ही महापराक्रमी अवन्ती देश के राजा विन्द और अनुविन्द युद्धभूमि में विचरकर गदा, प्रास, खड्ग, नाराच, तोमर आदि शस्त्रों से पाण्डवों की सेना का विनाश करेंगे। त्रिगर्त देश के पाँच राजकुमार विराट नगर में गोधन-हरण के समय से पाण्डवों के शत्रु हो गये हैं। हे राजेन्द्र, जैसे मगर आदि जलचर
१० जीव तरङ्गयुक्त गङ्गाजी के प्रवाह को मथते हैं, वैसे ही वे पाण्डवों की सेना को दल-मल डालेंगे। वे पाँचों रथी हैं। उनमें सत्यरथ ही मुख्य है। हे भारत, भीमसेन और अर्जुन ने

दिग्विजय के समय उनका जो अप्रिय किया है उसे याद करके इस समय वे खूब युद्ध करेंगे और पाण्डवों के प्रधान-प्रधान वीरों को मारेंगे।

तुम्हारा नवयुवक पुत्र लक्ष्मण और दुःशासन का पुत्र, ये दोनों भी युद्ध से विमुख न होनेवाले, युद्धनिपुण, वेगशाली और सेना-सञ्चालन में चतुर रथी हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ, एकरथ महाराज दण्डधार अपनी सेना साथ लेकर युद्ध करेंगे। अयोध्या के राजा महाबली पराक्रमी बृहद्बल रथी हैं। वे अपने बन्धुओं का हर्ष बढ़ाते हुए तुम्हारे हित के लिए घोर युद्ध करेंगे। महर्षि गैतम के वीर्य से, अजेय कार्त्तिकेय की तरह, शरस्तम्ब से उत्पन्न होनेवाले कृपाचार्य महारथी हैं। वे तुम्हारे लिए प्राणों का मोह छोड़कर युद्ध करेंगे और, अग्नि की तरह, समर में विविध धनुष आदि शस्त्र धारण करनेवाले वीरों की सेना का नाश करेंगे। २२

एक सौ सड़सठ अध्याय

अन्य रथी आदि का वर्णन

पितामह ने कहा—राजन्, तुम्हारे मामा शकुनि एकरथ हैं। उन्होंने पाण्डवों से वैर पैदा किया है, इसलिए उनके साथ कठिन युद्ध करेंगे। उनके सैनिक वायुवेग से हमला करनेवाले और जमकर युद्ध करनेवाले हैं। द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा महारथी हैं। वे धनुष-बाण से लड़नेवाले सब योद्धाओं में मुख्य, विचित्र युद्ध करनेवाले और शस्त्र का दृढ़ प्रहार करनेवाले हैं। उनके बाण भी अर्जुन के बाणों की तरह धनुष से लगातार निकलकर शत्रु-सेना पर बरसते हैं। उनके बल-वीर्य का वर्णन करना मेरी शक्ति के बाहर है। वे चाहें तो तीनों लोकों को अस्त्र के प्रभाव से भस्म कर दें। उनमें ऋषियों का क्रोध, तेज और तप है। द्रोणाचार्य की कृपा से उन्होंने सब दिव्य अस्त्र प्राप्त कर लिये हैं; किन्तु उनमें प्रधान दोष यह है कि जीवन उन्हें अत्यन्त प्रिय है। वे मरने से बहुत डरते हैं और इसी कारण युद्ध से जी चुराते हैं। इसी दोष के कारण उन्हें मैं रथी या अतिरथी कुछ नहीं समझता। पाण्डवों की और कौरवों की सेनाओं में अश्वत्थामा के समान पराक्रमी और युद्धनिपुण दूसरा नहीं है। वे एक ही रथ से देवताओं की सेना को भी मार सकते हैं। उनका शरीर ऐसा मोटा-ताज़ा और दृढ़ है कि वे एक हाथ मारकर पहाड़ों को भी फोड़ सकते हैं। महावीर अश्वत्थामा में असंख्य गुण हैं। वे युद्धस्थल में विचरते समय साक्षात् मृत्यु का अवतार जान पड़ते हैं। सिंहग्रीव महातेजस्वी अश्वत्थामा क्रोध के समय प्रलयकालीन अग्नि से प्रतीत होते हैं। वही इस महाभारत युद्ध को समाप्त करेंगे। १०

अश्वत्थामा के पिता महातेजस्वी द्रोणाचार्य बूढ़े होने पर भी जवानों से बढ़कर हैं। इस युद्ध में वे भारी-भारी काम करेंगे। सेना रूपी ईंधन में प्रज्वलित और अस्त्र-वेग की हवा से बढ़े हुए अग्नि-तुल्य द्रोणाचार्य युद्ध में पाण्डवों की असंख्य सेना भस्म कर डालेंगे। पुरुषश्रेष्ठ भरद्वाजनन्दन द्रोणाचार्य सब महारथियों में श्रेष्ठ हैं। वे तुम्हारे हित के ख़याल से अद्भुत और शत्रुओं के लिए भयङ्कर कर्म करेंगे। वे सब मूर्द्धाभिषिक्त क्षत्रियों के गुरु हैं। वे समर में सृञ्जयवंशियों को ज़रूर मारेंगे; किन्तु अर्जुन इनके प्रिय शिष्य हैं, इस कारण वे पराक्रमी अर्जुन के गुणों पर रीझकर उन्हें कभी न मारेंगे। महात्मा द्रोण सदा अर्जुन के गुणों की तारीफ़ किया करते हैं। वे अर्जुन को अपने बेटे अश्वत्थामा से भी अधिक गुणी और योद्धा समझते हैं। महारथी द्रोणाचार्य एक ही रथ से, दिव्य अस्त्रों के प्रभाव से, देवताओं, गन्धर्वों और मनुष्यों का संहार कर सकते हैं।

राजन्, तुम्हारे पक्ष के राजसिंह पौरव को मैं महारथी समझता हूँ। आग जैसे सूखी
२० घास के ढेर को जलाती है, वैसे ही वे पाञ्चाल-सेना को मारेंगे। बड़े बली एकरथ राजकुमार सत्यश्रवा भी युद्धभूमि में शत्रु-पक्ष को घटाते हुए विचरेंगे। कर्ण के पुत्र श्रेष्ठ रथी वृषसेन अपने युद्ध-कौशल और पौरुष से तुम्हारे शत्रुओं की सेना का नाश करेंगे। महारथी जलसन्ध जीवन का मोह छोड़कर पाण्डवों से लड़ेंगे। युद्ध-निपुण, पर-वीर-घाती, महाबाहु माधव हाथी पर या रथ पर बैठकर शत्रु-सेना को मारते-मारते अपने प्राण तक देने में पीछे न हटेंगे। मैं उन्हें रथी मानता हूँ। वे बल-पराक्रम में अद्वितीय और विचित्र युद्ध में निपुण हैं; वे निडर होकर तुम्हारे शत्रुओं से भयानक युद्ध करेंगे। हे दुर्योधन, वीर बाह्लीक अतिरथी हैं। वे कभी युद्ध से विमुख नहीं हुए। लड़ते समय युद्धभूमि में उनका रूप यमराज का सा भयङ्कर हो जाता है। महात्मा बाह्लीक रणभूमि में आँधी की तरह चलकर तुम्हारी शत्रु-सेना का संहार
३० करेंगे। राजन्, तुम्हारे सेनापति महारथी सत्यवान् युद्ध में अद्भुत काम करेंगे। वे युद्ध को देखकर डरने का नाम भी नहीं जानते, बल्कि हँसकर उत्साह के साथ शत्रुसेना पर वार करते हैं; वे सहज ही शत्रु-संहार करके विजय के साथ घर को लौट आते हैं। इन्हें तुम शत्रु-सेना के बीच श्रेष्ठ वीर पुरुषों के योग्य काम करते देखोगे। क्रूर काम करनेवाला महारथी राक्षसराज अलम्बुष पाण्डवों के साथ अपने पुराने वैर को याद करके शत्रु-सेना का नाश करेगा। अलम्बुष सब राक्षसों में प्रधान, रथी, मायावी और वैर को कभी न भूलनेवाला है। हाथी की सवारी पर से लड़ने में अद्वितीय और रथ पर से युद्ध करने में निपुण प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भगदत्त और अर्जुन का युद्ध बहुत दिन तक हो चुका है। अन्त को अपने मित्र इन्द्र के सम्मान की रक्षा के लिए भगदत्त ने अर्जुन से मित्रता करके सन्धि कर ली थी। वही युद्ध-विशारद भगदत्त इस समय,
३८ ऐरावत पर सवार इन्द्र की तरह, हाथी पर चढ़कर अर्जुन से लड़ेंगे।

एक सौ अड़सठ अध्याय

पितामह भीष्म और कर्ण का विवाद

पितामह ने कहा—हे कौरव, अचल और वृषक नाम के दोनों दुराधर्ष भाई रथी हैं। वे गान्धार-वीरों में मुख्य, बलवान्, तरुण, दर्शनीय, पुरुषसिंह तुम्हारे शत्रुओं को चौपट कर डालेंगे। हे कुरुराज! पाण्डवों से लड़ने के लिए सदा तुम्हें उत्साहित करनेवाले, मूर्ख, निन्दक, रणकर्कश, कठोर, अपने मुँह अपनी बड़ाई करनेवाले, अभिमानी, नीच-प्रकृति और तुम्हारे मन्त्री, अगुआ, बन्धु, प्यारे सखा कर्ण को मैं पूरा रथी या अतिरथी कुछ नहीं समझता। स्वाभाविक कवच-कुण्डल पास न रहने से और अपने को झूठ-मूठ ब्राह्मण बताकर परशुरामजी से शाप पाने के कारण कर्ण को मैं अर्धरथी समझता हूँ। यह अर्जुन के सामने संग्राम में जाकर फिर जीता न बचेगा।

भीष्म के ये वचन सुनकर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने कहा—पितामह, आपने कर्ण के बारे में जो कुछ कहा सो ठीक है। हर एक युद्ध में अभिमान दिखाकर कर्ण भाग खड़ा होता है। वह निन्दक और प्रमादवश हो जाने के कारण मेरी राय से भी अर्धरथी है।

सञ्जय कहते हैं कि ये बातें सुनकर कर्ण क्रोध से बेचैन हो उठा। वह आँखें निकालकर भीष्म से कहने लगा—पितामह, आप मुझसे अकारण द्वेष रखने के कारण हर घड़ी मुझ पर वाक्य-बाण बरसाया करते हैं। आप मुझे निकम्मे कायर की तरह समझकर सदा मेरा अपमान किया करते हैं। मैं दुर्योधन का ख़याल करके आपकी सब बातें सह लेता हूँ। आप मुझे अर्धरथी कहते हैं, इसलिए सब लोग अर्धरथी ही मानकर मेरा अपमान करेंगे; क्योंकि सभी लोग जानते हैं कि भीष्म कभी झूठ नहीं बोलते। आप सदा कौरवों का अहित सोचा करते हैं, किन्तु राजा दुर्योधन इस बात को नहीं समझते। आप मेरे गुण (युद्धविद्या) के कारण मुझसे डाह करते हैं। १०

युद्ध के समय आपस में फूट डालने के लिए लोग इसी तरह निन्दा करके अपने विरोधी पक्ष का तेज और उत्साह मिटाया करते हैं। अवस्था की अधिकता से, बाल पकने से, धन से या बन्धुओं के बहुत होने से क्षत्रिय महारथियों में नहीं गिना जा सकता। बल से क्षत्रिय, वेदज्ञान से ब्राह्मण, धन से वैश्य और अवस्था से शूद्र बड़े समझे जाते हैं। आप स्नेह और द्वेष के वश होकर अपनी इच्छा के अनुसार रथी और अतिरथी वीरों की ग़लत गिनती कर रहे हैं। हे दुर्योधन, आप सब बातों पर विशेष रूप से विचार करके अपना अनिष्ट चेतनेवाले इन दूषित-प्रकृति पितामह को त्याग दें। हे पुरुषसिंह, एक ही स्वामी के पुराने सैनिक भी अगर फूट जाते हैं तो फिर उन्हें मिलाना या सँभालना कठिन हो जाता है। फिर इस समय आपके यहाँ तो अनेक देशों से अनेक राजाओं की सेना आई है। वे सैनिक यदि ऐसी बातों के कारण फूट जायँगे तो बड़ी आफ़त २० हो जायगी; उन्हें अपने पक्ष में लाना असाध्य काम हो जायगा। मैं देखता हूँ कि आपके पक्ष के इन वीरों में परस्पर वैमनस्य बढ़ता और फूट का रङ्ग चढ़ता जा रहा है। ख़ासकर भीष्म मुँह पर ही मेरा तेज मिटानेवाले कटु वचन कह रहे हैं। भीष्म रथी-अतिरथी-महारथी आदि का हाल क्या जानें! कहाँ रथी-महारथी आदि की विज्ञता और कहाँ भीष्म!

राजन्, मैं अकेला पाण्डवों की सेना पर आक्रमण करूँगा और उसे रोकूँगा। जैसे सिंह को देखकर साँड़ भागते हैं वैसे ही युद्धभूमि में मुझको देखते ही पाण्डव और पाञ्चाल लोग भाग खड़े होंगे। मेरे बाण अचूक हैं। राजन्! कहाँ युद्ध, मार-धाड़, सलाह आदि की बातें और कहाँ बूढ़े, मृत्यु के मुँह का कौर, बुद्धिहीन पितामह भीष्म! मिथ्यादृष्टि के कारण भ्रम में पड़े हुए पितामह अकेले ही सारी पृथ्वी के वीरों से संग्राम कर सकने की डींग हाँका करते हैं। ये अपने सिवा और किसी को वीर या पुरुष ही नहीं समझते। बूढ़े की बात सुनने का शास्त्र में विधान होने पर भी अत्यन्त बूढ़ों की बात न सुननी चाहिए; क्योंकि वे सठिया जाते हैं, फिर से बालक-तुल्य नासमझ हो जाते हैं। हे नरेश, मैं ही अकेला पाण्डवों की सारी सेना को मारूँगा, किन्तु इस युद्ध में सेनापति होने के कारण विजय का सब यश और गौरव भीष्म को ही मिलेगा। इस कारण मैं भीष्म के जीते जी युद्ध न करूँगा। भीष्म के मरने पर सब महारथियों से मैं अकेला युद्ध करने को तैयार हूँ।

भीष्मजी ने कहा—हे राधा के बेटे कर्ण, मुझे बहुत दिन से मालूम है कि कौरवों और ३० पाण्डवों के इस युद्ध में समुद्र-तुल्य शत्रुसेना से युद्ध करने का भार मेरे सिर आ पड़ेगा। इस रोमहर्षण संग्राम के समय मैं आपस की फूट या विरोध नहीं होने देना चाहता। इसी से तुम अब तक जीते देख पड़ते हो। हे सूतपुत्र! मैं बूढ़ा हूँ, और मेरे आगे तुम बालक या नौजवान हो; तो भी मैं तुम्हारी युद्ध करने की श्रद्धा और जीवन की आशा मिटा सकता हूँ। पर इस समय ऐसा करना मैं नहीं चाहता। भगवान् परशुरामजी अपने सब दिव्य अस्त्रों का प्रयोग

करके भी मुझे विचलित नहीं कर सके, तब तुम भला मेरा क्या कर सकते हो ! रे नीच, कुल-घाती, सज्जन पुरुष कभी अपने मुँह से अपनी बड़ाई या अपने गुणों का वर्णन नहीं करते। किन्तु तेरी इन बातों से अत्यन्त उत्तेजना और सन्ताप पैदा होने के कारण मुझे अपने मुँह से तुमको अपने पराक्रम का कुछ परिचय देना पड़ता है। काशी-नरेश की कन्याओं के स्वयंवर में मैं अकेला गया और वहाँ आये हुए सब राजाओं को जीतकर उन कन्याओं को बलपूर्वक रथ पर बिठाकर ले आया। तुम ऐसे और तुमसे भी अधिक पराक्रमी और प्रसिद्ध योद्धा राजाओं को मैं युद्धभूमि में हरा चुका हूँ। हे कर्ण, मैं सच कहता हूँ, तुम्हारे ही कारण कौरवों ने अन्याय करके यह घोर विपत्ति अपने ऊपर बुलाई है। हे वैरनिष्ठ, तुम्हारे भी मरने का समय आ पहुँचा है। इस कारण सँभल-कर युद्ध करना। सदा तुम जिन

अर्जुन की बराबरी का घमण्ड किया करते हो उनसे युद्ध करने का समय आ गया है। अब स्थिर होकर उनका सामना करना। हे दुर्मति, देखूँगा कि तुम इस युद्ध से कैसे जीते बचते हो !

इस प्रकार दोनों वीरों को परस्पर विवाद करते देख झगड़ा शान्त करने के लिए दुर्योधन ने कहा—हे पितामह, यह भारी युद्ध का समय है इसलिए मेरा ख़याल करके आप वही कीजिए जिसमें मेरा भला हो। आप दोनों वीर मेरा बड़ा भारी कार्य सिद्ध करेंगे। अब आप मेरे शत्रु-पक्ष के रथी, अतिरथी आदि का वर्णन कीजिए; क्योंकि रात बीतते ही सवेरे युद्ध छिड़ जायगा। ४२

एक सौ उनहत्तर अध्याय

पाण्डव पक्ष के रथी, अतिरथी आदि का वर्णन

भीष्मजी ने कहा—राजन् ! तुम्हारे पक्ष के रथी, अतिरथी, महारथी और अर्धरथी वीरों का वर्णन मैं कर चुका। अब तुम अगर पाण्डवों के रथी, अतिरथी आदि का वर्णन

सुनना चाहते हो तो सुनो। राजा युधिष्ठिर खुद श्रेष्ठ रथी हैं। वे अग्नि की तरह तुम्हारी सेना को भस्म करते हुए युद्ध-भूमि में विचरेंगे। महाबल और पराक्रम से परिपूर्ण, दस हज़ार हाथियों का बल रखनेवाले भीमसेन में आठ रथियों की शक्ति है। वे गदा और बाण के युद्ध में अद्वितीय और अलौकिक तेजस्वी हैं। नकुल और सहदेव दोनों रथी हैं। वे तेज और रूप में अश्विनीकुमारों के समान हैं। तुम्हारी बदौलत मिले हुए क्लेशों को याद करते हुए वे सेना के अगले भाग में घुसकर साक्षात् रुद्र की तरह सैनिकों का नाश करेंगे। पाण्डव लोग शालवृक्ष के समान ऊँचे और नाप में साधारण मनुष्यों से बित्ता भर बड़े हैं। सभी पाण्डव ब्रह्मचारी, तपस्वी, बली, पराक्रमी, दिग्विजय के समय सब राजाओं को हरानेवाले १० और वेग, प्रहार तथा युद्ध में असाधारण क्षमता रखनेवाले हैं। हे कौरव, कोई भी पुरुष न तो उनके धनुषों पर डोरी चढ़ा सकता है और न उनकी गदा के प्रहार और बाणों को सह सकता है। वे बाल्यावस्था में ही गदा उठाने, बाण चलाने, निशाना मारने, मर्मपीड़ा पहुँचाने, मुक्के-बाज़ी और वेग में अधिक उत्कर्ष प्राप्त कर चुके हैं। वे तुम्हारी सारी सेना को मारेंगे। इस-लिए मैं फिर कहता हूँ कि तुम उनसे युद्ध करने का इरादा छोड़ दो। हे राजेन्द्र, राजसूय यज्ञ में जैसे उन्होंने दिग्विजय किया था, वैसे ही अब भी तुम्हारे सामने वे सब राजाओं को और उनकी सेना को मारेंगे। द्यूतक्रीड़ा के समय कहे गये कठोर वचनों को, और द्रौपदी के क्लेशों को याद करके वे साक्षात् रुद्र की तरह संहार करते हुए युद्ध-भूमि में विचरते देख पड़ेंगे। लाल आँखोंवाले अर्जुन वासुदेव की सहायता पाकर अजेय और असह्य हो रहे हैं। मुझे दोनों दलों में उनके समान कोई नहीं देख पड़ता। देवता, मनुष्य, नाग, राक्षस, यक्ष, गन्धर्व आदि में अर्जुन के समान रथी न तो हुआ है और न आगे होगा। बुद्धिमान् अर्जुन का रथ दिव्य और सुसज्जित है, धनुष सर्वश्रेष्ठ तेजोमय गाण्डीव है, और वासुदेव सहायक हैं। उनके घोड़े हवा के वेग से २० चलनेवाले, कवच अभेद्य, तरकस अक्षय और गदा बहुत भयङ्कर है। वे स्वयं अद्वितीय योद्धा हैं। माहेन्द्र, पाशुपत, कौबेर, याम्य, वारुण आदि दिव्य अस्त्र और वज्र आदि शस्त्र उनके अधिकार में हैं। उन्होंने एक रथ पर बैठकर हिरण्यपुर-निवासी हज़ारों निवातकवच आदि, देवताओं के लिए भी अजेय, दानवों को संग्राम में मारा है। इसलिए उनके समान रथी और कौन है? वे वीर बिना किसी रुकावट के अपनी सेना की रक्षा और तुम्हारी सेना का नाश करेंगे। मैं या द्रोणा-चार्य, इन दोनों के सिवा कोई तीसरा आदमी ऐसा नहीं जो अर्जुन की बाणवर्षा को सह सके। गर्मी के अन्त में हवा जैसे मेघों की सहायता करती है वैसे ही वासुदेव अर्जुन की सहायता करेंगे। अर्जुन जवान और अस्त्रविद्या में निपुण हैं किन्तु मैं और द्रोणाचार्य दोनों बूढ़े हैं।

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, सब राजा लोग भीष्म के मुँह से ये बातें सुनकर और पहले के देखे हुए पाण्डवों के बल-पराक्रम का स्मरण करके घबरा गये। उनके बजुल्ले, माला,

लाल चन्दन आदि से विभूषित मोटे मज़बूत हाथ शक्तिहीन और शिथिल से हो गये। उस समय जान पड़ा कि वे मानों पाण्डवों की मूर्ति और पराक्रम को प्रत्यक्ष देख रहे हैं। २८

एक सौ सत्तर अध्याय

पाण्डव पक्ष के अन्य वीरों का वर्णन

भीष्मजी ने कहा—राजन्, द्रौपदी के पाँचों पुत्र महारथी हैं। विराट के पुत्र उत्तर रथी हैं। महाबाहु अभिमन्यु, अर्जुन और वासुदेव के समान, बाण चलाने में फुरतीले, चित्रयुद्ध-निपुण और दृढ़व्रत होने के कारण महारथी हैं। वे अपने पिता अर्जुन के क्लेशों को याद करके युद्ध में पराक्रम प्रकट करेंगे। महाशूर सात्यकि यादवों में श्रेष्ठ, असहनशील, क्रोधी और निडर हैं। मेरी राय में सात्यकि, उत्तमौजा और युधामन्यु, ये तीनों अमित पराक्रमी और रथी हैं। इन लोगों के पास कई हज़ार घोड़े, रथ, हाथी और सैनिक हैं। ये सब युधिष्ठिर के लिए ज़िन्दगी की परवा छोड़कर लड़ेंगे। ये वीर हवा और आग की तरह परस्पर सहायता करते हुए पाण्डवों के साथ तुम्हारी सेना को चौपट करेंगे। युद्ध में अजेय, महारथी, महापराक्रमी पुरुषश्रेष्ठ राजा विराट और राजा द्रुपद दोनों बूढ़े होने पर भी क्षत्रिय-धर्म का पालन करते हुए स्नेह के मारे अपने सम्बन्धी पाण्डवों की विजय के लिए जी-जान से यत्न करेंगे। १० राजन्, कारणवश कायर भी वीरता प्रकट करते हैं और वीर भी कायर बन जाते हैं। आर्य-चरित्र, महाधनुर्द्धर ये दोनों राजा एक पक्ष में होकर भयङ्कर पराक्रम प्रकट करेंगे और प्राण देकर भी पाण्डवों की विजय का यत्न करने में पीछे नहीं हटेंगे। अलग-अलग एक-एक अक्षौहिणी सेना साथ लिये हुए ये दोनों बूढ़े राजा युद्धभूमि में अपने वंश के गौरव और सम्बन्ध के सम्मान की रक्षा का ख़याल करके अद्भुत काम कर दिखावेंगे। १४

एक सौ इकहत्तर अध्याय

पाण्डव पक्ष के वीरों का वर्णन

भीष्मजी कहते हैं—हे भारत, पाञ्चालराज के बेटे शत्रुविजयी शिखण्डी पाण्डवों की सेना के प्रधान रथी हैं। प्रभद्रकगण और बहुत सी पाञ्चाल सेना साथ लिये हुए शिखण्डी युद्ध में प्रवृत्त होकर तुम्हारी सेना के भीतर अपना उत्तम यश फैलाते हुए अपने रथों से बड़े-बड़े अद्भुत काम कर दिखावेंगे। राजन्, द्रोणाचार्य के शिष्य महारथी धृष्टद्युम्न पाण्डवों के प्रधान सेनापति हैं। मेरी समझ में वे अतिरथी हैं। प्रलयकाल में रुद्र जैसे प्रजा का संहार करते हैं वैसे ही धृष्टद्युम्न भी क्रोधित होकर कौरव-सेना का नाश करेंगे। युद्ध-प्रिय लोग धृष्टद्युम्न की

देवसेना-सदृश अपार सेना की उपमा समुद्र से देते हैं। धृष्टद्युम्न का पुत्र अभी बालक होने के कारण अधिक परिश्रम नहीं कर सकता; इस कारण उसे मैं अर्धरथी गिनता हूँ। शिशुपाल के पुत्र महारथी धृष्टकेतु पाण्डवों के पुराने सम्बन्धी हैं। वे भी इस समय अपने पुत्र के साथ पाण्डवों का प्रिय करने के लिए युद्ध में अद्भुत कर्म करेंगे। महाराज क्षत्रदेव पाण्डवों की ओर १० प्रधान रथी और क्षत्रिय-धर्म के अनुरागी हैं। महातेजस्वी जयन्त और महारथी सत्यजित् आदि वीर पाञ्चालगण क्रुद्ध गजराज की तरह घोर युद्ध करेंगे। महाबल-पराक्रमी राजा अज और भोज पाण्डवों के हित के लिए युद्ध में प्रवृत्त होकर पराक्रम दिखावेंगे। ये सब योद्धा फुरतीले, विचित्र युद्ध में निपुण, पराक्रमी और जमकर युद्ध करनेवाले हैं। युद्धप्रिय केकय-राजकुमार काशिक, नील, सूर्यदत्त, शङ्ख और मदिराश्व, ये पाँचों भाई रथी और अस्त्र-निपुण हैं। इनमें योद्धाओं के सभी लक्षण मौजूद हैं। महाराज वार्द्धक्षेमि को मैं महारथी मानता हूँ। राजा चित्रायुध रथी हैं। वे अर्जुन के भक्त और संग्राम में यश प्राप्त करनेवाले कर्म करने में निपुण हैं। पुरुषश्रेष्ठ चेकितान और सत्यधृति भी पाण्डव-पक्ष के महारथी हैं। व्याघ्रदत्त और चन्द्रसेन श्रेष्ठ रथी हैं। वासुदेव और भीमसेन के समान महावीर पराक्रमी राजा सेनाबिन्दु भरसक २० पराक्रम प्रकट करके तुम्हारी सेना से घमासान युद्ध करेंगे। तुम जैसे अपने यहाँ द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और मुझको प्रशंसनीय योद्धा समझते हो वैसे ही सेनाबिन्दु को भी समझो। काशी के राजा सेनाबिन्दु का दूसरा नाम क्रोधहन्ता भी है। वे एकरथ हैं और बहुत फुरती के साथ बाण चलाते हैं। हे दुर्योधन! युद्धप्रिय, युवा, प्रबल पराक्रमी, पाञ्चाल-राजकुमार सत्यजित् अकेले आठ रथियों का काम कर सकते हैं। इस समय वे धृष्टद्युम्न के समान अतिरथी हो गये हैं। वे भी पाण्डवों के यश के लिए अद्भुत युद्ध करेंगे। पाण्डवों पर प्रेम रखनेवाले, शूर, महावीर्य पाण्ड्यनरेश रथी हैं। दृढ़ धनुष धारण करनेवाले पाण्ड्यनरेश भी पाण्डवों के प्रिय के लिए प्रशंसनीय अद्भुत युद्ध करेंगे। हे कौरवश्रेष्ठ, श्रेणिमान् और वसुदान नाम के राजाओं २७ को मैं अतिरथी समझता हूँ। वे भी पाण्डवों का पक्ष लेकर तुमसे युद्ध करेंगे।

एक सौ बहत्तर अध्याय

पाण्डवों के पक्ष के वीरों का वर्णन

भीष्मजी ने कहा—हे भरतकुलश्रेष्ठ, पाण्डव पक्ष के महारथी रोचमान युद्ध में इन्द्र के समान अद्भुत काम कर दिखावेंगे। महाबली और पराक्रमी भीमसेन के मामा कुन्तिभोज, जिन्हें पुरुजित् भी कहते हैं, अतिरथी हैं। वे वीर, महाधनुर्धर, अस्त्रज्ञ, चित्रयोधी और शक्तिशाली होने के कारण वैसे ही तुम्हारी सेना से युद्ध करेंगे जैसे इन्द्र दानवों से लड़ते हैं।

उनके साथ युद्ध-निपुण अनेक योद्धा हैं। पाण्डवों के हितचिन्तक कुन्तिभोज, भानजों के लिए, अद्भुत युद्ध करेंगे। युद्धप्रिय, मायावी, राक्षसश्रेष्ठ घटोत्कच भीमसेन का पुत्र है; उसे भी मैं किसी महारथी से कम नहीं समझता। वह भी अपने साथी वीर राक्षसों को लेकर तुम्हारी सेना से दारुण युद्ध करेगा। राजन्, ये और वासुदेव प्रमुख अन्य अनेक देशों के राजा पाण्डवों की ओर से लड़ने के लिए जमा हुए हैं।

ये सब मेरे कहे हुए प्रधान रथी, अतिरथी, महारथी और अर्धरथी अर्जुन के बल से सुरक्षित रहकर युधिष्ठिर की भयानक सेना का सञ्चालन करेंगे। जय की इच्छा रखनेवाले १० और युद्ध की मायाओं में निपुण इन सब वीरों के साथ युद्ध करके या तो मैं जय प्राप्त करूँगा या मर जाऊँगा। सन्ध्याकाल में एकत्र उदित चन्द्रमा और सूर्य के समान, चक्र और गाण्डीव धारण करनेवाले, श्रीकृष्ण और अर्जुन सर्वश्रेष्ठ महारथी हैं। श्रीकृष्ण, अर्जुन और उक्त सब रथी, अतिरथी आदि से मैं अकेला युद्ध करूँगा और उन्हें रोकूँगा।

राजन्, मैंने पाण्डवपक्ष के प्रधान-प्रधान रथी, अतिरथी और अर्धरथी वीरों का वर्णन तुम्हारे आगे कर दिया। मैं जब तक जीता रहूँगा तब तक उक्त सब वीरों को और वासुदेव सहित अर्जुन को अपने दिव्य अस्त्रों के प्रभाव से रोकता रहूँगा; किन्तु केवल द्रुपदकुमार शिखण्डी के ऊपर मैं प्रहार न करूँगा। सब लोग जानते हैं कि मैं राज्य का अधिकार छोड़कर पिता का प्रिय करने को जीवन भर के लिए ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर चुका हूँ। इसी कारण मैंने अपने भाई चित्राङ्गद को कौरवों का राजा और बालक विचित्रवीर्य को युवराज बना दिया था। पृथ्वी भर के सब राजा मुझे बाल-ब्रह्मचारी समझकर देवव्रत कहते हैं। इस कारण मैं स्त्री पर या पहले स्त्री रहनेवाले पुरुष पर कभी हाथ नहीं उठा सकता। हे दुर्योधन, तुमने सुना भी होगा कि शिखण्डी पहले स्त्री था, बाद को पुरुष हो गया है। इसलिए शिखण्डी के साथ मैं युद्ध नहीं करूँगा। हे कुरुकुलश्रेष्ठ, मैं लड़ने के लिए अपने आगे उपस्थित अन्य सब राजाओं को मारूँगा—केवल युधिष्ठिर आदि पाँचों पाण्डव मेरे लिए अवध्य हैं; मैं उन्हें जान से नहीं मारूँगा। २१

अम्बोपाख्यानपर्व

एक सौ तिहत्तर अध्याय

अम्बा की कथा का आरम्भ

दुर्योधन ने कहा—हे पितामह, आप पहले सोमकों और पाञ्चालों को मारने की प्रतिज्ञा कर चुके हैं। भला क्रूरकर्मा आततायी शिखण्डी को, युद्ध में अपने ऊपर बाण-वर्षा करते देखकर भी, आप क्यों न मारेंगे?

भीष्मजी ने कहा—हे दुर्योधन, जिस कारण मैं शिखण्डी को न मारूँगा, वह कहता हूँ। तुम इन सब राजाओं के साथ ध्यान से सुनो। मेरे पिता जगत्प्रसिद्ध महाराज शान्तनु का स्वर्गवास होने पर मैंने, पहले की प्रतिज्ञा के अनुसार, छोटे भाई चित्राङ्गद को राजगद्दी पर बिठा दिया। कुछ समय के बाद चित्राङ्गद की भी मृत्यु हो गई। तब मैंने माता सत्यवती की सम्मति से विधिपूर्वक बालक विचित्रवीर्य को राजगद्दी का स्वामी बनाया। विचित्रवीर्य धर्मानुसार मेरे छोटे भाई थे, इसी लिए वे सदा सब कामों में मेरी आज्ञा लेते थे। मैंने विचित्रवीर्य का ब्याह करने का विचार किया। इसी समय सुना कि काशिराज की अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका नाम की तीन परमसुन्दरी कन्याओं का स्वयंवर होनेवाला है। अम्बा सबसे बड़ी, अम्बालिका सबसे छोटी और अम्बिका मँझली थी। पृथ्वीमण्डल के सब राजा स्वयंवर का निमन्त्रण पाकर काशीपुरी में पहुँचे। मैं
११ भी अकेला ही रथ पर सवार होकर काशी गया। वहाँ जाकर मैंने सब अलङ्कारों से शोभित तीनों कन्याओं को स्वयंवर की सभा में देखा। पराक्रम ही उन कन्याओं का मूल्य था। मैंने बलपूर्वक हरकर उन तीनों कन्याओं को रथ पर बिठा लिया। फिर मैं बार-बार ललकारकर कहने लगा कि शान्तनु का पुत्र भीष्म तुम लोगों के सामने कन्याओं को हरे लिये जाता है। तुम लोग कन्याओं को छुड़ा लेने का यत्न करो।

राजा लोग मेरे इस काम को और ललकारने को नहीं सह सके। वे अस्त्र-शस्त्र उठा-उठाकर अपने सारथियों को युद्ध के लिए रथ सजाने की आज्ञा देने लगे। इसके बाद वे सब राजा हाथियों ऐसे रथों पर चढ़कर मेरे सामने आ गये। उनके साथ के वीर योद्धा भी हाथियों और हृष्ट-पुष्ट घोड़ों पर चढ़-चढ़कर शस्त्र ताने हुए मुझ पर आक्रमण करने के लिए दौड़ पड़े। उन सबने चारों ओर से मुझे घेर लिया। हे भरतकुलतिलक, तब अवज्ञा की हँसी हँसकर मैंने दम भर में अपने प्रज्वलित तीक्ष्ण अव्यर्थ बाणों से उन राजाओं की सुवर्ण-मण्डित ध्वजाओं के
२० दण्ड काट-काटकर पृथ्वी पर गिरा दिये। मैंने बाणवर्षा करके एक ही एक बाण से उनके वाहनों और सारथियों को मार गिराया। जिस तरह इन्द्र सब दानवों को सहज में जीत लें उसी तरह मैंने युद्ध में सब राजाओं को नीचा दिखा दिया। मेरी फुर्ती और युद्धकौशल देखकर सब राजा युद्ध से भाग खड़े हुए। सब राजाओं को हराकर मैं उन कन्याओं को लिये हुए हस्तिनापुर को लौट आया। हे दुर्योधन, मैंने भाई के ब्याह के लिए वे तीनों कन्याएँ माता
२३ सत्यवती को सौंप दीं और उस अद्भुत युद्ध का हाल भी उनसे कह दिया।

शान्तनु का पुत्र भीष्म तुम लोगों के सामने कन्याओं को हरे लिए जाता है। तुम लोग कन्याओं के छुड़ा लेने का यत्न करो। (पृ०

एक सौ चौहत्तर अध्याय

अम्बा और भीष्म का संवाद

भीष्मजी कहते हैं कि हे कुरुकुल-तिलक, दाशराज-नन्दिनी वीर-जननी माता सत्यवती के पास पहुँचकर, उन्हें प्रणाम करके, मैंने कहा—माता, मैं सब राजाओं को हराकर विचित्रवीर्य के लिए स्वयंवर से काशिराज की तीन कन्याएँ हर लाया हूँ। इनका मूल्य पराक्रम था, इसलिए बाहुबल के द्वारा इन्हें ले आया हूँ। हे दुर्योधन, इस आनन्द-समाचार को सुनकर सत्यवती की आँखों में आनन्द के आँसू भर आये। उन्होंने स्नेह से मेरा मस्तक सूँघकर कहा—बेटा, बड़े भाग्य की बात है कि तुमने सब राजाओं को जीतकर अपना यश प्रसिद्ध कर दिया। विवाह का समय उपस्थित होने पर, सत्यवती की अनुमति से, काशिराज की बड़ी कन्या अम्बा ने लज्जा के साथ मुझसे कहा—हे भीष्म, आप सब शास्त्रों के मर्म और धर्म के जानकार हैं। इसलिए मैं जो धर्म-सङ्गत वचन कहती हूँ उनका अनुमोदन कीजिए। मैं पहले मन ही मन शाल्व राजा को अपना पति मान चुकी हूँ, और वे भी गुप्त रूप से मुझे अपनी पत्नी स्वीकार कर चुके हैं। इस घटना का कुछ वृत्तान्त पिता को भी नहीं मालूम है। हे धर्मपरायण, आप धर्म का उल्लङ्घन करके किस तरह दूसरे की इच्छा रखनेवाली स्त्री को अपने घर में रक्खेंगे? हे भीष्म! आप पवित्र कुरुकुल में उत्पन्न हुए हैं, इसलिए मुझे अपने घर में रखना आपके लिए और भी अनुचित है। हे भरतकुल-तिलक, इस बारे में विशेष रूप से विचार करके वह उपाय कीजिए जिसमें कल्याण हो और धर्म की हानि न हो। हे भीष्म, महाराज शाल्व अवश्य मेरी राह देख रहे होंगे; इसलिए आप मुझे उनके पास जाने दीजिए। हे महाबाहु, आप मुझ पर प्रसन्न हों। मैंने सुना है, आप पृथ्वीमण्डल पर सत्यव्रत कहलाते हैं। १०

एक सौ पचहत्तर अध्याय

शाल्व के अस्वीकार करने पर अम्बा का मुनियों के आश्रमों में जाकर अपना हाल कहना और सहायता मांगना

भीष्म पितामह कहते हैं—राजन्! इसके बाद मैंने माता सत्यवती, मन्त्रीगण, ऋत्विज, पुरोहित आदि से सब हाल कहकर, उनकी अनुमति से, काशिराज की बड़ी लड़की अम्बा को शाल्व राजा के पास जाने की आज्ञा दे दी। अम्बा के साथ वृद्ध ब्राह्मण लोग और उसकी धाय भी गई। राजधानी से निकलकर अम्बा यथासमय शाल्व के पास पहुँची और उनसे कहने लगी—हे पुरुषश्रेष्ठ, मैं आपके पास पहले की स्वीकृति के अनुसार आई हूँ। अब आप मुझे पत्नीरूप से ग्रहण कीजिए।

हे दुर्योधन, तब शाल्व ने मुसकुराकर अम्बा से कहा—हे सुन्दरी, तुम पहले दूसरे के घर रह चुकी हो, इसलिए मैं तुम्हारे साथ विवाह नहीं कर सकता। तुम फिर भीष्म के पास चली जाओ। भीष्म ने हाथ पकड़कर तुम्हें रथ पर जब बिठाया था तब तुम प्रसन्नता के साथ बैठ गई थीं। भीष्म उस युद्ध में तुम्हें जीतकर ले गये हैं, इसलिए मैं तुम्हें अपने घर में नहीं रख सकता। तुम्हारी ऐसी अन्यपूर्वा (दूसरे की) स्त्री को मुझ सरीखा ज्ञानी और औरों को धर्म का उपदेश करनेवाला पुरुष कैसे अपनी स्त्री बना सकता है! हे भद्रे, तुम भीष्म के पास या जहाँ जी चाहे वहाँ चली जाओ; देर न करो।

राजन्, तब शाल्व पर आसक्त और कामदेव के बाणों से पीड़ित अम्बा ने शाल्व से कहा—हे शत्रुओं को दुःख देनेवाले महाराज, ऐसी बात न कहिए। आपका यह कहना ठीक नहीं है। भीष्म जिस समय मुझे बलपूर्वक हर ले चले थे उस समय, या और कभी, मेरे हृदय में उनके प्रति अनुराग का सञ्चार नहीं हुआ। वे जिस समय अन्य राजाओं को हराकर बलपूर्वक मुझे हरे लिये जा रहे थे उस समय मैं रो रही थी। वे मुझे हरकर ले गये, इसमें मेरा कुछ अपराध नहीं है। मैं दूषित नहीं हुई हूँ। आप के ही ऊपर मुझे अनुराग है। इसलिए मुझे स्वीकार कीजिए। निरपराध और शरण में आई हुई स्त्री का त्याग करना धर्म के विरुद्ध और निन्दनीय कार्य है। मैं भीष्म से आज्ञा लेकर उनकी सम्मति से यहाँ आई हूँ। यह भी मैंने सुना है कि महात्मा भीष्म अपने लिए नहीं, अपने भाई के लिए हम तीनों बहनों को हर ले गये थे। वे स्वयं मुझसे ब्याह करना नहीं चाहते। मेरी छोटी बहनों का ब्याह भी उन्होंने अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य के साथ कर दिया है। राजन्, मैं अपने सिर की क़सम खाकर कहती हूँ कि आपके सिवा दूसरे पुरुष को मैं नहीं चाहती। अपनी क़सम खाकर कहती हूँ कि मैं अन्यपूर्वा (दूसरे की) स्त्री नहीं हूँ। मैं इस समय आपके प्रणय और प्रसाद की इच्छा से स्वयं आई हूँ। इसलिए मुझे आप स्वीकार कर लीजिए।

१०

दया कीजिए। मैंने जन्म भर ब्रह्मचारिणी रहकर तप करने का निश्चय किया है। अत्यन्त कठिन तप भी मैं करूँगी। मैंने मोहवश पूर्व-जन्म में जो पाप किये हैं उन्हीं का यह फल इस जन्म में भोग रही हूँ। फिर पिता आदि आत्मीय जनों के पास जाने को जी नहीं चाहता। शाल्व ने भी मुझे त्याग दिया है। इस समय सब ओर से निराश और निराश्रय होकर मैंने तप करने का ही निश्चय कर लिया है। आप लोग देव-तुल्य हैं; इसलिए कृपा करके मुझे इस आश्रम में स्थान दीजिए।

महात्मा शैखावत्य ऋषि ने लोक और वेद के अनेक दृष्टान्त और युक्तियाँ दिखाकर अम्बा को समझाया, आश्वास दिया। इसके बाद वे अन्य ब्राह्मणों से

४५ मिलकर अम्बा का दुःख दूर करने के बारे में सलाह करने लगे।

एक सौ छिहत्तर अध्याय

ब्राह्मणों का कर्तव्य-निश्चय; राजर्षि होत्रवाहन तथा महात्मा अकृतव्रण की सलाह

भीष्मजी कहते हैं कि इसके बाद उस कन्या का कार्य सिद्ध करने के विचार से सब मुनि मिलकर सलाह करने लगे। किसी ने कहा कि इसे पिता के घर पहुँचा दो। किसी ने कहा कि चलकर भीष्म को उलाहना देकर समझाओ। किसी ने कहा कि शाल्व से अनुरोध करो। किसी ने कहा कि शाल्व ने जवाब दे दिया है, इसलिए उनके पास जाना ठीक न होगा। उन ब्रह्मचारी तपस्वियों ने कुछ देर तक आपस में यों तर्क-वितर्क करके अम्बा से कहा—भद्रे, तुम्हारा यह काम हमारी शक्ति के बाहर है; हम कुछ नहीं कर सकते। इसलिए हम तुम्हें जो हित की बात बताते हैं उसे सुनो। जन्म भर कठोर तप या संन्यास का इरादा छोड़ दो और अपने पिता के घर जाओ। तुम्हारे पिता काशिराज ही इस बारे में कुछ कर देंगे। तुम भी वहाँ जाने से सब कल्याण प्राप्त करोगी और सुख से रह सकोगी। देखो,

माता, [illegible] सब राजाओं को हराकर वि.चित्रवीर्य के स्वयवरसे काशिराज की
तीन कन्याएँ हर लाया हूँ ।

(पृ० १८२१)

तुम स्त्री-जाति हो। पिता से बढ़कर कन्या का रक्षक दूसरा नहीं है। पिता या पति ही इस लोक में स्त्री की अनन्य गति है। अच्छी दशा में पति और सङ्कट की दशा में पिता स्त्री-जाति का आश्रय-स्थल होता है। फिर तुम सुकुमारी राजकुमारी हो, इसलिए तुम संन्यास का कठिन व्रत, क्लेशदायक होने के कारण, पाल नहीं सकोगी। आश्रम में रहने से लोकापवाद आदि और दोष भी उत्पन्न हो सकते हैं। पिता के यहाँ उन दोषों से तो बची रहोगी।

कुछ और ऋषियों ने कहा—हे राजकुमारी, इस निर्जन गहन वन में अकेली रहोगी तो शिकार वग़ैरह के लिए इधर आनेवाले राजा और राजकुमार तुम्हें प्राप्त करने की इच्छा करेंगे। इसलिए तुम वन में रहकर जन्म भर तप करने का इरादा छोड़ दो। १०

अम्बा ने कहा—हे तपस्वियो, मैं अब लौटकर पिता के घर नहीं जा सकती; वहाँ कौन मुँह लेकर जाऊँ? वहाँ जाऊँगी तो भाई-बन्धु अवश्य अनादर और घृणा की दृष्टि से देखेंगे। लड़कपन भर पिता के घर में रही हूँ। अब वहाँ न जाकर आप लोगों के आश्रम में रहकर इसलिए तप करूँगी कि दूसरे जन्म में भी ऐसी विपत्ति का सामना न करना पड़े।

भीष्मजी कहते हैं—हे दुर्योधन, ऋषि लोग इस तरह कर्तव्य के विषय में सोच ही रहे थे कि परम तपस्वी राजर्षि होत्रवाहन वहाँ आ पहुँचे। मुनियों ने उनका स्वागत किया, आसन दिया। जल, भोजन आदि से विधिपूर्वक सत्कार होने के बाद कुछ देर तक विश्राम करके जब राजर्षि होत्रवाहन बैठे तब फिर वे सब ऋषि अम्बा के बारे में बातचीत करने लगे। राजर्षि होत्रवाहन अम्बा के नाना थे। इस कारण सब हाल सुनकर और अम्बा की वह दशा देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। वे अम्बा को गोद में बिठाकर धीरज देने लगे। उन्होंने फिर अम्बा के २०

मुँह से सब वृत्तान्त विस्तार के साथ सुना। उसके बाद अत्यन्त दुःख से विह्वल राजर्षि अपने मन में कर्तव्य का निश्चय करके अम्बा से बोले—बेटी, तुम अब पिता के घर न जाना। मैं तुम्हारा नाना हूँ, इसलिए तुम्हारे सब दुःख और क्लेश दूर करने की चेष्टा करूँगा। तुम मेरे

साथ चलो। तुम्हारा सूखा हुआ मुखड़ा देखने से ही तुम्हारे हृदय के दुःख की थाह लगती है। इस समय तुम मेरे कहने से महात्मा परशुराम के पास जाओ। वे तुम्हारे सब शोक और दुःख को मिटा देंगे। भीष्म अगर उनका अनुरोध न मानेंगे तो युद्ध में उनके हाथ से मारे जायँगे। इसलिए तुम प्रलयकाल के अग्नि के समान प्रचण्ड और तेजस्वी परशुराम के पास चलो। वे तुम्हारा शोक शान्त करेंगे।

सिर झुकाये आँसू बहाती हुई अम्बा ने नाना को प्रणाम करके मधुर स्वर से कहा—नानाजी, आपकी आज्ञा से मैं उन्हीं जगत्प्रसिद्ध भार्गव की शरण में चलूँगी। किन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ कि कहाँ, किस तरह, कब जाने से उनसे मेरी भेंट होगी और किस तरह वे मेरा यह दारुण दुःख दूर करेंगे।

होत्रवाहन ने कहा—हे कल्याणरूपिणी, सत्यसन्ध भार्गव महेन्द्राचल के शिखर पर
३० रहते हैं। वहाँ वेदज्ञ ऋषियों, गन्धर्वों और अप्सराओं का निवास है। वहाँ जाकर तुम उन्हें दुष्कर तपस्या में तत्पर देखोगी। तुम वहाँ जाकर, सिर झुकाकर, उन्हें प्रणाम करना और अपना हाल तथा मेरा सँदेसा कहना। वे सब धनुर्धर पुरुषों में श्रेष्ठ वीरवर परशुराम मेरे सखा और स्नेह रखनेवाले हितचिन्तक हैं। इसमें सन्देह नहीं कि मेरा नाम लेने से वे तुम्हारा मनोरथ पूरा करेंगे।

राजर्षि होत्रवाहन इस तरह कह रहे थे कि परशुराम के प्रिय शिष्य अकृतव्रण अचानक वहाँ आ गये। सभा में स्थित सब ऋषि और वृद्ध राजर्षि होत्रवाहन उनके सम्मान के लिए उठ खड़े हुए। सब लोग सत्कार करके उनको घेरकर बैठ गये। इसके बाद प्रसन्नतापूर्वक सब लोग तरह-तरह की बातें करने लगे। बातचीत के बाद होत्रवाहन ने अकृतव्रण से पूछा—
४० वेदज्ञ पुरुषों में श्रेष्ठ हे महाबाहु, महाप्रभावशाली परशुराम इस समय कहाँ हैं?

अकृतव्रण ने कहा—राजन्, महात्मा परशुराम के आप प्रिय मित्र हैं, इसलिए वे सदा आपकी चर्चा किया करते हैं। मुझे जान पड़ता है, कल सबेरे वे आपसे मिलने के लिए यहाँ आवेंगे। इसी स्थान में आप उनके दर्शन पावेंगे। राजन्, यह कन्या किसकी है? आपके साथ इसका क्या सम्बन्ध है? और यह वन में क्यों आई है?

होत्रवाहन ने कहा—महाशय, यह काशिराज की प्यारी कन्या मेरी नातिन है। इसका नाम अम्बा है। कुछ दिन हुए, इन तीनों बहनों का स्वयंवर किया गया था। कन्या-लाभ के लिए पृथ्वी के सब राजा उस स्वयंवर-सभा में आये थे। बड़ी भीड़ और धूमधाम हुई थी। महावीर भीष्म सब राजाओं को जीतकर इन तीनों बहनों को हरकर हस्तिनापुर ले गये और माता सत्यवती की सलाह से अपने भाई विचित्रवीर्य के साथ तीनों कन्याओं के ब्याह का
५० उद्योग करने लगे। यह जानकर अम्बा ने मन्त्रियों के सामने भीष्म से कहा कि हे वीर, मैं

मन में शाल्व को अपना पति मान चुकी हूँ। इस कारण दूसरे को चाहनेवाली स्त्री के साथ अपने भाई का व्याह करना आपके योग्य कार्य नहीं है।

यह सुनकर, मन्त्रियों से सलाह लेकर, भीष्म ने सत्यवती की राय से अम्बा को छोड़ दिया। भीष्म के हाथ से छुटकारा पाकर अम्बा प्रसन्नतापूर्वक शाल्व के पास गई और कहने लगी कि महाराज, भीष्म ने मुझे त्याग दिया है, अब आप मेरे धर्म की रक्षा कीजिए; क्योंकि मैं पहले से ही मन में आपको अपना पति मान चुकी हूँ। हे अकृतव्रण, किन्तु शाल्व ने अम्बा के चरित्र को दूषित समझकर उसे नहीं स्वीकार किया। वहाँ से भी निराश होकर यह तपस्या करने यहाँ आई है। यहाँ वंश का परिचय पाकर मुझे मालूम हुआ कि यह मेरी नातिन है। यह कन्या भीष्म को ही अपने सब दुःखों और दुर्गतियों का आदि-कारण बताती है।

अम्बा ने कहा—हे तपोधन, मेरे नाना महाराज होत्रवाहन ने बिलकुल ठीक कहा है। लज्जा के कारण और अपमान के डर से मैं फिर अपने पिता की नगरी में नहीं जा सकती। अब भगवान् परशुराम जो करने के लिए मुझसे कहेंगे उसी को मैं अपना कर्तव्य समझूँगी। ५९

एक सौ सतहत्तर अध्याय

परशुरामजी का आगमन

अकृतव्रण ने कहा—अम्बा, तुम्हें दो ओर से दो तरह का दुःख है। उनमें से तुम किसको मिटाने की इच्छा रखती हो? जो तुम चाहो कि शाल्व को तुमसे व्याह करने के लिए विवश किया जाय तो महात्मा परशुराम तुम्हारी प्रसन्नता और भलाई के लिए वह भी करेंगे; अथवा जो तुम भीष्म की हार देखना चाहती हो तो गुरुवर वह भी कर सकते हैं। राजर्षि होत्रवाहन के और तुम्हारे वचनों को सुनकर आज ही कर्तव्य का निश्चय कर लेना आवश्यक जान पड़ता है।

अम्बा ने कहा—भगवन्, मुझे राजा शाल्व के ऊपर आसक्त न जानकर ही भीष्म हर ले गये थे। यह जानकर, न्याय के अनुसार, भीष्म या शाल्व के साथ जैसा व्यवहार करना आपको उचित जान पड़े, वैसा ही निश्चय कीजिए। मैं अपने दुःख का कारण कह चुकी।

अकृतव्रण ने कहा—हे राजकुमारी, तुम धर्म की ओर दृष्टि रखकर जो कह रही हो वह ठीक है। अब तुम मेरी बात सुनो। हे कल्याणरूपिणी! अगर भीष्म तुम्हें हस्तिनापुर न ले जाते तो शाल्व, परशुरामजी की आज्ञा से, तुम्हें सादर ग्रहण कर लेते। भीष्म तुम्हें बलपूर्वक हर ले गये, इसी से शाल्व को तुम्हारे चरित्र पर सन्देह हो गया है। भीष्म को अपने पौरुष का बड़ा घमण्ड है और वे सर्वत्र विजयी होते हैं। इसलिए उन्हें दण्ड देना ही ठीक जान पड़ता है। १०

अम्बा ने कहा—हे तपोधन, संग्राम में भीष्म को हराना या मारना ही मेरा उद्देश्य है। भीष्म या शाल्व, जिसे आप मेरे इस दुःख का कारण और दोषी समझिए उसी को दण्ड दीजिए।

इस तरह बात-चीत करने में वह दिन और रात भी बीत गई। सवेरे जटा-वल्कल-धारी, तेज की राशि, महातपस्वी परशुराम अपने शिष्यों के साथ राजर्षि होत्रवाहन के पास आये। वे परशु, खड्ग, धनुष आदि धारण किये हुए थे। वे सब मुनि, होत्रवाहन, अम्बा और अकृतव्रण आदि सब लोग उन्हें देखकर उठ खड़े हुए। सबने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और यथोचित सत्कार के साथ उनकी पूजा की। इसके बाद परशुरामजी आसन पर बैठे और २० होत्रवाहन के साथ बात-चीत करने लगे। सृञ्जयराज होत्रवाहन ने अवसर देखकर मधुर स्वर में कहा—भगवन्! यह काशिराज की कन्या, मेरी नातिन, अम्बा है। इसका जो उपकार आपको करना होगा सो इसी के मुँह से सुनिए।

परशुरामजी ने अपना प्रयोजन कहने के लिए अम्बा को आज्ञा दी। अम्बा उनके पास जाकर, कमल-सदृश कोमल हाथों से उनके पैर छूकर, सामने खड़ी हो गई और शोक के आँसू

बहाती हुई कहने लगी—मैं आपकी शरण में आई हूँ। परशुरामजी ने कहा—हे कल्याणरूपिणी, तुम जैसे राजर्षि होत्रवाहन को प्यारी हो वैसे ही मुझे भी प्यारी हो। इसलिए तुम मेरे आगे अपने दुःख का सब हाल कहो। मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा।

अम्बा ने कहा—भगवन्, मैं आपकी शरण में हूँ। आप मुझे इस शोक-सागर के पार लगाइए। भीष्मजी कहते हैं कि हे दुर्योधन, परशुरामजी अम्बा के असाधारण रूप, जवानी और सुकुमारता को देखकर बहुत चिन्तित हुए। बहुत देर तक वे सोचते रहे कि अम्बा क्या कहेगी। फिर कृपा-पूर्ण स्वर में उन्होंने कहा—तुम्हारी क्या इच्छा है, शीघ्र कहो। तब अम्बा ने आदि से अन्त तक उनसे अपने दुःख का ३० सब हाल कहा। सब हाल सुनकर, कर्तव्य निश्चय करके, परशुरामजी ने कहा—बेटी, मैं भीष्म

के पास दूत भेजूँगा; वे अवश्य मेरा कहा मान लेंगे। यदि मेरा कहा नहीं मानेंगे तो मैं अपनी अस्त्र-विद्या के बल से युद्ध में उन्हें और उनके मन्त्रियों को अवश्य मारूँगा। अथवा जो तुम वहाँ ब्याह करना नापसन्द करो तो कहो, मैं शाल्व को तुमसे ब्याह करने की आज्ञा दूँ।

अम्बा ने कहा—शाल्व के ऊपर तो पहले से ही मुझे अनुराग है। यही सुनकर भीष्म ने मेरा छुटकारा कर दिया है। इसके बाद मैंने शाल्व के पास जाकर उनसे अपने जी का हाल कहा और ब्याह करने के लिए प्रार्थना की। किन्तु उन्होंने मेरे चरित्र पर सन्देह करके मुझे त्याग दिया। आप अपनी बुद्धि से इन बातों पर विचार करके कर्तव्य ठीक कीजिए। महावीर भीष्म मुझको बलपूर्वक हर ले गये, और विवश होकर मैं अपनी इच्छा पूरी नहीं कर सकी। इस कारण भीष्म ही मेरे दुःखों की जड़ हैं। आप युद्ध में उन्हें मारिए। उन्हीं के कारण ऐसे दुःख में पड़कर मैं उन्हीं का अनिष्ट करने के लिए उद्यत हूँ। भीष्म अत्यन्त लोभी, नीच-प्रकृति और सदा विजय प्राप्त करने के कारण घमण्डी हैं। इसलिए उन्हें दण्ड देकर उनका गर्व चूर्ण करना ही मुझे ठीक जान पड़ता है। उन्होंने मेरा अपकार किया है, इस कारण पहले से ही उन्हें मरवाने का विचार मैं कर चुकी हूँ। आप मेरे इस मनोरथ को पूरा कीजिए। इन्द्र ने जैसे वृत्रासुर को मारा था वैसे ही आप भी भीष्म को मारिए। ४२

एक सौ अठहत्तर अध्याय

परशुरामजी का कुरुक्षेत्र में जाना और भीष्म से बातचीत करना

भीष्मजी कहते हैं कि हे दुर्योधन, अम्बा के बारम्बार यों कहने और रोने पर महात्मा परशुराम ने कहा—हे काशिराज की कन्या, मैंने शस्त्रत्याग कर दिया है। वेदज्ञ ब्राह्मणों के प्रयोजन के बिना मैं कभी शस्त्र धारण नहीं कर सकता। युद्ध के सिवा और जो कहो सो करने के लिए मैं तैयार हूँ। देखो, महाबाहु भीष्म और शाल्व दोनों मेरा कहा मान लेंगे। इसलिए मैं उसी की चेष्टा करूँगा; तुम शोक मत करो। मैं प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि ब्राह्मणों की आज्ञा के बिना मैं शस्त्र नहीं उठाऊँगा, इसी से लाचार हूँ।

अम्बा ने कहा—भीष्म ही मेरे दुःख और दुर्भाग्य की जड़ हैं। आप मेरा दुःख दूर करना स्वीकार कर चुके हैं, इसलिए भीष्म को मारिए। परशुरामजी ने कहा—बेटी, भीष्म पूजनीय और सज्जन हैं। वे मेरे कहने से तुम्हारे चरणों पर सिर रखने के लिए भी तैयार हो जायँगे। अम्बा ने कहा—जो आप मेरा हित करना चाहते हैं तो संग्राम में भीष्म को मारिए। अङ्गीकृत वचन का पालन करना आपका अवश्य कर्तव्य है।

भीष्मजी कहते हैं कि इस तरह बातचीत हो रही थी कि इसी समय धर्मपरायण अकृतव्रण ने कहा—भगवन्, यह कन्या आपकी शरण में आई है, इसका त्याग न कीजिएगा। यदि संग्राम में आकर भीष्म आपसे पराजय स्वीकार कर लें तो इस कन्या का काम बन १० जायगा और आपकी प्रतिज्ञा भी सत्य होगी। पहले क्षत्रिय जाति का संहार करके आप ब्राह्मणों के आगे प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र, ब्रह्मद्वेषी होगा उसे मैं अवश्य मारूँगा। इसके सिवा जो तेजस्वी और पराक्रमी क्षत्रिय पृथ्वी भर के सब क्षत्रियों को जीत लेगा उस अपने प्रतिद्वन्द्वी को भी युद्ध करके मारूँगा। भीष्म ऐसे ही समर-विजयी क्षत्रिय हैं। इस कारण भी भीष्म के साथ युद्ध करना और उन्हें मारना आपका कर्तव्य है।

परशुरामजी ने कहा—हे तपोधन, मैं अपनी पहले की प्रतिज्ञा स्मरण करके इस तरह कार्य सिद्ध करने की चेष्टा करूँगा जिस में शान्ति-भङ्ग न हो। काशिराज की कन्या भीष्म को मारने का आग्रह कर रही है; किन्तु यह काम बहुत ही कठिन है। इस कारण इस कन्या को अपने साथ लेकर मैं ख़ुद वीर भीष्म के पास जाऊँगा। तुम लोग जानते ही हो कि मेरे चलाये हुए अमोघ बाण शरीरधारियों को मारे बिना नहीं लौटते। इसलिए अपने बाहुबल का घमण्ड रखनेवाले विजयी भीष्म अगर मेरा कहा नहीं मानेंगे तो मैं अवश्य युद्ध में उन्हें मारूँगा।

ऋषियों के सामने यों कहकर रात बीतने पर महात्मा परशुराम ने युद्ध-यात्रा का उद्योग २० किया। ऋषि लोग भी हवन और जप करके, मेरे मारने की इच्छा से, परशुरामजी के साथ चले। अम्बा और उन तपोधन ऋषियों को साथ लिये हुए महात्मा परशुराम कुरुक्षेत्र में पहुँचे। सब लोग वहाँ सरस्वती नदी के किनारे ठहर गये।

भीष्मजी कहते हैं—राजन्, समतल भूमि में ठहरकर महात्मा परशुराम ने तीसरे दिन मुझसे कहला भेजा कि मैं आया हूँ, मुझसे आकर मिलो। महात्मा परशुराम को अपने राज्य के भीतर आया हुआ सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। उसी समय देवतुल्य ब्राह्मण, ऋत्विज, पुरोहित आदि को साथ लेकर, अतिथि-सत्कार में देने के लिए एक गाय लेकर, मैं उनके पास गया। मेरी की हुई पूजा स्वीकार करके भार्गव ने कहा—हे भीष्म, तुम दूसरे पर आसक्त हृदयवाली काशिराज की कन्या को स्वयं अकाम होकर भी क्यों पहले हर लाये थे? और फिर उसका त्याग क्यों कर दिया? तुमने इस कन्या को [समाज और] धर्म से भ्रष्ट कर दिया है। तुम इसे हर लाये हो, इसलिए इसके साथ ब्याह करना कोई नहीं स्वीकार करेगा। इसी कारण शाल्व ने भी इसे स्वीकार नहीं किया। मैं तुमको आज्ञा देता हूँ कि इसे ग्रहण करके इसके और अपने ३० धर्म की रक्षा करो। हे वीर, इसका यों अपमान करना तुम्हारे लिए अनुचित है।

भीष्मजी कहते हैं कि तब मैंने परशुरामजी को उदास और कुछ कुपित देखकर कहा—ब्रह्मन्, मैं इस कन्या का ब्याह अपने भाई विचित्रवीर्य के साथ नहीं कर सकता। हे गुरुवर,

यह पहले मुझसे कह चुकी है कि मैं शाल्व को चाहती हूँ और उन्हें अपने मन में पति मान चुकी हूँ। इसी कारण मैंने इसे शाल्व के पास जाने की अनुमति दे दी। यह शाल्व के पास चली गई थी। इस समय मैं भय, दया, धन-लोभ या काम के वश होकर क्षत्रिय के धर्म को नहीं छोड़ सकता। मेरा यही सदा का व्रत है।

हे दुर्योधन, तब क्रोध से आँखें लाल करके परशुरामजी ने मुझसे कहा—मेरी आज्ञा न मानोगे तो मैं अभी तुमको तुम्हारे भृत्य, मन्त्री, अनुचर आदि के साथ मार डालूँगा। परशुरामजी क्रोध से आँखें लाल करके बारम्बार यही कहने लगे। तब मैंने उनके चरणों में सिर रखकर फिर कहा—भगवन्, आप मुझसे युद्ध करने के लिए क्यों उद्यत हैं? मैं आपका शिष्य हूँ। बाल्यावस्था में मैंने आपसे धनुर्वेद के चारों अङ्ग सीखे हैं।

क्रोध से आँखें लाल किये हुए परशुरामजी ने कहा—भीष्म, तुम मुझे गुरु मानते हो, किन्तु मेरी बात मानकर मुझे प्रसन्न करना नहीं स्वीकार करते। अम्बा को ग्रहण करने के सिवा मुझे शान्त करने का कोई उपाय नहीं है। इसलिए इसे ग्रहण करके अपने वंश को विनाश से बचाओ। यह तुम्हारे ही कारण स्वामी के सुख से वञ्चित होकर दुःख भोग रही है। ४०

हे कुरुश्रेष्ठ, शत्रुदलदलन परशुरामजी के ये वचन सुनकर मैंने फिर उनसे कहा—ब्रह्मन्, आप व्यर्थ परिश्रम और यत्न क्यों करते हैं? यह बात किसी तरह नहीं हो सकती। आप मेरे पुराने गुरु हैं, इसी लिए मैं अनुनय-विनय करके आपको मनाता हूँ। ब्रह्मन्, मैं इस कन्या का पहले ही त्याग कर चुका हूँ। स्त्रियों का चरित्रदोष घोर अनर्थ का कारण होता है। उस दोष को जानकर भी कौन पुरुष दूसरे को चाहनेवाली सर्पिणी-तुल्य स्त्री को अपने घर में रक्खेगा? मैं इन्द्र के डर से भी अपने धर्म को नहीं छोड़ सकता। अब चाहे आप प्रसन्न होकर अपना हठ छोड़िए, और चाहे अपनी इच्छा के अनुसार और कुछ कीजिए। पुराण में महात्मा मरुत्त का यह कथन प्रसिद्ध है कि जो गुरु कार्य-अकार्य के ज्ञान से शून्य, गर्वित और विपथगामी हो, उसे त्याग देना चाहिए। आप गुरु हैं, इसी से प्रसन्नतापूर्वक मैंने आपका

सन्मान किया; किन्तु आप मुझसे गुरु का सा व्यवहार नहीं करते। इसलिए मैं आपके साथ युद्ध करने को भी तैयार हूँ। मैं गुरु, ब्राह्मण, ख़ासकर तपोवृद्ध ब्राह्मण को नहीं मारता। इसी
५० कारण आपको क्षमा कर दिया था। किन्तु धर्मशास्त्र में लिखा है कि क्षत्रियधर्म का अनुगामी पुरुष अगर क्षत्रिय की तरह युद्धभूमि में आये हुए और क्रोध करके बाणवर्षा करते हुए ब्राह्मण को मार डालता है तो उसे ब्रह्महत्या का पाप नहीं लगता। मैं भी अपने धर्म का पालन करनेवाला क्षत्रिय हूँ। कोई पुरुष अपने साथ जैसा व्यवहार करे, उसके साथ वैसा ही व्यवहार करने से अधर्म या अकल्याण नहीं होता। धर्म और अर्थ के निर्णय में निपुण और देश-काल को जाननेवाला पुरुष अर्थ या धर्म के बारे में सन्देह उपस्थित होने पर अगर अर्थसिद्धि का अनुष्ठान न करके धर्म का ही पालन करता है तो वह कल्याण का भागी होता है। इस कारण मैं विवाहरूप अर्थसिद्धि के लिए गुरुवाक्य न मानकर प्रतिज्ञारूप धर्म का ही पालन करूँगा। आप संशययुक्त अर्थ के लिए मुझसे न्यायविरुद्ध व्यवहार करते हैं, अर्थात् अनुचित आज्ञा देते हैं, इसलिए मैं आपके साथ युद्ध करूँगा। युद्ध के समय आप मेरा अलौकिक पराक्रम और बाहुबल देखिएगा। अब आप युद्ध के लिए तैयार हो जाइए। मैं कुरुक्षेत्र में आपके साथ युद्ध करके अपनी शक्ति के योग्य काम करूँगा। आप मेरे बाणों से जर्जर होकर प्राणत्याग करेंगे और वीरों के योग्य लोकों में जाकर अपने तप का फल भोगेंगे। हे महाबाहु! अब मैं जाता हूँ, आप भी जाइए। कुरुक्षेत्र के मैदान में फिर भेंट होगी। आपने पहले जिस स्थान पर पिता का दाह-
६० कार्य किया था, वहीं पर आपको मारकर मैं भी क्षत्रियों के विनाश का बदला लूँगा। हे युद्धप्रिय, आप शीघ्र कुरुक्षेत्र के युद्धस्थल में चलिए। मैं आपका पहले का दर्प दूर करूँगा। आप इसके लिए सदा घमण्ड किया करते हैं कि आपने अकेले इक्कीस बार क्षत्रियकुल का संहार किया है; किन्तु उस समय मेरे समान योद्धा क्षत्रिय कोई नहीं था। तेजस्वी क्षत्रिय पीछे से उत्पन्न हुए हैं, उस समय आप तृणों में प्रज्वलित हुए थे अर्थात् बलहीनों को आपने मारा है। इस समय आपके युद्ध के घमण्ड और युद्ध की इच्छा को मिटानेवाला भीष्म उत्पन्न हो चुका है। इसमें सन्देह नहीं कि मैं इस समय युद्ध में आपका सारा दर्प चूर्ण कर दूँगा।

पितामह कहते हैं कि तब परशुरामजी ने क्रोध की हँसी हँसकर कहा—शाबाश! बड़े भाग्य और ख़ुशी की बात है कि तुम मुझसे युद्ध करने की इच्छा प्रकट कर रहे हो। मैं तुमसे युद्ध करने के लिए कुरुक्षेत्र के मैदान में चलता हूँ, तुम भी शीघ्र वहाँ आओ। तुम्हारी माता गङ्गा तुम्हें मेरे असंख्य तीक्ष्ण बाणों से मरकर गिद्ध, कौए, बगले आदि का भोजन बनते देखेंगी। हे क्षत्रिय! तुम ऐसे मन्दमति, युद्ध की इच्छा रखनेवाले, मरने के लिए तैयार पुरुष को उत्पन्न करनेवाली गङ्गा देवी सर्वथा रोने के योग्य न होने पर भी तुम्हें मेरे बाणों से पीड़ित और प्राण-हीन देखकर इस समय आँसू बहावेंगी। हे युद्ध की इच्छा प्रकट

माता गङ्गा प्रकट होकर मेरे सामने आईं और मुझसे कहने लगीं—बेटा, तुम यह क्या कर रहे हो। पृ० १८४३
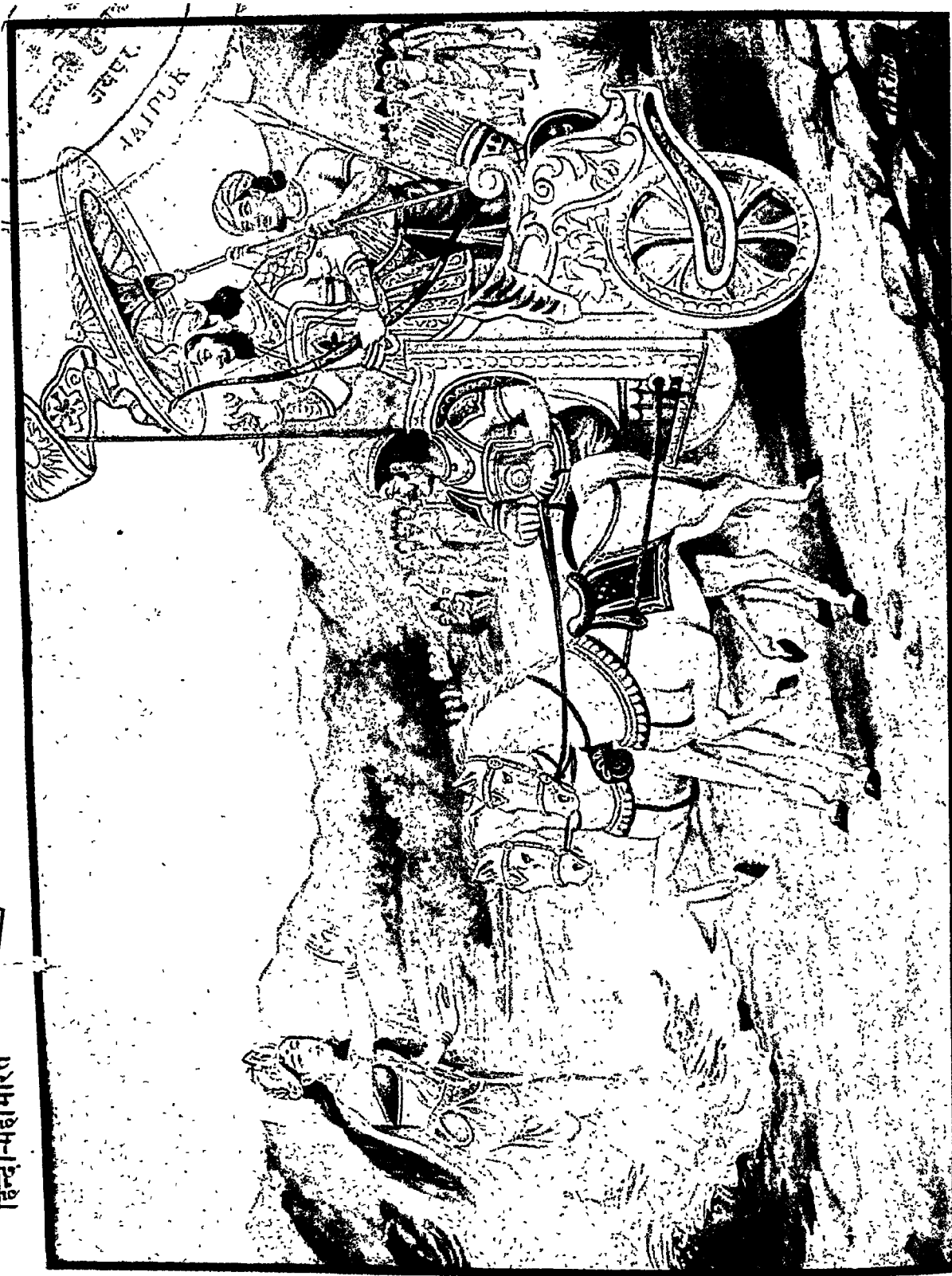
करनेवाले भीष्म, अब तुम जाकर रथ आदि युद्ध की सामग्री के साथ तैयार होकर कुरुक्षेत्र में आओ और मुझसे संग्राम करो।

हे दुर्योधन, मैंने उन्हें प्रणाम करके कहा—भगवन्, आपकी आज्ञा के अनुसार ही सब काम होगा। इसके बाद परशुरामजी युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र के मैदान में गये। इधर मैंने हस्तिनापुर में आकर माता से सब हाल कहा, उनसे आज्ञा ली और फिर ब्राह्मणों से स्वस्त्ययन कर्म कराया। इसके बाद मैंने सफ़ेद चमकीला कवच पहना, धनुष लिया और मैं व्याघ्रचर्म-मण्डित, शस्त्रों से परिपूर्ण, दृढ़, चाँदी से मढ़े हुए रथ पर सवार हुआ। उस रथ में सफ़ेद बढ़िया घोड़े जोते गये। कुलीन, वीर, अश्वविद्या के ज्ञाता, सुशील और अनेक युद्ध देखे हुए सारथी ने रथ हाँका। भृत्य लोग मेरे सिर पर सफ़ेद छत्र लगाये हुए थे और सफ़ेद चँवर डुला रहे थे। मैं सफ़ेद ही कपड़े पहने और सफ़ेद ही पगड़ी बाँधे हुए था। ब्राह्मण और वन्दीजन मुझे जय के आशीर्वाद देते हुए मेरी स्तुति कर रहे थे। वेदपाठी ब्राह्मण मेरी यात्रा के समय पुण्याह-पाठ करने लगे। ७२

इस प्रकार हस्तिनापुर से चलकर मैं कुरुक्षेत्र में पहुँचा। मन और हवा के समान वेग से चलनेवाले घोड़ों ने चतुर सारथी के हाँकने पर बहुत शीघ्र मुझे अभीष्ट स्थान पर पहुँचा दिया। मैं और प्रतापी परशुरामजी दोनों ही इस प्रकार युद्ध का निश्चय करके पवित्र कुरुक्षेत्र के मैदान में अपना-अपना पराक्रम दिखाने के लिए उपस्थित हुए। परशुरामजी के सामने पहुँचकर मैंने अपना श्रेष्ठ शङ्ख बजाया। उस समय वनवासी ऋषि, ब्राह्मण और इन्द्र आदि सब देवता वह श्रेष्ठ युद्ध देखने के लिए घटनास्थल के पास आ गये। आकाश से देवताओं के बरसाये हुए फूल और मालाएँ युद्ध-भूमि में गिरने लगीं। देवताओं ने दिव्य नगाड़े बजाये, और बादल गरजने लगे। भार्गव के अनुगामी सब तपोधन ऋषि, दर्शक होकर, युद्ध-भूमि में खड़े हुए। ८०

इसी समय सब प्राणियों की भलाई चाहनेवाली माता गङ्गा प्रकट होकर मेरे सामने आईं और मुझसे कहने लगीं—बेटा, तुम यह क्या कर रहे हो! मैं ख़ुद परशुराम के पास जाकर बारम्बार प्रार्थना करूँगी कि भगवन्, क्षमा कीजिए। भीष्म आपका शिष्य और इसी से

पुत्र-तुल्य है, उससे युद्ध न कीजिए। पुत्र, तुम ब्राह्मण और गुरु परशुराम से युद्ध करने का हठ न करो। रुद्र के समान अमित पराक्रमी, क्षत्रियकुल के काल, परशुराम को तुम क्या नहीं जानते जो उनसे लड़ना चाहते हो? यों कहकर भागीरथी बारम्बार मुझे मना करने लगीं।

तब मैंने हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया और विशेष रूप से स्वयंवर आदि का सब
८० हाल कहकर परशुरामजी की अनुचित आज्ञा और अम्बा के शाल्व पर अनुरक्त होने का वृत्तान्त भी सुना दिया। सब बातें सुनकर गङ्गा माता परशुरामजी के पास गईं और उन्हें प्रसन्न तथा शान्त करने के अभिप्राय से कहने लगीं—भगवन्! भीष्म आपका शिष्य है, उससे युद्ध मत कीजिए। परशुरामजी ने कहा—भगवती भागीरथी! भीष्म मेरा कहा नहीं करते, इसलिए मैं उनसे युद्ध करने आया हूँ। आप उन्हीं को युद्ध करने से रोकिए।

वैशम्पायन कहते हैं कि तब पुत्रस्नेह के कारण गङ्गा फिर भीष्म के पास आईं और बोलीं—बेटा, मेरा कहा मानो, युद्ध मत करो; किन्तु क्रोध से विह्वल भीष्म ने उनका कहा नहीं माना।
८५ इतने में महातपस्वी भार्गव ने भीष्म के सामने आकर उन्हें युद्ध के लिए ललकारा।

एक सौ उन्नासी अध्याय

भीष्म और परशुरामजी के युद्ध का आरम्भ

भीष्मजी कहते हैं कि हे दुर्योधन, फिर मैंने युद्ध के लिए उद्यत परशुरामजी से मुसकाकर कहा—भगवन्, आप पृथ्वी पर खड़े हैं और मैं रथ पर बैठा हूँ। इस तरह आपसे युद्ध करना अनुचित समझकर मैं नहीं लड़ूँगा। जो आप मुझसे युद्ध करना चाहते हैं तो कवच धारण कीजिए और रथ पर बैठिए।

परशुरामजी ने हँसकर मुझसे कहा—हे भीष्म, पृथ्वी ही मेरा रथ है। चारों वेद घोड़े, वायु सारथी और वेदमाता त्रिमूर्त्ति गायत्री कवच हैं। इन्हीं से सुरक्षित होकर मैं तुमसे लड़ूँगा। हे दुर्योधन, इतना कहकर भगवान् परशुराम बाण बरसाने लगे।

इसके बाद मैंने देखा कि वे इच्छामात्र से कल्पित दिव्य रथ पर बैठे हुए हैं। उस रथ में दिव्य घोड़े लगे हुए थे। वह रथ एक नगर के समान विस्तृत, अद्भुत, दर्शनीय, सब शस्त्रों से परिपूर्ण और प्रकाशमान था। भगवान् परशुराम के शरीर पर सुवर्णमय और चन्द्रमा-सूर्य के चिह्नों से शोभित दृढ़ कवच भी देख पड़ा। धनुष धारण किये, तरकस बाँधे, गोह के चमड़े के अंगुलि-त्राण पहने परशुरामजी को रथ पर देखकर मुझे आश्चर्य सा हुआ। उनके रथ को वेदज्ञ, प्रिय सखा अकृतव्रण हाँक रहे थे। परशुरामजी क्रोध के साथ बारम्बार युद्ध के लिए मुझे लल-

मारने लगे। मैं भी बड़ी प्रसन्नता और उत्साह के साथ अकेला ही उन महाबली, पराक्रमी, सूर्य-सदृश तेजस्वी, क्षत्रियों के काल परशुरामजी के सामने पहुँचा। फिर मैंने उनके रथ के घोड़ों को तीन बाणों से पीड़ित करने के उपरान्त धनुष रखकर, रथ से उतरकर, गुरु-सम्मान के लिए पैदल ही परशुरामजी के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। यथोचित सत्कार करके मैंने परशुरामजी से कहा—भगवन्, आप मेरे समान या मुझसे अधिक पराक्रमी हैं, यह जानकर मैं आपसे युद्ध करूँगा। हे गुरुवर, मुझे जय का आशीर्वाद दीजिए। १०

परशुरामजी ने कहा—बेटा, जय और अभ्युदय चाहनेवाले पुरुष को सदा ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए। जो लोग अपने से बड़े या श्रेष्ठ पुरुष से युद्ध करना चाहें उनका यही धर्म है। तुम अगर युद्ध के पहले इस तरह मेरे पास आकर शिष्टाचार का पालन न करते तो मैं तुम्हें शाप दे देता। अब जाओ, यत्न और धैर्य के साथ युद्ध में प्रवृत्त होओ। किन्तु मैं तुम्हें जय का आशीर्वाद नहीं दे सकता; क्योंकि तुम्हें जीतने के लिए ही यह युद्ध कर रहा हूँ। तुम्हारे इस आचरण से मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। जाओ, धर्म के अनुसार युद्ध करो।

तब मैं उन्हें प्रणाम करके, फिर अपने रथ पर सवार होकर, शंख बजाने लगा। इसके बाद परस्पर जय की इच्छा रखनेवाले हम दोनों का वह बहुत दिन तक चलनेवाला युद्ध छिड़ गया। पहले परशुरामजी ने नव सौ साठ तीक्ष्ण और तिरछी धारवाले बाणों से मुझे घायल किया। मेरे रथ के घोड़े और सारथी भी उनके बाणों से घायल होकर अपना काम करने में असमर्थ से हो गये। पर मेरे होश-हवास में कुछ फ़र्क नहीं पड़ा। मैंने देवताओं और ब्राह्मणों को प्रणाम करके परशुरामजी से कहा—भगवन्, आपने यद्यपि गुरु की मर्यादा छोड़ दी है, तो भी मैं आपको आचार्य मानता हूँ। मैं इस समय धर्म के अनुसार जो कहता हूँ, वह सुनिए। मैं आपके शरीर में स्थित वेद, ब्रह्मतेज और आपकी की हुई तपस्या पर नहीं प्रहार करता। शस्त्र धारण करने से ब्राह्मण क्षत्रिय भाव को प्राप्त हो जाता है। मैं आपके उसी क्षत्रिय भाव पर २०

चोट करता हूँ। अब आप मेरे धनुष का पराक्रम और बाहुओं का बल देखिए। मैं अभी आपका धनुष काटे डालता हूँ। हे दुर्योधन, इतना कहकर मैंने तुरन्त एक तीक्ष्ण भल्ल बाण से उनका धनुष काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया।

फिर मैं सम्मुख युद्ध में कङ्कपत्र-युक्त तीक्ष्ण सैकड़ों बाण छोड़ने लगा। वायुवेग से जाते हुए वे बाण उनके शरीर में घुसकर साँपों की तरह रक्त पीते हुए देख पड़ने लगे। परशु-

रामजी के शरीर से रक्त की धाराएँ वह निकलीं, और वे उस सुमेरु पर्वत की तरह जान पड़ने लगे जिससे गेरू की धारा वह रही हो। लाल फूलों के गुच्छों से शोभित ३० अशोक या फूले हुए ढाँक के पेड़ की तरह अटल भाव से खड़े हुए भार्गव ने क्रोधित होकर दूसरा धनुष लिया और वे सुवर्ण-पुङ्ख-युक्त तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करने लगे। साँप और आग की तरह वेग से दौड़कर मर्मस्थल पर चोट करनेवाले उन बाणों के लगने से मैं बहुत ही विचलित हो उठा। फिर अपने को किसी तरह सँभालकर मैंने क्रोध करके सौ बाण उनको मारे। उन सूर्य, साँप और आग के समान बाणों की चोट से वे अचेत से हो गये। हे भरतकुल-तिलक, तब मेरा क्रोध दूर हो गया और मैं करुणा और शोक से व्याकुल होकर कहने लगा कि युद्ध और क्षत्रिय-धर्म को धिक्कार है! क्षत्रिय-धर्म से विवश होकर मैंने धर्मात्मा ब्राह्मण गुरु को बाणों से पीड़ा पहुँचाकर घोर पाप किया है। शोक से व्याकुल होकर मैं इसी तरह बारम्बार विलाप करने लगा। उसके बाद फिर मैंने परशुरामजी पर प्रहार नहीं किया। इसी समय ३९ भगवान् सूर्य अपनी प्रचण्ड किरणों से पृथ्वीमण्डल को तपाकर अस्ताचल को चले गये।
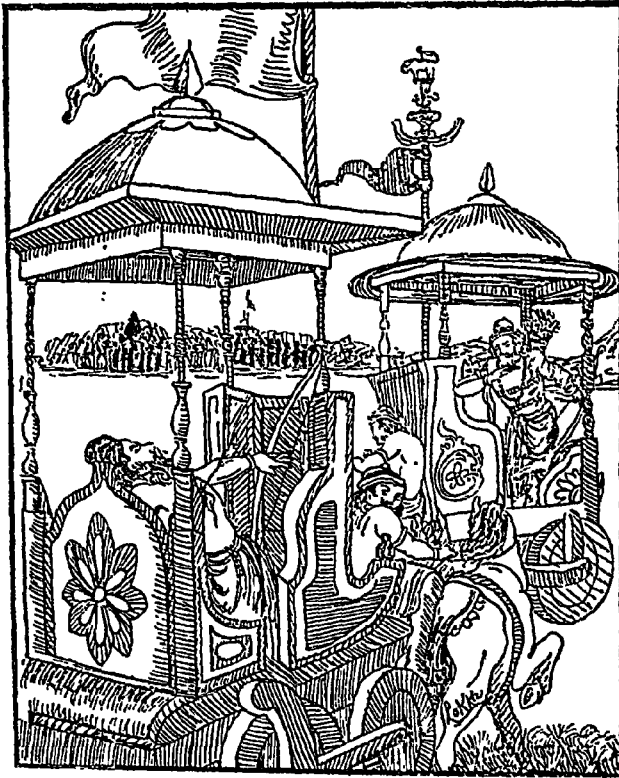
एक सौ अस्सी अध्याय

युद्ध का वर्णन

भीष्मजी कहते हैं—फिर मेरे निपुण सारथी ने अपने, मेरे और घोड़ों के घाव अच्छे किये। दूसरे दिन सूर्योदय के समय, जब घोड़े सुस्ताकर नहलाये गये और वे पानी पी

चुके तब फिर युद्ध होने लगा। प्रतापी भार्गव ने मुझे कवच धारण कर और रथ पर बैठकर आते देखते ही अपना भी रथ युद्ध के लिए तैयार किया। उन्हें युद्ध की इच्छा से आते देखकर फिर मैं धनुष रखकर, रथ से उतरकर, उनके पास प्रणाम करने गया। प्रणाम के उपरान्त रथ पर बैठकर निर्भय भाव से युद्ध करने के लिए मैं उनके सामने पहुँचा।

मैंने बाण बरसाना शुरू किया और वे भी बाणवर्षा करने लगे। वे क्रोध से विह्वल होकर लगातार मेरे ऊपर विषैले साँपों के समान भयङ्कर बाण छोड़ने लगे। मैं भी तीक्ष्ण भल्लबाणों से आकाश में ही बारम्बार उनके बाणों को काटकर गिराने लगा। परशुरामजी ने मुझ पर जितने दिव्य अस्त्र चलाये, उन्हें मैंने अपने दिव्य अस्त्रों से व्यर्थ कर दिया। इस घटना से आकाशमार्ग में भयानक शब्द प्रतिध्वनित होने लगा। १०

इसके बाद उनके ऊपर मैंने वायव्य अस्त्र छोड़ा; उन्होंने गुह्यकास्त्र से उस अस्त्र को निष्फल कर दिया। फिर मैंने मन्त्र पढ़कर आग्नेय अस्त्र छोड़ा; उन्होंने वारुणास्त्र से उसे बेकार कर दिया। इसी तरह हम दोनों वीर एक दूसरे के बाणों और अस्त्रों को नष्ट करने लगे। फिर उन्होंने मेरी बाईं ओर आकर मेरी छाती में कई बाण मारे। मैं शिथिल और मूर्च्छित सा होकर रथ के सहारे टिक रहा। सारथी मुझे मूर्च्छित देखकर शीघ्र रथ को हटा ले गया। मुझे बाणों से घायल, मूर्च्छित और युद्ध से विमुख देखकर काशिराज की कन्या अम्बा और अकृतव्रण आदि परशुरामजी के अनुचर प्रसन्न होकर चिल्लाने लगे।

जब मुझे होश आया तब मैंने सारथी से कहा—हे सूत! मेरी पीड़ा दूर हो गई, मैं युद्ध करने के लिए तैयार हूँ, इसलिए मुझे फिर परशुरामजी के पास ले चलो। तब सारथी हवा के समान चलनेवाले सुन्दर घोड़ों को हाँककर युद्धभूमि की ओर ले चला। घोड़े भी मानों नाचते हुए उधर चले। मेरा रथ जब परशुरामजी के पास पहुँचा तब फिर मैं क्रोधित होकर, जय की इच्छा से, उनके ऊपर घोर बाणवर्षा करने लगा। उन्होंने एक साथ तीन-तीन बाण चलाकर मेरे हर एक बाण के तीन-तीन टुकड़े कर डाले। २०

फिर मैंने उन्हें मारने की इच्छा से एक काल-सदृश अत्यन्त प्रज्वलित बाण उनके ऊपर चलाया। वह बाण प्रबल वेग से उनकी छाती में धँस गया और वे भी मूर्च्छित होकर गिर पड़े। सूर्य के अस्त होने से जैसे सारा जगत् व्याकुल हो उठता है वैसे ही परशुरामजी के गिरने से चारों ओर हाहाकार मच गया। उन्हें मूर्च्छित देखकर काशिराज की कन्या और सब तपस्वी घबराकर उनके पास गये। वे लोग उन्हें हृदय से लगाकर शीतल हाथ फेरने और जय के आशीर्वादों से उन्हें आश्वास देने लगे। इतने में परशुरामजी होश में आकर उठ बैठे। उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाकर क्रोध से विह्वल स्वर में कहा—भीष्म, ठहर जाओ, तुमको मैं मारता हूँ। अब उन्होंने बाण चलाया और वह मेरे शरीर के वामभाग में लगा। मैं आँधी से उखड़े पेड़ की तरह

चक्कर खाकर बहुत ही घबरा गया। इसके बाद परशुरामजी मेरे घोड़ों को मारकर मेरे रोम-रोम में बाण मारते हुए मुझे घायल करने लगे।

३० मैंने भी फुर्ती के साथ बाण चलाकर उनके सब बाणों को आकाश में ही रोक दिया। हम दोनों के बाण बीच के अवकाश में छा गये। बाणों के जाल में सूर्य छिप गये। बादलों की आड़ में हवा मानों रुक गई। इसके बाद सूर्य की किरणों और बाणों के टकराने से तथा वायु के वेग से आग पैदा हो गई। वे सब बाण उसी आग में जल गये। अब परशुरामजी ने अत्यन्त क्रोध करके लाखों, करोड़ों, अयुतों और खर्वों बाण छोड़े। मैं भी सर्प-सदृश बाणों के प्रहार से उन्हें काट-काटकर गिराने लगा। उन कटे हुए बाणों का, पहाड़ की तरह, पृथ्वी पर ढेर लग गया। हे दुर्योधन, इसी तरह हम दोनों का घोर युद्ध होने लगा। फिर सन्ध्या का समय उपस्थित ३८ होने पर गुरु और शिष्य दोनों ने युद्ध रोक दिया।

एक सौ इक्यासी अध्याय

युद्ध का वर्णन

भीष्मजी कहते हैं—उसके दूसरे दिन प्रातःकाल फिर मैं परशुरामजी के सामने जाकर उनसे युद्ध करने लगा। दिव्य अस्त्रों को जाननेवाले महावीर परशुराम हर रोज़ अनेक प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग करने लगे। मैं भी प्राणों का मोह छोड़कर उनसे लड़ने और अपने दिव्य अस्त्रों से उनके अस्त्रों को व्यर्थ करने लगा। प्राणों की ममता छोड़कर लड़नेवाले महातेजस्वी परशुरामजी अपने अस्त्रों को मेरे अस्त्रों से व्यर्थ होते देखकर क्रोध से विह्वल हो उठे। महात्मा परशुराम ने तब एक घोर, कालरूपिणी, प्रज्वलित उल्का के समान शक्ति मुझ पर चलाई। अपने तेज से जगत् को प्रकाशित कर रही वह, प्रलयकाल के सूर्य के समान, शक्ति मेरी ओर तीव्र वेग से चली। मैंने भी अपने तीक्ष्ण बाण चलाकर उसके तीन टुकड़े कर डाले। इससे कट-कुट कर वह पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस समय पवित्र सुगन्धित हवा चलने लगी।

महात्मा परशुराम ने तब एक घोर कालरूपिणी, प्रज्वलित उल्का के समान शक्ति मुझ पर चलाई।—पृ० १८४
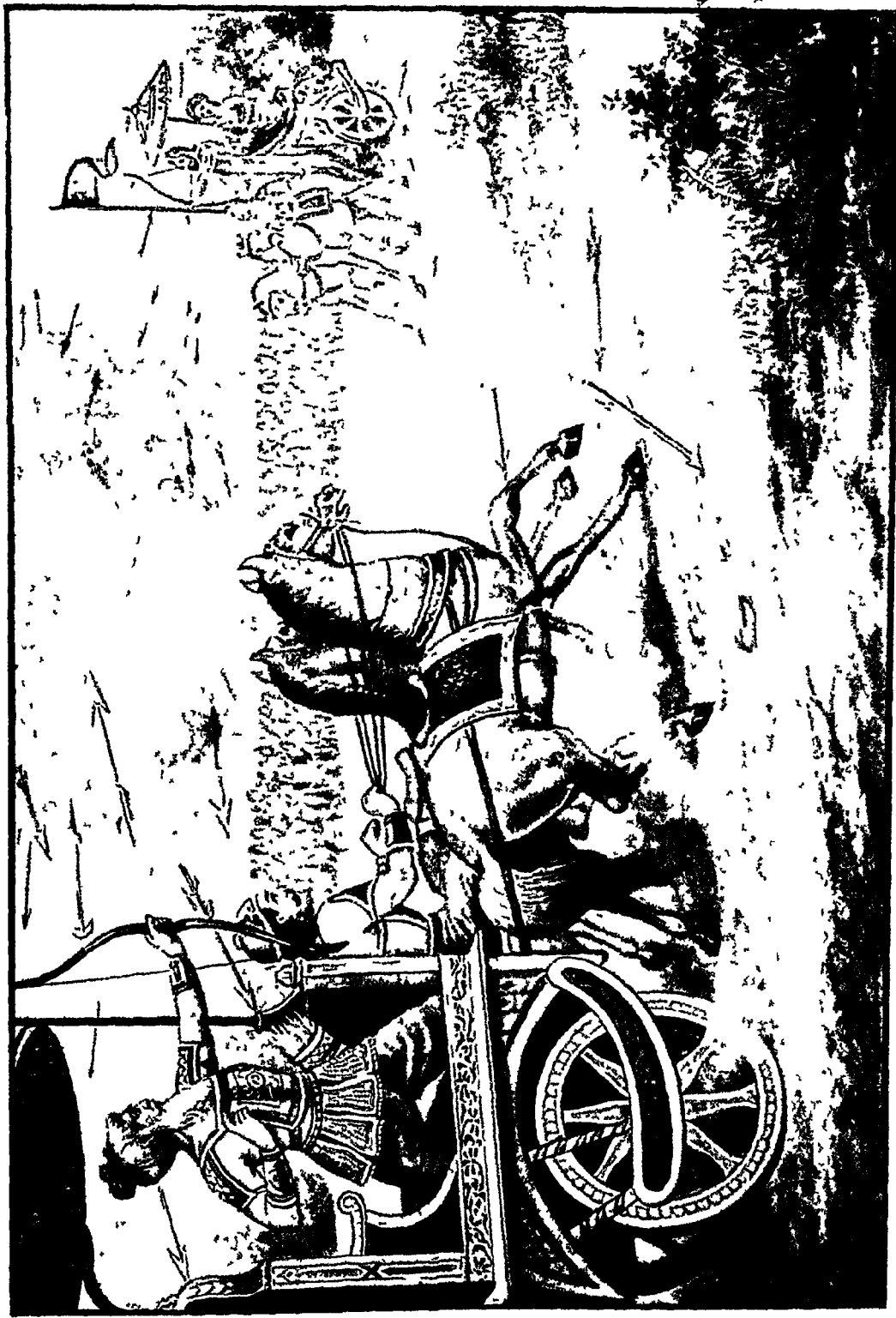
क्रोधित परशुरामजी ने उस शक्ति को व्यर्थ होते देखकर और बारह भयङ्कर शक्तियाँ मेरे ऊपर चलाईं। तेज और तेज़ी के कारण उन शक्तियों की ओर आँख उठाकर देखना भी असम्भव था। मैंने देखा कि प्रलय के लिए उदय हुए बारह सूर्यों के समान तेज की राशि, अनेक रूपवाली, वे बारहों शक्तियाँ अग्निशिखा की तरह चारों ओर से आ रही हैं। यह देखकर मैं बहुत ही घबरा गया। हे दुर्योधन, मैंने अपने बाणों से परशुरामजी के अन्य अस्त्रों को नष्ट करने के साथ ही बारह बाणों से उन शक्तियों को भी व्यर्थ कर दिया। यह देखकर महात्मा परशुराम ने बहुत ही आश्चर्य और कोप करके सुवर्णदण्डयुक्त, काञ्चनपट्टमण्डित, उल्का के समान प्रज्वलित, घोर रूपवाली और अनेक शक्तियाँ चलाईं। हे नरेन्द्र, मैंने ढाल पर उन्हें रोका और खड्ग से काट डाला। वे शक्तियाँ कटकर, व्यर्थ होकर, युद्धभूमि में गिर पड़ीं। मैं फिर अपने दिव्य अस्त्रयुक्त बाणों से भार्गव के सारथी को और घोड़ों को घायल करने लगा। हैहयवंश के श्रेष्ठ राजा सहस्रबाहु अर्जुन को मारनेवाले महात्मा परशुराम, केचुल छोड़े हुए साँपों की तरह, उन सुवर्णभूषित शक्तियों को कटकर गिरते देख क्रोध के मारे आपे से बाहर हो गये और लगातार दिव्य अस्त्रों से युक्त बाण बरसाने लगे। टीड़ीदल की तरह चले आ रहे वे बाण मेरे शरीर, सारथी, रथ और घोड़ों के ऊपर छा गये। उन बाणों से मेरे रथ का धुरा और अन्य अङ्ग कट गये। तब मैं भी उनके ऊपर बाण बरसाकर उन्हें घोर रूप से घायल करने लगा। उनके शरीर से रक्त की धाराएँ बह चलीं। मेरे बाणों से जैसे वे घायल और पीड़ित हो रहे थे, वैसे ही उनके बाणों से मैं भी विह्वल हो रहा था। इसी तरह युद्ध होते-होते सूर्य अस्त हो चले और हमारा युद्ध भी बन्द हो गया। १० १६

एक सौ बयासी अध्याय

घमासान लड़ाई का वर्णन

भीष्मजी कहते हैं—दूसरे दिन, सूर्य के निकलने पर, फिर मैं परशुरामजी से युद्ध करने लगा। वे रथ पर चढ़कर, पर्वत के शिखर पर स्थित मेघ की तरह, मेरे ऊपर असंख्य बाण बरसाने लगे। मेरा प्रिय सारथी बाणों से पीड़ित होकर रथ के ऊपर से गिर पड़ा और दम भर में मर गया। यह देखकर मैं बहुत घबराया और डरा।

सारथी के मारे जाने पर परशुरामजी अपने वेगशाली तीक्ष्ण बाण मुझ पर बरसाने लगे। वे बाण मेरे हृदय में घुस गये और मैं वेदना से पीड़ित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। मुझे मरा समझकर परशुरामजी को बड़ी प्रसन्नता हुई और वे बारम्बार मेघ की तरह गरजने लगे। उनके साथी ऋषि आदि भी सिंहनाद के साथ अपना आनन्द प्रकट करने लगे। मेरे पास खड़े हुए कुरुवंशी तथा आये हुए अन्य दर्शक लोग मुझे पृथ्वी पर गिरा देखकर अत्यन्त व्याकुल हुए। १०

इसके बाद अग्नि के समान तेजस्वी आठ ब्राह्मण मुझे देख पड़े। मैंने देखा, उन्होंने मुझे चारों ओर से घेरकर अपनी भुजाओं के बीच में ले लिया। इस तरह आकाश-मार्ग में मुझे लेकर शीतल जल छिड़ककर वे मेरी रक्षा करने लगे। आकाशमार्ग में स्थित होकर मैंने एक साँस ली। तब उन ब्राह्मणों ने कहा—हे भीष्म, तुम्हें कुछ भय नहीं है। तुम कल्याण और विजय प्राप्त करोगे। राजन्, उनके इन वचनों को सुनकर मुझे सन्तोष हुआ। मैंने उठकर देखा कि माता गङ्गा मेरे रथ पर खड़ी हुई हैं। वे मेरे लिये और घोड़े ले आई थीं। मैं माता के चरणों में प्रणाम करके ब्राह्मणरूपधारी पितरों (वसु देवताओं) के लाये हुए रथ पर सवार हुआ। घोड़े, रथ और अन्य युद्ध-सामग्री-सहित मेरी रक्षा गङ्गाजी करने लगीं। तब हाथ जोड़कर मैंने उनको विदा कर दिया।
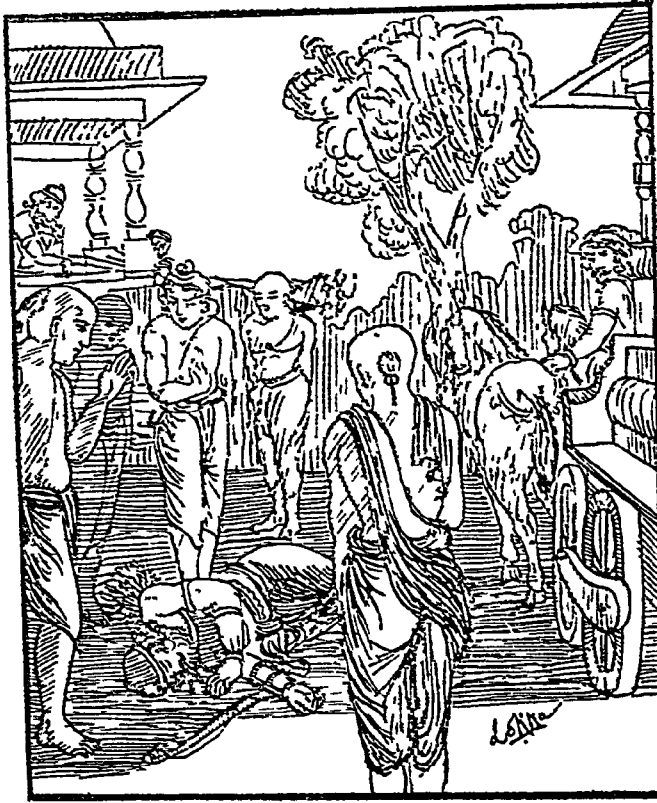
दिन डूबनेवाला था। उस समय मैं आप ही सारथी का भी काम करता हुआ भार्गव से युद्ध करने लगा। मैंने एक बहुत ही प्रबल, वेगशाली, हृदयभेदी बाण परशुरामजी के हृदय को ताक कर मारा। वह बाण लगने से परशुरामजी ऐसे पीड़ित हुए कि उनके हाथ से धनुष गिर पड़ा और वे घुटनों के बल पृथ्वी पर गिरकर अचेत हो गये। उस समय आकाश से उल्कापात २० होने लगे। बिजलियाँ चमकने लगीं। आकाश में प्रचण्ड शब्द सुन पड़ने लगा। मेघों से रक्त बरसने लगा। सूर्य को एकाएक राहु ने ग्रस लिया। बारम्बार भूकम्प होने लगा। प्रबल आँधी उठती देख पड़ी। गिद्ध, बगले, कङ्क आदि मांसभोजी पक्षी प्रसन्न होकर इधर-उधर दौड़ते और उड़ते दिखाई पड़ने लगे। दिग्दाह दिखाई पड़ा और सियारों के दल चिल्लाहट मचाने लगे। बिना बजाये ही नगाड़े कठोर शब्द से बज उठे। हे सौम्य, परशुरामजी के मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिरने से इस तरह के सैकड़ों अशुभ उत्पात देख पड़े।

कुछ समय के बाद परशुरामजी की बेहोशी दूर हो गई; वे एकाएक उठ खड़े हुए। युद्ध की इच्छा से क्रोधित परशुरामजी फिर मेरे सामने आये। उनको मुझसे लड़ने के लिए फिर महा-धनुष चढ़ाते देखकर दयालु ऋषियों ने उनके पास जाकर मना किया कि अब युद्ध न करो।
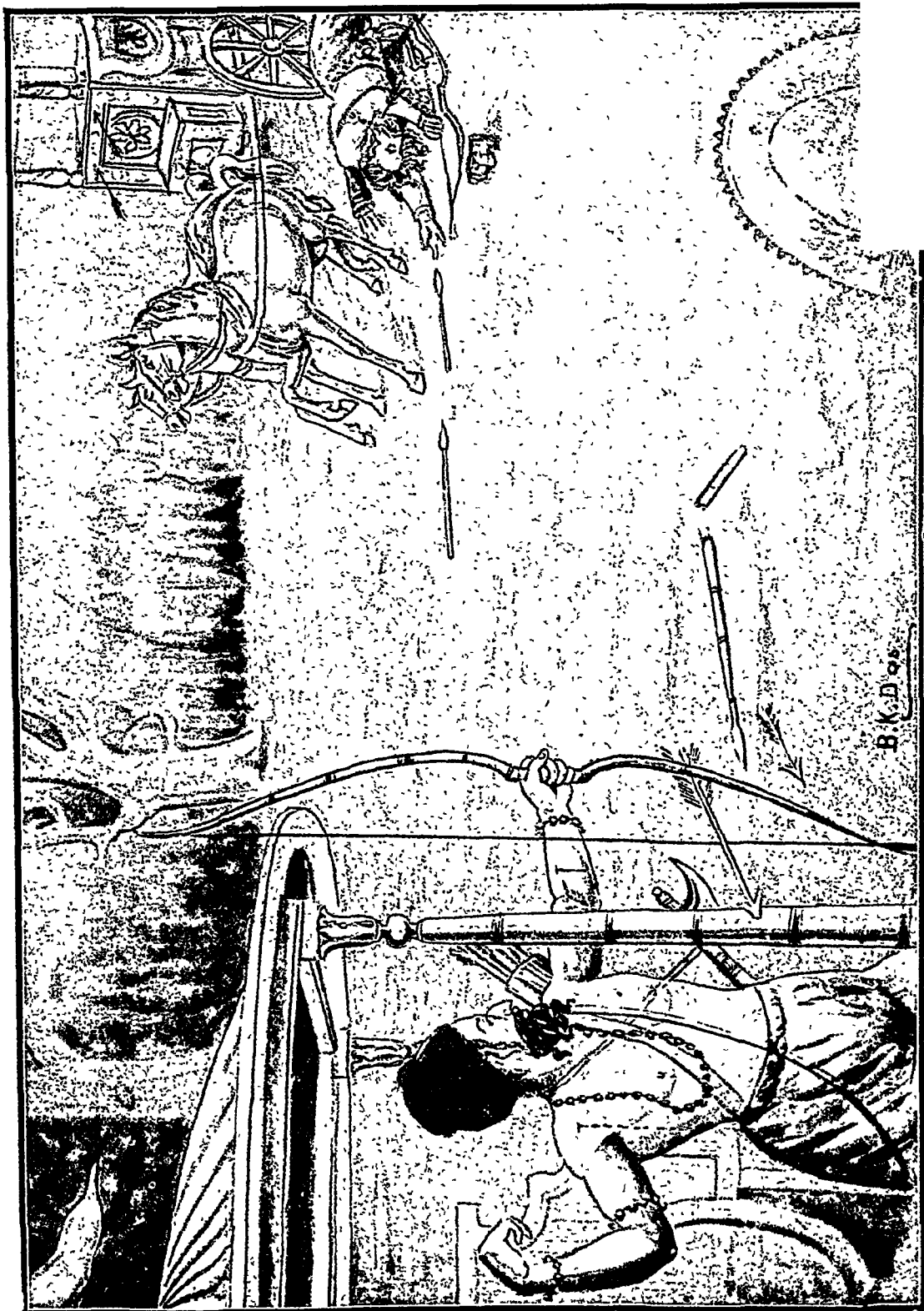
वे बाण मेरे हृदय में घुस गये और मैं वेदना से पीड़ित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। (पृ० १६३)

सन्ध्या भी हो आई थी, इसलिए क्रोधविह्वल होने पर भी परशुरामजी ने उन ऋषियों का कहना मानकर कालाग्नितुल्य बाण धनुष से उतार लिया। आकाश में धूल छा रही थी, सूर्य भी अपनी किरणें समेटकर अस्ताचल पर पहुँच गये थे। शान्ति देनेवाली रात्रि आ गई; सुखदायक शीतल हवा चलने लगी। हम लोगों ने युद्ध बन्द कर दिया। इसी तरह हम दोनों तेईस दिन तक युद्ध करते रहे। सवेरे युद्ध शुरू होता था और सन्ध्या को बन्द हो जाता था। ३०

एक सौ तिरासी अध्याय

भीष्म को वसु देवताओं के दर्शन मिलना

भीष्मजी कहते हैं—एक रात को ब्राह्मणों, देवताओं, क्षत्रियों, राक्षसों, भूतों और पितरों आदि को प्रणाम करने के बाद एकान्त में लेटकर मैं सोचने लगा कि परशुरामजी से युद्ध करते बहुत दिन हो गये, किन्तु किसी तरह मैं उन्हें हरा नहीं सका। यदि मैं उन्हें हरा सकता हूँ तो प्रसन्न होकर देवता लोग मुझे स्वप्न में दर्शन दें। यों सोचकर मैं दाहनी करवट से सो रहा।

अचेत होकर रथ से गिरने के समय मुझे उठाने, पकड़ने, बचाने और अभय-दान करनेवाले वे ही आठों ब्राह्मण स्वप्न में मुझे देख पड़े। चारों ओर से मुझे घेरकर वे कहने लगे—हे भीष्म, तुम हमारा अवतार हो, इसलिए हम सदा तुम्हारी रक्षा किया करते हैं। परशुराम कभी तुम्हें हरा नहीं सकेंगे, तुम्हीं उन्हें परास्त करोगे। तुम्हें कुछ डर नहीं है—उठो। पहले जन्म में तुम यह, विश्वकर्मा प्रजापति का, प्रस्वाप अस्त्र जानते थे। इस समय वही अस्त्र अपने आप तुम्हें ज्ञात हो जायगा। पृथ्वी पर परशुराम या और कोई मनुष्य उस अस्त्र को नहीं जानता। उसका स्मरण और प्रयोग करने से वह आप ही तुम्हारे पास आ जायगा। उस अस्त्र के बल से तुम परशुराम को जीतोगे और अन्य महावीर अजेय पुरुषों को भी परास्त कर सकोगे। उस अस्त्र से परशुराम का प्राणान्त नहीं होगा और १०
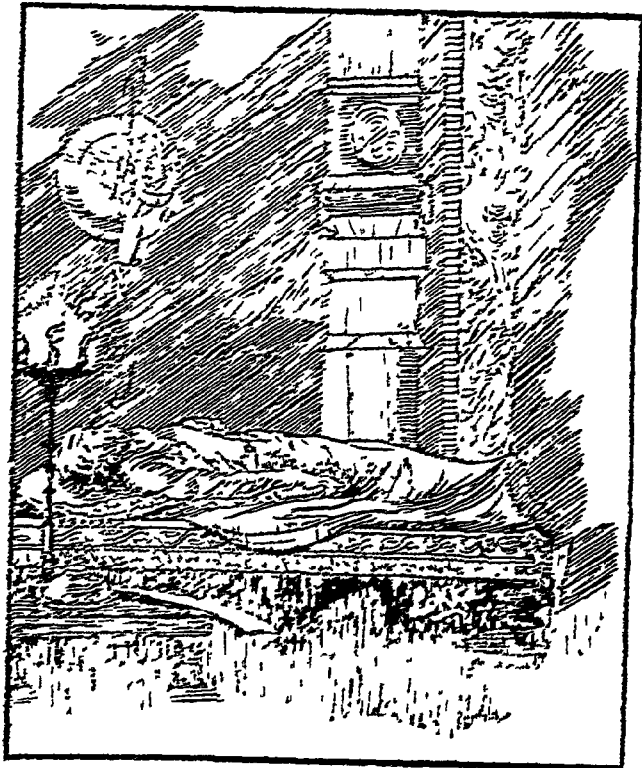
तुम पाप से बच जाओगे। परशुराम तुम्हारे अस्त्र के प्रभाव से पीड़ित होकर युद्ध-भूमि में सो जायँगे। इस प्रकार उन्हें जीतकर फिर सम्बोधन अस्त्र से जगा देना। आज ही सवेरे रथ पर बैठकर तुम परशुराम पर प्रस्वाप अस्त्र का प्रयोग करना। सोने की और मरने की दशा एक सी होती है। इस प्रकार तुम्हारा प्रयोजन भी सिद्ध हो जायगा और परशुराम की मृत्यु भी नहीं होगी। परशुराम किसी के मारे मर नहीं सकते, इस कारण विजय-प्राप्ति के लिए तुम प्रस्वाप अस्त्र का प्रयोग करो। हे दुर्योधन, एक ही प्रकार के रूपवाले वे १९ तेजस्वी आठों ब्राह्मण यह कहकर अन्तर्द्धान हो गये।

एक सौ चौरासी अध्याय

युद्ध का वर्णन

भीष्मजी कहते हैं—सवेरा होने पर उठकर रात के उस स्वप्न को याद कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। इसके बाद फिर सब प्राणियों को भय से विह्वल बनानेवाला मेरा और परशुरामजी का युद्ध होने लगा। परशुरामजी मेरे ऊपर उग्र बाणों की वर्षा करने लगे। मैं भी अपने बाणों से उन्हें निष्फल करने लगा। पहले दिन की घटना से अत्यन्त क्रोधित परशुरामजी ने इन्द्र के वज्र और यमराज के दण्ड के समान भयानक एक शक्ति मेरे ऊपर चलाई। अग्नि के समान प्रज्वलित, चारों ओर अपने तेज से लपलपाती हुई वह शक्ति बिजली के वेग से आकर मेरे कन्धे में लगी। मेरे घायल शरीर से, पर्वत से गेरू के झरने की तरह, लगातार रक्त की धारा बहने लगी। तब मैंने अत्यन्त क्रोध करके विषैले साँप और मृत्यु के समान भयङ्कर एक बाण उनके ऊपर चलाया। वह बाण परशुरामजी के मस्तक में लगा और वे एक शिखरवाले पर्वत के समान शोभायमान हुए। उन्होंने भी कुपित होकर बलपूर्वक अपना धनुष खींचा और शत्रुओं को १० मारनेवाला कालान्तकतुल्य एक बाण छोड़ा। वह बाण साँप की तरह फुफकारता हुआ आकर मेरी छाती में घुस गया। उस बाण के लगने से रक्त बह चला और मैं बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। फिर मैंने होश में आकर प्रज्वलित वज्र के समान एक शक्ति उनके हृदय में ताक कर मारी। उसके लगने से वे विचलित हो गये। उस समय भार्गव के प्रिय सखा अकृतव्रण हृदय से लगाकर, मधुर वचनों से, उन्हें ढाढ़स बँधाने लगे।

महावीर परशुराम ने सँभलकर क्रोध के मारे मुझ पर ब्रह्मास्त्र चलाया। मैंने भी उस अस्त्र को शान्त करने के लिए ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। महाराज, वह अस्त्र आकाश में प्रज्वलित हो उठा। उसके भयङ्कर तेज को देखकर लोगों ने समझा कि प्रलय होनेवाला है। अस्त्र-तेज से युक्त मेरे और उनके दोनों बाण आकाश में ही टकराकर जल उठे—हम लोगों के पास तक नहीं आये। उनके तेज को देखकर संसार के सब प्राणी शङ्कित हो गये। सब ऋषि,

देवर्षि नारदने मेरे पास आकर कहा—भैया भीष्म,.........तुम इस समय उस अस्त्र का प्रयोग मत करो।

(पृ० १८५३)

गन्धर्व और देवता भी उन बाणों के तेज से पीड़ित होकर मानो जलने लगे। पर्वत, वन, वृक्ष आदि सहित सारी पृथ्वी काँप उठी और संसार के सब प्राणी "त्राहि-त्राहि" करने लगे। २० आकाशमण्डल में आग सी लग गई और दिशाओं में धुआँ उठने लगा। आकाशचारी लोग यह उत्पात देखकर अपने-अपने स्थानों से भाग चले। चारों ओर हाहाकार मच गया। मैंने ठीक अवसर देखकर, ब्राह्मणों की आज्ञा के अनुसार, प्रस्वाप अस्त्र छोड़ने का इरादा किया। उसी समय वह अद्भुत अस्त्र मेरे हृदय में भासित हो उठा। २३

एक सौ पचासी अध्याय

परशुरामजी का शस्त्र-त्याग

भीष्मजी कहते हैं—उस समय "हे भीष्म, तुम प्रस्वाप अस्त्र न छोड़ना!" इस प्रकार का कोलाहल आकाश में सुन पड़ने लगा। परन्तु उस पर ध्यान न देकर मैं परशुरामजी पर छोड़ने के लिए प्रस्वाप अस्त्र का सन्धान करने लगा। इसी बीच में देवर्षि नारद ने मेरे पास आकर कहा—भैया भीष्म, आकाश में स्थित देवता लोग तुम्हें प्रस्वाप अस्त्र न छोड़ने की आज्ञा दे रहे हैं। इसलिए तुम इस समय उस अस्त्र का प्रयोग मत करो। परशुरामजी महा-तपस्वी, ब्रह्मनिष्ठ, ब्राह्मण और [नारायण का अवतार होने के सिवा] तुम्हारे माननीय गुरु हैं। इस कारण किसी तरह उनका अपमान मत करो।

उसी समय वे आठों ब्राह्मण फिर मुझे आकाश में देख पड़े। उन्होंने मुसकाकर मुझसे कहा—हे भीष्म, देवर्षि नारद जो कहते हैं वही करो। इनकी आज्ञा लोकों के लिए मङ्गल-दायिनी होती है। हे दुर्योधन, उन ब्राह्मणों के यों कहने पर मैंने प्रस्वाप अस्त्र का उपसंहार कर लिया और ब्रह्मास्त्र को ही उद्दीपित किया। महात्मा परशुराम ने प्रस्वाप अस्त्र का प्रयोग न होते देखकर निष्फल क्रोध से गरजकर कहा—भीष्म ने मुझ मन्दमति को जीत लिया!

इसी बीच में परशुरामजी ने देखा कि उनके पिता और माननीय पितामह वहाँ पर आ गये। वे परशुरामजी के सामने जाकर समझाते हुए मधुर वचनों से कहने लगे—बेटा, भीष्म ऐसे क्षत्रिय से युद्ध करने का साहस अब कभी न करना। युद्ध करना क्षत्रिय का ही धर्म है। १० ब्राह्मणों का परम धन और धर्म वेद-शास्त्र का पढ़ना और व्रतचर्या ही है। इसी कारण हम पहले भी शस्त्र-धारण का उग्र कार्य छोड़ देने के लिए कह चुके हैं; पर तुमने नहीं माना। भीष्म के साथ युद्ध करके तुम उसका फल पा चुके। अब कभी युद्ध न करना। जाओ, धनुष को छोड़-कर तपस्या में मन लगाओ। देखो, शान्तनु के पुत्र भीष्म को देवताओं ने यह कहकर युद्ध से रोक दिया है कि 'हे भीष्म, यह युद्ध बन्द कर दो। हमारा तुमसे बारम्बार कहना है कि

अपने गुरु परशुराम से युद्ध मत करो। हे कुरुश्रेष्ठ, युद्ध में गुरु को जीतना तुम्हारा न्यायोचित कार्य नहीं कहा जा सकता। हे भीष्म, युद्धभूमि में ब्राह्मण और गुरु का सम्मान करके इस इरादे को छोड़ दो'। हे परशुराम, हम तुम्हारे पितर और माननीय हैं। इसी लिए तुमसे युद्ध बन्द करने के लिए कह रहे हैं। पुत्र! भीष्म वसुओं का अवतार हैं। बड़े भाग्य की बात है कि तुम उनसे लड़कर भी अब तक जीवित हो। शान्तनु और गङ्गा के पुत्र, महा-यशस्वी, वसुओं के अवतार इन भीष्म को तुम कैसे जीत सकते हो? इसलिए युद्ध बन्द कर दो। विधाता ने इन्द्र के पुत्र, पाण्डवश्रेष्ठ, महावली, सनातन देव प्रजापति नर के अवतार २० अर्जुन के हाथ से ही भीष्म की मृत्यु लिखी है।

पितरों के ये वचन सुनकर परशुरामजी ने उनसे कहा—मैं युद्ध से विमुख न होऊँगा; मेरा यही व्रत है। आज तक मैंने कभी युद्ध से मुँह नहीं मोड़ा। आप लोग जाकर भीष्म को चाहे युद्ध से हटा दीजिए; मैं युद्ध से हट नहीं सकता।

हे दुर्योधन, तब नारद को साथ लेकर ऋचीक आदि महर्षि मेरे पास आये और कहने लगे—हे भीष्म, युद्ध बन्द कर दो; ब्राह्मण और गुरु परशुराम का सम्मान करो।

राजन्, तब मैंने भी क्षत्रिय-धर्म के अनुसार उनसे कहा—मान्यवरो, मेरा यह नियम है कि मैं विमुख होकर या पीठ में बाण की चोट खाकर संग्राम से नहीं लौटता। मेरा दृढ़ सङ्कल्प है कि मैं लोभ, दीनता, भय, आदि किसी कारण से क्षत्रिय-धर्म को नहीं छोड़ूँगा।

अब नारद आदि ऋषि और मेरी माता गङ्गाजी युद्धभूमि में आकर हम दोनों के बीच में खड़ी हो गईं। किन्तु मैं पहले की ही तरह दृढ़ निश्चय से धनुष पर बाण चढ़ाये युद्ध के लिए डटा खड़ा रहा। तब उन लोगों ने परशुरामजी से कहा—हे परशुराम, ब्राह्मण का हृदय मक्खन की तरह मुलायम कहा गया है। इसलिए तुम्हीं शान्त होकर युद्ध से हट जाओ। भीष्म को ३० तुम नहीं मार सकते और भीष्म तुम्हें नहीं मार सकते। इसलिए यह संग्राम व्यर्थ है। हे दुर्योधन, यों कहकर बीच में अड़कर उन ऋषियों ने परशुरामजी से धनुष रखवा दिया।

इसी समय फिर वे, आठ ग्रहों के समान उदय को प्राप्त, तेजस्वी आठों ब्राह्मण मुझे देख पड़े। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक मुझसे कहा—'हे भीष्म, अब तुम विनीत भाव से अपने गुरु परशु-राम के पास जाकर युद्ध शान्त करो, जिसमें सब लोकों का हित हो।' परशुरामजी को पितरों के अनुरोध से शस्त्र-त्याग करते देखकर मैंने उन ब्राह्मणों का कहा मान लिया। मेरे शरीर में भी हज़ारों घाव थे। उसी हालत से परशुरामजी के पास जाकर मैंने उनके चरणों में प्रणाम किया। भक्ति के साथ मुझे प्रणाम करते देखकर महातपस्वी परशुराम ने भी प्रसन्नतापूर्वक हँसकर मुझसे कहा—हे वीर भीष्म, इस पृथ्वी पर तुम्हारे समान वली और योद्धा क्षत्रिय दूसरा नहीं है। इस युद्ध में तुमने मुझे सन्तुष्ट कर दिया। मैं आज्ञा देता हूँ, अपनी नगरी को जाओ।

इसके बाद उन सब महात्माओं के बीच मेरे सामने काशिराज की कन्या अम्बा को बुलाकर वे दीन भाव से इस प्रकार कहने लगे। ३७

एक सौ छियासी अध्याय

अम्बा का परशुरामजी से निराश होकर फिर तप करने के लिए जाना

परशुरामजी ने कहा—राजकुमारी, सबके सामने मैंने यथाशक्ति पौरुप दिखाया और दिव्य अस्त्रों से युद्ध किया। मैं भीष्म को परास्त नहीं कर सका। मैं अपनी सारी शक्ति और पूरा बल लगाकर तुम्हारी इष्टसिद्धि के लिए उद्योग कर चुका। मुझमें इतनी ही शक्ति और इतना ही बल है। इसलिए अब तुम्हारा जहाँ जी चाहे वहाँ जाओ। अथवा इसके सिवा और जो कुछ कहो वह मैं करूँ। इस समय तुम भीष्म की ही शरण में जाओ; तुम्हारे लिए दूसरा उपाय नहीं है। तुम्हारे सामने ही दिव्य अस्त्र और बाण चलाकर भीष्म ने मुझे जीत लिया है। हे दुर्योधन, इतना कहकर परशुरामजी लम्बी साँस लेकर चुप हो रहे।

तब अम्बा ने कहा—भगवन्, इसमें सन्देह नहीं कि युद्ध में देवता भी उदारमति भीष्म को जीत नहीं सकते। आपने उत्साहपूर्वक यथाशक्ति मेरे काम के लिए उद्योग किया; किन्तु भीष्म का पौरुप और अद्भुत अस्त्र-बल अत्यन्त अनिवार्य होने के कारण आप उन्हें हरा नहीं सके; परन्तु मैं अब भीष्म की शरण में नहीं जाऊँगी। इस समय मैं कहीं जाकर ऐसा उपाय करूँगी जिसमें भीष्म को मारकर अपनी इच्छा पूरी कर सकूँ। राजन्, क्रोध से आँखें लाल किये हुए अम्बा इतना कहकर मेरे वध की इच्छा से तप करने के लिए वहाँ से चल दी। १०

इसके बाद परशुरामजी यथोचित रूप से मेरा सम्मान करके, मुझसे विदा होकर, ऋषियों के साथ महेन्द्र पर्वत को चले गये। मैं भी रथ पर चढ़कर अपने नगर में आया। ब्राह्मण लोग मेरी स्तुति करने लगे। माता सत्यवती के पास जाकर मैंने आदि से अन्त तक सब हाल कहा। उन्होंने मेरा अभिनन्दन किया। अब मैंने अम्बा के कामों की ख़बर लाने के लिए निपुण, बुद्धिमान्, जासूसों को आज्ञा दी। वे मेरा प्रिय करने के लिए अम्बा का पीछा करके जहाँ वह जाती थी, जो करती और कहती थी, सो सब नित्य मेरे पास कहला भेजते थे। भैया, अम्बा जब से तपस्या का इरादा करके वन को गई तब से मैं व्यथित, दीन और किंकर्तव्यविमूढ़ सा होकर चिन्ता करने लगा। तपस्या में तत्पर व्रतधारी ब्राह्मणों के सिवा कोई क्षत्रिय आज तक अपने पराक्रम से मुझे जीत नहीं सका। इसके बाद मैंने तपस्वी नारद और व्यासजी के आगे सब वृत्तान्त कहा। उन्होंने मुझसे कहा—भीष्म, काशिराज की कन्या के तप का हाल सुनकर तुम खेद न करो। कोई भी पौरुप के द्वारा दैव को मिथ्या नहीं कर सकता।

उधर अम्बा यमुना के किनारे तपोवन में जाकर अलौकिक उग्र तप करने लगी। उसका शरीर क्षीण और रूखा हो गया, केशों की जटाएँ वन गईं, शरीर में मैल जम गया। यों पेड़ की

तरह खड़े रहकर, खाना-पीना छोड़कर, केवल हवा के सहारे वह छः महीने तक तप करती रही। फिर उपवास के साथ यमुना-जल के भीतर, केवल जल का आचमन करके, एक वर्ष तक तप करती रही। फिर एक वर्ष तक पेड़ से गिरे सूखे पत्ते चवाकर और एक वर्ष तक तीव्र क्रोध के मारे अँगूठे के वल पृथ्वी पर खड़े रहकर तप किया। अम्बा ने इस तरह वारह वर्ष तक घोर तप करके तीनों लोकों को सन्ताप से व्याकुल कर दिया। अम्बा के भाई-वन्धुओं ने विशेष यत्न किया, पर वे उसे उसके इरादे से डिगा नहीं सके।

२०

इसके वाद अम्बा वत्सभूमि नाम के तपोवन में पहुँची। उस तपोवन में अनेक तपस्वी और सिद्ध-चारण आदि रहते हैं। वहाँ पर वह पवित्र तीर्थों में स्नान करती हुई अपनी इच्छा के अनुसार इधर-उधर विचरने लगी। इस तरह दुष्कर व्रत और तप करती हुई अम्बा क्रमशः नन्दाश्रम, उलूकाश्रम, च्यवनाश्रम, ब्रह्मस्थान, प्रयाग, देवयजनतीर्थ, देवारण्य, भोगवती, विश्वामित्राश्रम, माण्डव्याश्रम, दिलीपाश्रम, रामह्रद और पैल-गर्ग के आश्रम में गई। इन स्थानों में स्नान करके उसने कठोर तप किया। इसी समय मेरी माता गङ्गाजी ने जल के भीतर प्रकट होकर अम्बा से कहा—हे राजकुमारी, तुम ऐसा क्लेश क्यों सह रही हो ?

३०

अम्बा ने हाथ जोड़कर कहा—हे कमल-नयनी, महावली परशुराम भी भीष्म से हार गये। भीष्म को कोई हरा नहीं सकता। इस कारण मैं खुद उन्हें मारने के लिए तप कर रही हूँ। पृथ्वी भर में घूमकर, तप करके, जिस तरह होगा, मैं भीष्म को परास्त करूँगी। भीष्म की मृत्यु ही मेरी इस तपस्या का फल और उद्देश्य है।

गङ्गाजी ने कहा—भद्रे, तुम्हारा यह अनुष्ठान अत्यन्त कुटिल और अनुचित है। इस कारण कभी तुम्हारा मनोरथ पूरा न होगा। जो तुम भीष्म को मारने के लिए तप करते-करते अपना शरीर छोड़ दोगी तो कुटिल गति, कुतीर्थसम्पन्न, भयानक जल-जन्तुओं से पूर्ण, भयङ्कर

नदी की योनि पाओगी। केवल चार महीने, बरसात भर, तुम जल से भरी रहोगी। हे दुर्योधन, मुसकाती हुई माता गङ्गाजी यों कहकर अन्तर्द्धान हो गईं।

अम्बा फिर कभी आठवें और कभी दसवें महीने कुछ जल पीकर तप करने लगी। कुछ दिन के बाद उसने जल का आचमन भी छोड़ दिया तीर्थयात्रा के लोभ से अम्बा फिर वत्स-भूमि में आकर रहने लगी। वहाँ तप के प्रभाव से उसने आधे शरीर से तो कन्या का रूप रक्खा और आधे शरीर से वह जल-जन्तुपूर्ण, दुस्तर, कुटिल बरसाती नदी होकर प्रबल वेग से बहने लगी। ४१

एक सौ सत्तासी अध्याय

अम्बा का चिता में जलना और राजा द्रुपद के यहाँ उत्पन्न होना

भीष्म पितामह कहते हैं कि इसके बाद तपस्वी ऋषियों ने अम्बा को दृढ़ सङ्कल्प के साथ तप में तत्पर देखकर मना करते हुए कहा—हे राजकुमारी, तुम तप करना छोड़ दो; हमसे कहो, हम तुम्हारा कार्य कर देंगे।

अम्बा ने कहा—ऋषिगण, भीष्म ने पहले हर लाकर और फिर त्यागकर मुझे स्वामी-सुख और गृहस्थाश्रम के धर्म से वञ्चित कर दिया है। इस समय उन्हीं की मृत्यु के लिए मैं यह घोर तप कर रही हूँ। और किसी का अनिष्ट करना मेरा उद्देश्य नहीं है। मैं भीष्म को मारकर ही दम लूँगी। यही मेरा प्रधान सङ्कल्प है। मैं उन्हीं के कारण ऐसे कठिन क्लेश सह रही हूँ, पति-सुख से भ्रष्ट हुई हूँ। मैं उनके दोष से 'न स्त्री और न पुरुष' होकर समय बिता रही हूँ। मैंने निश्चय कर लिया है कि भीष्म को मारे बिना कभी न रहूँगी। स्त्रीभाव से खिन्न होकर मैंने पुरुषों के समान पौरुष का काम करने का निश्चय कर लिया है। मैं भीष्म से बदला लेना चाहती हूँ, इस कारण आप लोग मुझे मना न करें।

उस समय स्वयं भगवान् शङ्कर उन ब्राह्मणों के बीच अम्बा के सामने अपने रूप से प्रकट हुए और अम्बा से कहने लगे—पुत्री! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, इसलिए मुझसे वरदान माँगो। अम्बा ने कहा—भगवन्, मुझे भीष्म को मारने की इच्छा है। शिवजी ने कहा—तुम अवश्य भीष्म को मार सकोगी। अम्बा ने फिर कहा—दीनानाथ! मैं स्त्री हूँ, इसलिए किस तरह जय प्राप्त कर सकूँगी? स्त्री-स्वभाव से और इतने दिन तप करने के कारण मेरा हृदय बिलकुल ही शान्त हो रहा है। आप कह चुके हैं कि मैं भीष्म को मार सकूँगी। इसलिए ऐसा उपाय कीजिए १० जिसमें आपका दिया यह वर सत्य हो। मैं युद्ध में भीष्म को मार सकूँ, यही मेरी इच्छा है। रुद्र ने कहा—भद्रे, मेरा वचन झूठ नहीं हो सकता; वह अवश्य सत्य होगा। तुम

[दूसरे जन्म में] पुरुषत्व प्राप्त करके युद्ध में भीष्म को मारोगी। उस जन्म में भी तुम्हें इस जन्म का सब वृत्तान्त स्मरण रहेगा। तुम राजा द्रुपद के यहाँ जन्म लेकर महारथी, शीघ्रता के साथ युद्ध करनेवाले, फुरतीले पुरुष का रूप धारण करोगी। हे कल्याणी, मेरा यह कहना मिथ्या नहीं होगा। हे दुर्योधन, भगवान् शङ्कर इतना कहकर ब्राह्मणों के सामने अन्तर्द्धान हो गये।
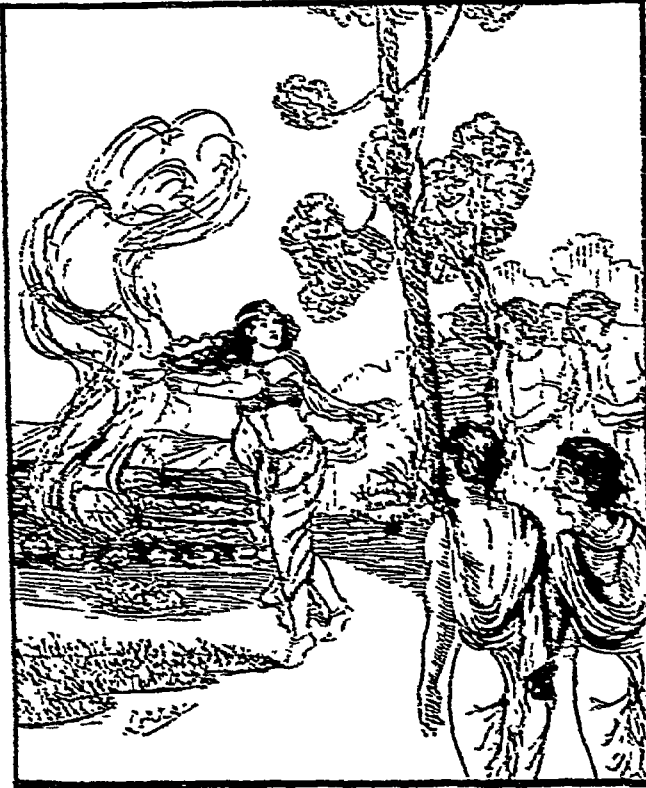
इसके बाद तपस्विनी अम्बा ने वन से सूखी लकड़ियाँ लाकर उसी समय यमुना के किनारे एक बड़ी सी चिता लगाई और उसमें आग लगा दी। चिता के जल उठने पर अम्बा ने ब्राह्मणों के आगे क्रोध के साथ कहा—मैं भीष्म को मारने के लिए इस आग में प्रवेश करती हूँ। बस अम्बा उस चिता में बैठ गई। १९

एक सौ अट्ठासी अध्याय

राजा द्रुपद के यहाँ कन्या का उत्पन्न होना

दुर्योधन ने पूछा—हे पितामह, शिखण्डी पहले कन्या था; वह पुरुष कैसे हो गया ?

भीष्मजी ने कहा—राजेन्द्र, द्रुपद राजा की रानी के कोई पुत्र नहीं था। इसी समय पुत्र-प्राप्ति के लिए राजा द्रुपद घोर तप करके शङ्कर की आराधना करने लगे। मेरा वध भी राजा को अभीष्ट था, इसलिए वे कन्या नहीं, पुत्र ही चाहते थे। राजा द्रुपद ने कठोर तप से शङ्कर को प्रसन्न करके उनसे कहा—भगवन्, मेरे एक ऐसा पुत्र हो जो भीष्म को मारे। मैं यही वर माँगता हूँ। महादेवजी ने कहा—राजन्, तुम्हारे एक कन्या होगी, पर वह पीछे से पुरुष हो जायगी। मेरा वचन मिथ्या नहीं हो सकता। इसलिए अब तप मत करो।

राजा द्रुपद लौटकर अपने नगर में गये। उन्होंने रानी से कहा—प्रिये, मैंने बड़े यत्न से तप करके महादेवजी को सन्तुष्ट किया, तब उन्होंने मुझे यह वर दिया है कि तुम्हारे एक

कन्या होगी, जो अन्त को पुरुष हो जायगी। मैंने उनसे फिर पुत्र के लिए प्रार्थना की; किन्तु उन्होंने कहा कि मेरा वचन मिथ्या नहीं हो सकता।

इसके उपरान्त द्रुपद की रानी ने ऋतु के समय विधिपूर्वक स्वामी की सेवा करके गर्भ धारण किया। वह गर्भ दिन-दिन बढ़ने लगा। पुत्र की इच्छा रखनेवाले राजा द्रुपद पुत्र-स्नेह के कारण सब तरह से अपनी रानी की सेवा का प्रबन्ध करके हर समय उनकी इच्छाएँ पूरी करने के लिए तैयार रहते थे। रानी के यथासमय एक परम सुन्दरी कन्या पैदा हुई; किन्तु रानी ने प्रसिद्ध कर दिया कि मेरे पुत्र उत्पन्न हुआ है। पुत्रहीन राजा द्रुपद को शङ्कर के वरदान पर विश्वास था, इसलिए उन्होंने कन्या का होना छिपाकर पुत्र की तरह उसके सब जातकर्म आदि संस्कार किये। रानी ने भी उस कन्या को सबसे छिपाकर असली हाल किसी पर प्रकट नहीं होने दिया। राजा द्रुपद के सिवा और किसी को यह गुप्त रहस्य नहीं मालूम हुआ। उस कन्या का नाम मर्दों का सा शिखण्डी रक्खा गया। केवल मुझे ही गुप्तचर के द्वारा, नारदजी के कहने से और अम्बा की तपस्या का हाल मालूम होने से, शिखण्डी का रहस्य विदित हो गया था। ९ २०

एक सौ नवासी अध्याय

शिखण्डी का विवाह

भीष्मजी ने कहा—हे दुर्योधन, इसके बाद राजा द्रुपद पुरुषवेश में छिपी हुई कन्या को चित्र-रचना और अन्य अनेक शिल्पों की शिक्षा दिलाने लगे। द्रोणाचार्य उसे अस्त्र-शस्त्र की कला सिखाने के लिए नियुक्त हुए। राजा द्रुपद की रानी ने पुत्र की तरह अपनी कन्या के ब्याह के लिए राजा से अनुरोध किया। कन्या को जवान देखकर राजा और रानी दोनों को चिन्ता हुई।

राजा ने रानी से कहा—प्रिये, शङ्करजी की आज्ञा से मैंने कन्या को छिपा रक्खा है। अब वह शोक बढ़ानेवाली कन्या जवान हुई है। रानी ने कहा—महाराज, भगवान् शङ्कर तीनों लोकों के ईश्वर हैं; उनकी बात झूठी या निष्फल होना असम्भव है। मैं इस समय जो कहती हूँ वह सुनकर उसके अनुसार काम कीजिए। मुझे दृढ़ निश्चय है कि महादेवजी का कहा कभी मिथ्या न होगा। इसलिए इस समय विधिपूर्वक पुत्र की तरह कन्या का ब्याह कर दीजिए।

द्रुपद और उनकी रानी दोनों ने यह निश्चय करके, सब राजाओं के कुल आदि की जाँच करके, कन्या के लिए कन्या की खोज करना शुरू किया। इसके बाद द्रुपद ने बड़े पराक्रमी और दुर्जय दशार्ण देश के राजा हिरण्यवर्मा से उनकी कन्या माँगी। हिरण्यवर्मा ने ख़ुशी के साथ अपनी कन्या शिखण्डी को ब्याह दी। ब्याह के बाद शिखण्डी कांपिल्य नगर (द्रुपद की १०

राजधानी) को लौट आया। यथासमय हिरण्यवर्मा की कन्या जवान हुई और उसे मालूम हो गया कि शिखण्डी पुरुप नहीं, स्त्री है। तब उसने लज्जित होकर यह हाल अपनी धाय और सखियों से कह दिया। धाय और सखियाँ यह हाल सुनकर बहुत दुःखित हुईं। उन्होंने कुछ दासियों के द्वारा यह समाचार हिरण्यवर्मा के पास कहला भेजा। सब हाल सुनकर दशार्ण-नरेश क्रोधित हो उठे। उस समय भी शिखण्डी अपना स्त्रीभाव छिपाकर, पुरुप वेष से, अपने पिता राजा द्रुपद के यहाँ सुखपूर्वक रहता था।

कुछ दिन के बाद यह हाल जानने पर क्रोध करके हिरण्यवर्मा ने राजा द्रुपद के पास अपना दूत भेजा। दूत ने द्रुपद के पास आकर एकान्त में कहा—महाराज, दशार्णनरेश ने २० आपसे कहा है कि हे द्रुपद, तुमने दुर्बुद्धिवश मेरा अपमान किया है, मुझे धोखा दिया है। इससे मुझे अत्यन्त सन्ताप और क्रोध हुआ है। तुमने जिस दुर्बुद्धि के वश होकर अपनी कन्या के साथ मेरी कन्या का ब्याह करके मुझे धोखा दिया है उसका फल तुम्हें शीघ्र ही भोगना पड़ेगा। अपने सब कार्य और सुख-भोग कर लो; मैं शीघ्र ही तुम्हारे अनु-२३ चरों, मन्त्रियों और भृत्योंसहित तुमको मार डालूँगा।

एक सौ नब्बे अध्याय

राजा हिरण्यवर्मा का फिर दूत भेजना

भीष्मजी कहते हैं—हे दुर्योधन, दूत के ये वचन सुनकर पकड़े गये चोर की तरह राजा द्रुपद कुछ उत्तर न दे सके। उन्होंने मधुरभाषी दूतों को बुलाकर अपने सम्बन्धी को शान्त करने के लिए भेजा। राजा ने उनके द्वारा कहला भेजा कि राजन्, आपको झूठी ख़बर मिली है। शिखण्डी स्त्री नहीं, पुरुप ही है।

दशार्णराज ने फिर पता लगाया। उन्हें मालूम हुआ कि शिखण्डी असल में कन्या ही है। तब उन्होंने रानी की सलाह से यह हाल अपने मित्रों के पास कहला भेजा और फिर सेना जमा करके राजा द्रुपद के साथ युद्ध करने का इरादा किया। हिरण्यवर्मा कर्तव्य-निश्चय के लिए अपने मन्त्रियों के साथ सलाह करने लगे। वहाँ हिरण्यवर्मा के सम्बन्धी सब राजाओं ने यह निश्चय किया कि अगर शिखण्डी वास्तव में पुरुप न हो, तो हम लोग द्रुपद को क़ैद करके, शिखण्डी को और उन्हें मार डालेंगे और उनका राज्य दूसरे राजा को दे देंगे। हिरण्य-वर्मा ने फिर शीघ्रगामी दूतों द्वारा राजा द्रुपद से कहला भेजा कि हे द्रुपद, तुमने जो पाप किया १० है उसके बदले में मैं शीघ्र आकर तुमको मारूँगा।

उन दूतों ने द्रुपद के पास आकर सब हाल कहा। द्रुपद स्वभाव से ही डरपोक थे। वे बहुत ही डरे। शोक से विह्वल द्रुपद ने हिरण्यवर्मा के दूतों को विदा कर दिया और फिर

एकान्त में अपनी रानी से कहा—प्रिये, प्रबल पराक्रमी सम्बन्धी हिरण्यवर्मा सेना जमा करके हम पर चढ़ाई का उद्योग कर रहे हैं। समझ में नहीं आता कि इस समय इस कन्या के बारे में क्या करना चाहिए। रानी, हिरण्यवर्मा तुम्हारे पुत्र शिखण्डी को कन्या समझ रहे हैं। वे समझते हैं कि हमने कन्या को पुत्र बताकर उन्हें धोखा दिया है। इसी कारण अपने मित्रों को साथ लेकर सेना सहित वे मुझे मारने के लिए आ रहे हैं। भद्रे, इस बारे में सच और झूठ जो हो वह कह दो। यह शिखण्डिनी कन्या है। इसके कारण मुझ पर आफ़त आ रही है। तुम्हारी भी बदनामी होगी। अतएव सबकी भलाई के लिए सच बात कह दो। उसे सुनकर मैं जो कर्तव्य समझूँगा वही करूँगा। और, हे शिखण्डिनी, तुम मत डरो। मेरे पुत्र नहीं है, इसलिए तुम पर मुझे अपार स्नेह है। मैं इस विपत्ति से तुमको बचाने का उपाय अवश्य करूँगा। हे रानी, मैंने दशार्णनरेश को धोखा दिया है। बताओ, अब क्या करना चाहिए? तुम्हारी बात सुनकर मैं वही करूँगा जिसमें भलाई होगी।

हे दुर्योधन, यद्यपि राजा को सब हाल मालूम था, तो भी सर्वसाधारण के आगे अपने को दोष से बचाने के लिए उन्होंने रानी से यों पूछा। २२

एक सौ इक्यानबे अध्याय

शिखण्डी का वन-गमन

भीष्मजी कहते हैं—तब शिखण्डिनी की माता ने पति से अपनी सन्तान के बारे में सच्चा-सच्चा हाल कह दिया कि महाराज, मेरे कोई पुत्र नहीं था, इस कारण सौतों के डर से मैंने कन्या को पुत्र बताया था। आपने भी प्रीतिपूर्वक मेरी बात का अनुमोदन करके पुत्र की तरह कन्या के जातकर्म आदि सब संस्कार किये और अन्त को हिरण्यवर्मा की बेटी के साथ उसका व्याह कर दिया। मैंने भी उसका अनुमोदन किया। देववाक्य के अनुसार यह कन्या पुरुष हो जायगी, यह सोचकर ही मैंने इसको पुरुष प्रसिद्ध किया था।

अब राजा द्रुपद निपुण मन्त्रियों से सब हाल कहकर दशार्णराज के कोप से प्रजा की रक्षा की सलाह करने लगे। वास्तव में उन्होंने हिरण्यवर्मा के साथ छल नहीं किया था। अब उस सम्बन्ध को तोड़ देने का उन्होंने विचार किया। द्रुपद का नगर पहले से ही सुरक्षित था, तथापि इस समय आनेवाली विपत्ति का ख़याल करके वे और भी सावधानी से उसकी रक्षा का प्रबन्ध करने लगे। राजन्, हिरण्यवर्मा से विरोध होने के कारण द्रुपद को और उनकी रानी को बड़ा खेद हुआ। इसके बाद वे सम्बन्धी के साथ होनेवाले युद्ध को रोकने के लिए देवाराधना करने लगे। उन्हें आराधना करते देखकर रानी ने कहा—सुख के समय भी देवाराधना करनी चाहिए, फिर दुःख और विपत्ति के समय तो देवाराधना करना अत्यन्त आवश्यक १०

है। आप ब्राह्मणों और देवताओं की पूजा कीजिए। हिरण्यवर्मा से होनेवाले भय को दूर करने के लिए होम करना और दक्षिणा देना भी उचित होगा। इस समय वही उपाय करना चाहिए जिसमें युद्ध किये विना ही यह सङ्कट टल जाय। देवताओं के प्रसन्न होने पर मनोरथ का सिद्ध होना असम्भव नहीं है। दैव और पौरुष अगर विना विरोध के एक साथ होते हैं तो अवश्य इच्छा पूरी होती है। आप मन्त्रियों के साथ सलाह करके नगर की रक्षा और यथेष्ट रूप से देवताओं की आराधना कीजिए।

सबको शोक से व्याकुल होकर इस प्रकार बातचीत करते देखकर शिखण्डिनी को बड़ी लज्जा मालूम हुई। उसने सोचा कि ये सब लोग मेरे ही लिए क्लेश भोग रहे हैं और दुःखित हो रहे हैं, इसलिए मेरा मर जाना ही अच्छा है। अब उसने प्राण दे देने का निश्चय कर लिया। शोक से व्याकुल शिखण्डिनी घर छोड़कर चुपचाप एक घने वन में चली गई।

स्थूणाकर्ण नाम का एक समृद्धिशाली यक्ष उस वन की रक्षा करता था। उसके डर से २० उस वन में कोई नहीं जाता था। उस वन में उशीर से सुगन्धित, अगुरु धूम से सुवासित, ऊँची दीवारों और फाटकों से शोभित, एक सफ़ेद महल था। द्रुपद की कन्या उसी में जाकर रही और मरने की इच्छा से खाना-पीना छोड़कर अपना शरीर सुखाने लगी।

एक दिन स्थूणाकर्ण ने उसे देखा। तब वह कोमल मधुर स्वर से कहने लगा—हे सुन्दरी, तुम किसलिए यह उग्र व्रत कर रही हो? बतलाओ, मैं अभी तुम्हारी इच्छा पूरी करने को तैयार हूँ। शिखण्डिनी ने कहा—आप मेरा कार्य नहीं सिद्ध कर सकते। यक्ष ने कहा—हे राजकुमारी, मैं यक्षराज कुबेर का सेवक हूँ। इसलिए सहज ही मुँहमाँगा वर दे सकता हूँ। तुम अपना अभीष्ट बताओ, देने योग्य न होने पर भी मैं उसे दूँगा।

तब शिखण्डिनी ने अपना सब हाल सुनाकर कहा—प्रबल पराक्रमी दुर्धर्ष राजा हिरण्यवर्मा क्रोधित होकर मेरे पिता पर चढ़ाई किये हुए आ रहे हैं। मेरे पिता पुत्र-हीन हैं। मैं आपसे यही माँगती हूँ कि वे इस विपत्ति से बच जायँ। आप मेरी और मेरे पिता-माता

एक दिन स्थूपाकर्ण ने उसे देखा। तब वह कोमल मधुर स्वर से कहने लगा—
हे सुन्दरी, तुम किस लिए यह उग्र व्रत कर रही हो ?

(पृ० १८६२)

की रक्षा कीजिए। हे निष्पाप, आप प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि मेरा दुःख दूर करेंगे। इसलिए ऐसी कृपा कीजिए कि मैं स्त्री से पुरुष हो जाऊँ। हे यक्ष, राजा हिरण्यवर्मा आकर मेरे नगर को नष्ट-भ्रष्ट न करने पावें; उसके पहले ही आप मुझ पर कृपा कीजिए। ३०

एक सौ बानबे अध्याय

शिखण्डी के वृत्तान्त का उपसंहार

भीष्मजी कहते हैं कि हे दुर्योधन, तब यक्ष ने होनहार से मोहित होकर शिखण्डिनी से कहा—हे सुन्दरी, मैं अवश्य तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा; किन्तु उसके लिए एक शर्त होगी। मैं कुछ समय के लिए अपना पुरुषचिह्न तुमको दे दूँगा। निर्दिष्ट समय पर तुम्हें, मेरा चिह्न मुझे देकर, अपना स्त्री-चिह्न मुझसे ले लेना पड़ेगा। इसके लिए तुम प्रतिज्ञा करो। मैं आकाशचारी और जहाँ चाहे वहाँ जा सकनेवाला यक्ष हूँ। इसलिए तुम मेरी कृपा से पुरुष होकर अपने नगर और बान्धवों की रक्षा करो। तुम उक्त प्रतिज्ञा करो, मैं तुम्हें पुरुष-चिह्न देकर तुम्हारा हित करने को तैयार हूँ।

शिखण्डिनी ने कहा—मैं निर्दिष्ट समय पर आपका पुरुषचिह्न आपको फेर दूँगी। आप कुछ दिन तक मेरे लिए स्त्री-चिह्न धारण कीजिए। हिरण्यवर्मा जब प्रसन्न होकर अपने नगर को लौट जायँगे तब मैं फिर स्त्री हो जाऊँगी और आप पुरुष बन जाइएगा।

भीष्मजी कहते हैं—परस्पर यों प्रतिज्ञा करके दोनों ने अपने-अपने चिह्न बदल लिये। स्थूणाकर्ण स्त्रीरूप हो गया और शिखण्डी, तेजस्वी यक्ष का रूप पाकर, पुरुष हो गया। शिखण्डिनी पुरुषचिह्न पाकर बहुत प्रसन्न हुई। नगर में पहुँचकर उसने सब हाल कहा। १० सुनकर राजा द्रुपद अत्यन्त आनन्दित हुए। उस समय उन्हें भगवान् भवानीपति की बात याद आ गई। तब द्रुपद ने हिरण्यवर्मा के पास दूत के हाथ कहला भेजा कि महाराज, मेरा पुत्र सचमुच पुरुष है। आप इस पर विश्वास कीजिए।

दशार्णनरेश जब काम्पिल्य नगर के पास पहुँच गये तब उन्होंने एक ब्राह्मण को, उचित सत्कार करके, राजा द्रुपद के पास भेजा। उन्होंने उस ब्राह्मण के द्वारा कहला भेजा कि हे मूढ़ द्रुपद, तुमने मुझे धोखा देकर अपनी कन्या के साथ मेरी कन्या का ब्याह किया है। मैं उसका उचित दण्ड देने के लिए आया हूँ, तैयार रहो।

वह पुरोहित जब द्रुपद की सभा में पहुँचा तब द्रुपद और उनके पुत्र ने गाय, अर्घ्य, पाद्य आदि देकर उसका सम्मान किया। ब्राह्मण ने उनकी पूजा नहीं स्वीकार की। वह हिरण्य-वर्मा का सन्देशा इस प्रकार कहने लगा—राजा हिरण्यवर्मा ने कहा है कि रे दुर्बुद्धि द्रुपद, २०

तुम आकर मुझसे युद्ध करो। मैं शीघ्र ही तुम्हारे मन्त्री, बन्धु-बान्धव, पुत्र आदि को और तुमको मारकर अपना क्रोध शान्त करूँगा।

हिरण्यवर्मा के कहने से, मन्त्रियों के सामने, सभा में ब्राह्मण ने जब इस प्रकार तिरस्कार के वचन कहे तब द्रुपद ने नम्रता के साथ कहा—ब्रह्मन्, आपने मेरे सम्बन्धी हिरण्यवर्मा के कहने से जो कुछ कहा है उसका उत्तर मेरा एक दूत जाकर उन्हें देगा।

इसके बाद द्रुपद ने एक वेद-पाठी बुद्धिमान् ब्राह्मण को दूत बनाकर हिरण्यवर्मा के पास भेजा। उसने द्रुपद के कथनानुसार दशार्णनरेश से कहा—महाराज, आप चलकर परीक्षा कर लीजिए। राजकुमार शिखण्डी कभी स्त्री नहीं हैं। जान पड़ता है, किसी दुष्ट ने आपसे झूठ-मूठ कह दिया है। उसकी बात विश्वास के योग्य नहीं है।

हिरण्यवर्मा बड़े असमञ्जस में पड़ गये। उन्होंने उसी समय कुछ सुन्दरी स्त्रियों को इसलिए भेजा कि वे जाकर शिखण्डी की जाँच करके बतलावें कि वह पुरुष है या स्त्री। उन स्त्रियों ने आकर परीक्षा की। जाँच-पड़ताल करके वे हिरण्यवर्मा के पास गईं और कहने ३० लगीं—शिखण्डी सचमुच पुरुष हैं। यह ख़बर सुनकर हिरण्यवर्मा बहुत प्रसन्न हुए और राजा द्रुपद से मिले। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद वे अपने दामाद शिखण्डी को हाथी, घोड़े, गाय, दास-दासी, धन-रत्न आदि देकर और झूठ बोलने के लिए अपनी बेटी को डाँटकर अपनी राजधानी को जाने की तैयारी करने लगे। राजा द्रुपद ने उनका यथोचित सत्कार किया। हे दुर्योधन, इस प्रकार हिरण्यवर्मा का क्रोध शान्त हो गया और वे सन्तुष्ट होकर अपने देश को लौट गये। इससे शिखण्डी को बड़ा हर्ष और सन्तोष हुआ।

हे कुरुकुलश्रेष्ठ, उधर कुछ समय के बाद एक दिन यक्षराज कुबेर घूमते-फिरते हुए दैवयोग से स्थूणाकर्ण के घर की ओर आ निकले। उन्होंने ऊपर से देखा कि वह घर बहुत ही विचित्र और सुन्दर बना हुआ था। मालाओं और चन्द्रातपों (चन्दोवों) से उसकी अपूर्व शोभा हो रही थी। अगुरु और गूगल का धुआँ उसमें छाया हुआ था। ध्वजा-पताकाएँ फहरा रही थीं। मांस और खाने-पीने की स्वादिष्ठ सामग्री उसमें भरी हुई थी। मणि, रत्न, सुवर्ण आदि से अलंकृत और फूलों की सुगन्ध से मनोहर वह उज्ज्वल भवन सब जगह साफ़-सुथरा था। जगह-जगह चन्दन-गुलाब-क्यौड़े आदि के जल का छिड़काव किया हुआ था। उस घर को देखकर कुबेर ने अपने साथ के यक्षों से कहा—हे यक्षो, स्थूणाकर्ण का यह घर बहुत ही सुसज्जित और भला देख पड़ता है किन्तु वह मूढ़ मेरे पास अभी तक नहीं आया। मेरी अवाई का हाल जानकर भी वह मुझसे मिलने नहीं आता, इसलिए मैं उसको दण्ड दूँगा।

यक्षों ने कहा—हे यक्षराज, स्थूणाकर्ण ने न जाने किस कारण मोहित होकर द्रुपद राजा ४० की कन्या शिखण्डिनी को अपना पुरुषचिह्न देकर उसका स्त्रीचिह्न ले लिया है। इस समय स्त्रीरूप

से वह अपने घर में है और लज्जा के मारे आपके सामने नहीं आ सकता। आप चाहें तो विमान से उतरकर उसकी दशा देख लें और उसके मुँह से सब हाल सुनकर जो कर्तव्य समझें, करें। कुबेर ने कहा—हे यक्षो, तुम स्थूणाकर्ण को मेरे पास ले आओ। मैं उसे उचित दण्ड दूँगा।

अनुचर के मुँह से यह वृत्तान्त सुनकर स्थूणाकर्ण अपने प्रभु के पास गया। लज्जा से सिर नीचा किये हुए स्थूणाकर्ण प्रणाम करके कुबेर के सामने खड़ा हो गया। कुबेर ने क्रोध के कारण काँपते हुए स्वर से शाप देकर कहा—हे स्थूण! तुमने शिखण्डी को अपना पुरुषचिह्न देकर, उसका स्त्रीचिह्न आप लेकर, यक्षों का अपमान और अत्यन्त पाप किया है। इसलिए मैं शाप देता हूँ कि तुम सदा स्त्री बने रहोगे। तुमने अत्यन्त निन्दनीय काम किया है, इसलिए तुम सदा के लिए स्त्री हो जाओगे और शिखण्डी पुरुष हो जायगा।

तब यक्षों ने कुबेर को प्रसन्न करते हुए बारम्बार यह प्रार्थना की कि इस शाप का अन्त करने की कृपा कीजिए। कुबेर ने उस यक्ष को शाप से छुटकारा देते हुए कहा—अच्छा, जब शिखण्डी मारा जायगा तब स्थूणाकर्ण फिर पुरुष हो जायगा। कुबेर के ये वचन सुनकर स्थूणा- ५० कर्ण की घबराहट कुछ कम हुई। उसके बाद स्थूणाकर्ण की की हुई पूजा स्वीकार करके यक्षों के साथ यक्षराज चले गये। कुबेर के शाप से व्यथित होकर स्थूणाकर्ण उसी वन में रहने लगा।

उधर शिखण्डी, प्रतिज्ञा के अनुसार, यथासमय स्थूणाकर्ण के पास पहुँचा और कहने लगा—लीजिए, मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने आ गया।

शिखण्डी को सरलता के साथ आया हुआ देखकर उसके सत्यपालन से सन्तुष्ट स्थूणाकर्ण ने कहा कि हे राजपुत्र, मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। हे दुर्योधन, फिर स्थूणाकर्ण ने आदि से अन्त तक अपना वृत्तान्त सुनाकर शिखण्डी से कहा—कुबेर ने तुम्हारे कारण मुझे शाप दे दिया है। इसलिए अब तुम जाओ और जी भरकर पुरुषजन्म का सुख भोगो। तुम्हारे साथ मेरी भेंट होना और फिर कुबेर का यहाँ अचानक आ जाना, ये दोनों घटनाएँ मेरे पूर्व कर्मों का फल हैं। यह मेरे भाग्य का दोष है। भाग्य में जो बदा है, वह अवश्य होगा; उसे कोई नहीं टाल सकता।

हे दुर्योधन, स्थूणाकर्ण के शापग्रस्त होने का हाल सुनकर शिखण्डी को बड़ा हर्ष हुआ। वह नगर में लौट आया। आते ही उसने चन्दन, माला आदि षोड़शोपचार सामग्री से ब्राह्मणों और देवताओं की पूजा की। चैत्य, चतुष्पथ आदि स्थानों में उत्सव, हवन होने लगे। शिखण्डी को सिद्धमनोरथ और कृतकृत्य देखकर राजा द्रुपद को और उनके भाई-बन्धुओं को बड़ी प्रसन्नता हुई। इसके बाद द्रुपद ने धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिखण्डी को द्रोणाचार्य के हाथ में सौंप दिया। हे दुर्योधन, उसी शिखण्डी ने तुम लोगों के साथ द्रोणाचार्य से धनुर्वेद के चारों अङ्ग सीखे हैं। ६०

अन्धे, बहरे, गूँगे या पागल बनकर पता लगानेवाले जो जासूस मैंने द्रुपद के नगर में भेजे थे उन्हीं ने आकर यह सब वृत्तान्त मुझसे कहा था। काशिराज की कन्या शिखण्डी के रूप से

मुझे मारने के लिए राजा द्रुपद के घर में पैदा हुई है। वह शिखण्डी युद्ध के लिए मेरे सामने आवेगा तो मैं न तो उसकी ओर देखूँगा और न उस पर प्रहार करूँगा। पृथ्वी पर मेरा यह व्रत प्रसिद्ध है कि मैं स्त्री, स्त्री-पूर्व (पहले का स्त्री) पुरुष, स्त्री-नामधारी पुरुष या स्त्रीवेष पुरुष पर कभी बाण नहीं चलाता। हे दुर्योधन, मुझे शिखण्डी के जन्म का वृत्तान्त ऐसा ही मालूम है। इसी कारण मैं उसे न मारूँगा। मैं जो शिखण्डी पर चोट करूँगा तो सज्जन मेरी निन्दा करेंगे। इसी कारण उसे युद्ध के लिए सामने आये हुए देखकर भी मैं नहीं मारूँगा।

राजा दुर्योधन ने भीष्म के मुँह से यह वृत्तान्त सुनकर सोचा कि महावीर भीष्म ने ऐसी प्रतिज्ञा करके अपने योग्य काम किया है। ७०

एक सौ तिरानबे अध्याय

भीष्म और दुर्योधन का संवाद

सञ्जय कहते हैं कि महाराज धृतराष्ट्र, रात बीतने पर आपके पुत्र दुर्योधन ने अपने सब वीर सैनिकों के सामने भीष्म पितामह से फिर पूछा—हे पितामह, हमारे पक्ष के योद्धा आप सब लोग दिव्य अस्त्रों के प्रयोग में निपुण हैं। अब यह बताइए कि आप कितने दिन में युधिष्ठिर की अपार सेना का संहार कर सकते हैं? उसमें असंख्य हाथी, घोड़े, रथ और मनुष्य हैं। महारथियों की भी संख्या बहुत है। भीमसेन, अर्जुन, धृष्टद्युम्न आदि महाबली पराक्रमी लोकपाल-सदृश वीर पुरुष उसके रक्षक हैं। युधिष्ठिर की सेना उमड़ रहे समुद्र के समान, अनिवार्य, दुर्धर्ष और देवताओं का भी सामना करने में समर्थ है। उसको आप कितने समय में मार सकते हैं? युद्धप्रिय कर्ण, महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्य, महाबली कृपाचार्य और ब्राह्मणश्रेष्ठ वीर अश्वत्थामा कितने समय में उस सेना का विनाश कर सकते हैं? यह जानने के लिए मेरे मन में बड़ा कौतूहल हो रहा है।

भीष्मजी ने कहा—हे कुरुश्रेष्ठ, शत्रुओं का बल जानने के लिए उत्सुक होना तुम्हारे योग्य कार्य है। मैं संग्राम में जैसा पौरुष, शस्त्रबल और बाहुबल दिखाऊँगा, सो कहता हूँ, सुनो। युद्धधर्म का सिद्धांत यही है कि निष्कपट पुरुष के साथ निष्कपट युद्ध और मायावी के साथ मायायुद्ध करना चाहिए। उसके अनुसार मैं नित्य पाण्डवसेना के दस हज़ार योद्धाओं और एक हज़ार रथियों को मारूँगा। भैया! मैं कवच पहनकर, रथ पर बैठकर, उत्साह के साथ, पूर्वोक्त समय और विभाग के अनुसार, शत-सहस्र-घाती बाणों की वर्षा करके एक महीने में पाण्डवों की सब सेना मार सकूँगा। १०

सञ्जय कहते हैं कि राजन्, दुर्योधन ने भीष्म के ये वचन सुनकर द्रोणाचार्य से पूछा—हे आचार्य, आप कितने समय में पाण्डवों की सेना को मार सकेंगे?

द्रोणाचार्य ने हँसकर कहा—दुर्योधन! मैं बूढ़ा हो गया हूँ, इस कारण मेरा तेज, बल और चेष्टा भी घट गई है। तो भी शायद मैं भीष्म की तरह एक महीने में अपने तीक्ष्ण बाणों से पाण्डवों की सेना को मार सकूँगा। इतनी ही मेरी शक्ति और बल की चरम सीमा है।

इसके बाद कृपाचार्य ने कहा—हे महाबाहु, मैं दो महीने में पाण्डवों की सब सेना को मार सकूँगा। अश्वत्थामा ने कहा—मैं दस दिन में पाण्डवों की सेना का संहार कर सकूँगा। कर्ण ने कहा—मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि पाँच ही दिन में पाण्डवों की सेना को नष्ट कर दूँगा। २०

कर्ण के ये वचन सुनकर भीष्म ठठाकर हँसे और कहने लगे—हे कर्ण, वासुदेव के द्वारा रक्षित अर्जुन को अभी तुमने युद्ध के मैदान में नहीं देखा, इसी से ऐसा समझ रहे हो। जब अर्जुन का सामना होगा तब ऐसी डींग न हाँक सकोगे। २२

एक सौ चौरानबे अध्याय

युधिष्ठिर और अर्जुन का संवाद

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, धर्मराज युधिष्ठिर को शत्रुओं की इस बातचीत का हाल जब मालूम हुआ तब उन्होंने अपने भाइयों को एकान्त में बुलाकर कहा—भाइयो, मैंने दुर्योधन की सेना में जिन जासूसों को भेजा था उन्होंने आकर मुझसे कहा है कि महाराज, दुर्योधन ने पितामह भीष्म से पूछा कि आप कितने दिन में पाण्डव-सेना का संहार कर सकते हैं? भीष्म ने उत्तर दिया कि मैं एक महीने में सारी पाण्डव-सेना को मार सकता हूँ। फिर द्रोणाचार्य ने भी एक महीने में हमारी सेना को मारने की प्रतिज्ञा की। कृपाचार्य ने दो महीने में यह कार्य करने की शक्ति अपने में बताई। अश्वत्थामा ने दस ही दिन में यह कार्य कर देना स्वीकार किया। फिर दिव्य अस्त्रों के जाननेवाले कर्ण ने, दुर्योधन के पूछने पर, पाँच ही दिन में सारी शत्रुसेना को मार सकने की अपनी शक्ति बतलाई।

इसलिए हे अर्जुन, मैं सुनना चाहता हूँ कि तुम कितने समय में कौरवों की सेना को मार सकते हो?

अर्जुन ने श्रीकृष्ण की ओर देखकर कहा—महाराज! वे सब विचित्र युद्ध करनेवाले, अस्त्रज्ञ, महात्मा अवश्य उतने ही समय में हमारी सेना को मार सकते हैं; किन्तु आप चिन्ता ९ न कीजिए। सच कहता हूँ, वासुदेव की सहायता पाकर एक ही रथ से भूत-भविष्य-वर्तमान चराचर जगत् और तीनों लोकों को मैं पल भर में अपने बाणों से भस्म कर सकता हूँ। किरात-रूपी भगवान् शङ्कर ने द्वन्द्वयुद्ध से सन्तुष्ट होकर मुझे जो घोर अस्त्र दिया है, वह मेरे पास है। भगवान् रुद्र प्रलय के समय सब सृष्टि का संहार करने के लिए उसी अस्त्र का प्रयोग करते हैं। कर्ण तो कोई चीज़ नहीं है; भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और अश्वत्थामा भी उस अस्त्र को नहीं जानते। किन्तु उस दिव्य अस्त्र से साधारण मनुष्यजाति का विनाश करना ठीक नहीं है। इसलिए मैं सरल-युद्ध से शत्रुओं को परास्त करूँगा। देखिए, ये सब श्रेष्ठ वीर पुरुष आपके सहायक हैं। ये लोग दिव्य अस्त्रों के ज्ञाता, युद्ध के उत्साह से परिपूर्ण, कभी न हारने-वाले, वेदों और उपवेदों के पारदर्शी वीर युद्ध में देवताओं की सेना को भी मार सकते हैं। शिखण्डी, युयुधान, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, नकुल, सहदेव, युधामन्यु, उत्तमौजा, भीष्म और द्रोण के तुल्य विराट और द्रुपद, महाबाहु शङ्ख, महाबली घटोत्कच, उसका पुत्र अञ्जनपर्वा, प्रबल परा-२० क्रमी युद्धकोविद सात्यकि, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र आदि वीर आपके पक्ष में हैं। इनके सिवा आप स्वयं दृष्टिमात्र से त्रिलोक को भस्म कर सकते हैं। आप क्रोध की दृष्टि से जिस २२ पुरुष की ओर देख लीजिए वह कभी जीता नहीं बच सकता।

एक सौ पञ्चानबे अध्याय

दुर्योधन का अपनी सेना को तीन भाग करके स्थापित करना

वैशम्पायन कहते हैं—हे जनमेजय! सूर्य की विमल प्रभा आकाश में फैल जाने पर सब राजा लोग नहा-धोकर दुर्योधन की आज्ञा से पवित्रतापूर्वक माला, सफ़ेद कपड़े, आभूषण आदि पहनकर, शस्त्र और ध्वजा आदि से सुसज्जित होकर, स्वस्तिवाचन और हवन के बाद ब्राह्मणों से आशीर्वाद ग्रहण कर युद्ध के लिए तैयार हो गये। वे सब वेदपाठी, शूर, सच्चरित्र, सुशील, योद्धाओं के गुणों और लक्षणों से अलंकृत वीर पुरुष परस्पर श्रद्धा का भाव दिखाते हुए शत्रुसेना को जीतने के उत्साह से पाण्डवसेना के सामने चले। सब योद्धा एकाग्र और गम्भीर भाव से सुशोभित हो रहे थे। अवन्ती देश के राजा विन्द और अनुविन्द, केकय और बाह्लीक देश के राजा द्रोणाचार्य के पीछे चले। अश्वत्थामा, भीष्म, जयद्रथ, दक्षिण-पश्चिम-उत्तर-पूर्व के अनेक राजा, पहाड़ी जातियों के वीर, शक, किरात, यवन, शिबिगण, वसातिगण और अपनी सेना सहित गान्धारराज शकुनि, ये लोग सेना के दूसरे भाग में रहकर द्रोणाचार्यवाले दल के पीछे चले।

अपनी सेना के साथ कृतवर्मा, महारथी त्रिगर्तराज, शल, भूरिश्रवा, शल्य, कोशलेश बृहद्रथ और दुर्योधन के सौ भाई तीसरे दल में दुर्योधन के साथ चले। इस प्रकार महारथी धृतराष्ट्र के पुत्र १० अपनी सम्मिलित सेना लेकर कुरुक्षेत्र के पश्चिम अर्धभाग में स्थित हुए।

हे जनमेजय, दुर्योधन ने सेना के लिए जो सुसज्जित शिविर बनवाये थे वे देखने में दूसरे हस्तिनापुर की बस्ती जान पड़ते थे। चतुर नगरनिवासी भी उस महाशिविर में और हस्तिनापुर की बस्ती में कुछ अन्तर नहीं जान सके। इसके सिवा राजाओं के रहने के लिए जो सैकड़ों-हज़ारों दुर्ग बनाये गये थे वे भी असली दुर्गों के समान जान पड़ते थे। वह सेना की मण्डलाकार छावनी युद्धभूमि के पाँच योजन स्थान को घेरे हुए थी। राजाओं ने बड़े उत्साह से अपनी-अपनी सेना के साथ उन विविध पदार्थों से पूर्ण सेनानिवेशों में डेरा डाला था। राजा दुर्योधन ने हाथी, घोड़े, मनुष्य आदि के साथ आये हुए उन राजाओं के खाने-पीने का बढ़िया प्रबन्ध कर रक्खा था। वह स्वयं कारीगर, मज़दूर, नौकर-चाकर, सूत-मागध-वन्दीजन, बनिये-बैपारी, वेश्याएँ, बाज़ार, जासूस, दर्शक आदि की देखभाल और रक्षा का प्रबन्ध करता था। १९

एक सौ छियानबे अध्याय

युधिष्ठिर का अपनी सेना के तीन विभाग करके युद्ध की तैयारी करना

वैशम्पायन कहते हैं—हे जनमेजय, उधर राजा युधिष्ठिर ने भी इसी तरह धृष्टद्युम्न आदि वीरों को युद्ध-भूमि में भेजा। उन्होंने चेदि, काशी और करूप आदि के सञ्चालक पराक्रमी शत्रुनाशन धृष्टकेतु, विराट, द्रुपद, युयुधान, शिखण्डी, युधामन्यु और उत्तमौजा आदि सब पुरुषों को युद्ध-भूमि में जाने के लिए आज्ञा दी। वे सब वीर सुवर्ण के कुण्डल और विचित्र कवच पहन करके घी की आहुति से प्रज्वलित अग्नि की तरह, आकाश में उदय हुए ग्रहों की तरह, शोभायमान हुए। धर्मराज युधिष्ठिर ने हाथी, घोड़े, सेना, वाहन, नौकर-चाकर, शिल्पजीवी आदि सहित उन सब राजाओं को आदर-सत्कार और तरह-तरह की खाने-पीने की सामग्री से सन्तुष्ट करके युद्धयात्रा की अनुमति दी। धृष्टद्युम्न अपनी सेना के साथ आगे चले। उनके पीछे दूसरे दल में सहायक रूप से बृहन्त, अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र चले। भीमसेन, सात्यकि और अर्जुन उनके रक्षक नियुक्त हुए।

तब योद्धा लोग घोड़ों को गहने पहनाकर सजाने लगे। इधर-उधर चल फिर रहे सैनिकों का सिंहनाद आकाश में गूँज उठा। उनके पीछे राजा विराट, राजा द्रुपद और अन्य १० राजाओं के साथ महाराज युधिष्ठिर खुद चले। धनुर्धर पुरुषों से परिपूर्ण और धृष्टद्युम्न के बाहुबल से रक्षित पाण्डवों की सेना गङ्गा के प्रवाह के समान जान पड़ने लगी।

अब बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने दुर्योधन की सेना के वीरों को भ्रम में डालने के लिए दूसरे प्रकार से सेना की योजना की। धनुष धारण करनेवालों में प्रधान द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, नकुल, सहदेव और दस हज़ार घोड़े, दो हज़ार हाथी, पाँच सौ रथ और दस हज़ार पैदल सेना के साथ प्रभद्रकगण महाबली भीमसेन के सहकारी नियुक्त हुए। विराट, जयत्सेन, युधामन्यु, उत्तमौजा, श्रीकृष्ण और अर्जुन मध्यभाग की सेना में स्थित हुए। शूर पुरुष जिन पर सवार थे ऐसे वीस हज़ार घोड़े, पाँच हज़ार हाथी, पाँच हज़ार रथ और धनुष धारण किये २० हज़ारों वीर्यशाली पैदल योद्धा उनके आगे और पीछे चले।

राजा युधिष्ठिर ख़ुद सेना के तीसरे भाग में स्थित हुए। कई हज़ार राजा, कई हज़ार हाथी, हज़ारों घोड़े, रथ और लाखों पैदल वीर उनके चारों ओर देख पड़ते थे। बहुत से सेनापतियों सहित चेकितान, चेदिराज धृष्टकेतु तथा सैकड़ों-हज़ारों रथों पर बैठे हुए यादवों सहित प्रधान योद्धा सात्यकि उनके साथ चले। रथों पर स्थित पुरुषश्रेष्ठ क्षत्रदेव सेना के अग्रभाग की और ब्रह्मदेव पिछले हिस्से की रक्षा में नियुक्त हुए। बैपारी-बनिये, वेश्या, वाहक (कुली) आदि के लिए हज़ारों हाथी, दस हज़ार घोड़े और छकड़े नियुक्त हुए। धर्मराज युधिष्ठिर अपने साथ दुर्बल और बीमार सैनिक, बालक, स्त्री, हाथियों पर लदी हुई रसद और कोष आदि लेकर धीरे-धीरे सबके पीछे चले। युद्धप्रिय सत्यधृति, सौचित्ति, श्रेणिमान, वसुदान, काशिराज के पुत्र विभु आदि राजा अपने साथ वीस हज़ार रथ, किंकिणीजाल-मण्डित दस करोड़ घोड़े और हल के ३१ समान दाँतवाले, मेघतुल्य, मद बहानेवाले बीस हज़ार हाथी लेकर धर्मराज के पीछे चले। धर्मराज की सात अक्षौहिणी सेना के अन्तर्गत, वर्षाकाल के मेघों के समान मद-धारा बहानेवाले सत्तर हज़ार युद्ध के हाथी, चलनेवाले पहाड़ों की तरह, उनके पीछे चले। उनके बाद सैकड़ों-हज़ारों-लाखों मनुष्यों के झुण्ड प्रसन्नचित्त से हज़ारों नगाड़े और शङ्ख बजाते चले।

हे जनमेजय! महाराज युधिष्ठिर की सेना इतनी बड़ी थी, जिसकी सहायता से उन्होंने ३५ दुर्योधन की सेना के साथ युद्ध किया।

महर्षि वेदव्यास-प्रणीत

महाभारत का अनुवाद

भीष्म-पर्व

जम्बूखण्डनिर्माणपर्व

पहला अध्याय

कौरवों और पाण्डवों का परस्पर युद्ध के नियम निश्चित करना

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥

जनमेजय ने पूछा—ब्रह्मन् ! कौरव, पाण्डव, सोमक और अन्य अनेक देशों से आये हुए राजाओं ने परस्पर किस तरह युद्ध किया ?

वैशम्पायन ने कहा—राजन् ! तपोवन कुरुक्षेत्र में वीर कौरवों, पाण्डवों और शूरश्रेष्ठ सोमकों ने जिस तरह युद्ध किया, सो मैं कहता हूँ—सुनिए। वेदपाठी, युद्धविशारद, महाबली पाण्डव विजय के लिए उत्सुक होकर अपनी सेना और सोमक वीरों के साथ कुरुक्षेत्र में जाकर कौरवों के पास गये। अत्यन्त दुर्द्धर्ष कौरव-सेना के सामने जाकर वे पश्चिम भाग में, पूर्वमुख हो, ठहर गये। इसके बाद युधिष्ठिर ने समन्तपञ्चक के बाहर विधिपूर्वक हज़ारों शिविर स्थापित कराये। राजन्, सारी पृथ्वी से योद्धा लोग और सेना वहाँ पर आने लगी। उस समय पृथ्वी भर पर केवल बालक और बूढ़े लोग ही रह गये। पुरुष, घोड़े, रथ और हाथी आदि से सब पृथ्वी ख़ाली सी जान पड़ने लगी। जम्बूद्वीप में जहाँ तक सूर्य नारायण तपते

हैं वहाँ तक के सब वीर जवान कौरव-पाण्डवों के युद्ध में सम्मिलित होने के लिए आ गये। सब वर्णों के लोग उस युद्ध में शामिल होने के लिए आये। उन्होंने बहुत से देश, नदी, पर्वत, वन आदि को व्याप्त कर लिया। राजा युधिष्ठिर ने उन सबको और उनके १० वाहनों को बढ़िया खाने-पीने की सामग्री मिलने और रहने की व्यवस्था कर दी। धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने पक्ष के सैनिकों को, चिह्नस्वरूप, नये 'नाम' और आभूषण भी दिये जिनके द्वारा यह जान पड़े कि वे पाण्डव पक्ष के हैं।

उधर राजा दुर्योधन हज़ार हाथियों के घेरे के बीच अपने सौ भाइयों के साथ विराजमान था। उसके सिर पर सफ़ेद छत्र लगा हुआ था। महामनस्वी दुर्योधन ने भी अर्जुन की ध्वजा के अग्रभाग को देखकर अपने पक्ष के राजाओं के साथ, पाण्डवों के मुक़ाबले में, सेना की व्यूह-रचना की। युद्धप्रिय पाञ्चालगण राजा दुर्योधन को देखकर बहुत ख़ुश हुए। वे प्रसन्नतापूर्वक शङ्ख और हज़ारों नगाड़े बजाने लगे। अपनी सेना को प्रसन्न और उत्साहित देखकर महात्मा कृष्णचन्द्र और पराक्रमी पाण्डव बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद श्रीकृष्ण और अर्जुन आनन्द के साथ

रथ पर चढ़कर अपने-अपने शङ्ख बजाने लगे। श्रीकृष्ण के पाञ्चजन्य शङ्ख और अर्जुन के देवदत्त शङ्ख का गम्भीर शब्द सुनकर कौरवपक्ष के सैनिक दहल उठे। उनका एक साथ मल-मूत्र निकल पड़ा। मृगों के झुण्ड जैसे सिंह का शब्द सुनकर डर जाते हैं, वैसे ही वे श्रीकृष्ण और अर्जुन की शङ्खध्वनि को सुनकर अत्यन्त भयभीत हो उठे। सुस्ती के मारे उनके चेहरे उतर गये। इस समय सेना के चलने-फिरने से इतनी धूल उड़ी कि उसमें छिपकर सूर्य २० अस्त से हो गये। इसी समय मेघ घिर आये और उनसे जल की जगह मांस और रक्त की वर्षा होने लगी। यह बहुत ही अद्भुत घटना हुई। आँधी उठ खड़ी हुई और सैनिकों के ऊपर कङ्कड़ियाँ-रोड़े बरसाने लगी। उस समय युद्ध के लिए प्रसन्नता प्रकट कर रही दोनों पक्ष की सेनाएँ उमड़े हुए दो समुद्रों के समान कुरुक्षेत्र में आमने-सामने स्थित हुईं। दोनों

सेनाओं का वह अद्भुत समागम देखकर जान पड़ता था कि प्रलयकाल में दो समुद्र उमड़ रहे हैं। कौरव पक्ष में भी इतनी सेना आकर जमा हुई थी कि पृथ्वी ख़ाली सी हो गई। केवल बालक और बूढ़े ही बच गये। जवान पुरुष, रथ, हाथी और घोड़ा एक भी नहीं रह गया।

इसके बाद कौरवों, पाण्डवों और सोमकों में धर्मानुसार परस्पर, निम्नलिखित, युद्ध के नियम निश्चित हुए। यह तय हुआ कि आरम्भ किया हुआ युद्ध जिस समय बन्द हो जाया करेगा उस समय हम परस्पर पहले की ही तरह मित्रता का व्यवहार करेंगे। परस्पर समान और समान योग्यता रखनेवाले पुरुष ही एक दूसरे से न्यायानुसार युद्ध करेंगे। कोई किसी से अन्यायपूर्वक युद्ध नहीं करेगा। कोई किसी को युद्ध में धोखा नहीं देगा। वाणी का युद्ध करनेवालों से केवल वाणी का ही युद्ध किया जायगा। जो लोग सेना के व्यूह से भागकर या और किसी कारण से बाहर निकल जायँगे उन पर कोई प्रहार नहीं करेगा। रथी रथी के साथ, हाथी का सवार हाथी के सवार के साथ, घोड़े का सवार घुड़सवार के साथ और पैदल सिपाही पैदल सिपाही के साथ योग्यता, इच्छा, उत्साह और बल के अनुसार युद्ध करेगा। पहले सावधान करके पीछे प्रहार किया जायगा। विश्वास रहने से असावधान, विह्वल और डरे हुए व्यक्ति पर प्रहार नहीं किया जायगा। जो पुरुष किसी दूसरे के साथ युद्ध कर रहा होगा, जो असावधान होगा और जो समर से विमुख होगा उस पर कोई वार नहीं करेगा। जिसका कवच कट गया होगा, जिसका शस्त्र टूट गया होगा या शस्त्र न रह जाने के कारण जो निहत्था होगा, ऐसे लोगों पर कभी कोई प्रहार नहीं करेगा। सारथी पर, जिन पर बोझ लादा जाय ऐसे हाथी-घोड़े-बैल आदि पर, शस्त्र बनाने की जीविकावाले या शस्त्र पहुँचानेवाले पर, और शङ्ख तथा नगाड़े आदि बजानेवाले लोगों पर कभी कोई प्रहार नहीं करेगा। ३०

महाराज, इस तरह परस्पर युद्ध के नियम निश्चित हो गये। कौरव, पाण्डव और सोमकगण एक दूसरे को देखकर परम प्रसन्न हुए। फिर सब पुरुषश्रेष्ठ वीर प्रसन्नता और उत्साह के साथ अपने-अपने सैनिकों समेत अपने-अपने स्थान में ठहर गये। ३४

दूसरा अध्याय

व्यासजी का धृतराष्ट्र के पास आना। सञ्जय को दिव्य दृष्टि देना और दुर्निमित्तों का वर्णन करना

वैशम्पायन कहते हैं—राजन्! इधर सब वेदज्ञ पुरुषों में श्रेष्ठ, त्रिकालज्ञ, प्रत्यक्षदर्शी महर्षि वेदव्यास ने दोनों पक्षों की सेनाओं को देखकर जान लिया कि यह घोर संग्राम होगा। तब वे शोक से व्याकुल और पुत्रों के अन्याय को सोचते हुए, एकान्त में स्थित, महाराज धृतराष्ट्र

के पास गये और उनसे कहने लगे—राजन्, तुम्हारे पुत्रों और अन्य राजाओं के मरने का समय आ गया है। इस युद्ध में वे परस्पर भिड़कर मारे जायँगे। समय के इस विपरीत भाव को समझकर तुम शोक न करना। राजन्, अगर तुम यह घोर संग्राम देखना चाहो तो मैं तुमको दिव्य दृष्टि देने को तैयार हूँ। तुम यहीं से सब सङ्ग्राम देख लेना।

धृतराष्ट्र ने कहा—हे ब्रह्मर्षिश्रेष्ठ, मैं जाति के हत्याकाण्ड को अपनी आँखों नहीं देखना चाहता। मेरी यह इच्छा है कि आपके तेज के प्रभाव से मैं इस युद्ध का सब वृत्तान्त आदि से अन्त तक सुन सकूँ।

वर देने में समर्थ महर्षि वेदव्यास ने धृतराष्ट्र को युद्ध का वृत्तान्त सुनने के लिए उत्सुक देखकर सञ्जय को वर देते हुए कहा—महाराज, ये सञ्जय तुम्हारे आगे युद्ध का वृत्तान्त आदि से अन्त तक कहेंगे। इनसे युद्ध का वृत्तान्त तनिक भी नहीं छिपा १० रहेगा। इन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त होगी और ये सर्वज्ञ होंगे। गुप्त या प्रकट सब बातें इन्हें विदित होती रहेंगी। दिन को या रात को जो कुछ होगा और दूसरों के मन की जो बात होगी, वह भी सञ्जय को मालूम हो जायगी। इनके शरीर में कोई शस्त्र नहीं छू जायगा। इन्हें थकन भी नहीं होगी। इस युद्ध से केवल ये सञ्जय जीते बचेंगे। हे भरतश्रेष्ठ! मैं शीघ्र ही पाण्डवों और कौरवों की इस कीर्ति को, ग्रन्थ बना करके, प्रसिद्ध कर दूँगा। तुम शोक मत करो। यह सब 'होनी' की लीला है। तुम या कोई भी इस सर्वनाश को नहीं रोक सकेगा। सच समझो, जिधर धर्म है उसी पक्ष की जय होगी।

वैशम्पायन कहते हैं कि राजन्, कुरुवंश के प्रपितामह भगवान् वेदव्यास ने इतना कहकर फिर राजा धृतराष्ट्र से कहा—राजन्, इस युद्ध में बड़ा भारी हत्याकाण्ड होगा। इस समय महाभयङ्कर उत्पात होते देख पड़ते हैं। बाज़, गिद्ध, कौए, कङ्क पक्षी और बगलों के झुण्ड के झुण्ड ध्वजाओं के अग्रभागों पर गिरते हैं। मांस खानेवाले पक्षी, युद्ध को निकटवर्ती जानकर, आनन्द प्रकट कर रहे हैं। वे अवश्य हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों का मांस खायँगे। कङ्क पक्षी दोपहर के समय दक्षिण दिशा की ओर दौड़ते हुए भयसूचक भयानक कट-कट शब्द करते

हैं। हे भारत, मैं प्रतिदिन देखता हूँ कि उदय और अस्त के समय सूर्य को कबन्ध घेरते हैं। २०
सबेरे और शाम को, बीच में काले और किनारों पर सफ़ेद, लाल मण्डल सूर्य को घेरे रहते हैं और आसपास बिजली चमका करती है। सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र दिन-रात प्रज्वलित रहते हैं। दिन और रात में कुछ अन्तर नहीं देख पड़ता। यह उत्पात तुम्हारे वंश के लिए बहुत ही भयङ्कर है। कार्तिक की पूर्णिमा को पद्मवर्ण नभस्थल में अलक्ष्य, प्रभाहीन, लाल रङ्ग के चन्द्रमा का उदय हुआ है। इससे बड़े बलवान् महावीर राजा और राजपुत्र मारे जायँगे। रात को आकाश में लड़ते हुए वराह और बिलाव का कठोर शब्द मुझे सुन पड़ता है, जो जन-क्षय की सूचना देता है। देवताओं की मूर्तियाँ कभी काँपती हैं, कभी पसीजने लगती हैं, कभी मुँह से रक्त उगलती हैं और कभी गिर पड़ती हैं। राजन्, बिना बजाये ही नगाड़े बजने लगते हैं। क्षत्रियों के रथ बिना घोड़े जोते ही चलने लगते हैं। कोयल, शतपत्र, चाष, भास, तोता, सारस, मोर आदि पक्षी दारुण स्वर से बोल रहे हैं। लोहे के रङ्ग के मुँहवाली एक प्रकार की टीड़ियाँ घोड़ों की पीठों पर उड़ती देख पड़ती हैं। अरुणोदय के समय असंख्य टीड़ियाँ देख पड़ती हैं। सबेरे और शाम को दिग्दाह देख पड़ता है (अर्थात् आग लगने का सा प्रकाश और लाली देख पड़ती है)। मेघों से धूल और मांस की वर्षा होती है। त्रिलोकी ३०
भर में जिनके पातिव्रत्य की बड़ाई होती है उन अरुन्धती (तारा) ने भी वशिष्ठ (तारा) को पीछे छोड़ दिया है। शनैश्चर ग्रह रोहिणी नक्षत्र को पीड़ा पहुँचा रहा है। चन्द्रबिम्ब के भीतर का चिह्न अपने स्थान पर नहीं देख पड़ता। आकाशमण्डल में मेघ न रहने पर भी घोर मेघगर्जन का सा शब्द सुन पड़ता है। घोड़ों की आँखों से आँसू निकल रहे हैं। इसलिए राजन्, निश्चय जानो कि बड़ी विपत्ति आनेवाली है। ३३

तीसरा अध्याय

उत्पातों का और शुभसूचक चिह्नों का वर्णन

व्यासजी कहते हैं—राजन्, गायों के गर्भ से गधे पैदा होते हैं [या उनका परस्पर सङ्गम होता है]। माताओं के साथ पुत्र रमण करते हैं। वनों के वृक्षों में ऋतु के बिना ही उस ऋतु के फूल और फल देख पड़ते हैं। स्त्रियों के भयानक आकार की सन्तानें पैदा होती हैं। मांसभोजी पक्षियों के साथ सियार और कुत्ते, एक ही जगह, खाते हैं। ऐसे विचित्र प्राणी जन्म ले रहे हैं जिनके तीन सींग, चार आँखें, पाँच पैर, दो सिर और दो लिङ्ग, दो पूँछें, तीन पैर और चार दाँत हैं। वे मुँह फैलाये रहते हैं और अमङ्गलसूचक शब्द करते हैं। गरुड़ पक्षियों के सींग, तीन पैर और चोटी देख पड़ती है। इसी प्रकार ब्रह्म-

वादियों की स्त्रियों के गरुड़ पक्षी और मोर, घोड़ियों के गायों के बछड़े, कुतियों के सियार और हथिनियों के कुत्ते पैदा होते हैं। तोते लगातार अशुभ और कर्कश शब्द बोलते हैं। किसी-किसी स्त्री के एक साथ चार-चार पाँच-पाँच कन्याएँ पैदा होती हैं। वे कन्याएँ पैदा होते ही नाचती, गाती, बाजे बजाती और हँसती हैं। चाण्डाल आदि के घर में उत्पन्न काने-कुबड़े आदि बालक-बालिका हँसते, नाचते और गाते हैं। यह भी महाभयसूचक उत्पात है। वे सब काल के द्वारा प्रेरित होकर हाथ में शस्त्र लिये हुए मूर्तियाँ लिखते और बनाते हैं। दण्ड हाथ में लिये बालक एक दूसरे को मारने के लिए दौड़ते हैं और युद्ध करने की इच्छा से १० कृत्रिम नगरों को रौंदते हैं। वृक्षों में कमल और कोकाबेली के फूल निकलते हैं। हवा बड़े वेग से चलती है। धूल इतनी उड़ती है कि किसी तरह शान्त ही नहीं होती। लगातार भूकम्प होता है। राहु सूर्य के पास जाता है। केतु चित्रा नक्षत्र में स्थित है। इसमें सन्देह नहीं कि कुरुवंश के नाश के लिए ही ये उत्पात देख पड़ते हैं। धूमकेतु पुष्य नक्षत्र में स्थित है। इसका फल यह है कि दोनों पक्षों की बहुत सी सेना चौपट होगी। मङ्गल वक्री होकर मघा नक्षत्र में और उसी तरह बृहस्पति श्रवण नक्षत्र में स्थित है। शनैश्चर उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में स्थित होकर उसे सता रहा है। शुक्र पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में है और चारों ओर घूमकर उपग्रह के साथ उत्तराभाद्रपद नक्षत्र को देख रहा है। केतु ग्रह धुएँ से युक्त अग्नि के समान प्रज्वलित होकर, इन्द्र जिसके देवता हैं उस, तेजस्वी ज्येष्ठा नक्षत्र के ऊपर आक्रमण कर रहा है। चित्रा और स्वाती के बीच में स्थित राहु सदा वक्री होकर रोहिणी और सूर्य-चन्द्र को पीड़ा पहुँचाता हुआ प्रज्वलित होकर ध्रुव की बाईं ओर जा रहा है। उसी सर्वतोभद्र चक्र के बीच मघा में स्थित पावक-प्रभ मङ्गल ग्रह बारम्बार वक्री होकर बृहस्पतियुक्त श्रवण को पूर्ण दृष्टि से देख रहा है। पृथ्वी सब प्रकार के अन्नों से परिपूर्ण हो रही है। जव के पेड़ों में पाँच-पाँच बालियाँ और धान के पेड़ों में सैकड़ों बालियाँ देख पड़ती हैं। यही दोनों अन्न प्रधान हैं और इन्हीं के ऊपर सब लोगों का जीवन निर्भर है। बछड़ों के दूध पी चुकने के बाद गायों के थनों से रक्त की धारा २० निकलती है। धनुषों से आग की चिनगारियाँ निकलती हैं और खड्ग प्रज्वलित हो रहे हैं। सब शस्त्र मानों उपस्थित संग्राम को स्पष्ट देख रहे हैं। शस्त्रों, कवचों, जल और ध्वजाओं की आभा अग्नि की सी देख पड़ती है। इससे जान पड़ता है कि बड़ा भारी जनक्षय होगा।

जिस समय पाण्डवों के साथ कौरवों का घोर संग्राम होगा, उस समय पृथ्वी पर रक्त की नदियाँ बह जायँगी और उनमें ध्वजाएँ डोंगियों के समान देख पड़ेंगी। मृगों और पक्षियों के मुँह से आग सी निकल रही है और वे भयानक शब्द कर रहे हैं। यह उत्पात भी कौरवों के लिए महाभय की सूचना दे रहा है। एक पङ्ख, एक आँख और पैरवाले आकाशचारी पक्षी रात के समय क्रोधित होकर दारुण शब्द करते हैं और मुँह से रक्त उगलते हैं। श्रवण में स्थित

बृहस्पति और चित्रा में स्थित शनैश्चर शतपद चक्र में तिर्यग्वेध से विशाखा नक्षत्र को बेध रहे हैं। संवत्सरपर्यन्त एक राशि में रहनेवाले ये दोनों ग्रह अरुणप्रभा के साथ प्रज्वलित से हो रहे हैं। इन्होंने सप्तर्षियों की प्रभा को फीका कर दिया है। बेशुमार धूल उड़कर प्रभा-हीन सब दिशाओं में छा रही है। उत्पातसूचक भयानक मेघ रात को रक्त की वर्षा करते हैं। राहु ग्रह चित्रा के अंश में स्थित होकर रोहिणी को और स्वाती के अंश में स्थित होकर कृत्तिका को पीड़ा पहुँचा रहा है। उत्पातसूचक धूमकेतु का उदय होता है। बारम्बार वेग से आँधी चलती है। इन उत्पातों से भयङ्कर युद्ध होने की सूचना मिल रही है। पाप ग्रह बुध पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रों के ऊपर जाकर प्राणियों के लिए महाभय की सूचना दे रहा है। एक तिथि का क्षय होने पर चौदहवें दिन, तिथि का क्षय न होने पर पन्द्रहवें दिन, अथवा एक तिथि बढ़ने पर सोलहवें दिन चन्द्रमा या सूर्य को ग्रहण लगता है। किन्तु एक ही महीने में दो-दो तिथियों का क्षय होकर तेरहवें-तेरहवें दिन पूर्णिमा या अमावस को चन्द्रमा और सूर्य का ग्रहण मैंने कभी नहीं देखा। इस समय बहुत दिनों के बाद यह दुर्योग हुआ है। इससे जान पड़ता है कि बड़ा भारी लोकक्षय होगा। कृष्ण चतुर्दशी के दिन मांस की घोर वर्षा हुई है। राक्षसों के मुख रक्त से परिपूर्ण होने पर भी वे तृप्त नहीं होते। नदियों का जल लाल हो रहा है और वे उलटी बह रही हैं। कुओं के पानी में फेना उतरा रहा है और उनका जल हवा लगने से ऐसा उछल रहा है जैसे बैल कूदते हों। इन्द्र के वज्र के समान प्रभावाले तारे घोर शब्द के साथ टूट-टूटकर गिर रहे हैं। यह रात बीतने पर तुम्हारे पुत्रों को महा अन्याय का फल भोगना पड़ेगा। इस उत्पात का फल जो महर्षियों ने कहा है वह यह है कि हज़ारों राजाओं का रक्त यह पृथ्वी पियेगी। घोर उल्कापात के साथ चारों ओर अन्धकार छा रहा है। कैलास, मन्दर पर्वत और हिमाचल आदि बड़े पहाड़ों से हज़ारों घोर शब्द प्रकट हो रहे हैं और उनके शिखर टूट-टूटकर गिर रहे हैं। भूकम्प होता है और चारों महासागर बढ़कर, अपनी हद को छोड़कर, उमड़ रहे हैं; मानों सारी पृथ्वी को डुबा देंगे। आँधी वृक्षों को तोड़ती हुई, कङ्कड़ बरसाती हुई, ज़ोर से चल रही है। वज्रपात से टूट-टूटकर वृक्ष और देवमन्दिर गाँवों और नगरों में गिर रहे हैं। ब्राह्मणों के हवन करने पर अग्नि की शिखा बाईं ओर को घूमती हुई निकलती है और उसमें नीला, लाल और पीला रङ्ग देख पड़ता है। अग्नि से भयानक शब्द के साथ दुर्गन्ध निकल रही है। स्पर्श, गन्ध, रस आदि में विपरीत भाव देख पड़ रहा है। ध्वजाएँ बारम्बार हिलती हैं और उनसे धुआँ निकल रहा है। भेरी और पटह अङ्गारों की वर्षा करते हैं। ऊँचे वृक्षों के ऊपर बाईं ओर से घूम-घूमकर कौए बैठते हैं और अत्यन्त अमङ्गल शब्द कर रहे हैं। कुछ कौए बारम्बार काँव-काँव करके ध्वजाओं के अग्रभाग पर आ बैठते हैं और राजाओं के विनाश की सूचना दे रहे हैं। दुरन्त हाथी

(Margin verse numbers: ३० beside "चलती है…पूर्वाषाढ़," line; ४० beside "है। अग्नि से…आदि में" line)

काँपते और चिन्तायुक्त से होकर मल-मूत्र त्याग कर रहे हैं। घोड़े अत्यन्त दीनभाव धारण किये हुए हैं। हाथियों के पसीना निकल रहा है। [इस प्रकार स्वर्ग, आकाश और पृथ्वी पर त्रिविध उत्पात हो रहे हैं जिनसे राजाओं के लिए महाभय की सूचना मिल रही है।] राजन्, अब तुम इन उत्पातों को देखकर समयानुसार ऐसा कोई उपाय करो जिसमें यह लोक-क्षय न हो।

वैशम्पायन कहते हैं कि अपने पिता वेदव्यास के ये वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा—भगवन्, यह लोक-क्षय होना मेरी समझ में दैवकृत है। राजा लोग क्षत्रिय-धर्म के अनुसार युद्ध में मरकर वीरों के योग्य लोकों में जाकर सुख भोगेंगे। यहाँ उनकी परम कीर्ति होगी और परलोक में उन्हें सुख भोगने को मिलेगा।

५० धृतराष्ट्र के ये वचन सुनकर कवीश्वर व्यासदेव ने दम भर सोचकर कहा—हे राजेन्द्र, इसमें संशय नहीं कि काल इस संसार का विनाश करता है और फिर जगत् की सृष्टि करता है। इस लोक में कोई वस्तु सदा रहनेवाली नहीं है। तुम इस अनिष्ट घटना को रोकने में समर्थ हो। इसलिए इस समय कौरव, पाण्डव, सम्बन्धी और सुहृद् आदि को धर्म का मार्ग दिखाओ और उस पर चलने के लिए उनसे अनुरोध करो। जाति का वध बड़ा ही क्षुद्र और नीच कार्य है। उसे रोको। चुप रहकर मेरा अप्रिय मत करो। वेद में हत्याकाण्ड—जाति-वध—की बड़ी निन्दा की गई है। यह कभी हितकारी नहीं हो सकता। राजन्, साक्षात् काल ही तुम्हारे यहाँ पुत्र के रूप से पैदा हुआ है। मनुष्य का शरीर कुल-धर्म का पालन करता है। जो कोई अपने कुल-धर्म रूप शरीर को नष्ट करता है उसे वह कुल-धर्म ही चौपट कर देता है। तुम कालप्रेरित होकर, आपत्काल न होने पर भी आपत्काल की तरह, उत्पथगामी हो रहे हो; अर्थात् जातिवध में लगे हुए हो। अपने कुल और अन्य राजाओं के संहार के लिए काल की प्रेरणा से तुम कुमार्ग में चलाये जा रहे हो। राज्य का लोभ ही इस महान् अनर्थ का मूल कारण है। तुम एकदम धर्म का लोप करने पर उतारू हो। मेरा कहा मानो, पुत्रों को धर्म का मार्ग दिखाओ। राजन्, तुम वह राज्य लेकर क्या करोगे जिससे पापभागी होना पड़ेगा और अकीर्ति मुफ्त में होगी? जो मेरा कहा मानोगे तो तुम्हें यश, धर्म और कीर्ति प्राप्त होगी। अन्त को स्वर्गलोक में जाओगे। इसलिए ऐसा करो, जिसमें पाण्डवों को राज्य मिले और कौरव कल्याण तथा सुख प्राप्त करें।

व्यासदेव के यों कहने पर राजा धृतराष्ट्र ने प्रशंसा करके भी उनकी बातों के ऊपर उपेक्षा का भाव दिखाकर कहा—भगवन्, आपकी तरह मैं भी स्थिति और विनाश का यथार्थ हाल जानता हूँ। हे तात, सब संसार के लोग स्वार्थ-साधन के मोह में पड़कर स्वार्थ साधने
६० की ही धुन में लगे रहते हैं। मैं संसार के ही भीतर हूँ। आपका प्रभाव अतुल है। आप धीर पुरुष हैं। मेरी एक मात्र गति और मुझे उपदेश देनेवाले आप ही हैं। इसी लिए मैं आपको

मनाता हूँ। हे महर्षि, मेरे बेटे मेरे वश में नहीं हैं। मैं स्वयं अधर्म करना नहीं चाहता। आप हमारे धर्म, यश, कीर्ति, धैर्य, स्मृति आदि के मूल कारण हैं। आप कौरवों और पाण्डवों के माननीय पितामह हैं। इसलिए पाण्डवों की तरह कौरवों पर भी आपको कृपा करनी चाहिए।

व्यासजी ने कहा—राजन्, तुम्हारे मन में जो सन्देह है उसे प्रकट करो। मैं तुम्हारे संशयों को मिटा दूँगा। धृतराष्ट्र ने कहा—भगवन्, युद्ध में विजय प्राप्त करनेवालों को जो शुभ लक्षण देख पड़ते हैं, उन्हें कहिए। उन्हें सुनने की मुझे बड़ी इच्छा है।

व्यासजी ने कहा—राजन्, हवन के उपरान्त अग्नि की निर्मल प्रभा देख पड़ती है। अग्नि की लपट दक्षिणावर्त उठती है। विना धुएँ की आग की ज्वालाएँ ऊपर उठती हैं। आहुति छोड़ने के समय आग से अत्यन्त पवित्र गन्ध निकलती है। यही विजय का लक्षण है। जिधर शङ्ख और मृदङ्ग का शब्द बड़ा भारी और गम्भीर होता है, सूर्य और चन्द्रमा का प्रकाश अत्यन्त उज्ज्वल होता है उधर ही जय होना निश्चित है। युद्ध में जिनके जाते समय कौए अनुकूल शब्द करते हैं उनकी जय अवश्य होती है। पीछे कौओं का बोलना शुभ है और आगे बोलना अशुभ है। ब्राह्मणों का कहना है कि राजहंस, तोते, क्रौंच, शतपत्र आदि पक्षी शुभ शब्द करते हुए जिनकी प्रदक्षिणा करते हैं उनको अवश्य जय प्राप्त होती है। अलङ्कार, कवच, ध्वजा, सिंहनाद और घोड़ों के शब्द आदि से जिनकी सेना परम शोभायमान और दुर्निरीक्ष्य होती है उन्हीं को जय मिलती है। हे भारत, जिधर योद्धाओं के वचन हर्षपूर्ण होते हैं और वीरों के कण्ठ की मालाएँ नहीं मुरझातीं वे ही सुख से संग्राम-सागर के पार पहुँचते हैं। ७० जो योद्धा शत्रु-सेना में प्रवेश करके "मारे डालता हूँ" इत्यादि उत्साह के वाक्य कहते हैं, और शत्रुसेना में घुसने के लिए उत्सुक होकर "तुम्हारी सेना नष्ट हुई" इत्यादि वाक्य कहते हैं वे जय प्राप्त करने में समर्थ होते हैं। जिस पक्ष के योद्धा कहते हैं कि "युद्ध न करना, मारे जाओगे" वह पक्ष अवश्य ही हार जाता है। जिनकी जय होनेवाली होती है उनके शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि के कार्यों में कुछ भी विकार नहीं देख पड़ता—हृदय में सदा हर्ष बना रहता है। हवा का अनुकूल होकर चलना, अनुकूल वर्षा होना, पक्षियों का अनुकूल चलकर शब्द करना और इन्द्रधनुषों का पीछे उदय होना, ये लक्षण विजय के सूचक हैं। राजन्, इन बातों का प्रतिकूल होना हार का और मृत्यु का लक्षण समझना चाहिए।

सेना थोड़ी हो चाहे बहुत, योद्धा लोगों में हर्ष और उत्साह देख पड़ना ही जय का मुख्य कारण है। एक सैनिक भी अगर उत्साहहीन होकर भाग खड़ा हो तो बहुत सी सेना भी भाग खड़ी होती है। सेना के पैर उखड़ जाने पर बड़े-बड़े शूरवीर भी पीछे हट जाते हैं। जब बड़ी भारी सेना भाग खड़ी होती है तब, डरकर भागे हुए मृगों के झुण्ड की तरह, पानी के महाप्रवाह की तरह, वह लौटाई नहीं जा सकती। उस संघर्ष के समय बड़े-बड़े चतुर रण-

पण्डित सेनापति भी उस बेसिलसिले भागती हुई सेना को सँभालने और एकत्र करने में असमर्थ हो जाते हैं; बल्कि सब सेना को भागते देखकर वे आप ही डरकर, निरुत्साह होकर, भागने को तैयार हो जाते हैं। उन्हें डरे हुए और भागते देखकर बची हुई सेना और भी डर जाती है। तब बड़े-बड़े शूर भी उस महासेना को नहीं रोक सकते। बुद्धिमान् राजा को
८० चाहिए कि सदा सावधान रहकर चतुरङ्गिणी सेना को सत्कारपूर्वक अपने वश में रक्खे, और फिर पहले साम, दान आदि उपायों से विजय प्राप्त करने की चेष्टा करे। भेद से जय प्राप्त करने का उपाय मध्यम है। युद्ध करके जय प्राप्त करना अधम उपाय है। जब कोई उपाय काम न करे तब युद्ध करना चाहिए। वास्तव में युद्ध में अनेक दोष हैं। सबसे बड़ा और पहला दोष यह है कि उसमें मनुष्यों का नाश होता है।

राजन्! एक दूसरे को अच्छी तरह जाननेवाले, उत्साही, स्त्री-पुत्र आदि में आसक्ति न रखनेवाले, दृढ़ निश्चयवाले, हृष्ट, कभी पीठ न दिखानेवाले पचास वीर पुरुष भी बड़ी भारी सेना को नष्ट कर देते हैं। तत्परता से युद्ध करनेवाले पाँच, छः, सात मनुष्य भी विजय प्राप्त कर सकते हैं। इन गुणों से हीन हज़ारों मनुष्य भी भाग खड़े होते हैं। असंख्य स्वर्णचूड पक्षियों के झुण्ड को गरुड़ अकेले ही मार भगाते हैं। इस प्रकार अकेले अपने द्वारा भारी सेना के विनाश को देखकर गरुड़ बहुत बड़ी सेना की प्रशंसा नहीं करते। राजन्, सेना बहुत होने से ही सदा जय नहीं होती। जय अनिश्चित है। वह दैव के अधीन है। जो
८५ लोग संग्राम में विजय पाते हैं वे कृतकृत्य हो जाते हैं।

चौथा अध्याय

धृतराष्ट्र और सञ्जय का संवाद। पृथ्वी के गुणों का वर्णन

वैशम्पायन कहते हैं कि महाराज, महात्मा वेदव्यास इतना कहकर जब चले गये तब उनके वचन सुनकर राजा धृतराष्ट्र ने कुछ देर तक सोचा। फिर बारम्बार साँस छोड़ते हुए धृतराष्ट्र ने ज्ञानी सञ्जय से कहा—सञ्जय, संग्रामप्रिय महाबली पराक्रमी राजा लोग युद्ध में जीवन का मोह और आशा छोड़कर विविध अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा एक-दूसरे की हत्या करेंगे। वे परस्पर मारे जाकर यमपुरी को भर भले देंगे, किन्तु शान्त भाव नहीं धारण करेंगे। राजा लोग पृथ्वी के ऐश्वर्य की इच्छा से एक दूसरे को नहीं देख सकते; एक दूसरे का प्राणान्तक शत्रु हो रहा है। इस नीच व्यवहार—युद्ध—से कोई लौटना नहीं चाहता। इससे मुझे जान पड़ता है कि पृथ्वी में बहुत से गुण हैं। तुम मेरे आगे पृथ्वी के गुणों का वर्णन करो। तुम उन अमित तेजस्वी महर्षि व्यासदेव के प्रसाद से दिव्य बुद्धि और ज्ञानमयी दिव्य दृष्टि प्राप्त कर चुके हो। कुरुक्षेत्र में हज़ारों, लाखों, करोड़ों वीर क्षत्रिय आकर युद्ध के लिए जमा

हुए हैं। मैं सुनना चाहता हूँ कि वे कहाँ-कहाँ से आये हैं। उनके देशों और नगरों की आकृति-प्रकृति सुनने की मुझे बड़ी इच्छा है।

सञ्जय ने कहा—हे भरतश्रेष्ठ, आप बड़े समझदार हैं। मैं आपको प्रणाम करके पृथ्वी के गुणों का वर्णन करता हूँ, सुनिए। राजन्, प्राणी दो प्रकार के हैं। स्थावर और जङ्गम, अर्थात् स्थिर और चलनेवाले। जङ्गम तीन प्रकार के हैं। अण्डे से पैदा होनेवाले, पसीने से पैदा होनेवाले और जरायु नाम की झिल्ली से पैदा होनेवाले। सब जङ्गम जीवों में जरायु से पैदा होनेवाले पशु और मनुष्य श्रेष्ठ हैं। उनमें विविध रूप-धारी यज्ञ के साधन रूप पशु प्रधान हैं। पशु चौदह प्रकार के हैं। उनमें सात पशु वन के रहनेवाले और सात पशु गाँवों के निवासी हैं। सिंह, बाघ, वराह, भैंसे, हाथी, रीछ और वानर, ये सात जङ्गली पशु हैं। गाय, बकरी, भेड़ा, मनुष्य, घोड़े, खच्चर और गधे, ये सात गाँवों के निवासी हैं। राजन्, वेद में इन

१०

चौदह पशुओं का वर्णन है। इनके अनेक उपभेद भी हैं। ग्रामवासियों में मनुष्य और वन-वासियों में सिंह प्रधान हैं। ये सब जीव एक दूसरे के द्वारा अपनी जीविका चलाते हैं। स्थावर प्राणी उद्भिज् (पृथ्वी फोड़कर निकलते) हैं। उनकी पाँच जातियाँ हैं—वृक्ष, लता (जो बहुत दिनों तक पेड़ पर ठहरें, जैसे गिलोय आदि), गुल्म, वल्ली (एक साल तक ज़मीन पर फैलनेवाली कुँहड़े आदि की) और त्वक्सार तृण (बाँस आदि)। ये स्थावर-जङ्गमरूप उन्नीस भूत (प्राणी) हैं। पञ्च महाभूत (आकाश, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु) मिलाकर ये चौबीस हैं। चौबीस वर्णवाली गायत्री अपने वर्णों से इन्हीं चौबीस भूतों का बोध कराती है। सब गुणों से युक्त पवित्र वेदमाता गायत्री के इस भेद को जो कोई जानता है उसका विनाश नहीं होता। राजन्, भूमि से ही सबकी उत्पत्ति होती है और भूमि में ही सब लीन हो जाते हैं। भूमि ही सब प्राणियों का अधिष्ठान है। भूमि ही नित्य है। जिसके अधीन भूमि

है उसके वश में सब स्थावर-जङ्गमरूप जगत् है। भूमि पर अत्यन्त लोभ होने से ही राजा
२१ लोग एक दूसरे की हत्या करने को तैयार हो जाते हैं।

पाँचवाँ अध्याय

नदी और पर्वत आदि का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! इस पृथ्वी पर जो नदी, पर्वत, जनपद, वन आदि हैं उनके नाम और परिमाण विशेष रूप से कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन्, उक्त पञ्च महाभूतों के मेल से ही जगत् के सब पदार्थ बने हैं। इसी से बुद्धिमान् विद्वान् लोग पृथ्वी के सब पदार्थों को समान कहते हैं। आकाश, वायु, तेज, जल और भूमि, ये पाँचों महाभूत उत्तरोत्तर अधिक गुण-सम्पन्न हैं। तत्त्वज्ञानी ऋषियों का कहना है कि पृथ्वी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध ये पाँचों गुण हैं। जल में शब्द, स्पर्श, रूप और रस, ये चार ही गुण हैं; गन्ध नहीं है। तेज में शब्द, स्पर्श और रूप, ये तीन ही गुण हैं। वायु में शब्द और स्पर्श, ये दो गुण हैं। आकाश का गुण केवल शब्द है। महाराज, यह सारा संसार पञ्चभूतमय है। जब ये पाँचों गुण समभाव से, परस्पर प्रशान्त रूप से, रहते हैं तब सृष्टि की स्थिति बनी रहती है। उसी तरह जब इनमें विषमता हो जाती है तब देहधारियों के शरीर छूट जाते हैं। ये सब गुण क्रमशः एक-एक से उत्पन्न होते हैं और अन्त को उसी क्रम से एक-एक में लीन हो जाते हैं। इन सबका परिमाण करना अत्यन्त
१० कठिन है। इन गुणों का रूप ईश्वरकृत है। पाञ्चभौतिक धातु सभी स्थानों में देख पड़ते हैं। मनुष्य तर्क के द्वारा उनके प्रमाणों का निर्देश करते हैं। किन्तु जो भाव (संसार की उत्पत्ति-सम्बन्धी पदार्थ) अचिन्त्य हैं उनका निरूपण तर्क के द्वारा न करना चाहिए। जो विषय या पदार्थ इन्द्रियों से परे है उसी को अचिन्त्य समझना चाहिए।

राजन्, अब मैं जम्बूद्वीप का वर्णन करता हूँ; सुनिए। इस जम्बूद्वीप का दूसरा नाम सुदर्शन द्वीप है। यह चक्र के आकार का गोल और दुर्लङ्घ्य है। इसके सब स्थानों में नदियाँ हैं, जल भरा हुआ है। इसमें मेघ की तरह ऊँचे पहाड़, तरह तरह के नगर, रम्य जनपद और फल-पुष्प-पूर्ण वृक्ष असंख्य हैं। इस धनधान्य-पूर्ण द्वीप को चारों ओर से खारी समुद्र घेरे हुए है। जैसे शीशे में मनुष्य अपना मुख देखता है, वैसे ही सुदर्शनद्वीप का प्रतिबिम्ब चन्द्रमा के मण्डल में देख पड़ता है। जम्बूद्वीप के [दो अंशों में प्लक्षस्थान, दो अंशों में शाल्मलिस्थान] दो अंशों में पिप्पल स्थान और दो अंशों में महाशशस्थान है। इस स्थान में भी सब प्रकार की ओषधियाँ और पर्वत
१८ हैं। इसमें नदियाँ भी हैं। अब मैं जम्बूद्वीप के शेष खण्डों का वर्णन संक्षेप में करता हूँ; सुनिए।

छठा अध्याय

भारत आदि नव खण्डों का, सीमा के पर्वतों का और सुमेरु का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, तुम संक्षेप में जम्बूद्वीप का वर्णन कर चुके; अब उसका वर्णन विस्तार के साथ करो। तुम सब तत्त्वों को अच्छी तरह जानते हो। महाशश स्थान में जितनी पृथ्वी है उसका परिमाण और हाल पहले कहकर फिर पिप्पल स्थान का वर्णन करना।

सञ्जय ने कहा—राजन्! हिमालय, हेमकूट, निषध, वैडूर्यमय नील पर्वत, चन्द्रतुल्य श्वेतपर्वत और सब धातुओं के विचित्र शिखरों से शोभित शृङ्गवान् नाम का पर्वत—ये छः सीमापर्वत पूर्व समुद्र से पश्चिम समुद्र तक फैले हुए हैं। इन पर्वतों पर सिद्धगण और चारण रहते हैं। इन पर्वतों के बीच का अन्तर हज़ारों योजन का है। वह बीच का पवित्र स्थान रहने के योग्य है। वे ही सात खण्ड हैं। उनमें अनेक जातियों के प्राणी रहते हैं। यह भरतखण्ड है। इसके बाद हैमवत खण्ड है। हेमकूट पर्वत के बाद हरिवर्ष नाम का खण्ड है। नील पर्वत के दक्षिण ओर और निषध पर्वत के उत्तर ओर माल्यवान् नाम का पहाड़ है। यह पहाड़ पूर्व सागर तक फैला है। गन्धमादन पर्वत पश्चिम समुद्र तक फैला है। माल्यवान् के बाद ही गन्धमादन पर्वत है। नील और निषध पर्वत के बीच में दोपहर के सूर्य के समान प्रभाशाली, बिना धुएँ की आग के तुल्य सुवर्णमय, हज़ारों योजनों तक फैला हुआ, मण्डलाकार सुमेरु पर्वत है। सुमेरु की ऊपर की चोटी बयालीस हज़ार योजन चौड़ी है। १० पृथ्वी के नीचे का हिस्सा भी चौरासी हज़ार योजन चौड़ा है। इस पर्वत के ऊपर, नीचे और आसपास सब लोक हैं। सुमेरु के चारों ओर भद्राश्व, केतुमाल, जम्बूद्वीप (अर्थात् भरतखण्ड) और उत्तर कुरु, ये चार द्वीप हैं। उत्तर कुरु द्वीप में पुण्यात्मा लोग रहते हैं।

एक समय पक्षिराज गरुड़ के पुत्र सुमुख ने सुमेरु पर्वत पर सुवर्ण के शरीरवाले कौओं को देखकर सोचा कि इस सुमेरु पहाड़ पर उत्तम, मध्यम और अधम पक्षियों में कुछ भी अन्तर नहीं देख पड़ता। इसलिए मैं इसे छोड़कर चला जाऊँगा [यों सोचकर सुमेरु को छोड़कर पक्षिराज सुमुख उत्तर कुरुदेश को चले गये]। महाराज! ज्योतिर्मण्डली में श्रेष्ठ सूर्य, चन्द्रमा, सब नक्षत्र और वायु उस सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते रहते हैं। वहाँ के वृक्ष सुन्दर फलों और फूलों से लदे रहते हैं। वहाँ के दिव्य भवन सुवर्णमय और सुवर्ण की सामग्री से सजे हुए हैं। वहाँ देवता, गन्धर्व, असुर, अप्सरा, राक्षस आदि देवयोनियाँ नित्य विहार करती हैं। ब्रह्मा, रुद्र और इन्द्र बहुत सी दक्षिणावाले विविध यज्ञ करते हैं। नारद ऋषि तथा तुम्बुरु, विश्वावसु और हाहा-हूहू आदि गन्धर्व उनके गुणों का बखान करते हैं। महामनस्वी सप्तर्षिगण और प्रजापति २० कश्यप वहाँ हर पर्व पर जाते हैं। राजन्, उस सुमेरु पर्वत की चोटी पर दैत्यों के साथ शुक्रा-

चार्य रहते हैं। ये सब रत्न और रत्नों की खान पहाड़ उन्हीं के अधिकार में हैं। यक्षराज कुबेर उन्हीं शुक्र से धन का चौथाई हिस्सा पाते हैं और उसका सोलहवाँ हिस्सा मनुष्यों को देते हैं।

उस सुमेरु पर्वत के उत्तर भाग में सब प्रकार के सब ऋतुओं के दिव्य फूलों से परिपूर्ण, शिलाओं पर स्थित परम रमणीय कर्णिकार वन है। वहाँ पार्वती के साथ महादेवजी पैरों तक लटक रही कनैर के फूलों की माला पहने विचरते और विहार करते हैं। सब भूतगण उनके साथ रहते हैं। उनके तीनों नेत्र उदय हो रहे सूर्य के समान चमकीले हैं। उत्तम व्रत करनेवाले, उग्र तपस्वी, सत्यवादी, महात्मा सिद्धों को उनके दर्शन मिलते हैं। बुरे चरित्र-वाले दुष्ट लोग उन महेश्वर के दर्शन नहीं पा सकते। उस सुमेरु के शिखर से वे पवित्र जल-वाली गङ्गाजी निकली हैं जिनके तट पर पुण्यात्मा जन रहते हैं। वे लगातार गम्भीर शब्द करती हुई प्रबल वेग से चन्द्रकुण्ड में गिरती हैं। गङ्गाजी से ही वह समुद्र-तुल्य पवित्र कुण्ड उत्पन्न हुआ है। बड़े-बड़े पर्वत जिनके वेग को रोकने में असमर्थ हैं उन गङ्गाजी को भगवान् ३० शङ्कर ने सैकड़ों-हज़ारों वर्षों तक अपने मस्तक पर ही धारण कर रक्खा था।

राजन्, जम्बूखण्ड के बीच सुमेरु के पश्चिम किनारे पर केतुमाल नाम का महा जन-पद है। वहाँ के पुरुषों के शरीर का रङ्ग तपे हुए सोने के समान है। वहाँ की स्त्रियाँ अप्सराओं के समान सुन्दरी हैं। उन लोगों की आयु दस हज़ार वर्ष की है। उन्हें रोग और शोक नहीं होता। वे सदा प्रसन्न देख पड़ते हैं। उसके पास ही गन्धमादन पहाड़ के शिखर पर यक्षराज कुबेर राक्षसों और अप्सराओं के साथ विहार करते हैं। गन्धमादन के उत्तर भाग में असंख्य छोटे-छोटे पहाड़ हैं। वहाँ के पुरुष साँवले, तेजस्वी और बड़े पराक्रमी हैं। वहाँ की स्त्रियों का शरीर नीलकमल के रङ्ग का है—उनकी सूरत देखनेवालों को मोहने-वाली और प्यारी है। उनकी आयु ग्यारह हज़ार वर्ष की है। नील पर्वत के उत्तर अंश में श्वेतखण्ड है। उसके उत्तर अंश में हिरण्यकखण्ड है। उसके उत्तर अंश में अनेक जनपदों से शोभित ऐरावतखण्ड है। इन खण्डों के दक्षिण भाग में भरतखण्ड है। इन खण्डों का आकार धनुष का सा है। राजन्! श्वेतखण्ड, हिरण्यकखण्ड, इलावृतखण्ड, हरिखण्ड और हैमवतखण्ड, ये पाँच खण्ड बीच में हैं। दक्षिण ओर भरतखण्ड और उत्तर ओर ऐरावतखण्ड है। इलावृतखण्ड सबके बीच में है। ये खण्ड उत्तरोत्तर हर एक की अपेक्षा धर्म, अर्थ, काम, आरोग्य, आयु और परिमाण में अधिक हैं। इन खण्डों के निवासी परस्पर किसी तरह का झगड़ा न करके बड़े सुख से रहते हैं।

४० महाराज, इस तरह यह पृथ्वी बहुत से पर्वतों से घिरी हुई है। हेमकूट अथवा कैलास नाम का जो अत्यन्त विशाल पर्वत है उस पर यक्षराज कुबेर यक्षों के साथ रहकर सदा विहार करते हैं। कैलास के उत्तर ओर मैनाक पर्वत के समीप एक हिरण्यशृङ्ग नाम का बड़ा भारी
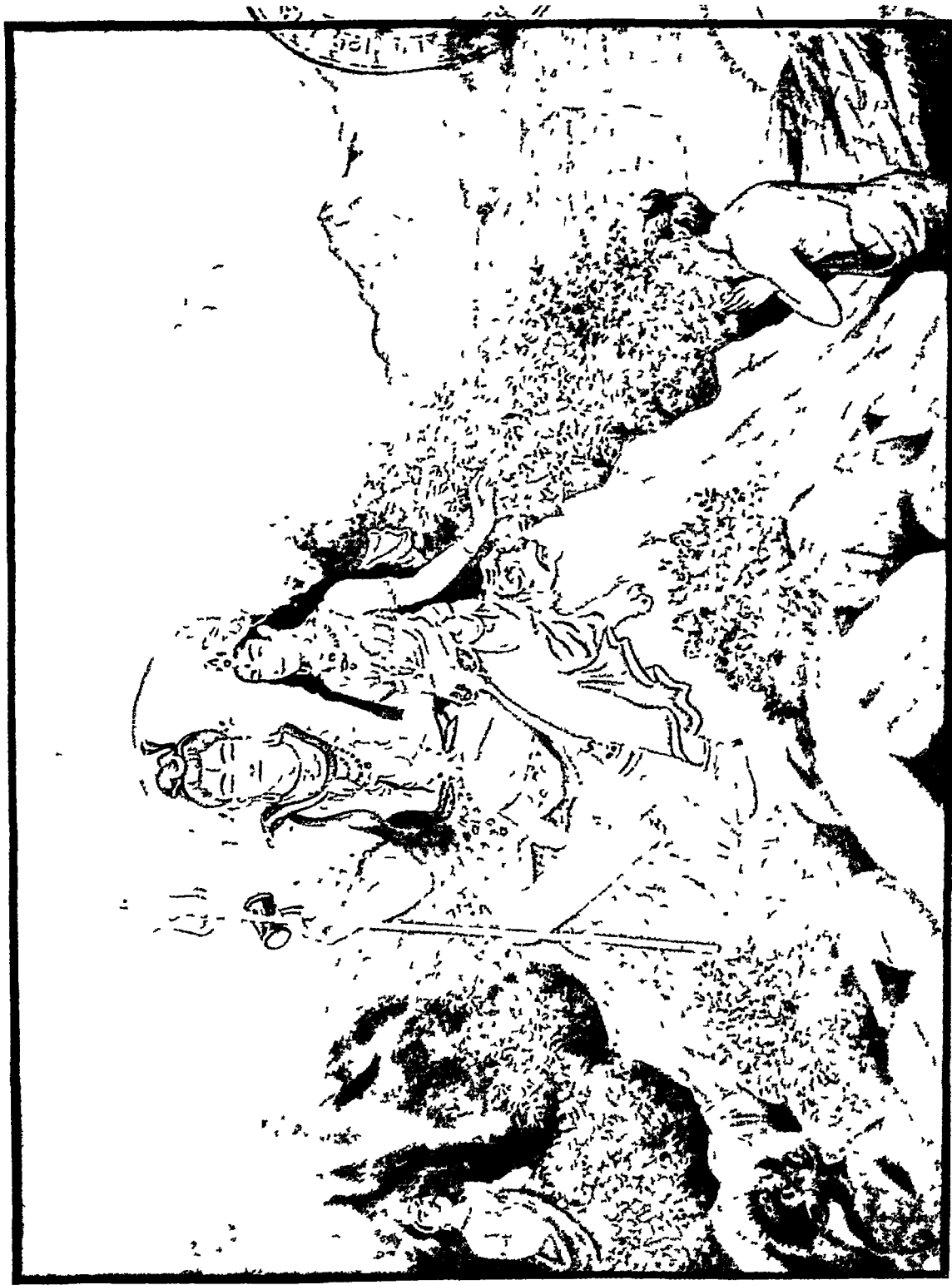
वहां पार्वती के साथ महादेवजी पैरों तक लटक रही कनैर की माला पहने विहार करते हैं। पृ० १८८४

मणिमय पर्वत है। उसके पास सुवर्ण की वालू से परिपूर्ण परम रमणीय विन्दुसर नाम का दिव्य सरोवर है। वहीं राजा भगीरथ ने बहुत दिनों तक तप किया और गङ्गाजी के दर्शन पाये थे। उस सरोवर के किनारे पर मणिमय यूप और सुवर्णमय चैत्यभवन हैं। इन्द्र ने वहीं पर यज्ञ करके सिद्धि पाई है। परम तेजस्वी भगवान् रुद्र ने उसी स्थान में रहकर प्रजा की सृष्टि की है। उसी स्थान में नर, नारायण, ब्रह्मा, मनु और परम तेजस्वी शङ्कर की सब लोग उपासना करते हैं। त्रिपथगामिनी गङ्गाजी ब्रह्मलोक से चलकर पहले उसी स्थान पर गिरी हैं। वहीं से उनकी वस्वौकसारा, नलिनी, सरस्वती, जम्बूनदी, सीता, गङ्गा और सिन्धु नाम से प्रसिद्ध सात धाराएँ वही हैं। ईश्वर ने ही लोकोपकार के लिए यह अचिन्त्य दिव्य विधान किया है—पवित्र जलवाली गङ्गाजी की सात धाराएँ वहाई हैं। लोग जहाँ पर इन्द्र की उपासना करते हैं वहीं पर, सहस्र युग वीतने पर, अदृश्य सरस्वती की धारा देख पड़ती है। ये सातों दिव्य गङ्गाएँ तीनों लोकों में प्रसिद्ध हैं। ५०

हिमालय पर राक्षस, हेमकूट पर यक्ष, निषध पर साँप और नाग, तपोवन गोकर्ण पर्वत पर तपस्वी और नील पर्वत पर ब्रह्मर्षि लोग रहते हैं। शृङ्गवान् पर्वत देवताओं के विचरने का स्थान कहा जाता है। महाराज, मैंने जिन सात खण्डों का वर्णन किया है, उन्हीं में सब स्थावर-जङ्गम जीव रहते हैं। उनकी दैवी और मानुपी समृद्धि अनेक प्रकार की देख पड़ती है। उसकी संख्या करना असम्भव है; किन्तु हित चाहनेवाले मनुष्य को उसके ऊपर सर्वथा श्रद्धा रखनी चाहिए। राजन्, अब मैं आपके प्रश्न के अनुसार महाशशस्थान का वर्णन करता हूँ—सुनिए। शशस्थान के दक्षिण और उत्तर ओर दो खण्ड हैं। उसके आस-पास नागद्वीप और काश्यपद्वीप कानों की तरह स्थित हैं। ताम्रपर्णी नदी और मलयपर्वत उसके सिर के समान जान पड़ते हैं। यह शश (ख़रगोश) के आकार का द्वीप जम्बूद्वीप के दूसरे द्वीप के समान है। ५६

सातवाँ अध्याय

उत्तरकुरु और भद्राश्वखण्ड का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, तुम महाबुद्धिमान् हो। अब सुमेरु के उत्तर ओर स्थित उत्तर कुरुदेश और पूर्व ओर स्थित स्थान का वर्णन करो। माल्यवान् पर्वत का हाल भी कहो।

सञ्जय ने कहा—महाराज, सुमेरु के उत्तर ओर और नीलगिरि के दक्षिण ओर सिद्ध-जन-सेवित परम पवित्र उत्तरकुरु प्रदेश है। वहाँ के वृक्ष सदा सुमधुर रसयुक्त स्वादिष्ठ फलों और सुगन्धित फूलों से शोभित रहते हैं। वहाँ कुछ वृक्ष ऐसे भी हैं जो सब इच्छाओं को

पूर्ण करते हैं। वहाँ के चीरी नाम के वृक्ष छः रसों से युक्त अमृत-सदृश दूध की धारा बरसाते हैं। उन वृक्षों में फल के स्थान पर कपड़े और गहने उत्पन्न होते हैं। वहाँ की भूमि मणिमय है। महीन बालू सोने की रेती के समान चमकीली है। [कोई-कोई भूखण्ड तो मणि, रत्न, हीरे और पद्मराग मणि का बना हुआ और परम रमणीय है।] वहाँ के सरोवरों में स्वच्छ जल भरा हुआ है; कीचड़ नाम लेने को भी नहीं। उनका जल सभी ऋतुओं में सुखदायक स्पर्शवाला है। जीव जब स्वर्ग के सुख भोगकर पुण्य क्षीण होने पर वहाँ से भ्रष्ट होते हैं तब उत्तरकुरु प्रदेश में ही उनका जन्म होता है। उनका रूप मनोहर होता है। उन सबका जन्म शुद्ध उच्च कुल में होता है। वहाँ की स्त्रियाँ रूप में अप्सराओं को भी मात करती हैं। वहाँ के लोग चीरी वृक्षों का अमृत-तुल्य दूध पीते हैं। वहाँ के स्त्री-पुरुष चकई-चकवे के जोड़े की तरह एक साथ पैदा होकर समान रूप से बढ़ते हैं। सब तुल्य रूप और गुणों से सम्पन्न तथा एक से वेश और आभूषणों से शोभित रहते हैं। वे सब नीरोग और सदा प्रसन्न १० रहते हैं। उनकी आयु ग्यारह हज़ार वर्ष की होती है। वहाँ कोई किसी का त्याग नहीं करता। उनमें से किसी की मृत्यु हो जाती है तो तीक्ष्ण तुण्डवाले भयङ्कर भारुण्ड नाम के पक्षी उनकी लाश ले जाकर पर्वत की कन्दराओं में डाल आते हैं।

राजन्, मैंने संक्षेप से उत्तरकुरुखण्ड का हाल कह सुनाया। अब सुमेरु के पूर्व भाग का हाल कहता हूँ। वहाँ भद्राश्व नाम का एक स्थान है। उसमें एक भद्रशाल नाम का वन है। उस वन में एक योजन ऊँचा कालाम्र नाम का वृक्ष है। उसके आसपास सिद्ध और चारण रहते हैं। उस शुभ वृक्ष में सदा फूल और फल देख पड़ते हैं। वहाँ के सफ़ेद रङ्ग के पुरुष बड़े तेजस्वी और महान् पराक्रमी होते हैं। स्त्रियों के शरीर का रङ्ग कुमुद पुष्प का सा साफ़ और रूप बहुत ही सुन्दर होता है। उनके शरीर चन्द्र के समान, कान्तियुक्त और मुखमण्डल सुशीतल चन्द्रबिम्ब के समान होते हैं। उन सबकी जवानी सदा बनी रहती है। वे नाचने-गाने में निपुण होती हैं। उनकी आयु दस हज़ार वर्ष की है। वहाँ के नर-नारी कालाम्र वृक्ष के फलों का रस पीते हैं। नीलगिरि के दक्षिण और निषध पर्वत के उत्तर ओर सुदर्शन नाम का, सब इच्छाओं के अनुसार फल देनेवाला, एक जामुन का पेड़ है। वह वृक्ष सदा बना रहता है। २० उसी पेड़ के कारण सुदर्शन द्वीप का दूसरा नाम जम्बूद्वीप भी है। उस वृक्ष के आस-पास सिद्ध और चारण रहते हैं। वह वृक्ष सौ हज़ार योजन ऊँचा है। वह मानों आकाश को छुये लेता है। उस वृक्ष के फलों का विस्तार दो हज़ार पाँच सौ 'अरत्नि' (मुट्ठी से कुछ कम) है। उन फलों के गिरते समय बड़ा शब्द होता है। उन फलों में रस ही रस भरा रहता है। उन फलों से सोने के रङ्ग का रस निकलकर नदी के रूप में बहता है। वह नदी सुमेरु की प्रदक्षिणा करती हुई उत्तरकुरु प्रदेश में बहती है। उन फलों का रस पीने से जम्बूद्वीप-निवासियों

के मन में शान्ति रहती है। उन्हें प्यास नहीं लगती; वे कभी बूढ़े भी नहीं होते। उस रस के संसर्ग से नदी-किनारे की मिट्टी, वीरबहूटी के रङ्ग का, जाम्बूनद सुवर्ण बन जाती है। देवता और उनकी स्त्रियाँ उसी सुवर्ण के सुन्दर गहने पहनती हैं। वहाँ के मनुष्य जन्मकाल से ही दोपहर के सूर्य के समान तेजस्वी होते हैं।

महाराज, माल्यवान् पर्वत के शिखर पर संवर्तक नाम के कालाग्नि सदा विराजमान रहते हैं। माल्यवान् के आस-पास छोटे-छोटे पहाड़ों का सिलसिला दूर तक देख पड़ता है। ग्यारह हज़ार योजन तक माल्यवान् पर्वत फैला हुआ है। वहाँ उत्पन्न होनेवाले मनुष्यों के शरीर का रङ्ग सोने का सा होता है। वे सब ब्रह्मचारी होते हैं। जो लोग इस लोक में शुभ कर्म करके ब्रह्मलोक को जाते हैं वे ही, पुण्य क्षीण होने पर, ब्रह्मलोक से गिरकर माल्यवान् पर्वत पर पैदा होते हैं। वे सबके साथ अच्छा व्यवहार करनेवाले मनुष्य तीव्र तपस्या करते हैं और लोक-रक्षा के लिए अन्त को सूर्यमण्डल में प्रवेश करते हैं। उनमें से छाछठ हज़ार आदमी ३० अरुण के आगे सूर्यमण्डल के आस-पास चलते हैं। इस प्रकार छाछठ हज़ार वर्ष तक सूर्य के ताप में तपकर अन्त को वे चन्द्रमण्डल में प्रवेश करते हैं। ३२

आठवाँ अध्याय

सुमेरु के उत्तर भाग के तीनों खण्डों का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! तुम खण्ड, पर्वत और पर्वतनिवासी लोगों के नाम कहो। सञ्जय ने कहा—राजन्, श्वेत पर्वत के दक्षिण और नील पर्वत के उत्तर में रमणक नाम का एक खण्ड है। इसी का दूसरा नाम श्वेतखण्ड है। वहाँ के रहनेवाले सब विशुद्ध वंशों में उत्पन्न हैं। वे प्रियदर्शन और सदा सन्तुष्टचित्त हैं। उनका कोई शत्रु नहीं। वे प्रसन्नतापूर्वक ग्यारह हज़ार पाँच सौ वर्ष तक जीते रहते हैं। नील पर्वत के दक्षिण और निषध पर्वत के उत्तर और हिरण्मय नाम का खण्ड है। वहाँ हैरण्वती नदी बहती है। इस खण्ड में पक्षियों के राजा गरुड़ रहते हैं। वहाँ के सब मनुष्य यक्षों की उपासना करनेवाले, धनी, प्रियदर्शन, महाबली, नित्य प्रसन्न रहनेवाले और श्रेष्ठ होते हैं। इन खण्डों के रहनेवालों की आयु दो हज़ार पाँच सौ वर्ष की होती है।

हे नरश्रेष्ठ, शृङ्गवान् पर्वत के तीन विचित्र शिखर हैं। एक मणिमय है, दूसरा सुवर्णमय है और तीसरा सब रत्नों से परिपूर्ण है। रत्नमय शिखर पर सुन्दर भवन बने हैं, जो उसकी शोभा को और भी बढ़ाते हैं। वहाँ स्वयंप्रभा शाण्डिली नाम की देवी का निवास है। शृङ्गवान् के उत्तर और समुद्र के किनारे पर ऐरावत नाम का खण्ड है। न तो वहाँ सूर्य का प्रकाश १०

पहुँचता है और न वहाँ के मनुष्य बूढ़े ही होते हैं। नक्षत्रों सहित चन्द्रमा ही वहाँ प्रकाश पहुँचाते हैं। वहाँ के मनुष्यों का जन्म से ही पद्म का सा रङ्ग और कमल जैसी आँखें होती हैं। उनके शरीर से कमल के फूल की गन्ध निकलती है। वे देवलोक से भ्रष्ट होने पर वहाँ जन्म लेनेवाले पुण्यात्मा होते हैं। वे जितेन्द्रिय और देवतुल्य होते हैं। न तो उन्हें भूख-प्यास सताती है और न उनको पसीना आता है। उन पापरहित पुरुषों को सुगन्ध बहुत प्रिय होती है। उनकी आयु तेरह हज़ार वर्ष की होती है। राजन्, क्षीरसागर के उत्तर ओर जो स्थान है वहाँ भगवान् पुण्डरीकाक्ष रथ पर विराजमान हैं। वह रथ अग्नि के रङ्ग का, मन के समान वेगवाला, जाम्बूनद सुवर्ण से अलङ्कृत, भूतयुक्त और दिव्य है। उसमें आठ पहिये लगे हैं। वही भगवान् सब प्राणियों के प्रभु और विभु (सर्वव्यापक) हैं। उन्हीं से जगत् उत्पन्न होता और उन्हीं में लीन हो जाता है। वही हर एक काम करनेवाले और करानेवाले हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश और यज्ञ उन्हीं के स्वरूप हैं। अग्नि उनका मुख है।

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज, सञ्जय से यह सब वर्णन सुनकर महामनस्वी धृतराष्ट्र फिर अपने पुत्रों के बारे में सोचने लगे। कुछ देर तक सोचकर धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, २० इसमें सन्देह नहीं कि प्रबल काल ही इस जगत् का संहार करके फिर उसे उत्पन्न करता है। इस जगत् का कोई पदार्थ नित्य नहीं है। भगवान् नर और नारायण सर्वज्ञ हैं; वही सब संसार २२ का संहार करते हैं। देवगण उन्हें वैकुण्ठ और मनुष्य उन्हें विष्णु कहते हैं।

नवाँ अध्याय

भरतखण्ड के देश, नदी, पर्वत आदि का विस्तार से वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—सञ्जय, जिस भरतखण्ड में यह अपार सेना युद्ध के लिए जमा हुई है, और जहाँ का साम्राज्य प्राप्त करने के लिए मेरा पुत्र दुर्योधन और पाण्डव इतना प्रयत्न कर रहे हैं, तथा मेरा मन भी जिस भरतखण्ड के लिए लुभा रहा है, उसका हाल तुम विस्तार के साथ कहो। मैं तुमको सबसे श्रेष्ठ बुद्धिमान् समझता हूँ।

सञ्जय ने कहा—महाराज, मैं जो कहता हूँ उसे मन लगाकर सुनिए। पाण्डवों को इस भारतवर्ष के साम्राज्य का लोभ नहीं है। दुर्योधन और शकुनि को ही इसके ऊपर बड़ा लोभ है। अन्य अनेक जनपदों के स्वामी क्षत्रिय राजा इस भारतवर्ष के ऊपर लोभ की दृष्टि डालकर एक दूसरे के शत्रु बने बैठे हैं। हे भरतश्रेष्ठ, मैं अब इस भारतवर्ष का वृत्तान्त विस्तार के साथ कहता हूँ। इन्द्र, वैवस्वत मनु, महाराज पृथु, महामना इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष, मान्धाता, नहुष, मुचुकुन्द, उशीनर के पुत्र शिवि, महाराज ऋषभ, पुरूरवा, नृग, कुशिक, गाधि, सोमक, दिलीप तथा और अनेक प्रबल पराक्रमी राजाओं को यह भरतखण्ड प्रिय रहा है।

मैंने इस खण्ड का हाल जो सुना है सो सब आपके आगे कहता हूँ। इस भारतवर्ष में महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, गन्धमादन, विन्ध्य और पारियात्र, ये सात कुलाचल अर्थात् बड़े पर्वत हैं। इन पर्वतों के आस-पास और भी हज़ारों रत्नपूर्ण, विचित्र शिखरवाले, छोटे-छोटे, अज्ञात पर्वत हैं। उनमें साधारण जातियों के लोग रहते हैं। १०

महाराज! इस भारतवर्ष में आर्य, म्लेच्छ और सङ्कर जातियाँ रहती हैं। उन जातियों के लोग जिन नदियों के पानी को पीते हैं उन प्रधान और अप्रधान नदियों के नाम मैं कहता हूँ—सुनिए। इस भरतखण्ड में गङ्गा, सिन्धु, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, बाहुदा, महानदी, शतद्रू, चन्द्रभागा, यमुना, दृषद्वती, विपाशा, विपापा, स्थूलवालुका, कृष्णवेणा, इरावती, वितस्ता, पयोष्णी, देविका, वेदस्मृता, वेदवती, त्रिदिवा, इक्षुला, कृमि, करीषिणी, चित्रसेना, चित्रवाहा, गोमती, धूतपापा, वन्दना, गण्डकी, कौशिकी, कृत्या, निचिता, लोहतारिणी, रहस्या, शतकुम्भा, सरयू, चर्मण्वती, वेत्रवती, हस्तिसोमा, दिक्, शरावती, भीमरथी, वेणा, पयोष्णी, कावेरी, चुलुका, वाणी, शतबला, नीवारा, अहिता, सुप्रयोगा, पवित्रा, कुण्डवी, सिन्धु, राजनी, पुरमालिनी, २० पूर्वाभिरामा, वीरा, भीमा, ओघवती, पाशाशिनी, पापहारिणी महेन्द्रा, पाटलावती, करीषिणी, असिक्री, कुशचीरा, मकरी, प्रवरा, मेना, हेमा, घृतवती, पुण्यवती, अनुष्णा, शैव्या, कापी, सदानीरा, अधृष्या, कुशधारा, सदाकान्ता, शिवा, वीरवती, वस्त्रा, सुवस्त्रा, गौरी, कम्पना, हिरण्वती, वरा, वीरकरा, पञ्चमी, रथचित्रा, ज्योतिरथा, विश्वामित्रा, कपिञ्जला, उपेन्द्रा, बहुला, कुवीरा, अम्बुवाहिनी, विनदी, पिञ्जला, वेणा, तुङ्गवेणा, विदिशा, कृष्णवेणा, ताम्रा, कपिला, खलु, सुवामा, वेदाश्वा, हरिश्रावा, शीघ्रा, पिच्छिला, भारद्वाजी, कौशिकी, शोणा, चन्द्रमा, दुर्गा, चित्रशिला, ब्रह्मवेध्या, बृहद्वती, यवक्षा, रोही, जाम्बूनदी, सुनसा, तमसा, ३० दासी, वसा, वराणसी, नीला, धृतवती, पर्णाशा, मानवी, वृषभा, ब्रह्ममेध्या, बृहद्ध्वनि, निरामया, कृष्णा, मन्दगा, मन्दवाहिनी, ब्रह्माणी, महागौरी, दुर्गा, चित्रोत्पला, चित्ररथा, मञ्जुला, वाहिनी, मन्दाकिनी, वैतरणी, कोषा, शुक्तिमती, अनङ्गा, वृषसा, लोहित्या, करतोया, वृषका, कुमारी, ऋषिकुल्या, मारिषा, सरस्वती, मन्दाकिनी, सुपुण्या, सर्वगङ्गा—इतनी नदियाँ हैं। इनके सिवा और भी हज़ारों नदियाँ हैं, जिन्हें साधारण रूप से सब लोग नहीं जानते। मैंने अपनी स्मरणशक्ति के अनुसार सब जानी हुई नदियों के नाम आपको सुना दिये। ये नदियाँ विश्व की माता हैं। इनमें स्नान करने से महाफल प्राप्त होता है।

महाराज, अब मैं भारतवर्ष के जनपदों और देशों के नाम आपके आगे कहता हूँ, सुनिए। कुरु-पाञ्चाल, शाल्व, माद्रेय-जाङ्गल, शूरसेन, पुलिन्द, बोध, माल, मत्स्य, कुशल्य, सौशल्य, कुन्ति, कान्तिकोशल, चेदि, मत्स्य, करूष, भोज, सिन्धु-पुलिन्द, उत्तम, दशार्ण, मेकल, ४० उत्कल, पाञ्चाल, कोशल, नैकपृष्ठ, धुरन्धर, गोध, मद्रकलिङ्ग, काशि, अपरकाशि, जठर, कुक्कुर,

दशार्णकुकुर, कुन्ति, अवन्ति, अपरकुन्ति, गोमन्त, मन्दक, सण्ड, विदर्भ, रूपवाहिक, अश्मक, पाण्डुराष्ट्र, गोपराष्ट्र, करीति, अधिराज्य, कुशाद्य, मल्लराष्ट्र, वारवास्य, अयवाह, चक्र, चक्राति, शक, विदेह, मगध, स्वच्च, मलज, विजय, अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, यकृल्लोम, मल्ल, सुदेष्ण, प्रह्लाद, माहिक, शशिक, वाह्लीक, वाटधान, आभीर, कालतोयक, अपरान्त, परान्त, पञ्चाल, चर्ममण्डल, अटवीशिखर, मेरुभूत, उपावृत्त, अनुपावृत्त, स्वराष्ट्र, केकय, कुन्दापरान्त, माहेय, कच्च, सामुद्रनिष्कुट, ५० अन्ध्र, अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि, अङ्गमलज, मगध, मानवर्जक, समन्तर, प्रावृषेय, भार्गव, पुण्ड्र, भर्ग, किरात, सुदृष्ट, यामुन, शक, निषाद, निषध, आनर्त, नैर्ऋत्य, दुर्गाल, प्रतिमत्स्य, कुन्तल, कोशल, तीरग्रह, शूरसेन, ईजिक, कन्यकागुण, तिलभार, मसीर, मधुमन्त, सुकन्दक, काश्मीर, सिन्धुसौवीर, गान्धार, दर्शक, अभीसार, उलूत, शैवाल, वाह्लीक दार्वी, वानव, दर्व, वातज, आमरथ, उरग, बहुवाद्य, सुदाम, सुमल्लिक, बध्र, करीपक, कुलिन्द, उपत्यक, वनायु, पार्श्वरोम, कुशविन्दु, दश, कच्छ, गोपालकच्च, जाङ्गल, कुरुवर्णक, किरात, वर्वर, सिद्ध, वैदेह, ताम्रलिप्तक, उड्र, म्लेच्छ, सैसिरिध्र और पार्वतीय इत्यादि।

राजन्, इनके सिवा दक्षिण दिशा के जनपदों के नाम सुनिए। द्रविड़, केरल, प्राच्य, भूषिक, वनवासिक, कर्णाटक, माहिषक, विकल्प, मूषक, झिल्लिक, कुन्तल, सौहृद, नभकानन, ६० कौकुट्टक, चोल, कोंकण, मालव, समङ्ग, करक, कुक्कुर, अङ्गार, मारिष, ध्वजिनी, उत्सवसङ्केत, त्रिगर्त, शाल्वसेनि, व्यूक, कोकवक, प्रोष्ठ, समवेगवश, विन्ध्यचुलिक, पुलिन्द, वल्कल, मालव, वल्लव, अपरवल्लव, कुलिन्द, कालद, कुण्डल, करट, मूषक, तनवाल, सनीप, घट, सृञ्जय, आठिद, पाशिवाट, तनय, सुनय, ऋषिक, विदभ, काक, तङ्गण, अपरतङ्गण, उत्तर और अपर म्लेच्छ, यवन, चीन, काम्बोज, दारुण, सकृद्ग्रह, कुलत्थ, हूण, पारसीक, रमण-चीन, दशमालिक, क्षत्रियों के सीमान्त पर उपनिवेश, वैश्यों और शूद्रों के जनपद, शूद्र, आभीर, दरद, काश्मीर, पत्ति, खाशीर, अन्तचार, पह्लव, गिरिगह्वर, आत्रेय, भरद्वाज, स्तनपोषिक, प्रोषक, कलिङ्ग, किरात, तोमर हन्यमान और करभञ्जक इत्यादि। राजन्! इन सब देशों में क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, आभीर और अन्य म्लेच्छ जातियाँ रहती हैं। यह देशों की नामावली मैंने संक्षेप में आपको ७० सुना दी है। इन देशों के सिवा और भी अनेक देश पूर्व और उत्तर में हैं।

महाराज, अच्छी तरह भूमि का पालन करने से वह कामधेनु के समान धन-सम्पत्ति और सुख देती है। पृथ्वी से ही धर्म, अर्थ, काम का महाफल मिलता है। इसी लिए धर्म और अर्थ के ज्ञाता महाबली शूर राजा लोग वसु (धन) और वसुन्धरा (पृथ्वी) के लिए लड़-कर युद्ध में प्राण त्याग देते हैं। देवताओं और मनुष्यों की सब इच्छाएँ पृथ्वी से ही पूरी होती हैं। हे भरतश्रेष्ठ, मांस के टुकड़े के लिए जैसे कुत्ते लड़ते देख पड़ते हैं, वैसे ही राजा लोग पृथ्वी के टुकड़ों के लिए आपस में लड़ते-झगड़ते और छीना-झपटी करते हैं। सृष्टि के आदि

से अब तक कोई भी भोग करके तृप्त नहीं हुआ। वास्तव में मनुष्य की इच्छाओं का अन्त ही नहीं है। इसी कारण इस समय कौरव और पाण्डव भी साम, दान, भेद, दण्ड आदि उपायों से भूमि प्राप्त करने के यत्न में लगे हुए हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज, अच्छी तरह पालित और सुरक्षित पृथ्वी ही प्राणियों के लिए पिता, भाई, पुत्र, स्वर्ग और सर्वस्व है। ७६

दसवाँ अध्याय

आयु के परिमाण का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! इस भारतवर्ष, हैमवतवर्ष और हरिवर्ष के मनुष्यों की आयु, बल और भूत-भविष्य-वर्तमान शुभाशुभ-फल आदि मुझे सुनाओ।

सञ्जय ने कहा—हे भरतश्रेष्ठ! इस भारतवर्ष में क्रमशः सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलियुग नाम के चार युग होते हैं। सत्ययुग के लोगों की आयु चार हज़ार वर्ष की, त्रेतायुग के लोगों की आयु तीन हज़ार वर्ष की और द्वापर युग के लोगों की आयु दो हज़ार वर्ष की होती है। कलियुग के लोगों की आयु का कुछ ठीक नहीं है। इस युग में कुछ जीव गर्भावस्था में ही और कुछ पैदा होते ही मर जाते हैं। सत्ययुग में महाबली, महासत्त्व, प्रज्ञा-सम्पन्न, धनी, प्रियदर्शन, मुनि लोग उत्पन्न होते हैं। उनकी सन्तानें भी ऐसी ही होती हैं। त्रेतायुग में उत्साही, महात्मा, परम धार्मिक, सत्यवादी, प्रियदर्शन, लम्बे-चौड़े डील-डौल के, महावीर्य, युद्धविशारद, चक्रवर्ती क्षत्रिय लोग पैदा होते हैं। द्वापरयुग में सभी वर्ण पैदा ११ होते हैं। वे बड़े उत्साही, वीर्यशाली और एक दूसरे को जीतने की इच्छा रखनेवाले हुआ करते हैं। द्वापरयुग में ही मनुष्यों के गुण घटने लगते हैं। कलियुग में जो लोग जन्म लेते हैं वे थोड़े तेजवाले, क्रोधी, लोभी, क्रूर और मिथ्यावादी होते हैं। उनके मन में सदा ईर्ष्या, अभिमान, क्रोध, कपट, असूया, राग-द्वेष और लोभ का आविर्भाव हुआ करता है। उत्तम गुणसम्पन्न हैमवतवर्ष और हरिवर्ष की स्थिति भी ऐसी ही जानिए। १५

भूमिपर्व

ग्यारहवाँ अध्याय

शाकद्वीप का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, तुमने जम्बूखण्ड का हाल तो सुना दिया। अब जम्बू-खण्ड का परिमाण और विस्तार, समुद्र का परिमाण, शाकद्वीप, कुशद्वीप, शाल्मलिद्वीप, क्रौञ्च-द्वीप और चन्द्र, सूर्य, राहु आदि का सब हाल मुझसे कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन्, इस पृथ्वी को बहुत से द्वीपों ने घेर रक्खा है। अब मैं आपसे सातों द्वीप, चन्द्र, सूर्य और राहु का वर्णन करता हूँ। जम्बूद्वीप का परिमाण अठारह हज़ार छः सौ योजन का है। उसे खारी समुद्र घेरे हुए है। खारी समुद्र का परिमाण उससे दूना, अर्थात् सैंतीस हज़ार दो सौ योजन का है। इस समुद्र में अनेक जनपद और मणि-विद्रुम आदि रत्न हैं। अनेक धातुओं से शोभित और सिद्ध-चारण-सेवित बहुत से पर्वत भी इसमें हैं। राजन्, अब शाकद्वीप का वर्णन सुनिए। शाकद्वीप का घेरा जम्बूद्वीप से दूना है। शाकद्वीप को क्षीरसागर घेरे हुए है। इस द्वीप में बहुत से पवित्र जनपद हैं। वहाँ रहनेवाले लोग १० अमर हैं। वे सब तेजस्वी और क्षमाशील हैं। वहाँ दुर्भिक्ष कभी नहीं पड़ता। महाराज, मैंने आपसे संक्षेप में शाकद्वीप का हाल कहा है। अब आप और क्या सुनना चाहते हैं?

धृतराष्ट्र ने कहा—हे महाप्राज्ञ, तुमने संक्षेप से शाकद्वीप का हाल कहा। अब विस्तार के साथ इसका वर्णन करो।

सञ्जय ने कहा—महाराज, शाकद्वीप में विविध मणिरत्न-शोभित सात पर्वत और विविध रत्नों की खानें तथा नदियाँ भी हैं। वहाँ के सब पदार्थ बहुगुणपूर्ण हैं। वहाँ का श्रेष्ठ पर्वत मेरु है, उसमें देवता और ऋषि रहते हैं। मेरु के पश्चिम में, पूर्व को विस्तीर्ण, मलय नाम का पर्वत है। वहीं से मेघ उत्पन्न होकर सर्वत्र जल की वर्षा करते हैं। उसके बाद जलधार नाम का पर्वत है। इन्द्र वहीं से जल लेकर वर्षा ऋतु में बरसाते हैं। उसके पास ही बहुत ऊँचा रैवतक नाम का पर्वत है। ब्रह्माजी के विधान के अनुसार रेवती नक्षत्र वहाँ दिव्य रूप से विराजमान है। सुमेरु के उत्तर ओर अत्यन्त ऊँचा, नवीन मेघ के रङ्ग का, उज्ज्वल कान्तिवाला श्याम नाम का महापर्वत है। वहाँ रहने से ही प्रजा का रङ्ग श्याम हुआ है।

२० धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, तुम्हारे इस कथन पर मुझे बड़ा सन्देह हो रहा है। वहाँ के मनुष्य किस तरह साँवले हो गये?

सञ्जय ने कहा—महाराज! सभी द्वीपों में ब्राह्मण गोरे, क्षत्रिय साँवले और वैश्य मिश्र रङ्ग के होते हैं। हे भरतश्रेष्ठ, श्यामगिरि में अर्थात् उसके पास की भूमि में उत्पन्न होने के कारण वहाँ के लोग साँवले होते हैं। इसी से उस पर्वत का नाम श्याम है। अब अन्य पर्वतों का वर्णन सुनिए। श्यामगिरि के बाद अत्यन्त ऊँचा दुर्गशैल है। उस पर्वत पर बड़े-बड़े सिंह रहते हैं। उसके बाद केसर पर्वत है; वहाँ से वायु प्रकट होता है। ये सब पर्वत क्रमशः एक दूसरे से दूने हैं। इन पहले कहे गये सातों पर्वतों में महामेरु, महाकाश, जलद, कुमुद, उत्तर, जलधार और सुकुमार नाम के सात वर्ष हैं। रैवतक पर्वत का कौमारवर्ष, श्यामगिरि का मणिकाञ्चनवर्ष, केसर का मौदाकीवर्ष है। उसके बाद महापुमान् नाम का एक पर्वत है। यह पर्वत शाकद्वीप की लम्बाई और चौड़ाई को घेरे हुए है। इस खण्ड में

शाक द्वीप में विविध मणिरत्न-शोभित सात पर्वत और विविध रत्नों की खानें तथा नदियाँ भी हैं।

एक ऐसा शाकवृक्ष है जिसका परिमाण जम्बूद्वीप के समान है। सब प्रजा उस वृक्ष के अधीन है। उक्त पर्वत में अत्यन्त पवित्र जनपद बसे हुए हैं। वहाँ के लोग महादेवजी की उपासना करते हैं। उस द्वीप में सिद्ध, चारण और देवगण आया-जाया करते हैं। वहाँ चारों वर्णों की प्रजा है। उन सबकी आयु बहुत बड़ी है। वे अपने-अपने धर्म में अत्यन्त अनुराग रखते हैं। वहाँ न तो चोरों का भय है, न बुढ़ापा है और न मृत्यु है। जैसे वर्षाकाल में नदियाँ बढ़ती हैं, ३० वैसे ही वहाँ की प्रजा क्रमशः बढ़ती है। वहाँ असंख्य शाखाओंवाली गङ्गा, सुकुमारी, कुमारी, शीताशी, वेणिका, मणिजला, महानदी और चक्षुर्वर्धनिका आदि महानदियाँ बहती हैं। इनके सिवा और भी सैकड़ों-हज़ारों पवित्र जलवाली नदियाँ हैं। इन्द्र उन नदियों का जल लेकर वर्षा करते हैं। उन श्रेष्ठ नदियों के नाम गिनाना और उनके परिमाण का वर्णन करना सहज नहीं है। वहाँ लोक-सम्मत चार जनपद हैं, जिनके नाम मङ्ग, मशक, मानस और मन्दग हैं। मङ्ग प्रदेश में अपने कर्मों में निरत ब्राह्मण रहते हैं। मशक प्रदेश में सर्वकामप्रद धार्मिक-श्रेष्ठ क्षत्रिय रहते हैं। मानस प्रदेश में सर्वकाम-सम्पन्न वैश्य और मन्दग प्रदेश में परम धार्मिक शूद्र रहते हैं। हे राजेन्द्र! इन प्रदेशों में न तो राजा है, न राजदण्ड है और न दण्ड के योग्य काम करनेवाले लोग हैं। वहाँ के रहनेवाले धर्मज्ञ लोग अपने-अपने धर्म का पालन करते हुए एक दूसरे की रक्षा करते हैं। महाराज, उज्ज्वल प्रभासम्पन्न शाकद्वीप का इतना ही हाल कहा जा सकता है और इतना ही सुनने का विषय है। ४०

बारहवाँ अध्याय

क्रौञ्च आदि द्वीपों का वर्णन

सञ्जय ने कहा—राजन्, अब मैं उत्तर दिशा में स्थित द्वीपों का वर्णन करता हूँ, सुनिए। इन द्वीपों में घृतसमुद्र, दधिसमुद्र, सुरासमुद्र और जलसमुद्र हैं। इन द्वीपों और सागरों का परिमाण परस्पर एक-एक से दूना है। इनमें समुद्रों से घिरे हुए द्वीप भी हैं। मध्यम द्वीप में मनःशिला धातु का गौर नामक पर्वत है। पश्चिम द्वीप में कृष्ण पर्वत है, जिसमें नारायण रहते हैं। भगवान् नारायण स्वयं वहाँ के रत्नों की रक्षा करते हैं और प्रसन्न होकर वहाँ के निवासियों को सुख देते हैं। कुशद्वीप में वहाँ की प्रजा कुशस्तम्ब की और शाल्मलि द्वीप में वहाँ की प्रजा शाल्मलि वृक्ष की पूजा करती है। क्रौञ्चद्वीप में श्रेष्ठ रत्नों की खान महाक्रौञ्च पर्वत है। वहाँ के चारों वर्ण उसी पर्वत की पूजा करते हैं।

राजन्, कुशद्वीप में विविध धातु-मण्डित और विद्रुमयुक्त प्रथम पर्वत गोमन्त है। इस पर्वत पर भगवान् नारायण मुक्त पुरुषों के साथ रहते हैं। इस द्वीप में दूसरा पर्वत हेममय

१० हेमगिरि है। तीसरा पर्वत दीप्तिशाली कुमुद गिरि है। चौथा पर्वत पुष्पवान् है। पाँचवाँ पर्वत कुशेशय है। छठा पर्वत हरिगिरि है। कुशद्वीप में ये छः श्रेष्ठ पर्वतराज हैं। इनका फ़ासला परस्पर दूना है। कुशद्वीप के पहले वर्ष का नाम उद्भिद् है। दूसरे वर्ष का नाम वेणु-मण्डल है। तीसरे वर्ष का नाम सुरथाकार है। चौथे वर्ष का नाम कम्बल है। पाँचवें वर्ष का नाम धृतिमान् है। छठे वर्ष का नाम प्रभाकर है। सातवें वर्ष का नाम कापिल है। वहाँ यही सात वर्ष अर्थात् खण्ड प्रधान हैं। इन सब वर्षों में देवता, गन्धर्व और मनुष्य प्रसन्न-चित्त से विहार किया करते हैं। इनमें रहनेवाले लोग अजर-अमर हैं। इन वर्षों (खण्डों) में दस्यु या म्लेच्छ जाति के लोग नहीं रहते। इन वर्षों के लोग गोरे रङ्ग के और सुकुमार हैं।

महाराज! अब मैं अन्य द्वीपों का हाल, जैसा सुन रक्खा है, सुनाता हूँ। क्रौञ्चद्वीप में क्रौञ्च नाम का महापर्वत है। उसके बाद वामन पर्वत है। उसके बाद अन्धकार पर्वत है। उसके बाद पर्वतराज मैनाक है। मैनाक के बाद गोविन्द और उसके बाद निविड़ नाम का पर्वत है। इन पर्वतों का परिमाण एक दूसरे से दूना है। इन पर्वतों में जो देश हैं २० उन्हें सुनिए। क्रौञ्च पर्वत के निकट कुशल नाम का देश है और वामन पर्वत के पास मनोनुग देश है। हे कुरुकुलश्रेष्ठ, उसके बाद उष्ण देश है। उष्ण देश के बाद प्रावरक देश है। उसके बाद अन्धकारक देश है। उसके बाद मुनिदेश है। मुनिदेश के बाद दुंदुभिस्वन देश है। उसके बाद सिद्धों और चारणों की निवासभूमि गौरप्राय देश है। महाराज, इन देशों में देवता और गन्धर्व रहते हैं।

पुष्कर द्वीप में विविध मणियों और रत्नों से युक्त पुष्कर नाम का एक पर्वत है। वहाँ भगवान् प्रजापति सदा रहते हैं। देवता और महर्षि उनकी पूजा करते और मधुर वाणी से स्तुति करके उन्हें प्रसन्न करते हैं। महाराज, यह जम्बूद्वीप ही तरह-तरह के श्रेष्ठ रत्नों का आकर है।

पूर्वोक्त द्वीपों के रहनेवाले लोगों में ब्रह्मचर्य, सत्य, दम, आरोग्य और आयु आदि बातें उत्तरोत्तर दूनी हैं। इन द्वीपों में एक ही जनपद, एक ही कार्यक्रम और एक ही धर्म है। सब लोकों के ईश्वर प्रजापति स्वयं दण्ड धारण किये हुए इन द्वीपों की रक्षा करते हैं। राजन्! वे प्रजापति ही राजा हैं, कल्याणस्वरूप हैं, कल्याणदायक हैं। वही पिता हैं, वही पितामह हैं। ३० चेतन और जड़, दोनों प्रकार की प्रजा की रक्षा वही करते हैं। इन द्वीपों के निवासियों के पास पका-पकाया भोजन अपने आप आ जाता है और वे उसे ही खाकर रहते हैं।

राजन्! श्वेतद्वीप के बाद समा नाम की, चौकोर और तेंतीस मण्डलवाली, बस्ती देख पड़ती है। हे कौरव! इस स्थान में लोकप्रसिद्ध वामन, ऐरावत, सुप्रतीक और प्रभिन्नकरटामुख नाम के चार दिग्गज हैं। इन दिग्गजों के परिमाण और आधार का अनुमान करना असम्भव है। वे नीचे, ऊपर और आस-पास अनन्त विस्तृत हैं। वहाँ चारों ओर से बड़े वेग से हवा चलती है।

वे गज पहले उस हवा को रोकते हैं और फिर प्रफुल्ल-कमल-तुल्य अपनी सूँड़ों से उस हवा को संयत रूप से फैलाते हैं। वही हवा जगत् में फैलकर सब प्रजा के प्राणों की रक्षा करती है।

धृतराष्ट्र ने कहा—सञ्जय, तुमने द्वीपों की स्थिति का वर्णन तो विस्तार के साथ किया; अब चन्द्र, सूर्य और राहु आदि का वर्णन करो।

सञ्जय ने कहा—महाराज! मैं द्वीपों का हाल कह चुका, अब राहु का वर्णन सुनिए। सुना है, राहु ग्रह का आकार गोल है। उसका व्यास बारह हज़ार योजन और परिधि छत्तीस हज़ार योजन है। अन्यान्य पौराणिक पण्डितों का कहना है कि राहु का परिमाण छः हज़ार योजन है। चन्द्रमा का व्यास ग्यारह हज़ार योजन और परिधि तेंतीस हज़ार योजन है। किसी-किसी के मत में चन्द्रमा का परिमाण उनसठ हज़ार योजन है। सूर्य का व्यास दस हज़ार योजन और परिधि तीस हज़ार योजन है। किसी-किसी के मत में सूर्य का परिमाण अट्ठावन योजन है। सूर्यमण्डल का परिमाण इतना ही निर्दिष्ट है। राहु दोनों से बड़ा है, इसलिए चन्द्रमा और सूर्य के मण्डलों को ढक लेता है। महाराज, चन्द्रमा और सूर्य तथा राहु का हाल संक्षेप से मैंने सुना दिया। अब आप स्वयं शान्त भाव धारण करके अपने पुत्र दुर्योधन को आश्वासन दीजिए। जो क्षत्रिय इस भूमिपर्व को सुनता है उसे लक्ष्मी और सिद्धि प्राप्त होती है। उसकी आयु, तेज और बल बढ़ता है। जो राजा पर्व के दिन संयत होकर इस कथा को सुनता है उसके पिता, पितामह आदि पुरखे प्रसन्न होते हैं। हम लोग जिस भारतवर्ष में बसते हैं, उसमें रहनेवाले पहले के लोग जिन पुण्य-कार्यों को कर गये हैं, वे सब आपके सुने हुए हैं। ४० ५० ५२

भगवद्गीतापर्व

तेरहवाँ अध्याय

सञ्जय-कृत भीष्मवध-वर्णन

वैशम्पायन कहते हैं कि हे जनमेजय! अब भूत-भविष्य के ज्ञाता, प्रत्यक्षदर्शी, सञ्जय समर-भूमि से लौटकर एकाएक चिन्ताकुल धृतराष्ट्र के पास पहुँचे और कहने लगे—महाराज, मैं सञ्जय आपको प्रणाम करता हूँ। हे भरतश्रेष्ठ! भरतवंश के पितामह, महाराज शान्तनु के पुत्र, भीष्मजी मारे गये। जो योद्धाओं के अगुआ और धनुर्द्धर वीरों के रक्षक आश्रय-स्वरूप थे, वही कुरु-पितामह भीष्म इस समय शर-शय्या पर पड़े हुए हैं। आपके पुत्र दुर्योधन ने जिनके भरोसे जुआ खेला था, उन्हीं भीष्म को समर में शिखण्डी ने मार गिराया। जिन महारथी ने काशी पुरी में अकेले रथ पर बैठकर सब राजाओं को परास्त किया, जिन्होंने परशुराम से बिना किसी प्रकार के क्षोभ के निडर होकर युद्ध किया, जिन्हें साक्षात् परशुराम भी नहीं मार

सके, वही महाबली भीष्म आज शिखण्डी के हाथों मरे पड़े हैं। जो शूरता में महेन्द्र के तुल्य, स्थिरता में हिमालय के सदृश, गम्भीरता में समुद्र के समान और सहनशीलता में पृथ्वी के बराबर थे, वही बाणरूपी दाढ़, धनुषरूपी मुख और खड्गरूपी जिह्वा से भयानक वीर आज शिखण्डी के हाथों मारे गये। जिन्हें युद्ध के लिए उद्यत देखकर पाण्डवों की सेना डर और घब-
१० राहट के मारे वैसे ही काँप उठी थी जैसे सिंह को देखकर गाय काँपने लगती है वही शत्रुवीर-घाती महावीर भीष्म दस दिन आपकी सेना की रक्षा करते हुए, अनेक कठिन कर्म करके, अब सूर्य के समान अस्त हो गये। जिन्होंने इन्द्र की तरह बेखटके हज़ारों बाण बरसाकर दस दिन में दस करोड़ (या लाख) योद्धाओं को मार डाला वही भीष्म आज, आपकी कुमन्त्रणा के
१३ कारण, आँधी में टूटे पेड़ की तरह पृथ्वी पर पड़े हैं। वे कदापि ऐसी दशा के योग्य न थे।

चौदहवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र के प्रश्न

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! इन्द्र-सदृश, कुरु-कुल-चूड़ामणि, मेरे चचा भीष्म किस तरह शिखण्डी के हाथों मारे गये और रथ से गिरे? पिता की प्रसन्नता के लिए जन्म भर ब्रह्मचारी रहनेवाले देवतुल्य भीष्म के बिना इस समय मेरे पुत्रों और योद्धाओं का क्या हाल है? महा-प्राज्ञ, बड़े उत्साही, महाबली, महात्मा भीष्म के मारे जाने पर तुम्हारे मन की क्या दशा हुई थी? उन कुरुकुलाग्रगण्य पुरुषश्रेष्ठ भीष्म के मरने की ख़बर सुनने से मुझे घोर दुःख हो रहा है। भीष्मजी जब युद्धयात्रा पर थे तब कौन-कौन वीर उनके पीछे गये थे, कौन-कौन वीर उनके आगे चले थे, कौन-कौन उनके साथ बने रहे और कौन-कौन लौट आये? जब वे शत्रुसेना में घुसे थे तब किन-किन वीरों ने उनके पृष्ठभाग की रक्षा की थी? जैसे सूर्यदेव अँधेरे को दूर करते हैं वैसे ही महावीर भीष्म जब शत्रुसेना को मारने और शत्रुओं के हृदय में भय उत्पन्न करनेवाले दुष्कर काम करने लगे थे तब शत्रुसेना के किन-किन वीरों ने उनका सामना किया? हे सञ्जय, तुमने क्या पास रहकर सब युद्ध देखा था? पाण्डवों ने किस तरह पिता-
९ मह को रोका? पाण्डवों की महासेना जिन भीष्म को युद्ध के लिए उद्यत और कालानल के समान दुर्धर्ष देखकर मर रहे पुरुष की तरह तड़पने लगती थी वे, दस दिन तक शत्रुसेना को मार-कर, दुष्कर कर्म करके, कैसे सूर्य की तरह अस्त हो गये? अर्जुन ने किस तरह उन उत्तम रथ पर बैठे हुए, शत्रुओं के सिरों को तीक्ष्ण बाणों से काटनेवाले, वेगशाली, ह्रीमान्, अपराजित, असाधारण, पुरुषसिंह, दुर्धर्ष भीष्म को रोका? पितामह के बाण ही दाँत थे, धनुष ही मुख था, और खड्ग ही जिह्वा थी। उग्र धनुष और तीक्ष्ण बाण धारण करनेवाले तथा इन्द्र की तरह

असंख्य बाण बरसाकर दस दिन में दस करोड़ (या लाख) योद्धाओं के मारनेवाले भीष्म पितामह, मेरी कुमन्त्रणा के कारण, मरकर आज आँधी से टूटे हुए पेड़ की तरह अपने अयोग्य गति को पहुँचे।

हे सञ्जय, पाञ्चाल-सेना के वीर किस तरह भीमपराक्रमी भीष्म को रोकने में समर्थ हुए? पाण्डव लोग किस तरह भीष्म से युद्ध करने में प्रवृत्त हुए? द्रोणाचार्य के जीते-जी भीष्म क्यों नहीं जय प्राप्त कर सके? भारद्वाज द्रोणाचार्य और कृपाचार्य के पास रहने पर भी श्रेष्ठ योद्धा भीष्म किस तरह मारे गये? पाञ्चालराज के पुत्र शिखण्डी ने किस तरह उन अतिरथी भीष्म को युद्ध में मारा, जिनका सामना देवता भी नहीं कर सकते थे! २०

युद्ध में महापराक्रमी परशुरामजी की बराबरी का दावा रखनेवाले, समर में परशुरामजी से भी न हारनेवाले, इन्द्र के समान पराक्रमी भीष्म युद्ध में किस तरह मारे गये? हे सञ्जय, मैं उनके मरने का समाचार पाकर बहुत ही दुःखित हूँ। तुम सब वृत्तान्त विस्तार के साथ मुझे सुनाओ। दुर्योधन की आज्ञा से मेरे पक्ष के कौन-कौन वीर भीष्म की सहायता कर रहे थे? जिस समय शिखण्डी आदि पाण्डव पक्ष के योद्धा भीष्म के सामने आये थे उस समय कौरव वीर क्या भीष्म को छोड़कर हट गये थे? मेरा हृदय अत्यन्त कठिन और पत्थर का बना हुआ है, इसी कारण श्रेष्ठ वीर भीष्म के मरने का समाचार सुनकर भी फट नहीं जाता। उन अप्रमेय बलशाली भरतश्रेष्ठ भीष्म में सत्य, मेधा, नीति आदि सद्गुण सदा विराजमान रहते थे। फिर वे किस तरह युद्ध में मारे गये? जिन महामेघ-सदृश भीष्म ने प्रत्यञ्चा के शब्दरूपी गम्भीर गर्जन के साथ धनुष के टङ्कारशब्द-रूपी बिजली की कड़क से सब दिशाओं को प्रतिध्वनित कर दिया, जलधारा-सदृश बाणवर्षा से सृञ्जयों, पाञ्चालों और पाण्डवों की सेना को छा लिया, और दानव-दलन इन्द्र के समान शत्रुपक्ष के रथी, अतिरथी आदि योद्धाओं को मारकर तहस-नहस कर दिया, वे वीर भीष्म कैसे मारे गये? उनके अस्त्रों का सागर अपार था। उसमें बाण ही ग्राह थे, धनुष ही तरङ्गें थीं, गदा और खड्ग ही मगर थे, हाथी और घोड़े ही आवर्त (भँवर) थे, पैदल सिपाही ही मछली के समान थे, शङ्ख और दुन्दुभि आदि का शब्द ही गर्जन था। उस द्वीप और नौका-रहित अस्त्रसागर में भीष्म ने वेग के साथ शत्रुपक्ष के हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि को डुबा दिया होगा। वही भीष्म किस तरह मारे गये? जिनका क्रोध आग से भी बढ़कर भीषण था, जिनका तेज शत्रुओं के लिए असह्य और ताप पहुँचानेवाला था, उन भीष्म के वेग को, समुद्र के वेग को तट की भूमि के समान, किस-किस वीर ने रोका? ३०

शत्रुवीरघाती भीष्म जब दुर्योधन के हित के लिए युद्ध में प्रवृत्त हुए तब कौन वीर उनके आगे-आगे थे? किन वीरों ने उनके रथ के दक्षिण चक्र की रक्षा की थी? किन वीरों ने दृढ़ प्रतिज्ञा के साथ उनके पीछे आक्रमण करनेवाले शत्रुओं को रोका था? किन वीरों ने उनके बायें पहिये की रक्षा की थी? किन वीरों ने उनके बायें पहिये का बचाव करते समय सृञ्जय वीरों

से युद्ध किया था ? किन वीरों ने अत्यन्त दुर्गम अग्रवर्ती सेना के अग्रभाग की रक्षा की थी ? किन वीरों ने कष्ट और दुर्गति सहकर भी भीष्म पितामह के पार्श्व भाग की रक्षा की थी ? किन-किन वीरों ने हमारे पक्ष की सेना में रहकर शत्रुदल के वीरों का सामना किया था ? हे सञ्जय, सब वीरों ने भीष्म की किस तरह रक्षा की ? भीष्म पितामह के बाहुबल से सुरक्षित होकर भी कौरवपक्ष के वीर किस कारण पाण्डव-सेना को परास्त नहीं कर सके ? पाण्डव ही किस तरह प्रजापति-तुल्य प्रतापी पितामह के ऊपर प्रहार कर सके ?

जिन द्वीपस्वरूप भीष्म के सहारे कौरवों ने शत्रुपक्ष की सागर-समान सेना में प्रवेश करने ४० का साहस किया था उन्हीं भीष्म के डूबने की ख़बर तुम दे रहे हो ? मेरा बलवान् पुत्र जिन भीष्म के बल का आश्रय लेकर पाण्डवों को कुछ नहीं समझता था वही भीष्म किस तरह शत्रुओं के हाथों मारे गये ? पूर्व समय में दानव-दमन के लिए देवताओं ने जिन महाव्रत-धारी युद्धदुर्मद भीष्म से सहायता माँगी थी, जिन भीष्म के जन्म के समय लोक-प्रसिद्ध शान्तनु का शोक, दुःख और दीनता दूर हो गई थी, उन महाप्राज्ञ, अपने धर्म में तत्पर, वेद-वेदाङ्ग के तत्त्व के ज्ञाता भीष्म के मरने की बात तुम कैसे कह रहे हो ? सब अस्त्रों की विद्या में पारदर्शी, शान्त, दान्त, मनस्वी भीष्मजी क्या मरे, मेरे पक्ष की बची हुई सब सेना चौपट हो गई। बूढ़े कुलगुरु भीष्म को मारकर पाण्डव लोग राज्य पाने की इच्छा कर रहे हैं, यह देखकर मुझे जान पड़ता है कि धर्म की अपेक्षा अधर्म ही प्रबल है। सब अस्त्रों के जाननेवाले परशुरामजी भी एक समय अम्बा के लिए युद्ध ठानकर जिनसे परास्त हो चुके हैं उन देवराज-सदृश धनुर्द्धरश्रेष्ठ भीष्म की मृत्यु का समाचार सुनने की अपेक्षा अधिक दुःख का समाचार मेरे लिए और क्या हो सकता है ? शत्रुवीरदलन क्षत्रियकुल-नाशकारी परशुरामजी के हाथ से भी जो पितामह नहीं मरे, वही आज शिखण्डी के हाथ से मारे गये ! इससे जान पड़ता है कि शिखण्डी तेज और ५० बल में परशुरामजी से भी बढ़कर है। उसने जब दिव्य अस्त्रों के ज्ञाता महावीर भरतश्रेष्ठ भीष्म को मारा था तब कौन-कौन वीर उसके साथ थे ?

हे सञ्जय ! पाण्डवों के साथ भीष्म ने जैसा युद्ध किया सो मुझसे कहो। इस समय मेरे पुत्र की सारी सेना अनाथ विधवा की तरह, रक्षकहीन गो-कुल की तरह, बहुत ही घबरा गई होगी। युद्धकाल में सब वीरों को जिनके बाहुबल का भरोसा था उन भीष्म को परलोकवासी हुआ सुनकर मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है। उन महावीर भीष्म के जीवनकाल में हम कैसे समर्थ और शक्तिशाली थे ! अगाध जल में नाव के डूब जाने पर पार जाने की इच्छा रखनेवाले लोग जैसे दुःखित होते हैं, भीष्म के मरने से वैसे ही विपन्न और दुःखित मेरे पुत्र हो रहे होंगे। हे सञ्जय, पुरुषश्रेष्ठ भीष्म के मरने की ख़बर सुनकर भी मेरा हृदय नहीं फटता, इसलिए उसे अवश्य ही पत्थर का कहना चाहिए। अस्त्रविद्या, मेधा और नीतिज्ञान में अप्रमेय भीष्म युद्ध में कैसे

मारे गये! हे सञ्जय, भीष्म को भी समर में मरा हुआ सुनकर मुझे निश्चय हो गया कि कोई अस्त्रविद्या, शौर्य, तप, मेधा या धृति के द्वारा मृत्यु के हाथ से बच नहीं सकता। महावीर्यशाली दुरतिक्रम काल सभी को ग्रस लेता है। मैं पुत्र-शोक से अत्यन्त सन्तप्त होने पर भी आनेवाले महान् दुःख का ख़याल न करके भीष्म के द्वारा अपने पक्ष के बचाव की आशा किये हुए था। मुझे भीष्म का बड़ा भरोसा था। ६०

हे सञ्जय, दुर्योधन ने जब भीष्म को सूर्य की तरह पृथ्वी पर गिरते देखा तब उसने क्या कहा? मुझे जान पड़ता है, इस युद्ध में दोनों पक्षों के राजाओं की सेना न बचेगी। ऋषियों ने क्षत्रिय-धर्म बड़ा कठोर बताया है। क्योंकि उसी क्षत्रिय-धर्म के अनुसार पाण्डव लोग भीष्म को मारकर राज्य पाने की इच्छा करते हैं; अथवा यों कहो कि हम लोग ही महाबली भीष्म की हत्या कराकर राज्य करने की इच्छा करते हैं। पाण्डवों ने तो क्षत्रिय-धर्म का पालन मात्र किया है; उनका कुछ अपराध नहीं। कष्ट-समय अर्थात् आपत्काल में आर्य को यही करना चाहिए। पराक्रम ही परम शक्ति है। भीष्मजी महापराक्रमी थे। उन महापराक्रमी, ह्रीमान्, अपराजित और शत्रुसेना को मारनेवाले भीष्म को पाण्डवों ने किस तरह रोका? किस तरह उन पर आक्रमण किया? उस समय सब सेना किस तरह संयुक्त हुई थी? नामी वीरों ने परस्पर किस तरह युद्ध किया? कुरुपितामह भीष्म को शत्रुओं ने किस तरह मारा? भीष्म के मरने पर दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन और मायावी शकुनि ने क्या कहा? जिस भयङ्कर युद्ध-सभा में मनुष्यों, हाथियों और घोड़ों के शरीर चौसर की बिसात की तरह बिछे थे, बाण शक्ति महाखड्ग तोमर आदि शस्त्र पाँसे के समान थे और प्राणों की बाज़ी लगी थी, उसमें पुरुषश्रेष्ठ भीष्म के सिवा और किन युद्धविशारद क्षत्रियों ने क्रीड़ा की थी? उनमें कौन जीते, कौन हारे और कौन मरकर गिरे? ये सब बातें मेरे आगे कहो। युद्धभूमि के आभूषण-स्वरूप भीमकर्मा भीष्म के मरने की ख़बर सुनकर मेरे हृदय में अशान्ति की आग सुलग उठी है। मेरे हृदय में जो पुत्रों की हानि की आग उठी है उसे मानों घी डालकर तुम प्रज्वलित कर रहे हो। सब लोकों में प्रसिद्ध जिन महापुरुष भीष्म ने सेनापति-पद का भारी बोझ अपने सिर पर लिया था उन्हें मरा हुआ देखकर जिस तरह मेरे पुत्रों ने पश्चात्ताप किया, सो मुझे सुनाओ। उस घोर संग्राम में जो घटनाएँ हुई हैं, वे मेरे आगे कहो। दुरात्मा दुर्योधन की बुद्धि के कारण जो नीतिसङ्गत या अनीतिपूर्ण घटनाएँ हुई हैं, जय-लाभ की इच्छा रखनेवाले अस्त्रधारी भीष्म ने जो-जो तेजस्विता के कार्य किये हैं और कौरव-पाण्डवों की सेना में जिसने जिससे जैसा युद्ध किया है, सो सब मेरे आगे विस्तार के साथ कहो। ७० ८०

पन्द्रहवाँ अध्याय

सञ्जय-कृत युद्ध-वर्णन का आरम्भ

सञ्जय ने कहा—महाराज, आपने अपने योग्य ही प्रश्न किये; किन्तु इस कुफल के लिए केवल दुर्योधन के सिर पर दोष की गठरी लादना ठीक नहीं। जो मनुष्य अपने दोषों के कारण अशुभ फल भोगता है उसका, और के ऊपर उस पाप की, आशङ्का करना अनुचित है। राजन्! जो व्यक्ति मनुष्य-समाज में निन्दनीय व्यवहार करता है, वह सबका वध्य है। आपकी और आपके मन्त्रियों की धूर्तता को बुद्धिमान् पाण्डव अच्छी तरह जानते हैं; किन्तु केवल आपका ही मुँह देखकर वे बहुत समय तक वन में रहे और सब कुछ सहते रहे।

राजन्! मैंने प्रत्यक्ष और योगबल से हाथी, घोड़े, राजा आदि का जो हाल देखा है सो सुनिए। वृथा शोक न कीजिए। हे नराधिप, इस समय जो हो रहा है सो मैं पहले से ही योगदृष्टि से देख चुका हूँ। मैंने जिनके प्रभाव से दिव्य ज्ञान, अतीन्द्रिय दृष्टि, परचित्त-विज्ञान, आकाशगति, दूर-श्रवण, शास्त्रबहिर्भूत व्यक्तियों की उत्पत्ति का ज्ञान और त्रिकाल का ज्ञान प्राप्त किया है उन्हीं महात्मा व्यासदेव के वर-दान से अस्त्र-शस्त्र मेरे शरीर को स्पर्श नहीं कर सकते। अब उन्हीं आपके पिता बुद्धि-मान् व्यासजी को प्रणाम करके कौरवों और पाण्डवों के अद्‌भुत रोमहर्षण युद्ध का वृत्तान्त वर्णन करता हूँ। सुनिए।

१०

महाराज, दोनों ओर की सेनाएँ जब मोर्चेबन्दी करके अपने-अपने स्थान में युद्ध के लिए उद्यत हुईं तब दुर्योधन ने कहा—हे दुःशासन, तुम भीष्म पितामह की रक्षा के लिए शीघ्र रथों को तैयार कराओ; सेना को सुसज्जित और सावधान होने की आज्ञा दो। बहुत दिनों से मैंने सेना सहित कौरवों और पाण्डवों की जिस भिड़न्त को सोच रक्खा था वह आज उपस्थित है। इस युद्ध में महारथी भीष्म की रक्षा करना ही हमारा प्रधान कार्य है। सुरक्षित रहने पर वे पाण्डव, सोमक और सृञ्जय आदि का विनाश अवश्य कर सकेंगे। विशुद्ध-स्वभाव

भीष्म ने यह प्रतिज्ञा की है कि "मैं युद्ध में शिखण्डी पर वार नहीं करूँगा। मैंने सुना है, शिखण्डी पहले स्त्री था; इसी लिए युद्ध में शिखण्डी को मैं नहीं मारूँगा"। पितामह की इस प्रतिज्ञा के कारण मेरे पक्ष के सब वीर मिलकर उनकी रक्षा और शिखण्डी को मारने का प्रयत्न करें। पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा से आये हुए सब वीर, सब अस्त्र-कुशल योद्धा, पितामह की रक्षा करें। महाबली सिंह भी अरक्षित दशा में तुच्छ भेड़िये के हाथ मारा जा सकता है। इस समय हमें यह यत्न करना चाहिए कि सिंहरूप भीष्म को शृगालरूप शिखण्डी मार न सके। देखो, युद्धस्थल में अर्जुन शिखण्डी की रक्षा कर रहे हैं। युधामन्यु अर्जुन के बायें पहिये की और उत्तमौजा उनके दहिने पहिये की रक्षा कर रहे हैं। इस समय ऐसा उपाय करो जिसमें पितामह के द्वारा उपेक्षित, और अर्जुन के द्वारा सुरक्षित, शिखण्डी भीष्म को मार न सके। २०

सोलहवाँ अध्याय

सैन्य-वर्णन

सञ्जय कहते हैं—राजन्! रात बीतने पर राजाओं के "तैयार हो जाओ, तैयार हो जाओ" इस शब्द से, शङ्खों और दुन्दुभियों की ध्वनि से, सैनिकों के सिंहनाद से और रथों के पहियों की घरघराहट से दसों दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। घोड़ों के हिनहिनाने से, हाथियों के चिग्घाड़ने से, योद्धाओं के गम्भीर गर्जन और खम ठोकने के शब्द से दसों दिशाएँ भर गईं। सूर्योदय के उपरान्त दोनों पक्ष की सेना दुर्द्धर्ष अस्त्र-शस्त्र और कवच आदि से लैस होकर युद्ध के मैदान में डट गई। युद्ध-भूमि में सुवर्ण-शोभित हाथी दामिनीयुक्त मेघों के समान, सैनिकों से घिरे हुए रथ विविध नगरों के समान और पितामह भीष्म पूर्णचन्द्र के समान शोभायमान हुए। धनुष, ऋष्टि, खड्ग, गदा, तोमर और अन्यान्य चमकीले शस्त्र धारण किये योद्धा, लाखों हाथी, रथी, घोड़े और पैदल सिपाही मण्डल बाँधकर खड़े हुए। विविध १० आकार की ध्वजाएँ फहरा रही थीं। दोनों ओर की मणि-सुवर्ण-मण्डित हज़ारों ध्वजाएँ जलती हुई आग के समान और अमरावती में स्थित इन्द्र की पताका के समान शोभित हुईं। युद्ध की इच्छा रखनेवाले वीर, अस्त्र-शस्त्र लिये, उत्सुकता के साथ उन पताकाओं की शोभा देख रहे थे। प्रधान योद्धा लोग कवच, शस्त्र, तल, तूणीर आदि से सज्जित होकर सेना के अगले भाग में खड़े हुए थे। शकुनि, शल्य, जयद्रथ, अवन्तिराज दोनों भाई विन्द और अनुविन्द, केकय-गण, काम्बोजराज सुदक्षिण, कलिङ्गराज श्रुतायुध, राजा जयत्सेन, बृहद्बल और कृतवर्मा यादव, ये बड़ी-बड़ी दक्षिणा देकर यज्ञ करनेवाले, परिघतुल्य भुजदण्डवाले पुरुषश्रेष्ठ दस राजा आपकी ओर दस अक्षौहिणी सेना के नायक बनाये गये। इनके सिवा दुर्योधन के वशवर्ती नीति-विशारद

अनेक राजा तथा राजपुत्र अपनी-अपनी सेना लिये वहाँ उपस्थित देख पड़े। वे सब मनोहर माला पहने, कृष्णाजिन-शोभित, ब्रह्मलोक जाने की दीक्षा लिये हुए प्रसन्नचित होकर दस
२० अक्षौहिणी सेना के साथ युद्धभूमि में खड़े थे। इनके सिवा पितामह भीष्म की अधिनायकता में दुर्योधन की एक अक्षौहिणी सेना खड़ी हुई। राजन्! महारथी भीष्म सफ़ेद पगड़ी और सफ़ेद कवच धारण किये सफ़ेद घोड़ों से शोभित रथ पर पूर्ण चन्द्रमा के समान विराजमान हुए। तालचिह्न-युक्त ध्वजा से शोभित रजतमय रथ पर चढ़े हुए, सफ़ेद मेघ के बीच स्थित चन्द्रमा के समान, पितामह भीष्म को दोनों पक्ष के योद्धा देखने लगे। भीष्म को सेनापति के रूप से सेना के अग्रभाग में देखकर धृष्टद्युम्न आदि सृञ्जय और पाण्डव घबरा गये। सिंह को देखकर जैसे क्षुद्र मृग घबरा जाते हैं वैसे ही धृष्टद्युम्न आदि सृञ्जयगण भीष्म को देखकर चिन्तित हो गये। महाराज, जैसे आपके पक्ष की समृद्धि-सम्पन्न ग्यारह अक्षौहिणी सेना प्रधान-प्रधान पुरुषों के द्वारा रक्षित थी, वैसे ही पाण्डव-पक्ष की सात अक्षौहिणी सेना भी प्रधान पुरुषों के बाहुबल से सुरक्षित थी। राजन्, दोनों पक्ष की सेना उन्मत्त मकरवृन्दयुक्त, महाग्राहपरिवृत, युगान्तकाल के क्षोभ को पहुँचे हुए दो महासागरों के समान देख पड़ रही थी।
२७ राजन्, मैंने कौरवों की इतनी बड़ी सेना एकत्र होते कभी न तो देखी है और न सुनी है।

सत्रहवाँ अध्याय

युद्ध के लिए कौरवों की सेना का निकलना

सञ्जय कहते हैं—महाराज, व्यासजी ने जो कहा था उसी के अनुसार सब राजा लोग एकत्र होकर युद्ध के लिए आये। उस दिन चन्द्रमा पितृलोक के निकटवर्ती हुए। सातों महाग्रह अग्नि के समान प्रज्वलित होकर आकाश में देख पड़े। उदय होने पर सूर्यमण्डल प्रज्वलित ज्वालाओं से युक्त और बीच से दो टुकड़े हुआ सा देख पड़ा। मांस और रक्त खाने-पीनेवाले सियारों और कौओं के झुण्ड मुर्दों और घायलों का मांस खाने के लिए उत्सुकता दिखाते हुए, दिग्दाह-युक्त दिशा की ओर मुँह करके, घोर अशुभ शब्द करने लगे। पितामह भीष्म और आचार्य द्रोण नित्य सवेरे उठकर शुद्ध-चित्त से जय तो पाण्डवों की मनाते थे; किन्तु अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार आपकी ओर से पाण्डवों के साथ युद्ध करते थे।

पितामह ने पहले सब राजाओं को बुलाकर कहा—हे नरपतियो, क्षत्रिय के लिए स्वर्ग जाने की खुली राह सङ्ग्राम ही है। उसी द्वार से तुम लोग इन्द्रलोक और ब्रह्मलोक को जाओ। नाभाग, ययाति, मान्धाता, नहुष, नृग आदि प्राचीन राजा लोग इसी तरह के

कार्य से सिद्धि प्राप्त करके उक्त परम पवित्र स्थानों को गये हैं। बीमार होकर घर में पड़े-पड़े १० मरना क्षत्रिय के लिए अधर्म है। युद्ध में प्राणत्याग करना ही क्षत्रिय का सनातन धर्म है।

महाराज, भीष्म के यों कहने पर राजा लोग बढ़िया रथों पर सवार हो-होकर अपनी-अपनी सेना के अगले भाग में आ गये। उस समय उनकी बड़ी शोभा हुई। केवल कर्ण अपने सहचरों और मित्रों के साथ युद्ध-भूमि की ओर नहीं गये। भीष्म से उनकी कहा-सुनी हो चुकी थी, और भीष्म के जीते-जी युद्ध न करने की प्रतिज्ञा वे कर चुके थे। कर्ण के सिवा अन्य सब राजा और आपके सब पुत्र सिंह-नाद से दसों दिशाओं को कँपाते हुए युद्ध के लिए खड़े हुए। सफ़ेद छत्र, पताका, ध्वजा, हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि के द्वारा सेना की बड़ी शोभा हुई। भेरी, पणव, दुन्दुभि और रथों

के पहियों का शब्द गूँज उठा। सोने के बजुल्ले पहने हुए महारथी लोग अग्नियुक्त पर्वत के समान शोभायमान हुए। कौरवसेना के अधिपति पितामह भीष्म पञ्चतारामण्डित महातालकेतु-युक्त आदित्यवर्ण रथ पर सूर्य के समान शोभा को प्राप्त हुए। राजन्, आपके पक्ष के राजा लोग भीष्म के चारों ओर अपनी-अपनी जगह पर तैनात हो गये। गोवासन देश के महाराज शैव्य, राजोचित पताका से शोभित गजराज पर सवार होकर, अपने अधीन राजाओं के साथ युद्ध के लिए चले। पद्मवर्ण अश्वत्थामा रथ पर सवार होकर सबके आगे चलने लगे। उनकी पताका में सिंह की पूँछ का चिह्न था। श्रुतायुध, चित्रसेन, पुरुमित्र, विविंशति, शल्य, भूरिश्रवा २० और विकर्ण, ये सात महाधनुर्द्धर योद्धा अच्छे कवच पहनकर अश्वत्थामा और भीष्म के आगे-आगे चले। उनकी सुवर्णदण्ड-मण्डित ऊँची ध्वजाएँ रथों पर फहरा रही थीं। आचार्य-प्रधान द्रोण की ध्वजा सुवर्णमय वेदी, कमण्डलु और धनुष के चिह्न से युक्त देख पड़ती थी। विपुल सेना का सञ्चालन करनेवाले दुर्योधन की ध्वजा में मणिमय नाग का चिह्न था। दुर्योधन के आगे पौरव, कलिङ्गराज, काम्बोजराज सुदक्षिण, महाबली क्षेमधन्वा और शल्य चले। मगध-

नरेश वृषध्वज महामूल्य रथ पर सवार होकर शरद् ऋतु के मेघ के समान पूर्व दिशा की सेना के आगे-आगे शत्रु-सेना के सामने आये। अङ्गदेश के राजा वृषकेतु और महात्मा कृपाचार्य सब सेनाओं की रक्षा करने लगे। यशस्वी जयद्रथ रथ पर बैठकर चले। उनकी ध्वजा में चाँदी के वराह का चिह्न था। एक लाख रथ, आठ हज़ार हाथी और साठ हज़ार घुड़सवार ३० उनके साथ थे। वे सेना के आगे रहकर असंख्य रथ, हाथी और घोड़ों से शोभित सेना की रक्षा करने लगे। कलिङ्गेश्वर के साथ साठ हज़ार रथ और यन्त्र-तोमर-तूणीर-पताका आदि से शोभित पर्वताकार दस हज़ार हाथी थे। वे भी अग्निवर्ण ध्वजा, सफ़ेद छत्र, कण्ठाभरण, चमर, व्यजन आदि से शोभित होकर युद्ध के लिए चले। इन्द्र के समान तेजस्वी राजा भगदत्त अपने हाथी पर चढ़कर चले। राजा केतुमान् भी विचित्र अंकुश से शोभित हाथी पर चढ़कर मेघ के ऊपर विराजमान आदित्य के समान शोभायमान हुए। भगदत्त के ही समान तेजस्वी वीर विन्द और अनुविन्द नाम के दोनों भाई भी गजराजों पर चढ़कर चले। द्रोणाचार्य, पितामह भीष्म, गुरु-पुत्र अश्वत्थामा, वाह्लीक और कृपाचार्य ने उस व्यूह की रचना की थी। उस व्यूह में असंख्य रथ और हाथी उसके अङ्ग जान पड़ते थे। राज-समाज उस व्यूह का सिर था। घोड़े उसके पङ्ख थे। वह सर्वतोमुख सेना का ३९ व्यूह हँसता हुआ सा आगे बढ़ने लगा।

अठारहवाँ अध्याय

कौरवों की सेना का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज, इसके बाद दम भर में योद्धा लोगों का कोलाहल सुन पड़ने लगा। क्षण भर में ही शङ्खों और दुन्दुभियों की ध्वनि, हाथियों की चिग्घाड़, घोड़ों की हिन-हिनाहट, योद्धाओं के गर्जन और रथों के पहियों की घरघराहट से पृथ्वी मानों फटने लगी और आकाशमण्डल गूँज उठा। दोनों पक्षों की सेना परस्पर की भिड़न्त से काँप उठी। उस समय युद्ध-भूमि में सुवर्ण-भूषित हाथी और रथ बिजली-समेत मेघों के समान देख पड़ने लगे। दोनों ओर की—प्रज्वलित अग्नि के समान—अनेक प्रकार की ध्वजाएँ इन्द्रभवन में स्थित महेन्द्र-केतु के समान शोभायमान हुईं। अग्नि और सूर्य के समान प्रभायुक्त कवचों से भूषित वीर अग्नि और सूर्य के समान देख पड़ने लगे। कौरव पक्ष के योद्धाओं ने विचित्र आयुध, धनुष और प्रत्यञ्चा आदि को सँभाला। महाधनुर्द्धर ऋषभाक्षगण सेना के अगले भाग में स्थित हुए। १० महाराज! आपके पुत्र दुर्जय, दुःशासन, दुर्मुख, दुःसह, विविंशति, चित्रसेन, विकर्ण, सत्यव्रत,

पुरुमित्र, जय, भूरिश्रवा, शल और इनके अधीन बीस हज़ार रथी भीष्म के पिछले भाग की रक्षा करने लगे। अभीपाह, शूरसेन, शिवि, वसाति, शाल्व, मत्स्य, अम्बष्ठ, त्रिगर्त, कैकेय, सौवीर, कैतव और पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, इन बारह देशों के वीर जीवन की आशा छोड़कर रथों के द्वारा पितामह की रक्षा करने लगे। मगधराज दस हज़ार वेगशाली कुरुसेना साथ लेकर, भीष्म के पास रहकर, उनकी रक्षा करने लगे। इस सारी सेना के साठ लाख आदमी रथों के पहियों की और हाथियों के पैरों की रक्षा करने लगे। लाखों पैदल सिपाही धनुष, ढाल-तलवार, नखर और प्रास आदि शस्त्र लेकर युद्ध के लिए आगे बढ़े। राजन्, आपके पुत्र की ग्यारह अक्षौहिणी सेना यमुना से मिलने को चली हुई गङ्गा के समान देख पड़ने लगी। १८

उन्नीसवाँ अध्याय

पाण्डवों की सेना का युद्ध के लिए निकलना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! इस ग्यारह अक्षौहिणी सेना को व्यूह-रचना करके खड़े देखकर और मानुष, दैव, गान्धर्व, आसुर आदि व्यूहों की रचना के ज्ञाता पितामह भीष्म को युद्ध के लिए तैयार देखकर भी बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने अपनी सेना थोड़ी होने पर क्या ख़याल करके भीष्म से युद्ध की तैयारी और व्यूह की रचना की?

सञ्जय ने कहा कि महाराज, राजा दुर्योधन की सेना को व्यूह-रचनापूर्वक सुसज्जित देखकर धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने भाई से कहा—हे अर्जुन, महर्षि बृहस्पति का मत है कि शत्रु-सेना की अपेक्षा अपनी सेना थोड़ी हो तो उस सेना को समेटकर शत्रु से युद्ध करना चाहिए। यदि शत्रु-सेना से अपनी सेना अधिक हो तो सेनापति को अधिकार है कि वह इच्छानुसार अपनी सेना को फैलाकर शत्रु से युद्ध करे। जब थोड़ी सेना को बहुत सेना से युद्ध करना पड़े तब उसे सूचीमुख व्यूह की रचना करनी चाहिए। हमारी सेना शत्रुसेना की अपेक्षा संख्या में थोड़ी है; इसलिए तुम भी, बृहस्पति की नीति के अनुसार, सूचीमुख व्यूह की रचना करो।

यह सुनकर अर्जुन ने युधिष्ठिर से कहा—महाराज, मैं आपके लिए इन्द्र के बताये अचल दुर्जय दुर्भेद्य वज्र नाम के व्यूह की रचना करता हूँ। संग्राम में शत्रुपक्ष के लिए आँधी की तरह दुःसह, युद्धलक्षण-निपुण, योद्धा पुरुषों में अग्रगण्य, महाबली भीमसेन हमारे पक्ष के अग्र योद्धा होकर शत्रुपक्ष के तेज को नष्ट करेंगे। क्षुद्र मृग जैसे सिंह को देखकर डर से भाग खड़े होते हैं वैसे ही दुर्योधन आदि कौरव भीमसेन के सामने नहीं ठहर सकेंगे। देवता जैसे इन्द्र का १०

आश्रय लेते हैं वैसे ही हम लोग बेखटके होकर अपने पक्ष के रक्षक, योद्धाओं में श्रेष्ठ, भीमसेन का आश्रय लेंगे। इस पृथ्वी पर ऐसा कोई नहीं है जो क्रोधित भीमसेन से आँख मिला सके।
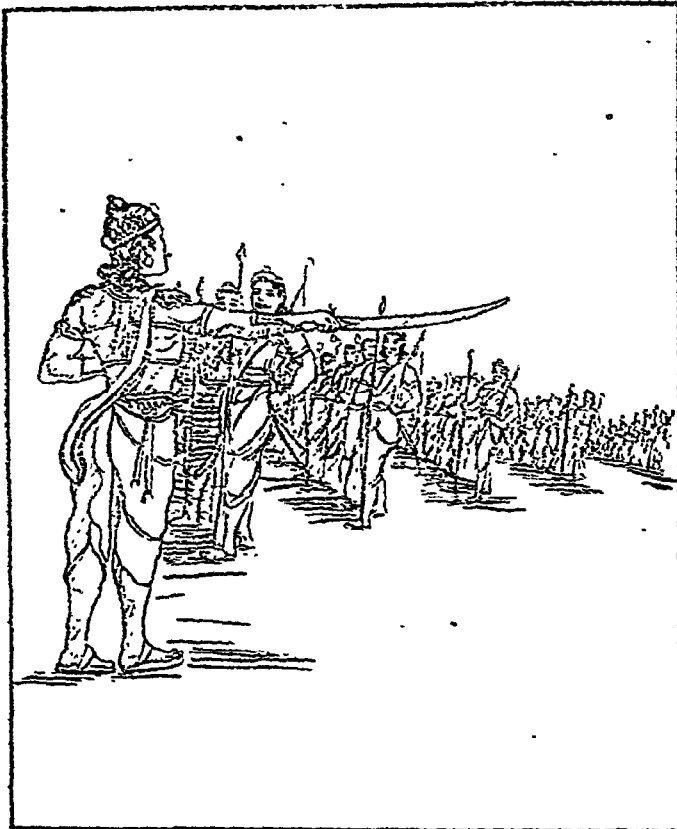
अब महावीर अर्जुन अपनी सेना का व्यूह बनाने लगे। परिपूर्ण और स्थिर गङ्गाप्रवाह की तरह पाण्डवों की महासेना, कौरव-सेना को अपनी ओर आते देखकर, मन्द गति से आगे बढ़ने लगी। महापराक्रमी भीमसेन, धृष्टद्युम्न, नकुल, सहदेव और धृष्टकेतु उस सेना के आगे-आगे चलने लगे। महाराज विराट और एक अक्षौहिणी सेना के साथ धर्मराज युधिष्ठिर चले। उनके साथ पुत्र और भाई भी चले। महातेजस्वी नकुल और सहदेव भीमसेन की दहनी-बाईं ओर उनके रथ के पहियों की रक्षा करते चले। अभिमन्यु और द्रौपदी के पुत्र उनके पिछले भाग की रक्षा में नियुक्त हुए। महारथी धृष्टद्युम्न प्रभद्रकगण के साथ उन सबकी रक्षा करने लगे। अर्जुन के द्वारा सुरक्षित शिखण्डी भी भीष्म-वध के लिए बड़े यत्न के साथ उनके पीछे चले। महाबली युयुधान अर्जुन के पिछले भाग की रक्षा करने लगे। पाञ्चालनन्दन युधामन्यु, उत्तमौजा, कैकेय, धृष्टकेतु और महावीर चेकितान अपने अनुचरों सहित उनके रथ के पहियों की रक्षा करने लगे। ये सब योद्धा ध्यान से आपकी सेना को देखने लगे। महाराज, फिर अर्जुन ने भीमसेन से कहा—ये सब धृतराष्ट्र के पुत्र हैं। ये आपके हिस्से में हैं। यह सुनकर पाण्डवों की सेना के सब लोग उनकी बड़ाई करने लगे।

२१

महाराज युधिष्ठिर बहुत बड़े मस्त हाथी पर चढ़कर बीच की सेना में विराजमान हुए। महामनस्वी राजा द्रुपद एक अक्षौहिणी सेना साथ लिये महापराक्रमी राजा विराट के साथ चले। इन वीरों के रथों में सूर्य और चन्द्र के समान प्रभाशाली, सुवर्णमण्डित, विविध चिह्नों से युक्त पताकाएँ लगी हुई थीं। इसके बाद महारथी धृष्टद्युम्न सब सेना, भाई और पुत्र आदि को साथ लेकर महाराज युधिष्ठिर की रक्षा करने लगे। अर्जुन का वानरचिह्नयुक्त ध्वजावाला रथ

पाण्डव-सेना के सब रथों से श्रेष्ठ था। उसकी ध्वजा सब ध्वजाओं से ऊँची थी। असंख्य पैदल सेना भीमसेन की रक्षा करने के लिए खड्ग, शक्ति और ऋष्टि आदि अनेक शस्त्र लिये आगे-आगे चलने लगी। सुवर्णजालमण्डित गजराजों के कपोलों पर मद बह रहा था, उससे कमल की सुगन्ध निकल रही थी। बरसते हुए मेघ या पर्वत के समान दस हज़ार हाथी महाराज युधिष्ठिर के पीछे चले। ३०

महाबाहु भीमसेन परिघ-सदृश भयानक गदा हाथ में लेकर महासेना को लिये हुए शत्रुसेना के सामने जाने के लिए तैयार हुए। जिस समय वे शत्रुसेना का संहार करने लगे उस समय सूर्य के समान दुष्प्रेक्ष्य हो उठे। किसी में साहस न था कि उनकी ओर आँख उठाकर देख भी लेता। अर्जुन ने वज्रव्यूह की रचना की थी। वह व्यूह निर्भय, सर्वतोमुख और घोर था। धनुष उसमें बिजली के समान चमकते थे। उस व्यूह की रक्षा ख़ुद अर्जुन कर रहे थे। मनुष्यों के लिए अजेय उस व्यूह में अपनी सेना को सुरक्षित रखकर पाण्डव लोग आपकी सेना के सामने डट गये।

अब सूर्योदय होने पर सब सैनिक सन्ध्यावन्दन करने लगे। उस समय आकाशमण्डल में मेघ न रहने पर भी बिजली कड़कने लगी और सामने से वेग के साथ धूल उड़ाती और कङ्कड़ियाँ बरसाती घोर आँधी चलने लगी। सारे जगत् में अँधेरा सा छा गया। पूर्व दिशा में भारी उल्कापात हुआ। सूर्य की ओर शब्द करके वह उल्का पृथ्वी पर गिरी।

हे भरतश्रेष्ठ, सेना के सुसज्जित होने पर सूर्यदेव प्रभाहीन हो गये। पृथ्वी महाशब्द के साथ काँपने और फटने लगी। सब दिशाओं में बारम्बार निर्घात शब्द होने लगा और ऐसी धूल छा गई कि कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था। किंकिणीजालशोभित, सुवर्णमालायुक्त, बढ़िया कपड़ों और छोटी झण्डियों से अलंकृत, सूर्य के समान तेज से युक्त ध्वजाएँ एकाएक हवा के वेग से काँपने लगीं। आँधी चलने पर ताड़ के वन की जो दशा होती है वही दशा सारे जगत् की हो गई। महाराज, पुरुषश्रेष्ठ युद्धप्रिय पाण्डव लोग गदा हाथ में लिये भीमसेन को आगे चलते देखकर प्रसन्न हुए और अपनी सेना के विरोधियों के विरुद्ध व्यूहरचना करके इस तरह स्थित हुए मानों शत्रुसेना को निगल जायँगे। ४० ४५

बीसवाँ अध्याय

कौरवों की सेना के जाने का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! सूर्योदय के बाद सेनापति भीष्म की अनुगामिनी कौरव-सेना और भीमसेन के द्वारा सुरक्षित पाण्डवों की सेना, दोनों में से किस पक्ष की सेना

ने पहले प्रसन्नतापूर्वक युद्ध के लिए ललकारा? चन्द्र, सूर्य और वायु किसके अनुकूल और किसके प्रतिकूल देख पड़े? मांसभोजी पशु-पक्षी किस सेना की ओर चिल्लाने लगे? किस पक्ष के नौजवानों में प्रसन्नता और उत्साह देख पड़ता था? ये सब बातें विस्तार के साथ मुझसे कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन्, दोनों पक्ष की सेना जब परस्पर समीप पहुँच गई तब दोनों पक्ष के वीर व्यूह बना करके जङ्गलों की क़तार के समान जान पड़ने लगे। दोनों ओर की सेना प्रसन्न और उत्साहित थी। दोनों ओर विचित्र हाथी, घोड़े और रथ असंख्य थे। दोनों पक्ष के सैनिक अपरिमित, भयङ्कर, दुर्विषह देख पड़ते थे। दोनों पक्षों में सत्पुरुष थे जो स्वर्ग प्राप्त करने के लिए तैयार थे। आपके पुत्र पश्चिमाभिमुख और पाण्डव पूर्वाभिमुख थे। कौरवों की सेना दैत्येन्द्र-सेना की तरह और पाण्डवों की सेना देवसेना की तरह शोभित हो रही थी। हवा पाण्डवों के पीछे की ओर चल रही थी। मांसाहारी पशु-पक्षी आपकी सेना की ओर मुख करके गरज रहे थे। दुर्योधन पक्ष के हाथी पाण्डवों के गजराजों की तीव्र मद-गन्ध के सहने में असमर्थ थे। कौरव-सेना के बीच पद्मवर्ण, सुवर्ण की जञ्जीर से शोभित और जाल-मण्डित मस्त गजराज पर दुर्योधन विराजमान थे। वन्दी और मागध उनकी स्तुति कर रहे थे। सुवर्ण की माला और चन्द्रमा की तरह सफ़ेद छत्र उनके मस्तक पर था। गान्धारराज शकुनि पहाड़ी गान्धार देश के लोगों की सेना साथ लिये दुर्योधन को चारों ओर से घेरे हुए चलते थे। सफ़ेद छत्र, धनुष, पगड़ी, ध्वजा, कैलाससदृश सफ़ेद घोड़े और खड्ग आदि युद्धसामग्री से सुशोभित होकर पितामह भीष्म सब सेना के आगे चल रहे थे। उनके साथ की सेना में आपके पुत्र, वाह्लीक, शल, अम्बष्ठ, सैन्धव, सौवीर और महाशूर पञ्चनदप्रदेश के श्रेष्ठ शूर थे। महात्मा द्रोणाचार्य लाल घोड़ोंवाले रथ पर चढ़कर धनुष हाथ में लिये सब राजाओं के पीछे-पीछे महाराज के समान चलने लगे। वृद्धक्षत्र के पुत्र, भूरिश्रवा, पुरुमित्र और जय, ये सेना के बीच में और युद्ध की इच्छा रखनेवाले शाल्व, मत्स्य, केकय आदि देशों के वीर भी हाथियों की सेना साथ लिये युद्धभूमि में डटे हुए थे। प्रधान धनुर्द्धर, विचित्र युद्ध में प्रवीण, महात्मा कृपाचार्य अपने साथ में शक, किरात, यवन आदि की सेना लिये सेना के उत्तर भाग में स्थित हुए। अर्जुन की मृत्यु या अर्जुन को जीतने के लिए ही जिनकी सृष्टि हुई है और अर्जुन के अस्त्रविद्या के गुरु ने ही जिन्हें अस्त्रविद्या सिखाई है, वे संशप्तकों के अयुत रथी और शूर त्रिगर्तगण बहुत सी सेनासहित दुर्योधन के साथ चले।

राजन्, अत्यन्त उत्तम एक लाख हाथियों का व्यूह पितामह ने बनाया था। एक-एक हाथी के साथ सौ-सौ रथ थे। एक-एक रथ के साथ सौ-सौ घोड़े थे। हर घोड़े के साथ दस-दस धनुर्द्धर वीर थे। हर धनुर्द्धर योद्धा के साथ चार-चार ढालवाले थे। इस प्रकार

व्यूह-रचना करके पितामह भीष्म युद्ध में प्रवृत्त हुए। वे एक ही प्रकार के व्यूह से नहीं लड़े। कभी मानुष, कभी दैव, कभी गान्धर्व और कभी आसुर व्यूह की रचना करके उन्होंने घोर युद्ध किया। समुद्र के समान शब्दपूर्ण महारथों से युक्त उन व्यूहों की सेना पश्चिमाभिमुख स्थित थी। महाराज, आपकी सेना जैसी असंख्य और भयानक है वैसी पाण्डवों की सेना नहीं है। किन्तु श्रीकृष्ण और अर्जुन जिसके अगुआ हैं वही, मेरी राय में, बड़ा और दुर्जय है। २०

इक्कीसवाँ अध्याय

युधिष्ठिर और अर्जुन की बातचीत

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, दुर्योधन की भारी सेना को युद्ध के लिए तैयार और भीष्म को अभेद्य व्यूह की रचना करते देखकर राजा युधिष्ठिर ने खिन्न स्वर में कहा—हे अर्जुन, पितामह भीष्म जिनके पक्ष के योद्धा हैं उनसे हम लोग किस तरह युद्ध कर सकेंगे? शत्रुदमन महाबली महात्मा भीष्म के रचे हुए, शास्त्रानुसार कल्पित, अक्षोभ्य और अभेद्य व्यूह को देखकर हम लोग अपनी सेना-सहित प्राणों के सङ्कट में पड़ गये हैं। अब बताओ, इस समय हम कैसे इस महाव्यूह से अपनी रक्षा कर सकेंगे?

महाराज, राजा युधिष्ठिर को कौरव-सेना के कारण यों विषाद में पड़े देखकर अर्जुन ने कहा—महाराज! संख्या में थोड़े लोग जिस ढङ्ग से प्रज्ञा, शौर्य, गुण और संख्या में अधिक लोगों को हरा सकते हैं वह ढङ्ग सुनिए। महर्षि नारद, पितामह भीष्म और द्रोणाचार्य इसे जानते हैं। पहले देवासुर-संग्राम में पितामह ब्रह्मा ने महेन्द्र आदि देवताओं से कहा था कि विजय की इच्छा रखनेवाले लोग जैसे सत्य, दया, धर्म के द्वारा जय

१० प्राप्त करते हैं वैसे बल और वीर्य के द्वारा नहीं। इसलिए धर्माधर्म और लोभ के विषय को अच्छी तरह जानकर, अहङ्कार-शून्य होकर, उद्यम के साथ युद्ध करो। जहाँ धर्म है वहीं जय है। महर्षि नारद का कहना है कि जहाँ कृष्ण हैं वहीं जय है। अन्यान्य गुण जैसे श्रीकृष्ण में हैं वैसे ही विजय भी उनमें है। वे जहाँ जाते हैं वहीं विजय भी उनके साथ जाती है। अतएव जहाँ शत्रुओं के बीच श्रीकृष्ण हमारे साथी हैं वहाँ हमारी ही जय निश्चित है। श्रीकृष्ण कभी व्यथित होनेवाले नहीं हैं। उनका तेज अनन्त है। अव्यर्थलक्ष्य इन्हीं श्रीकृष्ण ने पहले जनार्दन हरि का रूप रखकर, देवताओं और असुरों के सामने प्रकट होकर, पूछा था कि कौन जय प्राप्त करेगा। इस प्रश्न के उत्तर में जिन्होंने कहा था कि हम श्रीकृष्ण के अनुगत हैं, हमीं जय प्राप्त करेंगे, वे ही विजयी हुए थे। इन्द्र आदि देवताओं ने श्रीकृष्ण के ही प्रसाद से त्रैलोक्य का राज्य पाया है। हे भरतकुलश्रेष्ठ, वही त्रिदिवेश्वर वासुदेव जब आपकी विजय की आशा कर रहे हैं तब आपको काहे की १७ चिन्ता है? आप क्यों दुःख करते हैं?

महाभारत के स्थायी ग्राहक बनने के नियम

(१) जो सज्जन हमारे यहाँ महाभारत के स्थायी ग्राहकों में अपना नाम और पता लिखा देते हैं उन्हें महाभारत के मूल्य पर २०) सैकड़ा कमीशन काट दिया जाता है। अर्थात् १।) प्रति अङ्क के बजाय स्थायी ग्राहकों को १) में प्रति अङ्क दिया जाता है। ध्यान रहे कि डाकखर्च स्थायी और फुटकर सभी तरह के ग्राहकों को अलग देना पड़ेगा।

(२) साल भर या छः मास का मूल्य १२) या ६), जो अपना प्रति अङ्क के हिसाब से रजिस्ट्री व्यय सहित १३॥) या ६॥।) जो सज्जन पेशगी मनीआर्डर-द्वारा भेज देंगे, केवल उन्हीं सज्जनों को डाकखर्च नहीं देना पड़ेगा। महाभारत की प्रतियाँ राह में गुम न हो जायँ और ग्राहकों की सेवा में वे सुरक्षित रूप में पहुँच जायँ, इसी लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजने का प्रबन्ध किया गया है।

(३) इसके प्रत्येक खण्ड के लिए अलग से बहुत सुन्दर जिल्दें भी सुनहले नाम के साथ तैयार कराई जाती हैं। प्रत्येक जिल्द का मूल्य ।॥) रहता है परन्तु स्थायी ग्राहकों को वे ॥) ही में मिलती हैं। जिल्दों का मूल्य महाभारत के मूल्य से बिलकुल अलग रहता है।

(४) स्थायी ग्राहकों के पास प्रतिमास प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होते ही बिना लिखे वी० पी० द्वारा भेजा जाता है। बिना कारण वी० पी० लौटाने से उनका नाम ग्राहक-सूची से अलग कर दिया जायगा।

(५) ग्राहकों को चाहिए कि जब किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार करें तो कृपा कर अपना ग्राहक नम्बर जो कि पता की स्लिप के साथ छपा रहता है और पूरा पता अवश्य लिख दिया करें। बिना ग्राहक-नम्बर के लिखे हज़ारों ग्राहकों में से किसी एक का नाम ढूँढ़ निकालने में बड़ी कठिनाई पड़ती है और पत्र की कार्रवाई होने में देरी होती है। क्योंकि एक ही नाम के कई-कई ग्राहक हैं। इसलिए हर प्रकार का पत्र-व्यवहार करते तथा रुपया भेजते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखना चाहिए।

(६) जिन ग्राहकों को अपना पता सदा अथवा अधिक काल के लिए बदलवाना हो, अथवा पते में कुछ भूल हो, उन्हें कार्यालय को पता बदलवाने की चिट्ठी लिखते समय अपना पुराना और नया दोनों पते और ग्राहक-नम्बर भी लिखना चाहिए। जिससे उचित संशोधन करने में कोई दिक्कत न हुआ करे। यदि किसी ग्राहक को केवल एक दो मास के लिए ही पता बदलवाना हो, तो उन्हें अपने हलके के डाकख़ाने से उसका प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

(७) ग्राहकों से सविनय निवेदन है कि पत्र कार्ड या किसी प्रकार का पत्र लिखने के समय यह ध्यान रक्खें कि लिखावट साफ़ साफ़ हो। अपना नाम, गाँव, पोस्ट और ज़िला साफ़ साफ़ हिन्दी या अँगरेज़ी में लिखना चाहिए ताकि अङ्क या उत्तर भेजने में दुबारा पूछ-ताछ करने की ज़रूरत न हो। "हम परिचित ग्राहक हैं" यह सोच कर किसी को अपना पूरा पता लिखने में लापरवाही न करनी चाहिए।

(८) यदि कोई महाशय मनी-आर्डर से रुपया भेजें, तो 'कूपन' पर अपना पता-ठिकाना और रुपया भेजने का अभिप्राय स्पष्ट लिख दिया करें, क्योंकि मनीआर्डरफ़ार्म का यही अंश हमको मिलता है।

सब प्रकार के पत्रव्यवहार का पता—

मैनेजर महाभारत विभाग, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

Printed and Published by K. Mittra at The Indian Press, Ltd., Allahabad.

आवश्यक सूचनायें

(१) हमने प्रथम खण्ड की समाप्ति पर उसके साथ एक महाभारत-कालीन भारतवर्ष का प्रामाणिक सुन्दर मानचित्र भी देने की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में हम ग्राहकों को सूचित करते हैं कि पूरा महाभारत समाप्त हो जाने पर हम प्रत्येक ग्राहक को एक परिशिष्ट अध्याय बिना मूल्य भेजेंगे जिसमें महाभारत-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण खोज, साहित्यिक आलोचना, चरित्र-चित्रण तथा विश्लेषण आदि रहेगा। उसी परिशिष्ट के साथ ही मानचित्र भी लगा रहेगा जिसमें पाठकों को मानचित्र देख कर उपरोक्त बातें पढ़ने और समझने आदि में पूरी सुविधा रहे।

(२) महाभारत के प्रेमी ग्राहकों को यह शुभ समाचार सुन कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हमने कानपुर, उन्नाव, काशी (रामनगर), कलकत्ता, ग़ाज़ीपुर, बरेली, मथुरा (वृन्दावन), जोधपुर, बुलन्दशहर, प्रयाग और लाहौर आदि में ग्राहकों के घर पर ही महाभारत के अङ्क पहुँचाने का प्रबन्ध किया है। अब तक ग्राहकों के पास यहीं से सीधे डाक-द्वारा प्रतिमास अङ्क भेजे जाते थे जिसमें प्रति अङ्क तीन चार आना ख़र्च होता था पर अब हमारा नियुक्त किया हुआ एजेंट ग्राहकों के पास घर पर जाकर अङ्क पहुँचाया करेगा और अङ्क का मूल्य भी ग्राहकों से वसूल कर ठीक समय पर हमारे यहाँ भेजता रहेगा। इस अवस्था पर ग्राहकों को ठीक समय पर प्रत्येक अङ्क सुरक्षित रूप में मिल जाया करेगा और वे डाक, रजिस्टरी तथा मनीआर्डर इत्यादि के व्यय से बच जायँगे। इस प्रकार उन्हें प्रत्येक अङ्क केवल एक रुपया मासिक देने पर ही घर बैठे मिल जाया करेगा। यथेष्ट ग्राहक मिलने पर अन्य नगरों में भी शीघ्र ही इसी प्रकार का प्रबन्ध किया जायगा। आशा है जिन स्थानों में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है, वहाँ के महाभारतप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अधिक संख्या में ग्राहक बन कर इस अवसर से लाभ उठावेंगे। और जहाँ इस प्रकार की व्यवस्था हो चुकी है वहाँ के ग्राहकों के पास जब एजेंट अङ्क लेकर पहुँचे तो ग्राहकों को रुपया देकर अङ्क ठीक समय पर ले लेना चाहिए जिसमें उन्हें ग्राहकों के पास बार बार आने जाने का कष्ट न उठाना पड़े। यदि किसी कारण उस समय ग्राहक मूल्य देने में असमर्थ हों तो अपनी सुविधानुसार एजेंट के पास से जाकर अङ्क ले आने की कृपा किया करें।

(३) हम हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जनों से एक सहायता की प्रार्थना करते हैं। वह यही कि हम जिस विराट् आयोजन में संलग्न हुए हैं आप लोग भी कृपया इस पुण्य-पर्व में सम्मिलित होकर पुण्य-सञ्चय कीजिए, अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी का साहित्य-भाण्डार पूर्ण करने में सहायक हूजिए और इस प्रकार सर्वसाधारण का हित-साधन करने का उद्योग कीजिए। सिर्फ़ इतना ही करें कि अपने दस-पाँच हिन्दी-प्रेमी इष्ट-मित्रों में से कम से कम दो स्थायी ग्राहक इस वेद-तुल्य सर्वाङ्गसुन्दर महाभारत के और बना देने की कृपा करें। जिन पुस्तकालयों में हिन्दी की पहुँच हो वहाँ इसे ज़रूर मँगवावें। एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न रह जाय जिसके घर यह पवित्र ग्रन्थ न पहुँचे। आप सब लोगों के इस प्रकार साहाय्य करने से ही यह कार्य्य अग्रसर होकर समाज का हितसाधन करने में समर्थ होगा।

—प्रकाशक

विषय-सूची

रंगीन चित्रों की सूची

बाईसवाँ अध्याय

युधिष्ठिर आदि की युद्ध-यात्रा

सञ्जय कहते हैं—महाराज, इसके उपरान्त कुरुकुल-प्रधान युधिष्ठिर आदि पाण्डव अपनी सारी सेना का, भीष्म के विरुद्ध, व्यूह बनाकर धर्मयुद्ध के द्वारा स्वर्ग या राज्य प्राप्त करने के लिए तैयार हुए। सबके बीच में शिखण्डी को रखकर स्वयं अर्जुन उनकी रक्षा करने लगे। भीमसेन सेना के अगले भाग में स्थित धृष्टद्युम्न की और इन्द्र के समान प्रधान धनुर्द्धर युयुधान दक्षिण भाग से सब सेना की रक्षा करने लगे। राजा युधिष्ठिर हाथियों के झुण्ड के बीच महेन्द्रयान सदृश, युद्ध की सामग्री से परिपूर्ण, सुवर्णरत्नचित्रित, सुवर्णभाण्डयुक्त श्रेष्ठ रथ पर सवार हुए। उनके माथे पर हाथीदाँत की मूठवाला, ऊँचा, सफ़ेद छत्र लगा हुआ था। महर्षिगण स्तुति करते हुए उनकी प्रदक्षिणा करने लगे। पुरोहित लोग शत्रुवध की घोषणा के साथ आशीर्वाद देने लगे। ब्रह्मर्षि और सिद्धगण जप, मन्त्र और महौषधियों के द्वारा स्वस्त्ययन और स्तुति करने लगे। इसके बाद कुरुश्रेष्ठ युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों को हज़ारों गायें, कण्ठाभरण और अनेक प्रकार के फल-फूल आदि से सन्तुष्ट करके देवराज की तरह युद्धयात्रा की। महाबाहु, पृथ्वी पर अद्वितीय धनुर्द्धर योद्धा, महावीर अर्जुन ने भयानक रूप धारण किये हुए आपके पुत्रों की सेना को नष्ट करने की इच्छा से बायें हाथ में गाण्डीव धनुष लिया; और हज़ार सूर्यों की तरह उज्ज्वल, अग्नि की तरह शिखायुक्त, शतकिंकिणीशोभित, सुवर्णमण्डित, अच्छे पहियोंवाले, सफ़ेद घोड़ों से युक्त, कपिध्वज रथ पर चढ़कर युद्धयात्रा की। उनके रथ पर स्वयं श्रीकृष्ण सवार हुए। सिंह के समान निर्भय, इन्द्र के समान पराक्रमी, मस्त हाथी के समान दर्पी, महाबली, पराक्रमी और बिना शस्त्र लिये केवल बाहुओं से ही मनुष्यों और हाथियों का संहार करने में समर्थ भीमसेन—नकुल और सहदेव के साथ—अर्जुन के रथ की रक्षा करने लगे। सेना के अगले भाग में भीमसेन को आते देखकर आपके दल के योद्धाओं की दशा डर के मारे दलदल में फँसे हुए हाथियों की सी हुई। १०

अब भगवान् श्रीकृष्ण ने सेना के बीच में स्थित दुर्द्धर्ष राजकुमार अर्जुन से कहा—हे अर्जुन! वह देखो, सेना के बीच में सूर्य के समान तप रहे और हमारी सेना को सिंह के समान देख रहे कुरुकुलकेतु पितामह भीष्म खड़े हैं। इन्होंने तीन सौ अश्वमेध यज्ञ किये हैं। मेघ जैसे सूर्य को छिपाये हों, वैसे ही यह कौरवपक्ष की सेना उनके चारों ओर रहकर उनकी रक्षा कर रही है। हे पुरुषश्रेष्ठ, इस सेना को मारकर भरतश्रेष्ठ भीष्म के साथ युद्ध करो। १६

तेईसवाँ अध्याय

दुर्गादेवी की स्तुति

सञ्जय कहते हैं कि राजन्, इसके बाद दुर्योधन की सेना को युद्ध के लिए तैयार देखकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन के हित के लिए कहा—हे अर्जुन! संग्राम के आरम्भ में, शत्रुओं की पराजय के लिए, पवित्रतापूर्वक दुर्गास्तोत्र का पाठ करो।

महाराज! बुद्धिमान् श्रीकृष्ण के उपदेश करने पर अर्जुन रथ से उतरकर, हाथ जोड़कर, भगवती कात्यायनी की स्तुति इस प्रकार करने लगे—हे सिद्धसेनानि, हे आर्ये, मन्दराचल पर निवास करनेवाली, कुमारी, काली, कपालिनी, कपिला, कृष्णपिङ्गला भगवती, आपको प्रणाम है। हे तारिणी, वरवर्णिनी, भद्रकाली, महाकाली, चण्डी, चण्डरूपिणी, कात्यायनी, महाभागा, आपको प्रणाम है। हे कराली, विजया, जया, मयूरपिच्छध्वजाधारिणी, अनेक आभूषण पहननेवाली, अत्यन्त उत्कट त्रिशूल-खड्ग और खेटक धारण करनेवाली, श्रीकृष्ण की बड़ी बहन, नन्दगोप के कुल में जन्म लेनेवाली, महिष का रक्त पीनेवाली, कौशिकी, पीताम्बर पहननेवाली, अट्टहास करनेवाली, कोकमुखा, रणप्रिया देवी, आपको नमस्कार है। उमा, शाकम्भरी, श्वेता, कृष्णा, कैटभनाशिनी, हिरण्याक्षी, विरूपाक्षी, धूम्राक्षी, आपको नमस्कार है। वेदश्रुति, महा- १० पुण्या, ब्रह्मण्या, अग्निवधू, जम्बू-कटक-चैत्य आदि स्थानों में नित्य रहनेवाली देवी, आप सब विद्याओं में ब्रह्मविद्या और सब शरीरधारियों में महानिद्रा के स्वरूप से स्थित हैं। हे भगवती, स्कन्दजननी, दुर्गा, दुर्गम स्थान में रहनेवाली, आप स्वाहा, स्वधा, कला, काष्ठा, सरस्वती, सावित्री, वेदमाता और वेदान्तस्वरूपिणी हैं। मैं विशुद्ध चित्त से आपकी स्तुति करता हूँ। आशीर्वाद दीजिए कि आपकी कृपा से विजय प्राप्त कर सकूँ। भक्तों की रक्षा के लिए आप सदा दुर्गम मार्ग और भयानक स्थान तथा पाताल-तल में रहती हैं और संग्राम-भूमि में दानवों को हराती हैं। आप जम्भनी, मोहिनी, माया, ह्री, श्री, सन्ध्या, प्रभावती, सावित्री, जननी, तुष्टि, पुष्टि, धृति, चन्द्र-सूर्य-विवर्द्धिनी, दीप्ति और सम्पन्न पुरुषों की सम्पत्ति हैं। सिद्ध-चारण सदा रणक्षेत्र में आपके दर्शन पाते हैं।

अर्जुन की भक्ति देखकर मनुष्य-वत्सला कात्यायनी प्रसन्न हुईं और श्रीकृष्ण के आगे प्रकट होकर अर्जुन से कहने लगीं—"हे पाण्डव, तुम नारायण की सहायता से शीघ्र ही संग्राम में शत्रुओं को जीत लोगे। तुम युद्ध में शत्रुओं के लिए अजेय हो। तुमको तो साक्षात् इन्द्र भी नहीं जीत सकते।" अब वरदायिनी भगवती अन्तर्द्धान हो गईं।

वरदान पाकर अर्जुन ने अपने को विजयी समझ लिया। वे श्रीकृष्ण के साथ रथ २० पर बैठकर दिव्य शङ्ख बजाने लगे। जो कोई सवेरे उठकर इस दुर्गास्तव को पढ़ता है उसे

यक्ष, राक्षस, पिशाच, शत्रु, साँप, हिंसक पशु और राजकुल आदि से डर की आशङ्का नहीं रहती। वह मनुष्य विवाद में विजय पाता है, बन्धन से छुटकारा पाता है तथा सङ्कट और आपत्ति से छूट जाता है। यदि चोर डाकू घेर लें तो इस स्तोत्र को पढ़ने से वे सब भाग जाते हैं। यह स्तोत्र पढ़ने से युद्ध में विजय, लक्ष्मी, आरोग्य, बल और दीर्घ जीवन प्राप्त होता है।

राजन, मैंने बुद्धिमान् महात्मा व्यासदेव की कृपा से युद्ध का सब हाल देखा है। आपके दुरात्मा पुत्र काल-पाश में फँसे हुए हैं। इसी से मोह-वश होकर वे महर्षि नर और नारायण (अर्जुन और श्रीकृष्ण) को नहीं पहचान सके। व्यास, नारद, कण्व, परशुराम आदि महर्षियों ने आपके पुत्र को बहुत समझाया, परन्तु अपनी मूढ़ता के कारण दुर्योधन ने उनका कहा नहीं माना। महाराज, जहाँ धर्म है वहीं द्युति और कान्ति है। जहाँ लोकलज्जा है वहीं श्री और बुद्धि है। सच तो यह है कि जहाँ धर्म है वहीं श्रीकृष्ण हैं और जहाँ श्रीकृष्ण हैं वहीं जय है। २८

चौबीसवाँ अध्याय

दोनों पक्ष की सेना के अभ्युदय का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, किस पक्ष के वीरों ने पहले प्रसन्नतापूर्वक युद्धभूमि में प्रवेश और आक्रमण किया? किस पक्ष के लोग उत्साहित और किस पक्ष के लोग उदास देख पड़े? किस दल के वीरों ने हृदय को कँपा देनेवाले उस युद्ध में पहले-पहल प्रहार किया? किस ओर के गरज रहे योद्धाओं की मालाएँ नहीं सूखीं? किस पक्ष के लोगों की मालाओं की सुगन्ध में विकार नहीं आया? किस दल के वीरों के अनुकूल हवा चल रही थी? तुम ये सब बातें मुझे सुनाओ।

सञ्जय ने कहा—राजन्, उस समय दोनों पक्ष के योद्धा प्रसन्न और उत्साहित दिखाई पड़ रहे थे। दोनों ओर के वीरों की मालाएँ और उनकी गन्ध असली हालत में थी। दोनों पक्ष के लोग व्यूह बनाकर एकत्र हो परस्पर घोर युद्ध कर रहे थे। हे भरतश्रेष्ठ, दोनों ओर के वीर एक दूसरे को देखकर सिंहनाद कर रहे थे। दोनों पक्ष के योद्धा रण में शूरता दिखानेवाले थे। शङ्ख, नगाड़े आदि बाजों का शब्द चारों ओर गूँज रहा था। उस शब्द को हाथियों, घोड़ों, रथों और पैदलों का शब्द और भी बढ़ा रहा था। वह दृश्य अद्भुत ही था। ७

पचीसवाँ अध्याय

अर्जुन का विषाद

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध के लिए एकत्र हुए कौरवों और पाण्डवों ने आगे फिर क्या किया?

सञ्जय ने कहा कि राजन्, राजा दुर्योधन पाण्डव-सेना को व्यूह-रचना किये खड़ी देखकर द्रोणाचार्य के पास जाकर कहने लगे—हे आचार्य! देखिए, आपके शिष्य बुद्धिमान् द्रुपद-पुत्र धृष्टद्युम्न ने पाण्डवों की महती सेना को व्यूह बना करके ठीक स्थान पर स्थापित किया है। इस सेना में भीम और अर्जुन के समान युद्ध करनेवाले शूर और धनुर्द्धर देख पड़ते हैं। युयुधान, विराट, महारथी द्रुपद, धृष्टकेतु, चेकितान, महाबली काशि-राज, पुरुजित्, कुन्तिभोज पुरुषश्रेष्ठ शैव्य, विक्रमशाली युधामन्यु, महावीर उत्तमौजा, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र आदि सब महारथी वीर पाण्डवों की सेना में हैं। अब हमारी सेना के प्रधान जो वीर सेनापति हैं उनके नाम भी सुनिए। हे द्विजश्रेष्ठ! आप, भीष्म पितामह, कर्ण, युद्ध में जय प्राप्त करनेवाले कृपाचार्य, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त के पुत्र भूरि-

श्रवा, जयद्रथ और अन्य बहुत से शूरवीर अनेक अस्त्र-शस्त्र लिये मेरे निमित्त प्राण तक देने को तैयार हैं। वे सब युद्ध में निपुण हैं। भीष्म-द्वारा रक्षित हमारी सेना अपार है और भीमसेन-

द्वारा रक्षित पाण्डवों की सेना, उसके मुक़ाबिले में, थोड़ी है। इस समय आप लोग अपने-अपने निर्दिष्ट स्थान पर, व्यूह के प्रवेश-द्वारों में, स्थित होकर भीष्म पितामह की ही रक्षा करें। १०

अब महाप्रतापी कुरुवृद्ध पितामह ने दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए सिंहनाद करने के साथ ही ऊँचे स्वर से शङ्ख बजाया। इसके बाद शङ्ख, भेरी, पणव, नगाड़े, गोमुख आदि हज़ारों बाजे एकाएक बजाये जाने लगे। इससे बड़ा शोर-गुल हुआ।

उधर सफ़ेद घोड़ों से युक्त बड़े रथ पर बैठे हुए माधव और अर्जुन ने अपने दिव्य शङ्ख बजाये। श्रीकृष्ण ने पाञ्चजन्य शङ्ख, अर्जुन ने देवदत्त शङ्ख, भीमसेन ने पौण्ड्र नाम का महाशङ्ख, राजा युधिष्ठिर ने अनन्तविजय नाम का शङ्ख, नकुल ने सुघोष शङ्ख और सहदेव ने मणिपुष्पक शङ्ख बजाया। इसी प्रकार काशिराज, शिखण्डी, धृष्टद्युम्न, विराट, सात्यकि, द्रुपद, अभिमन्यु और द्रौपदी के पुत्रों ने अलग-अलग अपने-अपने शङ्ख बजाये। वह शङ्खों की तुमुल ध्वनि पृथ्वीमण्डल और आकाशमण्डल को प्रतिध्वनित करती हुई आपके पुत्रों के हृदयों को चीरने लगी।

महाराज! अब कपिध्वज अर्जुन कौरवों को यथास्थान स्थित देखकर, शस्त्रों का चलना आरम्भ होते समय, अपने धनुष को उठाकर, श्रीकृष्ण से कहने लगे—हे वासुदेव, दोनों सेनाओं के बीच में मेरा रथ ले चलिए। मैं देखना चाहता हूँ कि दुर्बुद्धि दुर्योधन का प्रिय करने की इच्छा से लड़ने के लिए यहाँ पर कौन लोग आये हैं। इस समय किन लोगों के साथ मुझे युद्ध करना होगा और कौन लोग मुझसे युद्ध करेंगे, यही मैं जानना चाहता हूँ। २०

सञ्जय कहते हैं कि गुड़ाकेश अर्जुन के ये वचन सुनकर श्रीकृष्ण ने रथ को दोनों सेनाओं के बीच में ले जाकर खड़ा कर दिया और अर्जुन से कहा—हे पार्थ! भीष्म, द्रोण आदि सब योद्धा, राजा लोग और कौरव ये सब जमा हैं, देख लो।

अर्जुन ने देखा कि उनके पिता, पितामह, आचार्य, मामा, भाई, पुत्र, पौत्र, मित्र, ससुर और सुहृद् आदि सब आत्मीय और माननीय लोग मरने-मारने के लिए खड़े हैं। तब करुणा के आवेश से खिन्न होकर अर्जुन ने कहा—हे वासुदेव, ये सब स्वजन युद्ध के लिए उपस्थित हैं। इन्हें देखकर मेरा शरीर काँप रहा है, हाथ-पैर सुन्न हो रहे हैं, रोमाञ्च हो आया है। हाथ से गाण्डीव गिरा पड़ता है, मुँह सूखा जा रहा है, त्वचा मानों जली जा रही है। मेरा मन भ्रान्त सा हो रहा है। मुझसे रथ पर बैठे नहीं रहा जाता। हे केशव, मुझे सब लक्षण विपरीत ही देख पड़ते हैं। युद्ध में भाई-बन्धुओं को मारने से मुझे कुछ कल्याण नहीं देख पड़ता। हे श्रीकृष्ण! इस तरह मैं न तो विजय चाहता हूँ, न राज्य और न सुख ही। हे गोविन्द! हम लोग भाई-बन्धुओं को मारकर राज्य, सुखभोग या जीवन लेकर क्या करेंगे? जिनके लिए हम राज्य, भोग और सुख की चाह करते हैं वे आचार्य, पिता, पुत्र, पितामह, मामा, ससुर, पोते, साले, समधी, नातेदार आदि सब तो युद्ध में, प्राणों की और धन की ममता छोड़कर, लड़ने को तैयार हैं। ३०

हे मधुसूदन ! इस तुच्छ पृथ्वी की कौन कहे, मैं तो त्रिलोकी के राज्य के लिए भी इन लोगों को मारना नहीं चाहता; ये लोग मुझे भले ही मार डालें। हे जनार्दन, धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारने से ही हमें क्या प्रसन्नता होगी ? इन आततायियों को मारकर हम पाप के ही भागी होंगे। इसलिए बन्धु-बान्धवों सहित धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारना ठीक नहीं है। हे माधव, इन लोगों को मारकर हम कैसे सुखी हो सकेंगे ! इन लोगों का चित्त लोभ के वश में हो रहा है, इसी कारण यद्यपि ये लोग कुलक्षय के दोष और मित्रद्रोह के पातक को नहीं देख पाते, तथापि हमको तो इस पाप से अलग हो जाना चाहिए; क्योंकि हम कुलक्षय के दोष को जानते हैं। भगवन्, कुल का नाश होने पर सनातन कुलधर्मों का नाश होता है। कुलधर्म के नष्ट होने पर कुल को अधर्म छा लेता है। अधर्म के बढ़ने पर कुलस्त्रियाँ दूषित होती हैं। हे ४० वार्ष्णेय, कुलस्त्रियों के दूषित होने पर वर्णसङ्कर संतान पैदा होती है। वर्णसङ्कर उत्पन्न होने पर कुल का संहार करनेवालों समेत सारा कुल नरकगामी होता है। कुल का विनाश करनेवालों के पितर, पिंड और तर्पण लुप्त हो जाने के कारण, नरक में गिरते हैं। कुलनाशक लोगों के इन वर्णसङ्करकारी दोषों से सनातन जातिधर्म और कुलधर्म मिट जाते हैं। हे जनार्दन, हम लोगों ने सुना है कि जिन मनुष्यों के कुलधर्म नष्ट हो जाते हैं वे चिरकाल तक नरक में पड़े रहते हैं। बड़े खेद की बात है कि हम राज्यसुख के लोभ से स्वजनों को मारने का पाप करने को उद्यत हैं। यदि मैं किसी प्रकार से अपना बचाव न करूँ, निहत्था खड़ा रहूँ और उस दशा में ये धृतराष्ट्र के पुत्र शस्त्र लेकर मुझको मार डालें तो वह मेरे लिए बहुत ही अच्छा होगा। सञ्जय कहते हैं—महाराज ! ४७ युद्धभूमि में श्रीकृष्ण से यों कहकर, धनुष और बाण फेंककर, शोकाकुल अर्जुन रथ पर बैठ गये।

छब्बीसवाँ अध्याय

सांख्ययोग का वर्णन

सञ्जय कहते हैं कि राजन् ! इस प्रकार करुणा के वशीभूत होकर, आँखों में आँसू भरे हुए, खिन्न अर्जुन से श्रीकृष्ण ने कहा—हे अर्जुन, इस बुरे समय में तुम्हें यह कापुरुषों का सा, निन्दनीय, स्वर्ग की गति में विघ्न डालनेवाला मोह कैसे हुआ ? हे अर्जुन ! तुम इस समय यह कायरपना, यह क्लीवों का सा भाव, छोड़ो। तुम ऐसे वीर पुरुषों के योग्य यह भाव नहीं है। हे परन्तप, हृदय की क्षुद्र दुर्बलता को छोड़कर उठो।

अर्जुन ने कहा—हे शत्रुनाशन ! पूजा के योग्य भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य के ऊपर मैं किस तरह प्रहार करूँगा ? किस तरह उनसे युद्ध करूँगा ? महानुभाव बड़े-बूढ़ों की हत्या न करके जो इस लोक में भीख माँगकर खाना पड़े तो वह बहुत अच्छा है। लालची गुरुजन
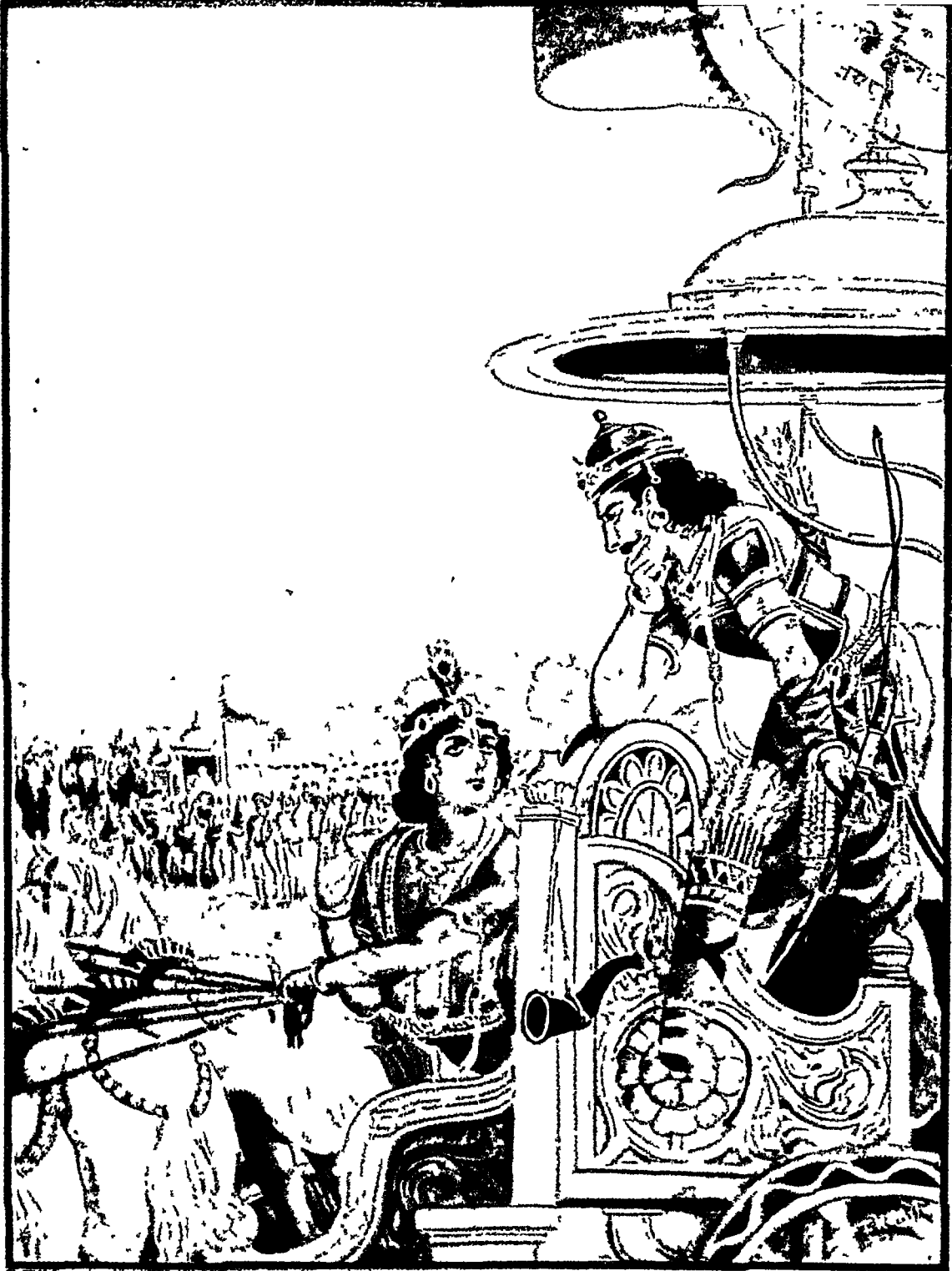
आंखों में आंसू भरे हुए, खिन्न अर्जुनसे श्रीकृष्ण ने कहा।—पृ० १६१८

को वध करके इस लोक में रुधिर-लिप्त भोग भोगने को मिलेंगे। मैं वैसा सुख नहीं चाहता। मुझे पता नहीं कि इस युद्ध में किस पक्ष की हार-जीत होगी; और मेरे लिए हार अच्छी है या जीत। जिनके मारे जाने पर हम स्वयं जीना नहीं चाहते वे ही धृतराष्ट्र के पुत्र हमारे सामने लड़ने को खड़े हैं। भगवन्, मेरी प्रकृति इस समय करुणा के दोष से बेकाम हो रही है और मेरा चित्त धर्म के विषय में कुछ काम नहीं देता। मैं आपका शरणागत शिष्य हूँ। मैं आपसे पूछता हूँ, मेरे लिए जो निश्चित रूप से सबसे अच्छा हो उसी का उपदेश कीजिए। पृथ्वी का निष्कण्टक समृद्ध राज्य और देवताओं का आधिपत्य मिलने पर भी मेरे इस, इन्द्रियों को निकम्मा करनेवाले, शोक को मिटानेवाला कोई उपाय नहीं देख पड़ता। इसलिए मैं युद्ध न करूँगा।

सञ्जय कहते हैं कि हे शत्रुदमन, हृषीकेश गोविन्द से यों कहकर अर्जुन चुप हो गये। तब श्रीकृष्ण ने हँसकर दोनों सेनाओं के बीच सुस्त हो रहे अर्जुन से कहा—हे अर्जुन, जिनका शोक न करना चाहिए उनका शोक करते हुए तुम ऐसी बातें कह रहे हो जो सुनने में तो समझदारी की जान पड़ती हैं, परन्तु वास्तव में समझदारी की हैं नहीं। देखो, जो पण्डित हैं वे जीते या मरे किसी के लिए शोक नहीं करते। पहले भी मैं, तुम और ये सब राजा लोग मौजूद थे, और इसके बाद भी मैं, तुम और ये सब रहेंगे। देहधारी आत्मा को इस देह में जैसे बचपन, जवानी, बुढ़ापा आदि दशाएँ प्राप्त होती हैं वैसे ही एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर को प्राप्त होना है। जो धीर पुरुष है वह उसमें घबराता नहीं। विषयों के साथ इन्द्रियों का सम्बन्ध ही शीत-उष्ण, सुख-दुःख आदि का देनेवाला है। हे अर्जुन, उक्त सम्बन्ध कभी होता है और कभी नष्ट हो जाता है, अतएव अनित्य है। हे भारत, इसलिए तुम उसे सहो। हे पुरुषश्रेष्ठ, यह अनित्य सम्बन्ध अपने संयोग-वियोग से जिस पुरुष को दुखी नहीं कर पाता वही सुख और दुख को समान समझनेवाला धीर पुरुष अमृतभाव अर्थात् मुक्ति को प्राप्त होता है। तत्त्वदर्शी पुरुषों ने यह सिद्धान्त किया है कि जो नहीं (असत्) है वह हो नहीं सकता, और जो है (सत्) उसका अभाव नहीं होता। आत्मा सर्वत्र व्याप्त है, उसका विनाश नहीं है। उस अव्यय पुरुष को कोई नष्ट नहीं कर सकता। यह देह अनित्य है, किन्तु शरीरी जीवात्मा नित्य है। वह अविनाशी और अप्रमेय है। इसलिए हे भारत, तुम युद्ध करो। जो कोई इस जीवात्मा को मारनेवाला समझता है, और जो कोई इसे मरनेवाला समझता है, वे दोनों अज्ञानी हैं; क्योंकि जीवात्मा न तो किसी को मारता है और न किसी के द्वारा मारा जाता है। जीवात्मा का न तो जन्म या मरण है और न वह बारम्बार उत्पन्न या वर्द्धित होता है। वह अजन्मा, नित्य और पुराणपुरुष है। शरीर के नष्ट हो जाने पर भी जीवात्मा का विनाश नहीं होता। जो पुरुष जीवात्मा को अविनाशी, अज, अव्यय और नित्य जानता है वह न तो किसी को मारता है और न किसी के द्वारा किसी को मरवाता है। मनुष्य जैसे पुराने

१

२

कपड़े उतारकर नये कपड़े पहनता है वैसे ही यह आत्मा जीर्ण शरीर को छोड़कर दूसरा नया शरीर ग्रहण कर लेता है। आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, आग उसे जला नहीं सकती, जल उसे गीला नहीं कर सकता, हवा उसे सुखा नहीं सकती। (वह अच्छेद्य, अदाह्य, अक्लेद्य और अशोष्य है।) वह नित्य, सर्वव्यापी, स्थिर, अचल और सनातन है। वह आँख आदि इन्द्रियों की पहुँच से बाहर, अचिन्त्य और विकाररहित है। इस कारण तुम जीवात्मा को ऐसा समझकर शोक और मोह न करो। जीवात्मा को जो तुम नित्यजात समझते हो, या नित्यमृत ही समझते हो, तो भी हे महाबाहु! उसके लिए तुमको शोक न करना चाहिए; क्योंकि जो उत्पन्न हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है और वैसे ही जो मरता है उसका जन्म निश्चित है। अतएव इस अवश्य होनेवाली बात के लिए शोक करना अयोग्य है।

हे भारत, सब प्राणियों का आदि और अन्त अव्यक्त है; केवल जन्म और मृत्यु के मध्य का समय व्यक्त (प्रकट) है। इसलिए उसके बारे में शोक करना वृथा है। कोई इस जीवात्मा को आश्चर्य सा देखता है, कोई आश्चर्य सा वर्णन करता है और कोई आश्चर्य सा सुनता है। कोई ऐसे भी हैं कि जीवात्मा का वर्णन सुनकर भी इसके बारे में कुछ नहीं जान सकते। हे भारत, यह देहधारी जीवात्मा सभी देहों में नित्य अवध्य है। इस कारण किसी प्राणी के लिए

३० शोच करना तुम्हें उचित नहीं। इसके सिवा अपने अर्थात् क्षत्रिय के धर्म का भी ख़याल करके तुम्हें इस तरह मोहाभिभूत या कातर न होना चाहिए। क्षत्रिय के लिए धर्म-युद्ध से बढ़कर और कोई अच्छा काम हो ही नहीं सकता। हे पार्थ! युद्ध तो आप से ही प्राप्त, खुला हुआ स्वर्ग का द्वार है; वह बड़भागी क्षत्रियों को मिलता है। जो तुम यह धर्मयुद्ध नहीं करोगे तो अपने कर्तव्य और कीर्ति को गँवाकर पाप के भागी बनोगे। चिरकाल तक लोगों में तुम्हारी बदनामी की चर्चा होती रहेगी। तुम्हें यह मालूम ही है कि प्रतिष्ठित और कीर्तिशाली पुरुष के लिए बदनामी मौत से भी बढ़कर है। जो लोग अब तक तुम्हारा बहुत सम्मान करते आये हैं वही महारथी योद्धा समझेंगे कि तुम डर के मारे युद्ध नहीं करते हो। जिनकी दृष्टि में तुम बहुत कुछ थे उन्हीं की दृष्टि में तुम कुछ भी न रहोगे। शत्रु-पक्ष के लोग तरह-तरह से तुम्हारी निन्दा करेंगे। तुम्हारी सामर्थ्य की निन्दा होने से बढ़कर दुःख की बात क्या है? मारे जाओगे तो स्वर्ग मिलेगा और जो शत्रुओं पर विजय पाओगे तो पृथ्वीमण्डल का राज्य करोगे। इसलिए हे अर्जुन, युद्ध का दृढ़ निश्चय करके तैयार हो जाओ। सुख-दुःख, लाभ-हानि, जय-पराजय को समान समझकर युद्ध करो। इस तरह तुम पाप के भागी नहीं बनोगे।

हे पार्थ, यह मैंने तुमको सांख्यशास्त्र (आत्मतत्त्व के ज्ञान) की बुद्धि बताई है। अब इसी बुद्धि को कर्मयोग के अनुसार तुमसे कहता हूँ। इस बुद्धि से युक्त होकर तुम कर्म-बन्धन से छूट जाओगे। यह कर्मयोग का अनुष्ठान कभी विफल नहीं होता और इसमें दोष भी

नहीं होता। इस धर्म का थोड़ासा अनुष्ठान भी मनुष्य को बड़ी बड़ी विपत्तियों से बचा लेता है। हे कुरुनन्दन, इस कर्मयोग में निश्चयात्मिका एक ही बुद्धि होती है। किन्तु जिन लोगों में ४० निश्चयात्मिका बुद्धि नहीं है, अर्थात् जो विवेकहीन या अव्यवस्थित-चित्त हैं, उनकी बुद्धियाँ अनन्त और बहुत शाखाओंवाली होती हैं। जो लोग लम्बी-चौड़ी और कानों को सुख देनेवाली वाक्यावाली पर लट्टू हैं, बहुफलदायक कर्मकाण्डमूलक वेदवाक्य ही जिन्हें प्रीतिप्रद हैं, जो लोग फल-साधन के सिवा और कुछ भी नहीं स्वीकार करते और इच्छाओं के दास हैं उन अविवेकी मूढ़ पुरुषों की बुद्धि एकाग्रता के विषय में स्थिर नहीं होती; जो लोग स्वर्ग को ही परम पुरुषार्थ-साधक समझते हैं, जन्म-कर्म-फलदायक और भोग तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति के साधन स्वरूप बहुविध क्रिया-प्रकाशक वाक्यों की ओर जिनका चित्त आकृष्ट हो रहा है और जो भोग तथा ऐश्वर्य के भूखे हैं, उन अविवेकी मूढ़ पुरुषों की बुद्धि समाधि या एकाग्रता के विषय में स्थिर नहीं होती। कामना-परतन्त्र लोगों के लिए वेद-शास्त्र कर्मफल का प्रतिपादन करते हैं। हे अर्जुन! तुम शीत-उष्ण, सुख-दुःख आदि द्वन्द्व धर्मों को सहते हुए धैर्यशील, योगक्षेम-रहित, प्रमादशून्य और निष्काम बनो। यद्यपि बड़े भारी जलाशय में बहुत अधिक पानी रहता है फिर भी मनुष्य उस सब जल को अपने व्यवहार में नहीं लाता, वह तो उतने ही पानी से काम लेता है जितने में कि उसके नहाने-धोने और खाने-पीने आदि का काम हो जाय; बस, इतना ही प्रयोजन व्युत्पन्न मतिवाले ब्राह्मण का सब वेदों में है; अर्थात् वेद के एक अङ्ग उपनिषद् का श्रवण करने से ही सम्पूर्ण वेदों का प्रयोजन सिद्ध हो जायगा क्योंकि सिद्धि के लिए पूरे वेदों के अनुष्ठान की न तो आवश्यकता है और न एक जन्म में उनका अनुष्ठान ही पूरा हो सकता है। हे अर्जुन, तुम्हें कर्म करने का ही अधिकार है। कर्म करो, किन्तु कर्मफल की इच्छा मत करो। तुम कर्मफल का कारण मत बनो और कर्म-त्याग में तुम्हारी आसक्ति न हो। तुम आसक्ति छोड़कर, ईश्वरानुरक्त होकर, सिद्धि और असिद्धि को समान समझते हुए, कर्म के अनुष्ठान में प्रवृत्त होओ। सिद्धि और असिद्धि को समान समझना ही तो योग है। हे धनञ्जय, बुद्धियोग की अपेक्षा फलापेक्षी कर्म अत्यन्त निकृष्ट है। इसलिए तुम फल की इच्छा छोड़कर बुद्धि का ही आश्रय लो। फल की चाह रखनेवाले कृपण या दीन हैं। कर्मयोग-विषयिणी बुद्धि से युक्त पुरुष इस लोक में पुण्य और पाप दोनों को छोड़ देता है। इसलिए तुम कर्मयोग के लिए यत्न करो। ईश्वर की आराधना और कर्तव्य कर्म के संपादन द्वारा बन्धन के कारण रूप कर्मों से अपने को मुक्त करने का कौशल ही योग है। कर्मयोगी ज्ञानी पुरुष कर्म के फल को त्याग- ५० कर, जन्म-मरण के बन्धन से मुक्ति प्राप्त करते हुए, अनामय अमृत पद को प्राप्त होते हैं। जब तुम्हारी बुद्धि मोह की दलदल से निकल आवेगी तब तुम्हें सुनने योग्य और सुने हुए विषय से वैराग्य हो जायगा। तुम्हारी बुद्धि अनेक प्रकार के वैदिक और लौकिक विषयों को

सुनकर चकरा सी गई है। जब तुम्हारी बुद्धि निश्चल होकर समाधि में स्थित होगी तब तुम्हें योग अर्थात् तत्त्वज्ञान प्राप्त होगा।

अर्जुन ने पूछा—हे वासुदेव, समाधिस्थ और स्थितप्रज्ञ व्यक्ति का लक्षण क्या है? स्थितबुद्धि पुरुष की भाषा, अवस्था तथा व्यवहार क्या और कैसा होता है?

वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन! जो व्यक्ति सब तरह की वासनाओं को त्याग देता है, जिसकी आत्मा अपने में ही सन्तुष्ट रहती है, वही स्थितप्रज्ञ कहलाता है। जिसका चित्त दुःख में खिन्न नहीं होता और जो सुख की इच्छा नहीं रखता वही स्थितप्रज्ञ है। जो पुत्र आदि पर ममता या स्नेह नहीं रखता और जो इष्ट या अनिष्ट विषय उपस्थित होने पर हर्ष या द्वेष नहीं प्रकट करता, वही स्थितप्रज्ञ है। जो पुरुष इन्द्रियों को उनके विषयों से उसी तरह खींच लेता है जैसे कछुआ अपने अंगों को समेट लेता है उसी की प्रज्ञा स्थित समझनी चाहिए। निराहार देहधारी व्यक्ति की इन्द्रियाँ भी विषयों को छोड़ देती हैं; आतुर या निराहार व्यक्ति सामर्थ्य न होने के कारण विषयों से हट जाता है; किन्तु वह स्थितप्रज्ञ नहीं कहा जा सकता। हे अर्जुन, ये प्रबल इन्द्रियाँ विषयत्याग के लिए लगातार यत्न करनेवाले विद्वान् पुरुष के भी मन को विषयों की ओर लगा देती हैं। रोगी या निराहार पुरुष की इन्द्रियाँ विषय-ग्रहण में असमर्थ होकर विषयों को छोड़ देती हैं सही, किन्तु विषयों की वासना नहीं हटती। स्थितप्रज्ञ पुरुष ईश्वर का साक्षात्कार पा करके विषयवासना से बच जाते हैं। पहले ही कहा जा चुका है कि यत्न-तत्पर विवेकी पुरुष के भी मन को इन्द्रियाँ बलपूर्वक चञ्चल कर देती हैं। इसलिए उन इन्द्रियों को संयत करके ईश्वरपरायण और समाहित होने पर जिसकी इन्द्रियाँ विषयों की ओर चलायमान नहीं होतीं उसी की प्रज्ञा निश्चल है, वही स्थितप्रज्ञ है। विषयों के चिन्तन से उधर आसक्ति होती है। आसक्ति से इच्छा होती, इच्छा से क्रोध, क्रोध से मोह, मोह से स्मृतिभ्रंश, स्मृतिभ्रंश से बुद्धिनाश और बुद्धिनाश से विनाश होता है। जिसने आत्मा या मन को वश में कर

लिया है, वह राग-द्वेष-हीन और आत्मवशीभूत इन्द्रियों के द्वारा विषय-भोग करके भी आत्मप्रसाद प्राप्त करता है। आत्मप्रसाद के अवलम्बन से सब तरह के दुःख नष्ट हो जाते हैं। जिसे आत्मप्रसाद अर्थात् सन्तोष प्राप्त हो जाता है उसकी बुद्धि शीघ्र ही स्थिर हो जाती है। जो अयुक्त अर्थात् अजितेन्द्रिय है वह बुद्धिहीनता के कारण कुछ विचार नहीं कर सकता। जो विचार नहीं कर सकता उसे शान्ति नहीं मिलती और जो अशान्त है उसे सुख कहाँ?

विषयों में विचरनेवाली इन्द्रियों का अनुगामी मन मनुष्य की प्रज्ञा को वैसे ही चारों ओर डावाँडोल करता रहता है, जैसे नदी में नाव को आँधी इधर-उधर हिलाती रहती है—स्थिर नहीं होने देती। इसलिए हे महाबाहु अर्जुन, स्थिरबुद्धि और दृढ़प्रज्ञ वही है जिसकी कि इन्द्रियाँ विषयों से हटाई जाकर वश में कर ली गई हैं। जिनकी बुद्धि अज्ञान के अन्धकार से ढकी हुई है उनके लिए यह ब्रह्मनिष्ठा रात्रि के समान है। उस ब्रह्मनिष्ठा की रात में जितेन्द्रिय योगी जागते रहते हैं। और, सब प्राणी जिस विषयनिष्ठा रूप दिन में जागते रहते हैं, वह दिन ही तत्त्वदर्शी मुनि के लिए रात्रिरूप है। सब नदियाँ जैसे अचलप्रतिष्ठ आपूर्यमाण समुद्र में जाकर मिल जाती हैं वैसे ही सब काम (अर्थात् विषयवासनाएँ) जिसमें लीन हो जाते हैं वही योगी शान्ति पाता है—मुक्त होता है। कामकामी अर्थात् भोगार्थी पुरुष उस शान्ति या मुक्ति को नहीं पा सकता। हे पार्थ, जो पुरुष सब इच्छाएँ त्यागकर—निःस्पृह, निरहङ्कार, निर्मम होकर—इन्द्रिय-विषयों का उपभोग करता है वही शान्ति पाता है। हे अर्जुन, यह ब्राह्मी स्थिति (ब्रह्म में लीन होने की अवस्था) है। ब्रह्मज्ञाननिष्ठ पुरुष इस स्थिति को पाकर मोहित नहीं होते। अन्तकाल में भी इस ब्रह्मनिष्ठा में स्थित होनेवाला पुरुष ब्रह्म को प्राप्त होता है, अर्थात् ब्रह्म में लीन हो जाता है। ७२

सत्ताईसवाँ अध्याय

कर्मयोग का वर्णन

अर्जुन ने कहा—हे केशव! यदि तुम्हारा यह मत है कि कर्म की अपेक्षा ज्ञान ही श्रेष्ठ है, तो फिर मुझे इस घोर कर्म, हत्याकाण्ड, में क्यों नियुक्त करते हो? तुम कभी तो ज्ञान की और कभी कर्म की प्रशंसा करके मेरी बुद्धि को मानों मोह में डाल रहे हो। इसलिए निश्चय करके मुझसे एक ही बात कहो, जिससे मुझे कल्याण प्राप्त हो।

श्रीकृष्ण ने कहा—हे अर्जुन, मैं पहले ही कह चुका हूँ कि इस लोक में निष्ठा दो तरह की है। विमल चित्तवाले सांख्य मतावलम्बियों का ज्ञानयोग और कर्मयोगियों का कर्मयोग मार्ग है। पुरुष कर्म किये बिना नैष्कर्म्य (ज्ञान) को नहीं प्राप्त होता। ज्ञान प्राप्त किये बिना

केवल संन्यास से भी सिद्धि नहीं प्राप्त की जा सकती। कोई पुरुष पल भर भी कर्म किये विना नहीं रह सकता। इच्छा न रहने पर भी प्रकृति के गुण विवश करके उससे कर्म करा लेते हैं। जो व्यक्ति कर्मेन्द्रियों को संयत करके मन ही मन इन्द्रियों के विषयों का ध्यान करता है, वह मूढ़ात्मा पुरुष कपटाचारी कहलाता है। जो व्यक्ति ज्ञानेन्द्रियों को वश में करके अनासक्त भाव से कर्मेन्द्रियों से कर्म करता है वही कर्मयोगी श्रेष्ठ है। तुम लगातार कर्म करो। कर्म छोड़ देने से तो कर्म करना ही श्रेष्ठ है। कर्मत्याग कर देने से तुम शरीर धारण भी नहीं कर सकते। यज्ञ या विष्णु के लिए जो कर्म किया जाता है उसके सिवा और सब कर्म बन्धनस्वरूप हैं। इस कारण तुम आसक्ति छोड़कर भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म करो। पूर्व समय में प्रजापति ब्रह्मा ने यज्ञ सहित सब प्रजा को उत्पन्न करके कहा कि तुम इसी यज्ञ के द्वारा फूलो-फलो।
१० यह यज्ञ ही तुम्हारे मनोरथों को पूरा करेगा। तुम लोग यज्ञ के द्वारा देवताओं को सन्तुष्ट करो और वे देवता तुम्हारी वृद्धि करें। इस तरह एक दूसरे को परिवर्द्धित अथवा सन्तुष्ट करने से दोनों को परम कल्याण प्राप्त होगा। यज्ञ से सन्तुष्ट देवगण तुम्हें अभिलषित फल देंगे। जो पुरुष देवताओं के दिये हुए भोग्य पदार्थों को, देवताओं को अर्पण किये विना, स्वयं भोग करता है वह चोर है। सज्जन पुरुष यज्ञ से बचा हुआ पदार्थ खा करके सब पातकों से छुटकारा पा जाते हैं। जो लोग केवल अपने ही लिए रसोई करते और खाते हैं वे पापी पाप ही भोजन करते हैं। देखो, प्राणी अन्न से, अन्न मेघ से, मेघ यज्ञ से, यज्ञ कर्म से, कर्म वेद से और वेद ब्रह्म से उत्पन्न होते हैं। इसी कारण सर्वगत ब्रह्म नित्य यज्ञ में प्रतिष्ठित है। जो व्यक्ति इस संसार में विषयासक्त होकर, पूर्वोक्त रूप से प्रवृत्त, कर्मादि के चक्र का अनुगामी नहीं होता वह पापी है; उसका जीवन वृथा है। जिसे अपने आत्मा में ही प्रीति, आनन्द और सन्तोष है उसके लिए कुछ भी कर्तव्य कार्य नहीं है। न तो कर्म करने में उसे पुण्य है, और न कर्म के त्याग देने में उसे पाप है। उसे मोक्ष के लिए ब्रह्मा से लेकर जड़पर्यन्त किसी का आश्रय नहीं लेना पड़ता। हे अर्जुन, पुरुष को आसक्ति त्यागकर कर्म का अनुष्ठान करने से मोक्ष प्राप्त होता है। इसलिए तुम आसक्ति छोड़कर कर्म करो। जनक आदि महात्मा पुरुषों ने कर्म करके ही सिद्धि
२० पाई है। अतएव दूसरों के भले के लिए भी तुम कर्म करो। श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचरण करते हैं वही-वही, उनकी देखा-देखी, दूसरे लोग भी करते हैं। श्रेष्ठ पुरुष जिसे प्रमाण मानता है, उसी के अनुगामी अन्य लोग भी होते हैं। इस कारण, लोगों के धर्म की रक्षा के लिए ही, तुम कर्म करो। देखो, मैं अपने लिए पृथ्वीमण्डल में अप्राप्य कुछ नहीं देखता; इसी से मेरे लिए कर्तव्य कर्म भी कुछ नहीं है; तो भी मैं कर्म करता हूँ। यदि मैं आलस्य छोड़कर कर्म न करूँ तो सभी लोग, मेरे अनुगामी होकर, कर्म करना छोड़ दें। इस प्रकार मेरे कर्म न करने से इन सब लोगों के नष्ट होने की आशङ्का है। ऐसा करने से मैं वर्णसङ्कर का करनेवाला और : जा

की मलिनता का मूल कारण बन जा सकता हूँ। इसलिए मूढ़ लोग जैसे फल की इच्छा से कर्म करते हैं वैसे ही ज्ञानी पुरुष आसक्ति त्यागकर, लोगों के धर्म की रक्षा के लिए, कर्म करते रहते हैं। ज्ञानी लोग कर्म में आसक्त, निर्बोध पुरुषों की बुद्धि को भ्रम में न डालकर स्वयं तरह-तरह के कर्म करते हुए उन्हें कर्म करने में लगाते हैं। सभी कर्म प्रकृति के गुणरूप इन्द्रियों के द्वारा होते हैं; किन्तु जिनकी बुद्धि अहङ्कार से अभिभूत हो रही है वे लोग अपने को ही उन कर्मों का करनेवाला समझते हैं। इन्द्रियाँ ही विषयों की इच्छा करती हैं, यह जानकर गुण-कर्म-विभाग के तत्त्व को जाननेवाला पुरुष विषयों में आसक्त नहीं होता। जो लोग प्रकृति के सत्व आदि गुणों में विमुग्ध होकर इन्द्रियों के वशीभूत होते हैं वैसे अल्पदर्शी विमूढ़ व्यक्तियों को, सर्वज्ञ पुरुष का कर्तव्य है कि, कभी कर्म से विचलित न करे।

तुम मुझमें सब कर्म अर्पण करके तथा यह सोचकर कि मैं अन्तर्यामी पुरुष के अधीन होकर कर्म करता हूँ,—कामना, ममता और शोक त्यागकर—समर के लिए तैयार हो जाओ। ३० जो लोग असूयाहीन और श्रद्धायुक्त होकर सदा मेरे अनुगामी होते हैं, वे सब कर्मों के बन्धन से बच जाते हैं। जो लोग असूया के वश होकर इस मेरे मत को ईर्ष्या की दृष्टि से देखते हैं और मेरे मत के अनुसार नहीं चलते, उन सर्वज्ञान-विमूढ़ पुरुषों को अचेत और नष्ट समझो; अर्थात् वे ब्रह्म और कर्म के विषय में विमोहित होकर नष्ट होते हैं। ज्ञानी व्यक्ति भी अपने स्वभाव के अनुरूप कर्म करते हैं। इसलिए जब सभी प्राणी स्वभाव के अनुगामी होते हैं तब इन्द्रियनिग्रह करने से क्या हो सकता है ? हर एक इन्द्रिय में अनुकूल विषय के प्रति आसक्ति और प्रतिकूल विषय के प्रति द्वेष है। ये दोनों बातें मोक्षप्राप्ति में बाधक हैं। इसलिए इनके वशीभूत होना ठीक नहीं। अच्छी तरह अनुष्ठित पराये धर्म की अपेक्षा कुछ गुण-हीन होने पर भी अपना धर्म श्रेष्ठ है। पराया धर्म अत्यन्त भयङ्कर है। इसलिए अपने धर्म के पालन में मर मिटना भी श्रेयस्कर है।

अर्जुन ने पूछा—हे वासुदेव ! यह पुरुष किसकी प्रेरणा से, इच्छा न होने पर भी, बलपूर्वक नियुक्त सा होकर पापकर्म करता है ?

वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन ! यह काम ही क्रोध के रूप में परिणत, रजोगुण से उत्पन्न, अत्यन्त उग्र और महापापरूप है। इसे तृप्त करना बहुत कठिन है। यही मुक्ति के मार्ग में बाधा पहुँचानेवाला वैरी है। जैसे धुएँ से आग, मैल से दर्पण और जरायु (एक प्रकार की महीन झिल्ली) से गर्भ ढका रहता है, वैसे ही यह ज्ञानियों का चिरशत्रु, दुष्पूरणीय, अग्निरूप काम (कामना) ज्ञान को ढके रहता है। यह इन्द्रिय, मन और बुद्धि से उत्पन्न होता है; ये ही इसके स्थान हैं। यह काम आश्रयभूत इन्द्रिय आदि के द्वारा ज्ञान को आच्छन्न करके शरीरधारी आत्मा को मोहित करता है। इस कारण तुम पहले इन्द्रियों का दमन करके फिर ४०

ज्ञान और विज्ञान को नष्ट करनेवाले पापरूप काम का विनाश करो। देह आदि विषयों की अपेक्षा इन्द्रियाँ श्रेष्ठ हैं। इन्द्रियों की अपेक्षा मन श्रेष्ठ है। मन की अपेक्षा निश्चल अर्थात् स्थिर बुद्धि श्रेष्ठ है। उस बुद्धि की अपेक्षा जो श्रेष्ठ है वही आत्मा है। हे अर्जुन! तुम आत्मा को इस तरह जानकर, स्थिर बुद्धि के द्वारा चित्त को स्थिर बनाकर, इस ४३ दुरासद दुर्द्धर्ष कामरूप शत्रु को नष्ट करो।

अट्ठाईसवाँ अध्याय

ज्ञानयोग का वर्णन

श्रीकृष्ण ने कहा—हे अर्जुन, पूर्व समय में मैंने आदित्य से इस अविनाशी योग का वर्णन किया था। आदित्य ने मनु को और मनु ने राजा इक्ष्वाकु को इस योग का उपदेश किया। उसके बाद परम्परा के द्वारा पाकर निमि आदि राजर्षियों ने भी इस योग को जाना। बहुत समय बीतने पर यह योग नष्ट हो गया, अर्थात् लुप्तप्राय हो गया। उसी पुरातन योग का इस समय तुम्हारे आगे मैंने वर्णन किया है। तुम मेरे भक्त और सखा हो; इसी कारण यह उत्तम और रहस्ययोग तुमको बताया है।

अर्जुन ने कहा—हे केशव! आदित्य का जन्म अन्य समय हुआ, और आपका जन्म अन्य समय में हुआ। फिर मैं किस तरह जानूँ कि आपने यह योग आदित्य से कहा था?

श्रीकृष्ण ने कहा—हे अर्जुन, मैंने कई बार जन्म लिया है। तुम भी अनेक बार जन्म ले चुके हो। हे परन्तप! तुम उन सब जन्मों का हाल नहीं जानते, मैं जानता हूँ। मैं अजन्मा, अविनाशी और सब प्राणियों का ईश्वर होकर भी अपनी प्रकृति के आश्रित होकर अपनी माया से ही जन्म लेता हूँ। जिस समय धर्म का क्षय और अधर्म का आविर्भाव होता है उसी समय मैं अपने को उत्पन्न करता हूँ। सज्जनों की रक्षा और अधर्मी दुष्टों का नाश करने के लिए, धर्म को स्थापित करने के लिए, मैं हर एक युग में जन्म लेता हूँ। जो पुरुष मेरे इन अलौकिक जन्म और कर्मों को यथार्थ रूप से जानने में समर्थ होते हैं वे, शरीर-त्याग करने पर, मुझे पाते हैं। उन्हें फिर जन्म नहीं लेना पड़ता। अनेक सज्जनों ने राग, डर, क्रोध आदि त्याग करके एकाग्रचित्त, एकान्त आश्रित-भाव और ज्ञान तथा तपस्या के द्वारा पवित्र होकर सायुज्य नाम की १० मुक्ति पाई है। जो लोग मुझे जिस प्रकार से भजते हैं, उन्हें मैं उसी प्रकार भजता हूँ। हे पार्थ, सभी मनुष्य मेरे ही मार्ग का अनुगमन करते हैं। मनुष्य-लोक में सब कर्म शीघ्र ही सफल होते हैं और उनकी सिद्धि प्राप्त होती है। इसी कारण मनुष्य, कर्मों की सिद्धि चाहते हुए, इस लोक में देवताओं की पूजा करते हैं; किन्तु वास्तव में वे सब मेरे ही उपासक हैं। हे पार्थ, गुण और

कर्म के विभाग के अनुसार मैंने ही ब्राह्मण आदि चारों वर्णों की सृष्टि की है। मैं उनका कर्त्ता भी हूँ और अकर्त्ता भी। मैं संसार की सृष्टि करनेवाला होकर भी अलिप्त हूँ। कर्म मुझे स्पर्श नहीं कर सकते; क्योंकि मुझमें कर्मफल की इच्छा नहीं है। जो पुरुष मुझे इस तरह जानता है, वह कर्मबन्धन में नहीं बँधता। मोक्ष की इच्छा रखनेवाले पूर्वकाल के लोगों ने मुझे इसी तरह जानकर कर्म किये हैं। बड़े-बूढ़े जिस तरह कर्म करते आये हैं उसी तरह तुम भी कर्म करो।

इस लोक में क्या कर्म है और क्या अकर्म है, इसकी मीमांसा करने में ज्ञानी लोग भी मोहित हैं। मैं अब वही कर्म तुमसे कहता हूँ जिसे जानकर तुम अशुभ से, संसार से, मुक्त हो जाओगे, सुनो। कर्म की गति बहुत ही अगम्य है, इस कारण मनुष्य को कर्म (विहित कर्म), अकर्म (निषिद्ध कर्म) और विकर्म (कर्मत्याग) तीनों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। जो मनुष्य कर्म करते रहते भी अपने को कर्म न करनेवाला और कर्म के न करते रहते भी कर्मयुक्त समझता है, वही मनुष्यों में धीमान्, योगी और सब कर्म करनेवाला है। फल की इच्छा से जिसके सब कर्म नहीं किये जाते, उसे ही विद्वान् ज्ञानी लोग पण्डित कहते हैं। उसके सब कर्म ज्ञान की आग में भस्म हो जाते हैं। जो मनुष्य कर्मफल की आसक्ति को छोड़कर निराश्रय और नित्य तृप्त (प्रसन्न) रहता है, वह कर्म करता हुआ भी वास्तव में कुछ नहीं करता; अर्थात उसके कर्म उसके लिए बन्धन का कारण नहीं होते। जिसका चित्त और शरीर शुद्ध है, जो कामना और सब प्रकार के विषयों को त्यागे हुए है, वह केवल शरीर से कर्म करके भी पाप का भागी नहीं होता। जो कुछ मिल जाता है उसी में जो व्यक्ति तृप्त है तथा जो जाड़ा-गर्मी-सुख-दुःख आदि द्वन्द्व धर्मों को सहनेवाला, मत्सर-रहित, सिद्धि और असिद्धि में समान भाव रखनेवाला है, वह कर्म करके भी संसार के बन्धन में नहीं बँधता। जो पुरुष राग-द्वेष आदि को त्यागकर निष्काम हो चुका है, जिसका चित्त सदा ज्ञान में स्थित है, वह यदि यज्ञार्थ कर्मों को करता है तो वे सब कर्म लीन हो जाते हैं। स्रुक्-स्रुवा आदि पात्र ब्रह्म हैं, हवनीय पदार्थ घृत आदि ब्रह्म हैं, अग्नि भी ब्रह्म है और उसमें हवन करनेवाला भी ब्रह्म है। ऐसे कर्मरूप ब्रह्म में जिसके चित्त की एकाग्रता रहती है, वह उस एकाग्रता अर्थात् समाधि के द्वारा ब्रह्म को ही प्राप्त होता है। कुछ योगी लोग दैवयज्ञ की उपासना करते हैं। कोई-कोई योगी पूर्वोक्त प्रकार से यज्ञादि सब कर्मों को, यज्ञरूप उपाय के द्वारा, ब्रह्मरूप अग्नि में हवन कर देते हैं। कोई योगी श्रोत्र आदि इन्द्रियों को संयमरूप अग्नि में, कोई योगी शब्द आदि विषयों को इन्द्रियरूप अग्नि में हवन कर देते हैं। कोई-कोई सज्जन ज्ञानी, ध्येय विषय के द्वारा, प्रज्वलित आत्मध्यानरूप योगाग्नि में ज्ञानेन्द्रियों के, कर्मेन्द्रियों के और प्राणवायु के कर्मों की आहुति दे देते हैं। कोई-कोई व्रतधारी यतिगण द्रव्यदान, कृच्छ्र-चान्द्रायण आदि तपस्यारूप यज्ञ, चित्त-वृत्ति-निवारण द्वारा समाधिरूप यज्ञ, वेदाध्ययनरूप यज्ञ और वेदार्थज्ञानरूप यज्ञ आदि कई एक यज्ञ

करते हैं। कोई प्रयत्नशील तीक्ष्णव्रतधारी पुरुष अपान वायु में प्राण वायु का हवन करके पूरक, तथा प्राण में अपान वायु का हवन करके रेचक और प्राण तथा अपान की गति रोककर कुम्भक-रूप प्राणायाम करते हैं। और, कोई नियताहारी होकर अन्तःकरण वृत्ति में प्राणेन्द्रियों की आहुति
३० देते हैं। ये सब यज्ञवेत्ता ज्ञानी इन यज्ञों के द्वारा पाप का नाश करते हैं। ये सब पुरुष यज्ञ करते हुए 'यज्ञशेष' रूप अमृत भोजन करके सनातन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। हे कुरुश्रेष्ठ, यज्ञ-हीन व्यक्ति के लिए यह अल्पसुखवाला मनुष्यलोक ही नहीं रहता; फिर उसके लिए स्वर्ग आदि के सुख की सम्भावना कहाँ? इस प्रकार तरह-तरह के यज्ञों का वर्णन वेद में विस्तार के साथ किया गया है। ये सब यज्ञ कर्म से उत्पन्न हैं; आत्मा के साथ इनका कोई संसर्ग नहीं है। तुम यह जानकर मुक्ति प्राप्त करोगे। हे शत्रुदमन पार्थ, द्रव्यमय दैव आदि यज्ञों की अपेक्षा ज्ञानयज्ञ ही श्रेष्ठ है; क्योंकि फलसहित सभी कर्मों की समाप्ति ज्ञान में ही होती है।

हे अर्जुन! तुम तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के समीप जाकर प्रणाम, प्रश्न और सेवा करके ज्ञान सीखो। वे तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न होकर तुम्हें ज्ञान का उपदेश देंगे। हे पाण्डव, ज्ञान प्राप्त करने पर फिर तुमको मोह न होगा। तुम अपने से सब प्राणियों को अभिन्न देखकर, अन्त को परमात्मा से आत्मा को अभिन्न देखोगे। जो तुम सब पाप करनेवालों से भी बढ़कर पापी हो, तो भी उस ज्ञानरूप नौका के द्वारा पापसागर के पार पहुँच जाओगे। प्रज्वलित आग जैसे लकड़ियों के ढेर को जला डालती है वैसे ही ज्ञानरूप आग सब प्रकार के कर्मों को भस्म कर देती है। इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र वस्तु दूसरी नहीं है। मोक्ष की इच्छा रखने-वालों को कर्मयोग में सिद्धि पाने पर आप ही आत्मज्ञान हो जाता है। जो पुरुष इन्द्रियों को वश में करके श्रद्धा के साथ गुरुजन की आज्ञा का पालन और सेवा करता है, वही ज्ञान प्राप्त कर शीघ्र ही मोक्ष पद को पाता है; किन्तु ज्ञान और श्रद्धा से ख़ाली, संशयाकुल पुरुष विनष्ट होता है। संशयात्मा व्यक्ति का यह लोक और परलोक कुछ नहीं बनता; उसे सुख भी नहीं
४० मिलता। जिसने योग के द्वारा सब कर्मों को ईश्वर में अर्पण कर दिया है, और ज्ञान के द्वारा जिसके सब संशय मिट गये हैं, उसे कर्म बाँध नहीं सकते। इसलिए आत्मज्ञानरूप खड्ग के
४२ द्वारा अज्ञान से उत्पन्न हृदय के संशय को काटकर कर्मयोग का अनुष्ठान करो और उठो।

उनतीसवाँ अध्याय

कर्म-संन्यास योग

अर्जुन ने कहा—हे श्रीकृष्ण, आप कर्मों का न्यास (त्याग) और कर्मयोग दोनों का उपदेश कर रहे हैं। इनमें कौन श्रेष्ठ है, सो निश्चय करके कहिए।

भगवान् ने कहा—हे पार्थ ! कर्मत्याग और कर्मयोग, दोनों के द्वारा मुक्ति मिलती है; किन्तु दोनों में कर्मयोग ही प्रधान है। द्वेष और इच्छा से शून्य व्यक्ति ही नित्य संन्यासी है। क्योंकि इस तरह के निर्द्वन्द्व पुरुष ही संसार के बन्धन से बचे रहते हैं। मूढ़ लोग हीं संन्यास और योग के जुदे-जुदे फल बतलाते हैं, ज्ञानी लोग नहीं। जो व्यक्ति संन्यास और योग, दोनों में से केवल एक का ही अनुष्ठान विशेष रूप से करते हैं, वे दोनों के ही यथार्थ फल को पाते हैं। संन्यासियों को मिलनेवाला मोक्षपद कर्मयोगी पुरुष को भी मिलता है। जो लोग कर्मसंन्यास और कर्मयोग दोनों को एक भाव से देखते हैं, वे ही सचमुच तत्त्वदर्शी हैं; किन्तु कर्मयोग के बिना निरे संन्यास से मोक्ष की प्राप्ति बड़ी कठिनाई से होती है। कर्मयोगी बहुत शीघ्र ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं। जो व्यक्ति योगी होकर विशुद्धात्मा बन चुका है, जिसने शरीर और इन्द्रियों को वश में कर लिया है और जो अपने आत्मा को सब प्राणियों के आत्मा के समान जानता है, वह संसार-निर्वाह के लिए कर्म करके भी उसमें लिप्त नहीं होता। तत्त्व-दर्शी कर्मयोगी पुरुष देखकर, सुनकर, छूकर, सूँघकर, खाकर, चलकर, सोकर, बातचीत कर और त्याग, ग्रहण, उन्मेष-निमेष आदि सभी प्रकार के कर्म करके समझता है कि मैं कुछ भी नहीं करता—इन्द्रियाँ ही अपने-अपने विषय में प्रवृत्त होती हैं। जो आसक्ति से बचकर, ब्रह्म में कर्मफलों को समर्पण करता हुआ कर्म करता है, वह उसी तरह पाप में लिप्त नहीं होता जैसे कमल का पत्ता जल में नहीं लिप्त होता। कर्मयोगी पुरुष आसक्ति त्यागकर—मन की शुद्धि के लिए—शरीर, मन, बुद्धि और विशुद्ध इन्द्रियों के द्वारा कर्म किया करते हैं। ईश्वर-परायण व्यक्ति कर्मफल-परित्यागपूर्वक मुक्ति प्राप्त करते हैं। किन्तु ईश्वर-विमुख व्यक्ति कर्मफल की इच्छा करके कामनावश संसार-बन्धन में बँध जाता है। देहधारी लोग इन्द्रियों को वश में करके, मन से सब कर्मों का त्याग करके, नव-द्वार-युक्त देहपुर में सुख से रहते हैं। वे कर्म में अपने को या अन्य को प्रवृत्त नहीं करते। लोककर्ता ईश्वर सब जीवों के कर्तृत्व और कर्मों की सृष्टि नहीं करता, और किसी को कर्मफल का भागी नहीं बनाता। अविद्या प्रकृति ही जीव को कर्म में प्रवृत्त करती है। ईश्वर किसी के पाप या पुण्य का ग्राहक नहीं है; ज्ञान पर अज्ञान का पर्दा रहने से सब जीव मोह के द्वारा बन्धन को प्राप्त होते हैं। जिनका ज्ञान अपने अज्ञ-भाव को नष्ट कर चुकता है, उनका ब्रह्मज्ञान सूर्य के समान प्रकाशमान होता है। ईश्वर में ही जिनकी अचल बुद्धि और निष्ठा है, जो ईश्वर को ही आत्मा मानते हैं और जिनका ईश्वर ही परम आश्रय है, वे ज्ञान के द्वारा पापशून्य होकर मुक्ति पाते हैं। १०

ब्रह्मज्ञानी लोग विद्या-विनय-सम्पन्न ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल को समान दृष्टि से देखते हैं अर्थात् सब में ब्रह्म को देखते हैं। इस प्रकार जिनका चित्त सर्वत्र तुल्यभाव से स्थित है वे जीवन्मुक्त होते हैं। समदर्शी पुरुष ब्रह्मभाव को प्राप्त होते हैं; क्योंकि निर्दोष

ब्रह्म सर्वत्र समभाव से स्थित है। जो व्यक्ति ब्रह्म के ज्ञाता होकर ब्रह्म में स्थित होते हैं, वे प्रिय या अप्रिय वस्तु के मिलने-न मिलने में हर्ष या उद्वेग नहीं प्रकट करते; क्योंकि वे मोह त्याग-
२० कर स्थिर बुद्धि को प्राप्त हो चुकते हैं। जो बाह्य विषय में आसक्त नहीं होते उनका चित्त सदा शान्ति-सुख का अनुभव करता है और वे अन्त को ब्रह्म में समाधि लगाकर अविनाशी सुख भोगने को समर्थ होते हैं। पण्डित लोग विषयों से उत्पन्न सुख में आसक्त नहीं होते; क्योंकि वे सुख तो दुःख ही का कारण और नष्ट होनेवाले होते हैं। जो पुरुष इस लोक में, जीवित अवस्था में, काम और क्रोध के वेग को सह सकते हैं वे ही योगी और सुखी हैं। जो लोग आत्मा में ही सुख पाते हैं, आत्माराम हैं और आत्मा में ही दृष्टि रखते हैं, वे ब्रह्मनिष्ठ योगी ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। जो लोग पाप के नाश करने, संशय के छेदन करने, चित्त को वश में करने और सबका हित करने में तत्पर हैं वे तत्त्वदर्शी पुरुष ही मुक्ति प्राप्त करते हैं। जिन संन्यासियों ने चित्त को वश में कर लिया है तथा काम और क्रोध से छुटकारा पाकर आत्मतत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, वे इस लोक और परलोक दोनों में मुक्ति पाते हैं। जो मोक्षपरा-यण मुनि इन्द्रिय, मन और बुद्धि को वश में करके इच्छा, भय और क्रोध को दूर कर चुके हैं और जो चित्त से बाह्य विषयों को बहिष्कृत, दोनों नेत्रों को भौंहों के बीच में स्थापित तथा नाक के भीतर विचरनेवाले प्राणवायु और अपानवायु की वृत्ति को तुल्यभावापन्न कर चुके हैं, वे ही जीवन्मुक्त हैं। सभी लोग मुझे यज्ञ और तपस्या का भोग करनेवाला, सब प्राणियों
२९ का महान् ईश्वर और सुहृद् समझकर शान्ति पाते हैं।

तीसवाँ अध्याय

आत्मसंयम योग

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन! जो कर्मफल की इच्छा न रखकर कर्तव्य कर्म करता है, वही संन्यासी है और वही योगी है। केवल अग्निहोत्र और कर्मों का त्याग करनेवाला पुरुष कभी योगी या संन्यासी नहीं कहा जा सकता। पण्डित लोग कर्मफल-त्याग-रूप संन्यास को ही योग कहते हैं। इसलिए कर्मफल की इच्छा रखनेवाला पुरुष कभी योगी नहीं हो सकता। ज्ञानयोग के दर्जे पर चढ़ने की इच्छा रखनेवाले व्यक्ति के लिए उसका कारण या उपाय कर्मयोग ही है। इसी प्रकार ज्ञानयोग में आरूढ़ हो जाने पर सब कर्मों की निवृत्ति ही ज्ञान-परिपाक का कारण कही गई है। आसक्ति का मूल जो विषयभोग और उसका सङ्कल्प है, उसका त्याग करके जो मनुष्य इन्द्रिय-भोग्य विषयों में, या उनके साधनों में, आसक्त नहीं होता वह योगा-रूढ़ कहा जाता है। आत्मा ही आत्मा का बन्धु और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है। इसलिए

आप ही आत्मा का उद्धार करना चाहिए; उसे अवसन्न करना ठीक नहीं। जिस आत्मा ने आत्मा को जय, अर्थात् सब इन्द्रियों को अपने वश में, कर लिया है वह आत्मा ही आत्मा का बन्धु है; और जिस आत्मा ने इन्द्रियों को वश में नहीं किया, वह आत्मा ही आत्मा का शत्रु के समान अपकार करता है। जाड़ा, गर्मी, सुख, दुःख, मान और अपमान उपस्थित होने पर, जितात्मा शान्तचित्त व्यक्ति का आत्मा ही साक्षात् आत्मभाव का अवलम्बन करता है। जिसका अन्तःकरण ज्ञान और विज्ञान से तृप्त हो चुका है, वह निर्विकार और जितेन्द्रिय है। जो लोहा, मिट्टी, पत्थर और सुवर्ण को समान समझता है, वैसा योगी ही योगारूढ़ कहाता है।

जो सुहृद्, मित्र, शत्रु, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेष्य, बन्धु, साधु और असाधु सभी व्यक्तियों को तुल्य समझता है, वह सबसे विशिष्ट अर्थात् श्रेष्ठ है। योगारूढ़ व्यक्ति निःसङ्ग, संयतचित्त और संयतदेह होकर, लगातार एकान्त में रहकर, आशा और परिग्रह को त्यागकर, चित्त को समाधिस्थ अर्थात् एकाग्र करे। वह न तो बहुत ऊँचे और न बहुत नीचे कुशासन पर मृगछाला १० बिछाकर और उसके ऊपर कपड़ा डालकर स्थिर आसन से बैठे। उसके ऊपर बैठकर चित्त की एकाग्रता के साथ, चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को संयत करके, चित्त की शुद्धि के लिए योग का अनुष्ठान करे। उस निर्भय, ब्रह्मचर्य में स्थित, प्रशान्तचित्त योगी का मन अपनी वृत्तियों से खिंच जाना चाहिए। उसकी देह का मध्यभाग, मस्तक और गर्दन सीधी तथा स्थिर रहनी चाहिए। वह दृष्टि को, इधर-उधर न चलाकर, नासिका के अग्रभाग में स्थित करे। इस प्रकार मुझमें मन लगाकर एकाग्रभाव से योगाभ्यास करनेवाला आसन पर बैठे। योगी पुरुष सदा इस प्रकार संयतचित्त होकर जब आत्मा को समाहित कर लेता है तब निर्वाण-प्राप्ति का साधन जो मेरा स्वरूप है, उसमें स्थित शान्ति को प्राप्त करता है। हे पाण्डव! बहुत भोजन करनेवाला, भूखा रहनेवाला, बहुत सोनेवाला या बहुत जागनेवाला आदमी इस योग के अभ्यास को नहीं कर सकता। जो नियमित रूप से भोजन करता, सोता, चलता-फिरता, कार्य और चेष्टा करता तथा जागता है, वही इस संसारबन्धन को काटनेवाले योग का अभ्यास कर सकता है। जब बाहरी चिन्ता दूर होकर साधक का चित्त आत्मा में अच्छी तरह लग जाता है, तब वह सब कामों से निःस्पृह साधक योगी कहलाता है। चित्त की प्रक्रिया को जाननेवाले योग के ज्ञाता पुरुषों ने योगियों के चित्त के बारे में कहा है कि जैसे वायुरहित स्थान में दीपक की ज्योति निश्चल रहती है, वैसे ही योगाभ्यास करनेवाले संयतचित्त योगी का चित्त एकाग्र रहता है। जिस अवस्था में योगी का अन्तःकरण किसी विषय की ओर न डिगकर सर्वथा उपरत रहता है; जिस अवस्था में ज्ञानी पुरुष समाधि में ज्योतिःस्वरूप आत्मा की उपलब्धि करके अपने आत्मा में ही सन्तुष्ट रहता है; जिस अवस्था में योगी विषय और इन्द्रिय के परे तथा आत्मरूप बुद्धि २० के विषयीभूत नित्य सुख का अनुभव करता हुआ आत्मस्वरूप से विचलित नहीं होता और जिस

अवस्था में जाड़ा-गर्मी आदि दुःख अभिभूत नहीं कर सकते तथा जिस अवस्था में दुःख का लेश भी नहीं रहता, उस अवस्था का नाम योगावस्था है। सङ्कल्प-जनित इच्छाओं और सब काम्य वस्तुओं का त्याग करके, विषयदोषदर्शी अन्तःकरण के द्वारा सर्वत्र विचरनेवाली इन्द्रियों को संयत कर, अत्यन्त प्रयत्न के साथ, साधक शास्त्र और आचार्य के उपदेश से उत्पन्न निश्चय के बल से योगाभ्यास करे। स्थिर बुद्धि के द्वारा अन्तःकरण को आत्मसमाहित करके धीरे-धीरे विषयों से निवृत्त हो; अन्य किसी विषय का चिन्तन न करे। अन्तःकरण चञ्चल हो तो उसे, विषयों से हटाकर, आत्मा में समाहित करे। इसके द्वारा रजोगुण तिरोहित, चित्त प्रशान्त और संसार-दोष विनष्ट होता तथा ब्रह्मभाव की प्राप्ति के कारण निरतिशय सुख की प्राप्ति होती है। इस तरह चित्त को वश में करने से योगी व्यक्ति पापशून्य होकर ब्रह्मसाक्षात्कार-स्वरूप अनुपम सुख का अनुभव करते हैं; और योग में एकाग्र चित्त से सर्वत्र समदर्शी होकर आत्मा को सर्व-भूत-मय और सब प्राणियों को आत्ममय देखते हैं। हे अर्जुन, मैं ही सबका आत्मा हूँ। जो व्यक्ति मुझको सबमें और सब वस्तुओं को मुझमें देखता है उसे मैं जैसे अदृश्य नहीं होता, वैसे ही वह
३० भी मेरी दृष्टि के बाहर नहीं होता। जो अद्वैतवादी योगी पुरुष मुझे सब प्राणियों में व्याप्त समझकर मेरी उपासना करता है वह मुझमें लीन हो जाता है। जो मनुष्य सब प्राणियों के सुख-दुःख को अपने ही सुख-दुःख के समान देखता है, वही श्रेष्ठ योगी है।

अर्जुन ने कहा—हे पुरुषोत्तम! आपने साम्य बुद्धि से प्राप्त होनेवाले जिस योग का उपदेश किया है उसकी स्थिर स्थिति को मैं, चञ्चलता के मारे, नहीं देख सकता। अन्तःकरण स्वभाव से ही चञ्चल, देह और इन्द्रियों को क्षुब्ध करनेवाला, दुर्जय और दुर्भेद्य है। जिस तरह हवा घड़े के भीतर रोककर रक्खी नहीं जा सकती वैसे ही मन का निग्रह करना भी बहुत कठिन है।

श्रीकृष्ण ने कहा—हे अर्जुन, चञ्चल मन का दमन सहज में होनेवाला नहीं; किन्तु अभ्यास और वैराग्य के द्वारा वह संयत किया जा सकता है। जिसका चञ्चल चित्त हो उसका योगावस्था को प्राप्त होना कठिन है। जो पुरुष यत्न के साथ अन्तःकरण को संयत कर चुका है, वह पूर्वोक्त उपाय से योगलाभ करने में समर्थ होता है।

अर्जुन ने कहा—हे श्रीकृष्ण! जो श्रद्धायुक्त तो है किन्तु यत्न नहीं करता और जिसका चित्त योग से भ्रष्ट हो गया है, वह योगसिद्धि के लाभ में असमर्थ होकर कैसी गति पाता है? कर्मफल की इच्छा और कर्म के अनुष्ठान से रहित व्यक्ति क्या छिन्न-भिन्न हुए मेघ की तरह विनष्ट हो जाता है? हे मधुसूदन, आपके सिवा और कोई मेरे संशय को दूर करने में समर्थ नहीं है। इसलिए आप ही मेरे सन्देह को मिटाइए।

भगवान् ने कहा—हे पार्थ, शुभ अनुष्ठान में लगे रहने से कभी दुर्गति नहीं होती।
४० इसलिए इस तरह के योगभ्रष्ट पुरुष इस लोक में पतित या परलोक में नरकगामी नहीं होते।

वे तो अश्वमेध यज्ञ आदि शुभ अनुष्ठान करनेवाले व्यक्तियों के उपभोग्य स्वर्गलोक में जाकर, वहाँ सैकड़ों वर्ष तक रहकर, अन्त को सदाचारी धनी पुरुषों के घर में या बुद्धिमान् योगियों के वंश में उत्पन्न होते हैं। योगियों के कुल में जन्म पाना अत्यन्त दुर्लभ है। हे भारत! योग-भ्रष्ट व्यक्ति उसी कुल में जन्म लेकर—पूर्व जन्म की स्मृति बनी रहने के कारण—मुक्ति पाने के लिए पहले की अपेक्षा और भी अधिक यत्न करते हैं। वे यदि विघ्नवश वैसा करने की इच्छा नहीं करते तो पूर्व देहकृत अभ्यास या पूर्वसंस्कार उन्हें ब्रह्मनिष्ठ बनाते हैं। तब वे योग-जिज्ञासु होकर वेदोक्त कर्मफल से भी बढ़कर फल को प्राप्त होते हैं। मतलब यह कि निष्पाप योगी बड़े यत्न से इसी तरह कई जन्मों में सिद्धि प्राप्त कर अन्त को श्रेष्ठ गति (मुक्ति) पाता है। हे अर्जुन! मेरे मत से योगी पुरुष तपस्वी से भी श्रेष्ठ है, ज्ञानी से भी श्रेष्ठ है और कर्म करने-वालों से भी श्रेष्ठ है। इसलिए तुम भी योगी बनो। जो श्रद्धा-सम्पन्न होकर मुझमें हृदय लगाकर मुझे भजता है, वह सब प्रकार के योगियों से श्रेष्ठ है। ४७

इकतीसवाँ अध्याय

विज्ञान योग का वर्णन

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन! तुम मुझसे लौ लगाकर और शरणागत होकर, योगा-भ्यासपूर्वक, जिस उपाय से मुझे अच्छी तरह जान सकोगे सो मैं तुमसे कहता हूँ—सुनो। मैं तुमसे जो विज्ञानयुक्त ज्ञान कहता हूँ, यह जान लेने से, तुम्हारे लिए और कुछ जानने योग्य नहीं रह जायगा। हज़ारों में कोई एक पुरुष सिद्धि के लिए यत्न करता है और हज़ारों यत्न करने-वालों में कोई एक आदमी मेरे यथार्थ रूप को जान पाता है। भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहङ्कार, इन आठ रूपों में मेरी प्रकृति बँटी हुई है। यह प्रकृति निकृष्ट है। इसके सिवा जीवस्वरूपिणी और एक उत्कृष्ट प्रकृति है। उसी के द्वारा इस विश्व का सञ्चालन होता है। ये दोनों ही प्रकृतियाँ जड़-चेतन और सम्पूर्ण पदार्थों का कारण हैं। इनमें से पहले की अष्टरूप प्रकृति देहरूप में परिणत हुआ करती है। अन्य जीवरूपिणी प्रकृति मेरे अंश से उत्पन्न और भोक्तारूप से देह में प्रविष्ट होकर स्थावर-जङ्गममय भूत-परम्परा को धारण करती है। हे अर्जुन! ये दोनों ही प्रकृतियाँ मेरा कार्य हैं, अतएव मैं ही सम्पूर्ण विश्व का चरम कारण और संहारक हूँ। मुझसे बढ़कर श्रेष्ठ कारण और कुछ नहीं है। धागे में गुही हुई मणियों की तरह जगत् मुझमें ग्रथित हो रहा है। हे पाण्डव! मैं जल का गुण रस हूँ, चन्द्रमा और सूर्य की प्रभा हूँ। वेद में प्रणव (ॐकार) मैं हूँ। आकाश में शब्द मैं हूँ। पुरुष में पौरुष मैं हूँ। पृथ्वी में विकार-वर्जित गन्ध मैं हूँ। अग्नि में तेज मैं हूँ। मैं सब

प्राणियों का जीवन और अक्षय-बीजस्वरूप हूँ। हे भारत! मैं तपस्वियों का तप, बुद्धिमानों की
१० बुद्धि, तेजस्वियों का तेज, बलवानों का काम-राग-वर्जित बल और प्राणियों का धर्मानुगत काम मैं
हूँ। सात्त्विक, राजसिक या तामसिक, सभी भाव मुझसे उत्पन्न हुए हैं। मेरे ही अधीन सब
प्राणी, इन त्रिविध गुणमय भावों के प्रभाव से विमोहित होने के कारण, मुझे जान नहीं पाते।
मैं तो इन त्रिविध गुणों से परे हूँ, उनका नियन्ता हूँ और उन गुणों से होनेवाले विकार के
संसर्ग से रहित हूँ। मेरी यह मायाशक्ति लोकगति से गुणशालिनी और अत्यन्त दुरवगाह
(जटिल) है। मेरे अनुगत भक्त के सिवा और कोई इसका निर्णय नहीं कर सकता—इसकी यथार्थ
स्थिति को जान नहीं सकता। जो लोग पापी और विवेकशून्य हैं, जिनका शास्त्र और गुरु के
उपदेश से उत्पन्न ज्ञान माया के प्रभाव से निरस्त हो गया है, और इसी कारण जो लोग दम्भ,
दर्प, अभिमान, क्रोध और निर्दयता आदि आसुरी भावों के वशीभूत हो रहते हैं, वे कभी मेरी
उपासना नहीं करते। आर्त, आत्मज्ञान का इच्छुक, इस लोक और परलोक के भोगों के
साधन-स्वरूप अर्थलाभ के लिए समुत्सुक और आत्मज्ञानी, इन चारों ने पूर्वजन्म में पुण्य किया
होता है तो ये मेरी उपासना करते हैं। इनमें से अत्यन्त मात्रा में भक्ति रखनेवाला और नित्य-
योग-सम्पन्न व्यक्ति ही श्रेष्ठ है। ज्ञानी पुरुष जैसे मुझे प्रिय समझते हैं वैसे ही वे भी मुझे प्रिय
होते हैं। ऊपर कहे गये चारों प्रकार के व्यक्ति उदार होते हैं और मोक्ष पाते हैं, किन्तु ज्ञानी
पुरुष को मैं अपने आत्मा के ही तुल्य मानता हूँ। वह अनन्य भाव से मुझमें ही चित्त लगा-
कर, मुझे ही सर्वश्रेष्ठ गति मानकर, आत्मयुक्त भाव से मेरा ही आश्रय लेता है। ज्ञानी व्यक्ति
बहुत जन्मों के बाद 'यह सब चराचर जगत् वासुदेव ही हैं' ऐसा निश्चय करके मुझे प्राप्त
होता है; परन्तु वैसा महात्मा पुरुष अत्यन्त दुर्लभ है। जो लोग पुत्र, कीर्ति या शत्रु-जय आदि
की वासना के प्रभाव से विवेक-विहीन और अपनी प्रकृति के वशीभूत होकर, उपवास आदि
२० नियमों से, मुझे छोड़कर अन्य देवताओं की उपासना करते हैं, उनमें से जो भक्त जिस देवता
के रूप में मेरी पूजा करता है उसकी उस-उस देवता के सम्बन्ध की श्रद्धा को मैं ही, अन्तर्यामी
रहकर, दृढ़ बनाता हूँ। वे उसी श्रद्धा के साथ उन-उन देवताओं की आराधना करके मेरे ही
दिये हुए काम्य विषयों का उपभोग करते हैं। किन्तु उन अल्पबुद्धिवाले पुरुषों को मिले हुए
फल, भोग के उपरान्त, नष्ट हो जाते हैं। देवयाजकगण [नश्वर] देवलोक को प्राप्त होते हैं;
किन्तु मेरे भक्त मुझी को प्राप्त होते हैं। मैं अव्यक्त हूँ और प्रपञ्च से परे हूँ। किन्तु अन-
भिज्ञ पुरुष मेरे नित्य और शुद्ध स्वरूप को न जानने के कारण मेरे मनुष्य, मीन, कच्छप आदि
रूपों की कल्पना करते हैं। मैं योगमाया के प्रभाव से सदा आच्छन्न हूँ; कभी सब लोगों के
निकट प्रकाशमान नहीं होता। इसी कारण लोग मायामूढ़ होकर मुझे नहीं जान पाते। हे
अर्जुन! मुझे कोई नहीं जानता; परन्तु मैं सब भूत, भविष्य, वर्तमान चराचर प्राणियों के विषय

में पूर्ण ज्ञान रखता हूँ। सब प्राणी संसार में जन्म पाकर इच्छा-द्वेष और शीत-उष्ण आदि द्वन्द्व धर्मों से उत्पन्न मोह में अभिभूत होते हैं। जिन पुण्यात्मा पुरुषों के पाप का अन्त हो चुका है, शीत-उष्ण आदि द्वन्द्वों से उत्पन्न मोह मिट चुका है, वे दृढ़व्रत महात्मा मुझे भजते हैं। जो लोग मेरा आश्रय लेकर अजर-अमर होने के लिए यत्न करते हैं वे सम्पूर्ण कर्मयोग और अखण्ड ब्रह्म को जानते हैं। जो लोग अधिदैव, अधिभूत और अधियज्ञ सहित मुझको जानते हैं, वे योगी मृत्यु-समय में भी मुझे नहीं भूलते। ३०

बत्तीसवाँ अध्याय

महापुरुष योग का वर्णन

अर्जुन ने पूछा—हे पुरुषोत्तम! ब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञ क्या है? हे मधुसूदन, इस शरीर में वह कौन अधियज्ञ किस तरह जाना जाता है? जितात्मा लोग मृत्यु समय में किस तरह आपको जान लेते हैं?

श्रीकृष्णचन्द्र ने कहा—हे अर्जुन! जो परम और अक्षय है, वही ब्रह्म है। उस परब्रह्म के अंशस्वरूप जीव को, जो इस शरीर में रहता है, अध्यात्म कहते हैं। जिसके द्वारा प्राणियों की उत्पत्ति और वृद्धि होती है और जो देवताओं के उद्देश से विहित हुआ करता है उस द्रव्य के उत्सर्ग को कर्म कहते हैं। प्राणियों के अधिष्ठित इस नश्वर शरीर आदि को अधिभूत कहते हैं। जो प्राणियों की इन्द्रियों के प्रवर्तक, देवताओं के अधीश्वर और हिरण्यगर्भ नाम से विख्यात हैं, वही अधिदैव हैं। मैं ही अधियज्ञ हूँ; क्योंकि मैं सब यज्ञों के अधिष्ठाता और फलदाता के रूप से इस देह में विराजमान हूँ। मैं अन्तर्यामी और परमेश्वर हूँ। लोग अन्त-समय में मुझे स्मरण करते हुए शरीर त्यागकर उत्तरायण मार्ग से गमन करने पर निस्सन्देह मेरे स्वरूप को प्राप्त करने में समर्थ होते हैं।

हे पार्थ! अन्तकाल में पूर्व-वासना ही स्मरण का कारण होती है, और विवश हो पड़ने पर स्मरण की आशा नहीं रहती। इसी कारण प्राणी अन्त-समय में जिस वस्तु को याद करता हुआ शरीर त्याग करता है उसी वस्तु के स्वरूप को प्राप्त हो जाता है। इसलिए तुम सब समय मेरा ही स्मरण करो। तुम इस प्रकार अपने चित्त को शुद्ध करके युद्ध करो। इस तरह आत्मा, मन और बुद्धि को मुझमें अर्पित करके निःसन्देह मुझे ही प्राप्त होओगे। हे पार्थ! जो मनुष्य अभ्यास-योगयुक्त और अनन्यगामी चित्त से प्रकाशमय परम पुरुष का चिन्तन करता है, वह उन्हीं में लीन होता है। वह परम पुरुष सर्वज्ञ, सनातन, सबका नियामक, सूक्ष्म से सूक्ष्म-तम, सबका विधाता, बुद्धि और मन से अगोचर, सूर्य के समान प्रकाश-पूर्ण और

मोहान्धकार से परे है। जो पुरुष अन्त-समय में सावधान और भक्तियुक्त होकर, योग-बल से प्राणवायु को दोनों भौंहों के बीच स्थापित करके, विक्षेप-विहीन हृदय में ध्यान करता है वह
१० उन्हीं परम पुरुष परमेश्वर को प्राप्त करता है।

हे पार्थ ! वेदज्ञ लोगों के मत से जो अक्षय ब्रह्म है, वीतराग यति लोग जिसमें अपने चित्त को लगाते हैं और जिसे जानने के लिए लोग गुरुकुल में ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते हैं, उस परब्रह्म के पद को पाने का उपाय मैं तुम्हारे आगे संक्षेप में कहता हूँ—सुनो।

जो पुरुष चक्षु आदि सब इन्द्रियों के द्वारों को रोक करके अन्तःकरण को हृदय में समाहित करता है और प्राणवायु को दोनों भौंहों के बीच स्थापित करके योगधारण-पूर्वक, एकाक्षर-सम्पन्न प्रणव का उच्चारण और प्रणव का प्रतिपाद्य जो मैं हूँ उसका स्मरण करता हुआ, शरीर त्यागता है वह उत्तम गति पाता है। जो प्रतिदिन लगातार अनन्य भाव से हृदय में मेरा स्मरण करता है, उस नित्ययुक्त योगी के लिए मैं सुलभ हूँ। वह महापुरुष मुझे पा जाने पर, मोक्षलाभ के उपरान्त, फिर दुःखपूर्ण नश्वर जन्म नहीं प्राप्त करता। हे पार्थ, ब्रह्म-लोक पर्यन्त सब लोक ऐसे हैं कि वहाँ से आकर जीव को फिर जन्म लेना पड़ता है; किन्तु मुझे प्राप्त होने पर फिर जन्म नहीं लेना पड़ता।

मनुष्यलोक के एक वर्ष में देवलोक का एक दिन-रात होता है। देवलोक के दिन-रात के परिमाण से बारह हज़ार वर्ष बीतने पर एक चौजुगी होती है। दो हज़ार चौजुगी बीतने पर ब्रह्मा का एक दिन-रात होता है। ऐसे ही दिन-रातों के एक सौ वर्ष ब्रह्मा की परमायु है। दिन-रात्रि के तत्त्व के ज्ञाता पण्डितों ने इस तरह ब्रह्मा के दिन और रात का परिमाण कहा है। ब्रह्मा का दिन जब होता है तब चराचर सब प्राणी कारणरूप 'अव्यक्त' से प्रकट होते हैं, और रात्रि के समय उसी कारणात्मा में लीन हो जाते हैं। उसके बाद फिर दिन आने पर, प्राक्तन कर्म के वशीभूत होकर, जन्म-ग्रहण करते हैं। उस चराचर के कारणभूत 'अव्यक्त' की अपेक्षा भी अव्यक्त जो एक और अतीन्द्रिय चिरन्तन भाव है वह, समग्र भूतल विनष्ट होने पर
२० भी, नष्ट नहीं होता। पण्डित लोग उसी जन्म-मरण-रहित अव्यक्त को परम पुरुषार्थ और गम्य-स्वरूप बताते हैं। वह परमधर्म ही मेरा स्वरूप है। उसके प्राप्त होने पर फिर जन्म नहीं होता। हे पार्थ! जो कोई सब प्राणियों के अधिष्ठान रूप से इस चराचर विश्व में व्याप्त है, वह परम पुरुष मैं ही हूँ। अनन्य एकान्त भक्ति के ही द्वारा मैं पाया जा सकता हूँ। अब उस काल का वर्णन सुनो जिसमें गमन करने से योगी लोग आवृत्ति और अनावृत्ति को प्राप्त होते हैं। जिस स्थान में दिन शुक्लवर्ण और अग्नि की तरह प्रभायुक्त होता है और छः महीने उत्तरायण होता है, वहाँ जाने से ब्रह्मज्ञ लोग ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। जिस स्थान में रात्रि धूमवर्ण और कृष्णवर्ण तथा छः महीने दक्षिणायन होता है, वहाँ गमन करने से कर्मयोगी पुरुष

चन्द्रज्योति स्वर्ग को प्राप्त होकर फिर लौटते हैं। इस तरह जगत् की, शुक्ल और कृष्ण, दो सनातन गतियाँ निरूपित हुई हैं। एक में जाने से अनावृत्ति और दूसरी में जाने से पुनरावृत्ति होती है। हे पार्थ, इन दोनों गतियों को जाननेवाला योगी कभी मोह को प्राप्त नहीं होता। इसलिए तुम सदा योगयुक्त रहो। अधिक क्या, योगी पुरुष इस ज्ञान के प्रभाव से वेद, यज्ञ, तप और दान के निर्दिष्ट सब पुण्यफलों को अतिक्रम करके आदिम परम पद को प्राप्त होता है। २८

तेंतीसवाँ अध्याय

राजगुह्ययोग का वर्णन

भगवान् ने कहा—हे पार्थ, तुममें असूया नहीं है; इसलिए मैं तुमसे विज्ञान-समन्वित गुह्यतम ज्ञान कहता हूँ, सुनो। इसे जान लेने से सब अमङ्गलों से बच जाओगे। यह सब विद्याओं से श्रेष्ठ है; यह गुह्य से भी गुह्यतम, परम पवित्र, धर्मसङ्गत और अविनाशी है। हे शत्रु-दमन! जो लोग इस धर्म में अश्रद्धा करते हैं वे, मुझे प्राप्त न होकर, मृत्यु और संसार के मार्ग में भटकते हैं। मैं आत्मा के रूप से सारे विश्व में व्याप्त हूँ; सब प्राणी मुझमें ही स्थित हैं; किन्तु कोई भी मेरा अधिष्ठान नहीं है। हे पार्थ, मेरी 'ऐशी' शक्ति देखो। मैं अलिप्त हूँ, इसलिए कोई भी प्राणी मुझमें स्थित नहीं है। यद्यपि मैं सबको धारण किये हूँ, किन्तु किसी में अधिष्ठित नहीं हूँ। मेरे आत्मा ने ही सब प्राणियों की सृष्टि की है। वायु जैसे सर्वत्र जानेवाला होने पर भी नित्य आकाश में स्थित है, वैसे ही सब प्राणियों को मुझमें स्थित समझो। हे अर्जुन! प्रलयकाल में सब प्राणी मेरी अधिष्ठित प्रकृति में लीन होते हैं, और कल्प के आरम्भ में मैं फिर उनकी सृष्टि करता हूँ। इसी तरह मैं अपनी प्रकृति का आश्रय लेकर इन प्राणियों की बारम्बार सृष्टि करता हूँ। प्रकृति के वश में होने के कारण ये अवश हैं। परन्तु मैं सब कर्मों से अलिप्त रहकर उदासीन भाव से स्थित हूँ; इसी से मैं कभी सृष्टि आदि कार्यों का विषय नहीं बनता। मैं अविकृत ज्ञानस्वरूप हूँ। मेरे अधिष्ठान के प्रभाव से प्रकृति सारे जगत् को उत्पन्न करती है और यह संसार बार-बार उत्पन्न होता है। जिनकी आशा, कर्म और ज्ञान १० विफल है, जिनके अन्तःकरण में विवेक का लेश भी नहीं है और जो लोग राक्षसी आसुरी आदि मोहमयी प्रकृति का आश्रय लिये हुए हैं—उसके वशीभूत हैं—वही मेरे सर्वभूत-महेश्वररूप परम तत्त्व को अवगत न होकर, मुझको मनुष्य-देहधारी जानकर, मेरी अवज्ञा करते हैं। किन्तु महात्मागण दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर, मुझे सब प्राणियों के आदि और अव्ययरूप से जान-कर, अनन्य हृदय से मेरी आराधना करते हैं। वे सदा दृढ़व्रत और संयत होकर मेरे नामों

का कीर्त्तन, निरन्तर भक्ति के साथ मुझे नमस्कार और मेरी उपासना करते हैं। और, कोई तत्त्वज्ञानरूप यज्ञ, कोई अभेद-भावना, कोई पृथक्-कल्पना आदि के द्वारा, और कोई मुझे सर्वरूप समझकर रुद्र आदि नाना रूपों से मेरी आराधना करते हैं। हे पार्थ! यज्ञ, स्वधा, ओषधि, मन्त्र, आज्य, अग्नि और हवन मेरे ही रूप हैं। मैं ही इस जगत् का पिता, माता, विधाता और पितामह हूँ। मैं वेद्य, पवित्र, ओंकार, ऋक्, साम और यजुः हूँ। मैं गति, भर्ता, प्रभु, साक्षी, निवास, शरण, सुहृद्, प्रभाव, प्रलय, निधान, लयस्थान और अक्षय बीज हूँ। मैं वर्षा करता हूँ और तपता हूँ; मैं जल को पृथ्वी से खींचता हूँ और पृथ्वी पर बरसाता हूँ। अमृत, मृत्यु, सत् और असत् मैं ही हूँ। त्रिवेद-विहित कर्मों का अनुष्ठान करनेवाले सोमपायी विगत-पाप महात्मागण यज्ञानुष्ठानपूर्वक मेरी उपासना करके स्वर्ग-प्राप्ति की इच्छा करते हैं। उसके बाद २० वे परम पवित्र स्वर्गलोक में पहुँचकर सम्पूर्ण उत्कृष्ट देवभोगों का उपभोग करते हैं। स्वर्गलोक के भोग भोगने से पुण्य क्षीण होने पर वे फिर मनुष्यलोक में लौट आते हैं। वे इस प्रकार भोगाभिलाषी और वेदत्रयविहित कर्मकाण्ड के अनुष्ठान में तत्पर होकर बारम्बार आवागमन के फेर में पड़े रहते हैं। जो लोग अनन्य हृदय से मेरा चिन्तन और उपासना करते हैं, उन सब नित्य-भक्तियुक्त व्यक्तियों के योग-क्षेम को मैं वहन करता हूँ। जो लोग भक्ति और श्रद्धा के साथ पवित्र हृदय से अन्य देवताओं की पूजा करते हैं वे भी अविधिपूर्वक मेरी ही उपासना करते हैं। मैं ही सब यज्ञों का भोक्ता और प्रभु हूँ; किन्तु वे मेरे तत्त्व को अवगत न होने के कारण स्वर्ग से भ्रष्ट हुआ करते हैं। देवव्रत में अनुरक्त व्यक्ति देवगण को, पितृव्रतनिष्ठ व्यक्ति पितरों को, भूतों की आराधना में निरत व्यक्ति भूतगण को और मेरे उपासक मुझे प्राप्त होते हैं। जो पवित्रात्मा पुरुष मुझे पत्र, पुष्प, फल, जल आदि कुछ भी अर्पण करता है उसकी वह भक्ति-पूर्वक दी हुई सामग्री मैं ग्रहण करता हूँ। हे पार्थ! तुम जो कुछ करते हो, जो खाते-पीते हो, जो हवन करते हो, जो देते हो और जो तप करते हो वह सब मुझे अर्पण कर दो। ऐसा करने से कर्मनिबन्धन शुभाशुभ फल से मुक्त होकर, संन्यासयोगयुक्त हृदय से मुक्तिलाभपूर्वक, तुम अन्त को मुझे प्राप्त होओगे। मैं सब प्राणियों में समान भाव से स्थित हूँ। कोई मेरा मित्र या शत्रु नहीं है। जो लोग भक्तिपूर्वक मुझे भजते हैं वे मुझमें ही अधिष्ठित या लीन होते हैं और मैं भी उन भक्तों के हृदय में रहता हूँ। अत्यन्त दुराचारी व्यक्ति भी अन्य देवताओं को छोड़-कर मेरी उपासना करने से साधु गिना जा सकता है; क्योंकि उसका अध्यवसाय बहुत अच्छा ३० है, और वह शीघ्र ही धार्मिक होकर निरंतर शान्ति सुख भोग करता है। हे पार्थ, मेरा भक्त कभी नष्ट या भ्रष्ट नहीं होता। स्त्री, शूद्र, वैश्य अथवा और पाप-योनि पुरुष भी मेरी शरण में आने से, परम गति को प्राप्त होते हैं। अतएव पवित्र पण्डित ब्राह्मणों और भक्तिपरायण राज-र्षियों के मेरे शरणागत होने पर उनकी परम गति के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं है। हे

अर्जुन, तुम इस अनित्य और असुखमय लोक में मुझे ही भजो। अनन्य-हृदय और अनन्य-भक्त होकर मुझे ही प्रणाम करो। मुझमें इस प्रकार मन लगाने से, मेरी पूजा करने से, अन्त में तुम मुझको प्राप्त होओगे। ३४

चौंतीसवाँ अध्याय

विभूतियोग का वर्णन

कृष्णचन्द्र कहते हैं—हे महाबाहो! तुम मुझ पर परम प्रीति रखते हो, इस कारण तुम्हारे हित की इच्छा से जो मैं फिर श्रेष्ठ उपदेश करता हूँ उसे मन लगाकर सुनो। देवता या ऋषि-गण, कोई भी मेरे प्रभाव को नहीं जानते। मैं ही सब देवताओं और महर्षियों का आदि हूँ। जो मुझे अनादि, अज और सब लोकों का महान् ईश्वर जानते हैं वे इस जीवलोक में मोहशून्य और सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। बुद्धि, ज्ञान, असंमोह, क्षमा, सत्य, दम, शम, सुख, दुःख, भव, भाव, भय, अभय, अहिंसा, समता, तुष्टि, तप, दान, यश, अयश आदि सब भिन्न-भिन्न भाव प्राणियों में मुझसे ही होते हैं। पूर्व समय के सनक आदि चारों ऋषि, भृगु आदि सातों महर्षि और सब मनु मेरे ही प्रभाव से सम्पन्न और मेरे ही मन से उत्पन्न हुए हैं। सब लोग उन्हीं की सन्तान हैं। इसमें सन्देह नहीं कि जो कोई मेरे योग और मेरी विभूतियों को जानता है वह स्थिर ज्ञान का अधिकारी होकर अचल योग से युक्त होता है। मैं इस जगत् की उत्पत्ति का कारण हूँ, मुझसे ही मनुष्यों की बुद्धि आदि की स्फूर्ति होती है। ज्ञानी पण्डित ऐसा ही मानकर मेरी आराधना करते हैं। वे मन और प्राण को मुझमें ही स्थापित करके, एक दूसरे को मेरा ज्ञान कराते हैं। वे मेरा वर्णन करके सन्तुष्ट होते हैं, शान्ति पाते हैं और मुझमें ही रमते हैं। वे निरन्तर भक्तियुक्त होकर प्रीतिपूर्वक मेरी उपासना करते हैं; मैं भी उन्हें वह बुद्धि-योग देता हूँ, जिसके द्वारा वे मुझे प्राप्त होते हैं। उन पर कृपा करने के लिए मैं उनके हृदय में १० स्थित होकर समुज्ज्वल ज्ञान-दीपक के द्वारा अज्ञान-जनित अन्धकार को दूर करता हूँ।

अर्जुन ने कहा—हे केशव! देवर्षि नारद, असित, देवल, व्यास और अन्यान्य ऋषिगण आपको परब्रह्म, परमधाम, परम पवित्र, शाश्वत पुरुष, दिव्य, आदिदेव, अजन्मा और असीम-प्रतापशाली कहते हैं; इस समय आप भी अपने को वैसा ही बता रहे हैं। हे वासुदेव! आप जो कहते हैं, सब सच है। देवता या दानव कोई भी आपको स्पष्ट रूप से नहीं जानते। आप स्वयं अपने को जानते हैं। हे पुरुषोत्तम, हे भूतभावन, हे भूतेश, हे देव-देव, हे जगदीश्वर! अब आप अपनी उन विभूतियों का विस्तार से वर्णन कीजिए, जिनसे आपने सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त कर रक्खा है। हे विभो, आप परम योगी हैं। मैं किस तरह सदा ध्यान-चिन्तन करके आपको जान सकूँगा? आपके किस-किस भाव का ध्यान करूँगा? अब आप फिर

विस्तार के साथ अपने योग और विभूतियों का वर्णन कीजिए। आपके अमृततुल्य वचन सुनकर मेरे कान किसी तरह तृप्त ही नहीं होते।

भगवान् ने कहा—हे कुरुकुलश्रेष्ठ, मेरी विभूतियों की तो संख्या ही नहीं है, इसलिए मैं अपनी प्रधान-प्रधान दिव्य विभूतियों का वर्णन करता हूँ। हे पार्थ, मैं सब प्राणियों में अन्त-
२० र्यामी आत्मा हूँ। मैं ही सबका आदि, मध्य और अन्त हूँ। मैं आदित्यों में विष्णु, ज्योतिर्मय पदार्थों में अंशुमाली सूर्य, मरुद्गण में मरीचि, नक्षत्रों में चन्द्रमा, वेदों में सामवेद, देवताओं में इन्द्र, इन्द्रियों में मन, भूतगण में चेतना, रुद्रों में शङ्कर, यक्षों और राक्षसों में कुवेर, वसुओं में अग्नि, पर्वतों में सुमेरु, पुरोहितों में बृहस्पति, सेनापतियों में स्कन्द, जलाशयों में सागर, महर्षियों में भृगु, वाक्यों में प्रणव, यज्ञों में जपयज्ञ, स्थावरों में हिमालय, वृक्षों में पीपल, देवर्षियों में नारद, गन्धर्वों में चित्ररथ, सिद्धों में कपिल, घोड़ों में समुद्र के मथने से उत्पन्न उच्चैःश्रवा और हाथियों में ऐरावत हूँ। हे अर्जुन! मैं मनुष्यों में राजा, आयुधों में वज्र, गउओं में कामधेनु और उत्पत्ति के कारणों में कामदेव हूँ। मैं विषैले साँपों में वासुकि, विषहीन नागों में शेष, जलचरों में वरुण, पितृगण में अर्यमा, नियन्ता लोगों में यमराज, दैत्यों में प्रह्लाद, गणना
३० करनेवालों में काल, पशुओं में सिंह, पक्षियों में गरुड़, वेगशालियों में पवन, शस्त्रधारियों में राम, मत्स्यों में मगर और नदियों में गङ्गा हूँ। हे अर्जुन! सर्गों में आदि, मध्य और अन्त मैं हूँ—अर्थात् सृष्टि, स्थिति, प्रलय मैं हूँ। विद्याओं में आत्मविद्या, वाद करनेवालों में वाद, अक्षरों में अकार, समासों में द्वन्द्व, अक्षयों में काल, विधाताओं में सर्वतोमुख विधाता, संहार करनेवालों में मृत्यु और अभ्युदयशीलों में अभ्युदय मैं हूँ। नारियों में कीर्ति, श्री, वाणी, स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा मैं हूँ। सामवेद में बृहत्साम, छन्दों में गायत्री, महीनों में अगहन और ऋतुओं में वसन्त मैं हूँ। छलनाओं में द्यूत, तेजस्वियों में तेज, जयशीलों में जय, उद्योगियों में उद्यम और सत्त्वशालियों में सत्त्व मैं हूँ। वृष्णिवंशियों में वासुदेव, पाण्डवों में तुम, मुनियों में व्यास और कवियों में शुक्र मैं हूँ। दण्डधारियों में दण्ड, जय की इच्छा रखनेवालों में नीति, गुह्य विषयों में गोपन का कारण मौन और ज्ञानियों में ज्ञान मैं हूँ। हे अर्जुन, सब प्राणियों का और जो कुछ बीज है सो मैं हूँ। चराचर जगत् में ऐसी कोई वस्तु नहीं जो मेरे बिना हो। इसी कारण मेरी दिव्य विभूतियों की संख्या नहीं है! हे पार्थ, यह संक्षेप से मैंने अपनी
४० दिव्य विभूतियों का वर्णन कर दिया। मतलब यह कि संसार में जो कुछ विभूतियुक्त, श्री-सम्पन्न या वृद्धिशाली वस्तु है उसे मेरे तेज के अंश से उत्पन्न समझो। हे पार्थ, मेरी विभूतियों को अलग करके जानने की आवश्यकता नहीं है। बहुत कहने की ज़रूरत नहीं—मैं
४२ अपने एक अंश से इस जगत् को व्याप्त और धारण किये हुए स्थित हूँ।

———

पैंतीसवाँ अध्याय

विश्वरूप का दर्शन

अर्जुन ने कहा—हे वासुदेव! आपने मुझ पर कृपा होने के कारण जो परमगुह्य अध्यात्मविषय का वर्णन किया, उसके द्वारा मेरे हृदय से मोह का अँधेरा दूर हो गया। हे कमलनयन! मैंने आपके श्रीमुख से प्राणियों की उत्पत्ति और लय का वर्णन तथा आपका अक्षय अनन्त माहात्म्य सुना। हे पुरुषोत्तम! आपने जो अपने ईश्वररूप का वर्णन किया, उस विश्वव्यापी विराट् रूप को देखने की मुझे बड़ी ही इच्छा है। जो आप मुझे वह रूप देखने का अधिकारी समझें तो वह रूप दिखला दें।

भगवान् ने कहा—हे पार्थ! मेरे अनेक प्रकार के, अनेक वर्ण और आकारवाले, सैकड़ों-हज़ारों दिव्य रूप देखो। हे भारत! मेरे इस रूप में बहुत से अदृष्टपूर्व आश्चर्य और आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, मरुद्गण, अश्विनीकुमार तथा और जो कुछ देखना चाहते हो सो सब देखो। मेरे शरीर में चराचर जगत् एकत्र देखोगे; किन्तु तुम इसी दृष्टि से मेरा वह विश्वरूप नहीं देख सकते। मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि देता हूँ; तुम मेरी विभूति को देखो।

सञ्जय धृतराष्ट्र से कहते हैं—महाराज, अब महायोगेश्वर हरि ने अपना वह ईश्वररूप दिखाया। अर्जुन ने देखा कि अनेक मुख, अनेक नयन, अनेक दिव्य आभूषण, अनेक उद्यत दिव्य शस्त्र, दिव्य माला और वस्त्र उस रूप की शोभा बढ़ा रहे हैं। वह अनेक अद्भुत दृश्यों से शोभित, १० दिव्य अनुलेपन आदि से मण्डित, सर्वतोमुख, अनन्त, परम प्रकाशमान रूप देखकर अर्जुन अवाक् हो गये। यदि आकाश में एक साथ सहस्र सूर्यों का उदय हो तो शायद महात्मा कृष्ण के उस तेजोमय रूप की प्रभा का अनुभव किया जा सके। अर्जुन ने श्रीकृष्ण के उस विश्वरूप में मनुष्य, देवता, पितर आदि को अनेक स्थलों में विभक्त और सब जगत् को एकत्र देखा।

तब उन्होंने अत्यन्त विस्मित होकर, सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर कृष्णचन्द्र को प्रणाम किया। अर्जुन के रोंगटे खड़े हो गये। उन्होंने कहा—हे विश्वरूप! मैं आपके शरीर में सब देवताओं, जरायुज-अण्डज-स्वेदज-उद्भिज सब प्राणियों, कमलासन पर स्थित भगवान् ब्रह्मा, दिव्य ऋषियों और नागों आदि को देख रहा हूँ। भगवन्! अनेक बाहुओं, अनेक उदरों, अनेक मुखों और अनेक नेत्रोंवाले आपके अनन्त रूप को तो मैं देख रहा हूँ; परन्तु हे विश्वेश्वर, हे विश्वरूप! आपका आदि, मध्य और अन्त कुछ नहीं देख पड़ता। मैं देख रहा हूँ कि आप किरीट, गदा और चक्र धारण किये, तेजोराशि, सूर्य और अग्नि के सदृश तेजस्वी, परम दीप्तिमान्, दुर्निरीक्ष्य और अप्रमेय हैं। मोक्ष की इच्छा रखनेवालों के लिए आप अक्षय, परब्रह्म, ज्ञातव्य विषय हैं। आप इस विश्व के परम निदान या अधिष्ठान हैं। आप अव्यय, नित्य धर्म के रक्षक और

सनातन पुरुष हैं। प्रदीप्त अग्नि आपके मुखमण्डल में विराजमान है। आपका तेज समग्र विश्व को तपा रहा है। चन्द्र और सूर्य आपके नेत्र हैं। आपका आदि, मध्य और अन्त नहीं है। आपका वीर्य और भुजाएँ अनन्त हैं। आप अकेले ही सब दिशाओं को, पृथ्वी-मण्डल और अन्तरिक्ष को व्याप्त किये हुए हैं। हे महात्मा, आपके इस उग्र और अद्भुत रूप
२० को देखकर सब लोग अत्यन्त भयभीत और उद्विग्न हो रहे हैं। सब देवता आपके शरणागत होकर "त्राहि त्राहि" कर रहे हैं। कोई-कोई डरकर, हाथ जोड़कर, आपसे रक्षा के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। महर्षि और सिद्धगण "स्वस्ति" कहकर आपकी स्तुति कर रहे हैं। रुद्र, आदित्य, वसु, साध्य, मरुद्गण, पितर, गन्धर्व, यक्ष, असुर, विश्वेदेवा, सिद्धगण और अश्विनीकुमार आदि देवता विस्मय के साथ आपके रूप को देख रहे हैं। हे महाबाहो! आपके अनेक मुखों, अनेक बाँहों, अनेक ऊरुओं, अनेक नेत्रों, अनेक चरणों, अनेक उदरों और अनेक दंष्ट्राओं आदि से युक्त इस भयङ्कर रूप को देखकर तीनों लोकों सहित मैं अत्यन्त व्यथित हो रहा हूँ। मैं आपको आकाशस्पर्शी, दीप्तिशील, विविधवर्णयुक्त, विशाल लोचन, मुँह फैलाये देखकर किसी तरह धैर्य और शान्ति धारण करने के लिए समर्थ नहीं होता। हे जगदीश्वर, कालाग्नि-सदृश भयङ्कर दन्तावली से परिपूर्ण आपके इस मुखमण्डल को देखकर मैं बेचैन हो रहा हूँ। मुझको दिग्भ्रम सा हो रहा है। हे देवेश, हे जगन्नाथ, हे विष्णु! आप प्रसन्न हों।

हे देवदेव! सब राजाओं सहित कर्ण, जयद्रथ, दुर्योधन, भीष्म और द्रोण आदि धृतराष्ट्र-पुत्रों के पक्षवाले योद्धाओं के साथ शिखण्डी, धृष्टद्युम्न आदि सब हमारे पक्ष के योद्धा शीघ्रता के साथ आपके दंष्ट्राओं से कराल मुखों के भीतर चले जा रहे हैं। उनमें किसी-किसी का मस्तक चूर्ण हो गया है, और वे आपके दाँतों की सन्धि में चिपके हुए देख पड़ते हैं। जैसे सब नदियों का प्रवाह समुद्र में जाता है, वैसे ही सब नर-वीर आपके समुज्ज्वल मुखमण्डल में अपने आप दौड़-दौड़कर प्रवेश कर रहे हैं। पतङ्ग जैसे जान-बूझकर प्रबल वेग से प्रज्वलित आग के भीतर जा गिरते हैं, वैसे ही ये सब वीर उत्साह के साथ आपके मुखों में प्रवेश कर रहे हैं। हे विष्णु, आप प्रज्वलित मुखों की परम्परा में चारों ओर के सब लोगों को लीलते जा रहे हैं। आपकी दीप्ति अत्यन्त अधिक प्रस्फुरित होकर सम्पूर्ण जगत् को, व्याप्त करती
३० हुई, तीव्र वेग से तपा रही है। इसलिए मेरे आगे प्रकट कीजिए कि आप कौन हैं। हे देवेश, आपको नमस्कार है; आप प्रसन्न हों। मैं नहीं जानता कि आप किसलिए ऐसे संहार के भयानक कार्य में प्रवृत्त हुए हैं। जान पड़ता है, आप आदि-पुरुष होंगे। जो हो, आपका विशेष परिचय प्राप्त करने की मुझे अत्यन्त इच्छा है।

भगवान् ने कहा—मैं सबका संहार करनेवाला काल हूँ। इस समय लोकसंहार में प्रवृत्त हुआ हूँ। तुम्हारे सिवा, भिन्न-भिन्न सेना-विभागों में स्थित, सभी योद्धा इस समय काल का कौर

बनेंगे। इसलिए तुम युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। शत्रुओं को मारकर, यश प्राप्त करके, सुसमृद्ध राज्य करो। हे सव्यसाची, ये सब लोग मेरे प्रभाव से पहले ही नष्टप्राय हो चुके हैं; इस समय तुम तो इन लोगों के संहार का निमित्तमात्र हो। मैं द्रोण, कर्ण, भीष्म, जयद्रथ और अन्यान्य योद्धाओं को मार चुका हूँ। अब तुम सहज ही इन्हें युद्ध में मारो। किसी तरह का सन्ताप मत करो। इस समय उठकर युद्ध में प्रवृत्त हो जाओ; निःसन्देह शत्रुओं को जीत लोगे।

वासुदेव की बातें सुनकर अत्यन्त डरे और काँपते हुए अर्जुन ने हाथ जोड़कर, बारम्बार प्रणाम करके, गद्गद वाणी से कहा—हे हृषीकेश! समय पर आपके माहात्म्य का कीर्तन करने से सम्पूर्ण जगत् सन्तुष्ट और अनुरक्त होता है, राक्षसगण या दुष्ट राजा लोग डर के मारे इधर-उधर दसों दिशाओं में भाग जाते हैं, योग तप और मन्त्र आदि से सिद्धि पाये हुए पुरुष आपको प्रणाम करते हैं। हे अनन्त, हे महात्मा, हे देवेश, हे जगन्निवास! आप ब्रह्मा के भी आदिकर्ता हैं, उनके भी गुरु हैं। फिर आपको क्यों न सब जगत् के लोग प्रणाम करें? हे अनन्त, आप आदिदेव और सनातन पुरुष हैं। आप इस विश्व का परम आश्रयस्थान हैं। आप ही ज्ञाता और आप ही ज्ञेय हैं। आप ही परमधाम विष्णुपद हैं। आप सर्वत्र व्याप्त हैं। आप वायु, अग्नि, यम, वरुण और चन्द्र हैं। आप पितामह और प्रपितामह हैं। हे सब लोकों के ईश्वर, आपको सहस्र-सहस्र नमस्कार है। हे विश्वात्मन्, विश्वरूप! आपको आगे, पीछे और सब ओर प्रणाम है। आपकी शक्ति अनन्त और पराक्रम अपार है। सभी पदार्थ आपका स्वरूप हैं। इसी कारण आपको सर्वरूप कहते हैं। हे विभो! मैंने आपकी महिमा न जानकर, प्रमाद या प्रणय के कारण आपको सखा समझ, "हे कृष्ण, हे यादव, हे सखा" आदि कहा है; आपके अचिन्त्य प्रभावशाली होने पर भी, बन्धु-बान्धवों के सामने और पीछे भी भोजन, विहार, शयन, आसन आदि के समय अनेक प्रकार की हँसी-दिल्लगी की है। उस अपराध के लिए मैं इस समय आपसे क्षमा की प्रार्थना कर रहा हूँ। हे अपरिमित प्रभावशाली महापुरुष! आप

४१

सबके पिता, पूज्य, गुरु और गुरु से भी बढ़कर गौरवशाली हैं। त्रिभुवन में कोई भी आपके समान या आपसे श्रेष्ठ नहीं है। आप सभी के नियन्ता और स्तुति के पात्र हैं। इसलिए मैं दण्डवत् प्रणाम करके आपकी प्रसन्नता के लिए प्रार्थना करता हूँ। जैसे पिता पुत्र का, सुहृद् सुहृद् का, प्रिय प्रिय व्यक्ति का अपराध क्षमा करता है, वैसे आप भी मेरे सब अपराध क्षमा कीजिए। हे देवेश, हे जगन्निवास! आपके इस अदृष्टपूर्व रूप को देखकर मैं जैसे सन्तुष्ट हुआ हूँ, वैसे ही डर के मारे मेरा अन्तःकरण बहुत ही विचलित हो रहा है। इसलिए हे देव! प्रसन्न हूजिए; मुझे वही अपना पहले का रूप दिखाइए। मैं आपका वह किरीट, गदा, चक्र आदि से शोभित पहला रूप देखने के लिए अत्यन्त उत्सुक हो रहा हूँ। हे विश्वमूर्ति, आप इस विश्वरूप को छिपाकर उसी चतुर्भुज रूप से प्रकट हूजिए।

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन, तुम क्यों डर रहे हो? मैंने प्रसन्न होकर ही तुमको यह अपना आदिम तेजोमय रूप दिखलाया है। तुम्हारे सिवा और कभी किसी ने मेरा यह अनन्त विश्वमय रूप नहीं देखा। हे कुरुश्रेष्ठ! तुम्हारे सिवा और कोई अध्ययन, दान, पुण्य और उग्र तप के द्वारा भी मेरे इस रूप को नहीं देख सकता। इस समय तुमको अत्यन्त भय और मोह ने घेर रक्खा है, इसलिए तुम्हारा डर और मोह दूर करने को मैं तुम्हें अपना पहला ही रूप दिखाता हूँ। तुम निडर होकर प्रसन्नतापूर्वक वह रूप देखो।

अब वही पहले की प्रसन्न-मूर्ति धारण कर भगवान् ने अर्जुन को, पहला रूप दिखाकर, ५० ढाढ़स बँधाया। इसके बाद अर्जुन ने कहा—हे हृषीकेश, आपकी यह सौम्य मूर्ति देखने से मेरा चित्त प्रसन्न हो गया, मैं स्वस्थ हूँ।

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन, तुमने जो मेरा विश्वरूप देखा है उसे देखना अत्यन्त दुर्घट है। देवता भी इसे देखने की इच्छा रखते हैं। हे शत्रुसन्तापन! वेदाध्ययन, दान, तप या यज्ञ करके भी कोई मेरे इस विश्वरूप को नहीं देख सकता। मेरा अनन्य भक्त ही शास्त्र से, परमार्थ से और तादात्म्य रूप से मेरा यह रूप देख सकता है। पुत्र आदि में अनासक्त, प्राणियों से वैर न रखनेवाला और मेरी भक्ति को ही पुरुषार्थ या परमार्थ माननेवाला पुरुष, जो ५५ मेरा आश्रय ग्रहण करके मेरे ही उद्देश से सब कर्म करता है, वही मुझे प्राप्त होता है।

छत्तीसवाँ अध्याय

भक्तियोग का वर्णन

अर्जुन ने कहा—हे केशव! आप विश्वरूप, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् हैं। जो लोग तद्गत हृदय से आपकी उपासना करते हैं, और जो लोग अव्यक्त और निर्विशेष ब्रह्म की उपासना करते हैं, उन दोनों में कौन श्रेष्ठ है? यह बताइए।

भगवान् ने कहा—जो लोग श्रद्धा के साथ मुझमें ही मन लगाकर मेरे ही लिए कर्मों का अनुष्ठान करते हैं वे ही, मेरे मत में, श्रेष्ठ हैं। जो लोग सब प्राणियों का हित करते हैं, सर्वत्र समबुद्धि होकर अव्यक्त ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे भी मुझे ही प्राप्त होते हैं। उनमें विशेषता यही है कि देहाभिमानियों की अव्यक्त ब्रह्म में निष्ठा होना अनायास साध्य नहीं है; इसी कारण अव्यक्त ब्रह्म की उपासना करने में अत्यन्त क्लेश होता है। और जो लोग अनन्य भाव से मुझमें ही मन को लगाकर, मुझको ही सब कर्म अर्पण कर, एकान्त भक्ति के साथ मेरा ध्यान और उपासना करते हैं, उन्हें मैं बहुत ही शीघ्र इस मृत्यु-दूषित संसार से उबार लेता हूँ। इस कारण तुम मुझमें मन और बुद्धि अर्पण करके मुझे ही भजो। ऐसा करने से निःसन्देह शरीर त्यागने पर मुझमें लीन हो जाओगे।

हे धनञ्जय, यदि अन्तःकरण मुझमें स्थिर न हो तो अभ्यासयोग द्वारा मुझे प्राप्त होने की इच्छा करो। अगर उसमें भी अपने को अशक्त देखो तो ऐसे कर्म करो जिनसे मैं प्रसन्न होऊँ। मेरे उद्देश से उन सब कर्मों का अनुष्ठान करने से सिद्धि पा लोगे। इसमें भी अगर अपने को असमर्थ समझो तो सब प्रकार के कर्मफल की इच्छा त्यागकर चित्त का संयम करके मेरी शरण में आओ। अभ्यास की अपेक्षा ज्ञान, ज्ञान की अपेक्षा ध्यान और ध्यान की अपेक्षा कर्मफल का त्याग श्रेष्ठ है। कर्मफल के त्याग से ही परम शान्ति मिलती है। किसी भी प्राणी से द्वेष न करनेवाला, ममता और अहङ्कार से शून्य, सुख और दुःख को समान समझनेवाला, क्षमाशील, सदा सन्तुष्ट, जितेन्द्रिय, दृढ़निश्चय, मन और बुद्धि को मुझमें अर्पण करनेवाला, मेरा अनन्य भक्त मुझे प्रिय है। जिससे लोगों को उद्वेग नहीं होता और जो स्वयं लोगों से उद्विग्न नहीं होता; जो हर्ष, अमर्ष, भय और उद्वेग से शून्य है, वही मुझे प्रिय है। अपेक्षारहित (निःस्पृह), विशुद्धचित्त, व्याधिशून्य और सर्वारम्भ(काम्य कर्म)-परित्यागी मेरा भक्त ही मुझे प्रिय है। जो हर्ष, द्वेष, शोक और आकांक्षा से रहित मेरा भक्त है, वही मुझे प्रिय है। जो शत्रु-मित्र, मान-अपमान, शीत-उष्ण, सुख-दुःख और स्तुति-निन्दा को समान मानता है, जो वाणी को संयत रखता है तथा जो कुछ मिल जाय उसी में जो सन्तुष्ट और स्थिर बुद्धिवाला है, वही मेरा भक्त मुझे प्रिय है। जो लोग श्रद्धापूर्वक मेरा आश्रय लेकर इस धर्मरूप अमृत की उपासना करते हैं, वे मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।

सैंतीसवाँ अध्याय

क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ योग का वर्णन

अर्जुन ने कहा—हे केशव! मैं आपके श्रीमुख से प्रकृति, पुरुष, क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ, ज्ञान और ज्ञेय का वर्णन सुनना चाहता हूँ।

भगवान् ने कहा—हे पाण्डव, इस शरीर को क्षेत्र कहते हैं। इस क्षेत्र के विषय को जो अच्छी तरह जानता है उसे, इस विषय के ज्ञाता लोग, क्षेत्रज्ञ कहते हैं। हे भारत, सब क्षेत्रों में मुझको ही क्षेत्रज्ञ समझो। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का जो ज्ञान है वही, मेरे मत से, यथार्थ ज्ञान है। वह क्षेत्र जैसे स्वभाव से युक्त, जिन इन्द्रियों के विकार से युक्त, जिस प्रकार की प्रकृति और पुरुष के संयोग से उत्पन्न, जिन स्थावर-जङ्गम आदि भेदों से विभिन्न और जैसे प्रभाववाला है, सो सब मैं संक्षेप से कहता हूँ—सुनो। वशिष्ठ आदि ऋषियों ने, विविध छन्दों में, युक्तियुक्त ब्रह्मसूत्रपदों के द्वारा निश्चित रूप से, अनेक प्रकार से, इन विषयों का निरूपण किया है। पञ्चमहाभूत, अहङ्कार, बुद्धि, मूलप्रकृति, ग्यारह इन्द्रियाँ, पाँच इन्द्रियों के विषय, इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, चेतना और धृति, इन क्षेत्र के विषयों का संक्षेप से मैंने तुम्हारे आगे वर्णन कर दिया। मान और दम्भ का त्याग, अहिंसा, क्षमा, सरलता, आचार्य की उपासना, शौच, स्थिरता, आत्मनिग्रह (मन का दमन), विषय-भोग से वैराग्य, अहङ्कार न होना, जन्म-मृत्यु-जरा और व्याधि से उत्पन्न दुःख के दोषों का ज्ञान, पुत्र-स्त्री-घर आदि में आसक्ति न होना और अनभिष्वङ्ग, इष्ट तथा अनिष्ट वस्तुओं के प्रति सदा समभाव, अनन्य भाव से १० मेरी भक्ति, आनन्ददायक एकान्त स्थान में स्थिति, भीड़-भाड़ से अलग रहना, अध्यात्मज्ञान में निष्ठा और तत्त्वज्ञान के लिए मोक्ष की आलोचना—ये सब ज्ञानसाधन के उपाय हैं। इसके विपरीत आचरण अज्ञान का कारण कहा गया है।

हे अर्जुन! अब मैं तुम्हारे आगे ज्ञेय का निरूपण करता हूँ, सुनो। इसको जान लेने से मोक्ष मिलता है। वह (ज्ञेय) अनादि ब्रह्म मेरा निर्विशेष रूप है। वह न तो सत् है और न असत्। उसके हाथ-पैर, नेत्र, कान और मुख सर्वत्र विद्यमान हैं और वह स्वयं सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। वह सब प्रकार की इन्द्रियों से रहित है, किन्तु इन्द्रियों और उनके सब विषयों का प्रकाशक है। वह सङ्ग-रहित होकर भी सबका आधारस्वरूप है। वह गुण-हीन है, किन्तु सब गुणों का भोग करनेवाला है। वह सब चराचर प्राणियों के भीतर और बाहर है। वह सूक्ष्मतम होने के कारण अविज्ञेय है। वह दूरस्थ होकर भी निकटस्थ है। वह सब प्राणियों में अविभक्त रहकर भी भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न रूप से स्थित सा जान पड़ता है। वही सब प्राणियों की सृष्टि, रक्षा और संहार करनेवाला है। वह ज्योतिर्मय पदार्थों की ज्योति और अज्ञान से परे है। वह ज्ञान, ज्ञेय, ज्ञानगम्य और सबके हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित है। हे कौन्तेय, मैंने यह संक्षेप से तुम्हारे आगे ज्ञान-ज्ञेय और क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ का वर्णन कर दिया। मेरे भक्त लोग इन बातों को जानकर मेरे भाव को प्राप्त होते हैं।

प्रकृति और पुरुष दोनों को अनादि जानो। देह, इन्द्रिय आदि विकार और सुख-दुःख आदि गुण सब प्रकृति से उत्पन्न हैं। पुरुष प्रकृति में स्थित रहकर सब गुणों का भोग करता

है। शरीर और सब इन्द्रियों के कर्तृत्व के विषय में प्रकृति कारण है, और सुख-दुःख के भोग के विषय में पुरुष कारण है। शुभाशुभ कर्मों को करानेवाला इन्द्रियसंसर्ग ही पुरुष के देव-तिर्यक् आदि सत्-असत् जन्मों का कारण है। प्रकृति अर्थात् देह में रहकर वह पुरुष प्रकृति के गुणों का भोग करता है। वह परम पुरुष उपद्रष्टा, अनुमन्ता (अनुमोदक), भर्ता और भोक्ता भी है। उसी को महेश्वर और परमात्मा भी कहते हैं। जो इस प्रकार पुरुष और प्रकृति को जानता है,वह गुणों के साथ सदा सर्वथा वर्त्तमान रहकर भी फिर संसार में जन्म नहीं लेता। कोई लोग ध्यान और मन के द्वारा आत्मा में ही आत्मा को देखते हैं। कोई सांख्य-योग द्वारा और कोई कर्मयोग के द्वारा उस परमात्मा के दर्शन पाते हैं। कोई स्वयं इस प्रकार न जानने के कारण औरों (आचार्य आदि) के निकट सुनकर उसके अनुसार आत्मा का चिन्तन और उपासना करते हैं। वे श्रुतिपरायण लोग भी मृत्यु को जीतकर मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। हे भारत! स्थावर या जङ्गम जो कोई वस्तु उत्पन्न होती है, वह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के संयोग से उत्पन्न होती है। उस संयोग का कारण अविवेक ही है। जो लोग चराचर प्राणियों में परमात्मा को देखते हैं, और उन चराचर प्राणियों के विनष्ट होने पर भी उस परमात्मा को अविनाशी देखते हैं, वे ही परमार्थ-दर्शी हैं। जो लोग परमात्मा को सर्वत्र समान भाव से स्थित देखते हैं, और अविद्या के द्वारा आप ही अपने आत्मा की हत्या नहीं करते, वे ही मुक्ति प्राप्त करते हैं—परम गति पाते हैं। जो यह देखता है कि सब कर्मों को प्रकृति ही करती है, आत्मा स्वयं कोई कार्य नहीं करता, उसी का देखना ठीक है। जब लोग यह देखते हैं कि सब भिन्न-भिन्न प्राणी एक प्रकृति में ही स्थित हैं, और प्रकृति से ही उनका विस्तार होता है, तब वे सच्चिदानन्द ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। वह सनातन परमात्मा देह में रहता हुआ भी स्वयं अनादि और निर्गुण होने के कारण न तो कुछ कर्म करता है, और न कभी किसी प्रकार कर्मफल में लिप्त होता है। जैसे आकाश सब पदार्थों में स्थित होकर भी किसी में लिप्त नहीं है, वैसे ही आत्मा सब देहों में होता हुआ भी देह के गुण-दोषों में लिप्त नहीं होता। हे भारत! जैसे एक ही सूर्य इस असीम विश्व को पूर्ण रूप से प्रकाशित करता है, वैसे ही एकमात्र परमात्मा सब शरीरों को प्रकाशित किये हुए है। जो लोग विशेष रूप से ज्ञानचक्षु के द्वारा क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के भेद को देखते हैं, और भौतिक प्रकृति से मोक्ष के उपाय को जानते हैं, वेही परम पद को पाते हैं। ३४

२० ३०

अड़तीसवाँ अध्याय

त्रिगुण-विभागयोग का वर्णन

भगवान् ने कहा—हे पार्थ! सर्वश्रेष्ठ मुनिगण जिसे जानकर परम सिद्धि प्राप्त करते हैं, उस ज्ञान का मैं तुम्हारे आगे वर्णन करता हूँ, सुनो। इस ज्ञान का आश्रय लेकर लोग

मेरे स्वरूप को प्राप्त करते हैं, और फिर सृष्टि-काल में भी जन्म नहीं लेते। उन्हें प्रलय-काल में भी व्यथित नहीं होना पड़ता। हे भारत, मेरी 'महत्' प्रकृति ही सब जीवों के गर्भाधान का स्थान है। मैं उसी में गर्भ स्थापित करता हूँ। उसी से सब प्राणियों की उत्पत्ति होती है। हे कौन्तेय! सब योनियों में जो मूर्तियाँ उत्पन्न होती हैं उनका पिता मैं ब्रह्मस्वरूप हूँ। महत्तत्त्व उनकी योनि है। उसमें मैं बीज स्थापित करता हूँ। प्रकृति से उत्पन्न सत्त्व, रज, तम नाम के तीनों गुण ही जीवों को सुख-दुःख में आबद्ध करते हैं। उन तीनों गुणों में, निर्मल होने के कारण, सत्त्वगुण ही सब इन्द्रियों का प्रकाशक है। उसी के प्रभाव से देहधारी लोग अपने को सुखी और ज्ञानी समझते हैं। रजोगुण अनुरागात्मक है। वह तृष्णा और आसक्ति से उत्पन्न हुआ है। वह देहधारियों को कर्म के बन्धन में बाँध रखता है। तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न हुआ है। वह देहधारियों को मोह, आलस्य और निद्रा से आच्छन्न कर रखता है। सत्त्वगुण सब जीवों को सुखी, रजोगुण कर्मासक्त और तमोगुण ज्ञान का नाश करके प्रमाद के वश में कर देता है। सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण को; रजोगुण, सत्त्वगुण और तमोगुण को; तमोगुण,
१० सत्त्वगुण और रजोगुण को अभिभूत करके प्रकट होता है। सत्त्वगुण जब बढ़ता है तब इस शरीर की सब इन्द्रियों में ज्ञान का प्रकाश होता है। रजोगुण जब बढ़ता है तब लोभ, (अग्नि-होत्र आदि की) प्रवृत्ति, (घर आदि) कर्म का आरम्भ, स्पृहा और अशान्ति उत्पन्न होती है। तमोगुण के बढ़ने पर विवेक-हीनता, अप्रवृत्ति, प्रमाद और मोह उपस्थित होता है। सत्त्वगुण बढ़ने की अवस्था में अगर कोई मरता है तो वह हिरण्यगर्भ के उपासक लोगों के समुज्ज्वल लोकों को जाता है। रजोगुण बढ़ने की अवस्था में अगर कोई मरता है तो वह मनुष्यलोक में जन्म लेकर कर्मों में आसक्त होता है। तमोगुण बढ़ने की अवस्था में अगर किसी का प्राणान्त होता है तो वह पशु आदि की योनियों में जन्म लेता है। सात्त्विक कर्म का फल अति निर्मल सुख है, राजस कर्म का फल दुःख है और तामस कर्म का फल अज्ञान है। सत्त्व से ज्ञान, रजोगुण से लोभ और तमोगुण से प्रमाद, मोह तथा अज्ञान उत्पन्न होता है। सात्त्विक लोग ऊर्ध्वगति प्राप्त करते हैं। राजस लोग मध्यगति प्राप्त करते हैं। जघन्य-गुण-सम्भूत भ्रम-मोह के वशीभूत तामस लोग अधोगति प्राप्त करते हैं। विवेक आदि सब गुणों को सब कार्यों का कर्त्ता समझने से और आत्मा को इन तीनों गुणों से परे जानने से मनुष्य मेरे भाव (ब्रह्मपद) को प्राप्त होते हैं। इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करने पर देहधारी लोग जन्म-
२० मृत्यु-जरा से बचकर मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

अर्जुन ने कहा—हे वासुदेव, मनुष्य जब इन तीनों गुणों से अतीत हो जाता है तब उसके क्या लक्षण होते हैं? कैसे आचरण होते हैं और तीनों गुणों को वह किस प्रकार अति-क्रमण करता है? यह भी कृपा करके मुझसे कहिए।

वासुदेव ने कहा—हे पाण्डव ! जो प्रकाश, प्रवृत्ति और मोह के प्रवृत्त होने पर उनसे द्वेष नहीं करता, और उनके निवृत्त होने पर उनकी इच्छा नहीं करता; जो उदासीन की तरह रहकर सुख-दुःख आदि गुणों के कार्यों द्वारा विचलित नहीं होता, बल्कि यह समझकर कि "सब गुण अपने-अपने कार्य में लगे हुए हैं, उनके साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है," धैर्य धारण किये रहता है, वही त्रिगुणातीत है। जो सुख-दुःख को समान मानता है, आत्मनिष्ठ है, वही त्रिगुणातीत है। धीमान्, मिट्टी-पत्थर और सुवर्ण को समदृष्टि से देखनेवाला, प्रिय और अप्रिय को एक समझनेवाला त्रिगुणातीत है। अपनी निन्दा और स्तुति, मान और अपमान, शत्रु और मित्र को तुल्य जाननेवाला व्यक्ति त्रिगुणातीत है। सब कर्मों को त्यागनेवाला अर्थात् कर्मफल की अपेक्षा न रखकर कर्म करनेवाला मनुष्य त्रिगुणातीत है। जो अत्यन्त अनन्य भक्ति के साथ मेरी सेवा करता है, वही सब गुणों से अतीत होकर मोक्ष प्राप्त करता है। हे पार्थ ! मैं ब्रह्म, नित्य, मोक्ष, सनातनधर्म और अखण्ड सुख की खान हूँ। २७

उनतालीसवाँ अध्याय

पुरुषोत्तम योग का वर्णन

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन, संसार एक अक्षय अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष है। इसकी जड़ ऊपर और शाखाएँ नीचे हैं। वेद इसके पत्ते हैं। इसके विषय को जो जानता है वही वेदज्ञ है। इस वृक्ष की शाखाएँ नीचे और ऊपर फैली हुई हैं। यह सत्त्व आदि गुणों के द्वारा परिवर्द्धित और रूप-रस आदि विषयों के द्वारा पल्लवित हुआ करता है। नीचे, मनुष्यलोक में, कर्मबन्धन रूप जड़ें फैली हुई हैं। इस वृक्ष का रूप नहीं देख पड़ता। न इसका आदि है, न अन्त है। यह किस प्रकार स्थित है, सो भी नहीं जाना जाता। सुदृढ़ निर्ममतारूप शस्त्र के द्वारा इस जड़ जमाये हुए वृक्ष को काटकर इसकी जड़ को खोजना चाहिए। उसे जिन्होंने पा लिया है, वे फिर संसार में लौटकर नहीं आते। जिससे पुरानी (प्राचीन संसार की) प्रवृत्ति प्रवर्तित हुई है उसी आदि-पुरुष के मैं शरणागत हूँ; यों कहकर उन्हीं के शरणागत होना चाहिए। जिन्होंने मान, मोह और पुत्र आदि के प्रति आसक्ति त्याग दी है, सुख-दुःख आदि द्वन्द्वधर्मों से अपना छुटकारा कर लिया है वे ही आत्मज्ञाननिष्ठ, निष्काम, आशा-शून्य महात्मा उक्त अव्यय पद को प्राप्त करते हैं। सूर्य, चन्द्र और अग्नि जिसे प्रकाशित करने में असमर्थ हैं, जिसे प्राप्त होकर फिर वहाँ से लौटना नहीं होता, वही मेरा परमधाम है। इस जीवलोक में सनातन जीव मेरा ही अंश है। वह प्रकृतिस्थ पाँचों इन्द्रियों को और मन को आकृष्ट करता है। जैसे हवा फूलों से गन्ध लेकर डालती है, वैसे ही जीव जब शरीर को ग्रहण करता है या त्यागता है

तब पूर्व शरीर से इन्द्रियों को खींचकर साथ ले जाता है। यह जीव श्रोत्र, चक्षु, त्वक्, रसना, प्राण और मन, इन छः इन्द्रियों में स्थित होकर सब विषयों को भोगता है। विमूढ़ हृदयवाले लोग देहान्तरगामी, देहावस्थित अथवा विषयभोगासक्त इन्द्रियविशिष्ट जीव को कभी नहीं देख
१० सकते। ज्ञान दृष्टिवाले महात्मा लोग ज्ञान के ही प्रभाव से उसे देखते हैं। योगी लोग प्रयत्न-पूर्वक देहस्थित जीव को देखते हैं; किन्तु अकृतात्मा अजितेन्द्रिय लोग लाख यत्न करके भी उसे देखने में असमर्थ ही रहते हैं। सूर्य, चन्द्र और अग्नि मेरे ही तेज से तेजस्वी होकर सब संसार को प्रकाशित करते हैं। मैं ओज के प्रभाव से पृथ्वी में प्रवेश करके सब प्राणियों को धारण किये हुए हूँ, और रसमय सोम होकर सब ओषधियों को पुष्ट करता हूँ। प्राण और अपान वायु के साथ शरीर में प्रविष्ट होकर मैं जठराग्नि स्वरूप से चार प्रकार के आहार को पकाता हूँ।

मैं सबके हृदय में प्रविष्ट हूँ। मुझसे ही स्मृति और ज्ञान का उदय तथा उनका अभाव होता है। सब वेद मेरा ही ज्ञान कराते हैं। मैं ही वेदान्त का कर्त्ता और वेदज्ञ हूँ। लोक में क्षर और अक्षर, दो पुरुष प्रसिद्ध हैं। उनमें सब प्राणी क्षर हैं, और कूटस्थ पुरुष अक्षर है। इनके सिवा और एक उत्तम पुरुष है, उसका नाम परमात्मा है। वह इन तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका प्रतिपालन कर रहा है। वही अव्यय ईश्वर है। मैं क्षर और अक्षर दोनों पुरुषों से बढ़कर हूँ। इसी कारण लोक और वेद में मैं पुरुषोत्तम कहलाता हूँ। जो व्यक्ति मोह-शून्य होकर मुझे पुरुषोत्तम जानता है, वही सर्वज्ञ है—वही सब प्रकार से मुझे भजता है। हे पार्थ, मैंने तुमको यह
२० परम गुह्य शास्त्रीय विषय सुनाया है। इसे जानने पर लोग बुद्धिमान् और कृतकार्य होते हैं।

चालीसवाँ अध्याय

दैवी और आसुरी सम्पत्तियों का वर्णन

वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन! जो लोग दैवी सम्पत्ति को लक्ष्य कर जन्मते हैं उनमें अभय, चित्तशुचि, आत्मज्ञान की निष्ठा, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, सरलता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, दुष्टता का अभाव, सब प्राणियों पर दया, लोभशून्यता, कोमलता, ह्री, अचञ्चलता, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह और अभिमान का अभाव, ये छब्बीस गुण स्वाभाविक होते हैं। जो लोग आसुरी सम्पत्ति को लक्ष्य करके जन्म लेते हैं उनमें दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, निष्ठुरता और अज्ञान आदि दुर्गुण स्वाभाविक होते हैं। दैवी सम्पत्ति मोक्ष का और आसुरी सम्पत्ति बन्धन का कारण होती है। हे अर्जुन, तुम दैवी सम्पत्ति को लक्ष्य करके पैदा हुए हो, इसलिए शोक मत करो।

हे पार्थ, इस लोक में—दैव और आसुर—दो प्रकार के प्राणी होते हैं। मैं तुमको दैव प्राणियों का विषय विस्तार के साथ सुना चुका। अब आसुर प्राणियों का विषय सुनो। आसुर

स्वभाव के लोग धर्म में प्रवृत्ति और अधर्म से निवृत्ति का विषय नहीं जानते। वे शौच, आचार और सत्य से शून्य होते हैं। वे जगत् को असत्य, अप्रतिष्ठ, स्वाभाविक, अनीश्वर, स्त्री-पुरुष के संसर्गमात्र से उत्पन्न और कामहेतुक बताते हैं। वे अल्प बुद्धिवाले लोग इस प्रकार की समझ का सहारा लेते हैं। वे मलिन-चित्त, उग्र-कर्मा और अहितकारी लोग जगत् के नाश के लिए उद्यत होते हैं। दम्भ, अभिमान, मद और अपवित्र मद्य-मांस आदि में उनकी विशेष रुचि होती है। वे मोहवश यह सोचकर कि "इस देवता की आराधना करके मैं बहुत सा द्रव्य प्राप्त करूँगा", क्षुद्र देवताओं की आराधना में प्रवृत्त होते हैं और कामभोग को परम पुरुषार्थ समझ- १० कर मरणपर्यन्त असीम चिन्ता से चूर रहते हैं। बहुत सी आशाओं के फन्दे में बँधे हुए वे कामना करने और कामना पूरी करने के लिए अन्यायपूर्वक धन कमाने की चेष्टा करते हैं। "मैंने आज यह पाया, फिर यह मनोरथ पूरा होगा; मेरे पास यह धन है, आगे चलकर वह धन भी प्राप्त होगा; आज इस शत्रु को मारा है, कल उस शत्रु को भी मारूँगा; मैं ईश्वर हूँ, मैं भोगी हूँ, सुखी हूँ, धनशाली हूँ; मैं सिद्ध हूँ, बलवान् हूँ, कुलीन हूँ; मेरे समान और कोई नहीं है; मैं यज्ञ करूँगा, दान करूँगा, आमोद-प्रमोद करूँगा", इस प्रकार वे अज्ञानमोहित लोग मोह और चित्तविकारों से आच्छन्न और कामभोग में आसक्त होकर तरह-तरह के मनसूबे बाँधते हैं, और अन्त को नरकगामी होते हैं। वे लोग स्वयं-पूजित, नम्रतारहित, धन-मद में चूर और अहङ्कार, बलदर्प, काम, क्रोध और ईर्ष्या के वशीभूत होकर नाममात्र के लिए यज्ञ आदि करते हैं। मैं उन विद्वेषी, क्रूरस्वभाव, नराधमों को निरन्तर इस संसार में आसुर योनियों के बीच गिराता रहता हूँ। हे कौन्तेय! वे मूढ़ पुरुष आसुर योनि को प्राप्त होकर फिर मुझे नहीं पा सकते, इस कारण उत्तरोत्तर अधम गति को ही पहुँचते रहते हैं। २०

हे अर्जुन! काम, क्रोध और लोभ, ये तीन नरक के द्वार हैं। इन्हीं से आत्मविनाश होता है। इसलिए यत्नपूर्वक इनसे बचना चाहिए। इनसे छुटकारा पा सकने पर मनुष्य आत्मकल्याण-लाभपूर्वक परम गति पाता है। जो कोई शास्त्र की विधि न मानकर स्वेच्छाचार में प्रवृत्त होता है, वह परम गति या सुख-शान्ति नहीं पा सकता। कार्य-अकार्य का निश्चय करने में शास्त्र ही प्रमाण है। इसलिए तुम शास्त्र के विधान को जानकर कर्तव्य-पालन में लग जाओ। २४

इकतालीसवाँ अध्याय

श्रद्धात्रय-विभाग योग का वर्णन

अर्जुन ने पूछा—हे कृष्णचन्द्र! जो लोग शास्त्रविधि को छोड़कर श्रद्धापूर्वक यज्ञ आदि करते हैं, उनकी वह श्रद्धा सात्त्विकी है, या राजसी अथवा तामसी?

भगवान् ने कहा—हे अर्जुन! देहधारियों की श्रद्धा सात्त्विकी, राजसी और तामसी, तीन प्रकार की होती है। तीनों प्रकार की श्रद्धा स्वाभाविक है। सत्त्व की श्रद्धा सत्त्व के अनुरूप होती है। यह पुरुष श्रद्धामय है। जिसकी जैसी श्रद्धा है वह वैसा ही है। सात्त्विक पुरुष देवताओं की, राजस पुरुष यक्षों और राक्षसों की तथा तामस पुरुष भूतों और प्रेतों की पूजा करते हैं। जो मनुष्य दम्भ, अहङ्कार, काम, राग आदि की प्रबलता के साथ अशास्त्रीय कठोर तप में लगे रहकर शरीरस्थ तत्त्वों को और शरीर के भीतर स्थित मुझ आत्मा को क्लेश पहुँचाते हैं, वे अचेत पुरुष आसुर प्रकृति के हैं।

हे अर्जुन, सब पुरुषों को आहार भी तीन तरह का प्रिय होता है। यज्ञ, तप और दान भी त्रिविध होते हैं। इन सबके लक्षण मैं कहता हूँ, सुनो। आयु, सत्त्व, बल, आरोग्य, सुख और प्रीति को बढ़ानेवाला, सरस, स्निग्ध, हृदय-पोषक आहार सात्त्विक लोगों को रुचता है। अत्यन्त कटु, अत्यन्त खट्टा, अत्यन्त नमकीन, अत्यन्त गर्म, अत्यन्त तीक्ष्ण, अत्यन्त दाही, दुःख, शोक और रोग को बढ़ानेवाला आहार राजस पुरुषों को प्रिय होता है। बासी, जिसका रस नष्ट हो चुका है, दुर्गन्धयुक्त, जूठा, अपवित्र, कई दिन का
१० बना आहार तामस लोगों को प्रिय होता है।

हे धनञ्जय! फल की कामना छोड़कर अवश्य कर्तव्य समझकर मन की एकाग्रता के साथ विधिपूर्वक जो यज्ञ किया जाता है, वह सात्त्विक यज्ञ है। हे भरतश्रेष्ठ, फल की कामना से या दम्भ के लिए जो किया जाता है वह यज्ञ राजस है। ऐसे ही विधिहीन, श्रद्धा-हीन, अन्नदानशून्य, तथा बिना ही मन्त्र और दक्षिणा के किया गया यज्ञ तामस कहलाता है।

देवता, ब्राह्मण, गुरुजन और पण्डित आदि की पूजा, पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा, ये शारीरिक तप के अङ्ग हैं। किसी को कष्ट न पहुँचानेवाला वाक्य, सत्य, प्रिय, हितकारी वाक्य और स्वाध्याय (वेदपाठ) का अभ्यास, ये वाङ्मय तप के अङ्ग हैं। मन की पवित्रता, सौम्यभाव, मौन, आत्मनिग्रह (मन का दमन) और भाव की शुद्धि, ये मानस तप के अङ्ग हैं। यह त्रिविध तप सात्त्विक आदि भेद से तीन प्रकार का है। फल की इच्छा छोड़कर एकाग्रभाव से अत्यन्त श्रद्धा के साथ किया गया तप सात्त्विक है। सत्कार, मान और पूजा की प्राप्ति के लिए दम्भपूर्वक जो किया जाता है, वह नाशवान् फलवाला तप राजस है। मूढ़ता-पूर्वक आत्मा को पीड़ा पहुँचाकर या दूसरे को कष्ट पहुँचाने के लिए, दूसरे की बुराई के लिए, जो तप किया जाता है, वह तामस है।

केवल इस भाव से कि देना ही चाहिए, जो अपना उपकार न करनेवाले को, देश-
२० काल और पात्र का विचार करके, दिया जाता है वह सात्त्विक दान है। प्रत्युपकार या स्वर्गलाभ आदि के उद्देश से अनिच्छापूर्वक जो दिया जाता है, वह राजस दान है। अनुपयुक्त

स्थान में, अनुपयुक्त समय में, अयोग्य पात्र को असत्कार और तिरस्कार के साथ जो दिया जाता है, वह तामस दान है।

ॐ, तत्, सत्, ये ब्रह्म के तीन नाम हैं। पूर्व समय में इन्हीं नामों से ब्राह्मणों, यज्ञों और वेदों का विधान हुआ है। इसी कारण ब्रह्मवादियों के विधान में कहे गये यज्ञ, दान, तप आदि कर्म "ओं" कहकर किये जाते हैं। फल की इच्छा न रखनेवाले मोक्षाभिलाषी लोग "तत्" कहकर यज्ञ, तप, दान आदि विविध कर्म करते हैं। सद्भाव, साधुभाव, मङ्गलकर्म और यज्ञ-तप-दान आदि के अवसर पर परमेश्वर के उद्देश से किये गये कर्मों में "सत्" शब्द का प्रयोग किया जाता है। अश्रद्धा से किया गया हवन, दान, तप और अन्य कर्म "असत्" कहलाते हैं। हे पार्थ, वे कर्म न इस लोक में फलदायक होते हैं और न परलोक में काम आते हैं। २८

बयालीसवाँ अध्याय

संन्यासयोग का वर्णन

अर्जुन ने कहा—हे महाबाहो, हे हृषीकेश! संन्यास का और त्याग का तत्त्व मैं अलग-अलग सुनना चाहता हूँ।

श्री भगवान् ने कहा—हे अर्जुन, विद्वान् ज्ञानियों ने काम्य कर्म के त्याग को ही संन्यास और सब कर्मफलों के त्याग को ही त्याग कहा है। कुछ लोगों का कहना है कि कर्म का दोष-तुल्य त्याग कर देना चाहिए। अन्य लोग कहते हैं कि यज्ञ, दान, तप आदि कर्मों का त्याग न करना चाहिए।

हे पार्थ, अब तुम त्याग के बारे में निश्चय सुनो। हे पुरुषसिंह, त्याग त्रिविध है। यज्ञ, दान और तप का त्याग किसी तरह न करना चाहिए। यज्ञ, दान, तप आदि कर्म विवेकियों के चित्त को शुद्ध करते हैं। हे भारत, मेरी राय में आसक्ति और फल की इच्छा छोड़कर कर्म करना चाहिए। नित्य कर्मों का त्याग कभी न करना चाहिए। यही मेरा उत्तम और निश्चित मत है। मोह के कारण नित्य कर्मों का त्याग तामस कहलाता है। अत्यन्त दुःखद समझकर शारीरिक क्लेश और डर के कारण किये गये कर्म के त्याग को राजस कहते हैं। राजस त्यागी व्यक्ति कभी त्याग का फल नहीं पा सकता। आसक्ति और फल की प्रत्याशा से बचकर, अवश्य कर्तव्य समझकर, कर्म करना सात्त्विक त्याग कहलाता है। सत्त्वगुणयुक्त, मेधावी, सन्देहहीन, त्यागशील व्यक्ति दुःख के विषय से द्वेष और सुख के विषय में अनुराग कभी नहीं रखता। देहधारी पुरुष सब कर्मों का त्याग कर भी तो नहीं सकता। हे पार्थ, जो कर्मफल का

११ त्याग करनेवाला है वही वास्तव में त्यागी कहा जा सकता है। कर्म के त्रिविध फल हैं,—इष्ट, अनिष्ट और इष्टानिष्ट। जो लोग त्यागी नहीं हैं वे परलोक में जाकर इन फलों को प्राप्त करते हैं; किन्तु संन्यासी लोग इन फलों को नहीं पाते। हे अर्जुन! कर्मसिद्धि के लिए तत्त्व-निर्णय करनेवाले सांख्यशास्त्र में शरीर, कर्ता, भिन्न-भिन्न इन्द्रियाँ, भिन्न-भिन्न उनकी चेष्टाएँ और दैव, ये पाँच सब कर्मों के कारण कहे गये हैं। न्यायसङ्गत या अन्यायपूर्ण, सभी कार्यों के—जिन्हें मनुष्य मन, वाणी और काया से करते हैं—यही पाँच कारण हैं। बुद्धि परिमार्जित न होने के कारण जो मनुष्य उपाधिशून्य केवल आत्मा को कर्ता समझता है, वह दुर्मति कुछ भी नहीं जानता। जिसमें अहङ्कार का भाव नहीं है और जिसकी बुद्धि अलिप्त है, वह इन सब लोकों को मारकर भी नहीं मारता, उसे प्राणिवध का पाप भी नहीं भोगना पड़ता। ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता, यह तीन प्रकार की कर्म-प्रवृत्ति है। करण, कर्म, कर्ता, यह त्रिविध कर्मसंग्रह है। ज्ञान, कर्म और कर्ता, ये तीनों गुण-भेद के अनुसार त्रिविध हैं। हे अर्जुन! सांख्य-शास्त्र में इनका वर्णन जिस तरह किया गया है सो मैं कहता हूँ, सुनो। मनुष्य जिसके द्वारा सब विभक्त प्राणियों में एक ही अविभक्त अव्यय भाव देखता है, वह सात्त्विक ज्ञान है। जिसके

२० द्वारा विभिन्न प्राणियों में भिन्न-भिन्न भाव देख पड़ते हैं, वह राजस ज्ञान है। जो सम्पूर्ण सा, एक ही कार्य में संसक्त, अकारण, अल्प और तत्त्वार्थहीन है वह तामस ज्ञान है। कर्तृत्व के अभिमान और कामना से शून्य मनुष्य के द्वारा राग और द्वेष छोड़कर किया गया कर्म सात्त्विक कहलाता है। सकाम और अहङ्कारी व्यक्ति के द्वारा बड़े परिश्रम से किया गया कर्म राजस है। भावी शुभाशुभ, अर्थ-क्षय, हिंसा और पौरुष का ख़याल न करके मोह से जिस कर्म का आरम्भ किया जाता है वह तामस है।

सङ्ग-शून्य, अहङ्कार-हीन, धैर्य और उत्साह से सम्पन्न, सिद्धि और असिद्धि में निर्वि-कार कर्ता सात्त्विक है। रागयुक्त, कर्मफल की इच्छा रखनेवाला, लोभी, हिंस्रप्रकृति, अशुचि, हर्षशोकयुक्त कर्ता राजस है। अयोग्य, असावधान, विवेक-विहीन, उग्रस्वभाव, शठ, आलसी, विषण्णचित्त और दीर्घसूत्री कर्ता तामस है।

हे पार्थ, गुण-भेद से बुद्धि और धृति के भी तीन भेद हैं; उन्हें सुनो। मैं अलग-अलग विस्तार के साथ उनका वर्णन करता हूँ। जिस बुद्धि के द्वारा प्रवृत्ति-निवृत्ति, कार्य-अकार्य, भय-अभय, बन्ध-

३० मोक्ष आदि विषय अच्छी तरह जाने जाते हैं, वह सात्त्विक है। जिसके द्वारा धर्म-अधर्म, कार्य-अकार्य, विशेष रूप से नहीं जाने जाते, वह बुद्धि राजसी है। जो बुद्धि अज्ञान से आच्छन्न होकर अधर्म को धर्म और सब पदार्थों का रूप उलटा दिखाती है, वह तामसी है।

जो धृति योगाभ्यास के कारण अन्य विषय को धारण न करके मन, प्राण और इन्द्रियों के सब कार्यों को धारण करती है वह सात्त्विकी है। जो धृति धर्म आदि के सम्बन्ध से—

फल की आशा से—धर्म, अर्थ, काम को धारण करती है, वह राजसी है। दुर्मति पुरुष जिसके प्रभाव से स्वप्न, भय, शोक, विषाद और मद का त्याग नहीं कर सकते, वही तामसी धैर्य है।

हे भरतश्रेष्ठ! जिस सुख में अभ्यासवश जी लग जाता है और जिसे प्राप्त करने पर सब प्रकार के दुःख शान्त होते हैं उस त्रिविध सुख का वर्णन करता हूँ—सुनो। जो पहले तो विष सा किन्तु परिणाम में अमृत सा होता है तथा जिसके द्वारा आत्मा और बुद्धि की प्रसन्नता होती है, वही सात्त्विक सुख है। विषयों और इन्द्रियों के संयोग द्वारा जो पहले अमृत सा और अन्त को विष सा जान पड़ता है, वह राजस सुख है। जो पहले भी और पीछे भी आत्मा को मोह में डालता है तथा जो निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न होता है, वह तामस सुख है।

पृथ्वी पर सब जीव और स्वर्ग में सब देवता इन स्वाभाविक तीनों गुणों के अधीन हैं। कहीं कोई ऐसा नहीं जिसमें इन तीनों गुणों में से एक गुण न हो। इन प्राकृतिक तीनों गुणों ४० के द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चारों वर्णों के कर्मों का विभाग हुआ है। शम, दम, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता, ये ब्राह्मणों के स्वाभाविक कर्म हैं। शूरता, तेज, धृति, निपुणता या सबके प्रति अनुकूलता, युद्ध से विमुख न होना, दान और स्वामिभाव, ये क्षत्रियों के स्वाभाविक कर्म हैं। खेती, गो-पालन और वनिज-बैपार करना वैश्य के स्वाभाविक कर्म हैं। द्विजों की अर्थात् तीनों वर्णों की सेवा करना ही शूद्र का स्वाभाविक कर्म है। इस प्रकार चारों वर्णों के मनुष्य अपने-अपने स्वाभाविक कर्म में लगे रहने से अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त करते हैं।

हे अर्जुन! अपने-अपने कर्म में लगे हुए लोग जिस तरह सिद्धि प्राप्त करते हैं, सो सुनो। जिनसे सब प्राणियों की प्रवृत्ति प्रकट हुई है और जो इस विश्व भर में सर्वत्र व्याप्त हैं उनकी, अपने-अपने कर्मों के पालन द्वारा, पूजा करने से मनुष्य सिद्धि पाते हैं। अच्छी तरह अनुष्ठित पर-धर्म की अपेक्षा अङ्गहीन अपना धर्म ही श्रेष्ठ है; क्योंकि स्वभाव-निर्दिष्ट कार्य करते रहने से क्लेश नहीं भोगना होता। हे कुन्तीपुत्र! जैसे आग धुएँ से आच्छन्न रहती है, वैसे ही सब कर्म दोषों से आवृत हैं। इसलिए अपने स्वाभाविक कर्म को, दोषयुक्त होने पर भी, छोड़ बैठना कदापि उचित नहीं। अनासक्त, जितेन्द्रिय, स्पृहाशून्य व्यक्ति संन्यास के द्वारा सब प्रकार के कर्मों की निवृत्तिरूप सत्त्वशुद्धि पाते हैं।

हे अर्जुन! अब मैं तुमसे वह विषय कहता हूँ, जिससे सिद्ध पुरुष ब्रह्मपद को प्राप्त होते हैं; मन लगाकर सुनो। ऐसे मनुष्य को चाहिए कि बुद्धि को विशुद्ध बनाकर धैर्य के ५० द्वारा उसे संयत करे; शब्द आदि विषयों के भोग को त्यागकर राग-द्वेष-रहित बने। मन, वाणी और काया की वृत्तियों को संयत करके वैराग्य का आश्रय और ध्यान तथा योग का अभ्यास करे। थोड़ा सा हल्का आहार करे, एकान्त स्थान में रहे। अहङ्कार, बल, दर्प, काम,

क्रोध, सङ्ग और सञ्चय का त्याग करे। ममताशून्य होकर शान्त भाव धारण करे। जो इस प्रकार अनुष्ठान करता है, वही ब्रह्मपद को प्राप्त कर सकता है। वह ब्रह्मनिष्ठ और प्रसन्नचित्त होकर शोक और लोभ के वशीभूत नहीं होता। वह सब जीवों को समदृष्टि से देखता है। मेरे ऊपर भी उसकी भक्ति सुदृढ़ होती है। वह अपनी भक्ति के प्रभाव से मेरे स्वरूप को और मेरे सर्वव्यापी भाव को जानकर अन्त को मुझमें ही लीन हो जाता है। मनुष्य मेरा आश्रय लेकर कर्मों का अनुष्ठान करते हुए मेरी ही कृपा के बल से मोक्षपद को प्राप्त होता है।

हे अर्जुन, तुम मनोवृत्ति द्वारा सब कर्म मुझे अर्पण करके मेरी शरण में आ जाओ। बुद्धियोग का आश्रय लेकर निरन्तर मुझमें ही चित्त लगाये रहो। ऐसा करने से तुम, मेरे अनुग्रह से, सब प्रकार के दुःखों से छुटकारा पा सकोगे। और जो तुम अहङ्कार के वश होकर मेरा कहा नहीं सुनोगे तो विनष्ट हो जाओगे। अगर तुम अहङ्कार के कारण "मैं नहीं लड़ूँगा" ऐसा समझते हो, तो तुम्हारा ऐसा ख़याल करना व्यर्थ है; क्योंकि प्रकृति ही तुमको युद्ध में प्रवृत्त करेगी। तुम मोह के वश होकर इस समय जिस कार्य को नहीं करना चाहते वही कार्य
६० तुमको, क्षत्रियधर्म के वशीभूत होकर, अवश्य करना पड़ेगा। हे अर्जुन, ईश्वर सब प्राणियों के हृदय में स्थित होकर अपनी माया के बल से उन्हें भरमा रहा है। तुम सब प्रकार से उसी ईश्वर की शरण में जाओ। उसके प्रसाद से तुम परम शान्ति और मोक्ष-पद पाओगे।

हे पार्थ, मैंने तुम्हारे आगे गुह्य से भी गुह्यतम इस ज्ञान का वर्णन किया है। अब तुम अच्छी तरह इस पर विचार करके जो चाहो सो करो। तुम मुझे अत्यन्त प्रिय हो, इसी कारण तुमसे परमगुह्य हित की बात कहता हूँ, सुनो। तुम मुझमें चित्त समर्पण करके, मेरे अनन्य भक्त होकर, मेरे उद्देश से प्रणाम और मेरी आराधना करो। मैं अङ्गीकार करता हूँ, तुम अवश्य मुझे पाओगे। तुम सब धर्मों को छोड़कर मेरी ही शरण में आओ। मैं तुमको सब पापों से छुड़ाऊँगा; तुम शोक मत करो। मैंने तुमको जो उपासना बताई है, जो उपदेश दिया है, वह तुम कभी धर्मानुष्ठान-हीन, भक्ति-रहित, सुनने की इच्छा न रखनेवाले और विशेषकर मेरे द्रोही को न सुनाना। जो पुरुष भक्तिपरायण होकर मेरे भक्तों के आगे इस परमगुह्य विषय का वर्णन करेगा, वह निःसन्देह मुझको प्राप्त होगा। इस लोक में उससे बढ़कर मुझे प्यारा और कोई न होगा। उससे बढ़कर मेरा प्रिय करनेवाला भी और कोई नहीं होगा। हमारे-तुम्हारे इस
७० धर्ममय संवाद को जो कोई सुनेगा या पढ़ेगा वह, मेरी राय में, ज्ञान-यज्ञ से मेरी आराधना करेगा। जो मनुष्य असूया से बचा रहकर परम श्रद्धा के साथ हमारे-तुम्हारे इस संवाद को सुनेगा वह, सब पापों से बचकर, पुण्यकर्म करनेवालों के पवित्र लोकों को जायगा।

हे पार्थ, बतलाओ तुमने एकाग्रचित्त होकर यह संवाद सुना है न? अज्ञान से उपजा हुआ तुम्हारा मोह दूर हुआ कि नहीं?

अर्जुन ने कहा—हे अच्युत, आपकी कृपा से मेरा सब मोह मिट गया और मुझे पूर्व-स्मृति प्राप्त हो गई। मेरा सब सन्देह दूर हो गया। अब मैं आपका कहा करूँगा।

सञ्जय कहते हैं—महाराज धृतराष्ट्र, मैंने इस तरह महात्मा वासुदेव और अर्जुन का यह अद्भुत लोमहर्षण संवाद सुना है। व्यासजी के प्रसाद से यह परम गुह्य योग मैंने योगेश्वर कृष्ण के मुख से सुना और यह अद्भुत परम पवित्र संवाद सुनकर तथा बारम्बार स्मरण-कर मुझे बड़ा हर्ष हो रहा है। महाराज, वासुदेव के उस अलौकिक विश्वरूप का स्मरण बारम्बार करके मुझे बड़ा विस्मय और हर्ष हो रहा है। इस समय मुझे जान पड़ता है कि जिस तरफ़ योगेश्वर वासुदेव और धनुर्द्धर अर्जुन हैं उसी पक्ष को अवश्य राजलक्ष्मी, विजय और अभ्युदय प्राप्त होगा। उधर ही नीति भी है। ७८

भीष्मवधपर्व

तैंतालीसवाँ अध्याय

भीष्म आदि का समरभूमि में आना और युधिष्ठिर का उनके पास जाकर प्रणाम करना तथा जय का आशीर्वाद पाना

वैशम्पायन कहते हैं—गीता का उपदेश स्वयं श्रीकृष्ण ने किया है, उसी को भली भाँति पढ़ना चाहिए; और शास्त्रों का क्या प्रयोजन है? गीता में सब शास्त्रों का सार है; हरि में सब देवता हैं; गङ्गाजी में सब तीर्थ हैं और मनु में सब वेदों का सार है। गीता, गङ्गा, गायत्री और गोविन्द—इन चार गकारों का अनुशीलन करने से पुनर्जन्म नहीं होता। गीता के ६२० श्लोक श्रीकृष्ण ने, ७५ अर्जुन ने और ६७ सञ्जय ने कहे हैं। एक श्लोक धृतराष्ट्र का कहा हुआ है। भारत का अमृत-सर्वस्व जो गीता का मथितार्थ है उसका सार निकालकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन के मुख में दे दिया।

सञ्जय कहते हैं—महाराज, अर्जुन को फिर गाण्डीव धनुष और बाण हाथ में लेते देखकर सब महारथी योद्धा सिंहनाद करने लगे। पाण्डव और सृञ्जयगण, तथा जो लोग उनके साथी थे वे भी, समुद्र से निकले हुए बढ़िया शङ्ख बजाने लगे। सब लोगों की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। उस समय एकाएक चारों ओर भेरी, पेशी, जयमङ्गल और गोशृङ्ग आदि तरह-तरह के बाजे बजने लगे। उनका वह तुमुल शब्द चारों ओर गूँज उठा। महाराज! देवता, गन्धर्व, पितर, सिद्ध और चारणगण युद्ध देखने की इच्छा से वहाँ आकर जमा होने लगे। महाभाग ऋषि लोग भी एकत्र होकर, इन्द्र को आगे करके, वह हत्याकाण्ड देखने के लिए वहाँ आ गये। १०

अब धर्मराज युधिष्ठिर ने दोनों ओर की सेना को युद्ध के लिए तैयार और बारम्बार सागरतुल्य चलायमान देखा तो कवच उतारकर शस्त्र रख दिये। वे रथ से उतरकर, पूर्वमुख होकर, शत्रुसेना की ओर चले। पितामह भीष्म को सामने देखकर धीर युधिष्ठिर मौन भाव से हाथ जोड़े पैदल चल दिये। युधिष्ठिर को इस तरह जाते देखकर अर्जुन शीघ्र ही रथ से उतर पड़े और भाइयों के साथ उनके पीछे चले। राजन्, वासुदेव भी उनके पीछे-पीछे जाने लगे। अन्यान्य राजा लोग भी उत्सुकता के साथ राजा युधिष्ठिर के पीछे चले। अब अर्जुन ने राजा युधिष्ठिर से कहा—महाराज, आप यह क्या करते हैं? हम लोगों को छोड़कर पैदल ही शत्रु-सेना में आप जा रहे हैं! भीमसेन ने कहा—राजन्! आप कवच और सब शस्त्र फेंककर, भाइयों को छोड़कर, कवच और शस्त्र आदि से सुसज्जित शत्रुओं के सामने कहाँ जा रहे हैं? नकुल ने कहा—हे भरतश्रेष्ठ, आप हम लोगों के बड़े भाई हैं। आपको यों जाते देखकर मेरा हृदय डर और दुःख से पीड़ित हो रहा है। आप कहाँ जाते हैं? सहदेव ने कहा—हे नरेश, इस भयानक युद्धारम्भ के समय हमें छोड़कर शत्रुओं के सामने आप कहाँ जा रहे हैं?

सञ्जय कहते हैं—हे कौरव-राज, भाइयों के यों कहने पर भी युधिष्ठिर कुछ उत्तर न २० देकर वैसे ही जाने लगे। महाबुद्धिमान् श्रीकृष्ण ने हँसकर अर्जुन आदि से कहा—हे पाण्डवो, मैं इनका मतलब समझ गया। ये भीष्म, द्रोण, कृप, शल्य आदि बड़े-बूढ़ों से आज्ञा लेकर शत्रुओं से युद्ध करना चाहते हैं। मैंने पहले सुन रक्खा है और मुझे ख़ुद भी जान पड़ता है कि जो आदमी शास्त्र-विधि के अनुसार गुरुजन, वृद्ध और बान्धव आदि से आज्ञा लेकर प्रबल शत्रु से युद्ध करता है वह अवश्य विजयी होता है। और जो कोई गुरुजन का सम्मान बिना किये, उनकी आज्ञा बिना लिये, युद्ध करता है वह शत्रुओं से परास्त होता है।

श्रीकृष्ण इस प्रकार कह रहे थे कि उधर दुर्योधन की सेना में बड़ा हाहाकार होने लगा। कुछ लोग तो चुप हो गये और अनेक लोग युधिष्ठिर को आते देखकर शोर-ग़ुल मचाने लगे।

दुर्योधन की सेना के योद्धा लोग दूर से युधिष्ठिर को आते देखकर आपस में कहने लगे—ये कुलकलङ्क युधिष्ठिर अवश्य युद्ध से डरकर भीष्म पितामह के पास आ रहे हैं। भाइयों सहित राजा युधिष्ठिर शरणप्रार्थी होकर आ रहे हैं। अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव के सहायक होने पर भी युधिष्ठिर क्यों डर गये? ये अल्पपराक्रमी युधिष्ठिर युद्ध से डर गये हैं, इससे जान पड़ता है कि इनका जन्म जगत्प्रसिद्ध क्षत्रियकुल में नहीं हुआ।

अब सैनिक लोग प्रसन्नता से कौरवों की बड़ाई करने लगे। कुछ लोग प्रसन्न होकर दुपट्टे आदि हिला-हिलाकर हर्ष सूचित करने लगे। राजन्, आपके पक्ष के योद्धा लोग भाइयों ३० सहित युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण की निन्दा करने लगे। इस प्रकार युधिष्ठिर को धिक्कार दे चुकने पर कौरव-सेना में सन्नाटा छा गया। उस समय दोनों पक्ष के योद्धाओं के मन में, युधिष्ठिर के बारे में, तरह-तरह की शङ्काएँ होने लगीं। वे सोचने लगे कि आख़िर राजा युधिष्ठिर क्या कहना चाहते हैं! भीष्म क्या जवाब देंगे? समरप्रिय भीमसेन क्या कहेंगे? श्रीकृष्ण और अर्जुन ही क्या कहना चाहते हैं?

भाइयों-सहित राजा युधिष्ठिर शर-शक्ति-सङ्कुल कौरव-सेना के भीतर पहुँचकर फुर्ती से भीष्म पितामह की ही ओर चले। युद्ध के लिए तैयार खड़े हुए भीष्म के पास पहुँचकर, उनके पैर छूकर, राजा युधिष्ठिर कहने लगे—हे समरदुर्द्धर्ष, हे तात! मेरा निवेदन यह है कि हम लोग आपके साथ युद्ध करेंगे। आप आज्ञा और आशीर्वाद दीजिए।

भीष्म ने कहा—हे भरतश्रेष्ठ, जो तुम इस तरह आकर मुझसे युद्ध की अनुमति न माँगते तो मैं तुमको पराजय का शाप दे देता। पुत्र, अब मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। तुम युद्ध में जय प्राप्त करो, तुम्हारी इच्छा पूरी हो। जाओ, युद्ध करो। हे पार्थ, और तुम मुझसे क्या चाहते हो? मुझसे यथेष्ट वरदान माँग लो। महाराज, ऐसा होने से किसी तरह तुम्हारी हार नहीं हो सकती। राजन्, यह सच है कि मनुष्य धन का दास है; धन किसी का दास नहीं है। ४० मुझे धन से ही कौरवों ने अधीन कर रक्खा है। हे कुरुनन्दन, इसी से नामर्दों की तरह मैं तुमसे कहता हूँ कि मुझे कौरवों ने धन और वृत्ति देकर अपने अधीन बना रक्खा है। बोलो, तुम युद्ध-साहाय्य के सिवा मुझसे और क्या चाहते हो?

धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—हे प्राज्ञ, आप सदा मेरा हित चाहते हुए सलाह दें और दुर्योधन के लिए युद्ध करें। [अर्थात् मन से तो मेरा हित चाहें और शरीर से दुर्योधन का पक्ष लेकर लड़ें] यही वर मैं माँगता हूँ।

भीष्म ने कहा—हे कौरवश्रेष्ठ, मैं इस विषय में तुम्हें क्या सहायता दे सकता हूँ? मैं दुर्योधन के लिए युद्ध करूँगा। इस कारण युद्ध के सिवा जो चाहो सो कहो।

युधिष्ठिर ने कहा—मैं अपने हित की यह सलाह आपसे चाहता हूँ कि आपको मैं संग्राम में किस तरह जीत सकता हूँ। आपको कोई हरा नहीं सकता, मार नहीं सकता। इसलिए यदि आप मेरा कल्याण चाहते हैं तो अपनी मृत्यु का उपाय मुझे बता दीजिए।

भीष्म ने कहा—हे युधिष्ठिर, मैं जब संग्राम करता हूँ तब ऐसा कोई नहीं देख पड़ता जो मुझे जीत ले। साक्षात् इन्द्र भी मुझे न तो जीत सकते हैं और न मार सकते हैं।

युधिष्ठिर ने कहा—पितामह, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। इसी कारण तो मैं पूछता हूँ कि आप समर में शत्रुओं के हाथ से अपने मारे जाने का उपाय मुझे बता दीजिए।

भीष्म ने कहा—बेटा, यह तो मैं तुमसे कह चुका कि संग्राम में ऐसा कोई देख नहीं पड़ता जो मुझे जीत सके। अभी मेरी मृत्यु का समय भी नहीं आया है। इसलिए अभी जाओ, मेरे पास फिर आना।

सञ्जय कहते हैं—तब महाबाहु महाराज युधिष्ठिर भीष्म की इस आज्ञा को मानकर, उन्हें प्रणाम और प्रदक्षिणा करके, वहाँ से चल दिये। इसके बाद वे अपने भाइयों के साथ ५० कौरव सेना के सामने आचार्य द्रोण के रथ के पास पहुँचे। दुर्द्धर्ष द्रोणाचार्य के पास पहुँचकर, प्रदक्षिणा और प्रणाम करके, राजा युधिष्ठिर ने कहा—भगवन्! आज्ञा दीजिए, मैं आपसे धर्मयुद्ध करना चाहता हूँ। आपकी आज्ञा लेकर किस तरह मैं अपने सब शत्रुओं को जीत सकूँगा, यह भी कृपा करके बतलाइए।

द्रोण ने कहा—राजन्, तुम अगर युद्ध का निश्चय करने के बाद युद्धारम्भ के पहले मेरे पास आज्ञा लेने न आते तो अवश्य मैं तुमको हारने का शाप दे देता। हे युधिष्ठिर! तुमने आकर मेरा सत्कार किया, इस कारण मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हुआ। मैं तुमको युद्ध की आज्ञा देता हूँ। जाओ युद्ध करो, विजय प्राप्त करो। तुम्हारी सब इच्छाएँ पूरी हों। बोलो, युद्ध के साहाय्य के सिवा और क्या चाहते हो? तुम अपनी इच्छा प्रकट करो, मैं उसे पूर्ण करूँगा। यह सच है कि धन किसी के अधीन नहीं है, धन के ही अधीन सब लोग

हैं। मुझे कौरवों ने धन के द्वारा अपने अधीन कर रक्खा है। इसी कारण नामर्दों की तरह कहता हूँ कि युद्ध-साहाय्य के सिवा और क्या चाहते हो? मैं युद्ध तो कौरवों की ओर से करूँगा, लेकिन हृदय से जय तुम्हारी ही चाहूँगा।

युधिष्ठिर ने कहा—ब्रह्मन्, मैं आपसे यही वर माँगता हूँ कि दुर्योधन के लिए लड़िए, मेरी जय मनाइए और मुझे हित की सलाह दीजिए।

द्रोण ने कहा—राजन्, साक्षात् कृष्ण जब तुम्हारे मन्त्री हैं तब तुम्हारी जीत होने में तो कोई सन्देह ही नहीं है। मैं तुमको आशीर्वाद देता हूँ, तुम युद्ध में शत्रुओं को जीतोगे। हे कुन्तीनन्दन, जहाँ धर्म है वहीं कृष्ण हैं और जहाँ कृष्ण हैं वहीं जय है। इसलिए जाओ, युद्ध करो। और जो कुछ पूछना हो सो पूछो—मैं तुमसे कहूँगा। ६०

युधिष्ठिर ने कहा—हे द्विजश्रेष्ठ, जो मेरी इच्छा है वह मैं आपसे पूछता हूँ, सुनिए। आप अजेय हैं; मैं आपको किस तरह सङ्ग्राम में जीत सकूँगा?

द्रोण ने कहा—राजन्, मैं जब तक युद्धभूमि में लड़ूँगा तब तक तुम जय नहीं प्राप्त कर सकते। इसलिए भाइयों के साथ तुम शीघ्र मुझे मारने का यत्न करो।

धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—हे आचार्य, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आप कृपा करके अपनी मृत्यु का उपाय मुझे बताइए।

द्रोणाचार्य ने कहा—हे तात, मैं जब क्रोधपूर्वक बाणों की वर्षा करता रहूँ तो उस समय मुझे कोई भी नहीं मार सकता। हाँ, अगर मैं युद्धभूमि में अस्त्र आदि रखकर अचेतन की तरह स्थित होऊँ तो, उस प्रायोपवेशन की अवस्था में, मारा जा सकता हूँ। मैं तुमसे सच कहता हूँ, विश्वास योग्य सत्यवादी पुरुष के मुँह से कोई अत्यन्त अप्रिय समाचार सुनते ही मैं युद्धिभूमि में हथियार रख दूँगा।

अब द्रोणाचार्य का सम्मान करके राजा युधिष्ठिर वीर कृपाचार्य के पास पहुँचे। प्रणाम और प्रदक्षिणा करके धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—हे आचार्य, मुझे युद्ध करने की आज्ञा दीजिए। मैं न्यायपूर्वक युद्ध करूँगा। अनुमति और आशीर्वाद दीजिए कि मैं आपकी आज्ञा पाकर युद्ध में सब शत्रुओं को जीत सकूँ।

कृपाचार्य ने कहा—राजन्, युद्ध के लिए निश्चय करके अगर तुम मेरी आज्ञा लिये बिना युद्ध करने लगते तो अवश्य मैं कुपित होकर तुमको हारने का शाप दे देता। राजन्, ७० यह सत्य है कि पुरुष धन का दास है; धन किसी का दास नहीं है। धन के द्वारा कौरवों ने मुझे अपने अधीन कर लिया है। इसलिए मैं उन्हीं की ओर से युद्ध करूँगा। बोलो, युद्ध-साहाय्य के सिवा मुझसे और क्या चाहते हो? धन के कारण मैं कौरवों के अधीन हूँ, इसी से नामर्दों की तरह तुमसे ये बातें कह रहा हूँ।

"हे आचार्य ! मैं आपसे पूछता हूँ, सुनिए—" इतना कहकर ही राजा युधिष्ठिर व्यथा के मारे अचेत से हो गये; आगे कुछ नहीं कह सके। राजा युधिष्ठिर के अभिप्राय को समझकर कृपाचार्य ने कहा—राजन्, तुम्हारे यों आकर आज्ञा माँगने से मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ। जाओ, युद्ध करो और जय पाओ। किन्तु मैं अवध्य हूँ; मारा नहीं जा सकता। मैं तुमसे वादा करता हूँ और सच कहता हूँ कि नित्य सवेरे उठकर ईश्वर से तुम्हारे जीतने की प्रार्थना करूँगा।

महाराज! कृपाचार्य के ये वचन सुनकर, उनका सम्मान करके, राजा युधिष्ठिर मद्रनरेश शल्य के पास गये। उनको प्रणाम और प्रदक्षिणा करके राजा ने अपने कल्याण की बात कही—मामाजी, मैं आपसे युद्ध की आज्ञा माँगता हूँ। मैं न्यायपूर्वक युद्ध करूँगा। आज्ञा और आशीर्वाद दीजिए कि मैं युद्ध में शत्रुओं को जीत सकूँ।

शल्य ने कहा—राजन्, तुम युद्ध के लिए निश्चय करने के बाद जो मुझसे आज्ञा माँगने न आते तो अवश्य मैं तुमको युद्ध में परास्त होने का शाप दे देता। तुमने आकर मेरा सम्मान किया, इससे मैं तुम पर सन्तुष्ट हूँ। तुम जो चाहते हो वही होगा। मैं तुमको आज्ञा देता हूँ, युद्ध करो और जय पाओ। तुम और क्या चाहते हो? मैं तुमको क्या दूँ? बोलो, युद्ध-साहाय्य के सिवा और क्या चाहते हो? हे राजेन्द्र, यह सच है कि मनुष्य धन का दास है, धन किसी का दास नहीं है। मुझे धन के द्वारा कौरवों ने अपने वश में कर लिया है। इसी से नामर्दों की तरह मैं तुमसे कह रहा हूँ कि युद्ध-साहाय्य के सिवा और क्या चाहते हो? मैं सच कहता हूँ, तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी करूँगा। ८०

धर्मराज युधिष्ठिर ने कहा—राजन्, मैं यही प्रार्थना करता हूँ कि नित्य मेरे हित को सोचिए और इच्छानुसार कौरवों की ओर से लड़िए।

शल्य ने कहा—हे युधिष्ठिर, मैं तुम्हारी क्या सहायता कर सकता हूँ? मुझे कौरवों ने धन के द्वारा अपने वश में कर लिया है; इस कारण मैं उन्हीं की ओर से युद्ध करूँगा।

युधिष्ठिर ने कहा—मामाजी, मैं वही वरदान आपसे माँगता हूँ जो आप पहले सोच चुके हैं। आप संग्राम में कर्ण का उत्साह और तेज अपनी बातों से घटाने की चेष्टा करते रहिएगा।

शल्य ने कहा—हे कुन्तीपुत्र, तुम्हारी यह इच्छा पूरी होगी। मैं तुमसे इसका वादा करता हूँ, विश्वास करो। जाओ युद्ध करो।

सञ्जय कहते हैं—महाराज! राजा युधिष्ठिर इस प्रकार शल्य को सम्मानित करके भाइयों के साथ भयङ्कर शत्रुसेना से बाहर निकल आये। उधर वासुदेव ने कर्ण के पास जाकर कहा—हे वीर, मैंने सुना है कि तुम भीष्म से विद्वेष रखने के कारण जब तक संग्रामभूमि में भीष्म रहेंगे तब तक युद्ध नहीं करोगे। इसलिए जब तक भीष्म मारे न जायँ तब तक तुम हमी लोगों

की ओर से युद्ध करो। जो तुम दोनों पक्षों को समान दृष्टि से देखते हो तो भीष्म के मारे जाने ९० पर फिर दुर्योधन की सहायता के लिए उस ओर जाकर युद्ध करने लगना।

कर्ण ने कहा—हे केशव, मैं कभी दुर्योधन का अप्रिय नहीं कर सकता। दुर्योधन के हित के लिए प्राण देने में भी मुझे सङ्कोच नहीं हो सकता।

हे भारत, कर्ण के ये वचन सुनकर वहाँ से लौटकर श्रीकृष्ण फिर पाण्डवों के पास आ गये। अब पाण्डवों के बड़े भाई युधिष्ठिर ने सेना के बीच में खड़े होकर ऊँचे स्वर से कहा—इस युद्ध-भूमि में जो कोई हमारा हित चाहनेवाला हो उसे हम अपने पक्ष में सम्मिलित होने के लिए बुलाते हैं। वह हमारी सहायता करने के लिए आ सकता है। तब (वैश्या के गर्भ से उत्पन्न धृतराष्ट्र के पुत्र) युयुत्सु ने पाण्डवों की ओर देखकर प्रसन्नतापूर्वक युधिष्ठिर से कहा—महाराज, यदि आप लोग मुझे ग्रहण करें तो मैं आपके पक्ष में होकर दुर्योधन आदि से युद्ध करने को तैयार हूँ।

युधिष्ठिर ने कहा—भाई युयुत्सु, आओ आओ। वासुदेव और हम सब तुमको वरण करते हैं। तुम हमारी ओर होकर, हमारे साथ होकर, अपने मूढ़ भाइयों से युद्ध करो। धृतराष्ट्र के वंश और पिण्ड की रक्षा तुम्हीं से होगी। हे राजपुत्र! मैं अनुमति देता हूँ, तुम हमारे पक्ष में आ जाओ। अत्यन्त असहनशील दुर्बुद्धि दुर्योधन निःसन्देह मारा जायगा।

सञ्जय कहते हैं—राजन्, इसके बाद युयुत्सु अपने भाइयों को छोड़कर डङ्का बजाते हुए पाण्डवों की सेना में आ गये। राजा युधिष्ठिर ने प्रसन्न होकर फिर सुवर्णमय चमकीला कवच १०० पहन लिया। और-और योद्धा लोग भी अपने-अपने रथों पर चढ़कर, पहले की तरह फिर व्यूह बनाकर, असंख्य नगाड़े आदि बजाते हुए घोर सिंहनाद करने लगे। पुरुषसिंह धृष्टद्युम्न आदि राजा लोग पाण्डवों को फिर रथ पर सवार और युद्ध करने को उद्यत देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। मान्य पुरुषों के मान की रक्षा करनेवाले पाण्डवों का गौरव देखकर सब राजा लोग उनकी प्रशंसा करते हुए उनके समयानुकूल सौहार्द, कृपालुता और बन्धु-बान्धवों के प्रति असाधारण दया आदि

की चर्चा करने लगे। चारों ओर लोग पाण्डवों की स्तुति करते हुए उन्हें साधुवाद देने लगे। वहाँ म्लेच्छ जाति या आर्यजाति के जिन लोगों ने पाण्डवों को देखा या सुना, वे सभी गद्गद होकर रोने लगे। इसी समय सैकड़ों-हज़ारों नगाड़ों और दूध के समान सफ़ेद रङ्ग के शङ्खों ६ को मनस्वी वीरगण प्रसन्न होकर बजाने लगे।

चवालीसवाँ अध्याय

युद्ध का आरम्भ

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, दोनों ओर की सेना में व्यूह-रचना हो चुकने पर किसने पहले प्रहार किया? कौरवों ने या पाण्डवों ने?

सञ्जय ने कहा—राजन्! आपके कुँअर दुःशासन, दुर्योधन की आज्ञा के अनुसार, भीष्म को आगे करके सेना-सहित युद्ध के लिए आगे बढ़े। पाण्डव लोग भी भीमसेन को आगे करके प्रसन्नतापूर्वक भीष्म के साथ युद्ध करने की इच्छा से आगे बढ़े। इसके बाद दोनों पक्षों की सेना में भेरी, मृदङ्ग, गोशृङ्ग, मुरज आदि बाजों का शब्द, रथ के पहियों का शब्द, वीरों की किलकार और सिंहनाद का शब्द, हाथियों और घोड़ों का शब्द चारों ओर गूँज उठा। दोनों ओर के योद्धा तर्जन-गर्जन और सिंहनाद करते ललकारते एक दूसरे की तरफ़ झपटने लगे। बड़ा भारी कोलाहल आकाश तक छा गया। इस तरह दोनों पक्षों की मुठभेड़ होने पर पाण्डवों और कौरवों की भारी सेनाएँ, आँधी से हिलाये गये वनों की तरह, शङ्ख और मृदङ्ग आदि के शब्दों से उत्तेजित होकर, आन्दोलित हो उठीं। महाराज! उस अशुभ घोर समय में हाथी, घोड़े, रथ आदि से परिपूर्ण दोनों सेनाओं में वैसा ही कोलाहल सुन पड़ने लगा जैसे तूफ़ान आने के समय क्षोभ को प्राप्त समुद्र में भयानक शब्द उठता है।

राजन्, उस रोमाञ्चकारी तुमुल शब्द के उठने पर महाबाहु भीमसेन बली साँड़ की तरह गरजने लगे। भीमसेन के उस शब्द ने शङ्ख और नगाड़े के शब्द, हाथियों की चिंघार, हज़ारों १० घोड़ों की हिनहिनाहट और सैनिकों के सिंहनाद आदि सब प्रकार के शब्दों को दबा लिया। मेघ के समान गम्भीर शब्द से गरजते हुए भीमसेन के उस, इन्द्र के वज्र के से, शब्द को सुन-कर कौरवसेना अत्यन्त भयभीत हो उठी। जैसे क्षुद्र मृगगण सिंह का भयङ्कर शब्द सुनकर मल-मूत्र कर देते हैं वैसे ही हाथी-घोड़े आदि वाहन भीमसेन की गर्जना से डरकर मल-मूत्र-त्याग करने लगे। महावीर भीमसेन मेघगर्जनतुल्य अत्यन्त घोर शब्द करके अपने घोर रूप से आपके पुत्रों को डराते हुए कौरवसेना की ओर बढ़े। तब दुर्योधन, दुर्मुख, दुःसह, अतिरथ, दुःशासन, शल, दुर्मर्षण, विविंशति, चित्रसेन, महारथ, विकर्ण, पुरुमित्र, जय आदि महावीर, भोजवंशी
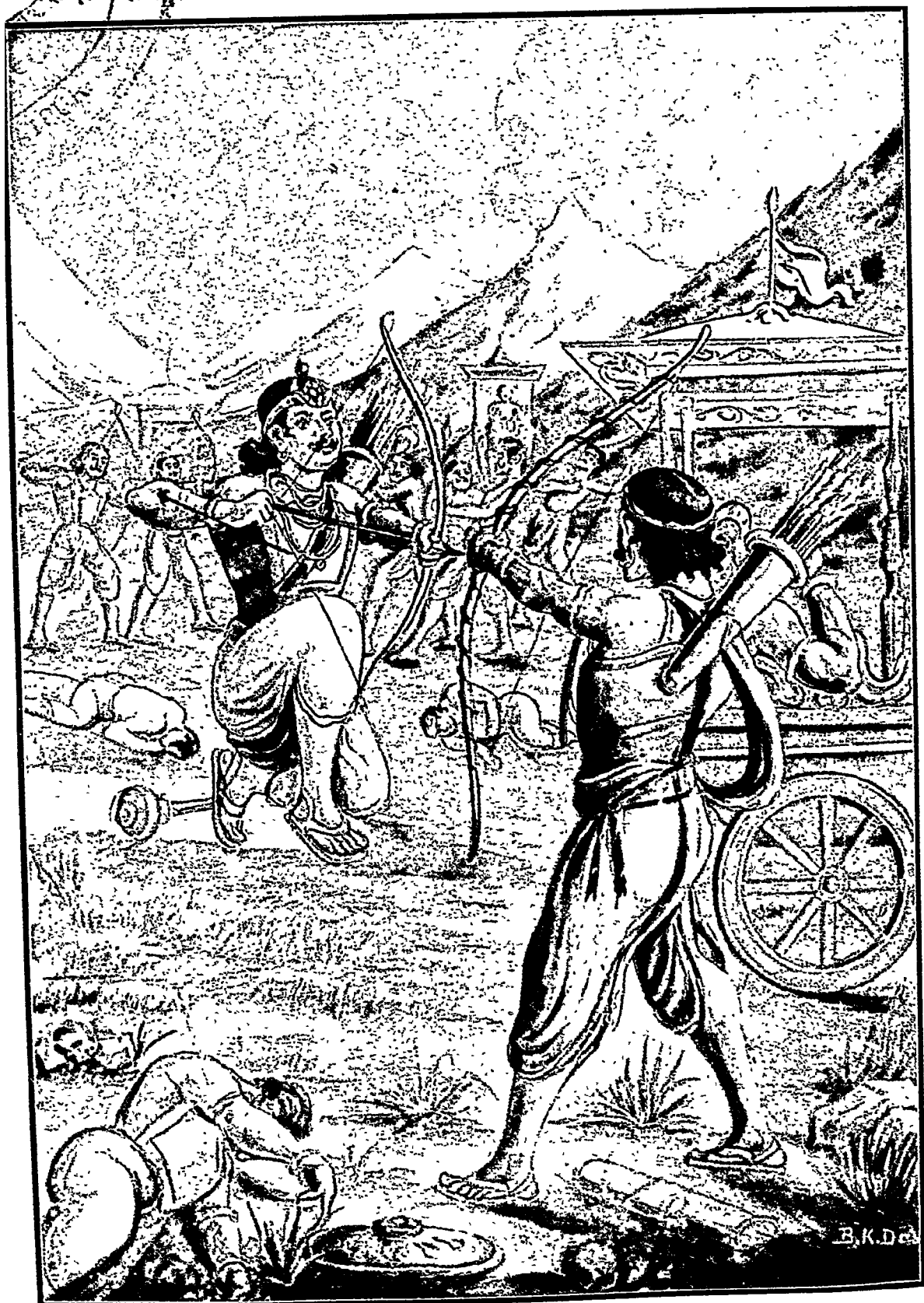
सोमदत्त-तनय ने एक वाण से शंख के दाहिने हाथ में घाव करके उनके कन्धे पर और एक वाण मारा।—पृ० १६६९

यादव कृतवर्मा और सोमदत्त के पुत्र आदि सब वीर बिजली-सहित बादलों की तरह बड़े-बड़े धनुषों को चढ़ाकर, केंचुल से निकले नागों के स्वरूपवाले, नाराच बाणों को तरकसों से निकालने लगे। मेघ जैसे सूर्य को ढकना चाहते हैं, वैसे ही ये लोग बाण-वर्षा से भीमसेन को ढकते हुए चारों ओर से उन्हें घेरने की चेष्टा करने लगे। इधर द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, नकुल, सहदेव और धृष्टद्युम्न आदि वीरगण—पर्वत के शिखरों पर जैसे वज्रों की वर्षा हो वैसे—दुर्योधन आदि के ऊपर बाण बरसाने लगे। भयानक प्रत्यञ्चा-शब्द से परिपूर्ण उस भयङ्कर युद्ध में पाण्डवपक्ष या कौरवपक्ष का कोई भी योद्धा विमुख नहीं हुआ। महाराज, उस समय मैं द्रोणाचार्य के शिष्यों के हाथ की फुर्ती अपनी आँखों से देखने लगा। वे लोग निमित्तवेधी और शब्दवेधी बाणों की वर्षा वेग से कर रहे थे। धनुषों की डोरियों का शब्द उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा था। आकाश से गिरनेवाली उल्काओं की तरह प्रज्वलित बाण बराबर धनुषों से छूट रहे थे। अन्य सब योद्धा राजा लोग दर्शकों की तरह अलग खड़े होकर उन भाइयों के भयानक युद्ध को देखने लगे। २०

अब महारथी लोग परस्पर किये गये अपराधों को स्मरण करके, कुपित होकर, स्पर्धा के साथ एक दूसरे से युद्ध करने लगे। हाथी, घोड़े, रथ आदि से परिपूर्ण कौरवों और पाण्डवों की सेनाएँ उस समय युद्धभूमि में चित्रपट में लिखी सी देख पड़ने लगीं। सेना के चलने-फिरने से उड़ी हुई अपार धूल ने आकाश तक पहुँचकर सूर्य को ढक लिया। धनुष हाथ में लिये राजा लोग दुर्योधन की आज्ञा से अपनी-अपनी सेना के साथ शत्रुओं की ओर चले। उस हाथी-घोड़े-रथ-शङ्ख-भेरी के नाद और धनुष-बाण आदि से परिपूर्ण रणभूमि में उमड़े हुए समुद्र का सा तुमुल शब्द छा गया। उधर पाण्डवपक्ष के राजा लोग महाराज युधिष्ठिर की आज्ञा से सिंहनाद करते हुए दुर्योधन की सेना के ऊपर टूट पड़े। इस प्रकार दोनों पक्ष की सेना परस्पर घोर युद्ध करने लगी। दोनों ओर की सेना में कोई तो युद्ध कर रहा था, कोई भाग खड़ा हुआ और कोई फिर लौट पड़ा। ऐसी हलचल मच गई कि अपना-पराया पहचानना असम्भव हो गया, सब गुँथ से गये। महाराज, उस महाभयानक युद्धभूमि के बीच पितामह भीष्म की शोभा सबसे बढ़कर हो रही थी। ३०

पैंतालीसवाँ अध्याय

द्वन्द्व-युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज, उस भयङ्कर युद्ध-दिन में सबेरे महाघोर युद्ध होने लगा। उसमें राजा लोग घायल होने और कटने लगे। कौरव और सृञ्जयगण परस्पर जीतने की इच्छा

से सिंहनाद करके पृथ्वीमण्डल और आकाशमण्डल को बारम्बार प्रतिध्वनित करने लगे। हे भारत ! सैनिकों की किलकारी, ताल ठोकने का शब्द, शङ्खनाद, परस्पर स्पर्धा के साथ सिंहनाद, तलत्राण से टकराई हुई प्रत्यञ्चाओं का शब्द, पैदल सिपाहियों के चलने का शब्द, घोड़ों की घोर हिनहिनाहट, एक दूसरे की ओर झपटते हुए हाथियों के तोत्र, अंकुश और घण्टा आदि का शब्द, हथियारों की झनझनाहट और मेघों के गरजने के समान रथों के पहियों की घरघराहट, इन सब शब्दों ने मिलकर ऐसे महाभयानक विचित्र महाशब्द को पैदा कर दिया जिससे रोंगटे खड़े हो गये। तब जीवन की ममता छोड़कर, मन को क्रूर निठुर बनाकर, रथों पर फहराती हुई ध्वजाओं से सुशोभित वीर कौरवगण पाण्डवों के सामने चले। भीष्म पितामह कालदण्डतुल्य धनुष लेकर अर्जुन की ओर बढ़े। तेजस्वी अर्जुन भी लोकप्रसिद्ध गाण्डीव धनुष लेकर भीष्म की ओर झपटे। परस्पर वध करने की इच्छा रखनेवाले वे दोनों वीर युद्ध करने लगे। अर्जुन को अपने बाणों के प्रहार से भीष्म तनिक भी विचलित नहीं कर सके, वैसे ही अर्जुन भी प्रहार करके भीष्म को विचलित करने में असमर्थ ही रहे। उधर महाधनुर्द्धर सात्यकि कृतवर्मा से युद्ध करने लगे। दोनों का रोमाञ्च पैदा कर देनेवाला घोर युद्ध होने लगा। दोनों वीर एक दूसरे पर आक्रमण करके प्रहार करने लगे। दोनों के शरीर बाणों से घायल हो गये। दोनों महाबली वीर घायल होकर वसन्त में फूले हुए ढाक के पेड़ों के समान शोभायमान हुए।
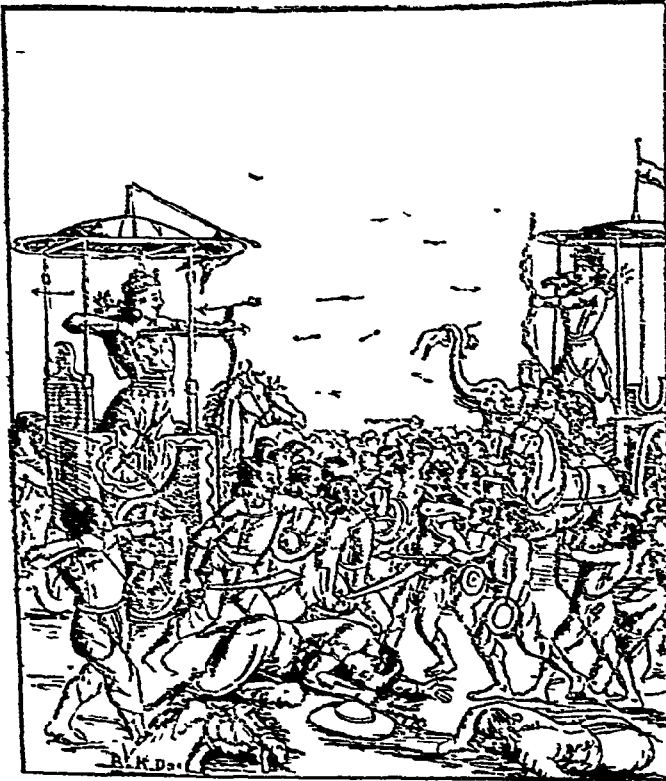
महाधनुर्द्धर अभिमन्यु ने कोशलेश्वर राजा बृहद्बल के ऊपर आक्रमण किया। राजा बृहद्बल ने अभिमन्यु के रथ की ध्वजा काट डाली और उनके सारथी को मार गिराया। अभिमन्यु ने भी क्रुद्ध होकर नव बाण मारकर उन्हें बेतरह घायल कर दिया। इसके बाद दो तीक्ष्ण भल्ल बाण लेकर एक से उनके रथ की ध्वजा काट डाली और एक से उनके पृष्ठरक्षक सारथी को मार डाला। इस प्रकार दोनों ही शत्रुनाशन वीर तीक्ष्ण बाणों के द्वारा परस्पर प्रहार करने लगे।

क्रूरकर्मा घटोत्कच ने राक्षसराज अलम्बुष के ऊपर वैसे ही आक्रमण किया, जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर पर किया था।—पृ० १६६५

महाराज ! भीमसेन ने महारथी, अभिमानी और युद्ध में शेख़ी दिखानेवाले आपके पुत्र दुर्योधन के ऊपर आक्रमण किया। वे दोनों चित्रयोधी महाबली वीर युद्धभूमि में परस्पर बाणों की वर्षा करके ऐसा युद्ध करने लगे कि उसे देखकर सब प्राणियों को बड़ा आश्चर्य हुआ। २०

दुःशासन ने महाबली नकुल पर आक्रमण करके उनको पैने दस बाण मारे। नकुल ने हँसकर अत्यन्त तीक्ष्ण बाणों के द्वारा दुःशासन के वे बाण, धनुष और उनकी ध्वजा काट डाली। इससे कुपित होकर आपके पुत्र ने नकुल के ऊपर पचीस क्षुद्रक बाण मारकर उनकी ध्वजा काट गिराई और रथ के घोड़ों को भी मार डाला।

उधर दुर्मुख ने समरप्रिय पराक्रमी सहदेव के सामने पहुँचकर अनेक बाणों से उन्हें घायल किया। सहदेव ने अत्यन्त तीक्ष्ण बाण मारकर उनके सारथी को मार डाला। ये दोनों वीर भी इस प्रकार आक्रमण करके जय की इच्छा से एक दूसरे पर बाण बरसाने लगे।

स्वयं महाराज युधिष्ठिर मद्रराज शल्य से युद्ध करने गये। शल्य ने देखते ही तीक्ष्ण बाण से उनके धनुष के दो टुकड़े कर डाले। युधिष्ठिर ने उसी दम दूसरा धनुष लेकर अत्यन्त क्रोध से फुर्ती के साथ सन्नतपर्व बाणों की वर्षा से शल्य को छिपा दिया और फिर "ठहरो-ठहरो" कहकर वे तर्जन करने लगे। ३०

धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य के सामने गये। द्रोण ने क्रोधपूर्वक एक बाण से धृष्टद्युम्न के सुदृढ़ और मृत्युद्वार-स्वरूप धनुष को फुर्ती के साथ तीन जगह से काट डाला। फिर यमदण्डसदृश महा-भयङ्कर एक बाण मारकर धृष्टद्युम्न को घायल कर दिया। धृष्टद्युम्न ने उसी दम दूसरा धनुष लेकर द्रोणाचार्य को चौदह बाण मारे। इस तरह क्रुद्ध होकर वे दोनों वीर युद्ध करने लगे।

महावेगशाली विराट-पुत्र शङ्ख ने सोमदत्त के पुत्र पर आक्रमण किया। सोमदत्त-तनय ने एक बाण से शङ्ख के दाहने हाथ में घाव करके उनके कन्धे पर और एक बाण मारा। इस प्रकार दर्प से भरे दोनों वीर, देवता और दानव के समान, महाभयानक युद्ध करने लगे।

वीर धृष्टकेतु ने क्रुद्ध होकर बाह्लीकराज पर आक्रमण किया। वे भी बाण-वर्षा से धृष्टकेतु को मोहित करके सिंहनाद करने लगे। चेदि-नरेश धृष्टकेतु ने क्रोधान्ध होकर मतवाले हाथी की तरह उन पर आक्रमण किया और शीघ्र ही नव बाण मारकर उनको घायल कर दिया। इस प्रकार क्रोध के साथ तर्जन-गर्जन करके, मङ्गल और बुध ग्रह की तरह, स्पर्धापूर्वक दोनों वीर युद्ध करने लगे। ४०

क्रूरकर्मा घटोत्कच ने राक्षसराज अलम्बुष के ऊपर वैसे ही आक्रमण किया, जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर पर किया था। अलम्बुष ने भी भीमसेन के पुत्र पर बहुत से बाण बरसाये। घटो-त्कच ने नब्बे बाण मारकर अलम्बुष को घायल कर दिया। रणभूमि में बाणों से घायल दोनों वीर देवासुर-संग्राम में युद्ध करते हुए इन्द्र और बलासुर के समान शोभा को प्राप्त हुए।

महाराज, अतुल बलवान् शिखण्डी अश्वत्थामा से युद्ध करने के लिए उनके सामने पहुँचे। अश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर तीक्ष्ण बाणों से शिखण्डी को घायल कर दिया; इससे वे विचलित हो गये। फिर शिखण्डी ने भी अश्वत्थामा के ऊपर पैने बाण बरसाना शुरू किया। इसी तरह वे दोनों वीर एक दूसरे को बाणों से घायल करने लगे।

हे भारत, वाहिनीपति राजा विराट ने महाशूर भगदत्त के पास जाकर युद्ध आरम्भ कर ५० दिया। विराट ने क्रुद्ध होकर, पर्वत के ऊपर जलवर्षा के समान, भगदत्त के ऊपर बाण बरसाये। मेघ जैसे सूर्य को ढक लेते हैं, वैसे ही भगदत्त ने बाणों से राजा विराट को ढक लिया।

केकयनरेश बृहत्क्षत्र के पास पहुँचकर कृपाचार्य बाण बरसाने लगे। बृहत्क्षत्र ने भी अपने को बाणपिञ्जर के बीच देखकर कृपाचार्य के ऊपर बाण बरसाना शुरू किया। युद्धभूमि में दोनों के धनुष कट गये और रथ के घोड़े मर गये। तब दोनों ही खड्गयुद्ध करने लगे।

शत्रुमर्दन राजा द्रुपद क्रोध के वश होकर जयद्रथ के सामने पहुँचे। सिन्धुपति जयद्रथ ने उनको तीन बाणों से घायल किया। द्रुपद भी क्रुद्ध होकर जयद्रथ के ऊपर बाणों की वर्षा करने लगे। शुक्र और मङ्गल के तुल्य उन दोनों वीरों के भयङ्कर युद्ध को देखकर दर्शक लोग अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। महाराज, महाबलशाली आपके पुत्र विकर्ण महावीर श्रुतसोम के सामने जाकर अत्यन्त घोर संग्राम करने लगे। दोनों ही समान तेजस्वी और वीर थे। इस कारण कोई किसी को विचलित न कर सका। उनका युद्ध देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ।

६० पाण्डवों के हितैषी महारथी चेकितान क्रुद्ध होकर सुशर्मा के सामने आये। बाणवर्षा करके सुशर्मा महारथी चेकितान के आक्रमण को रोकने लगे। मेघ जैसे पर्वत के ऊपर पानी बरसाते हैं, वैसे ही चेकितान क्रोधान्ध होकर सुशर्मा के ऊपर बाण बरसाने लगे। सिंह जैसे मस्त हाथी को देखकर उधर झपटता है, वैसे ही गान्धारपति शकुनि महापराक्रमी युधिष्ठिर-पुत्र प्रतिविन्ध्य के ऊपर झपटे। इन्द्र जैसे दानव को क्षत-विक्षत कर डालें वैसे ही युधिष्ठिर के पुत्र ने कुपित होकर बाणवर्षा से शकुनि को बेहद घायल कर दिया।

सहदेव के पुत्र महावीर श्रुतकर्मा काम्बोज देश के निवासी महापराक्रमी महारथी सुदक्षिण के पास झपटकर पहुँचे। घोर बाणों की वर्षा करके भी सुदक्षिण मैनाक पर्वतसदृश श्रुतकर्मा को युद्ध से न हटा सके। श्रुतकर्मा ने तीक्ष्ण बाणों से सुदक्षिण को घायल कर दिया। उधर अर्जुन के पुत्र, शत्रु-पक्ष के लिए कालसदृश, इरावान् ने क्रुद्ध होकर कुपित श्रुतायु का सामना किया। वे शत्रु के घोड़ों को मारकर, सिंहनाद करके, उसकी सेना को विचलित करने लगे। श्रुतायु ने भी क्रुद्ध होकर गदा के प्रहार से इरावान् के घोड़ों को मार डाला। इसी तरह दोनों का तुमुल संग्राम होने लगा। ७०

अवन्ति देश के राजा विन्द और अनुविन्द दोनों वीर, पुत्र और सेना सहित, महाराज कुन्तिभोज के साथ युद्ध करने आये। युद्ध में उन दोनों का घोर पराक्रम मैंने देखा। वे उस भारी सेना के साथ युद्ध करने लगे। अनुविन्द ने कुन्तिभोज को एक गदा मारी। कुन्तिभोज ने भी उनके ऊपर बाण चलाये। कुन्तिभोज के पुत्र ने विन्द के ऊपर बाण छोड़े। विन्द ने भी कुन्तिभोज के पुत्र को बाणों से घायल किया। उनका युद्ध देखकर सभी को आश्चर्य हुआ। केकय देश के राजकुमार पाँचों भाई अपनी सेना को साथ लेकर सैन्ययुक्त गान्धार देश के पाँच राजकुमारों से युद्ध कर रहे थे।

आपके पुत्र वीरबाहु, श्रेष्ठ रथी विराट-पुत्र उत्तर के साथ युद्ध की इच्छा से, आगे बढ़े। वीरबाहु ने उत्तर को नव बाणों से घायल किया। महावीर उत्तर ने भी इतने बाण बरसाये कि वीरबाहु उनसे ढक गये। महावीर चेदि-पति उलूक के सामने आये और उन पर बाण बरसाने लगे। उलूक ने भी उनके ऊपर तीक्ष्ण बाणों की वर्षा की। युद्ध करते-करते दोनों के शरीर इतने घायल हो गये कि तिल भर भी शरीर बाणों के घाव से ख़ाली नहीं रह गया; किन्तु कोई किसी को हरा नहीं सका। ८०

हे राजेन्द्र! इस तरह कौरवों और पाण्डवों के पक्ष के हज़ारों रथ, हाथी, घोड़े आदि पर सवार और पैदल वीर योद्धा परस्पर अत्यन्त घोर द्वन्द्वयुद्ध करने लगे। क्षण भर तो वह द्वन्द्वयुद्ध अच्छी तरह देखा जा सका, किन्तु फिर सब लोग ऐसे भिड़ गये और अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा ऐसी होने लगी कि कुछ भी नहीं देख पड़ता था। उस समय रथ के साथ रथ, हाथी के साथ हाथी, घोड़े के साथ घोड़ा और पैदल के साथ पैदल भिड़ गया और अत्यन्त घोर युद्ध होने लगा। शूर वीर लोग एक दूसरे के सामने जाकर दारुण संग्राम करने लगे। युद्ध-भूमि में पहुँचकर देवर्षि, सिद्ध और चारणगण वह देवासुर-युद्ध के समान भयानक संग्राम देखने लगे। मैंने देखा कि हज़ारों रथों, हाथियों, घोड़ों और पुरुषों के दल विशृङ्खल होकर इधर-उधर दौड़ते और युद्ध कर रहे थे। हर जगह बेशुमार रथ, हाथी, घोड़े और पैदल बारम्बार गरजकर युद्ध करते नज़र आते थे। ८७

छियालीसवाँ अध्याय

युद्ध का वर्णन

सञ्जय बोले—महाराज ! इस समर में हज़ारों पैदल सैनिक जिस तरह मर्यादा का उल्लङ्घन करके लड़े, सो मैं कहता हूँ, सुनिए। उस समय पिता ने पुत्र का, सगे भाई ने सगे भाई का, भानजे ने मामा का, मामा ने भानजे का और मित्र ने मित्र का कुछ ख़याल नहीं किया मानों कोई किसी को पहचानता ही नहीं था। पाण्डवगण प्रेतबाधाग्रस्त से होकर कौरवों के साथ युद्ध कर रहे थे। कुछ पुरुषसिंह वीर, जो रथों पर सवार थे, दूसरे पक्ष के रथारूढ़ वीरों पर टूट पड़े। रथों से रथ ऐसे भिड़ गये कि जुएँ से जुआँ, रथदण्ड से रथदण्ड और रथ-कूबर से रथकूबर टूटने लगे। रथों से कुछ रथ ऐसे भिड़ गये कि वे किसी ओर चल नहीं सकते थे। कुछ वीर एक दूसरे के प्राण लेने की इच्छा से घोरतर संग्राम कर रहे थे। जिनके मद बह रहा है, ऐसे बड़े-बड़े हाथी हाथियों से भिड़कर घायल हो रहे थे। तोरण-पताका (अम्बारी) आदि से शोभित वेगशाली गजराज परस्पर भिड़कर दाँतों के प्रहार से एक दूसरे को फाड़ने और व्यथित होकर घोर चीत्कार करने लगे। हस्तिविद्या में निपुण लोगों के द्वारा सुशिक्षित मद-हीन हाथी, अङ्कुश की चोट खाकर, मस्त हाथियों के सामने जाकर आक्रमण कर रहे थे। बहुत से गजराज मदस्रावी गजराजों के समीप जाकर क्रौंच पक्षी का सा शब्द करते १० हुए इधर उधर भागने लगे। अच्छी तरह सिखाये गये कुछ हाथी ऋष्टि, तोमर, नाराच आदि शस्त्रों से घायल होकर सूँड़ उठाकर चिल्लाते हुए पृथ्वी पर गिरते देख पड़े। मर्मस्थल पर वार होने से कुछ तो मर गये और कुछ भयानक स्वर से चिल्लाते हुए इधर-उधर भागने लगे।

महाराज ! विशाल छातीवाले शस्त्रधारी लोग, जो हाथियों के पैरों के पास उनकी रक्षा के लिए रहते हैं, एक दूसरे को मारने के लिए उद्यत होकर ऋष्टि, धनुष, चमकीले फरसे, गदा, मुशल, भिन्दिपाल, तोमर, बाण, बेलन, तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र हाथ में लिये वेग से इधर-उधर दौड़ते देख पड़ रहे थे। परस्पर आक्रमण करनेवाले वीरों के हाथों में नररक्त-रञ्जित चम-कीले खड्ग थे। वीर पुरुषों के हाथों से उठी और गिरी हुई तलवारें शत्रुओं के मर्मस्थलों पर पड़ रही थीं और उससे घोर शब्द हो रहा था। युद्धभूमि में जगह-जगह गदा-मुशल आदि के प्रहार से दलित, खड्गों के वार से घायल, हाथियों के पैरों से रौंदे गये और उनके दाँतों से दले गये आदमी बुरी तरह कराह रहे थे। प्रेतों की सी—नरक की यन्त्रणा भोगनेवालों की सी—उनकी आर्तवाणी सुननेवालों के हृदय को दहला रही थी। चँवर और कलँगी से शोभित २० हंसतुल्य घोड़ों पर सवार योद्धा लोग एक दूसरे पर आक्रमण कर रहे थे। वीरों के हाथों से छूटे हुए, सुवर्णमण्डित, तीक्ष्ण धारवाले बाण साँपों की तरह सर्वत्र गिर रहे थे। तेज़ घोड़ों

पर सवार योद्धा लोग रथों पर पहुँचकर रथारूढ़ वीरों के सिर काट डालते थे। रथ पर सवार योद्धा लोग भी घुड़सवारों को, अपने पास आते देखकर, तीक्ष्ण और झुके हुए भल्ल बाण मारकर, मार डालते थे। पानी भरे बादल के समान नीले, सुवर्ण-भूषण-भूषित, मस्त हाथी अपने मस्तक और कपोल काटे जाने पर भी हाथियों को गिराकर रौंद डालते थे। कुछ हाथी प्रास नाम के शस्त्र के प्रहार से पीड़ित होकर आतुर भाव से चिल्ला उठते थे। कुछ श्रेष्ठ हाथी, सवार और घोड़े को गिराकर, दल मलकर डाल देते थे। उस भयानक युद्ध में कुछ हाथी दाँतों से और सूँड़ से घोड़े तथा उसके सवार को ऊपर उछाल देते और रथों को तोड़ते-फोड़ते हुए इधर-उधर विचर रहे थे। कोई-कोई मदमत्त महागज सूँड़ से घोड़े और उसके सवार को खींचकर पैरों से रौंद डालते थे। साँप के समान भीषण बाण उन हाथियों के दाँतों पर, देह पर और कोख पर गिर रहे थे। वीर पुरुषों के हाथों से छूटी हुई उल्कासदृश शक्तियाँ मनुष्यों, घोड़ों और हाथियों के शरीरों में घुसकर दृढ़ कवचों को तोड़कर बाहर निकल जाती थीं। वीरगण व्याघ्र- ३० चर्म की म्यानों से चमकीले खड्ग निकाल-निकालकर शत्रुओं को काट रहे थे।

महाराज! उस युद्ध में हज़ारों योद्धा शक्तियों के प्रहार से कटे हुए, परशुओं के प्रहार से छिन्न-भिन्न, हाथियों के पैरों से दले गये, घोड़ों के पैरों से कुचले गये और रथ के पहियों से घायल पड़े कराह रहे थे। कोई पुत्र को, कोई पिता को, कोई भाई को, कोई मामा को, कोई भानजे को और कोई अन्य भाई-बन्धुवों को याद करके अत्यन्त दीन स्वर से विलाप कर रहा था। बहुतों की आँतें बाहर निकल पड़ी थीं, जाँघें टूट गई थीं, हाथ कट गये थे, कोखें फट गई थीं और कोई प्यास के मारे तड़प रहा था। ऐसे लोग जीवन की इच्छा से रो रहे थे। कुछ लोग अधमरे पड़े थे और प्यास से व्याकुल होकर पानी माँग रहे थे। हे भारत! कुछ लोग, रक्त से नहाये हुए, क्लेश पा रहे थे और अपनी और आपके पुत्रों की निन्दा कर रहे थे। ४० उनमें से कुछ अत्यन्त शूर साहसी क्षत्रिय अधमरे होने पर भी क्रोध के मारे दाँतों से ओठ चबा रहे थे; न तो वे विलाप करते थे और न कराहते थे। वे उस समय भी भौंहें टेढ़ी किये, ओठ चबाते हुए, शत्रुओं की ओर देख रहे थे। उस समय भी उनमें उत्साह और प्रसन्नता की कमी नहीं थी। कोई-कोई महाबली योद्धा बाणों से घायल होकर भी चुपचाप पड़े थे। रथ नष्ट हो जाने पर कोई-कोई वीर दूसरा रथ माँग रहे थे कि इसी समय हाथियों के धक्के से पृथ्वी पर गिर पड़े और हाथियों के पैरों के नीचे कुचल गये। उनके रक्तरञ्जित शरीर फूले हुए ढाक के पेड़ के समान शोभा पा रहे थे। श्रेष्ठ वीरों का विनाश करनेवाले उस युद्ध में, सेनाओं के बीच, अनेक प्रकार के भयानक शब्द सुन पड़ रहे थे। पिता ने पुत्र को, पुत्र ने पिता को, भानजे ने मामा को, मामा ने भानजे को, मित्र ने मित्र को, सम्बन्धी ने सम्बन्धी को और बान्धव ने बान्धव को उस मर्यादाहीन युद्ध में मारना शुरू कर दिया था। हे भारत, उस मर्यादाशून्य

घोरतर संग्राम में पाण्डवों और कौरवों के पक्ष के बहुतेरे वीर मारे गये। संग्राम में भीष्म के बाणों के प्रहार से पाण्डव-पक्ष की सारी सेना विचलित हो उठी। सोने-चाँदी से मण्डित, ऊँचे, पञ्चतारा और ताल के चिह्न से शोभित ध्वजावाले रथ पर सवार महावीर भीष्म ५० सुमेरु पर्वत पर स्थित चन्द्रमा के समान शोभायमान थे।

सैंतालीसवाँ अध्याय

उत्तरकुमार का मारा जाना

सञ्जय कहते हैं—महाराज, इस अत्यन्त दारुण दिन का पूर्व-भाग समाप्त होने के समय बहुत से वीर पुरुषों का नाश हुआ। महावीर दुर्मुख, कृतवर्मा, कृपाचार्य, शल्य और विविंशति, ये योद्धा दुर्योधन की आज्ञा से भीष्म के पास जाकर उनकी रक्षा करने लगे। पाँच अतिरथी वीरों के द्वारा चारों ओर से सुरक्षित होकर महारथी भीष्म पाण्डवों की सेना के भीतर पहुँचे। चेदि, काशि, करूष और पाञ्चालदेश की सेना के भीतर भीष्म की तालचिह्नयुक्त ध्वजा फहराती देख पड़ने लगी। वे असंख्य सैनिकों के रथ, वाहन, ध्वजा और सिर आदि अङ्गों को अपने तीक्ष्ण बाणों से काट-काटकर गिराने लगे। युद्धभूमि के बीच उनके रथ की राह में पड़नेवाले गजराज मर्म-स्थल में घायल होकर चिल्लाने और कातर ध्वनि करने लगे।

इस प्रकार संग्रामभूमि में भीष्म के बाणों से अपने सैनिकों का विनाश होते देखकर प्रबल पराक्रमी कुमार अभिमन्यु क्रुद्ध होकर पिङ्गलवर्ण घोड़ों से शोभित, सुवर्णमण्डित, कर्णिकार-चिह्न-युक्त ध्वजा से अलङ्कृत रथ पर बैठकर महारथी भीष्म और उनके अनुगामी वीरों के सामने पहुँचे। अभिमन्यु ने बहुत से बाण भीष्म की ध्वजा में मारे और भीष्म की रक्षा करनेवाले उन प्रधान पाँच रथी वीरों को भी उन्होंने बाणों से घायल किया। इस प्रकार वे घोर युद्ध करने लगे। अभिमन्यु महावीर अर्जुन के पुत्र थे।
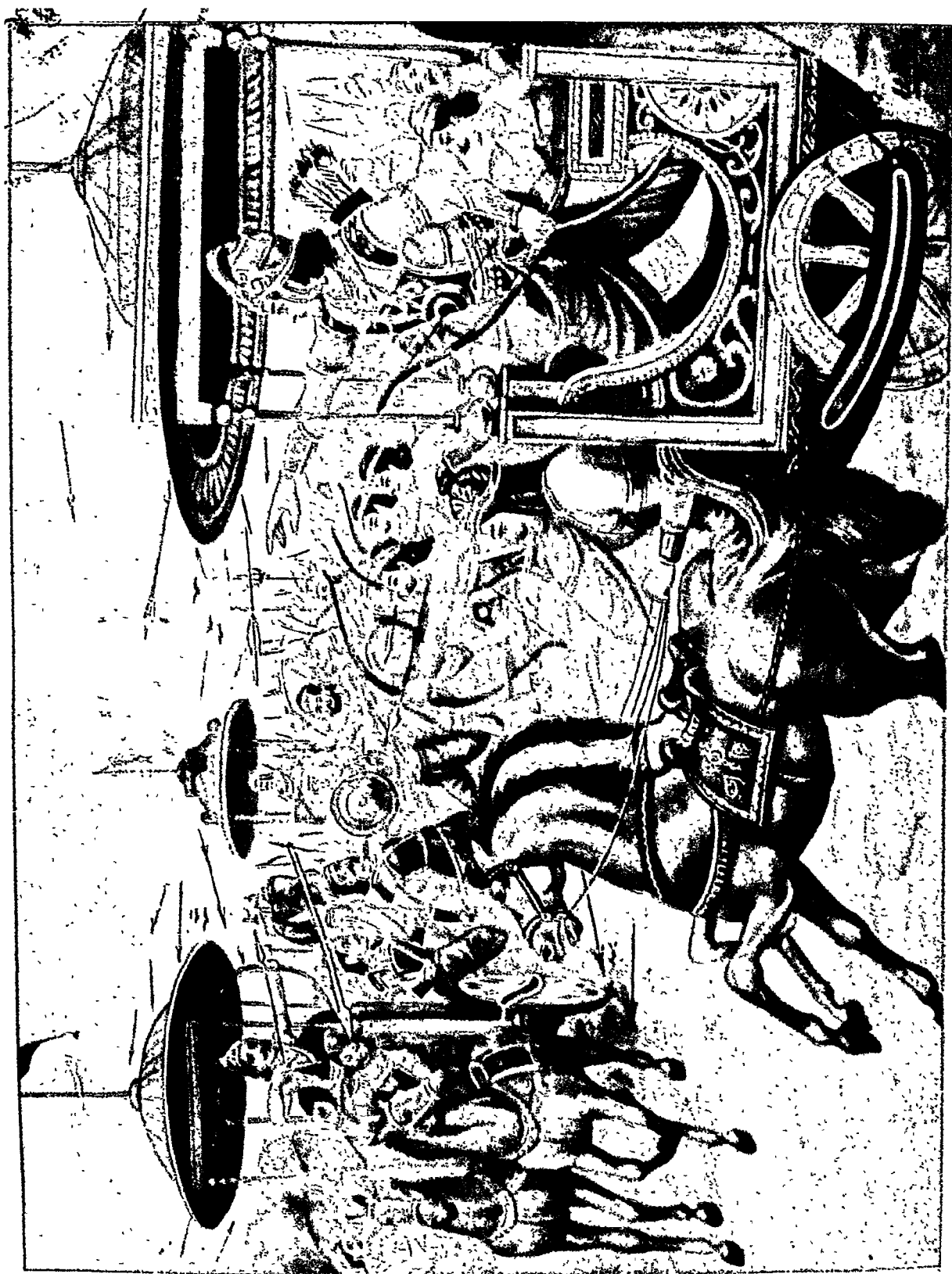
(अभिमन्युने) एक भल्लबाण से दुर्मुख के सारथी का सिर काट डाला ।—पृ० १४७१

उन्होंने कृतवर्मा को एक वाण और शल्य को पाँच वाण मारे। इस प्रकार अन्य वीरों को घायल और उद्विग्न करके अपने पितामह भीष्म के ऊपर भी उन्होंने नव वाण छोड़े। इसके बाद एक तीक्ष्ण वाण से भीष्म की सुवर्ण-मण्डित ध्वजा काट डाली। फिर क्रुद्ध होकर सब प्रकार के आवरणों को काटनेवाले, सन्नतपर्व, एक भल्ल वाण से उन्होंने दुर्मुख के सारथी का सिर और अन्य पैने भल्ल वाण से कृपाचार्य का सुवर्णमण्डित धनुष काट डाला। वे समरभूमि में नृत्य सा कर रहे थे। अपने तीक्ष्ण वाणों से शत्रुओं के छोड़े हुए वाणों को छिन्न-भिन्न करके वे अपने गाण्डीव-तुल्य श्रेष्ठ धनुष की प्रत्यञ्चा को बजाते हुए फुर्ती के साथ विचरने लगे। उनके हाथ की फुर्ती देखकर देवता भी सन्तुष्ट हुए। उनका निशाना कभी चूकता ही न था। यह देखकर भीष्म आदि योद्धाओं ने समझा कि वीर अभिमन्यु अपने पिता अर्जुन के ही समान बलवान् और पराक्रमी हैं। अभिमन्यु अग्नि के समान दुर्द्धर्ष और तेजस्वी देख पड़ने लगे।

उस समय महावीर भीष्म ने वेग और फुर्ती के साथ वीर अभिमन्यु पर आक्रमण किया। नव वाण उनके शरीर में मारे, तीन भल्ल वाणों से ध्वजा काट डाली और तीन ही वाणों से उनके सारथी को जर्जर कर दिया। इसी समय कृतवर्मा, कृपाचार्य और शल्य भी अभिमन्यु के ऊपर लगातार वाणों की वर्षा करने लगे; किन्तु वीर अभिमन्यु तनिक भी विचलित नहीं हुए। इसके बाद अर्जुन के पुत्र ने, दुर्योधन-पक्ष के वीरों के बीच स्वयं घिरकर भी, पूर्वोक्त पाँच रथी वीरों के ऊपर वाण बरसाना और उनके चलाये हुए अस्त्र-शस्त्रों को नष्ट करना शुरू किया। अभिमन्यु भीष्म के ऊपर असंख्य वाण बरसाकर सिंहनाद करने लगे। उस युद्धभूमि में वाणों के मारे भीष्म पीड़ित हो गये। इस दुष्कर कर्म से अभिमन्यु का असाधारण बाहुबल प्रकट हुआ। महावीर भीष्म ने अभिमन्यु के अद्भुत पराक्रम को देखकर उन पर कई तरह के वाण छोड़े। अभिमन्यु ने वे सब वाण काट डाले। इसके बाद नव वाणों से भीष्म की ध्वजा को भी काट डाला। यह देखकर कौरवसेना के लोग चिल्लाने लगे। महावीर भीष्म का रजतमय मणिभूषित ताल-ध्वजयुक्त रथ अभिमन्यु के वाणों से टुकड़े-टुकड़े होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। युद्धप्रिय उत्साही भीमसेन यह देखकर, अभिमन्यु को उत्साहित करने के लिए, ज़ोर से सिंहनाद करने लगे।

तब महापराक्रमी भीष्म ने युद्धभूमि में तरह-तरह के दिव्य महा-अस्त्रयुक्त हज़ार वाण अभिमन्यु के ऊपर चलाये। भीष्म का यह कार्य और फुर्ती देखकर सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उस समय अभिमन्यु की रक्षा के लिए पाण्डवपक्ष के दस महाधनुर्द्धर—पुत्र सहित राजा विराट, द्रुपदनन्दन धृष्टद्युम्न, भीमसेन, कैकेय, और सात्यकि आदि—बड़े वेग से वहाँ पहुँच गये। भीष्म ने उन लोगों को शीघ्रता के साथ आते देखकर धृष्टद्युम्न के ऊपर तीन वाण और सात्यकि के ऊपर नौ वाण चलाकर एक छुरे के समान तेज़ वाण से भीमसेन की सुवर्ण-दण्डयुक्त सिंह-चिह्नशोभित ध्वजा काटकर गिरा दी।

यह देखकर महापराक्रमी भीम क्रोध से अधीर हो गये। उन्होंने भी तीन बाणों से भीष्म को, एक बाण से कृपाचार्य को और आठ बाणों से कृतवर्मा को घायल किया। उसी समय हाथी पर सवार महावीर उत्तर कुमार महावीर मद्रराज शल्य के सामने आये। महापराक्रमी शल्य उत्तर कुमार के हाथी के वेग को रोकने के लिए आगे बढ़े और बाण बरसाने लगे। उत्तर कुमार के हाथी ने कुपित होकर शल्य के रथ पर पैर रखकर पैरों से उसके चारों घोड़ों को मार डाला। तब बिना घोड़ों के रथ पर बैठे हुए वीर शल्य ने विषैले नाग के समान भयानक लोहे की शक्ति उत्तर के ऊपर चलाई। उससे उत्तर का कवच टूट गया, उनकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया और अंकुश-तोमर आदि शस्त्र हाथ से गिर पड़े। इस दशा में उत्तर कुमार हाथी से नीचे गिरकर मर गये। अब शल्य खड्ग लेकर रथ से उतर पड़े।

४० उन्होंने उस हाथी की सूँड़ काट डाली। मर्मस्थल में सैकड़ों बाण लगने और सूँड़ कट जाने से भयानक आर्तनाद करता हुआ वह गजराज गिरकर मर गया। शल्य इस तरह अपना काम करके शीघ्रता के साथ कृतवर्मा के सुवर्णमय रथ पर सवार हो गये।

विराट के दूसरे पुत्र श्वेत अपने भाई उत्तर की मृत्यु और कृतवर्मा के रथ पर शल्य को स्थित देखकर, आहुति पड़ने से अग्नि के समान, क्रोध से जल उठे। बली श्वेत इन्द्र-धनुष के समान अपने धनुष को चढ़ाकर बाणों की वर्षा करते हुए शल्य को मारने के लिए उनकी ओर दौड़े। मस्त हाथी के समान पराक्रमी श्वेत को आते देखकर, मृत्यु के मुख में पड़े हुए शल्य को बचाने के लिए, आपके पक्ष के सात वीर रथी—बृहद्बल, जयत्सेन, शल्य का पुत्र रुक्मरथ, विन्द, अनुविन्द, जयद्रथ और सुदक्षिण—बड़े-बड़े धनुष चढ़ाकर आगे बढ़े। उनके धनुष

५० घनघटा के बीच बिजली के समान चमकने लगे। गर्मी के बाद हवा से ज़ोर पकड़े हुए बादल जैसे पहाड़ के ऊपर जल की वर्षा करें, वैसे ही वे वीर श्वेत के ऊपर बाण बरसाने लगे। महावीर श्वेत ने क्रोध करके तीक्ष्ण सात भल्ल बाणों से सातों के धनुष काट डाले। उन वीरों

ने फुर्ती के साथ फिर और धनुष हाथ में लेकर श्वेत को सात बाण मारे। किन्तु श्वेत ने फिर भी फुर्ती के साथ सात भल्ल बाणों से उन्हें काट डाला। तब क्रोध से काँपते हुए उन वीरों ने सिंहनाद करके उल्का-सदृश, इन्द्र के वज्र के तुल्य, चमकीली सात शक्तियाँ एक साथ उठाकर फुर्ती के साथ श्वेत के ऊपर फेंकीं। श्वेत ने तीक्ष्ण सात बाणों से बीच में ही उन शक्तियों को काट गिराया। इसके बाद सबके शरीरों को भिन्न करने की शक्ति रखनेवाला एक श्रेष्ठ अमोघ बाण लेकर श्वेत ने रुक्मरथ के ऊपर चलाया। वह वज्रतुल्य बाण ज़ोर से आकर लगा और रुक्मरथ अत्यन्त व्यथित और मूर्च्छित होकर रथ पर गिर पड़े। रथी को बेहोश देखकर सारथी सब लोगों के सामने रथ को युद्धभूमि से हटा ले गया। श्वेत ने फिर और सुवर्ण- ६० मण्डित तीक्ष्ण छः बाण चलाकर शेष छः रथियों की ध्वजाएँ काट डालीं। इस प्रकार उनके घोड़ों और सारथियों को घायल तथा उन्हें भी बाणवर्षा से विह्वल करके महावीर श्वेत मद्रराज शल्य के सामने आये। महाराज, सेनापति श्वेत जब शल्य के रथ के सामने पहुँचे तब आपकी सेना में बड़ा कोलाहल होने लगा। अब आपके महाबली पुत्र दुर्योधन, भीष्म पितामह के साथ, सब सेना लेकर श्वेत को रोकने के लिए गये। इस प्रकार आपके पुत्र ने जाकर, भीष्म की सहायता से, मृत्यु-मुख में पड़े हुए मद्रराज शल्य को उबारा। इसके बाद अत्यन्त भयानक युद्ध होने लगा। हाथी और रथ एक दूसरे से भिड़कर रोमाञ्च उत्पन्न करनेवाला युद्ध करने लगे। आपकी और पाण्डवों की सेना प्राणों का मोह छोड़कर लड़ने लगी। कुरु-पितामह भीष्म उस समय फुर्ती के साथ अभिमन्यु, भीमसेन, महारथी सात्यकि, कैकेय, विराट, धृष्टद्युम्न और चेदि-मत्स्य आदि देशों की सेना के ऊपर लगातार घोर बाण बरसाने लगे। ६७

अड़तालीसवाँ अध्याय

भीष्म के हाथ राजकुमार श्वेत का मारा जाना

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय! धनुर्द्धरश्रेष्ठ श्वेतकुमार जब कुपित होकर शल्य के रथ की ओर चले तब भीष्म पितामह और कौरवों या पाण्डवों ने क्या किया?

सञ्जय ने कहा—महाराज! हज़ारों क्षत्रियश्रेष्ठ वीरगण, सेनापति श्वेत को आगे करके, आपके पुत्र राजा दुर्योधन को अपना बल और पराक्रम दिखाने लगे। श्रेष्ठ योद्धा भीष्म जब पाण्डवसेना का संहार करने लगे तब उनसे अपना बचाव करने के लिए, शिखण्डी को आगे करके, वे सब महारथी भीष्म के सुवर्णमण्डित रथ के पास पहुँचे। राजन्, उस समय आपके और शत्रुपक्ष के सैनिकों में परस्पर महाभयानक युद्ध हुआ और बहुत से लोग हत तथा आहत हुए। सुनिए, वह वृत्तान्त मैं विस्तार के साथ कहता हूँ।

सूर्यसदृश तेजस्वी वीर भीष्म ने लगातार बाण-वर्षा के द्वारा वीरों के सिर काट-काटकर बहुत से रथों के आसनों को ख़ाली कर दिया। उनके बाणों ने सूर्यमण्डल तक को छा लिया। सूर्यदेव उदय होकर जैसे अँधेरे को नष्ट करते हैं, वैसे ही वीर भीष्म युद्धभूमि में असंख्य वीरों का नाश करने लगे। महाराज, भीष्म के चलाये हुए सैकड़ों-हज़ारों क्षत्रियों का नाश करनेवाले बाण वेग के साथ जा-जाकर महापराक्रमी योद्धाओं के मस्तक काटने लगे। भीष्म के बाणों से सिर कट जाने पर महापराक्रमी रथी लोग रथों पर गिरने लगे। उस युद्धभूमि में काँटेदार कवच पहने हुए हाथी, वज्र से फूटे पहाड़ों की तरह, बाणों से छिन्न-भिन्न होकर गिरते देख पड़ते थे। रथों के ऊपर रथ टूट-टूटकर गिर रहे थे। बहुत से रथों को घोड़े खींचते चले जाते थे और उनमें, धनुष हाथ में लिये, मरे हुए नौजवान वीरों के शरीर लटक रहे थे। खड्ग, ढाल और तर्कस बाँधे हुए वीरों के सिर कट गये थे, और उन्हें लादे हुए घोड़े इधर-उधर भागे जा रहे थे। सैकड़ों योद्धा वीरशय्या पर मरे पड़े थे। अनेक वीर पुरुष एक दूसरे के पीछे दौड़ते, गिर पड़ते, फिर उठते और पृथ्वी पर लोट जाते थे। द्वन्द्वयुद्ध में परस्पर प्रहार से व्यथित वीर आर्त शब्द कर रहे थे। मस्त हाथी अपने पैरों से घोड़ों और उनके सवारों को रौंदते चले जा रहे थे। रथों पर बैठे वीर पुरुष चारों ओर के योद्धाओं को कुचलते और काटते चले जाते थे। दूसरे के बाण से मरकर कोई रथ पर से पृथ्वी पर गिर रहा था। सारथी के मर जाने पर छिन्न-भिन्न अनेक बड़े-बड़े रथ गिरकर घायलों को चूर-चूर कर डालते थे।

महाराज, उस समय इतनी धूल उड़ी कि युद्धभूमि में अँधेरा छा गया। परस्पर युद्ध करते हुए लोग केवल धनुष का शब्द सुनकर यह समझते थे कि उनसे लड़नेवाला कहाँ पर है; उन्हें लड़नेवाले का शरीर नहीं देख पड़ता था। शरीर का स्पर्श करने पर ही ज्ञात होता था कि यह दूसरा योद्धा है। कोई किसी को आँखों से नहीं देख पाता था। सेना में इतना कोलाहल हो रहा था कि परस्पर लड़नेवाले वीरों को अपने प्रतिद्वन्द्वी का सिंहनाद भी नहीं सुन पड़ता था। संग्रामभूमि में घोर कोलाहल मचा हुआ था, नगाड़ों के शब्द से कान फटे जा रहे थे। द्वन्द्वयुद्ध करते हुए वीर अपना-अपना पराक्रम दिखाते समय जो अपने नाम-गोत्र का उच्चारण करते थे या कुछ कहते-सुनते थे सो कुछ भी नहीं सुन पड़ता था। पितामह भीष्म के धनुष से छूटे हुए बाणों के प्रहार से आर्त, परस्पर लड़नेवाले, वीर उस अत्यन्त दारुण युद्ध में विचलित हो उठे। पिता और पुत्र भी परस्पर न पहचानने के कारण आपस में ही युद्ध करने लगे। बहुत से रथों का यह हाल था कि उनके पहिये कट गये, जुआ टूट गया और एक धुरा भी कट गया। भीष्म के बाणों से मर-मरकर सारथी और रथी रथों पर से गिर रहे थे। इस प्रकार प्रायः सभी वीरों के रथ टूट-फूट गये। वे इधर-उधर दौड़कर पैदल ही युद्ध करते देख पड़ते थे।

सूर्यसदृश तेजस्वी वीर भीष्म ने लगातार बाण-वर्षा के द्वारा वीरों के सिर काट काट कर बहुत-से रथों के आसनों को ख़ाली कर दिया।—पृ० १३७४

कहीं हाथी मर गया, कहीं सिर कट गया, कहीं घोड़ा गिर गया। बाण के प्रहार से किसी का मर्मस्थल कट गया। भीष्म पितामह शत्रुपक्ष की सेना का संहार कर रहे थे। कोई भी ऐसा नहीं रह गया जिसके शरीर में घाव न लगा हो।

उधर महाबली श्वेत भी कौरवपक्ष के हज़ारों राजाओं और राजकुमारों का संहार कर रहे थे। वे भी अपने बाणों के प्रहार से रथ-सवारों के मस्तक, अङ्गद-विभूषित हाथ, धनुष, तरकस, रथ, रथों के पहिये, छत्र और ध्वजाएँ काटने लगे। उनके बाणों के प्रहार से हज़ारों हाथी, घोड़े और मनुष्य मर-मरकर पृथ्वी पर गिर रहे थे। महाराज, हमारे पक्ष के वीर उस समय श्वेत के पराक्रम से बहुत ही डरकर रथ आदि वाहनों को छोड़कर युद्धभूमि से भागने लगे। कुरुसेना के सब वीर, बाणों की मार के बाहर आकर, भीष्म और श्वेत का युद्ध देखने लगे। उस सङ्कटसमय में भी हम लोगों ने देखा कि धीर वीर पितामह भीष्म सुमेरु पर्वत की तरह अटल होकर अपने स्थान पर डटे हुए हैं। सूर्यदेव जैसे गर्मियों में अपनी किरणों से पृथ्वी का रस खींचते हुए तपते हैं, वैसे ही भीष्म अपने तीक्ष्ण बाणों से शत्रु-सैनिकों के प्राण खींचते हुए युद्धभूमि में विराज रहे थे। वज्रपाणि इन्द्र जैसे दैत्यसेना का नाश करें, वैसे ही महाधनुर्द्धर भीष्म असंख्य बाण बरसाकर शत्रुपक्ष का संहार कर रहे थे। पाण्डवपक्ष की सेना भीष्म के हाथों अपना नाश होते देख जर्जर होकर इधर-उधर भागने लगी। भीष्म ने जब देखा कि पाण्डवसेना श्वेत को अकेले छोड़कर भागी जा रही है तब वे बहुत प्रसन्न हुए। दुर्योधन का प्रिय करने के लिए उद्यत, सुदृढ़-शरीर, आपके पिता देवव्रत भीष्म उस समय जीवन का मोह छोड़कर निर्भय होकर शीघ्रता के साथ पाण्डवों की सेना का संहार करते हुए सेनापति श्वेत के पास पहुँचे। कुरुसेना का संहार करते हुए श्वेत भीष्म के ऊपर असंख्य बाणों की वर्षा करने लगे। भीष्म ने भी श्वेत के ऊपर बेशुमार बाण बरसाये।

दो साँड़ों की तरह गरजते हुए वे दोनों वीर दो मस्त हाथियों की तरह अथवा दो क्रुद्ध बाघों की तरह एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। एक दूसरे के वध की इच्छा से दोनों पुरुष-श्रेष्ठ वीर अस्त्र-शस्त्र छोड़ते और दूसरे के अस्त्रों को रोकते थे। महाराज, यदि महाबली श्वेत पाण्डवसेना की रक्षा न करते तो अत्यन्त कुपित भीष्म पितामह एक ही दिन में सारी सेना को अपने बाणों से भस्म कर डालते। महाराज, अन्त को पराक्रमी श्वेत ने अपने युद्धकौशल से पितामह भीष्म को युद्ध से हटा दिया। भीष्म को शिथिल देखकर पाण्डव अत्यन्त प्रसन्न हुए। दुर्योधन को बड़ा खेद हुआ। वे उदास हो गये। इसके बाद महावीर दुर्योधन क्रोध के आवेश में आकर, सेना और सब राजाओं को साथ लेकर, पाण्डवसेना से युद्ध करने के लिए आगे बढ़े। दुर्मुख, कृतवर्मा, कृपाचार्य, शल्य आदि सब वीर आपके पुत्र की प्रेरणा से जाकर भीष्म की रक्षा करने लगे। दुर्योधन आदि सब राजाओं को युद्ध में पाण्डव-सेना का संहार

करते देखकर परम पराक्रमी श्वेत भीष्म को छोड़कर उन्हीं की ओर दौड़े। प्रवल आँधी जैसे पेड़ों को गिराती है वैसे ही श्वेत ने क्रुद्ध होकर कौरवों की सेना का संहार करना शुरू किया। विराट के पुत्र श्वेत इस प्रकार दुर्योधन की सेना को भगाकर फिर एकाएक वहाँ पर आ गये जहाँ भीष्म पितामह थे। वे दोनों महापराक्रमी वीर वृत्रासुर और इन्द्र की तरह एक दूसरे

५१ को मारने की इच्छा से एक दूसरे पर बाणों की वर्षा करते हुए घोर युद्ध करने लगे। श्वेत ने धनुष हाथ में लेकर भीष्म के ऊपर सात बाण छोड़े। पराक्रमी भीष्म ने पराक्रम करके, मस्त हाथी जैसे मस्त हाथी के पराक्रम को रोके वैसे, श्वेत के उस पराक्रम को व्यर्थ कर दिया। महावीर श्वेत ने फिर पचीस बाण भीष्म को मारकर अद्भुत कर्म कर दिखाया। भीष्म ने भी दस तीक्ष्ण बाण श्वेत को मारे। उन बाणों के लगने से श्वेत तनिक भी व्यथित नहीं हुए और पर्वत की तरह अचल भाव से खड़े रहे। उन्होंने धनुष चढ़ाकर फिर भीष्म को बहुत से बाण मारे। क्रोध के मारे ओठ चाटते हुए सेनापति श्वेत ने हँसकर नव बाणों से भीष्म के धनुष के दस टुकड़े कर डाले। इसके बाद एक रोएँदार बाण लेकर श्वेत ने भीष्म के रथ की तालचिह्न-युक्त ध्वजा काट गिराई। महाराज, भीष्म के रथ की ध्वजा को कटकर गिरते देखते ही आपके पुत्रों ने समझा कि श्वेत के वश में होकर अब पितामह मारे गये। पाण्डव लोग भी प्रसन्न होकर शङ्ख बजाने लगे।
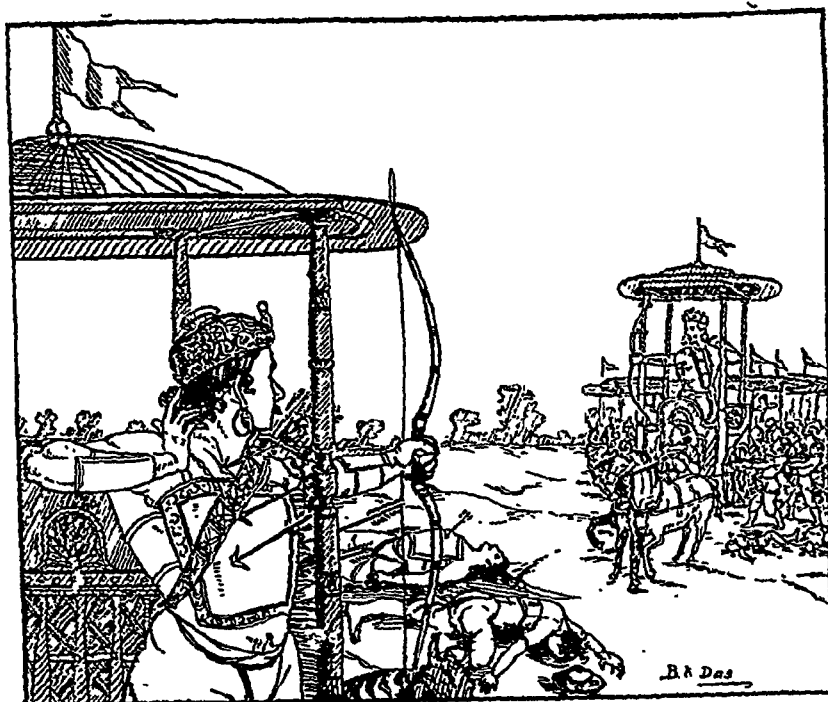
६० तब दुर्योधन ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी सेनावालों से कहा—तुम लोग यत्नपूर्वक चारों ओर से पितामह की रक्षा करो। हम लोगों के देखते हुए शूर पितामह भीष्म श्वेत के हाथों नहीं मारे जा सकते, यह मैं तुमसे सच कहता हूँ। राजा के ये वचन सुनकर महारथी लोग फुर्ती के साथ भीष्म की रक्षा करने लगे। चतुरङ्गिणी सेना साथ में लिये हुए वाह्लीक, कृतवर्मा, शल, शल्य, जलसन्ध, विकर्ण, चित्रसेन और विविंशति आदि महारथी चारों ओर से भीष्म की रक्षा करते हुए श्वेत के ऊपर बाण बरसाने लगे। महापराक्रमी श्वेत ने भी क्रुद्ध होकर अपने

हाथ की फुर्ती दिखाते हुए तीक्ष्ण बाणों से उनके बाणों को रोक दिया। सिंह जैसे हाथियों को विमुख कर दे, वैसे ही वीरवर श्वेत ने बाण मारकर उन वीरों को हटा दिया।

उन वीरों को इस तरह हटा करके श्वेत ने बहुत से बाण बरसाकर भीष्म पितामह का धनुष काट डाला। भीष्म ने फुर्ती से दूसरा धनुष लेकर कङ्कपत्रभूषित तीक्ष्ण बाणों से श्वेत को घायल कर दिया। सेनापति श्वेत ने क्रुद्ध होकर सब लोगों के सामने लोहनिर्मित बहुत से बाण भीष्म को मारे। उस प्रहार से भीष्म विह्वल-से हो गये। युद्ध में त्रिभुवनश्रेष्ठ वीर भीष्म की यह दशा देखकर राजा दुर्योधन बहुत व्यथित हुए और आपके पक्ष की सेना भी मानों सन्नाटे में आ गई। श्वेत के बाणों से घायल भीष्म की यह दशा देखकर सबने समझ लिया ७० कि भीष्म अब श्वेत के वश में आ गये और श्वेत उन्हें अभी मार डालेंगे।

आपके पिता भीष्म अपनी कटी हुई ध्वजा और भागी हुई सेना देखकर क्रोध के मारे अधीर हो उठे। उन्होने सँभलकर श्वेत के ऊपर बाण बरसाना शुरू किया। किन्तु श्रेष्ठ रथी श्वेत ने उन बाणों को राह में ही रोककर एक भल्ल बाण से भीष्म का धनुष काट डाला। इससे अत्यन्त क्रुद्ध होकर भीष्म ने और अत्यन्त दृढ़ धनुष हाथ में लिया और उस पर सात भल्ल बाण चढ़ाकर चार से श्वेत के चारों घोड़े मारे, दो से ध्वजा काटी और एक से सारथी का सिर काट डाला। बिना घोड़ों के रथ से महाबली श्वेत उतर पड़े। वे क्रोध के मारे व्याकुल हो गये। श्रेष्ठ रथी श्वेत को रथ-हीन देखकर भीष्म ने उनको अनेक तीक्ष्ण बाण मारे।

महावीर श्वेत ने इस प्रकार भीष्म के बाणों से जर्जर होकर धनुष तो अपने रथ पर डाल दिया और एक यमदण्डतुल्य सुवर्णभूषित कालजिह्वा के समान महाभयानक शक्ति हाथ में ली। वह शक्ति हाथ में लेकर श्वेत ने कहा—"हे भीष्म, अब सँभल जाओ, मेरा पराक्रम ८० देखो और मर्द बनो।" अब पाण्डवों का हित और आपका बुरा करने की इच्छा से पराक्रमी श्वेत ने वह शक्ति भीष्म के ऊपर चलाई। उस शक्ति को देखकर आपके पुत्र हाहाकार करने लगे। केंचुली से निकले हुए विषैले साँप के समान, कालदण्ड ऐसी महाघोर वह शक्ति श्वेत के हाथ से छूटकर आकाश में भारी उल्का के समान ज्वालामयी देख पड़ी।

किन्तु उस शक्ति को देखकर महापराक्रमी भीष्म तनिक भी नहीं घबराये। उन्होंने आठ-नव तीक्ष्ण बाण चलाकर उस सुवर्णमयी घोर शक्ति को बीच में ही टुकड़े-टुकड़े करके गिरा दिया। उस शक्ति की यह दशा देखकर आपके पुत्र प्रसन्नता के मारे चिल्लाने लगे। शक्ति को नष्ट देखकर श्वेत क्रोध से अधीर हो उठे। उनके सिर पर काल सवार था, इससे वे कुछ निश्चय नहीं कर सके कि अब क्या करना चाहिए। इसके बाद क्रोध से आँखें लाल करके, दण्डपाणि यमराज की तरह गदा हाथ में लेकर, भीष्म को मारने के लिए उनकी ओर श्वेत दौड़े। जल का प्रवाह जैसे पर्वत की ओर चले, वैसे ही श्वेत को अपनी ओर आते देखकर, ९०

उनके वेग को न रुकनेवाला समझकर, उस प्रहार से बचने के लिए, महाप्रतापी भीष्म एकाएक रथ से कूद पड़े। उधर श्वेत ने क्रोध के मारे वह गदा घुमाकर ज़ोर से भीष्म के रथ पर फेंकी।

कुबेरतुल्य श्वेत के हाथ से छूटी हुई वह गदा रथ के ऊपर गिरी। उसकी चोट से ध्वजा, सारथी, घोड़े, जुआ, धुरा आदि सहित वह रथ चूरचूर हो गया।

भीष्म को रथ-हीन देखकर शल्य आदि सब योद्धा अन्य रथ लेकर उनके पास पहुँचे। तब कुछ खिन्न से होकर, दूसरे रथ पर चढ़कर, पितामह भीष्म धनुष चढ़ाकर धीरे-धीरे श्वेत की ओर बढ़े। राजन्, इसी बीच में भीष्म ने अपने हित की सूचना देनेवाली यह दिव्य आकाशवाणी सुनी "हे भीष्म, हे महाबाहो, शीघ्र श्वेत को मारने का यत्न करो। विधाता ने इसे मारने का यही समय निर्दिष्ट किया है।" देवदूत के कहे हुए ये वचन सुनकर भीष्म बहुत प्रसन्न हुए और श्वेत को मारने का दृढ़ विचार करके युद्ध के लिए तैयार हुए।

इधर श्वेत को रथ-हीन और पैदल देखकर उनकी सहायता करने के लिए सात्यकि, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, कैकेय, धृष्टकेतु, पराक्रमी अभिमन्यु आदि वीर रथ लेकर आगे बढ़े। १०० महाप्रतापी भीष्म ने द्रोण, कृप, शल्य आदि के साथ इन सबको बीच में ही रोकने का यत्न किया। पानी के वेग को जैसे पहाड़ रोकता है, वैसे ही पराक्रमी भीष्म ने बाण-वर्षा करके पाण्डवों को और उनके वीरों को आगे नहीं बढ़ने दिया। महावीर निर्भय श्वेत ने यह देखकर साहस के साथ खड्ग निकालकर उसके प्रहार से भीष्म का धनुष फिर काट डाला। कटे हुए धनुष को भीष्म ने अलग फेंक दिया। देवदूत के वचन सुनकर श्वेत को मारने के लिए शीघ्रता करते हुए पितामह ने इन्द्रधनुष-तुल्य प्रभापूर्ण दूसरा धनुष लेकर दम भर में चढ़ा लिया। अब भीमसेन आदि वीरों से घिरे हुए सेनापति श्वेत की ओर भीष्म पितामह ने अपना रथ दौड़ाया। इधर से श्वेत की सहायता करने को आते हुए प्रतापी भीमसेन को साठ बाण मारकर भीष्म ने रोक दिया। इसी तरह उन्होंने अभिमन्यु को बहुत ही तीक्ष्ण तीन बाण मारे। सात्यकि को सौ बाण मारे। धृष्टद्युम्न को बीस बाण मारे और कैकेय को पाँच बाण मारे।

महाराज, आपके पिता भीष्म इस तरह शत्रुपक्ष के इन वीरों को घोर बाणों से हटा करके श्वेत के ऊपर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। इसी समय भीष्म ने एक बोझे को सह सकनेवाले, कालरूप, श्रेष्ठ, रोएँदार, तीक्ष्ण बाण को तरकस से निकाला। फिर उस भयानक बाण को ब्रह्मास्त्र से अभिमन्त्रित करके श्वेत का हृदय ताककर छोड़ा। देवता, गन्धर्व, पिशाच, नाग, राक्षस आदि सबने देखा कि वह बाण कवच तोड़कर पराक्रमी श्वेत के हृदय में घुस गया। महावज्र के समान प्रज्वलित वह बाण उसी तरह प्राण लेकर श्वेत के शरीर से निकलकर पृथ्वी में घुस गया, जिस तरह अस्त होते हुए सूर्य प्रभा को लेकर चले जाते हैं। पितामह के हाथ से मारे गये श्वेत का शरीर, पर्वत के फटे हुए शिखर की तरह, सबके सामने पृथ्वी पर गिर पड़ा। श्वेत की मृत्यु देखकर पाण्डव और उनके पक्ष के सब क्षत्रिय शोक करने लगे। इधर आपके पुत्र और सब कुरु-सेना अत्यन्त प्रसन्न हुई। कौरव-सेना में ख़ूब बाजे बजे और दुःशासन आनन्द के मारे नाचने लगे। ११

युद्ध-दुर्द्धर्ष भीष्म के हाथ से विराट के पुत्र श्वेत की मृत्यु देखकर [शोक और डर के मारे] शिखण्डी आदि महाधनुर्द्धर वीर काँपने लगे। अब महावीर अर्जुन और वासुदेव ने सेनापति की मृत्यु देखकर युद्ध रोकने की आज्ञा दी। दोनों पक्ष के वीर सैनिक गरजते हुए धीरे-धीरे विश्राम के लिए अपने-अपने डेरों को चले गये। द्वन्द्वयुद्ध में श्वेत की मृत्यु होने के कारण महारथी पाण्डव लोग चिन्तित और उदास होकर डेरों को लौटे। १२१

उनचासवाँ अध्याय

शङ्ख के युद्ध का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, सेनापति श्वेत के मारे जाने पर धनुर्द्धरश्रेष्ठ पाञ्चालों और पाण्डवों ने युद्धभूमि में फिर क्या किया? सेनापति श्वेत की मृत्यु, उसकी सहायता करनेवालों का भागना और अपने पक्ष की विजय सुनकर मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है। मेरे पक्ष के योद्धा उपाय करते हुए यद्यपि दया से काम लेते हैं तथापि शूर पितामह भीष्म की हम पर कृपा है। श्वेत का अपने पिता से सदा वैर बना रहा। पिता से झगड़ा होने के कारण वह पाण्डवों के यहाँ चला आया था और अपनी सेना से अलग होकर क़िले में रहता था। पाण्डवों का आश्रय पाकर उसने दुर्गम स्थान को आबाद किया और शत्रुओं का नाश कर अपना व्यवहार अच्छा रक्खा। मेरा बेटा दुर्योधन उन्मत्त और नीच है। कुरुकुलश्रेष्ठ भीष्म, महात्मा द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, मैं और गान्धारी, किसी की इच्छा नहीं थी कि यह युद्ध हो। उधर वासुदेव, परम धार्मिक युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और

१० सहदेव भी इस युद्ध को पसन्द नहीं करते थे। पहले मैं, गान्धारी, विदुर, परशुराम और महात्मा व्यास आदि सबने दुरात्मा दुर्योधन को समझाया और मना किया था कि पाण्डवों से युद्ध मत करो; किन्तु उस उद्दण्ड हठी ने हमारे मना करने को नहीं माना। हमारे उपदेश की अवहेला करके कर्ण, शकुनि और दुःशासन की सलाह मानकर दुष्ट दुर्योधन पाण्डवों से, ईर्ष्या रखने के कारण, लड़ पड़ा। उसने पाण्डवों की कुछ परवा नहीं की। मैं समझता हूँ, अब उसके ऊपर घोर सङ्कट आनेवाला है। श्वेत की मृत्यु और भीष्म की विजय से अत्यन्त क्रुद्ध होकर कृष्णसहित अर्जुन ने युद्ध में क्या किया? मुझसे सब वृत्तान्त कहो। हे सञ्जय, अर्जुन से मुझे बड़ा डर है। वह किसी तरह दूर नहीं होता। मुझे स्पष्ट जान पड़ता है कि शूर और फुर्तीले अर्जुन अवश्य अपने बाणों से शत्रुओं के शरीरों को टुकड़े-टुकड़े कर डालेंगे। अर्जुन का क्रोध कभी निष्फल नहीं हो सकता। उनका इरादा भी अधूरा नहीं रह सकता। वेदज्ञ, शूर, सूर्य और अग्नि के समान तेजस्वी, बल में महेन्द्र और विष्णु के सदृश, इन्द्रास्त्र के ज्ञाता, अप्रमेय पराक्रमी, इन्द्रतुल्य अर्जुन को समर के लिए उद्यत देखकर तुम्हारे मन में कैसा भाव प्रकट हुआ था? वज्र के ऐसे रूप और स्पर्शवाले अमोघ अस्त्रों का प्रयोग करने में निपुण, खड्गयुद्ध में अद्वितीय अर्जुन ने क्रोध करके क्या किया? हे सञ्जय! युद्ध में श्वेत के मारे जाने पर महारथी, पराक्रमी धृष्टद्युम्न ने क्या किया? मुझे निश्चय जान पड़ता है कि दुर्योधन ने पहले जो कुव्यवहार किये हैं उनसे और सेनापति श्वेत की मृत्यु से पाण्डवों के हृदय में असह्य
२० क्रोध की आग भड़क उठी होगी। हे सञ्जय, दुर्योधन के अपराध से उत्पन्न होनेवाले पाण्डवों के अनिवार्य क्रोध को सोचकर मुझे दिन को या रात को कभी घड़ी भर शान्ति नहीं मिलती। अब तुम बतलाओ, वह महायुद्ध किस तरह हुआ?

सञ्जय ने कहा—महाराज, मन लगाकर सुनिए। आप ही इस विपत्ति के आने का मूल कारण हैं। इस बारे में दुर्योधन के ऊपर दोषारोपण करना अनुचित है। पानी की बाढ़ निकल जाने पर पुल बाँधना या घर जल जाने पर कुआँ खोदना जैसे व्यर्थ होता है वैसे ही अब आपका यों कहना और सोचना व्यर्थ है। ख़ैर, अब आप युद्ध का ब्योरा सुनिए। वह दारुण दिन का पूर्वभाग (दोपहर) बीत जाने पर दूसरे भाग में फिर कौरवों और पाण्डवों में युद्ध होने लगा। विराट के पुत्र सेनापति श्वेत को मरा हुआ और कृतवर्मा-सहित शल्य को युद्ध के लिए तैयार देखकर वीर शङ्ख, आहुति पड़ने पर अग्नि के समान, क्रोध से प्रज्वलित हो उठे। बहुत से रथों के द्वारा चारों ओर से सुरक्षित वीर शङ्ख इन्द्रधनुष ऐसा श्रेष्ठ धनुष चढ़ाकर मद्रराज शल्य को मारने के लिए उनकी ओर बढ़े और तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करने लगे। मस्त हाथी के समान पराक्रमी विराट-पुत्र शङ्ख को आते देखकर, शल्य को मृत्यु-मुख से बचाने के लिए, आपके पक्ष के सात महारथी—बृहद्बल, जयत्सेन, रुक्मरथ, विन्द, अनुविन्द, सुदक्षिण और जयद्रथ—बाणों की

वर्षा करते हुए आगे बढ़े। अनेक धातुओं से विचित्र उन लोगों के धनुष बादलों में बिजली की तरह चमक रहे थे। उन्होंने शङ्ख के ऊपर बाण बरसाना शुरू किया। तब महापराक्रमी शङ्ख ने कुपित होकर सात तीक्ष्ण भल्ल बाणों से उनके धनुष काटकर सिंहनाद किया। ३१

इसी समय महावीर भीष्म मेघ के समान गरजते हुए तालपरिमित धनुप लेकर शीघ्रता के साथ शङ्ख के सामने आये। भीष्म को आते देखकर पाण्डवों की सेना की दशा आँधी के वेग से डगमगाती हुई नाव के समान हो गई। तब भीष्म से शङ्ख की रक्षा करने के लिए महावीर अर्जुन फुर्ती के साथ शङ्ख के आगे आ गये। उस समय युद्ध करते हुए योद्धाओं में भारी हाहाकार मच गया। एक तेज जैसे दूसरे तेज से जा भिड़े, वैसे भीष्म और अर्जुन को आमने-सामने देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। उधर शल्य और शङ्ख से युद्ध होने लगा। शल्य ने अपने रथ से उतरकर गदा के प्रहार से शङ्ख के रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। तब उस रथ से उतरकर खड्ग हाथ में लेकर शङ्ख अर्जुन के रथ पर चले गये। वहाँ जाने पर उनका बचाव हुआ। ४०

इधर भीष्म के रथ से फुर्ती के साथ इतने बाण बरसने लगे कि उनसे चारों ओर आकाश और पृथ्वी व्याप्त हो गई। श्रेष्ठ योद्धा भीष्म पाञ्चाल, मत्स्य, केकय, प्रभद्रक आदि देशों के वीरों को अपने बाणों से मार-मारकर गिराने लगे। वे सव्यसाची पाण्डव को छोड़कर, अपनी सेना के बीच स्थित, प्रिय सम्बन्धी पाञ्चालराज द्रुपद के सामने पहुँचे, और उन पर बाण बरसाने लगे। गर्मियों में दावानल जैसे जङ्गलों को जलाता है वैसे ही भीष्म पितामह अपने बाणों से पाञ्चालसेना का संहार करने लगे। युद्धभूमि में पितामह भीष्म बिना धुएँ की आग के समान देख पड़ते थे। दोपहर के सूर्य के समान अपने तेज से तपते हुए भीष्म को पाण्डव-सेना का कोई योद्धा आँख भरकर देख भी नहीं सकता था। शीतपीड़ित गाय-बैलों की तरह भयपीड़ित पाण्डव-सैनिक चारों ओर देखने लगे। उन्हें कोई अपनी रक्षा करनेवाला न देख पड़ता था। सिंह के हमला करने पर जैसे गायों के झुण्ड भाग खड़े होते हैं वैसे ही भीष्म के बाणों से पीड़ित होकर—हत-आहत, निरुत्साह, विमर्दित होकर—पाण्डवों की सेना इधर-उधर भागने लगी। घोर हाहाकार मच गया।

भीष्म पितामह के मण्डलाकार धनुप से चमकीली नोकवाले, विषैले सर्प-तुल्य बाण लगातार निकल रहे थे। जिधर भीष्म बाण बरसाते थे उधर ही सेना में भगदर पड़ जाती थी। भीष्म पितामह ललकार-ललकारकर पाण्डवपक्ष के वीरों को मार रहे थे। सेना उन्मथित होकर भाग रही थी, इसी समय सूर्य भी अस्ताचल पर पहुँच गये। अँधेरे में कुछ नहीं सूझ पड़ता था। युद्धभूमि में भीष्म का अनिवार्य पराक्रम देखकर पाण्डवों ने सैनिकों को युद्ध रोकने की आज्ञा दे दी। ५०

५३

पचासवाँ अध्याय

क्रौञ्चव्यूह की रचना

सञ्जय कहते हैं—महाराज, पहले दिन का युद्ध समाप्त हो गया। क्रुद्ध भीष्म का युद्ध में पराक्रम देखकर दुर्योधन को बड़ी प्रसन्नता हुई। इधर धर्मात्मा युधिष्ठिर बहुत शोकाकुल हुए। उन्होंने सोचा कि जो भीष्म यों ही लड़ते रहे तो अवश्य हमारी हार होगी। इससे भाइयों और सब राजाओं के साथ वे उसी दम श्रीकृष्ण के पास जाकर कहने लगे—कृष्णचन्द्र!

आग जैसे गर्मियों में सूखे घास-फूस के ढेर को जलावे, वैसे ही भीष्म पितामह अपने बाणों से मेरी सेना का संहार कर रहे हैं। हम लोग इन महात्मा पितामह का सामना कैसे कर सकेंगे? वे आहुति पाकर प्रज्वलित अग्नि की तरह मेरी सेना को भस्म कर रहे हैं। धनुष धारण किये महाबली भीष्म को देखकर और उनके बाणों की चोट खाकर मेरी सेना भाग खड़ी होती है। क्रुद्ध दण्डपाणि यमराज, वज्रपाणि इन्द्र, पाशपाणि वरुण, गदापाणि कुबेर चाहे जीते भी जा सकें, किन्तु धनुष हाथ में लिये महाबली भीष्म नहीं जीते जा सकते। मैं अपनी बुद्धि की कमज़ोरी के कारण, जिसके पार जाने के लिए कोई उपायरूप नौका नहीं है उस, भीष्मरूप अथाह समुद्र में डूबा जा रहा हूँ। हे वासुदेव! मैं वन को चला जाऊँगा, वहाँ जीवन बिताना मुझे अच्छा जान पड़ता है। इन राजाओं को और इतनी सेना को व्यर्थ भीष्म के हाथों मृत्युमुख में भेजना मुझे ठीक नहीं जँचता। महास्त्रों के ज्ञाता भीष्म १० बहुत शीघ्र मेरी सारी सेना नष्ट कर देंगे। जैसे जलती हुई आग में हज़ारों पतङ्ग जलने के लिए कूदते हैं, वैसे ही मेरे सैनिक केवल विनाश के लिए भीष्म के सामने जाते हैं। मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारे ये भाई बाणों के प्रहार से पीड़ित हो रहे हैं। ये मेरे ही कारण भ्रातृस्नेह से आज तक सुख और राज्य से भ्रष्ट होकर कष्ट सहते आये हैं। राज्य के लिए पराक्रम करके भीष्म के द्वारा मैं अवश्य चौपट होऊँगा। मैं इस समय अपना और अपने भाइयों का जीवन ही बड़ा

बात समझ रहा हूँ। इस समय तो जीवन ही दुर्लभ जान पड़ता है। मैं शेष जीवन कठोर तप करके भले बिता दूँगा; किन्तु रण में इन मित्रों की हत्या नहीं करा सकूँगा।

हे माधव, महाबली भीष्म ने मेरे पक्ष के कई हज़ार श्रेष्ठ योद्धाओं को अपने दिव्य अस्त्रों से मार डाला है और वे इसी तरह नित्य मेरी सेना का संहार करेंगे। इसलिए बहुत जल्द यह बताइए कि क्या करने से मेरा हित होगा। महावीर अर्जुन मुझे सङ्ग्राम से उदासीन से देख पड़ते हैं। अकेले भीमसेन क्षत्रिय-धर्म के अनुसार यथाशक्ति बाहुबल से युद्ध करते हैं। महामनस्वी वीर भीम शत्रुघातिनी गदा से उत्साहपूर्वक रथों, हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों के दलों में दुष्कर कर्म अवश्य करते हैं, किन्तु ये अकेले सौ वर्ष में भी सरल युद्ध के द्वारा शत्रु-सेना का संहार नहीं कर सकते। तुम्हारे प्रिय सखा ये अर्जुन ही सब दिव्य अस्त्रों को जानते हैं। सो ये भीष्म, द्रोण आदि के द्वारा हमारे पक्ष का नाश होते देखकर भी लापरवाही दिखा रहे हैं। २० महात्मा भीष्म और द्रोणाचार्य के दिव्य अस्त्र बारम्बार प्रयुक्त होकर हमारे पक्ष क सब क्षत्रियों को भस्म कर डालेंगे। हे कृष्णचन्द्र! भीष्म का जैसा पराक्रम है, उसे देखकर स्पष्ट जान पड़ता है कि वे अपने पक्ष के सब राजाओं के साथ, क्रुद्ध होकर, हमारी सारी सेना को नष्ट कर देंगे। इसलिए हे जनार्दन, शीघ्र वह वीर बताइए जो युद्ध में भीष्म को वैसे ठण्डा कर सकता हो जैसे दावानल को मेघ शान्त कर देते हैं। हे योगेश्वर, हे महाभाग! आपके ही प्रसाद से पाण्डव लोग शत्रुओं को मारकर अपना राज्य पावेंगे और भाई-बन्धु सहित आनन्द करेंगे।

हे महाराज, यों कहकर महामनस्वी युधिष्ठिर शोक से व्याकुल अवस्था में बहुत देर तक [आँखें बन्द किये] ध्यानावस्थित से बैठे रहे। तब उन्हें शोक से व्याकुल और दुःखित जानकर श्रीकृष्णचन्द्र सब पाण्डवों को प्रसन्न करते हुए इस प्रकार कहने लगे—हे पाण्डवश्रेष्ठ, आप शोक न करें। आप शोक करने के योग्य नहीं हैं; क्योंकि आपके चारों भाई त्रिलोक-प्रसिद्ध योद्धा और अद्वितीय वीर हैं। मैं, महायशस्वी सात्यकि, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न और अपनी सेनाओं सहित ये सब राजा लोग आपका प्रिय करनेवाले और भक्त हैं। सब आपके कृपाकांक्षी और हितचिन्तक हैं। आपके हितैषी, प्रिय करनेवाले, महाबली धृष्टद्युम्न सेनापति हैं। हे महाबाहो! विश्वास रखिए, ये शिखण्डी ही भीष्म के लिए मृत्युस्वरूप हैं। ३०

धार्मिकश्रेष्ठ युधिष्ठिर यह सुनकर उस सभा के बीच में वासुदेव के सामने धृष्टद्युम्न से बोले—हे धृष्टद्युम्न, मेरी बातों को मन लगाकर सुनो। मुझे पूरा विश्वास है कि मैं जो कहूँगा, उसे तुम नहीं टालोगे। तुम वासुदेव के समान प्रतापी हो। पहले कार्त्तिकेय जैसे देवताओं के सेनापति हुए थे, वैसे ही तुम पाण्डवों के सेनापति हो। हे पुरुषसिंह, तुम अपना बल और पराक्रम दिखाकर कौरवों का संहार करो। मैं, भीमसेन, श्रीकृष्ण, नकुल, सहदेव, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और अन्य प्रधान-प्रधान राजा लोग, सब तुम्हारे पीछे सहायता के लिए चलेंगे।

युधिष्ठिर के वचन सुनकर वहाँ उपस्थित सब लोगों को प्रसन्न करते हुए धृष्टद्युम्न कहने लगे—भगवान् शङ्कर ने मुझे द्रोण का काल बनाया है। महाराज! मैं युद्ध में भीष्म, कृप, द्रोण, शल्य और दर्पयुक्त जयद्रथ आदि सब महारथियों से युद्ध करूँगा। महावीर धृष्टद्युम्न जब इस प्रकार युद्ध के लिए तैयार हुए तब सब पाण्डव प्रसन्न होकर सिंहनाद और जय शब्द करने लगे। अब धर्मराज युधिष्ठिर ने सेनापति धृष्टद्युम्न से कहा—हे वीर, जब देवताओं और असुरों का संग्राम हुआ था तब महामनस्वी बृहस्पति ने इन्द्र को जो दुर्भेद्य क्रौञ्चव्यूह बतलाया था, वही व्यूह हम लोग रचेंगे। वह व्यूह शत्रुसेना को नष्ट कर देता है। कौरव और अन्य राजा लोग पहले कभी न देखे हुए उस व्यूह को देखेंगे।

४०

धृष्टद्युम्न को यह उपदेश देकर धर्मराज युधिष्ठिर ने रात्रि को विश्राम किया। सबेरे पाण्डवों ने इस तरह क्रौञ्चव्यूह की रचना की;—सब सेना के अगले भाग में अर्जुन स्थित हुए। अर्जुन के रथ की ध्वजा इन्द्र की आज्ञा से विश्वकर्मा ने बनाई थी। वह ध्वजा वज्र के रङ्ग की अनेक पताकाओं से शोभित थी। वह आकाशस्थित गन्धर्व नगर के समान अन्तरिक्ष में फहरा रही थी। उसे देखने से जान पड़ता था मानों वह नृत्य कर रही हो। सूर्य के समीप स्थित होकर ब्रह्मा जैसे शोभित होते हैं, वैसे ही उस प्रकाशमान ध्वजा के समीप अर्जुन की शोभा हुई। बहुत सी सेना साथ लिये हुए राजा द्रुपद उस व्यूह के मस्तक में स्थित हुए। कुन्तिभोज और चैद्य दोनों वीर नेत्र के स्थान में स्थित हुए। दशार्णदेशीय, प्रभद्रकगण, दाशेरक, अनूपक और किरातगण उसकी गर्दन के स्थान में स्थित हुए। धर्मराज युधिष्ठिर स्वयं पटच्चर, पौण्ड्र, पौरवक और निषादगण के साथ उसके पृष्ठभाग में स्थित हुए। भीमसेन, धृष्टद्युम्न, महारथी सात्यकि, द्रौपदी के पाँचों

५० पुत्र, अभिमन्यु पिशाचगण, पुण्ड्रगण, दरद, कुण्डीविष, मारुत, धेनुक, तङ्गण, परतङ्गण, वाह्लीक, तित्तिर, पाण्ड्य, चोल आदि देशों के वीर दक्षिणपक्ष में, और अग्निवेश, हुण्ड, मालव, दानभारि, शबर, उद्भस, वत्स और नाकुल आदि वीरों की सेना के साथ नकुल और सहदेव वाम-

पक्ष में स्थित हुए। इस व्यूह के दोनों पक्षों में दस हज़ार (अयुत), मस्तक में दस लाख (नियुत), पृष्ठस्थल में दस करोड़ (एक अर्बुद) बीस हज़ार और गर्दन में एक नियुत सत्तर हज़ार रथ रक्खे गये। उसके चारों ओर, पक्षों और उनके किनारों में—प्रकाशमान पर्वतों के समान—सुवर्ण-भूषित हाथियों के झुण्ड चले। केकय देश के राजाओं सहित राजा विराट उस व्यूह के जङ्घा भाग की रक्षा कर रहे थे। काशिराज और शैव्य तीस हज़ार रथों सहित उस व्यूह के दूसरे जङ्घा भाग की रक्षा कर रहे थे।

राजन्! इस प्रकार सूर्योदय की प्रतीक्षा करते हुए सब वीरों सहित राजा युधिष्ठिर आदि पाण्डव व्यूह की रचना करके, कवच आदि पहनकर, युद्धभूमि में स्थित हुए। उनके हाथियों और रथों के ऊपर सूर्य के समान चमकीले अत्यन्त निर्मल सफ़ेद छत्र तने हुए थे। ५८

इक्यावनवाँ अध्याय

कौरवों का व्यूह बनाना

सञ्जय कहते हैं कि महाराज! महातेजस्वी पाण्डवों के रचे हुए उस दुर्भेद्य महाव्यूह को देखकर आपके पुत्र दुर्योधन ने द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य, सोमदत्त-तनय, विकर्ण, अश्वत्थामा, दुःशासन आदि भाइयों और युद्ध के लिए आये हुए अपने पक्ष के अन्य शूरवीरों को सम्बोधन करके उत्साहित और प्रसन्न करते हुए कहा—हे वीरो, तुम सब अनेक शस्त्र और शास्त्र जाननेवाले हो। तुममें से हर एक वीर पाण्डवों को और उनकी सेना को नष्ट कर सकता है। फिर जब सभी मिलकर यह यत्न कर रहे हो तब इसमें क्या सन्देह किया जा सकता है? हमारी सेना अपार है और उसके रक्षक महापराक्रमी भीष्म हैं। पाण्डवों की सेना परिमित है और उसके रक्षक भीमसेन हैं। इस समय मेरा यही कहना है कि संस्थान, शूरसेन, वेत्रिक, कुकुर, आरोचक, त्रिगर्त, मद्रक, यवन आदि देशों के राजा लोग और शत्रुञ्जय, दुःशासन, विकर्ण, सुधीर, चित्रसेन, नन्दक, उपनन्दक, पारिभद्रक आदि सब वीर अपनी-अपनी सेना साथ लेकर भीष्म पितामह की रक्षा करें।

इस तरह दुर्योधन के कहने पर महातेजस्वी भीष्म, द्रोण और आपके सब पुत्र पाण्डवों के आक्रमण को रोकनेवाले महाव्यूह की रचना करने लगे। महावीर भीष्म बहुत सी सेना साथ लेकर इन्द्र की तरह आगे चले। गान्धार, सिन्धु-सौवीर, शिवि, वसाति, कुन्तल, दशार्ण, मगध, विदर्भ, मेलक, कर्णप्रावरण आदि देशों की वीर सेना को साथ लिये हुए महाप्रतापी द्रोणाचार्य उनके पीछे चले। अपनी बहुत सी सेना के साथ वीर शकुनि द्रोणाचार्य के पीछे चले। उनके पीछे राजा दुर्योधन अपने सब भाइयों को साथ लेकर चले। दुर्योधन के साथ अश्वातक, विकर्ण, वामन, कोशल, अम्बष्ठ, दरद, शक, क्षुद्रकमालव आदि देशों के प्रसन्नचित्त वीर १०

पुरुषों की सेना थी। भूरिश्रवा, शल, शल्य, भगदत्त, विन्द और अनुविन्द उस सेना के वाम भाग की रक्षा कर रहे थे। सोमदत्त-तनय, सुशर्मा, काम्बोजपति सुदक्षिण, श्रुतायु और अच्युतायु सेना के दक्षिण भाग की रक्षा कर रहे थे। अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा, केतुमान्, वसुदान, काशिराज-पुत्र आदि अनेक देशों के राजा अपनी-अपनी सेना को साथ लेकर उस व्यूह २० के पृष्ठभाग की रक्षा कर रहे थे। इस प्रकार व्यूह बन जाने के बाद आपकी वीर-वाहिनी के सब सैनिक, प्रसन्नतापूर्वक युद्ध के लिए उत्साहित होकर, शङ्ख बजाने और सिंहनाद करने लगे। कुरुवृद्ध पितामह भीष्म भी उस शब्द को सुनकर शङ्ख बजाने और सिंहनाद करने लगे।

उधर पाण्डवों की सेना में भी शङ्ख, नगाड़े, डङ्के आदि अनेक प्रकार के बाजे बजने लगे। वह गम्भीर शब्द चारों ओर गूँज उठा। महाप्रभावशाली नारायण और अर्जुन रथ पर सवार हुए। उस रथ में सफ़ेद रङ्ग के घोड़े जुते हुए थे। केशव ने पाञ्चजन्य, अर्जुन ने देवदत्त, भीमकर्मा भीमसेन ने पौण्ड्र, कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर ने अनन्तविजय, नकुल ने सुघोष और सहदेव ने मणिपुष्पक नाम का दिव्य शङ्ख बजाया। काशिराज, शैब्य, महारथी शिखण्डी, धृष्टद्युम्न, विराट, महावीर सात्यकि, महाधनुर्द्धर द्रुपद, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और अभिमन्यु आदि भी सिंह की तरह गरजकर शङ्ख बजाने लगे। इन सब वीरों का सिंहनाद और शङ्खनाद पृथ्वी तथा आकाशमण्डल में प्रतिध्वनित हो उठा। राजन्, कौरव और पाण्डव लोग प्रसन्नता- ३० पूर्वक फिर एक दूसरे को सन्तापित करते हुए युद्ध के लिए उद्यत हुए।

बावनवाँ अध्याय

पितामह भीष्म और अर्जुन का युद्ध

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, कौरवों और पाण्डवों की सेना में इस प्रकार व्यूह-रचना १ हो चुकने पर वे रण-निपुण योद्धा किस तरह युद्ध करने लगे?

सञ्जय ने कहा—राजन्! सेनाओं में व्यूह-रचना हो चुकी, चारों ओर ऊँची ध्वजाएँ फहराने लगीं। वह अपार सेना समुद्र सी प्रतीत होने लगी। आपके पुत्र राजा दुर्योधन ने उस अपार सैन्यसागर के बीच में खड़े होकर अपने योद्धाओं को युद्ध आरम्भ करने की आज्ञा दी। फहराती हुई ऊँची ध्वजाओं से शोभित रथों पर विराजमान वीरगण, जीवन का मोह छोड़कर, क्रोधपूर्वक पाण्डवों की सेना पर आक्रमण करने लगे। दोनों ओर की सेना घोर युद्ध करने लगी। हाथी से हाथी और रथ से रथ भिड़ गये। रथों पर से लड़नेवाले वीर हाथियों और घोड़ों पर सुवर्णपुङ्खयुक्त तीक्ष्ण अकुण्ठित बाण मारने लगे।

राजन्! इस तरह भयानक समर छिड़ने पर महाबली भीष्म कवच पहनकर, धनुष उठाकर, शत्रुपक्ष के अभिमन्यु, महावीर भीमसेन, महारथी अर्जुन, कैकेय, विराट, धृष्टद्युम्न,

चेदि और मत्स्यदेश आदि के वीर योद्धाओं पर लगातार बाणों की वर्षा करने लगे। महावीर भीष्म के आने पर उस व्यूह की शृङ्खला नष्ट हो गई, सब योद्धा क्षोभ से विह्वल हो गये। १० सैनिकों ने अपने को विपत्ति में पड़ा हुआ समझा। पाण्डवों के बहुत से पैदल, घुड़सवार, ध्वजाधारी और श्रेष्ठ घोड़े मारे जाने लगे। रथी लोगों के दल के दल भागने लगे।

भीष्म के ऐसे पराक्रम को देखकर, बहुत ही क्रुद्ध होकर, अर्जुन ने कहा—हे श्रीकृष्ण, जहाँ पर पितामह हैं वहीं पर मेरा रथ ले चलिए। मालूम होता है कि दुर्योधन के हितचिन्तक ये भीष्म कुपित होकर मेरी सारी सेना को इसी तरह नष्ट कर देंगे। द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य, विकर्ण और दुर्योधन आदि योद्धा लोग दृढ़ धनुर्द्धर भीष्म के द्वारा सुरक्षित होकर पाञ्चालसेना को नष्ट करेंगे। इस कारण अपनी सेना की रक्षा के लिए मैं भीष्म को अवश्य मारूँगा।

तब वासुदेव ने कहा—हे अर्जुन, मैं अभी तुम्हें भीष्म के पास पहुँचाये देता हूँ। बस, वे अर्जुन के लोकप्रसिद्ध रथ को भीष्म के रथ के सामने ले चले। मित्रों की प्रसन्नता बढ़ानेवाले और उनकी रक्षा करनेवाले महावीर अर्जुन बगलों की क़तार जैसे सफ़ेद रङ्गवाले सुन्दर घोड़ों से युक्त, भयङ्कर वानर-केतु-युक्त, मेघ के समान गम्भीर शब्द करनेवाले, सूर्य के समान समुज्ज्वल रथ पर बहुत ही शोभायमान हो रहे थे। वे कौरवपक्ष की सेना और शूरसेनवंशी यादवों की नारायणी सेना को नष्ट करते हुए रणभूमि में आगे बढ़ने लगे। २०

महापराक्रमी अर्जुन वीरों को डराते और तीक्ष्ण बाणों से मारते युद्ध के लिए आ रहे हैं, यह देखकर प्राच्य, सौवीर, केकय और सैन्धव आदि महावीरों से सुरक्षित पितामह भीष्म शीघ्र ही उनकी ओर आगे बढ़े। कुरु-पितामह भीष्म, गुरु द्रोणाचार्य और अतुल बलशाली कर्ण के सिवा और कौन व्यक्ति युद्धभूमि में गाण्डीवधन्वा महारथी अर्जुन के सामने जा सकता? महावीर भीष्म ने अर्जुन के पास पहुँचकर उनको सतहत्तर नाराच बाण मारे। साथ ही द्रोणाचार्य ने पचीस, कृपाचार्य ने पचास, दुर्योधन ने चौसठ, शल्य ने नव, अश्वत्थामा ने साठ, जय-

द्रथ ने नव, शकुनि ने पाँच बाण और विकर्ण ने दस भल्ल बाण मारकर चारों ओर से अर्जुन को घायल कर दिया। उन वीरों ने चारों ओर से बाण मारकर शरीर को क्षत-विक्षत तो कर दिया, किन्तु महाधनुर्द्धर महाबाहु अर्जुन पर्वत की तरह अचल खड़े रहे। इसके बाद अर्जुन ने भी भीष्म को पचीस, कृपाचार्य को नव, द्रोणाचार्य को साठ, विकर्ण को तीन, शल्य को तीन और दुर्योधन को पाँच बाण मारकर सबको घायल कर दिया।

उसी समय सात्यकि, विराट, धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र अर्जुन की सहायता और रक्षा के लिए उनके पास आ गये। भीष्म का प्रिय और सहायता करनेवाले ३० द्रोणाचार्य से लड़ने के लिए उनके सामने सोमकों सहित धृष्टद्युम्न आये। इधर श्रेष्ठ रथी भीष्म ने फिर अर्जुन को अस्सी बाण मारे। यह देखकर कौरवपक्ष की सेना के लोग प्रसन्न होकर आनन्दसूचक कोलाहल करने लगे। उनका वह हर्षसूचक शब्द सुनकर महावीर अर्जुन बहुत ही क्रुद्ध हुए और उन महारथियों के बीच में घुसकर, वीरों को ताक-ताककर, बाण मारने लगे।

अपनी सेना को अर्जुन के बाणों से पीड़ित देखकर राजा दुर्योधन ने महावीर भीष्म से कहा—हे पितामह! आप और महाधनुर्द्धर गुरु द्रोणाचार्य के जीते रहते ही ये बली अर्जुन, कृष्ण के साथ आकर, हमारी सेना का नाश कर रहे हैं। ये हमारी जड़ काटने को तैयार हैं। देखिए, वीरवर कर्ण हमारे हितैषी हैं; वे आपके ही कारण अस्त्र-शस्त्र त्याग किये बैठे हैं और पाण्डवों से युद्ध नहीं करते। इसलिए अब वह उपाय कीजिए कि युद्ध में अर्जुन मारे जायँ।

महाराज, दुर्योधन के ये वचन सुनकर और "हा, क्षात्र-धर्म को धिक्कार है!" कहकर भीष्म पितामह अर्जुन के रथ के सामने आये। दोनों के रथों में सफ़ेद रङ्ग के घोड़े जुते हुए थे। उन दोनों को युद्ध में निरत देखकर राजा लोग बारम्बार सिंहनाद करने और शङ्ख बजाने लगे। महावीर अश्वत्थामा, राजा दुर्योधन और विकर्ण भी पाण्डवों के साथ युद्ध करने की

इच्छा से महावीर भीष्म के पास आ गये। इसी तरह पाण्डवगण भी कौरवों से महायुद्ध करने के लिए अर्जुन को घेरकर युद्धभूमि में डट गये। इसके बाद महाभयानक युद्ध होने लगा। ४१ महापराक्रमी पितामह ने अर्जुन के ऊपर नव बाण छोड़े। महारथी अर्जुन ने भी मर्मभेदी दस बाण भीष्म को मारे। इसके बाद उन्होंने हज़ारों बाण बरसाकर भीष्म को चारों ओर से छिपा दिया। पितामह भीष्म ने भी असंख्य बाण चलाकर अर्जुन के चलाये बाणों को व्यर्थ कर दिया। इस प्रकार वे दोनों वीर प्रसन्नतापूर्वक एक दूसरे के प्रहार को व्यर्थ करते हुए तुल्यरूप से युद्ध करने लगे। जितने बाण भीष्म के धनुप से निकलते थे, उन्हें अर्जुन व्यर्थ कर देते थे; और जितने बाण अर्जुन के गाण्डीव धनुप से निकलते थे, वे भीष्म के बाणों से कट-कटकर पृथ्वी पर गिर पड़ते थे। महावीर अर्जुन ने भीष्म को पचीस बाण मारे, और भीष्म ने भी अर्जुन को नव बाण मारे।

राजन्! शत्रुओं का मान-मर्दन करनेवाले वे दोनों महावीर एक दूसरे के घोड़े, ध्वजा, रथ-चक्र, रथदण्ड आदि को बाणों से वेधते हुए युद्धक्रीड़ा करने लगे। इसके बाद महापराक्रमी भीष्म ने क्रुद्ध होकर तरकस से तीन बाण निकालकर धनुप पर चढ़ाकर श्रीकृष्ण की छाती में मारे। ५० भीष्म के धनुप से छूटे हुए बाणों से घायल होकर श्रीकृष्णचन्द्र फूले हुए ढाक के पेड़ के समान शोभा को प्राप्त हुए। श्रीकृष्ण को घायल देखकर महावीर अर्जुन क्रोध से अधीर हो उठे। उन्होंने भी तीन बाण मारकर भीष्म के सारथी को घायल कर दिया। वे दोनों वीर एक दूसरे के वध के लिए चेष्टा करके भी उसमें कृतकार्य नहीं हो सकते थे। दोनों वीर अपने-अपने सारथी की सामर्थ्य और फुर्ती के प्रभाव से तरह-तरह के मण्डल और गत-प्रत्यागत आदि कौशल दिखाने लगे। एक दूसरे के ऊपर प्रहार करने का अवसर खोजता था। दोनों वीर सिंहनाद, शङ्खनाद और धनुप का शब्द कर रहे थे। उन महारथियों के शङ्खनाद और रथचक्र फिरने के घोर शब्द से पृथ्वी हिलती थी, फटी जाती थी, और आर्तनाद कर रही थी। उस समय कोई भी यह निश्चय नहीं कर सकता था कि भीष्म और अर्जुन में कौन कम है और कौन अधिक है। क्योंकि दोनों ही बली, युद्धदुर्द्धर्प और समान पराक्रम दिखा रहे थे। कौरव लोग भीष्म को और पाण्डव लोग अर्जुन को ध्वजा के चिह्नमात्र से पहचान पाते थे, उनके शरीर को कोई नहीं देख पाता था। क्योंकि एक तो वे एक स्थान पर नहीं ठहरते थे, दूसरे धूल भी बेहद ६० उड़ रही थी, तीसरे बाण-जाल उन्हें छिपा लेते थे। युद्धभूमि में दोनों का ऐसा अद्भुत परा-क्रम देखकर अपने और पराये सबको बड़ा आश्चर्य हो रहा था। हे भारत, जैसे धर्मात्मा पुरुप में रत्ती भर पाप नहीं देख पड़ता, वैसे ही उन दोनों के युद्धकौशल में कहीं पर कुछ भी असावधानी या दोप नहीं देख पड़ता था। वे कभी एक दूसरे को बाण-वर्पा से ढक लेते थे और कभी उन बाणों के जाल कट जाने पर उनके रथ प्रकट हो जाते थे।

राजन्! दोनों पुरुषसिंहों का अतुल पराक्रम देखकर देवता, गन्धर्व, चारण और महर्षिगण परस्पर कहने लगे कि मनुष्य की कौन कहे, देवता, असुर और गन्धर्वगण भी संग्राम में इन दोनों वीरों को परास्त नहीं कर सकते। यह बड़ा अद्भुत संग्राम है; ऐसा संग्राम कभी न होगा। धनुष हाथ में लिये और रथ पर सवार भीष्म कभी अर्जुन से हारनेवाले नहीं हैं, और देवताओं के लिए भी दुर्द्धर्ष अर्जुन का भीष्म से संग्राम में परास्त होना सम्भव नहीं। जब तक सृष्टि की स्थिति है तब तक भी चाहे यह युद्ध होता रहे, परन्तु दोनों में से कोई हारनेवाला नहीं है।

महाराज, भीष्म और अर्जुन से युद्ध होते समय इसी तरह के प्रशंसासूचक वाक्य चारों ओर सुनाई पड़ रहे थे। उधर आपके और पाण्डवों के पक्ष के योद्धा तीक्ष्ण खड्ग, परशु, बाण आदि तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्रों से एक दूसरे के शरीरों को काट रहे थे। इधर भीष्म और अर्जुन का घोर युद्ध हो रहा था, उधर द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न भी दारुण संग्राम कर रहे थे। ७२

तिरपनवाँ अध्याय

द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न का युद्ध

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न ने रणभूमि में प्रवेश करके किस तरह युद्ध किया? उसका हाल मुझसे कहो। मैं पौरुष की अपेक्षा दैव को ही श्रेष्ठ समझता हूँ। देखो, जो भीष्म कुपित होकर युद्धभूमि में चराचर जगत् को नष्ट कर सकते हैं वही भीष्म अर्जुन को नहीं मार सके; बल्कि एक तरह से उनसे हार ही गये।

सञ्जय ने कहा—राजन्, अब मैं द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न के दारुण युद्ध का हाल कहता हूँ, ध्यान देकर सुनिए। इन्द्र सहित देवता कभी युद्ध में पाण्डवों को नहीं जीत सकते। महावीर द्रोणाचार्य ने अनेक प्रकार के बाणों से क्रुद्ध धृष्टद्युम्न को घायल करके एक भल्ल बाण मारकर उनके सारथी को रथ पर से मार गिराया। इसके बाद क्रुद्ध होकर उनके चारों घोड़ों को चार बाण मारे। तब धृष्टद्युम्न ने भी तीक्ष्ण धारवाले नब्बे बाणों से द्रोणाचार्य को घायल किया और "खड़े रहो, खड़े रहो" कहकर दर्प प्रकट किया। महाबली द्रोणाचार्य ने फिर बाण बरसाकर धृष्टद्युम्न को ढक दिया। अब धृष्टद्युम्न को मारने के लिए उन्होंने वज्ररूप, मृत्युदण्ड-तुल्य, एक अन्य बाण हाथ में लिया। द्रोणाचार्य ने वह बाण जब धनुष पर चढ़ाया तब सब सैनिक हाहाकार करके चिल्ला उठे। १०

हे भारत, उस समय धृष्टद्युम्न का अद्भुत पौरुष देख पड़ा। वे तनिक भी विचलित न होकर वहीं पर पहाड़ के समान खड़े रहे। मूर्तिमान् मृत्यु के समान उस प्रज्वलित बाण के राह में ही, अपने बाण से, दो टुकड़े करके धृष्टद्युम्न बाण बरसाने लगे। इस प्रकार धृष्टद्युम्न के हाथों यह दुष्कर कार्य होने पर पाण्डव और पाञ्चालगण प्रसन्नतापूर्वक आनन्दध्वनि करने लगे।

अथ बलशाली धृष्टद्युम्न शतचन्द्रयुक्त, अत्यन्त मनोहर, बड़े आकारवाली ढाल और दिव्य खड्ग लेकर आचार्य को मारने के लिए मस्त हाथी के सामने सिंह की तरह झपटे।—पृ० १४३१

इसके बाद प्रतापी धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य को मारने के इरादे से स्वर्णमयी, वैडूर्यमणि से विभूषित, महावेगशालिनी एक विकराल शक्ति फेंकी। महावीर द्रोण ने हँसते-हँसते राह में ही उस शक्ति के तीन टुकड़े कर डाले। महाबली धृष्टद्युम्न उस शक्ति को इस तरह व्यर्थ देखकर द्रोणाचार्य के ऊपर बाण बरसाने लगे। महारथी द्रोणाचार्य ने उस बाण-जाल को व्यर्थ करके धृष्टद्युम्न का धनुष काट डाला। धनुष कट जाने पर महायशस्वी धृष्टद्युम्न ने कुपित होकर आचार्य को मारने के लिए उनके ऊपर एक वज्र-तुल्य दृढ़, पर्वततुल्य भारी, गदा फेंकी। पराक्रमी द्रोणाचार्य ने अपने पराक्रम से उसे निष्फल करके सुवर्णपुङ्ख-युक्त अत्यन्त तीक्ष्ण भल्ल बाण धृष्टद्युम्न को मारे। वे बाण धृष्टद्युम्न का कवच तोड़कर उनके हृदय का रक्त पीने लगे। अब वीर धृष्टद्युम्न ने उसी दम अन्य धनुष लेकर पराक्रमपूर्वक पाँच बाण द्रोणाचार्य को मारे। उस समय उन दोनों वीरों के शरीर ख़ून से तर होकर वसन्तकाल में फूले हुए ढाक के पेड़ों के समान दिखाई पड़ने लगे। २१

महाराज, अमित पराक्रमी द्रोणाचार्य ने क्रुद्ध होकर फिर धृष्टद्युम्न का धनुष काट डाला। मेघ जैसे पहाड़ के ऊपर पानी बरसाता है वैसे ही वे धृष्टद्युम्न के ऊपर सन्नतपर्व बाण बरसाने लगे। इसके बाद आचार्य ने एक भल्ल बाण से उनके सारथी को और चार बाणों से चारों घोड़ों को मारकर, एक बाण से धनुष काट डाला और सिंहनाद किया। धनुष कट जाने और सारथी सहित घोड़ों के मरने पर धृष्टद्युम्न ने हाथ में एक गदा ली। वह गदा लेकर पराक्रम प्रकट करने के लिए वे रथ से उतर रहे थे, इसी समय द्रोणाचार्य ने बाणों से वह गदा भी काट डाली। यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। अब बलशाली धृष्टद्युम्न शतचन्द्रयुक्त, अत्यन्त मनोहर, बड़े आकारवाली ढाल और दिव्य खड्ग लेकर आचार्य को मारने के लिए, मस्त हाथी के सामने सिंह की तरह, झपटे। उस समय महावीर द्रोणाचार्य ने बाहुबल, अस्त्रप्रयोग, पौरुष और हाथ की फुर्ती दिखाई। उन्होंने अकेले ही बाणवर्षा करके धृष्टद्युम्न को रोक दिया। असाधारण बलशाली ३०
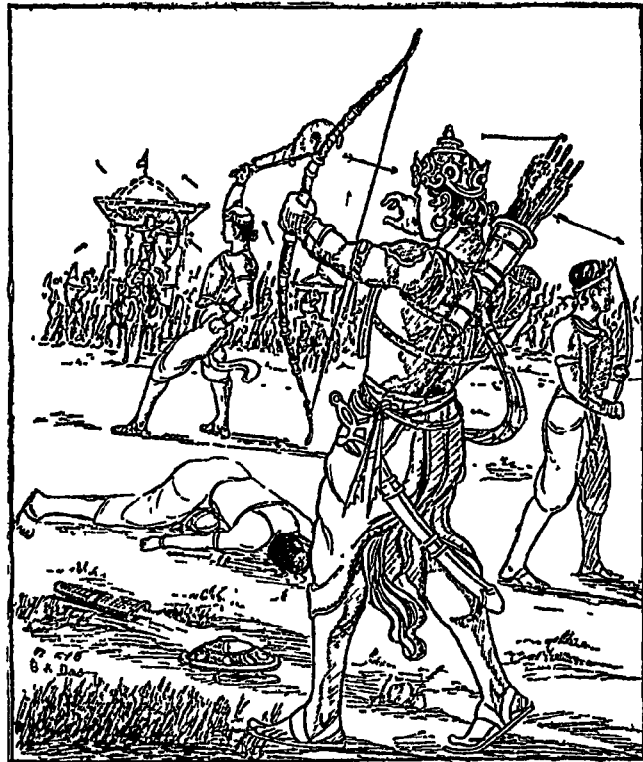
होने पर भी धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य के पास तक नहीं जा सके। केवल हाथ की फुर्ती दिखाते हुए, ढाल घुमाकर, उन बाणों की चोट बचाते रहे।

इसी समय महापराक्रमी भीमसेन वीर धृष्टद्युम्न की सहायता के लिए वहाँ आ गये। उन्होंने तीक्ष्ण धारवाले सात बाण द्रोणाचार्य को मारे। भीमसेन की सहायता पाकर धृष्टद्युम्न फुर्ती के साथ उनके रथ पर सवार हो गये। राजा दुर्योधन ने भी आचार्य की रक्षा करने के लिए बहुत सी सेना के साथ कलिङ्ग-नरेश को भेजा। आपके पुत्र की आज्ञा पाकर कलिङ्ग देश की सेना भीमसेन के ऊपर आक्रमण करने के लिए दौड़ पड़ी। श्रेष्ठ रथी द्रोणाचार्य तब धृष्टद्युम्न को छोड़कर वृद्ध राजा विराट और द्रुपद के सामने आ गये और एक साथ दोनों से युद्ध करने लगे। महाराज, इधर धृष्टद्युम्न युद्धभूमि में राजा युधिष्ठिर के पास गये उधर पराक्रमी भीमसेन के साथ ४१ कलिङ्ग देश की सेना का बड़ा भयानक, जगत् का नाश करनेवाला, संग्राम होने लगा।

चौवनवाँ अध्याय

कलिङ्गराज की मृत्यु

धृतराष्ट्र ने कहा—सञ्जय! विशाल सेना के सञ्चालक कलिङ्गराज ने, मेरे पुत्र की आज्ञा पाकर, दण्डपाणि यमराज की तरह गदा हाथ में लेकर विचरते हुए अद्भुतकर्मा महापराक्रमी भीमसेन से किस तरह युद्ध किया? सब वृत्तान्त मुझे सुनाओ।

सञ्जय ने कहा—राजेन्द्र, महाबलशाली कलिङ्ग-नरेश आपके पुत्र की आज्ञा से बहुत सी सेना साथ लेकर भीमसेन के रथ की ओर बढ़े। घोड़े, हाथी, रथ आदि पर सवार और अस्त्र-शस्त्र हाथ में लिये कलिङ्ग देश के सैनिकों को तथा निषादनन्दन केतुमान को आते देखकर भीमसेन चेदि देश के वीरों को साथ लेकर उनके सामने आये। उस समय क्रोध से अधीर श्रुतायु भी, व्यूह रचकर खड़ी हुई सेना के द्वारा सुरक्षित होकर, राजा केतुमान् के साथ भीमसेन के सामने आये। कलिङ्गराज ने कई हज़ार रथों से और महावीर केतुमान् ने निषाद-सेना तथा दस हज़ार हाथियों से भीमसेन को घेर लिया। उधर भीमसेन के आगे स्थित चेदि, मत्स्य और करूष देश के वीर और अन्य बहुत से राजा निषाद-सेना से लड़ने के लिए आगे बढ़े। इस तरह एक १० दूसरे को मारने की इच्छा से परस्पर बढ़कर दोनों पक्षों के वीरों में घोर संग्राम होने लगा।

राजन, जैसे इन्द्र ने बहुत बड़ी दैत्य-सेना के साथ युद्ध किया था वैसे ही भीमसेन भी शत्रुदल के साथ अत्यन्त घोर संग्राम करने लगे। उस समय उस महासेना का कोलाहल महासागर के गर्जन के समान जान पड़ने लगा। योद्धा लोग एक दूसरे के शरीरों को काट रहे थे, इस कारण सारी पृथ्वी मांस और रक्त की कीचड़ से परिपूर्ण हो गई। रणदुर्मद वीरगण, हिंसाप्रवृत्ति के वश होने के कारण, अपने-पराये का ख़याल नहीं कर सकते थे। बहुत लोग

अपने ही पक्ष के लोगों को—आत्मीयों को—मार डालते थे। कलिङ्ग देश के सैनिक और निषाद-गण संख्या में बहुत थे। उनके साथ थोड़ी संख्यावाले चेदिगण का युद्ध होने लगा। चेदिगण ने पहले यथाशक्ति अपना पराक्रम और पौरुष दिखाया, परन्तु अन्त को वे शत्रुसेना का आक्रमण न रोक सके और अत्यन्त व्यथित होकर, भीमसेन को छोड़कर, भाग खड़े हुए। इस तरह चेदिगण के विमुख होने पर महावीर भीमसेन, अपने बाहुबल का सहारा लेकर, कलिङ्गसेना के सामने जाकर संग्राम करने लगे। अटल भाव से रथ पर स्थित भीमसेन पैने बाण चलाकर कलिङ्ग-सेना को मारने और घायल करने लगे।

तब महाधनुर्द्धर कलिङ्गराज और उनके पुत्र शक्रदेव, दोनों युद्धभूमि में भीमसेन के ऊपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। उस समय भीमसेन अपने बाहुबल का आश्रय लेकर, धनुष चढ़ाकर, कलिङ्ग देश की सेना से घोर युद्ध करने लगे। कलिङ्ग देश के राजकुमार शक्रदेव ने बहुत से बाणों से भीमसेन के रथ के घोड़ों को मार डाला। इस प्रकार उन्हें रथ-हीन करके असंख्य बाण बरसाते हुए शक्रदेव भीमसेन के ऊपर आक्रमण करने को दौड़े। मेघ जैसे वर्षाकाल में जल बरसाते हैं वैसे ही शक्रदेव भीमसेन के ऊपर बाण बरसाने लगे। बिना घोड़ों के रथ पर स्थित महापराक्रमी भीमसेन ने एक सुदृढ़ गदा उठाकर शक्रदेव के ऊपर फेंकी। उस गदा की चोट से महावीर शक्रदेव, उनका रथ, ध्वजा, घोड़े और सारथी, सब कुछ चूर-चूर हो गया। २०

पुत्र की मृत्यु देखकर महारथी कलिङ्गराज क्रोध से अधीर हो उठे। उन्होंने कई हज़ार रथों से भीमसेन को घेर लिया। तब महावीर भीमसेन ने भयानक काम करने की इच्छा से गदा छोड़कर खड्ग और हेममय नक्षत्रों तथा अर्द्धचन्द्र के चिह्न से शोभित अति दृढ़ वृषभचर्म की ढाल ले ली। महाबली कलिङ्गराज ने भीमसेन को देखकर क्रोधपूर्वक धनुष पर डोरी चढ़ाकर, उनको मारने के लिए, एक विषैले सर्प-तुल्य भयानक बाण हाथ में लिया। कलिङ्गराज ने धनुष पर चढ़ाकर वह बाण छोड़ दिया परन्तु भीमसेन ने तीक्ष्ण धारवाले खड्ग से उस बाण के दो टुकड़े कर डाले। वे कौरवों के मन में त्रास उत्पन्न करते हुए बड़े आनन्द से सिंहनाद करने ३०

लगे। अब महावीर कलिङ्गनाथ ने क्रोध से अधीर होकर भीमसेन के ऊपर अत्यन्त तीक्ष्ण चौदह बाण छोड़े। वे सब तोमर बाण आकाशमार्ग से होकर ज्योंही भीमसेन के पास पहुँचे त्योंही उन्होंने खड्ग से उन बाणों को काट डाला।

कलिङ्गराज के मारे हुए तोमर बाण कट जाने पर विक्रमशाली भीमसेन कुँअर भानुमान् को ताककर दौड़े। कुँअर भानुमान् असंख्य बाणों से भीमसेन को छाकर आकाश को कँपानेवाला सिंहनाद करने लगे। भानुमान् के सिंहनाद को महावीर भीमसेन सह नहीं सके। वे भी क्रुद्ध होकर ज़ोर से गरजने लगे। उस शब्द से कलिङ्गसेना डरकर काँपने लगी। उस सेना को भीमसेन कोई असाधारण देवता जान पड़ने लगे। राजन्, इसके बाद गम्भीर गर्जन करते हुए भीमसेन हाथ में तलवार लिये रथ पर से कूद पड़े और बड़े वेग से दौड़े। वे भानुमान् के हाथी के दोनों दाँतों पर पैर रखकर उसके ऊपर चढ़ गये। उस समय वह हाथी शिखरयुक्त पर्वत सा जान पड़ने लगा। महावीर भीमसेन ने हाथी के ऊपर जाकर पहले खड्ग से ४० भानुमान् का सिर काट गिराया और फिर हाथी के कन्धे पर तलवार का एक हाथ मारा। इससे वह हाथी घोर चीत्कार करके पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके गिरने के पहले ही भीमसेन उसके ऊपर से नीचे कूद पड़े। अब खड्ग हाथ में लिये हुए भीमसेन दर्प के साथ अजेय हाथियों का संहार करने लगे। वे उस गज-सेना के बीच अग्निचक्र के समान चारों ओर फिरने लगे। हाथियों पर सवार असंख्य योद्धाओं के सिर काटते, वीरों को विमोहित करते हुए क्रोधित भीमसेन अकेले ही काल के समान युद्धभूमि में विचरने लगे। वीरगण विमूढ़ से होकर भयानक शब्द करते हुए भीमसेन की ओर दौड़े। शत्रुदलनाशन भीमसेन रथों के दण्ड और युग आदि को तोड़ते-फोड़ते और योद्धाओं को मारते इधर-उधर भ्रान्त, उद्भ्रान्त, आविद्ध, आप्लुत, प्रसृत, ५० प्लुत, सम्पात और समुदीर्ण आदि तरह-तरह की गतियों और पैतरों से विचरने लगे।

भीमसेन के भयङ्कर खड्ग-प्रहार से हाथियों के मर्मस्थल कट-फट गये और वे ऊँचे स्वर से चिल्लाते हुए पृथ्वी पर गिरने लगे। कुछ हाथियों के दाँत, सूँड़, मस्तक आदि अङ्ग कट गये। उन्होंने चीत्कार करते हुए इधर-उधर दौड़कर, गिरकर, अपने ही पक्ष के सैनिकों को कुचल डाला। राजन्! उस युद्ध में तोमर, अंकुश, महावत, योद्धाओं के सिर, विचित्र कम्बल, सुवर्णमण्डित बाँधने की रस्सियाँ, हाथी-घोड़ों की गर्दन बाँधने की रस्सियाँ, शक्ति, पताका, तरकस, बाजे, विचित्र धनुष, मुद्गर, भिन्दिपाल, तोत्र, अंकुश, घण्टा, म्यानें और तलवारें आदि सामग्रियाँ गिरती और गिरी हुई चारों ओर देख पड़ती थीं। हाथियों की सूँड़ों और छिन्न-भिन्न लाशों के ढेर पर्वत के समान देख पड़ते थे।

राजन्, महाबली पराक्रमी भीमसेन इस तरह हाथियों की सेना का विनाश करके घोड़ों तथा उनके सवारों को मारने और गिराने लगे। उस समय कौरव पक्ष के योद्धाओं के साथ

अब खड्ग हाथ में लिये हुए भीमसेन दर्प के साथ अजेय हाथियों का संहार करने लगे।—पृ० १६६४

महावीर भीमसेन का बड़ा भयानक युद्ध होने लगा। उस महासंग्राम में लगाम, जोत, सुवर्ण-मण्डित चमकती हुई बाँधने की रस्सियाँ, प्रास, ऋष्टि, कवच, ढाल, तरह-तरह के आस्तरण और आभूषण पृथ्वी पर चारों ओर बिखर पड़ने के कारण ऐसा जान पड़ने लगा मानों पृथ्वी पर तरह तरह के सफ़ेद कुमुद-पुष्प खिल रहे हैं। उस समय महावीर भीमसेन उछल-उछलकर खड्ग के प्रहार से रथों और घोड़ों पर सवार योद्धाओं के सिर और ध्वजाएँ काट-काटकर गिराने लगे। वे वारम्वार धावन, उत्पतन आदि गतियों के अनुसार पैंतरे बदलकर चारों ओर फिर रहे थे। उनका यह पराक्रम और फुर्ती देखकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हो रहा था। किसी-किसी योद्धा को उन्होंने पैरों से कुचलकर मार डाला। किसी को खींचकर पटक दिया। किसी को खड्ग के प्रहार से दो-टुकड़े कर डाला। कोई उनके भयानक सिंहनाद से ही डरकर मर गया। कुछ लोग उनकी जाँघों के वे ा से पृथ्वी पर गिर पड़े। बहुत लोग उन्हें देखकर ही डर के मारे मर गये। इस प्रकार उस अमित कलिङ्गसेना को जब भीमसेन मारने लगे तब उस सेना के लोग भीष्म की शरण में गये। भीष्म के साथ फिर कलिङ्गसेना भीमसेन की ओर बढ़ी। भीमसेन उस कलिङ्गसेना के साथ श्रुतायु को आते देखकर उनकी ओर चले। पराक्रमी कलिङ्गराज श्रुतायु ने भीमसेन को आते देखकर उनकी छाती में तीक्ष्ण नव बाण मारे। ईंधन पड़ने से जैसे आग बल उठती है, अथवा अंकुश मारने से जैसे हाथी उत्तेजित हो उठता है, वैसे ही उन बाणों के लगने से भीमसेन क्रोध के मारे प्रज्वलित हो उठे। इसी समय सारथी अशोक भीमसेन के पास सुवर्णमण्डित रथ लेकर पहुँचा। भीमसेन उस रथ पर सवार हुए और "ठहर तो जा, ठहर तो जा" कहते हुए कलिङ्गराज की ओर दौड़े। बलवान् कलिङ्गराज श्रुतायु ने कुपित होकर फुर्ती के साथ भीमसेन के ऊपर नव बाण छोड़े। महाबली पराक्रमी भीमसेन ने कलिङ्गराज के धनुष से छूटे हुए बाणों की चोट खाकर, डण्डे से मारे गये विषैले साँप की तरह, अत्यन्त कुपित होकर धनुष चढ़ाया। इसके बाद लोहमय सात बाणों से कलिङ्गराज को, दो बाणों से उनके चक्ररक्षक सत्यदेव को और तीन तीक्ष्ण नाराच बाणों से केतुमान् को मारकर गिरा दिया। ६१ ७०

अब कलिङ्ग देश के क्षत्रिय लोग क्रोध-वश होकर कई हज़ार सैनिकों सहित भीमसेन से संग्राम करने लगे। सैकड़ों कलिङ्गदेशीय वीरगण शक्ति, गदा, खड्ग, तोमर, ऋष्टि, परश्वध आदि शस्त्र भीमसेन के ऊपर बरसाने लगे। महाबली भीमसेन उस बाण आदि शस्त्रों की वर्षा को निष्फल करके, भारी गदा लेकर, वेग से दौड़े। गदा के प्रहार से उन्होंने सात सौ क्षत्रियों को मार गिराया। इसी तरह भीष्म के सामने ही दो हज़ार और वीरों को मारा। यह बड़ा अद्भुत कार्य हुआ। भीमसेन इस तरह कलिङ्ग देश की सेना को समर में बारम्बार छिन्न-भिन्न करने लगे। असंख्य हाथियों पर सवार योद्धा भीम के हाथों मारे गये। सवारों से ख़ाली, बाण की चोट खाये हुए हाथी, सेना में घुसकर, हवा से हटाये गये मेघों की तरह चिल्लाते ८०

और गरजते हुए अपनी ही सेना को कुचलने और रौंदने लगे। इसी समय खड्ग हाथ में लिये हुए भीमसेन हर्ष के साथ शङ्ख बजाने लगे। उस शब्द से सब कलिङ्गसेना के लोग घबरा गये। उनके दिल धड़कने लगे। अनेक पैंतरे बदलकर, बारम्बार उछलकर, इधर-उधर दौड़कर, गजराज सदृश भीम को वीर-सेना का संहार करते देख शत्रुपक्ष के वीर बहुत ही घबरा गये। जैसे कोई विकट ग्राह बड़े तालाब को मथ डाले वैसे ही भीमसेन ने उस सेना को मथ डाला। सब सैनिकों के हृदय काँपने लगे। वे डर के मारे प्राण लेकर इधर-उधर भाग खड़े हुए।

भीमसेन का यह अद्भुत काम देखकर और भागी हुई कलिङ्गसेना को फिर वापस आते देख पाण्डव-सेना के प्रधान सेनापति धृष्टद्युम्न ने अपनी सेना को युद्ध करने की आज्ञा दी। सेनापति की आज्ञा पाकर शिखण्डी आदि योद्धा लोग, बहुत से रथी-अतिरथी आदि के साथ, भीमसेन की सहायता करते हुए शत्रुसेना से युद्ध करने लगे। धर्मराज युधिष्ठिर भी मेघवर्ण हाथियों का भारी दल साथ लिये उन लोगों के पीछे सहायता के लिए चले। इस प्रकार अपनी सारी सेना को युद्ध की आज्ञा देकर वीर धृष्टद्युम्न भीमसेन के पार्श्व स्थान पर स्थित होकर उनकी सहायता करने लगे। उनके साथ और भी बहुतेरे श्रेष्ठ योद्धा थे। भीमसेन और सात्यकि से बढ़कर और कोई भी धृष्टद्युम्न को प्रिय नहीं था। भीमसेन को शत्रुसेना के बीच काल की तरह विचरते देखकर, महाबली शत्रुनाशन पाञ्चालनन्दन, प्रसन्नतापूर्वक गरजने और शङ्ख बजाने लगे। धृष्टद्युम्न के कबूतर के रङ्गवाले घोड़ों से युक्त, सुवर्णमण्डित, रथ पर कोविदार (लाल कचनार) चिह्न की ध्वजा फहराते देखकर भीमसेन को भी आश्वास हुआ। कलिङ्गसेना को भीमसेन पर हमला करने के लिए दौड़ते देखकर महावीर धृष्टद्युम्न उनकी रक्षा करने के लिए आगे बढ़े। महावीर सात्यकि ने दूर से भीमसेन और धृष्टद्युम्न को कलिङ्ग-सेना के साथ युद्ध करते देखा तो वे भी शीघ्र ही वहाँ पहुँचकर उनके पार्श्वभाग की रक्षा करने लगे। महावीर भीमसेन ने धनुष हाथ में लेकर, रौद्रभाव धारण कर, ऐसा दारुण युद्ध किया कि कलिङ्गदेशीय वीरों के शरीरों का कटकर ढेर लग गया, रक्त की नदी बह चली और उसमें मांस की कीचड़ मच गई। कलिङ्ग-सेना और पाण्डव-सेना के बीच वह भयानक रक्त की नदी बहने लगी। उस दुस्तर नदी के उस पार महाबली भीमसेन ही उतर सके, और सब लोग डूब गये। महाराज, उस समय आपके पक्ष के योद्धा चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे—यह साक्षात् काल ही भीमसेन का रूप रखकर कलिङ्ग-सेना के साथ युद्ध कर रहा है!

तब भीष्म पितामह अपनी सेना का चिल्लाना सुनकर, व्यूह-रचनापूर्वक सेना साथ लेकर, शीघ्रता से भीमसेन की तरफ़ दौड़े। उधर महाबली भीमसेन, धृष्टद्युम्न और सात्यकि, भीष्म के रथ के पास पहुँचकर, उनका रथ घेरकर, युद्ध करने लगे। तीनों वीरों ने भीष्म को तीन-तीन तीक्ष्ण बाण मारे। आपके पिता देवव्रत ने भी तीन-तीन बाण तीनों

तब दोनों ही खड्ग युद्ध करने लगे।—पृ० १६६६

वीरों को मारे। इसके बाद एक सहस्र बाण छोड़कर भीष्म ने तीनों महारथियों का वेग रोककर कई तीक्ष्ण बाणों से भीमसेन के सुवर्ण-भूषित घोड़ों को मार डाला। ख़ाली रथ पर स्थित प्रतापी १० भीमसेन ने वेग से भीष्म के रथ के ऊपर एक शक्ति चलाई। भीष्म ने बाणों से राह में ही उस शक्ति को तीन टुकड़े करके पृथ्वी पर गिरा दिया। तब भीमसेन एक लोहमयी गदा लेकर रथ से उतर पड़े। इसी समय महावीर सात्यकि ने भीमसेन का प्रिय करने की इच्छा से तीक्ष्ण बाण मारकर भीष्म के सारथी को मारकर रथ पर से गिरा दिया। सारथि के मरते ही इधर-उधर अव्यवस्थित रूप से भागते हुए घोड़े भीष्म के रथ को युद्धभूमि से हटा ले गये।

महाव्रत भीष्म के युद्धभूमि से हटते ही भीमसेन फिर प्रज्वलित होकर, सूखी घास को आग की तरह, शत्रुसेना को नष्ट करने लगे। कलिङ्ग देश की सेना के सब वीरों को मारकर भीमसेन अपनी सेना के बीच पहुँच गये। महाराज, आपकी सेना का कोई भी वीर उनके प्रताप और पराक्रम को नहीं सह सका; किसी में उनका सामना करने की हिम्मत नहीं देख पड़ती थी। इसी समय महारथी धृष्टद्युम्न उनके पास आये और उनको अपने रथ पर बिठा-कर युद्धभूमि से हटा ले गये। पाञ्चाल और मत्स्य देश की सेना के सब लोग भीमसेन की बड़ाई कर रहे थे। भीमसेन, धृष्टद्युम्न को गले से लगाकर, सात्यकि के पास गये। यदुश्रेष्ठ पराक्रमी सात्यकि धृष्टद्युम्न के सामने भीमसेन को प्रसन्न करते हुए कहने लगे—"हे वृकोदर, बड़े १२० भाग्य की बात है कि तुमने कलिङ्गराज श्रुतायु, राजकुमार केतुमान्, शक्रदेव और सम्पूर्ण कलिङ्ग-सेना को मार डाला। अपने बाहुबल और पराक्रम से हाथियों, घोड़ों, रथों और महाबली पुरुषों से परिपूर्ण कलिङ्गसेना का दुर्भेद्य महाव्यूह नष्ट-भ्रष्ट करके तुमने दुष्कर और अद्भुत कर्म किया है" महावीर सात्यकि ने अब जल्दी से अपने रथ से उतरकर भीमसेन के रथ पर जाकर उनको गले से लगा लिया। महारथी सात्यकि फिर अपने रथ पर आकर भीमसेन की सेना को साथ लेकर आपकी सेना का संहार करने लगे। १२४

पचपनवाँ अध्याय

दूसरे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय कहते हैं—महाराज! इस दिन का आधा भाग बीत जाने पर असंख्य रथ, हाथी, घोड़े, उनके सवार और पैदल मारे जा चुके थे। पाञ्चालपुत्र धृष्टद्युम्न अकेले ही तीन महा-रथियों—अश्वत्थामा, शल्य और कृपाचार्य—से युद्ध करने लगे। महावीर धृष्टद्युम्न ने अश्व-त्थामा के प्रसिद्ध श्रेष्ठ घोड़ों को तीक्ष्ण दस बाणों से मार डाला। घोड़ों के मर जाने पर अश्व-त्थामा शल्य के रथ पर चढ़कर धृष्टद्युम्न के ऊपर बाण बरसाने लगे। वीर अभिमन्यु धृष्टद्युम्न को अश्वत्थामा से युद्ध करते देखकर अत्यन्त तीक्ष्ण बाण बरसाते हुए उनके पास पहुँचे। वहाँ

पहुँचकर उन्होंने शल्य के ऊपर पचीस, कृपाचार्य के ऊपर नव और अश्वत्थामा के ऊपर आठ बाण चलाये। तब अश्वत्थामा ने बड़े वेग से अभिमन्यु को बाणों से घायल करना शुरू किया। शल्य ने भी बारह और कृपाचार्य ने भी तीन बाण अभिमन्यु को मारे।

राजन्, आपके पोते लक्ष्मण ने जब अभिमन्यु को युद्ध करते देखा तब वे भी क्रोध करके, पास पहुँचकर, प्रहार करने लगे। उसके बाद वे परस्पर घोर युद्ध करने लगे। अभिमन्यु ने क्रोध से अधीर होकर फुर्ती के साथ पाँच सौ बाण अपने चचरे भाई लक्ष्मण को मारे। लक्ष्मण ने भी एक बाण मारकर अभिमन्यु के धनुष की मुष्टि काट डाली। यह देखकर लोग चीत्कार कर उठे। शत्रुनाशन अभिमन्यु ने कटा हुआ धनुष फेंककर दूसरा धनुष हाथ में लिया। वे दोनों वीर परस्पर जय की इच्छा से एक दूसरे पर अत्यन्त तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे।

१०

इसके बाद राजा दुर्योधन अभिमन्यु के हाथों अपने पुत्र को पीड़ित देखकर शीघ्र उस स्थान पर पहुँचे। तब भीष्म, द्रोण आदि सब योद्धाओं ने रथों के समूह से चारों ओर से अभिमन्यु को घेर लिया। वासुदेव के समान पराक्रमी युद्धदुर्मद शूर अभिमन्यु शूर-वीरों के बीच घिर जाने पर भी विचलित या खिन्न नहीं हुए। अर्जुन ने जब अभिमन्यु को रथों के बीच घिरा हुआ देखा तब, उनकी रक्षा के लिए, वे क्रुद्ध होकर उसी ओर चल पड़े। हाथियों, घोड़ों, रथों और पैदलों के पैरों से उड़ी हुई धूल ने ऊपर उठकर सूर्यमण्डल तक को छा लिया। हज़ारों हाथियों और घोड़ों पर सवार राजा लोग किसी तरह अर्जुन के बाणों की राह से बचकर उनके पास तक नहीं पहुँच सकते थे। उस समय सब प्राणी युद्धभूमि में लगातार आर्तनाद और कोलाहल करने लगे। दिशाओं में अँधेरा छा गया। कौरवों के दारुण अन्याय का फल उस समय प्रत्यक्ष देख पड़ने लगा। अर्जुन के बाण अन्तरिक्ष, दिशा, उपदिशा, पृथ्वीमण्डल आदि सब स्थानों में व्याप्त देख पड़ते थे। बाणों के सिवा पृथ्वी, आकाश या सूर्यमण्डल कुछ भी नहीं देख पड़ता था। उस समय हाथियों और घोड़ों के झुण्ड और उनके सवार मर-मरकर

२०

अर्जुन के डर से हाथियों के सवार हाथी छोड़कर और घोड़ों के सवार घोड़े छोड़कर चारों ओर भागे जा रहे थे।—पृ० १४४४

पृथ्वी पर गिरते देख पड़ते थे और रथ टूट-टूटकर गिर रहे थे। रथियों से ख़ाली रथ इधर-उधर दौड़ते देख पड़ते थे। रथ-हीन होकर रथी लोग इधर-उधर दौड़ रहे थे। स्थान-स्थान पर अङ्गद आदि आभूषणों से शोभित कटे हुए हाथ पड़े हुए थे। अर्जुन के डर से हाथियों के सवार हाथी छोड़कर और घोड़ों के सवार घोड़े छोड़कर चारों ओर भागे जा रहे थे। अर्जुन के बाणों की चोट से वीर लोग हाथी, घोड़े, रथ आदि वाहनों के ऊपर से गिरते या गिरे हुए देख पड़ते थे। भयङ्कर मूर्ति धारण किये हुए अर्जुन युद्धभूमि में इधर-उधर योद्धाओं के गदा, खड्ग, तरकस, धनुष, बाण, अंकुश, पताका आदि सहित उठे हुए हाथों को काटते हुए देख पड़ रहे थे। परिघ, मुद्गर, प्रास, भिन्दिपाल, निस्त्रिंश, तीक्ष्ण परश्वध, तोमर, ढाल, ध्वजा, कवच आदि सर्वत्र पड़े हुए थे और अन्यान्य शस्त्र, छत्र, सोने के दण्ड, अंकुश, प्रतोद, कोड़े, जोत आदि के ढेर इधर-उधर बिखर रहे थे। इन छिन्न-भिन्न सामानों से सारी समरभूमि पटी पड़ी थी। राजन्! आपकी ओर कोई ऐसा साहसी वीर नहीं था, जो इस संग्राम में अर्जुन के सामने खड़ा होता। जो आदमी अर्जुन के सामने गया वही, उनके तीक्ष्ण बाण की चोट से, सुरपुर सिधारा। आपके पक्ष के सब योद्धा जब भाग गये तब वासुदेव और अर्जुन दोनों हर्ष की सूचना के लिए शङ्ख बजाने लगे। ३०

राजन्, देवव्रत भीष्म ने जब अपनी सेना को इस तरह हिम्मत छोड़कर भागते देखा तब उन्होंने हँसकर द्रोणाचार्य से कहा—हे आचार्य, ये वासुदेव सहित वीर अर्जुन अपने योग्य ही युद्ध कर रहे हैं। इनकारूप साक्षात् यम के समान देख पड़ता है। इस समय ये समर में किसी तरह जीते नहीं जा सकते। देखो, यह विशाल सेना एक दूसरे का मुँह देखकर प्राण लेकर भागी ही जा रही है। इस समय इन सैनिकों को लौटाना सब तरह असम्भव है। सबकी दृष्टि को नष्ट करते हुए सूर्य नारायण भी अब अस्ताचल पर पहुँच गये हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ, मैं समझता हूँ कि आज का युद्ध अब समाप्त किया जाय। हमारे योद्धा थके और डरे हुए हैं, इस कारण अब वे किसी तरह युद्ध न कर सकेंगे।

महाराज, यह कहकर महारथी भीष्म ने युद्ध रोक दिया। सूर्य अस्त हो गये, साँझ हो गई, यह देखकर दोनों पक्ष के योद्धाओं ने युद्ध बन्द कर दिया। ४३

छप्पनवाँ अध्याय

कौरवों का गरुड़ व्यूह और पाण्डवों का अर्द्धचन्द्र व्यूह रचकर लड़ना

सञ्जय ने कहा—महाराज, सवेरा होने पर शत्रुतापन भीष्म ने सैनिकों को युद्ध के लिए तैयार होने की आज्ञा दी। पितामह भीष्म ने उस दिन आपके पुत्रों की विजय की इच्छा से गरुड़ व्यूह नाम के दुर्भेद्य व्यूह की रचना की। उस व्यूह के मुख पर स्वयं देवव्रत भीष्म स्थित हुए। दोनों नेत्रों के स्थान पर महात्मा द्रोणाचार्य और यादवश्रेष्ठ कृतवर्मा स्थित

हुए। सम्पूर्ण त्रिगर्त, कैकेय और वाटधान देश की सेना साथ लेकर यशस्वी अश्वत्थामा और कृपाचार्य मस्तक के स्थान पर खड़े हुए। मद्रक, सिन्धु-सौवीर, पञ्चनद आदि देशों की सेना के साथ भूरिश्रवा, शल, शल्य, भगदत्त और जयद्रथ उसकी गर्दन के स्थान पर स्थित हुए। अपने अनुगत राजाओं और भाइयों सहित राजा दुर्योधन उसके पृष्ठभाग की रक्षा करने लगे। अवन्ति देश के विन्द और अनुविन्द अपने साथ काम्बोज, शक, शूरसेन आदि देशों की सेना लेकर उसके पुच्छ स्थान पर खड़े हुए। मगध और कलिङ्ग देश की सेना तथा दासेरकगण उसके दक्षिण पक्ष की रक्षा में नियुक्त हुए। कारूष, विकुञ्ज, मुण्ड, कुण्डीवृष आदि की सेना के साथ राजा बृहद्बल उसके वामपक्ष की रक्षा में नियुक्त हुए।

महाराज, शत्रुपक्ष की ऐसी व्यूह-रचना देखकर धृष्टद्युम्न के साथ मिलकर अर्जुन ने भी १० अपनी सेना का व्यूह बनाया। राजन्, पाण्डवों ने आपकी सेना के व्यूह के विरुद्ध अर्द्धचन्द्र नाम के दुर्भेद्य व्यूह की रचना की। उसके दक्षिण भाग में अनेक शस्त्र धारण किये हुए अनेक देशों के राजाओं के साथ भीमसेन स्थित हुए। उनके पीछे विराट और महारथी द्रुपद और उनके पीछे नीलायुधधारिणी सेना सहित राजा नील स्थित हुए। नील के बाद चेदि, काशी, करूष आदि देशों की सेना के साथ धृष्टकेतु स्थित हुए। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, पाञ्चालगण और प्रभद्रकगण व्यूह के मध्यभाग में स्थित हुए। वहीं पर हाथियों के दल को साथ लिये धर्मराज युधिष्ठिर स्थित हुए। वामभाग में सात्यकि, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, शूर अभिमन्यु, इरावान्, घटोत्कच और महारथी केकयगण स्थित हुए। इसके बाद ही सब जगत् की रक्षा करनेवाले वासुदेव के द्वारा सुरक्षित पुरुषोत्तम महावीर अर्जुन स्थित हुए।

राजन्, पाण्डवों ने आपके पुत्रों और उनके पक्षवाले राजाओं को मारने के लिए इस व्यूह की रचना की। इसके बाद दोनों पक्ष के रथी, घोड़ों और हाथियों के सवार तथा पैदल वीर परस्पर युद्ध करने लगे। वे परस्पर घायल होने और मारे जाने लगे। स्थान-स्थान पर रथों और हाथियों पर सवार झुण्ड के झुण्ड वीरगण युद्ध करते और एक दूसरे को मारते देख पड़ने लगे। उस तुमुल संग्राम में परस्पर प्रहार करते हुए दोनों पक्ष के वीर पुरुषों का २२ कोलाहल, चीत्कार और नगाड़ों का गम्भीर शब्द आकाश तक गूँज उठा।

सत्तावनवाँ अध्याय

संकुल युद्ध का वर्णन

सञ्जय ने कहा—महाराज, दोनों पक्ष की सेना जब व्यूह बना करके युद्ध करने लगी तब यमरूप महावीर अर्जुन बाणवर्षा से रथरक्षकों को गिरा-गिराकर रथी वीरों को मारने लगे। यश पाने की इच्छा से कौरवपक्ष के सब वीर पाण्डवपक्ष के वीरों के साथ यथाशक्ति युद्ध करने

लगे। उन्होंने कई बार पाण्डव-सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया। पाण्डवपक्ष के वीर भी बारम्बार कौरव-सेना को छिन्न-भिन्न और अस्त-व्यस्त करने लगे। दोनों पक्ष की सेना इधर-उधर दौड़ने, भागने और फिर लौटने के कारण एक में ही ऐसी मिल गई कि कौन किस पक्ष का है, यह जानना कठिन हो गया। रणक्षेत्र से उड़ी हुई धूल ने भगवान् सूर्य को और सब दिशाओं को एकदम ढककर चारों ओर घने अँधेरे का राज्य कर दिया। उस समय केवल अनुमान और नाम-गोत्र के उच्चारण पर भरोसा करके लोग एक दूसरे पर प्रहार करते थे; कोई किसी को पहचान नहीं पाता था। कौरवपक्ष के व्यूह की रक्षा महारथी द्रोणाचार्य कर रहे थे, और पाण्डवपक्ष के व्यूह की रक्षा महावीर भीमसेन और अर्जुन कर रहे थे। इस कारण कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष के व्यूह को तोड़ नहीं पाता था। दोनों ओर के सैनिक वीर सेनाव्यूह के अग्रभाग से निकल-निकलकर युद्ध कर रहे थे। रथ, हाथी आदि उनके वाहन एक दूसरे से भिड़े हुए देख पड़ते थे। १०

उस भयङ्कर संग्राम में घुड़सवार योद्धा तीक्ष्ण ऋष्टि, प्रास आदि शस्त्रों से घुड़सवारों को मारते और गिराते थे। रथी योद्धा सुवर्ण-भूषित बाणों से अपने प्रतिद्वन्द्वी रथी वीरों को मारते और गिराते थे। हाथियों पर सवार योद्धा नाराच बाण, तोमर आदि चलाकर गजारूढ़ वीरों को मारते थे। किसी हाथी के सवार ने दूसरे को केश पकड़कर खींच लिया और खड्ग से उसका सिर काट डाला। हाथियों के दाँतों से हृदय फट जाने पर कुछ वीर बारम्बार साँस लेते हुए मुँह से रक्त बहा रहे थे। कोई युद्धनिपुण वीर हाथी के दाँत पर पैर रखकर चढ़ गया, शत्रु ने शक्ति मारकर उसे अधमरा कर दिया और वह काँपकर गिर पड़ा। पैदल सिपाहियों के झुण्ड युद्ध में भिन्दिपाल, परश्वध आदि शस्त्रों से पैदल सेना का संहार करते देख पड़ते थे। किसी रथी ने हाथी के सवार को, हाथी के सवार ने रथी को, घोड़े के सवार ने प्रास से रथी को, रथी ने घोड़े के सवार को, पैदल ने तीक्ष्ण शस्त्रों से रथी को और रथी ने पैदल को मार गिराया। दोनों सेनाओं में यही मार-काट देख पड़ती थी। हाथियों के सवार घुड़सवारों को और घुड़सवार हाथियों के सवारों को मारने लगे। हाथियों के सवार पैदलों को और पैदल वीर हाथियों के सवारों को, ऐसे ही घुड़सवार पैदलों को और पैदल घुड़सवारों को हज़ारों की संख्या में मार-मारकर गिरा रहे थे। असंख्य धनुष, ध्वजा, तोमर, विचित्र कम्बल, महामूल्य कम्बल, प्रास, परिघ, गदा, कम्पन, शक्ति, कवच, विचित्र कणप, अंकुश, निस्त्रिंश, स्वर्णपुङ्ख बाण, क्षुद्र कम्बलासन आदि वस्तुएँ इधर-उधर पड़ी हुई थीं। उनसे वह युद्धभूमि विचित्र मालाओं से विभूषित सी जान पड़ती थी। हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों की लाशों के ढेर से वह भूमि अगम्य हो रही थी। सब ओर मांस और रक्त की कीचड़ देख पड़ती थी। युद्ध में इतना रक्त गिरा कि वह उठी हुई धूल उससे बैठ गई। सब दिशाएँ निर्मल हो गईं। जगत् के नाश के चिह्न स्वरूप असंख्य कवन्ध उठने लगे। उस महादारुण युद्ध में इधर-उधर सब योद्धा दौड़ते देख पड़ने लगे। २० ३०

उस भयानक समर में सिंह के समान पराक्रमी समर-दुर्द्धर्ष महावीर भीष्म, द्रोण, जयद्रथ, पुरुमित्र, जय, भोज, शल्य और शकुनि आदि महावीर बारम्बार पाण्डवसेना के व्यूह को तोड़ने और उसका संहार करने लगे। पूर्व समय में जैसे देवताओं ने दानवों को पीड़ित किया था वैसे ही भीमसेन, घटोत्कच, सात्यकि, चेकितान और द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने, अपने पक्ष के अन्य राजाओं के साथ मिलकर, आपके पुत्रों को युद्ध में मार भगाया। युद्ध में परस्पर प्रहार करते हुए क्षत्रिय-श्रेष्ठ वीर रक्त से तर, घोररूप, दानव-से जान पड़ने लगे। दोनों सेनाओं के वीरगण शत्रुओं को जीतकर, आकाश में प्रधान ग्रहों के समान, युद्धभूमि में विराजमान हुए।

महाराज, तब आपके पुत्र राजा दुर्योधन हज़ार रथ साथ लेकर राक्षस घटोत्कच से युद्ध करने को आगे बढ़े। उधर शत्रुदमन पाण्डवगण भी यत्नपूर्वक द्रोण और भीष्म से युद्ध करने के लिए चले। क्रोधित अर्जुन शत्रुपक्ष के राजाओं को मारने लगे। अभिमन्यु और सात्यकि दोनों ही वीर शकुनि की सेना पर आक्रमण करने चले। राजन्, इसके बाद संग्राम में विजय चाहनेवाले दोनों पक्ष के वीर फिर रोमहर्षण घोर युद्ध करने लगे। ४०

अट्ठावनवाँ अध्याय

पितामह भीष्म और दुर्योधन की बातचीत

सञ्जय ने कहा—महाराज! कौरवपक्ष के राजा लोग महावीर अर्जुन को युद्ध के लिए सामने आते देखकर, क्रोध के आवेश में आकर, असंख्य रथों से उन्हें घेरकर उनके रथ के ऊपर बाण, तीक्ष्ण शक्ति, गदा, परिघ, प्रास, परशु, मुद्गर, मुशल आदि विविध शस्त्रों की वर्षा करने लगे। अर्जुन ने भी टीड़ियों की क़तार के समान आती हुई उस शस्त्रवर्षा को स्वर्णपुङ्ख बाणों से बीच में ही रोक दिया। अर्जुन की वह असाधारण फुर्ती देखकर देव, दानव, गन्धर्व, पिशाच, नाग, राक्षस आदि सब दर्शक "वाह वाह" कहकर उनकी प्रशंसा करने लगे।

सात्यकि और अभिमन्यु दोनों वीर बहुत सी सेना साथ लेकर शूर गान्धार सेना और शकुनि से युद्ध करने चले। शकुनि के सैनिकों ने क्रुद्ध होकर सात्यकि के श्रेष्ठ रथ को शस्त्रों से तिल-तिल करके काट डाला। तब सात्यकि उस भयानक समय में अभिमन्यु के रथ पर चले गये। दोनों वीर एक ही रथ पर बैठकर तीक्ष्ण बाणों से शकुनि की सेना का संहार करने लगे। १० उधर द्रोण और भीष्म सावधान होकर कङ्कपत्रयुक्त तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठिर की सेना को नष्ट करने लगे। तब राजा युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव सब सैनिकों के सामने ही द्रोण की सेना को मारने लगे। जैसे पूर्वकाल में देवताओं और दैत्यों का युद्ध हुआ था वैसे ही वे लोग घोर युद्ध करने लगे। भीमसेन और घटोत्कच को युद्ध में अद्भुत कर्म करते देखकर राजा दुर्योधन उनके सामने गये और उन्हें रोकने का यत्न करने लगे। राजन्, उस समय हम लोगों ने भीमसेन के पुत्र घटो- १५

भीमसेन के वज्रतुल्य बाण की चोट से मूर्च्छित होकर राजा दुर्योधन रथ पर गिर पड़े।—पृ० २००३

त्कच का ऐसा अद्भुत पराक्रम देखा कि हम दङ्ग रह गये। वह उस समय भीमसेन से भी बढ़कर पराक्रम दिखाने लगा। भीमसेन ने क्रुद्ध होकर असहनशील दुर्योधन के हृदय में एक तीक्ष्ण बाण मारा। भीमसेन के वज्रतुल्य बाण की चोट से मूर्च्छित होकर राजा दुर्योधन रथ पर गिर पड़े। उन्हें अचेत देखकर सारथी शीघ्र रणभूमि से हटा ले गया। दुर्योधन की यह दशा देखकर सब सैनिक निरुत्साह और भीत होकर भागने लगे।

कौरव-सेना को इधर-उधर भागते देखकर तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करते हुए भीमसेन उसके पीछे दौड़े। राजा युधिष्ठिर और धृष्टद्युम्न दोनों वीर द्रोणाचार्य और भीष्म के सामने ही उनकी सेना को तीक्ष्ण बाणों से मार गिराने लगे। महारथी भीष्म और द्रोण आपके भागे हुए सैनिकों को रोक नहीं सके। वे उन सैनिकों को मना करते थे, तो भी भयभीत सैनिक भागते ही जाते थे। हज़ारों रथ इधर-उधर भागते देख पड़ते थे। इसी समय अमावास्या के दिन आकाश-स्थित सोम-सूर्य के समान एक रथ पर स्थित शिनिकुलभूषण सात्यकि और अभिमन्यु दोनों वीर, चारों ओर बाण बरसाकर, शकुनि की सेना को नष्ट करने लगे। अर्जुन भी क्रोध के वश होकर आपकी सेना के ऊपर, मेघों की जलवर्षा के समान, बाण-वर्षा करने लगे। सारी कौरव सेना अर्जुन के बाणों से पीड़ित होकर, विषाद और भय से अभिभूत हो, युद्धभूमि से भागने लगी। दुर्योधन के हितैषी महारथी भीष्म और द्रोण सैनिकों को भागते देखकर उन्हें लौटाने की चेष्टा करने लगे। राजा दुर्योधन ने चारों ओर भागती हुई सेना को आश्वस्त करके लौटाया। जिसने जहाँ से आपके पुत्र को देखा वह वहीं से लौट पड़ा। महारथी क्षत्रियों को लौटते देखकर और-और साधारण सैनिक भी स्पर्धा और लज्जा के कारण भागना छोड़कर खड़े हो गये। महाराज, चन्द्रमा का उदय देखकर समुद्र जैसे उमड़ पड़ता है वैसे ही सब सेना राजा को देखकर वेग से लौट पड़ी। योद्धाओं को लौटते देखकर राजा दुर्योधन ने जल्दी से भीष्म के पास जाकर कहा—हे पितामह, मैं आपसे जो कहता हूँ, सो सुनिए। पुत्र और सुहृदों सहित अस्त्रविद्या-निपुण द्रोणाचार्य के, आपके और महाधनुर्द्धर

कृपाचार्य के जीवित रहते मेरी सेना का इस तरह भागना आप लोगों के पराक्रम के अनुरूप मैं नहीं मान सकता। मैं किसी तरह यह मानने के लिए तैयार नहीं हूँ कि पाण्डवगण संग्राम में द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और आपके समान बलशाली पराक्रमी हैं, या वे आप लोगों को अपने पराक्रम से अशक्त बना सकते हैं। आप इस तरह सेना का नाश होते देखकर भी क्षमा कर रहे हैं, इससे मुझे निश्चय जान पड़ता है कि आप पाण्डवों पर कृपा करके उन्हें ऐसा करने में बाधा नहीं पहुँचाते। पितामह! अगर आपका ऐसा ही इरादा था, तो पहले सलाह के समय ही आपको कह देना था कि "मैं धृष्टद्युम्न, सात्यकि और पाण्डवों से युद्ध नहीं करूँगा।" मैंने केवल आपके और द्रोणाचार्य तथा कृपाचार्य के वचन पर भरोसा करके ही, कर्ण के साथ कर्तव्य की सलाह करके, यह युद्ध छेड़ा है। यदि युद्ध में आप लोग मेरा साथ नहीं छोड़ना चाहते तो अब अपने पराक्रम के अनुरूप युद्ध करके शत्रुओं को नष्ट कीजिए। ४०

दुर्योधन के ये वचन सुनकर महावीर भीष्म बारम्बार हँसकर और फिर क्रोध से आँखें चढ़ाकर आपके पुत्र से बोले—राजन्, मैंने बहुत बार तुमसे सत्य और हितकारी वचन कहे हैं। मैं तुमसे कई बार कह चुका हूँ कि इन्द्रसहित सब देवता भी युद्ध में पाण्डवों को हरा नहीं सकते। मैं इस समय वृद्ध और गतायु होकर भी जो कुछ कर सकता हूँ वह यथाशक्ति करूँगा। तुम अपने भाइयों सहित मेरा पराक्रम देखो। इस समय सब लोगों के सामने मैं अकेला ही सेना और भाई-बन्धुओं सहित पाण्डवों को रोकूँगा। महाराज, महारथी भीष्म के ये वचन सुनकर आपके पुत्रगण प्रसन्न होकर शङ्ख बजाने लगे। समरभूमि के बीच कौरवसेना में नगाड़े आदि बाजे बजने लगे। पाण्डवगण भी उस महानाद को सुनकर शङ्ख, भेरी, मुरज आदि बाजे बजाने लगे। ४६

उनसठवाँ अध्याय

भीष्म को मारने के लिए श्रीकृष्ण का प्रतिज्ञा छोड़कर चक्र लेकर
दौड़ना और अर्जुन का उनको रोक लेना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, युद्ध में मेरे दुःखित पुत्र की प्रार्थना से कुपित होकर प्रतिज्ञा करने के बाद भीष्म ने पाण्डवों के साथ कैसा युद्ध किया ? और पाञ्चालों सहित पाण्डवों ने भीष्म के साथ किस तरह कैसा युद्ध किया ? सब वृत्तान्त कहो।

सञ्जय ने कहा—महाराज! उस दिन का पहला भाग समाप्तप्राय हो चुका था; सूर्यदेव कुछ पश्चिम आकाश की ओर झुक चले थे और पाण्डव लोग विजयलाभ करके प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे, इसी समय भीष्म ने यथाशक्ति युद्ध करके पाण्डवों को रोकने की प्रतिज्ञा की। सब धर्मों के ज्ञाता देवव्रत भीष्म भारी सेना लेकर आपके पुत्रों के साथ तेज़ घोड़ों से युक्त रथ पर बैठकर पाण्डव-सेना की ओर बढ़े। हे भारत, इसके बाद पाण्डवों के साथ कौरवों का घोर युद्ध होने लगा। हे कुरुश्रेष्ठ, आपकी ही अनीति इस घोर युद्ध का मूल कारण है। उस समय रणभूमि में लगातार पहाड़ के शिखर फटने के समान भयानक धनुषों की टङ्कार और ताल ठोकने का कठोर शब्द चारों ओर सुन पड़ने लगा। सब ओर "ठहर तो जा!" "ठहरा हूँ," "यह है," "लौटो," "स्थिर होकर खड़े रहो!" "खड़ा हूँ, प्रहार करो" इत्यादि शब्द ही सुन पड़ते थे। सुवर्ण-मण्डित लोहकवच, किरीट-मुकुट, ध्वजा आदि के ऊपर बाण लगने से वैसा ही घोर शब्द होता था, जैसा कि पहाड़ के ऊपर फट-फटकर शिलाओं के गिरने से होता है। सैकड़ों-हज़ारों कटे हुए विभूषित सिर और हाथ पृथ्वी पर गिरकर तड़प रहे थे। कुछ वीर-श्रेष्ठों के कबन्ध, सिर कट जाने पर भी, वैसे ही धनुष बाण हाथ में लिये, या शस्त्र उठाये प्रहार करने के लिए युद्धभूमि में खड़े थे। उस समय वहाँ मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि के शरीरों से बहते हुए रक्त की नदियाँ बह चलीं। गिद्ध, गीदड़ आदि मांसभोजी पशु-पक्षी उन्हें देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो रहे थे। हाथियों के अङ्ग शिला के समान उनमें पड़े थे। मांस और रक्त की कीचड़ से वे अगम्य हो रही थीं। वे नदियाँ परलोक सागर की ओर बहने लगीं। १०

महाराज, पाण्डवों के साथ आपके पुत्रों का जैसा घोर युद्ध हुआ वैसा युद्ध न किसी ने देखा होगा और न सुना होगा। गिरे हुए योद्धाओं और गिरिशिखर-तुल्य नीले रङ्ग के हाथियों के शरीरों से समरभूमि परिपूर्ण हो उठी। उसमें रथों के चलने की राह नहीं रही। बिखरे हुए कवचों और शिरस्त्राणों के द्वारा युद्ध-भूमि शरत्काल के आकाश के समान दीखने लगी। कोई-कोई वीर शस्त्र की चोट से पीड़ित होकर भी, दीनभाव-हीन होकर, दर्प के साथ शत्रुपक्ष की ओर दौड़ने लगा। बहुत मनुष्य रणस्थल में गिरकर "हाय पिता!, हाय भाई!, हाय सखा!, हाय बन्धु!, हाय वयस्य!, हाय मामा! मुझे मत छोड़ो" कहकर ऊँचे स्वर से रो रहे थे। बहुत

लोग "आओ, पास आओ, तुम क्या डर गये हो ? कहाँ जाओगे ? मैं युद्ध में हूँ। तुम डरना नहीं।" कहकर चिल्ला रहे थे। उस समय भीष्म पितामह हाथ में मण्डलाकार धनुष लेकर नाग-
२० सदृश प्रज्वलित अग्रभागवाले बाण छोड़ने लगे। संयतव्रत महावीर भीष्म बाण-वर्षा द्वारा दसों दिशाओं को एकाकार करते हुए पाण्डवपक्ष के वीरों के नाम ले-लेकर उन्हें मारने लगे। महाराज, वे सभी स्थानों में अपने हाथों की फुर्ती दिखाते हुए, अलातचक्र की तरह, इधर-उधर सब जगह दिखाई पड़ने लगे। भीष्म के हाथ की फुर्ती के कारण पाण्डव और सृञ्जयगण युद्ध-भूमि में एक-मात्र वीर भीष्म को सैकड़ों-हज़ारों की तरह देख रहे थे। वहाँ के सब वीर उनको मायावी जानने लगे। वे पल भर में पूर्व ओर, पल भर में पश्चिम ओर, दम भर में दक्षिण ओर और क्षण भर में उत्तर ओर देख पड़ते थे। भीष्म के धनुष से निकले हुए बाण ही पाण्डवपक्ष के वीरों को देख पड़ते थे; भीष्म की मूर्त्ति को कोई नहीं देख सकता था। वीरगण उन्हें सेना का नाश और अद्-भुत कर्म करते देखकर तरह-तरह से चिल्लाने और आर्तनाद करने लगे। हज़ारों क्षत्रियगण पतङ्गों की तरह मोहित होकर आप ही अपने नाश के लिए उन अमानुषिक रूप से विचरनेवाले क्रुद्ध भीष्मरूप अग्नि में गिर-गिरकर भस्म होने लगे। भीष्म के बाण मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि सबके शरीरों पर गिरकर व्यर्थ नहीं जाते थे। वज्र से पहाड़ फटने की तरह, उनके एक ही बाण से बड़े-
३० बड़े हाथी कट-कटकर गिर पड़ते थे। वे नाराच बाण मारकर एक साथ दो-दो तीन-तीन हाथियों के सवारों को मार गिराते थे। महाराज, जो वीर भीष्म के पास जाता था वह उसी घड़ी मरकर पृथ्वी पर गिर पड़ता था। इस तरह अतुल वीर्यशाली भीष्म के हाथों मारी जाती हुई युधिष्ठिर की सेना हज़ारों भागों में बँटकर इधर-उधर भागने लगी। युधिष्ठिर की सेना महात्मा वासुदेव और अर्जुन के सामने ही भीष्म के बाणों से कम्पायमान और पीड़ित होकर भागने लगी। सेनापति-गण वारम्वार यत्न करके भी भीष्म के बाणों से पीड़ित होकर भागती हुई सेना को नहीं रोक सके। राजन्! प्रधान-प्रधान योद्धा भी महेन्द्र-सदृश वीर्यसम्पन्न भीष्म के बाणों की चोट खाकर, साथियों और आश्रितों को छोड़कर, रणभूमि से भागने लगे। इस तरह पाण्डवों की सेना अचेत सी होकर हाहाकार करने लगी। युद्धभूमि में मनुष्य, हाथी और घोड़े मर-मरकर गिरने लगे। रथ, ध्वजा, रथदण्ड आदि के ढेर जगह-जगह पड़े थे। उस महायुद्ध में होनी के वश होकर पिता पुत्र को, पुत्र पिता को और मित्र अपने प्रिय मित्र को मार रहे थे। पाण्डवपक्ष के बहुत से योद्धा कवच और केश खोलकर इधर-उधर जान बचाते हुए भागते देख पड़ते थे। सिंह के आने से गायों के झुण्ड जैसे घबराकर डर के मारे चिल्लाते हुए इधर-उधर भागते हैं वैसे ही उद्भ्रान्त रथ-यूथप-पूर्ण पाण्डव-सेना आर्त शब्द करती हुई इधर-उधर भाग रही थी।

४१ तब यदुनन्दन श्रीकृष्ण ने सैनिकों को भागते देखकर, रथ लौटाकर, अर्जुन से कहा—हे पार्थ, यह वही समय है जिसकी तुम प्रतीक्षा कर रहे थे। हे पुरुषसिंह, इस समय तुम भीष्म पर

प्रहार करो; नहीं तो मोहवश होकर तुम कुछ नहीं कर पाओगे। पहले वीर राजाओं की मण्डली में तुमने प्रतिज्ञा की थी कि "भीष्म, द्रोण आदि कौरव-पक्ष के जो योद्धा युद्धभूमि में मुझसे लड़ने आवेंगे उनको और उनके अनुचरों को मैं मारूँगा।" हे शत्रुनाशन, इस समय वह अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो। वह देखो, हमारी सेना के राजा लोग और युधिष्ठिर के पास की सेना, मुँह फैलाये मृत्यु के समान आते हुए भीष्म को देखकर, भागी जा रही है। सिंह को देखकर डरे हुए मृगों के समान सब भागे जा रहे हैं।

यह सुनकर अर्जुन ने कहा—हे वासुदेव, जहाँ पर भीष्म पितामह का रथ है वहाँ इस सैन्यसागर के बीच से होकर मेरा रथ ले चलिए। मैं अवश्य इन दुर्द्धर्ष कुरुवृद्ध पितामह भीष्म को मार गिराऊँगा।

सञ्जय कहते हैं—राजन्, इसके बाद माधव ने रथ को हाँका और जहाँ पर भीष्म का सूर्य के समान दुर्निरीक्ष्य रथ खड़ा था वहाँ पर सफ़ेद घोड़ों से शोभित अर्जुन का रथ पहुँचा दिया। युधिष्ठिर की सेना अर्जुन को भीष्म से युद्ध करने के लिए उद्यत देखकर लौट पड़ी। इसके बाद कुरुकुल-प्रधान भीष्म ने बारम्बार सिंहनाद करके शीघ्र ही बाणवर्षा से अर्जुन का ५० रथ ढक दिया। वह रथ क्षण भर में ध्वजा और सारथी वासुदेव सहित भीष्म के बाणों से अदृश्य हो गया। सत्वसम्पन्न वासुदेव धैर्य धारणपूर्वक, तनिक भी विचलित न होकर, भीष्म के बाणों से पीड़ित अर्जुन के रथ के घोड़ों को हाँकने लगे। अर्जुन ने मेघ के समान गरजनेवाला दिव्य गाण्डीव धनुष चढ़ाकर तीक्ष्ण बाण से भीष्म का धनुष काट डाला। धनुष कट जाने पर कुरुकुल-तिलक भीष्म ने तुरन्त दूसरा दृढ़ धनुष हाथ में लिया और उस पर नई डोरी चढ़ा ली। वे उसे दोनों हाथों से खींचने लगे। अर्जुन ने कुपित होकर वह धनुष भी काट डाला। तब अर्जुन की फुर्ती की तारीफ़ करके भीष्म कहने लगे—हे महाबाहो, शाबाश! ऐसा अद्भुत कर्म तुम्हारे योग्य ही है। वत्स अर्जुन, मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ। अब तुम दृढ़तापूर्वक मेरे साथ युद्ध करो।
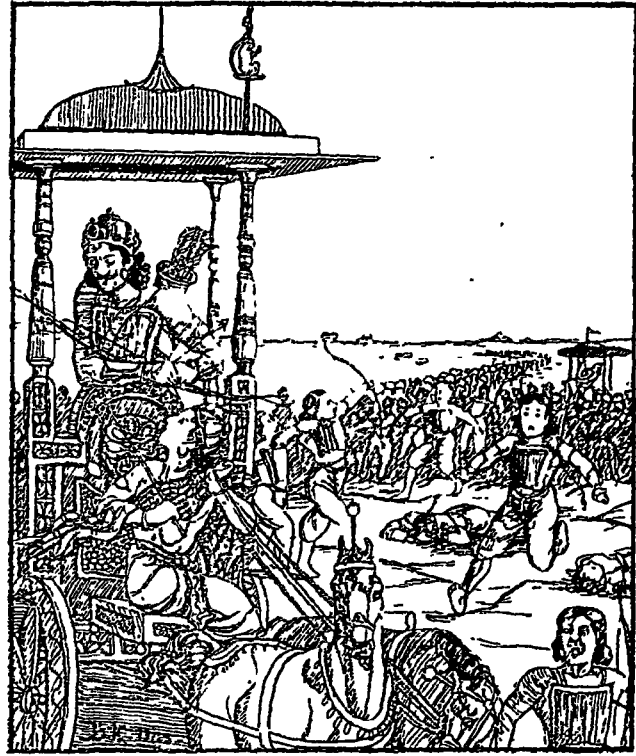
इस प्रकार अर्जुन की प्रशंसा करके और धनुष लेकर वे फिर युद्ध करने और बाण बरसाने लगे। वासुदेव ने घोड़े हाँकने की निपुणता दिखाते हुए मण्डलाकार रथ-गति से भीष्म के उन बाणों

६० को व्यर्थ कर दिया। राजन्, तब महावीर भीष्म ने तीक्ष्ण बाणों से वासुदेव और अर्जुन दोनों को घायल कर डाला। भीष्म के बाणों से शरीर क्षत-विक्षत हो जाने पर, सींग की चोटों से घायल होकर गरजते हुए दो साँड़ों के समान, श्रीकृष्ण और अर्जुन शोभायमान हुए। भीष्म ने फिर क्रुद्ध होकर बाण-वर्षा करके चारों ओर से श्रीकृष्ण और अर्जुन को छिपा दिया। वे अट्टहास करके तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से श्रीकृष्ण को विचलित करके बारम्बार अर्जुन को पीड़ित करने लगे।

शत्रु-वीरघाती श्रीकृष्ण ने देखा कि युद्ध में भीष्म पितामह घोर पराक्रम दिखा रहे हैं, किन्तु अर्जुन उनके साथ कोमल युद्ध कर रहे हैं। दोनों सेनाओं के बीच में खड़े होकर भीष्म लगातार बाणवर्षा करते हुए सूर्य के समान तप रहे थे। वे मानों प्रलय कर देंगे, इस तरह युद्ध करके युधिष्ठिरपक्ष के चुने-चुने श्रेष्ठ योद्धाओं को मार रहे थे। श्रीकृष्ण यह नहीं सह सके। उन्होंने सोचा कि पाण्डवों की सेना बहुत थोड़ी रह गई है। भीष्म पितामह युद्ध में आकर एक ही दिन में सब देवताओं और दानवों का संहार कर सकते हैं, फिर सेना और अनुचरों-सहित पाण्डवों को नष्ट करना तो उनके लिए कोई बात ही नहीं। वीर पाण्डवों की और सोमकों की सेना को भागते देखकर कौरव लोग पितामह को आनन्दित करते हुए उनका पीछा
७० कर रहे हैं। अतएव पाण्डवों के हित के लिए आज मैं ही भीष्म को मारूँगा; पाण्डवों के इस बोझ को मैं ही हलका करूँगा। यद्यपि भीष्म तीक्ष्ण बाण मार रहे हैं; किन्तु अर्जुन, पितामह के गौरव की रक्षा के लिए, अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते।

कृष्ण भगवान् यों सोच रहे थे, और उधर भीष्म पितामह क्रुद्ध होकर अर्जुन के ऊपर दारुण बाण बरसाने लगे। भीष्म के चलाये हुए असंख्य बाण दसों दिशाओं में भर गये। उस समय अन्तरिक्ष, दिशा, पृथ्वीतल या सूर्यमण्डल कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था। धुएँ के रङ्ग की तेज़ आँधी चलने लगी। सब दिशाएँ क्षोभ को प्राप्त हुई। द्रोण, विकर्ण, जयद्रथ, भूरिश्रवा, कृत-वर्मा, कृपाचार्य, श्रुतायु, अम्बष्ठराज, विन्द, अनुविन्द, सुदक्षिण, प्राच्य, सौवीरगण, वसातिगण क्षुद्रकगण, मालवगण आदि सब राजा भीष्म की आज्ञा से शीघ्रतापूर्वक युद्ध करने के लिए अर्जुन की ओर दौड़े। सात्यकि ने देखा कि हाथी-घोड़े-रथ-पैदल इन चार अङ्गोंवाली असंख्य सेना चारों ओर से अर्जुन को घेर रही है। इस प्रकार वासुदेव और अर्जुन को चतुरङ्गिणी सेना से घिरते देखकर महापराक्रमी सात्यकि उनकी सहायता के लिए शीघ्र अपना रथ दौड़ाते हुए वहाँ पहुँचे। विष्णु ने जैसे इन्द्र की सहायता की थी, वैसे ही प्रधान धनुर्द्धर यादवश्रेष्ठ सात्यकि एका-एक उस सेना में घुसकर अर्जुन की सहायता करने लगे। सात्यकि ने देखा कि भीष्म ने पाण्डव-पक्ष की सेना के सब वीरों को भयभीत कर दिया है और हाथी, घोड़े, रथ, ध्वजा आदि काट-काट-
८० कर उनके ढेर लगा दिये हैं। भीष्म को युधिष्ठिर की भागती हुई सेना का पीछा करते देख-कर सात्यकि ने अपनी सेना के वीरों से कहा—क्षत्रियो, कहाँ भागे जा रहे हो? प्राचीन

पण्डितों का कथन है कि युद्ध से भागना क्षत्रिय का धर्म नहीं है। हे वीरो, अपनी प्रतिज्ञा को मत तोड़ो। अपने वीर-धर्म का पालन करो।

यशस्वी श्रीकृष्ण ने भी देखा कि सब क्षत्रिय भागे जा रहे हैं, भीष्म पितामह संग्राम में प्रचण्ड रूप धारण करते जा रहे हैं, अर्जुन कोमल युद्ध कर रहे हैं और कौरवसेना के वीर दौड़-दौड़कर आक्रमण कर रहे हैं। सब यादवों के स्वामी कृष्णचन्द्र से यह नहीं देखा गया। वे सात्यकि की प्रशंसा करते हुए कुपित होकर कहने लगे—हे यदुश्रेष्ठ, जो जा रहे हैं उन्हें जाने दो। जो खड़े हैं वे भी भाग जायँ। आज मैं अकेला ही भीष्म को और अनुचरों सहित द्रोण को मार-कर रथ से गिराता हूँ; तुम खड़े-खड़े तमाशा देखो। आज कौरवसेना का एक भी वीर मेरे क्रोध से नहीं बच सकता। मैं अभी भयङ्कर चक्र हाथ में लेकर भीष्म को मार डालूँगा। इस तरह भीष्म, द्रोणाचार्य और उनके अनुचरों को मारकर युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव का प्रिय करूँगा। धृतराष्ट्र के सब पुत्रों को और उनके पक्ष के मुख्य राजाओं को मारकर आज मैं प्रसन्नतापूर्वक राजा युधिष्ठिर को राजगद्दी पर बिठाऊँगा।

अब महात्मा वासुदेव ने घोड़ों की रास हाथ से छोड़ दी। सहस्रवज्र-सदृश, बहुत ही पैने, सूर्यसदृश प्रभा-सम्पन्न चक्र को हाथ में लेकर घुमाते हुए वे रथ से कूद पड़े। सिंह जैसे गज-राज को मारने के लिए दौड़े वैसे कृष्ण-चन्द्र भीष्म को मारने के लिए कौरवसेना की ओर दौड़े। उस समय उनके शरीर का पीताम्बर आकाश में स्थिर बिजली से युक्त मेघ के समान शोभा को प्राप्त होने लगा। श्रीकृष्ण के कोपरूप सूर्य के उदय में प्रफुल्लित, क्षुरधारसदृश तीक्ष्ण अग्रभाग रूप पत्तों से शोभित, श्रीकृष्ण के शरीररूप सरोवर में उत्पन्न बाहु-मृणाल पर स्थित, सुदर्शन चक्र रूप पद्म—विष्णु की नाभि से उत्पन्न, बालसूर्य-सन्निभ, सृष्टि के आदि-काल के पद्म के समान—शोभा को प्राप्त

९०

हुआ। क्रुद्ध श्रीकृष्ण को चक्र हाथ में लिये देखकर सब प्राणी ऊँचे स्वर से हाहाकार करने लगे। सबने समझा कि अब कुरुकुल का नाश हुआ। धूमकेतु जैसे चराचर जगत् को जलाने के लिए उदित होता है वैसे ही लोकगुरु वासुदेव चक्र हाथ में लेकर, जीवलोक को जलानेवाले प्रलय-काल के अग्नि के समान, भीष्म पितामह की ओर वेग से दौड़े।

श्रीकृष्ण को अपनी ओर चक्र लेकर आते देखकर महात्मा भीष्म तनिक भी नहीं घबराये। वे अविचलित भाव से गाण्डीव के समान श्रेष्ठ धनुष की डोरी बजाते हुए कहने लगे—हे श्रीकृष्ण! हे जगन्निवास! हे चक्रपाणि! आपको मैं प्रणाम करता हूँ। आप प्राणियों की रक्षा करनेवाले शरण्य हैं। आप बलपूर्वक इस श्रेष्ठ रथ पर से मुझे मार गिराइए। आप मुझको मारेंगे तो मुझे इस लोक और परलोक में कल्याण प्राप्त होगा। हे यदुनाथ! आप मुझे मारने दौड़े, इससे मेरी प्रतिष्ठा और कीर्ति और भी बढ़ गई।

भीष्म के ये वचन सुनकर वेग के साथ उनके सामने जाने के लिए उद्यत कृष्णचन्द्र ने कहा—हे भीष्म, तुम्हीं इस महाविनाश के मूल कारण हो। तुम्हारे ही कारण आज दुर्योधन भाई-बन्धुओं सहित विनष्ट होगा। हे भीष्म, द्यूत में आसक्त राजा को उससे रोकना ही धार्मिक मन्त्रियों का कर्तव्य है। यदि कोई राजा काल-विपर्यय के कारण उस उपदेश को न मानकर धर्म-विरुद्ध कार्य को न छोड़ना चाहे तो उसको छोड़ देना ही श्रेयस्कर होता है।

महानुभाव यदुवीर वासुदेव के वचन सुनकर भीष्म ने कहा—हे जनार्दन! दैव ही प्रबल है। मैंने हित-कामना से बारम्बार धृतराष्ट्र से कहा कि यादवों ने अपने हित के लिए कंस को छोड़ दिया था; तुम भी दुर्योधन को त्याग दो। परन्तु उन्होंने दैववश बुद्धि विपरीत होने के कारण मेरा वह हितोपदेश नहीं सुना।

इसी समय विशालबाहु वीर अर्जुन रथ से कूदकर यदुवीर श्रीकृष्ण के पीछे दौड़े। अर्जुन ने जाकर श्रीकृष्ण के दोनों हाथ पकड़ लिये। योगेश्वर कृष्णचन्द्र उस समय क्रोध में थे, इस कारण यद्यपि अर्जुन ने उनको रोकना चाहा, तो भी वे उसी तरह अर्जुन को खींचते हुए भीष्म की ओर चले जैसे प्रबल आँधी किसी वृक्ष को खींच ले जाती है। दसवें पग पर जाकर अर्जुन बलपूर्वक पैर जमाकर श्रीकृष्ण को रोक सके। उनके दोनों पैर अर्जुन ने अपने ज़ोर भर पकड़ रक्खे। १०० सुवर्ण की विचित्र माला पहने हुए अर्जुन ने श्रीकृष्ण के चरणों में सिर रख दिया और उन्हें प्रसन्न करने के लिए कहा—हे केशव! अपना क्रोध शान्त कीजिए। आप ही पाण्डवों की एकमात्र गति हैं। हे कृष्णचन्द्र, मैं अपने भाइयों और पुत्रों की क़सम खाकर कहता हूँ कि जो प्रतिज्ञा कर चुका हूँ उसे अवश्य पूरी करूँगा। मैं आपकी आज्ञा से अवश्य कुरुकुल का संहार करूँगा।

अर्जुन की प्रतिज्ञा और शपथ सुनकर जनार्दन का कोप शान्त हो गया। वे क्षण भर चक्र हाथ में लिये उसी तरह खड़े रहकर फिर लौटकर अर्जुन के रथ पर सवार हुए। घोड़ों की रास हाथ में लेकर उन्होंने पाञ्चजन्य शङ्ख के शब्द से आकाशमण्डल और चारों दिशाओं को प्रतिध्वनित कर दिया। कृष्णचन्द्र निष्क, अङ्गद, कुण्डल आदि भूषण पहने हुए थे; उनके केशों और कमल-सी आँखों की पलकों पर धूल जम रही थी। सफ़ेद दाँत और दाढ़ें चमक रही थीं। ऐसे रूप से हाथ में शङ्ख लिये श्रीकृष्ण को देखकर सब श्रेष्ठ कुरुवीर ऊँचे स्वर से चिल्लाने लगे।

इस समय कौरव-सेना के बीच मृदङ्ग, भेरी, पटह, पणव, दुन्दुभि आदि बाजों का शब्द, रथों के पहियों की घरघराहट और उग्र सिंहनाद चारों ओर छा गया। अर्जुन के गाण्डीव धनुष का शब्द बिजली की कड़क के समान आकाशमण्डल में और सब दिशाओं में व्याप्त हो गया। अर्जुन के धनुष से छूटे हुए विमल बाण सब ओर फैलने लगे। सूखी घास को जलाने के लिए उद्यत अग्नि के समान राजा दुर्योधन, धनुष और बाण हाथ में लेकर, भीष्म और भूरिश्रवा के साथ अर्जुन की ओर चले। इसके बाद अर्जुन के ऊपर भूरिश्रवा ने सुवर्णपुङ्ख सात भल्लबाण, दुर्योधन ने बड़े वेग से तोमर, शल्य ने गदा और भीष्म ने शक्ति मारी। महाधनुर्द्धर अर्जुन ने भूरिश्रवा के सातों बाणों को सात बाणों से और दुर्योधन के तोमर को तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से निष्फल करके भीष्म की बिजली के समान चमकीली शक्ति और शल्य की भारी गदा को दो बाणों से काट डाला। इसके बाद अर्जुन ने विचित्र अप्रमेय गाण्डीव धनुष को दोनों हाथों से खींचकर विधिपूर्वक आकाश में अमोघ माहेन्द्र अस्त्र छोड़ा। धनुर्द्धर अर्जुन उस उत्तम अस्त्र और विमल अग्निवर्ण बाणों के द्वारा सम्पूर्ण शत्रुसेना को रोकने लगे। अर्जुन के धनुष से छूटे हुए बाण रथ, ध्वजा, धनुष, बाहु आदि काटकर शत्रुपक्ष के मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि के शरीरों में घुसने लगे। अर्जुन ने युद्ध में पैने बाणों से दसों दिशाओं को व्याप्त करके गाण्डीव धनुष के शब्द से शत्रुओं के हृदयों को व्यथित करना शुरू किया। उस घोर संग्राम में गाण्डीव के शब्द ने शङ्ख, दुन्दुभि, रथ, घोड़े, हाथी आदि के उग्र शब्दों को छिपा लिया। गाण्डीव की ध्वनि को सुनकर विराट आदि वीर राजा और पाञ्चालराज द्रुपद निर्भय भाव से अर्जुन के पास आ गये। १०

महाराज! आपकी सारी सेना में जहां जिसने गाण्डीव धनुष का शब्द सुना वहीं वह खड़ा सा रह गया। किसी शत्रु को अर्जुन के सामने जाने का साहस नहीं हुआ। उस घोर-तर युद्ध में अर्जुन के तीक्ष्ण भल्ल बाणों की गहरी चोट खाकर रथ, घोड़े, सारथी, वीर रथी आदि मर-मरकर गिर रहे थे। नाराच बाण लगने से प्राणहीन होकर सुवर्णशृङ्खलायुक्त पताका-शोभित हाथी और उनके ऊपर के योद्धा पृथ्वी पर गिर रहे थे। उग्रवेगधारी अर्जुन के बाणों से जिनके कवच कट गये हैं और शरीर फट गये हैं, ऐसे वीर योद्धा मर-मरकर गिरने लगे। जिनके यन्त्र कट गये और इन्द्रकील निहत हो गये हैं, ऐसे बड़े-बड़े सेना के आगे के झण्डे कट-कटकर गिरने लगे। अर्जुन के बाण लगने से शीघ्र ही मरकर रथी, हाथी, घोड़े और पैदल अपने अङ्गों को पकड़े हुए पृथ्वी पर गिरते देख पड़ते थे। इस प्रकार अर्जुन ने ऐन्द्र अस्त्र के प्रभाव से रण में अद्भुत घोर कर्म कर दिखाया। अर्जुन के तीक्ष्ण बाणों ने मनुष्यों आदि के शरीर काट-काटकर रक्त की एक भयानक नदी बहा दी। उस वैतरणी-सदृश भयानक नदी में मनुष्यों की मेदा फेन के समान, मरे हुए हाथियों-घोड़ों और मनुष्यों के शरीर तटभूमि के समान, मज्जा और मांस कीचड़ के समान, खोपड़ियों के केश सेवार के समान, शरीरों के समूह प्रवाह के समान, टूटे-फूटे कवच १२०

लहरों के समान और मनुष्य आदि की कटी हड्डियां कङ्कड़ी के समान जान पड़ती थीं। बड़े चौड़े पाटवाली वह महानदी बड़े वेग से बह चली। उसके दोनों किनारों पर कुत्ते, कङ्क, सियार, गिद्ध, कौए, चील आदि मांसभोजी पशु-पत्ती और राक्षस देख पड़ रहे थे। मेदा, वसा और रक्त से परिपूर्ण वह नदी अर्जुन के बाणों से प्रकट होकर वह चली।

इस प्रकार अर्जुन के द्वारा कौरवों की सेना के वीरों को नष्टप्राय देखकर चेदि, पाञ्चाल, करूष, मत्स्य आदि वीरों के साथ सब पाण्डव प्रसन्न होकर सिंहनाद करने लगे। जय से प्रगल्भ उन पुरुषश्रेष्ठों का हर्षनाद सुनकर कौरवगण त्रस्त हुए। उन्होंने देखा कि शत्रुओं के लिए भयप्रद अर्जुन ने सेना के सभी श्रेष्ठ वीरों को प्रायः मार डाला है। सिंह जैसे मृगों को मारकर भयभीत कर देता है, वैसे ही शत्रुसेना को नष्ट और त्रस्त देखकर अत्यन्त हर्ष से अर्जुन और वासु-
३० देव सिंहनाद करने लगे। द्रोण, भीष्म, दुर्योधन, बाह्लीक आदि बहुत ही घायल हो रहे थे। उन्होंने देखा कि सूर्य अब अस्त होने को हैं और प्रलयकाल सा वह घोर असह्य अस्त्र अपना अमोघ प्रभाव उसी तरह फैलाये हुए है। सूर्य की किरणों से लाल रङ्ग धारण किये हुए सन्ध्या-काल को सामने देखकर कौरवों ने युद्ध रोक दिया।

अर्जुन भी शत्रुओं को जीतने से कीर्ति पाकर, अपना काम पूरा करके, सन्ध्याकाल देख भाइयों और अन्य राजाओं के साथ शिविर को लौट चले। उस सन्ध्याकाल में कौरवसेना के बीच घोर चिल्लाहट और कोलाहल होने लगा।

राजन्, आपकी सेना में जितने लोग बचे थे उनके झुण्ड यह कहते हुए लौटे कि आज अर्जुन ने दस हज़ार रथियों और सात सौ हाथियों को मारकर, प्राच्य-सौवीर-क्षुद्रक-मालव आदि को बिलकुल ही नष्ट करके, बहुत बड़ा काम किया। ऐसा अद्भुत काम कोई नहीं कर सकता। अर्जुन इस समय संसार भर में अद्वितीय योद्धा हैं। उन्होंने क्रुद्ध होकर आज अकेले ही श्रुतायु, अम्बष्ठपति, चित्रसेन, दुर्मर्षण, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, जयद्रथ, बाह्लीक, भूरिश्रवा, शल्य, शल और महाप्रतापी भीष्म को जीत लिया।

चारों ओर हज़ारों पलीते और दीपक जल रहे थे। उस उजेले में जाकर आपकी सेना
१३९ डेरे पर पहुँची। अर्जुन ने सब योद्धाओं को भय से व्याकुल कर दिया था।

साठवाँ अध्याय

अर्जुन के साथ भीष्म का द्वन्द्वयुद्ध

सञ्जय कहते हैं—हे भारत! रात बीत गई। शत्रुओं के ऊपर क्रुद्ध भीष्म पितामह अपनी सब सेना साथ लेकर शत्रुसेना से लड़ने के लिए युद्धभूमि को चले। उनके साथ बहुत सी सेना

लेकर द्रोणाचार्य, दुर्योधन, वाह्लीक, दुर्मर्षण, चित्रसेन, महावली जयद्रथ और अन्य सब महा-रथी राजा चले। उन सब तेजस्वी महावली राजा लोगों के बीच में महारथी भीष्म देवगण सहित इन्द्र के समान शोभा को प्राप्त हुए। उस सेना के बीच हाथियों और रथों के ऊपर लाल, पीले, सफ़ेद आदि अनेक रङ्ग के झण्डे फहरा रहे थे। वह कौरवसेना भीष्म, अन्य महारथियों, हाथियों और घोड़ों से, सौदामिनी-मण्डित मेघमाला के समान, शोभित हुई। इसके वाद भीष्म द्वारा सुरक्षित वह कौरवसेना सहसा अर्जुन से युद्ध करने के लिए पाण्डवसेना के सामने, भयङ्कर नदीप्रवाह के समान, आगे बढ़ने लगी।

महावीर अर्जुन ने दूर से हाथियों, घोड़ों, रथों और पैदलों से परिपूर्ण उस मेघमाला के समान कौरवसेना को अपनी ओर आते देखा। वे अपने पक्ष की सेना को साथ लेकर, सफ़ेद घोड़ों से युक्त रथ पर चढ़कर, शत्रुसेना के सामने चले। आपके पुत्र, सब कौरवगण और उनके सैनिक अर्जुन के वढ़िया रथ और स रथी को देखकर अत्यन्त उदास हुए। पाण्डवों ने आज जिस व्यूह की रचना की थी उसके दोनों ओर चार हज़ार गजराज थे। महारथी अर्जुन शस्त्र हाथ में लिये सावधान होकर उस व्यूह की रक्षा कर रहे थे। आपके पक्ष के वीर उत्सुक होकर उस श्रेष्ठ व्यूह को देखने लगे। धर्मराज युधिष्ठिर ने पहले दिन जैसा १० अद्भुत अदृष्टपूर्व व्यूह रचा था वैसा ही यह व्यूह भी था।

इसके वाद समरभूमि में हज़ारों भेरी, शङ्ख आदि वाजे वजने लगे। उसके साथ तूर्य-ध्वनि और सिंहनाद भी सुन पड़ने लगा। फिर क्षण भर में धनुष और वाण चढ़ाने का शब्द और शङ्खों का शब्द इतना बढ़ गया कि उसमें भेरी, पणव आदि का शब्द छिप गया। आकाशमण्डल में धूल का तम्बू सा तन गया। रथी योद्धा के प्रहार से दूसरा रथी रथ, सारथी और घोड़ों समेत मरकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इसी तरह हाथियों और घोड़ों के सवारों के प्रहार से मरकर हाथी और घोड़े पृथ्वी पर गिरने लगे। इधर-उधर दौड़ते हुए घुड़सवार लोग, दूसरे घुड़सवारों के हाथों, प्रास और शक्ति आदि शस्त्रों के प्रहार से मरकर पृथ्वी पर गिरने लगे। उस समय उनकी दशा अद्भुत देख पड़ती थी। सुवर्ण-तारागण-भूषित, सूर्य के समान प्रभासम्पन्न तरकस, प्रास, परश्वध और खड्ग आदि के प्रहार से कट-कटकर वे पृथ्वी पर गिरने लगे। वहुत से रथी और सारथी हाथियों की सूँड़ और दाँतों के प्रहार से मरकर और हाथि[illegible] के [illegible]वार श्रेष्ठ रथियों के वाणों की चोट खाकर पृथिवी पर गिरने लगे। उस समय अने[illegible] पैदल [illegible]भी हाथियों के वेग और दाँतों की चोट से पीड़ित होकर आर्तनाद करने लगे।

इस प्रकार घुड़सवार और पैदल कम होने लगे। हाथी, घोड़े और रथ भ्रान्त से होकर इधर-उधर दौड़ने लगे। उस समय महारथी भीष्म ने महारथियों के साथ स्थित अर्जुन के रथ २० की ध्वजा दूर पर देखी। पाँच ताल ऊँची तालचिह्नयुक्त ध्वजा से शोभायमान, वेगशाली घोड़ों से

युक्त, रथ पर सवार महाबली भीष्म उस समय महाअस्त्र, बाण आदि से प्रकाशमान अर्जुन की तरफ़ चले। उनके साथ ही इन्द्र के समान प्रभावशाली अर्जुन पर आक्रमण करने के लिए द्रोण, कृप, शल्य, विविंशति, दुर्योधन, सोमदत्त के पुत्र आदि वीर भी चले। इसी समय सब अस्त्रों के ज्ञाता, सुवर्ण-कवचधारी अभिमन्यु बड़े वेग के साथ युद्ध के लिए इन लोगों के आगे आये। भीमकर्मा अभिमन्यु—कृपाचार्य आदि महाबली वीरों के अस्त्र-शस्त्रों को काट-कर—महामन्त्र द्वारा आहुतियों को प्राप्त, ज्वालामाली अग्नि के समान शोभायमान हुए। उधर परम पराक्रमी भीष्म पितामह युद्ध में शत्रुओं के रक्त की नदी बहाकर, अभिमन्यु को लाँघकर, अर्जुन के समीप जाकर बाणों की वर्षा करने लगे। हँसते हुए अर्जुन ने अद्भुत गाण्डीव धनुष चढ़ाकर इतने बाण छोड़े कि भीष्म के सब अस्त्र-शस्त्र तिल-तिल कट गये।

इसके बाद वे भीष्म के ऊपर अमोघ तीक्ष्ण भल्ल बाण बरसाने लगे। महाराज, आपके पक्ष के योद्धाओं ने आश्चर्य के साथ देखा कि सूर्य जैसे अपनी किरणों से घने अँधेरे को नष्ट कर देते हैं, वैसे ही अर्जुन के अस्त्रजाल को भीष्म ने आकाश में ही अपने दिव्य अस्त्रों से नष्ट कर दिया। कौरव, सृञ्जय और अन्य सब लोग प्रधान योद्धा भीष्म और अर्जुन का—इस प्रकार २८ प्रबल धनुष चढ़ाने के घोर शब्द के साथ—द्वन्द्व युद्ध देखने लगे।

महाभारत के स्थायी ग्राहक बनने के नियम

(१) जो सज्जन हमारे यहाँ महाभारत के स्थायी ग्राहकों में अपना नाम और पता लिखा देते हैं उन्हें महाभारत के अङ्कों पर २०) सैकड़ा कमीशन काट दिया जाता है। अर्थात् १।) प्रति अङ्क के बजाय स्थायी ग्राहकों को १) में प्रति अङ्क दिया जाता है। ध्यान रहे कि डाकखर्च स्थायी और फुटकर सभी तरह के ग्राहकों को अलग देना पड़ेगा।

(२) साल भर या छः मास का मूल्य १२) या ६), दो आना प्रति अङ्क के हिसाब से रजिस्ट्री खर्च सहित १३।।) या ६।।।) जो सज्जन पेशगी मनीआर्डर-द्वारा भेज देंगे, केवल उन्हीं सज्जनों को डाकखर्च नहीं देना पड़ेगा। महाभारत की प्रतियाँ राह में गुम न हो जायँ और ग्राहकों की सेवा में वे सुरक्षित रूप में पहुँच जायँ, इसी लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजने का प्रबन्ध किया गया है।

(३) उसके प्रत्येक खंड के लिए अलग से बहुत सुन्दर जिल्दें भी सुनहले नाम के साथ तैयार कराई जाती हैं। प्रत्येक जिल्द का मूल्य ।।।) रहता है परन्तु स्थायी ग्राहकों को वे ।।) ही में मिलती हैं। जिल्दों का मूल्य महाभारत के मूल्य से बिलकुल अलग रहता है।

(४) स्थायी ग्राहकों के पास प्रतिमास प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होते ही बिना विलम्ब वी० पी० द्वारा भेजा जाता है। बिना कारण वी० पी० लौटाने से उनका नाम ग्राहक-सूची से अलग कर दिया जायगा।

(५) ग्राहकों को चाहिए कि जब किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार करें तो कृपा कर अपना ग्राहक-नम्बर जो कि पता की स्लिप के साथ छपा रहता है और पूरा पता अवश्य लिख दिया करें। बिना ग्राहक-नम्बर के लिखे हज़ारों ग्राहकों में से किसी एक का नाम ढूँढ़ निकालने में बड़ी कठिनाई पड़ती है और पत्र की कार्रवाई होने में देरी होती है। क्योंकि एक ही नाम के कई-कई ग्राहक हैं। इसलिए सब प्रकार का पत्र-व्यवहार करते तथा रुपया भेजते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखना चाहिए।

(६) जिन ग्राहकों को अपना पता सदा अथवा अधिक काल के लिए बदलवाना हो, अथवा पते में कुछ भूल हो, उन्हें कार्यालय को पता बदलवाने की चिट्ठी लिखते समय अपना पुराना और नया दोनों पते और ग्राहक-नम्बर भी लिखना चाहिए। जिससे उचित संशोधन करने में कोई दिक़त न हुआ करे। यदि किसी ग्राहक को केवल एक दो मास के लिए ही पता बदलवाना हो, तो उन्हें अपने हलके के डाकख़ाने से उसका प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

(७) ग्राहकों से सविनय निवेदन है कि नया आर्डर या किसी प्रकार का पत्र लिखने के समय यह ध्यान रक्खें कि लिखावट साफ़ साफ़ हो। अपना नाम, गाँव, पोस्ट और ज़िला साफ़ साफ़ हिन्दी या अँगरेज़ी में लिखना चाहिए ताकि अङ्क या उत्तर भेजने में दुबारा पूछ-ताछ करने की ज़रूरत न हो। "हम परिचित ग्राहक हैं" यह सोच कर किसी को अपना पूरा पता लिखने में लापरवाही न करनी चाहिए।

(८) यदि कोई महाशय मनी-आर्डर से रुपया भेजें, तो 'कूपन' पर अपना पता-ठिकाना और रुपया भेजने का अभिप्राय स्पष्ट लिख दिया करें, क्योंकि मनीआर्डरफ़ार्म का यही अंश हमको मिलता है।

सब प्रकार के पत्रव्यवहार का पता—

मैनेजर महाभारत विभाग, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

शुभ संवाद ! लाभ की सूचना !!

महाभारत-मीमांसा

कम मूल्य में

राव बहादुर चिन्तामणि विनायक वैद्य एम० ए०, एल्-एल० बी०, मराठी और अँगरेज़ी के नामी लेखक हैं। यह ग्रन्थ आप ही का लिखा हुआ है। इसमें १८ प्रकरण हैं और उनमें महाभारत के कर्ता (प्रणेता), महाभारत-ग्रन्थ का काल, क्या भारतीय युद्ध काल्पनिक है ?, भारतीय युद्ध का समय, इतिहास किनका है ?, वर्ण-व्यवस्था, सामाजिक और राजकीय परिस्थिति, व्यवहार और उद्योग-धन्धे आदि शीर्षक देकर पूरे महाभारत ग्रन्थ की समस्याओं पर विशद रूप से विचार किया गया है।

काशी के प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् श्रीयुक्त बाबू भगवानदासजी, एम० ए० की राय में महाभारत को पढ़ने से पहले इस मीमांसा को पढ़ लेना आवश्यक है। आप इस मीमांसा को महाभारत की कुञ्जी समझते हैं। इसी से समझिए कि ग्रन्थ किस कोटि का है। इसका हिन्दी-अनुवाद प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय पण्डित माधवरावजी सप्रे, बी० ए०, का किया हुआ है। पुस्तक में बड़े आकार के ४०० से ऊपर पृष्ठ हैं। साथ में एक उपयोगी नक़शा भी दिया हुआ है जिससे ज्ञात हो कि महाभारत-काल में भारत के किस प्रदेश का क्या नाम था।

हमारे यहाँ महाभारत के ग्राहकों के पत्र प्रायः आया करते हैं जिनमें स्थल-विशेष की शंकाएँ पूछी जाती हैं। उन्हें समयानुसार यथामति उत्तर दिया जाता है। किन्तु अब ऐसी शंकाओं का समाधान घर बैठे कर लेने के लिए हमने इस महाभारत-मीमांसा ग्रन्थ को पाठकों के पास पहुँचाने की व्यवस्था का संकल्प कर लिया है। पाठकों के पास यदि यह ग्रन्थ रहेगा और वे इसे पहले से पढ़ लेंगे तो उनके लिए महाभारत की बहुत सी समस्याएँ सरल हो जायँगी। इस मीमांसा का अध्ययन कर लेने से उन्हें महाभारत के पढ़ने का आनन्द इस समय की अपेक्षा अधिक मिलने लगेगा। इसलिए महाभारत के स्थायी ग्राहक यदि इसे मँगाना चाहें तो इस सूचना को पढ़ कर शीघ्र मँगा लें। उनके सुभीते के लिए हमने इस ४) के ग्रंथ को केवल २।।) में देने का निश्चय कर लिया है। पत्र में अपना पूरा पता-ठिकाना और महाभारत का ग्राहक-नंबर अवश्य होना चाहिए। **समय बीत जाने पर** महाभारत-मीमांसा **रिआयती मूल्य में न मिल सकेगी।** प्रतियाँ हमारे पास अधिक नहीं हैं।

मैनेजर बुकडिपो—**इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।**

२१

हिन्दी महाभारत

आवश्यक सूचनायें

(१) हमने प्रथम खण्ड की समाप्ति पर उसके साथ एक महाभारत-कालीन भारतवर्ष का प्रामाणिक सुन्दर मानचित्र भी देने की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में हम ग्राहकों को सूचित करते हैं कि पूरा महाभारत समाप्त हो जाने पर हम प्रत्येक ग्राहक को एक परिशिष्ट अध्याय बिना मूल्य भेजेंगे जिसमें महाभारत-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण खोज, साहित्यिक आलोचना, चरित्र-चित्रण तथा विश्लेषण आदि रहेगा। इसी परिशिष्ट के साथ ही मानचित्र भी लगा रहेगा जिसमें पाठकों को मानचित्र देख कर उपरोक्त बातें पढ़ने और समझने आदि में पूरी सुविधा रहे।

(२) महाभारत के प्रेमी ग्राहकों को यह शुभ समाचार सुन कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हमने कानपुर, इटावा, काशी (रामनगर), कलकत्ता, ग़ाज़ीपुर, बरेली, मथुरा (वृन्दावन), जोधपुर, बुलन्दशहर, प्रयाग और लाहौर आदि में ग्राहकों के घर पर ही महाभारत के अङ्क पहुँचाने का प्रबन्ध किया है। अब तक ग्राहकों के पास यहीं से सीधे डाक-द्वारा प्रतिमास अङ्क भेजे जाते थे जिसमें प्रति अङ्क तीन चार आना ख़र्च होता था पर अब हमारा नियुक्त किया हुआ एजेंट ग्राहकों के पास घर पर जाकर अङ्क पहुँचाया करेगा और अङ्क का मूल्य भी ग्राहकों से वसूल कर ठीक समय पर हमारे यहाँ भेजता रहेगा। इस अवस्था पर ग्राहकों को ठीक समय पर प्रत्येक अङ्क सुरक्षित रूप में मिल जाया करेगा और वे डाक, रजिस्टरी तथा मनीआर्डर इत्यादि के व्यय से बच जायँगे। इस प्रकार उन्हें प्रत्येक अङ्क केवल एक रुपया मासिक देने पर ही घर बैठे मिल जाया करेगा। यथेष्ट ग्राहक मिलने पर अन्य नगरों में भी शीघ्र ही इसी प्रकार का प्रबन्ध किया जायगा। आशा है जिन स्थानों में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है, वहाँ के महाभारतप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अधिक संख्या में ग्राहक बन कर इस अवसर से लाभ उठावेंगे। और जहाँ इस प्रकार की व्यवस्था हो चुकी है वहाँ के ग्राहकों के पास जब एजेंट अङ्क लेकर पहुँचे तो ग्राहकों को रुपया देकर अङ्क ठीक समय पर ले लेना चाहिए जिसमें उन्हें ग्राहकों के पास बार बार आने जाने का कष्ट न उठाना पड़े। यदि किसी कारण उस समय ग्राहक मूल्य देने में असमर्थ हों तो अपनी सुविधानुसार एजेंट के पास से जाकर अङ्क ले आने की कृपा किया करें।

(३) हम हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जनों से एक सहायता की प्रार्थना करते हैं। वह यही कि हम जिस विराट् आयोजन में संलग्न हुए हैं आप लोग भी कृपया इस पुण्य-पर्व में सम्मिलित होकर पुण्य-सञ्चय कीजिए, अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी का साहित्य-भाण्डार पूर्ण करने में सहायक हूजिए और इस प्रकार सर्वसाधारण का हित-साधन करने का उद्योग कीजिए। सिर्फ़ इतना ही करें कि अपने दस-पाँच हिन्दी-प्रेमी इष्ट-मित्रों में से कम से कम दो स्थायी ग्राहक इस वेद तुल्य सर्वाङ्गसुन्दर महाभारत के और बना देने की कृपा करें। जिन पुस्तकालयों में हिन्दी की पहुँच हो वहाँ इसे ज़रूर मँगवादें। एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न रह जाय जिसके घर यह पवित्र ग्रन्थ न पहुँचे। आप सब लोगों के इस प्रकार साहाय्य करने से ही यह कार्य्य अग्रसर होकर समाज का हितसाधन करने में समर्थ होगा।

—प्रकाशक

विषय-सूची

विशेष सूचना

३००० से लेकर ३०१० तक पृष्ठ संख्या भूल से छप गई है। पाठकों से प्रार्थना है कि उसे सुधार कर २१०० से क्रमशः २११० पढ़ें।

—व्यवस्थापक।

रंगीन चित्रों की सूची

इकसठवाँ अध्याय

शल के पुत्र का वध

सञ्जय ने कहा—महाराज! अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, शल्य, चित्रसेन और शल के पुत्र, ये सब मिलकर एक साथ अभिमन्यु से युद्ध करने लगे। सबने देखा कि तेजस्वी बालक अभिमन्यु इन पाँचों योद्धाओं के सामने, पाँच गजराजों के सामने एक सिंह-शावक के समान, निर्भय भाव से खड़ा युद्ध कर रहा था। लक्ष्यवेध, पराक्रम, अस्त्रप्रयोग, फुर्ती आदि किसी बात में कोई योद्धा अभिमन्यु की बराबरी नहीं कर पाता था। अर्जुन अपने शत्रुतापन पुत्र को युद्ध में ऐसा पराक्रम प्रकट करते देखकर आनन्द से सिंहनाद करने लगे। राजन्, आपके पक्ष के योद्धाओं ने अभिमन्यु को इस तरह कौरवसेना को मथते देखकर चारों ओर से उन पर आक्रमण किया। तब शत्रुनाशन अभिमन्यु ने निर्भय भाव से, तेज और बल के साथ, उन लोगों के सामने आकर अत्यन्त घोर संग्राम करना शुरू किया। शत्रुओं के साथ युद्ध करते समय अभिमन्यु का श्रेष्ठ धनुष सूर्यमण्डल के समान प्रभासम्पन्न और घूमता हुआ देख पड़ने लगा। अभिमन्यु ने अश्वत्थामा को एक और शल्य को पाँच बाण मारकर आठ बाणों से शल के पुत्र की ध्वजा के कई टुकड़े कर डाले। तब सोमदत्त के पुत्र ने सुवर्ण-दण्डयुक्त, नागसदृश एक महाशक्ति अभिमन्यु के ऊपर चलाई। अभिमन्यु ने एक ही बाण से वह शक्ति काटकर गिरा दी। तब शल्य उन पर सैकड़ों बाण बरसाने लगे। अभिमन्यु ने फुर्ती के साथ चार बाणों से शल्य के रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। उस समय भूरिश्रवा, शल्य, अश्वत्थामा और शल कोई भी अभिमन्यु के सामने ठहरकर युद्ध नहीं कर सका। १०

महाराज! इसके बाद युद्ध में अजेय, प्रधान-प्रधान धनुर्वेद के विद्वान्, रण-निपुण योद्धा लोग आपके पुत्र की आज्ञा से अभिमन्यु और अर्जुन से लड़ने चले। ऐसे पचीस हज़ार मुख्य योद्धाओं ने त्रिगर्त, मद्र और केकय देशों की सेना के साथ जाकर चारों ओर से अर्जुन और अभिमन्यु को घेर लिया। शत्रुविजयी सेनापति धृष्टद्युम्न ने अर्जुन और अभिमन्यु के रथ को इस तरह शत्रुसेना से घिरते देखकर सब सेना को उनकी सहायता के लिए बढ़ने की आज्ञा दी। क्रुद्ध धृष्टद्युम्न कई हज़ार गजों, रथों और घोड़ों के सवारों को तथा पैदल सेना को साथ ले धनुष चढ़ाकर मद्र, केकय आदि देशों की सेना से लड़ने चले। रथों, हाथियों, घोड़ों और पैदलों से परिपूर्ण वह पाण्डव-सेना दृढ़ धनुषवाले धृष्टद्युम्न के द्वारा सुरक्षित और सञ्चालित होकर उधर चली। उस समय वह सेना बहुत ही शोभा को प्राप्त हुई। धृष्टद्युम्न ने अर्जुन के पास जाकर कृपाचार्य के कन्धे में तीन बाण मारे। फिर मद्रराज शल्य को दस बाणों से व्याकुल करके शीघ्रतापूर्वक एक भल्ल बाण से कृतवर्मा के पृष्ठरक्षक को मार डाला। इसके बाद एक भारी नाराच बाण से पौरवपुत्र दमन को मार डाला। २०

तब शल के पुत्र ने युद्धदुर्मद धृष्टद्युम्न और उनके सारथी को दस बाण मारे। श्रेष्ठ योद्धा धृष्टद्युम्न उन बाणों से अत्यन्त घायल होकर क्रोध के मारे दाँत पीसने लगे। उन्होंने एक तीक्ष्ण भल्ल बाण से शत्रु का धनुष काटकर पचीस बाण और मारे। अब धृष्टद्युम्न ने शल के पुत्र के सारथी, घोड़े और पार्श्वरक्षकों को मार डाला। हे भारत, शल के पुत्र इस तरह बिना घोड़े और सारथी के रथ पर अपने को असहाय निरुपाय देखकर क्रोध के मारे धृष्टद्युम्न को मारने के लिए एक श्रेष्ठ खड्ग लेकर रथ से कूदकर पैदल ही दौड़े। पाण्डवों और धृष्टद्युम्न ने देखा कि वह वीर आकाश से गिरे हुए बड़े साँप या कालप्रेरित मृत्यु के समान आ रहा है। महावीर शल-पुत्र बाण-वेग के मार्ग को लाँघकर ज्योंही फुर्ती से धृष्टद्युम्न के रथ के पास पहुँचे त्योंही धृष्टद्युम्न ने मौक़ा पाकर गदा से उनका सिर चूर्ण कर दिया। महाराज, गदा के प्रहार से मरकर शल-पुत्र गिर पड़े; उनके हाथ से चमकीली तलवार और ढाल पृथ्वी पर गिर पड़ी। अपने शत्रु को गदा की चोट से मारकर पाञ्चाल-पुत्र धृष्टद्युम्न बहुत प्रसन्न हुए। ३०

धनुर्द्धरश्रेष्ठ महारथी शल-पुत्र के मरने पर आपकी सेना में हाहाकार मच गया। इसके बाद महावीर शल अपने पुत्र की मृत्यु देखकर क्रोध के मारे वेग से दौड़ते हुए युद्धप्रिय धृष्टद्युम्न के पास पहुँचे। कौरवों और पाण्डवों की सेना के सामने वे घोर युद्ध करने लगे। हाथी को जैसे कोई अंकुश मारे, वैसे महावीर शल ने धृष्टद्युम्न को तीन बाण मारे। उधर शल्य ने भी क्रुद्ध होकर धृष्टद्युम्न के हृदय में प्रहार किया। इस तरह उनका घोर युद्ध होने लगा। ३६

बासठवाँ अध्याय

भीमसेन आदि का युद्ध

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, मैं पौरुष की अपेक्षा दैव को ही श्रेष्ठ समझता हूँ; क्योंकि पाण्डवपक्ष के वीर ही लगातार मेरे पक्ष के वीरों को मारते चले आते हैं। हे सञ्जय, तुम हर

बार मेरे पक्ष की सेना के विनाश का वर्णन करते हो। मेरे पक्षवालों को पौरुष से हीन और निहत बताकर पाण्डवों की बड़ाई करते हो और उन्हें अव्यग्र, प्रसन्न और उत्साही बतलाते हो। मेरे पक्ष के योद्धा यथाशक्ति जय की चेष्टा करते हुए युद्ध करते हैं, फिर भी पाण्डव लोग जीतते हैं और कौरव हारते हैं। सो मैं दुर्योधन के कारण मिलनेवाले असह्य तीव्र अनेक दुःखदायक समाचार सुनूँगा। हे सञ्जय, मुझे ऐसा कोई उपाय नहीं देख पड़ता जिससे मेरे पक्ष के लोग जय पावें और पाण्डवों का क्षय हो।

सञ्जय ने कहा—महाराज, आपका ही बड़ा अन्याय है। इस कारण स्थिर होकर अपने पक्ष के हाथी, रथ, मनुष्य और घोड़े आदि के घोर विनाश का वृत्तान्त सुनिए। राजन्, महावीर धृष्टद्युम्न ने मद्रराज शल्य के नव बाणों से पीड़ित होकर, क्रोध से अधीर हो, उन पर असंख्य लोहमय बाण बरसाये। पराक्रमी शल्य को धृष्टद्युम्न ने शीघ्रता के साथ रोका। हम लोग उनके इस अद्भुत पराक्रम को आश्चर्य के साथ देखने लगे। थोड़ी देर तक दोनों वीर इसी तरह परस्पर विजय की इच्छा से दारुण युद्ध करते रहे। उन्होंने ऐसा युद्ध किया कि किसी ने दम भर भी उन्हें रुकते नहीं देखा। महाराज, शल्य ने पीले रङ्ग के तीक्ष्ण भल्ल बाण से धृष्टद्युम्न का धनुष काट डाला। इसके बाद पहाड़ पर वर्षाऋतु की जलवर्षा के समान बाणों की वर्षा करके धृष्टद्युम्न को ढक दिया। उस बाण-वर्षा से धृष्टद्युम्न को बहुत व्यथित देखकर वीर अभिमन्यु शल्य के रथ के पास गये। अभिमन्यु ने क्रोध के आवेश में आकर शल्य को तीन वेढब बाणों से घायल किया। यह देखकर आपके पक्ष के योद्धा लोग अभिमन्यु पर आक्रमण करने के लिए शल्य के चारों ओर आ गये। दुर्योधन, दुःशासन, विकर्ण, विविंशति, दुर्मर्षण, दुःसह, चित्रसेन, दुर्मुख, सत्यव्रत और पुरुमित्र, ये दस योद्धा शल्य के रथ की रक्षा करने लगे। हे भारत! उधर भीमसेन, धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, नकुल और सहदेव, ये दस योद्धा मिलकर असंख्य अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा शत्रुसेना के उक्त दसों योद्धाओं को रोकने की चेष्टा करने लगे। १०

राजन्, आपकी बुरी सलाह के कारण ही ये सब क्रोधवश होकर परस्पर वध की इच्छा से युद्ध करने लगे। इस समय अन्य रथी और योद्धा युद्ध बन्द करके इन लोगों का घोर संग्राम देखने लगे। उस समय वे महारथी योद्धा, परस्पर वध की इच्छा से, क्रोध से आँखें लाल करके, सिंहनादपूर्वक, स्पर्धा के साथ अस्त्र-प्रहार करने लगे। क्रुद्ध होकर दुर्योधन ने चार, दुर्मर्षण ने बीस, चित्रसेन ने पाँच, दुर्मुख ने नव, दुःसह ने सात, विविंशति ने पाँच और दुःशासन ने तीन बाण धृष्टद्युम्न को मारे। राजन्, शत्रुतापन धृष्टद्युम्न ने हाथ की फुर्ती दिखाकर हर एक को पचीस-पचीस बाण मारे। अभिमन्यु ने सत्यव्रत और पुरुमित्र को दस-दस बाण मारे। नकुल और सहदेव ने मामा शल्य को तीक्ष्ण असंख्य बाणों से छा लिया। श्रेष्ठ रथी २०

शल्य ने भी नकुल और सहदेव के ऊपर असंख्य बाण बरसाये। वे दोनों वीर शल्य के
३१ बेशुमार बाण लगने से तनिक भी विचलित नहीं हुए।

हे भारत, महाबली भीमसेन ने दुर्योधन को देखा तो उन्हें मारकर पुराना झगड़ा मिटाने के लिए हाथ में गदा ली। आपके अन्य पुत्र गदापाणि भीमसेन को शिखरयुक्त कैलास पर्वत के समान देखकर डर से भाग खड़े हुए। सुयोधन क्रुद्ध होकर, मगधराज को आगे करके, दस हज़ार मगध देश की सेना और दस हज़ार हाथियों का दल लेकर भीमसेन से लड़ने के लिए उनके सामने आये। उस हाथियों के दल को आते देखकर भीमसेन सिंह-नाद करते हुए रथ पर से उतर पड़े। वे मुँह फैलाये हुए काल के समान पहाड़ सी भारी गदा हाथ में लेकर दौड़े। जैसे वृत्र को मारनेवाले इन्द्र दानवों को मारते हुए युद्ध में विचरे थे, वैसे ही महापराक्रमी भीमसेन गदा हाथ में लेकर हाथियों को मारते हुए युद्धभूमि में विच-रने लगे। हृदय को हिला देनेवाले उनके गरजने से हाथियों के झुण्ड डरकर अचेत से हो गये। उधर द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, नकुल, सहदेव और धृष्ट-द्युम्न—भीमसेन की पृष्ठरक्षा करते हुए—

४० हाथियों के दल पर बाण बरसाने लगे। वे लोग पैने क्षुर, क्षुरप्र, भल्ल, अञ्ज-लिक आदि बाणों से हाथियों पर सवार योद्धाओं के सिर काटने लगे। उन वीरों के मस्तक और हाथ कट-कटकर गिरने से ऐसा जान पड़ता था मानो पत्थर बरस रहे हैं। हाथियों के हौदों पर ही सवारों के सिर कटने से वे पर्वत पर के उन शालवृक्षों के समान देख पड़ने लगे, जिनके ऊपर के हिस्से कट गये हों। उस समय महावीर धृष्टद्युम्न ने असंख्य हाथियों को मार गिराया। ऐरावत सदृश एक बड़े हाथी पर सवार मगधराज अभिमन्यु के रथ की ओर चले। शत्रुनाशन अभिमन्यु ने मगधराज के महागज को, आते देखकर, एक ही बाण से मार डाला। इसके बाद एक चाँदी के समान चमकीले भल्ल बाण से मगधराज का सिर काट गिराया। इधर गज-सेना के भीतर घुसकर भीमसेन हाथियों को छिन्न-भिन्न कर वज्रपाणि इन्द्र के समान समर-

भूमि में विचरने लगे। वे एक ही एक प्रहार से हरएक हाथी को पृथ्वी पर गिरा देते थे। युद्धभूमि में पड़े हुए वे हाथी वज्र से फटे हुए पहाड़ों के शिखर से जान पड़ते थे। कुछ हाथियों के दाँत, कुछ हाथियों के मस्तक, कुछ हाथियों की पीठ टूट फूट गई और वे पृथ्वी पर गिर पड़े। कुछ हाथी समर से भाग खड़े हुए। कुछ हाथियों ने डरकर मल-मूत्र कर दिया। कोई-कोई पहाड़ सा हाथी भीमसेन के वेग से ही गिरकर मर गया। कोई हाथी चोट खाकर चीत्कार करता हुआ आर्तनाद करने लगा। किसी-किसी हाथी का मस्तक फट गया और वह लगातार रक्त बहने से दुर्बल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। भीमसेन के सब अङ्ग मेदा, रक्त, वसा, मज्जा आदि में सन गये और वे दण्डपाणि यमराज की तरह गदा हाथ में लिये विचरते देख पड़ने लगे। भीमसेन के हाथों से मर्दित हाथियों का दल उलटे लौटकर आपकी ही सेना को कुचलने लगा। देवता जैसे इन्द्र की रक्षा करें वैसे ही अभिमन्यु आदि महाधनुर्द्धर वीर भीमसेन की रक्षा करने लगे। हाथियों के रक्त से भीगी हुई गदा को लिये भीमसेन यमराज की तरह भयङ्कर देख पड़ते थे। गदा घुमाते हुए भीमसेन नृत्य करते हुए शङ्कर की तरह जान पड़ते थे। यमदण्ड की सी भीमसेन की गदा बहुत भारी थी और वज्र की तरह उससे शब्द होता था। उस भयङ्कर गदा में खून, चर्बी, केश आदि लिपटे हुए थे। वह गदा पशु को मारनेवाले रुद्र के 'पिनाक' धनुष की तरह थी। जैसे पशुपाल डण्डे से पशुओं को मारता है वैसे ही भीमसेन गदा के द्वारा हाथियों के सवारों की सेना को मारने लगे। भीमसेन की गदा और चारों ओर से आ रहे तीरों की चोट से घायल होकर भागे हुए हाथी अपने ही पक्ष की सेना को मथने और कुचलने लगे। आँधी से छिन्न-भिन्न मेघों के समान हाथियों के दल को नष्ट-भ्रष्ट करके भीमकर्मा भीमसेन श्मशानवासी भूतनाथ शङ्कर के समान शोभित हुए। ६५

तिरसठवाँ अध्याय

सात्यकि और भूरिश्रवा की भिड़न्त

सञ्जय ने कहा—राजन्, हाथियों की सेना के यों मारे जाने पर आपके पुत्र दुर्योधन ने अपनी सेना को भीमसेन के वध की आज्ञा दी। उस समय आपके पक्ष की सेना भयानक शब्द करके भीमसेन पर हमला करने के लिए दौड़ी। समुद्र के वेग को जैसे तटभूमि रोकती है वैसे ही भीमसेन उस असंख्य रथ-हाथी-घोड़े-पैदल आदि से पूर्ण, उड़ी हुई धूल से व्याप्त, देवताओं के लिए भी दुःसह कौरव-सेना के वेग को रोकने लगे। राजन्, इस युद्ध में हमने भीमसेन का अद्भुत पराक्रम और अलौकिक काम देखे। वे अनायास उन सब राजाओं को

और चतुरङ्गिणी सेना को केवल गदा की मार से रोकने लगे। महापराक्रमी भीमसेन ने गदा के द्वारा उस सेना का वेग रोक लिया। वे पर्वतराज सुमेरु की तरह अचल बने रहे। उस भयानक युद्ध के समय भीमसेन के पुत्र, भाई, धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु और

१० शिखण्डी ने भीमसेन का साथ नहीं छोड़ा। भीमसेन लोहे की गदा हाथ में लेकर साक्षात् काल की तरह आपके योद्धाओं को मारने दौड़े, और प्रलयकाल के अग्नि की तरह आसपास के शत्रुओं को भस्म करते हुए युद्धभूमि में घूमने लगे। वे घोड़ों को खदेड़कर और घुटनों के वेग से रथों को खींचकर उन पर के योद्धाओं को मारने लगे। हाथी जैसे नरकुल के जङ्गल को मथ डालता है वैसे ही वे रथों, घोड़ों, हाथियों के सवारों और पैदलों को गदा के प्रहार से नष्ट करने लगे। प्रबल आँधी से उखड़े वृक्षों की तरह काँपते हुए योद्धा गिरने लगे। उस समय भीमसेन की गदा में रक्त, मांस, मेदा, मज्जा और वसा लिपी हुई थी, इसी कारण वह बहुत भयङ्कर देख पड़ती थी। चारों ओर पड़ी मनुष्यों, हाथियों, घोड़ों आदि की लाशों से वह समरभूमि काल की वध्यभूमि के समान जान पड़ने लगी। सब लोगों को महावीर भीमसेन की वह प्रचण्ड गदा यमराज के दण्ड सी, इन्द्र के वज्र सी, और संहारकर्ता शङ्कर के पिनाक धनुष सी जान पड़ती थी। उस गदा को लिये घूमते हुए भीमसेन उस समय प्रलयकाल में

२० यमराज के समान शोभा को प्राप्त हुए। सब वीरों को मारते और भगाते हुए भीमसेन को आते देखकर कौरव पक्ष के सब लोग बहुत ही उदास हुए। महावीर भीमसेन गदा तानकर जिधर देखते थे उधर ही सेना डरकर भागने लगती थी।

महाराज! इस तरह सैन्य-संहारकर्ता, मुँह फैलाये हुए काल के समान भयङ्कर, भीमसेन भयावनी गदा के प्रहार से सेना को छिन्न-भिन्न कर रहे थे। यह देखकर महावीर भीष्म मेघ के समान गरजनेवाले और सूर्यमण्डल के समान प्रकाश-पूर्ण रथ पर बैठकर वर्षा के मेघ की तरह बाण बरसाते हुए भीमसेन के सामने दौड़े। साक्षात् काल के समान भीष्म को आते देखकर भीमसेन और भी क्रुद्ध हो उठे और एकाएक दौड़कर उनके समीप पहुँचे। तब सत्य-परायण सात्यकि भी दृढ़ धनुष हाथ में लेकर बाण-वर्षा से दुर्योधन की सेना को कम्पित और नष्ट करते हुए भीष्म की ओर दौड़ पड़े। हे राजेन्द्र! आपके पक्ष का कोई भी वीर सफ़ेद घोड़ों से युक्त रथ पर बैठे हुए, तीक्ष्ण बाण बरसा रहे, शिनिवीर सात्यकि को रोक नहीं सका। केवल राक्षस अलम्बुष ने सामने जाकर उनको दस बाण मारे। महावीर सात्यकि ने रथ पर से चार बाण मारकर उसे शिथिल कर दिया और अपना रथ आगे बढ़ाया।

राजन्! आपके पक्ष के योद्धा लोग, उन वृष्णिवंशावतंस सात्यकि को शत्रुसेना के बीच विचरकर कौरवों को विमुख करके बारम्बार सिंहनाद करते देख, पर्वत के ऊपर जलवर्षा के समान बाणों की वर्षा करने लगे; किन्तु वे किसी तरह सात्यकि के वेग को या रथ को रोक नहीं

सके। उस समय सोमदत्त के पुत्र भूरिश्रवा के सिवा और सभी घबरा गये। वीर भूरिश्रवा ने जब अपने पक्ष के वीरों को सात्यकि के युद्ध-कौशल और पराक्रम से पीड़ित देखा तब वे सात्यकि का सामना करने की इच्छा से, बड़े वेग से, धनुष हाथ में लेकर उनके सामने पहुँचे। ३३

चौंसठवाँ अध्याय

दुर्योधन के भाइयों का मारा जाना और चौथे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय ने कहा—महाराज, भूरिश्रवा ने क्रोध से अधीर होकर सात्यकि को नव बाण मारे। उदारहृदय सात्यकि ने भी सबके सामने झुके हुए तीक्ष्ण असंख्य बाण मारकर भूरिश्रवा को लौटा दिया। अब राजा दुर्योधन अपने भाइयों को साथ लेकर भूरिश्रवा की रक्षा के लिए पहुँचे। दुर्योधन जिस तरह चारों ओर से घेरकर भूरिश्रवा की रक्षा करने लगे उसी प्रकार अन्यान्य महाबली पराक्रमी पाण्डव-पक्ष के वीर सात्यकि को घेरकर उनकी रक्षा करने लगे। भीमसेन क्रोध के आवेश में जब गदा हाथ में लेकर आपके पुत्रों पर प्रहार करने लगे तब आपके पुत्र नन्दक ने, बहुत से रथी योद्धाओं के साथ मिलकर, क्रोधपूर्वक पैने कङ्कपत्रभूषित बाण उनको मारे। दुर्योधन ने भी क्रुद्ध होकर भीमसेन की छाती में नव बाण मारे।

अमितपराक्रमी भीमसेन ने अपने रथ पर बैठकर सारथी अशोक से कहा—"हे सारथी, ये धृतराष्ट्र के पुत्र बहुत ही क्रोधित होकर मुझे मारने को तैयार हैं; इन्हें मारने का मेरा बहुत पुराना सङ्कल्प है, सो आज उसे सफल समझो; क्योंकि भाइयों समेत दुर्योधन मेरे सामने है। अन्तरिक्ष में बाण ही बाण और रथ के पहियों से उड़ी हुई धूल ही धूल देख पड़ेगी। सुयोधन तैयार खड़ा है और उसके मतवाले भाई भी साथ देने को तुले हुए हैं। मैं आज तुम्हारे सामने ही इन्हें यमपुरी भेज दूँगा। इसलिए तुम इस युद्ध में होशियारी के साथ मेरा रथ चलाओ।" महाराज, भीमसेन ने यों कहकर बहुत से स्वर्णमण्डित १०

तीक्ष्ण बाण दुर्योधन को मारे। नन्दक की छाती में भी तीन बाण मारे। दुर्योधन ने भी महाबली भीमसेन को साठ बाण मारकर सारथी को तीन बाणों से घायल किया। इसके बाद हँसकर तीन बाणों से भीमसेन का धनुष काट डाला। सारथी को घायल देखकर भीमसेन को क्रोध चढ़ आया। उन्होंने आपके पुत्र को मारने के लिए दिव्य धनुष और क्षुरप्र बाण हाथ २० में लेकर दुर्योधन का धनुष काट डाला। तब दुर्योधन ने क्रोध के मारे तलमलाकर कटा धनुष फेंककर दूसरा धनुष हाथ में लिया और कालान्तक तुल्य एक बाण भीमसेन की छाती में मारा। उस प्रहार से मूर्च्छित होकर भीमसेन रथ पर बैठ गये। यह देखकर अभिमन्यु आदि महारथी क्रोध से अधीर हो उठे। वे दुर्योधन के मस्तक पर लगातार बाण-वर्षा करने लगे। महाबली भीमसेन ने भी क्षण भर में सचेत होकर दुर्योधन को पहले तीन बाण और फिर पाँच बाण मारे। इसके बाद शल्य को सुवर्णपुङ्ख पचीस बाण मारे। भीमसेन के बाणों से बहुत घायल और पीड़ित होकर शल्य समरभूमि से हट गये।

महाराज! इसके बाद सेनापति, सुषेण, जलसन्ध, सुलोचन, उग्र, भीमरथ, भीम, वीरबाहु, अलोलुप, दुर्मुख, दुष्प्रधर्ष, विवित्सु, विकट और सम, ये आपके चौदहों पुत्र मिलकर क्रोध से आँखें लाल करके भीमसेन के सामने जाकर लगातार बाण बरसाने ३० लगे। महाबाहु भीमसेन ने उन्हें यों बाण बरसाते देखकर, पशुओं के झुण्ड में खड़े भेड़िये की तरह ओठ चबाते हुए, गरुड़ के से वेग से उनके सामने जाकर एक क्षुरप्र बाण से सेनापति का सिर काट डाला। फिर तीन बाणों से जलसन्ध और सुषेण को यमराज के घर भेज दिया। इसके बाद भल्ल बाण से उग्र का शिरस्त्राणसहित कुण्डल-शोभित मस्तक काट गिराया। घोड़े, ध्वजा और सारथी को नष्ट कर उन्होंने वीरबाहु को सत्तर बाणों से मारा तथा वेगशाली भीमरथ और भीम को भी मारकर यमलोक पहुँचा दिया। फिर सब सेना के सामने क्षुरप्र बाण से सुलोचन को भी मार डाला। इनके सिवा

जो आपके पुत्र वहाँ उपस्थित थे वे भी, भीमसेन के पराक्रम और प्रहार से, डरकर इधर-उधर भाग खड़े हुए और कुछ मार डाले गये।

महाराज, तब पितामह भीष्म ने कौरवपक्ष के महारथियों से कहा—हे वीरो, उग्रधन्वा भीमसेन क्रोधवश होकर प्रधान-प्रधान वीरों को मार रहे हैं, इसलिए तुम लोग शीघ्र उन पर हमला करो। यह आज्ञा पाकर दुर्योधन के सैनिक क्रोधविह्वल हो भीमसेन पर आक्रमण करने चले। मस्त महागजराज पर सवार भगदत्त भीमसेन के पास पहुँचे। उन्होंने असंख्य बाणों की वर्षा से भीमसेन को उसी तरह छा लिया जैसे मेघ सूर्य को छिपा लेते हैं। यह अभिमन्यु आदि वीर न सह सके। उन्होंने क्रोध करके बाणों से राजा भगदत्त और उनके हाथी को ढक दिया। महारथियों के प्रहार से प्राग्ज्योतिषेश्वर भगदत्त का हाथी ख़ून से तर हो गया। वह उस समय सूर्यकिरण-मण्डित मेघ सा जान पड़ने लगा। ४१

महाबली भगदत्त ने क्रुद्ध होकर हाथी को आगे बढ़ाया। गजराज पहले की अपेक्षा दूने वेग से बढ़ा। उसके पैरों के भार से पृथ्वी काँपने लगी। वह हाथी कालप्रेरित मृत्यु की तरह योद्धाओं के ऊपर दौड़ा। उस हाथी का भयानक आकार देखकर सब योद्धा बड़े उद्विग्न और उदास हुए। राजा भगदत्त ने क्रोध में आकर भीमसेन की छाती में तीक्ष्ण बाण मारा। मर्मस्थल में भगदत्त के बाण की चोट खाकर भीमसेन अत्यन्त व्यथित हो ध्वजा के डण्डे का सहारा लेकर बैठ गये। शत्रुपक्ष के योद्धाओं को डरे हुए और भीमसेन को मूर्च्छित देखकर प्रभावशाली भगदत्त गम्भीर शब्द से गरजने लगे। राजन्, भीमसेन की यह दशा देखकर राक्षस घटोत्कच बहुत क्रुद्ध हुआ। वह तुरन्त माया-बल से अन्तर्द्धान होकर, कायरों को दहला देनेवाली माया उत्पन्न कर, मायामय ऐरावत हाथी पर चढ़कर लोगों के सामने भयङ्कर रूप से प्रकट हुआ। उसके मायाबल से अञ्जन, वामन और महापद्म नाम के तीनों दिग्गज सामने देख पड़े। वे भी ऐरावत के पीछे चले। उन तीनों दिग्गजों के मद बह रहा था। वे बड़े डील-डौलवाले चार-चार दाँतों से शोभित और तेज-वीर्य-बल-वेग पराक्रम-सम्पन्न थे। उन पर विकराल राक्षस बैठे हुए थे। घटोत्कच ने हाथी से हाथी को नष्ट करने के लिए भगदत्त के हाथी के सामने अपना हाथी बढ़ाया। अन्य तीन हाथी भी उसी के साथ राक्षसों द्वारा सञ्चालित होकर क्रुद्ध भाव से भगदत्त के हाथी को दाँतों से मारने लगे। भगदत्त का हाथी योंही अभिमन्यु आदि के प्रहारों से विकल हो रहा था, उस पर वे मायामय दिग्गज जब प्रहार करने लगे तब वह अत्यन्त पीड़ित होकर बेतरह चिल्लाने लगा। ५० ६१

हे भारत, भीष्म ने भगदत्त के हाथी का आर्तनाद सुनकर द्रोणाचार्य से कहा—हे आचार्य, हे वीरो, देखो महाधनुर्द्धर भगदत्त घटोत्कच से भिड़कर कष्ट पा रहे हैं। उस राक्षस से पार पाना साधारण काम नहीं है। घटोत्कच का शरीर बहुत बड़ा है। राजा भगदत्त भी

क्रोधी और बली हैं। दोनों ही मृत्यु और अन्तक के समान हैं। मुझे जान पड़ता है, घटोत्कच प्रबल पड़कर भगदत्त को सता रहा है। क्योंकि पाण्डवों की आनन्द-ध्वनि और भय-पीड़ित भगदत्त के हाथी का आर्तनाद सुन पड़ता है। चलो, हम लोग राजा भगदत्त की रक्षा करें। यदि इस समय उनकी रक्षा न की जायगी तो वे शीघ्र ही मारे जायँगे। तुम लोग अब तनिक भी विलम्ब मत करो। वे भयङ्कर युद्ध कर रहे हैं। राजा भगदत्त हमारे अनुगत, कुलीन और सेनापति हैं। इसलिए उनकी रक्षा करना हमारा सब तरह कर्तव्य है।

द्रोण आदि वीर और सब राजा लोग भीष्म के ये वचन सुनकर भगदत्त की रक्षा करने
७० के लिए शीघ्र उनके पास पहुँचे। इधर युधिष्ठिर आदि पाण्डव और पाञ्चालगण शत्रुओं को आते देखकर उनके पीछे दौड़े। प्रतापी घटोत्कच ने उन सबको आते देखकर घोर सिंहनाद किया। उस महाशब्द को सुनकर और दिग्गजों को युद्ध करते देखकर भीष्म ने द्रोणाचार्य से कहा—हे आचार्य, दुरात्मा घटोत्कच के साथ युद्ध करने को मेरा जी नहीं चाहता। इस समय यह वीर्यशाली और सहायसम्पन्न हो रहा है। इस समय इन्द्र भी इसे जीत नहीं सकते। ख़ासकर हमारे वाहन बहुत थक गये हैं। पाञ्चालों और पाण्डवों ने हमें घायल भी कर दिया है। आज पाण्डवों की जय हुई है। इस कारण, मेरी समझ में, आज उनसे युद्ध करना ठीक नहीं है। आज का युद्ध समाप्त कर दीजिए, कल शत्रुओं से युद्ध किया जायगा।

घटोत्कच से डरे हुए कौरवों ने भीष्म के ये वचन सुनकर, उनके बताये उपाय के अनुसार, सेना को युद्ध से रोक दिया। कौरवों के युद्ध बन्द करने पर विजयी पाण्डवगण शङ्ख, वेणु आदि बाजे बजाते हुए सिंहनाद करने लगे।

हे भारत, उस दिन कौरवों के साथ घटोत्कच और पाण्डवों का युद्ध इस तरह हुआ।
८१ पाण्डवों से पराजित और लज्जित होकर कौरव अपने-अपने शिविर को गये। घायल पाण्डवगण भी घटोत्कच और भीमसेन की बड़ाई करते हुए प्रसन्न मन से अपने शिविरों को गये। वे आनन्दित होकर दुर्योधन के मर्मस्थल को पीड़ा पहुँचानेवाले बाजे और शङ्ख के शब्द के साथ सिंहनाद करते तथा पृथ्वी को कँपाते हुए रात को अपने शिविरों में पहुँचे। भाइयों के मारे जाने के शोक से राजा दुर्योधन बहुत ही चिन्तित और अधमरे से हो गये। शिविर के यथायोग्य
८७ काम पूरे करके वे फिर अपने भाइयों का शोक मनाने लगे।

पैंसठवाँ अध्याय

विश्व के उपाख्यान का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, पाण्डवों के अद्भुत कर्म सुन-सुनकर मेरे जी में बहुत ही डर और आश्चर्य उत्पन्न हो रहा है। सञ्जय, पुत्रों की हार सुनकर मैं इसी चिन्ता से

व्याकुल हो रहा हूँ कि आगे चलकर और क्या होगा। दैवाधीन घटनाओं को देखकर मुझे जान पड़ता है कि विदुर की बात न मानने के कारण मुझे पीछे पछताना पड़ेगा। उन महात्मा ने जो कहा है वह उसी तरह हो रहा है।

हे वत्स, सब समय वे प्रधान योद्धा लोग महाबली भीष्म के साथ युद्ध करके उन पर प्रहार करते हैं और आकाशमण्डल के तारागण के समान अक्षय बने हुए हैं। जान पड़ता है, उन्हें किसी ने वरदान दे दिया है, अथवा वे कुछ प्रहार-मन्त्र जानते हैं। यह मुझे असह्य हो रहा है कि बारम्बार पाण्डव मेरी सेना और योद्धाओं को नष्ट करते जा रहे हैं। दैवकोप से मुझ पर ही दारुण दण्ड पड़ रहा है! हे सञ्जय! तुम मुझे बताओ, पाण्डव क्यों नहीं मरते और मेरे पुत्र ही क्यों मरते हैं? जैसे मनुष्य बाहुबल से तैरकर समुद्र के पार नहीं जा सकता वैसे ही मैं भी इस दुःखसागर के पार जाने का उपाय नहीं देखता। मेरे पुत्रों के लिए दारुण सङ्कट उपस्थित है। मुझे जान पड़ता है कि अकेला ही भीमसेन मेरे सब पुत्रों को मार डालेगा। युद्ध में मेरे पुत्रों की रक्षा कर सकनेवाला कोई वीर नहीं देख पड़ता। इस कारण मेरे पुत्र अवश्य मारे जायँगे। हे सञ्जय, पाण्डवों की जय और मेरे पुत्रों के नाश का कारण तुम विशेष रूप से मुझसे कहो। अपने पक्ष की सेना जब युद्ध-स्थल से हट गई तब दुर्योधन, भीष्म, द्रोण, शकुनि, जयद्रथ, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और विकर्ण आदि महाबली वीरों ने क्या किया? मेरे पुत्रों को रण से विमुख देखकर उन शूरों के हृदय में क्या भाव उत्पन्न हुआ? १०

सञ्जय ने कहा—राजन्, मेरी बातों को मन लगाकर सुनिए। पाण्डव कुछ मन्त्रप्रयोग, मायाजाल या विभीषिका दिखाकर जय प्राप्त नहीं करते। वे शक्ति और धर्मन्याय के अनुसार ही युद्ध करते हैं। राजन्, पाण्डव लोग यश पाने की इच्छा से धर्मपूर्वक ही जीविका-निर्वाह आदि सब कार्यों का आरम्भ करते हैं। श्रीयुक्त पाण्डव अपने धर्म के अनुवर्ती होकर ही युद्ध कर रहे हैं। जहाँ धर्म है, वहीं जय है। इसी कारण धर्मनिरत पाण्डव समर में अवध्य और विजयी हो रहे हैं। आपके पुत्र दुरात्मा, निष्ठुर, ओछे काम करनेवाले और पापी हैं। इसी से हार रहे हैं। आपके पुत्र अब तक बराबर पाण्डवों के साथ नीचों का सा, नृशंस, निन्दित व्यवहार करते आये हैं; किन्तु पाण्डवों ने आपके पुत्रों के छल और अपराधों की कुछ परवा नहीं की। पाण्डव सदा धर्म के सहारे रहे हैं। आपके पुत्र उन्हें तुच्छ समझकर उनसे बुरा ही व्यवहार करते रहे हैं। उसी पाप का यह घोर फल मिल रहा है। उसे आप अपने सुहृदों और पुत्रों आदि के साथ भोगिए। महात्मा विदुर, भीष्म और द्रोणाचार्य ने आपको लाख बार मना किया परन्तु आपने उधर ध्यान नहीं दिया। मैंने भी बार-बार आपको मना किया, पर आप नहीं समझे। हित और पथ्य के वचन आपको वैसे ही नहीं रुचते जैसे रोगी को पथ्य और ओषधि नहीं अच्छी लगती। पुत्रों के मत को ठीक समझकर आप समझते हैं कि पाण्डव हार जायँगे। २०

हे भारत! पाण्डवों के जयलाभ का कारण जो आप मुझसे पूछते हैं सो मैं, जैसा सुना है वैसा ही, कहता हूँ। यही बात पहले दुर्योधन ने भीष्म पितामह से पूछी थी। उन्होंने इसके उत्तर में जो कहा, सो मैं आपको सुनाता हूँ। हे नराधिप, महाबली भाइयों को पराजित देखकर शोकाकुल दुर्योधन रात को पितामह के पास जाकर बोले—पितामह! आप, महावीर आचार्य द्रोण, शल्य, कृप, अश्वत्थामा, कृतवर्मा हार्दिक्य, काम्बोजाधिप सुदक्षिण, भूरिश्रवा, विकर्ण और भगदत्त ये सभी महारथी, कुलीन और जमकर युद्ध करनेवाले योद्धा हैं। मेरी समझ में आपके समान योद्धा तीनों लोकों में दूसरा नहीं है। पाण्डव पक्ष के सब योद्धा मिलकर भी आपके पराक्रम को नहीं सह सकते। मुझे बड़ा संशय है कि पाण्डव और किसी के आश्रय से क्षण-क्षण हम लोगों को जीत रहे हैं। बताइए, वह कौन महापुरुष हैं?

भीष्म ने कहा—हे दुर्योधन, मैं तुमसे जो कहता हूँ उसे ध्यान देकर सुनो। मैं तुमसे कई बार कह चुका हूँ, पर तुमने उसे माना नहीं। दुर्योधन, मैं तुमसे अब भी कहता हूँ कि पाण्डवों से सन्धि कर लो। सन्धि करने से तुम्हारा और सब पृथ्वी का भला होगा। पाण्डवों से सुलह करके तुम मित्रों और भाई-बन्धुओं को आनन्दित करते हुए भाइयों के साथ बड़े सुख से राज्य करो। हे वत्स, तुमने पहले पाण्डवों का अपमान किया; मैंने मना किया, पर तुमने नहीं सुना। अब उसका फल भोग रहे हो। हे कुरुराज, हर एक काम को सहज ही कर सकनेवाले पाण्डव जिस कारण अवध्य हैं, वह भी सुनो। हे जनाधिप, भगवान् कृष्ण स्वयं जिन पाण्डवों की रक्षा कर रहे हैं उन्हें हरा सकनेवाला या मार सकनेवाला प्राणी त्रिभुवन में नहीं देख पड़ता। ऐसा प्राणी न कभी हुआ है और न होगा। हे वत्स! पूर्व समय में आत्मज्ञानी मुनियों से जो पुराणगाथा मैंने सुन रक्खी है वही मैं कहता हूँ, मन लगाकर सुनो।

पूर्व समय में सब देवता और ऋषि गन्धमादन पहाड़ पर कमलासन ब्रह्माजी के पास गये। उन सबके बीच में स्थित ब्रह्माजी ने अन्तरिक्ष में एक परम प्रकाशमान श्रेष्ठ विमान देखा। इसके बाद ध्यान के द्वारा परमपुरुष परमेश्वर को जानकर, प्रसन्नतापूर्वक उठकर,

शोकाकुल दुर्योधन रात को पितामह के पास जाकर बोले। पृ० २०२६

पवित्र हृदय से हाथ जोड़कर ब्रह्माजी ने उनको प्रणाम किया। ऋषि और देवता भी यह अद्भुत घटना देखकर और ब्रह्माजी को उस तरह अभ्यर्थना करते देख हाथ जोड़कर खड़े हो गये। जगत् के रक्षक ब्रह्माजी उन परमदेव विष्णु नारायण को देखकर उनकी पूजा करके इस प्रकार स्तुति करने लगे—हे देव ! तुम विश्वावसु, विश्वमूर्ति, विश्वेश, विष्वक्सेन, विश्वकर्मा, नियामक, वासुदेव और योगी हो। प्रभो, मैं तुम्हारी शरण में हूँ। हे महादेव, तुम्हारी जय हो। हे लोक-हितैषी ! तुम योगीश्वर, योगपारावार, पद्मनाभ और विशालाक्ष हो। तुम लोकेश्वरों के ईश्वर, त्रिलोकनाथ, सौम्य, आत्मजात्मज, सब गुणों के आधार, नारायण, अनन्त और अनन्त महिमा-वाले हो। हे शार्ङ्ग धनुष धारण करनेवाले, हे सर्व-गुण-सम्पन्न ! तुम विश्वमूर्ति, निरामय, ५० महाबाहु, वराहमूर्ति, आदिकारण, पिङ्गलकेश, व्यापक, पीताम्बरधारी, दिक्पाल और विश्व के आधार हो। तुम अमित हो, अव्यय हो, तुम व्यक्त और अव्यक्त हो। तुम अमिताधार हो, तुम जितेन्द्रिय हो, तुम सत्कर्म करनेवाले हो, तुम असंख्य हो, तुम आत्मरूप के ज्ञाता हो। तुम गम्भीर हो, तुम सब कामनाओं का फल देनेवाले हो। हे अविदित ! तुम ब्रह्म हो, तुम नित्य हो, तुम भूतभावन हो। तुम कृतकार्य और कृतज्ञ हो। तुम धर्मज्ञ और जय-पराजय से अतीत हो। तुम गुह्यरूप, सर्व-योगस्वरूप, लोकेश, भूतभावन, आत्मयोनि, महा-भाग, कल्पान्त में संहार-निरत, ब्रह्म और जनप्रिय हो। तुम नैसर्गिक-सृष्टि-निरत, कामेश, परमेश्वर, अमृतसम्भूत, सत्त्वभावसम्पन्न, मुक्तात्मा, विजयप्रद, प्रजापति-पति, देव, पद्मनाभ, महाबली, आत्मभूत, महाभूत, कर्मरूप और सर्वप्रद हो। तुम्हारी जय हो। पृथ्वी तुम्हारे दोनों चरण हैं। दिशाएँ तुम्हारे हाथ हैं। अन्तरिक्ष तुम्हारा मस्तक है। मैं तुम्हारी मूर्ति हूँ। देवगण तुम्हारा शरीर हैं। चन्द्र-सूर्य तुम्हारे नेत्र हैं। सङ्कल्प, तप और सत्य तुम्हारा बल हैं। धर्म-कर्म तुम्हारी आत्मा हैं। अग्नि तुम्हारा तेज है। वायु तुम्हारी साँस है। जल तुम्हारा पसीना है। अश्विनीकुमार तुम्हारे कान हैं। सरस्वती देवी तुम्हारी जिह्वा हैं। ६० वेद तुम्हारी संस्कारनिष्ठा हैं। यह सब जगत् तुम्हारे ही आश्रित है। हे योगीश ! हम तुम्हारी संख्या, परिमाण, तेज, बल और जन्म कुछ नहीं जानते। हे देव ! तुम महेश्वर और परमेश्वर हो। हम तुम्हारे आश्रित होकर भक्ति के साथ नियमपूर्वक तुम्हारी पूजा करते हैं। हे विशाललोचन, हे कृष्ण, हे दुःखनाशन ! मैंने ऋषि, देवता, गन्धर्व, राक्षस, नाग, पिशाच, मनुष्य, मृग, पक्षी और कीट-सरीसृप आदि को तुम्हारे प्रसाद से उत्पन्न किया है। हे देवेश ! तुम सब प्राणियों की गति हो। तुम्हीं सबका आदि हो। देवगण तुम्हारे ही प्रसाद से सब सुख भोगते हैं। तुम्हारे ही प्रसाद से यह पृथ्वी निर्भय भाव से स्थित है। इस समय तुम धर्म की स्थापना, दैत्यों के विनाश और पृथ्वी का भार उतारने के लिए पृथ्वी पर यदुवंश में अव-तार लो। हे प्रभो, इस मेरी प्रार्थना के अनुसार कार्य करो। मैंने तुम्हारी ही कृपा से वेद

में सब गुह्य विषयों का कीर्तन किया है। तुम्हीं ने आत्मा के द्वारा आत्मस्वरूप सङ्कर्षण की
७० सृष्टि की है। तुमने आत्मा से आत्मज-स्वरूप प्रद्युम्न की सृष्टि की है। प्रद्युम्न से अव्यय अनि-
रुद्ध की सृष्टि की है और अनिरुद्ध ने ही सृष्टिकर्ता-रूप से मुझे उत्पन्न किया है। अतएव मैं
तुम्हारी आत्मा से ही उत्पन्न हुआ हूँ। अब तुम अपने अंश से मनुष्यशरीर ग्रहण करो।
मनुष्यों को सुखी बनाने के लिए तुम असुरों को मारकर धर्म की स्थापना करो। फिर
यश प्राप्त करके अपने लोक को चले आओ। हे विष्णु! देवर्षिगण और ब्रह्मर्षिगण अलग-
अलग तुम्हारे उन नामों को गाकर, तुम्हें परम अद्भुत कहकर, तुम्हारी स्तुति करते हैं। सब
प्राणी तुम्हीं में स्थित हैं। ब्राह्मण लोग तुम्हारा आश्रय पाकर तुम्हीं को अनादि, मध्यहीन,
७५ अनन्त, असीम और संसार का कारण कहते हैं।

छाछठवाँ अध्याय

विश्वोपाख्यान का वर्णन

भीष्म कहते हैं कि हे दुर्योधन, तब देवाधिदेव भगवान् विष्णु ने स्निग्ध गम्भीर स्वर से
ब्रह्मा से कहा—"वत्स, मैंने योगबल से तुम्हारे मन की बात जान ली है। ब्रह्मा, मैं तुम्हारी
प्रार्थना पूरी करूँगा।" यह कहकर नारायण वहाँ से अन्तर्द्धान हो गये। तब देवता, ऋषि, गन्धर्व
आदि सब अत्यन्त आश्चर्य के साथ ब्रह्माजी से बोले—हे विभु, आपने जिनको प्रणाम किया और
जिनकी नम्रभाव से स्तुति की, वे कौन हैं? हम जानने के लिए उत्सुक हैं। देवताओं, गन्धर्वों और
ऋषियों के यों पूछने पर ब्रह्माजी ने मधुर स्वर में कहा—हे महात्मा पुरुषो! तत्-पद-वाच्य, सबसे
श्रेष्ठ, भूत-भविष्य-वर्तमान तीनों कालों में नित्य, सब प्राणियों के आत्मा और प्रभु, परब्रह्म यह
हैं। उन्होंने प्रसन्न होकर मुझसे वार्तालाप किया है। मैंने जगत् के हित के लिए उनसे प्रार्थना
की है। मैंने उनसे प्रार्थना की है कि हे प्रभो, तुम वसुदेव के पुत्र-रूप से मनुष्य-लोक में अव-
तार लो। संग्राम में मारे गये सब महाबली दैत्य, दानव और राक्षस पृथ्वी पर उत्पन्न हुए हैं।
१० उनके वध के लिए तुम नर के साथ पृथ्वी पर जन्म लो। सब देवता भी मिलकर उन्हें जीत
नहीं सकते। वे महातेजस्वी प्राचीन ऋषि नर-नारायण पृथ्वी पर अवतार लेंगे। मूढ़ लोग उन्हें
नहीं जानते। मैं उनका बड़ा आत्मज होकर सब जगत् का स्वामी हुआ हूँ। सब लोकों के
महेश्वर वासुदेव तुम सबके पूजनीय हैं। उन महाबली वीर्यशाली शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी वासु-
देव को मनुष्य समझकर कभी उनकी अवज्ञा न करना। वे परमगुह्य, परमपद, परब्रह्म,
परमयश, अव्यक्त और शाश्वत हैं। उन तेजस्वी को सब लोग पुरुष कहते और जानते हैं।
विश्वकर्मा ने उन्हीं को परमतेज, परमसुख और परमसत्य कहा है। देवता, इन्द्र, असुर या

भगवान् विष्णु ने स्निग्ध गम्भीर स्वर में ब्रह्मा से कहा। पृ० २०२८

मनुष्य, किसी को उन पराक्रमी वासुदेव का अनादर न करना चाहिए। जो मूढ़मति मनुष्य उनको मनुष्य समझते हैं, उन्हें पण्डितजन पुरुषाधम कहते हैं। जो व्यक्ति उन महायोगी महात्मा को मनुष्यदेहधारी समझकर उनका अनादर करता है, अथवा जो व्यक्ति उन चराचरात्मा पद्मनाभ को जान नहीं सकता, उसे श्रेष्ठ लोग पापी कहते हैं। जो व्यक्ति उन कौस्तुभ-किरीटधारी और मित्रों को अभय देनेवाले योगी ईश्वर का अपमान करता है वह घोर पाप का भागी होता है। हे देवताओ, उन लोकमहेश्वर भगवान् वासुदेव को इस तरह जानकर सब लोगों को प्रणाम करना चाहिए। २१

भीष्म कहते हैं—देवताओं और ऋषियों से इस तरह नारायण की महिमा कहकर ब्रह्माजी अपने लोक को चले गये। हे दुर्योधन, उन ऋषियों से ही मैंने वासुदेव की यह पुरानी कथा सुनी है। परशुराम, मार्कण्डेय, व्यास और नारद ने भी मुझसे यही बात कही है। हे वत्स, जगत्पिता ब्रह्मा जिनसे उत्पन्न हैं, उन सब लोकों के ईश्वर महात्मा वासुदेव की यह महिमा जानकर कौन आदमी उनकी पूजा और सत्कार नहीं करेगा? हे दुर्योधन, पूर्व समय में मैंने और शुद्धहृदय योगी मुनियों ने आकर तुम्हें रोका था और कहा था कि वासुदेव और पाण्डवों से युद्ध मत करो। ३० तुमने मोहवश होकर किसी का कहना नहीं माना और अब तक नहीं समझते हो। तुम ऐसे तमोगुणी हो रहे हो कि मैं तुमको क्रूर राक्षस समझता हूँ। तुम उन्हीं वासुदेव और पाण्डवों-सहित अर्जुन से द्वेषभाव रखते हो। तुम्हारे सिवा और कौन मनुष्य नर-नारायण के अवतार अर्जुन और श्रीकृष्ण से द्रोह करेगा? हे दुर्योधन! तुमसे मैं फिर कहता हूँ, ये श्रीकृष्ण शाश्वत, अव्यय, सर्वलोकमय, नित्य, शासक, विधाता, विश्वाधार और ध्रुव हैं। यही त्रिलोक को धारण करनेवाले धर्म, चराचर के गुरु, प्रभु, योद्धा, विजेता, सबकी प्रकृति और ईश्वर हैं। ये सत्त्वगुणमय हैं; तमोगुण और रजोगुण से इनका कुछ सम्बन्ध नहीं। ये परम से परम भगवान् वासुदेव जिस पक्ष में हैं उसी पक्ष में धर्म है, और उसी पक्ष को जय प्राप्त होगी। इन्हीं के आत्मयोगबल से पाण्डव सुरक्षित हैं। इसलिए वही विजयी होंगे। जो पाण्डवों को सदा उत्तम सलाह देते और सहायता करते हैं, वे श्रीकृष्ण ही सदा सब प्रकार के भय से उनकी रक्षा करते हैं। हे भारत! तुमने जो मुझसे पूछा था, वह सब मैंने तुम्हारे आगे वर्णन कर दिया। वे सर्वमय, पाण्डवों के सहायक, महात्मा वासुदेव कहलाते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नित्य एकाग्र होकर उनकी सेवा और पूजा करते हैं। सङ्कर्षण बलदेव द्वापर युग के अन्त में, कलियुग के आरम्भ में, सात्वत विधि से, जिनकी उपासना और गुणगान करते हैं, वही विश्वकर्मा वासुदेव हर एक युग में देवलोक, सत्यलोक, समुद्र के भीतर की पुरी और मनुष्यों के निवासस्थान आदि की सृष्टि करते हैं। ४१

सड़सठवाँ अध्याय

वासुदेव के आविर्भाव और अवस्थिति का वर्णन

दुर्योधन ने कहा—पितामह, जो वासुदेव सब लोकों में महान् प्राणी या परम पुरुष माने जाते हैं उनका आविर्भाव और स्थिति जानने की मेरी बड़ी इच्छा है। कृपा करके कहिए।

भीष्म ने कहा—हे कुरुकुलश्रेष्ठ, वासुदेव महासत्त्वसम्पन्न और देवताओं के भी देवता हैं। उनसे श्रेष्ठ और कोई नहीं है। चिरजीवी महर्षि मार्कण्डेय उनको महत् और अद्भुत कहते हैं। वे सब प्राणियों के आत्मा अव्यय पुरुष ही जल, वायु, तेज आदि तत्त्वों को और चराचर जगत् को उत्पन्न करते हैं। उन सर्वदेवमय देव पुरुषोत्तम ने योगबल से पृथ्वी को प्रकट कर सागर-जल की शय्या पर शयन करके मुख से अग्नि को, प्राण से वायु को और मन से सरस्वती तथा वेद को प्रकट किया। इस प्रकार पहले उन्होंने देवता, ऋषि और उनके सब लोक उत्पन्न करके फिर अमृत, मृत्यु, प्रजा की उत्पत्ति और प्रलय के कारण आदि की सृष्टि की। वे धर्मज्ञ, धर्म, वरद, सब कामना देनेवाले, कर्ता, कार्य, आदि के आदि और स्वयंप्रभु हैं। पहले उन्हीं ने भूत, भविष्य, वर्तमान, दोनों सन्ध्याकाल, दिशाएँ, आकाश और सब नियम रचे हैं। महात्मा प्रभु अव्यय ने फिर ऋषिगण, तप और जगत् की सृष्टि करनेवाले प्रजापति को उत्पन्न १० किया। फिर सब प्राणियों के अग्रज सङ्कर्षण को उत्पन्न किया। सङ्कर्षण से देवदेव सनातन नारायण उत्पन्न हुए। इनकी नाभि से कमल निकला, कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए और ब्रह्मा से सारी प्रजा की उत्पत्ति हुई है। लोग जिन्हें अनन्त कहते हैं, जिन्होंने पर्वतों सहित इस पृथ्वी को धारण कर रक्खा है, उन शेषनाग को भी उन्हीं प्रभु ने उत्पन्न किया है। ब्राह्मण लोग ध्यानयोग के द्वारा उन वासुदेव को जान सकते हैं। उग्रकर्मा मधु नाम के असुर ने प्रजापति के कान से पैदा होकर उन्हें मारना चाहा था। उस उग्रमति असुर को मारने के कारण देवता, दानव और मानव उन्हें मधुसूदन कहते हैं। ऋषिगण उन्हीं को जनार्दन कहते हैं। वही वाराह, नृसिंह, और वामन का रूप रखकर समय-समय पर प्रकट हुए हैं। वे पुण्डरीकाक्ष हरि सबके माता और पिता हैं। उनसे श्रेष्ठ कोई भी नहीं हो सकता। उनके मुख से ब्राह्मण, हाथों से क्षत्रिय, ऊरुओं से वैश्य और पैरों से शूद्र पैदा हुए हैं। अमावस और पूर्णिमा को तप में तत्पर होकर उनकी आराधना करने से मनुष्य उन सर्वयोगात्मा परमात्मा वासुदेव को प्राप्त कर सकता २० है। वही तेज और चराचर जगत् के स्वामी हैं। मुनिगण उन्हें हृषीकेश कहते हैं। वही आचार्य, पिता और गुरु हैं। वे जिस पर प्रसन्न होते हैं उसको अक्षयलोक प्राप्त होते हैं। जो भयपीड़ित होकर उन वासुदेव के शरणागत होता है और सदा इस उपाख्यान को पढ़ता है, वह परममङ्गल और परमसुख प्राप्त करता है। उसे किसी प्रकार का मोह नहीं होता। वह

महाभय में मग्न मनुष्यों की रक्षा करता है। राजन्, धर्मराज युधिष्ठिर उन महाभाग भगवान् योगेश्वर कृष्ण को ऐसा जानकर सब प्रकार से उनके शरणागत हो चुके हैं। २५

अड़सठवाँ अध्याय

श्रीकृष्ण की स्तुति का वर्णन

भीष्म कहते हैं—राजन्, पूर्व समय में भगवान् प्रजापति ने जैसे वासुदेव की स्तुति की थी वह मैं कह चुका; अब महर्षियों और देवताओं ने जैसे उनकी महिमा का वर्णन किया था, वह वेदमय स्तव मैं तुम्हारे आगे कहता हूँ, सुनो। महर्षि नारद ने उनको लोकभावन, भावज्ञ, साध्यगण और देवगण के प्रभु और देवेश्वर कहा है। महर्षि मार्कण्डेय ने यज्ञों का यज्ञ, तप का तप और भूत-भविष्य-वर्तमान-रूप कहा है। महर्षि भृगु ने उनको देवदेव और उनके रूप को विष्णु का पुरातन परमरूप कहा है। महर्षि द्वैपायन व्यास ने उन्हें इन्द्र को स्थापित करने-वाला, वसुओं में वासुदेव और देवताओं में देवदेव कहा है। कुछ श्रेष्ठ ऋषियों ने कहा है कि वे वासुदेव पूर्वकालीन सृष्टि के कल्प में प्रजापति दक्ष थे। अङ्गिरा ऋषि ने उनको सब प्राणियों की सृष्टि करनेवाला कहा है। महर्षि असित देवल का कथन है कि 'अव्यक्त' वासुदेव के शरीर से और 'व्यक्त' वासुदेव के मन से उत्पन्न हुआ है। उन्हीं से सब देवता प्रकट हुए हैं। सनत्कुमार आदि ऋषियों का कहना है कि वासुदेव के सिर से आकाश और बाहुओं से पृथ्वी व्याप्त है। उनके उदर में तीनों लोक हैं। वही सनातन पुरुष हैं। तप से अन्तःकरण विशुद्ध होने पर मनुष्यगण उनको जानते हैं। आत्मदर्शन से तृप्त ऋषियों में वासुदेव ही श्रेष्ठ हैं। वही युद्ध से न लौटनेवाले उदार राजर्षियों की और सब प्रधान धर्मों की गति हैं। इस प्रकार १० योग के जानकार सनत्कुमार प्रभृति मुनि नित्य भगवान् पुरुषोत्तम हरि की पूजा, आराधना और स्तुति करते हैं। पुत्र, मैंने यह भगवान् वासुदेव का माहात्म्य तुम्हारे आगे विस्तार से और संक्षेप में भी कह दिया। इस तत्त्वोपदेश से प्रसन्न होकर तुम वासुदेव को भजो।

महाराज, भीष्म के मुँह से यह पवित्र उपाख्यान सुनकर राजा दुर्योधन ने मन ही मन महारथी पाण्डवों को और श्रीकृष्ण को अपने से श्रेष्ठ और बहुत समझा। इसके बाद भीष्म ने फिर दुर्योधन से कहा—वत्स, तुम्हारे प्रश्न के अनुसार मैंने वासुदेव और अर्जुन का माहात्म्य और उनके मनुष्यलोक में जन्म लेने का कारण कह सुनाया। जिस कारण वे अवध्य हैं और उन्हें कोई जीत नहीं सकता, वह भी तुम सुन चुके। राजन्, भगवान् केशव पाण्डवों पर अत्यन्त प्रसन्न और अनुरक्त हैं। इसी लिए मैं तुमसे वारम्वार कहता हूँ कि अब तुम पाण्डवों से सन्धि कर लो और भाइयों के साथ सुख से राज्य करो। नर और नारायण से द्रोह रख-कर उनका अनादर करने से अवश्य ही तुम्हारा विनाश होगा।

पितामह भीष्म इतना कहकर चुप हो रहे। दुर्योधन उनके पास से उठकर, उनको
२० प्रणाम करके, अपने शिविर में गये और पलँग पर लेट रहे।

उनहत्तरवाँ अध्याय

पाण्डवों का श्येनव्यूह और कौरवों का मकरव्यूह बनाकर लड़ना

सञ्जय कहते हैं—महाराज! रात बीतने पर दोनों ओर की सेनाएँ युद्ध के लिए लड़ाई के मैदान को चलीं। पाण्डव और कौरव जयप्राप्ति के लिए उत्सुक और क्रोध से अधीर होकर परस्पर युद्ध करने को सामने आये। राजन्, यह सब आपकी ही बुरी सलाह का फल है। कौरवपक्ष के प्रसन्नहृदय योद्धा कवच और शस्त्र धारणकर मकरव्यूह की रचना करके भीष्म के चारों ओर स्थित हुए। महाबाहु भीष्म चारों ओर से मकरव्यूह की रक्षा करने लगे। पितामह जब ध्वजाओं से शोभित असंख्य रथों के साथ निकले तब असंख्य रथी, पैदल, हाथियों और घोड़ों के सवार यथास्थान स्थित होकर उनके पीछे-पीछे चले। उधर पाण्डवों ने कौरवों को युद्ध के लिए तैयार देखकर श्येनव्यूह की रचना की। महाबली भीमसेन उस व्यूह के मुखभाग में, शिखण्डी और धृष्टद्युम्न नेत्रों के स्थान पर, सत्यपराक्रमी सात्यकि सिर की जगह पर और गम्भीर गाण्डीव धनुष का शब्द करते हुए अर्जुन गर्दन की जगह पर स्थित हुए। महात्मा द्रुपद अपने पुत्रों के साथ एक अक्षौहिणी सेना लेकर व्यूह के वामभाग की रक्षा करने लगे। अक्षौहिणीपति कैकेय-राजकुमार [पाँचों भाई] दक्षिण भाग की रक्षा

१० करने लगे। द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, धर्मराज युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव उस व्यूह के पृष्ठभाग की रक्षा करने लगे। इसके बाद भीमसेन शत्रुओं के मकरव्यूह में घुस गये। उन्होंने भीष्म के पास पहुँचकर उन्हें बाणों की वर्षा से ढक दिया। महाबली भीष्म भी पाण्डवों की, व्यूह के बीच खड़ी हुई, सेना को मोहित करते हुए अस्त्रों का प्रयोग करके असंख्य तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। अपनी सेना को भीष्म के बाणों से

मोहित और उत्साहहीन देखकर वीर अर्जुन शीघ्र वहाँ पहुँच गये। उन्होंने दृढ़ और तीक्ष्ण हज़ार बाण भीष्म के ऊपर छोड़े। भीष्म ने भी अपने बाणों से फुर्ती के साथ उन बाणों को व्यर्थ कर दिया। अपने पक्ष की सेना को प्रसन्न तथा उत्साहित करते हुए वे घोर युद्ध करने लगे।

पहले दिन बहुत सी सेना और कई भाइयों के मारे जाने से राजा दुर्योधन योंही अत्यन्त क्रुद्ध थे। इस समय युद्ध की हालत देखकर उन्होंने द्रोणाचार्य से कहा—हे आचार्य, आप लगातार नित्य मेरी भलाई सोचा करते हैं। हम आपके और पितामह के आश्रय से देवताओं को भी परास्त कर सकते हैं। पराक्रम और वीर्य से हीन पाण्डवों को आप लोगों की सहायता से जीत लेना तो कोई आश्चर्य की बात ही नहीं है। इसलिए वह उपाय शीघ्र कीजिए जिससे पाण्डव मारे जा सकें। सञ्जय कहते हैं—महाराज, युद्धभूमि में दुर्योधन ने आचार्य से २० जब यह प्रार्थना की तब द्रोणाचार्य सात्यकि के सामने ही पाण्डव-सेना का संहार करने लगे। उधर सात्यकि भी द्रोणाचार्य को रोकने की चेष्टा करने लगे। द्रोणाचार्य और सात्यकि से दारुण युद्ध होने लगा। प्रतापशाली आचार्य ने क्रोध से कुछ मुसकाकर सात्यकि के जत्रुस्थान पर दस बाण मारे। उधर महाबली भीमसेन कुपित होकर प्रधान अस्त्रविद्याविशारद द्रोणाचार्य के हाथ से सात्यकि की रक्षा करने के लिए उन पर लगातार असह्य बाण बरसाने लगे। तब द्रोण, भीष्म और शल्य कुपित होकर भीमसेन को बाण मारने लगे। द्रोण और भीष्म को मिलकर युद्ध करते देख अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र शस्त्रधारी द्रोण के मर्मस्थलों में तीक्ष्ण बाण मारने लगे। इसी बीच शिखण्डी भी वहाँ आ गये। मेघ के समान गरजनेवाले धनुष को चढ़ाकर फुर्ती के साथ उन्होंने इतने बाण बरसाये कि सूर्य-नारायण उनसे छिप गये। पितामह भीष्म ने शिखण्डी को युद्ध के लिए सामने देखकर भी, उनके पहले के स्त्रीभाव का ख़याल करके, उन पर बाण नहीं चलाया। उधर दुर्योधन की आज्ञा

से आचार्य द्रोण, भीष्म की रक्षा के लिए, शिखण्डी के सामने आये। प्रलयकाल के प्रचण्ड ३० अग्नि की तरह प्रज्वलित प्रधान योद्धा आचार्य को सामने देखकर शिखण्डी डर के मारे उन्हें

बराकर अन्यत्र चले गये। इसी बीच में बहुत सी सेना साथ लिये दुर्योधन वहाँ आकर भीष्म की रक्षा करने लगे। पाण्डवगण भी अर्जुन को आगे करके, जयलाभ के लिए, भीष्म के समीप पहुँचने की चेष्टा करने लगे। तब परस्पर यश और विजय की कामना से दोनों पक्ष के वीर
३४ योद्धा भिड़कर देवताओं और दानवों का सा घोर संग्राम करने लगे।

सत्तरवाँ अध्याय

युद्ध-वर्णन

सञ्जय ने कहा—महाराज, भीमसेन से आपके पुत्रों की रक्षा करने के लिए भीष्म घोरतर संग्राम करने लगे। दिन के पूर्वभाग में कौरवों, पाण्डवों और दोनों पक्षों के राजाओं का भयङ्कर युद्ध हुआ। उस युद्ध में अनेक प्रधान वीर मृत्यु के मुँह का कौर बनने लगे। युद्धभूमि में ऐसा कोलाहल उठा कि आकाशमण्डल तक छा गया। हाथियों की चिंघार, घोड़ों की हिनहिनाहट, भेरी और शङ्ख आदि का शब्द चारों ओर गूँज उठा। युद्धार्थी वीरगण परस्पर विजय की इच्छा से गोशाला में स्थित साँड़ों की तरह तर्जन-गर्जन करने लगे। तीक्ष्ण बाणों से कट-कटकर योद्धाओं के सिर पृथ्वी पर गिर रहे थे; जान पड़ता था मानों आकाश से शिलाओं की वर्षा हो रही है। कुण्डल और पगड़ी आदि से शोभित, सुवर्ण के आभूषणों से चमकते हुए, मनुष्यों के सिर ढेर के ढेर पड़े देख पड़ते थे। कुण्डल-भूषित मस्तकों, आभूषणयुक्त हाथों और आभूषण-भूषित शरीरों से पृथ्वी पट गई। कवचयुक्त देहों, अलङ्कारयुक्त हाथों, लाल आँखों से विकट रक्तरञ्जित मुण्डों, हाथियों घोड़ों और मनुष्यों के छिन्न-भिन्न अङ्ग-प्रत्यङ्गों का दम
१० भर में युद्धभूमि में ढेर लग गया। उस समय उड़ी हुई धूल घनघटा के समान, शस्त्र-अस्त्र बिजली के समान, अस्त्र-शस्त्रों का शब्द मेघगर्जन के समान और रक्त का प्रवाह वर्षा की जलधारा के समान जान पड़ता था। राजन्, युद्धनिपुण क्षत्रियगण उस भयङ्कर सङ्ग्राम में लगातार बाण-वर्षा करने लगे। दोनों सेनाओं के हाथी बाणप्रहार से पीड़ित होकर चिल्लाने लगे। उनके चिल्लाने और वीरों के सिंहनाद तथा ताल ठोकने के शब्द में और कुछ नहीं सुन पड़ता था। सर्वत्र रक्त-प्रवाह के बीच से वीरों के कबन्ध उठ-उठकर घोर युद्ध करने लगे। राजा लोग और सैनिक क्षत्रियगण शत्रुओं को मारने के लिए चारों ओर दौड़ रहे थे। मोटी-मोटी भुजाओं-वाले महाबली क्षत्रियगण बाण, शक्ति, गदा और खड्ग आदि शस्त्रों से एक दूसरे को मारने लगे। बाणों की चोट से विह्वल होकर हाथी और घोड़े अपने सवारों को गिराकर युद्धभूमि से दूर भागने लगे। बहुत लोग बाणों के प्रहार से पीड़ित होकर उछल-उछलकर पृथ्वी पर गिर पड़ते थे। इस युद्ध में सब जगह भुजा, सिर, धनुष, गदा, बेलन और हाथों के केयूर आदि
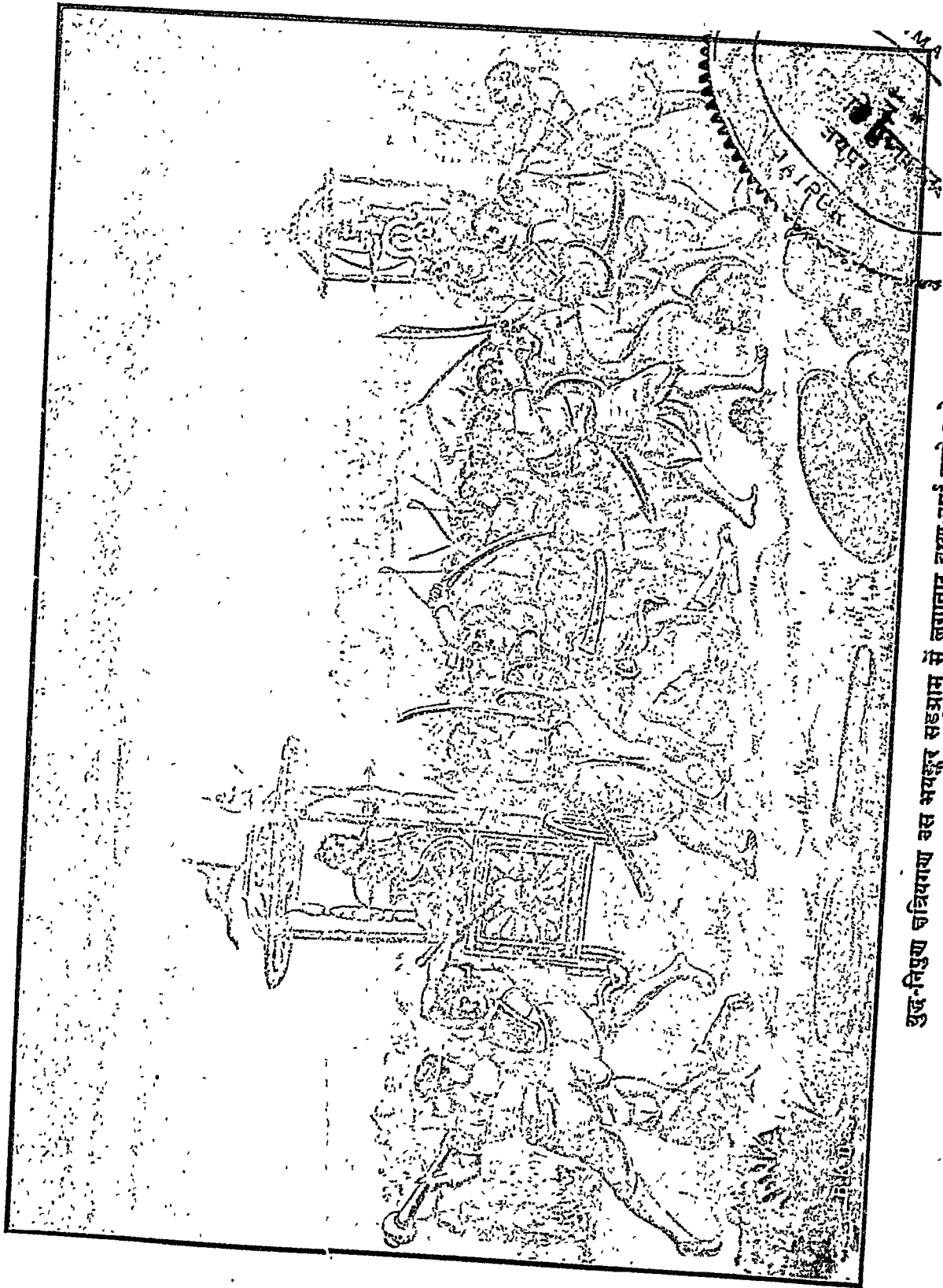
युद्ध-निपुण क्षत्रियगण उस भयङ्कर सङ्ग्राम में लगातार बाण-वर्षा करने लगे। २०३४
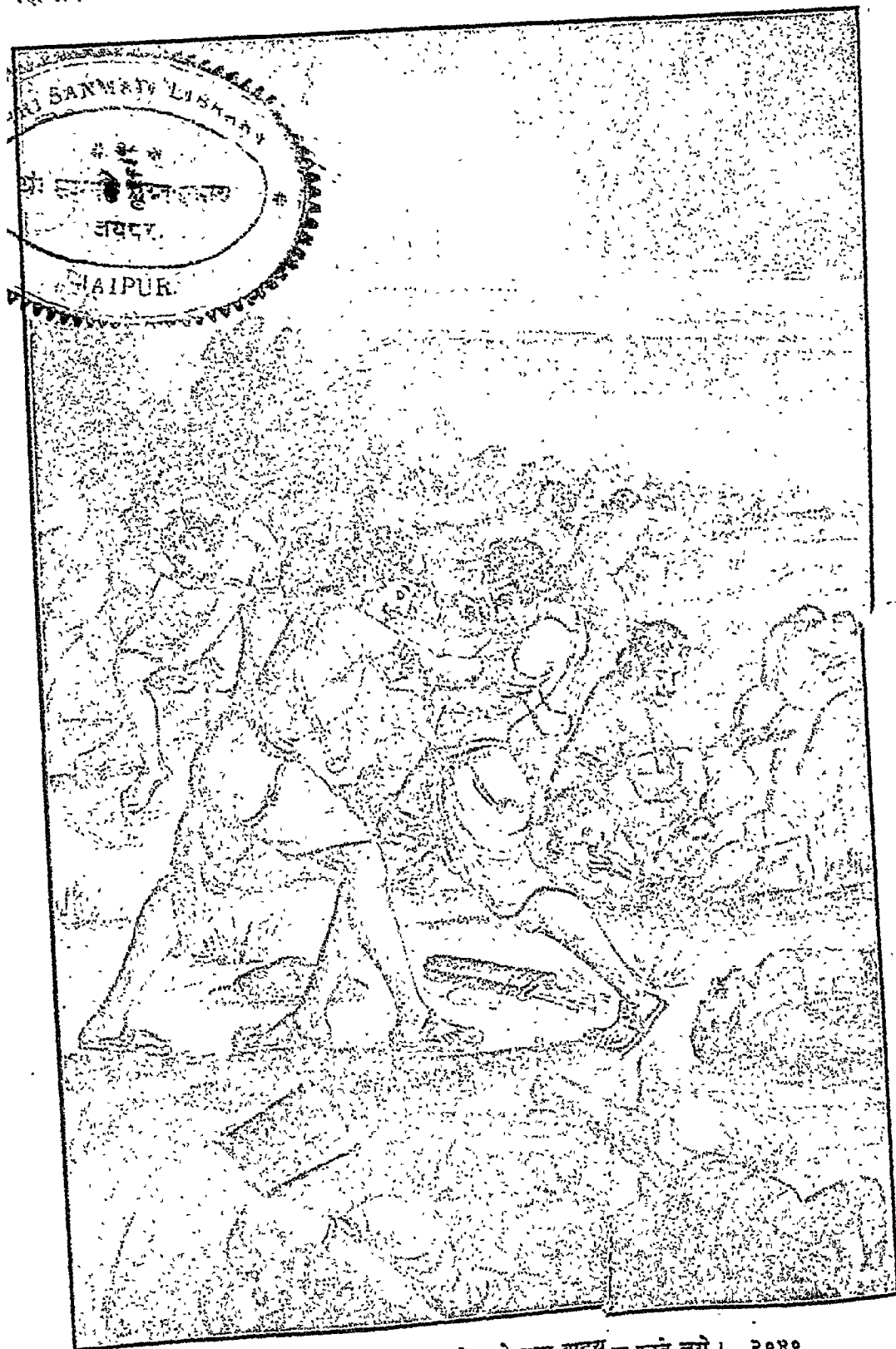
शस्त्र और धनुष न रहने पर वे कौरव-सेना के साथ बाहुयुद्ध करने लगे। २०४०

आभूषण बिखरे हुए देख पड़ते थे। जगह-जगह पर हाथियों, घोड़ों और रथों के झुण्ड भिड़े हुए नज़र आते थे। क्षत्रियगण मानों कालप्रेरित होकर परस्पर गदा, खड्ग, प्रास, बाण आदि के प्रहार कर रहे थे। बाहु-युद्धनिपुण बली वीरगण लोहे के बेलन ऐसे हाथों से भिड़कर कुश्ती के दाँव-पेच दिखा रहे थे। अनेक वीर शस्त्र न रहने के कारण शत्रुओं को घूँसे, घुटने, थप्पड़ आदि से मारने लगे। बहुत से वीर पृथ्वी पर गिरकर तड़पते रहने पर भी घोर युद्ध कर रहे थे। रथ टूट जाने पर अनेक रथी एक दूसरे को मारने के लिए दौड़ रहे थे। इतने में राजा दुर्योधन बहुत सी कलिङ्गदेश की सेना साथ लेकर, भीष्म को आगे करके, पाण्डवों पर आक्रमण करते चले। तब पाण्डव लोग भी भीमसेन को आगे करके पितामह भीष्म के सामने आये। २०, २९

इकहत्तरवाँ अध्याय

घोर युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज, भाइयों और अन्य राजाओं को भीष्म से युद्ध करते देखकर अर्जुन भी शस्त्र लेकर उधर ही दौड़े। पाञ्चजन्य शङ्ख का शब्द और गाण्डीव धनुष का गर्जन सुनकर तथा अर्जुन के रथ की ध्वजा देखकर कौरव पक्ष के वीर बहुत ही डर गये। हम लोगों ने अर्जुन की सिंहपुच्छशोभित, चित्र विचित्र, वानरचिह्नयुक्त, उठे हुए धूमकेतु के समान, आकाश को छूती हुई दिव्य ध्वजा देखी। उस तुमुल संग्राम में योद्धाओं ने अर्जुन के सुवर्णमण्डित पीठवाले गाण्डीव धनुष को घनघटा के बीच बिजली के समान देखा। राजन्, आपकी सेना का संहार करते समय अर्जुन इन्द्र के समान गम्भीर शब्द से गरजने लगे। उनके ताल ठोकने का कठोर शब्द लगातार सुन पड़ने लगा। जैसे प्रचण्ड हवा और बिजली के साथ गरजता हुआ बादल सब जगह पानी बरसाता है, वैसे ही अर्जुन भी सर्वत्र बाण बरसा रहे थे। वे भयङ्कर अस्त्र-शस्त्र बरसाते हुए भीष्म की ओर दौड़े। उनके अस्त्र-प्रहार से हमारी ओर के लोग अत्यन्त मोहित होकर यह निश्चय नहीं कर सकते थे कि कौन दिशा पूर्व है और कौन दिशा पश्चिम है। कौरव पक्ष के योद्धाओं में से किसी के वाहन थक गये थे, किसी के वाहन मर गये थे और कोई अचेत हो गया था। वे भागकर, हताहत होकर, दिशा-विदिशा का ज्ञान खोकर आपके पुत्रों के साथ भीष्म के शरणागत हुए। तब पितामह उनकी रक्षा करने लगे। १० भयविह्वल रथी रथों पर से, घुड़सवार घोड़ों पर से और हाथियों के सवार हाथियों पर से पृथ्वी पर गिरने लगे। बिजली की कड़क जैसा गाण्डीव धनुष का शब्द सुनकर सैनिकगण डर के मारे प्राण लेकर भागने लगे। राजन्! उस समय कलिङ्गराज ने मद्र, सौवीर, गान्धार, त्रिगर्त आदि देशों की सेना, प्रधान-प्रधान कलिङ्ग देश के वीर, काम्बोज देश के शीघ्रगामी घोड़े और

असंख्य गोपसेना साथ लेकर युद्ध के लिए प्रस्थान किया। असंख्य सेना और राजाओं के साथ राजा जयद्रथ, दुःशासन के अनुगामी होकर, युद्ध के लिए बढ़े। आपके पुत्र दुर्योधन की आज्ञा से चौदह हज़ार घुड़सवार शकुनि के साथ चले।

महाराज, कुरुपक्ष के योद्धा एकत्र होकर अलग-अलग रथों और वाहनों पर चढ़कर अर्जुन से भिड़ गये। उस युद्धभूमि में रथों, हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों के चलने से इतनी धूल उड़ी कि आकाशमण्डल महामेघ से घिरा हुआ सा जान पड़ने लगा। महारथी भीष्म के साथ बहुत सी चतुरङ्गिणी सेना थी। वे सैनिक तोमर, प्रास, नाराच आदि शस्त्रों के द्वारा अर्जुन से युद्ध करने लगे। अवन्तिराज काशिराज के साथ, जयद्रथ भीमसेन के साथ, पुत्र और मन्त्री आदि सहित २० अजातशत्रु राजा युधिष्ठिर शल्य के साथ, विकर्ण सहदेव के साथ और चित्रसेन शिखण्डी के साथ युद्ध करने लगे। हे कुरुश्रेष्ठ, दुर्योधन और शकुनि के साथ मत्स्य देश के वीरगण लड़ने लगे।

द्रुपद, चेकितान और सात्यकि मिलकर अश्वत्थामा और द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगे। कृपाचार्य और कृतवर्मा दोनों धृष्टकेतु से भिड़ गये। इस तरह रथ, हाथी और घोड़े चारों ओर फिरने लगे और उन पर सवार योद्धा लोग परस्पर प्रहार करते हुए लड़ने लगे। उस समय मेघहीन आकाशमण्डल में बिजली चमकने लगी और घोर शब्द के साथ भयानक उल्कापात होता दिखाई दिया। चारों ओर और नीचे-ऊपर धूल छा गई। आँधी चलकर कङ्कड़ बरसाने लगी। सेना की धूल से आकाशमण्डल में सूर्य छिप गये। उस धूल और अँधेरे में सब प्राणी घबराने लगे। वीर पुरुषों के हाथ से छूटे हुए बाण विकट शब्द के साथ सर्वत्र गिरने लगे। योद्धाओं के चलाये हुए बाण हाथ से छूटकर और उद्यत शस्त्र आकाश में चम-३० कते दिखाई पड़ने लगे। विचित्र सुवर्णजालमण्डित ढालें पृथ्वी पर टूट-टूटकर गिर रही थीं। योद्धाओं के सूर्यसदृश चमकीले खड्गों से छिन्न-भिन्न सिर और शरीर सर्वत्र पड़े हुए नज़र आने लगे। महारथियों के रथों के पहिये टूट गये, ध्वजाएँ कट गईं, घोड़े और सारथी मर गये और वे महारथी स्वयं पृथ्वी पर गिरने लगे। बहुत से योद्धाओं के मर जाने पर सारथिहीन घोड़े,

बाणों से घायल होकर, युगकाष्ठ को खींचते हुए इधर-उधर दौड़ते देख पड़े। कहीं पर देख पड़ा कि किसी पराक्रमी योद्धा के हाथी ने पैरों से रथी, सारथी और घोड़ों को मार डाला। कहीं किसी मस्त हाथी के मद की गन्ध पाकर बहुत से हाथी डर से भाग खड़े हुए और उनके पैरों से अनेक हाथी कुचल गये। नाराच बाणों के प्रहार से मरकर गिरे हुए हाथियों से वह युद्धभूमि भर गई। हाथियों की पीठ से तोमर-अंकुश आदि हाथ में लिये महावत भी मर-मरकर गिरने लगे। उस घोर संग्राम में हाथियों के आक्रमण से योद्धा और झण्डेसहित हाथी गिरने लगे। श्रेष्ठ हाथी सूँड़ से रथों को खींचकर तोड़ डालते थे। कहीं पर किसी हाथी ने सूँड़ से किसी योद्धा के केश पकड़कर उसे खींच लिया और वृक्ष की शाखा की तरह रौंद डाला। कहीं पर रथ से भिड़े हुए रथ को खींचते हुए हाथी इधर-उधर फिर रहे थे। उस ४० समय वे हाथी सरोवर में परस्पर लिपटे हुए कमलों को खींचते से जान पड़ते थे। इस तरह वह रणभूमि घुड़सवारों, पैदलों और ध्वजाओं से शोभित महारथियों से परिपूर्ण हो रही थी। ४३

बहत्तरवाँ अध्याय

युद्ध का वर्णन

सञ्जय ने कहा—राजन्, राजा विराट और शिखण्डी शीघ्रता के साथ महाधनुर्द्धर भीष्म के सामने आये। महाबली पराक्रमी द्रोण, कृप, विकर्ण और अन्य बहुत से राजाओं से अकेले अर्जुन युद्ध करने लगे। अमात्य और बन्धुओं सहित जयद्रथ, पूर्व और दक्षिण दिशा के नरपतियों तथा आपके पुत्र महाधनुर्द्धर दुर्योधन और दुःसह से अकेले भीमसेन लड़ने गये। महारथी शकुनि और उनके पुत्र उलूक से सहदेव युद्ध करने लगे। महारथी युधिष्ठिर हाथियों की सेना से लड़ने के लिए गये। समर में इन्द्रतुल्य पराक्रमी नकुल त्रिगर्त देश के वीरों से युद्ध करने लगे। सात्यकि, चेकितान और अभिमन्यु, तीनों वीर कुपित होकर शाल्व और केकय देश की सेना से लड़ने लगे। राक्षस घटोत्कच और धृष्टकेतु कौरवों की रथ-सेना से युद्ध करने लगे। महाबली सेनापति धृष्टद्युम्न उग्रकर्मा द्रोणाचार्य से लड़ने गये। इस प्रकार दोनों ओर के महारथी १० योद्धा परस्पर भिड़कर प्रहार करने लगे। उस समय ठीक दोपहरी थी, आकाशमण्डल सूर्य की प्रचण्ड किरणों से परिपूर्ण था। कौरव और पाण्डव परस्पर प्रचण्ड प्रहार कर रहे थे। सुवर्ण-चित्रित पताकायुक्त, व्याघ्रों की खालों से मढ़े हुए, सुन्दर रथ रण-भूमि में दौड़ने लगे। जय-लाभ के लिए उत्सुक वीरगण परस्पर भिड़कर सिंहों की तरह गरजने लगे। हम लोग वह कौरवों और सृञ्जयों का अद्भुत युद्ध देखने लगे। दिशा, विदिशा, आकाश या सूर्य कुछ नहीं देख पड़ता

था; चारों ओर बाण ही बाण छाये हुए थे। शक्ति, तोमर, खड्ग, विचित्र कवच और तरह-तरह के मणिजटित स्वर्णमय आभूषणों की चमक से सब दिशाएँ और आकाशमण्डल जगमगा उठा। रणभूमि में हर जगह राजा लोग चन्द्रमा और सूर्य के समान प्रकाशमान हो रहे थे। रथों पर २० बैठे हुए वीर आकाश में इधर-उधर चलते हुए ग्रहों के समान जान पड़ने लगे।

हे भारत! इधर महारथी भीष्म ने क्रुद्ध होकर सब सेना के सामने ही सुवर्णपुङ्ख, शिलाओं पर रगड़े हुए, तैल-धौत बाण बरसाकर बली भीमसेन को आगे बढ़ने से रोका। तब भीमसेन को क्रोध चढ़ आया। उन्होंने कुपित नाग के समान एक शक्ति बड़े वेग से भीष्म के ऊपर फेंकी। भीष्म ने उस सुवर्ण-दण्ड-मयी शक्ति को, अपने ऊपर गिरते देखकर, तीक्ष्ण बाणों से काट डाला; इसके बाद एक तीक्ष्ण भल्ल बाण से भीमसेन का धनुष भी काट डाला। इतने में सात्यकि ने शीघ्रता के साथ भीष्म के पास जाकर उनको बड़े पैने-पैने बाण मारे। भीष्म ने एक तीक्ष्ण भयानक बाण मारकर सात्यकि के सारथी को रथ से गिरा दिया। सारथी के मर जाने पर वे तेज़ घोड़े अस्त-व्यस्त भाव से सात्यकि का रथ लिये फिरने लगे। तब युद्धभूमि में कौरवपक्ष के लोग आनन्द-कोलाहल और पाण्डवपक्ष के लोग हाहाकार करने लगे। पाण्डव लोग अपने आदमियों से कहने लगे—दौड़ो, घोड़ों को पकड़ो, ३० रोक लो। इसी अवसर में भीष्म पितामह उसी तरह पाण्डवसेना का संहार करने लगे जिस तरह इन्द्र दानवों की सेना को नष्ट करते हैं। भीष्म के हाथों मारे जाते हुए सोमकों और पाञ्चालों ने युद्ध में मरने या मारने का दृढ़ निश्चय करके भीष्म के ऊपर प्रचण्ड आक्रमण किया। पाण्डवों ने और धृष्टद्युम्न ने भी आक्रमण कर दिया। भीष्म, द्रोण आदि कौरव-वीर ३५ उन्हें रोकने की चेष्टा करने लगे। दोनों ओर घमासान युद्ध होने लगा।

तिहत्तरवाँ अध्याय

युद्ध-वर्णन

सञ्जय ने कहा—महाराज, तब राजा विराट ने महारथी भीष्म को तीन बाण और घोड़ों सहित सारथी को भी तीन ही बाण मारे। भीष्म ने उनको दस बाण मारे। भयानक धनुर्धारी महारथी अश्वत्थामा ने गाण्डीव धनुष धारण करनेवाले अर्जुन की छाती में छः सुवर्णपुङ्ख बाण मारे। शत्रुदमन अर्जुन ने उनका धनुष काट डाला और तीक्ष्ण पाँच बाण मारे। तब अश्वत्थामा ने शत्रु के विक्रम को न सह सकने के कारण क्रोध करके दूसरा धनुष हाथ में लिया, और नव्बे बाण अर्जुन को तथा सत्तर बाण वासुदेव को मारे। क्रोध से अर्जुन की आँखें लाल हो गईं। उन्होंने लम्बी साँस छोड़कर बायें हाथ में गाण्डीव धनुष लेकर प्राणनाशक तीक्ष्ण भयङ्कर बाणों से अश्वत्थामा को लगातार घायल करना शुरू किया। अर्जुन के बाण कवच तोड़कर अश्वत्थामा का रक्त पीने लगे। किन्तु अश्वत्थामा इससे तनिक भी विचलित नहीं हुए और अर्जुन पर बाण बरसाते हुए अपनी सेना की रक्षा करने के लिए अटल खड़े रहे। अश्वत्थामा को श्रीकृष्ण और अर्जुन के साथ घोर युद्ध करते देख कौरवगण खूब बड़ाई करके उन्हें उत्साहित करने लगे। अश्वत्थामा ने प्रयोग और उपसंहार

११

की विधि के साथ पिता द्रोणाचार्य से सब दुर्लभ दिव्य अस्त्र प्राप्त किये थे। इस समय वे शत्रुपक्ष के मन में भय का सञ्चार करते हुए, स्वयं निर्भय रहकर, नित्य युद्ध करते थे। महावीर अर्जुन यह समझकर, कि ये मेरे गुरु के प्रिय पुत्र और विशेषकर ब्राह्मण होने के कारण परम माननीय हैं, कृपापूर्वक अश्वत्थामा को छोड़कर कौरवसेना के और वीरों को मारने चले गये।

महाराज, दुर्योधन ने सुवर्णपुङ्ख दस पैने बाण भीमसेन को मारे। भीमसेन ने भी कुपित होकर जीवनहारी विचित्र बाण निकाले और महावेग से कान तक धनुष खींचकर दुर्योधन की छाती में वे बाण मारे। उनकी छाती में काञ्चनसूत्र-ग्रथित मणि शोभायमान थी। वह मणि बाणों से आच्छादित होने पर ग्रहों से घिरे हुए सूर्य के समान जान पड़ने लगी। २०

जैसे मदमत्त गजराज तल-शब्द को सुनकर नहीं सह सकता, वैसे ही मानी दुर्योधन भीमसेन के बाणों की चोट खाकर उनके तल-शब्द और सिंहनाद को नहीं सह सके। उन्होंने क्रोध से अधीर होकर अपनी सेना की रक्षा करने के लिए भीमसेन पर विकट बाण बरसाये। इस तरह घायल होकर भी देवतुल्य भीमसेन और दुर्योधन परस्पर युद्ध करने लगे।

उधर देवराज-सदृश अभिमन्यु ने चित्रसेन को दस और पुरुमित्र को सात बाण मारकर फुर्ती के साथ सत्तर बाणों से भीष्म को घायल किया। वे आनन्द से नृत्य सा करने लगे। यह देखकर हमारे पक्ष के लोगों को बड़ा खेद और क्लेश हुआ। तब चित्रसेन ने दस बाण, भीष्म ने नव बाण और पुरुमित्र ने सात बाण अभिमन्यु को मारे। अभिमन्यु के शरीर से रुधिर की धारा बहने लगी। अभिमन्यु ने चित्रसेन का बढ़िया धनुष और उत्तम कवच काटकर एक घोर बाण उनकी छाती में मारा। आपके पक्ष के वीर और महारथी राजपुत्र मिलकर क्रोधपूर्वक तीक्ष्ण बाणों से अभिमन्यु पर आक्रमण करने लगे। दिव्य अस्त्रों के ज्ञाता अभिमन्यु ने भी तीक्ष्ण बाणों से सबके प्रहारों को व्यर्थ करके सबको बाण मारे।

महाराज, आपके पुत्रों ने अभिमन्यु की यह अद्भुत फुर्ती देखकर चारों ओर से उन्हें ३० घेर लिया। शिशिर के अन्त में प्रज्वलित आग जैसे सूखी लकड़ियों के ढेर को जलाती है, वैसे ही अभिमन्यु श्रेष्ठ बाणों से आपके पक्ष के योद्धाओं को नष्ट करने लगे। उनकी फुर्ती देखकर आपके पौत्र लक्ष्मण शीघ्रता के साथ उनके सामने आये। महारथी अभिमन्यु ने क्रोध से विह्वल होकर छः बाण लक्ष्मण को और तीन बाण उनके सारथी को मारे। उधर लक्ष्मण ने भी पैने बाणों से अभिमन्यु का शरीर छिन्न-भिन्न करना शुरू किया। दोनों की फुर्ती अद्भुत थी। महारथी अभिमन्यु ने कई बाणों से लक्ष्मण के सारथी और रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। लक्ष्मण ने अभिमन्यु को अपनी ओर आते देख क्रुद्ध होकर उस बिना घोड़े और सारथी के रथ पर से उनके ऊपर एक तीक्ष्ण शक्ति फेंकी। अभिमन्यु ने फुर्ती से उस घोररूपिणी नागिन सी शक्ति को सामने से आते देखकर तीक्ष्ण बाणों से काट डाला। तब कृपाचार्य ने जाकर लक्ष्मण को अपने रथ पर बिठा लिया। सारी सेना के सामने ही वे लक्ष्मण के प्राण बचाने के लिए वहाँ से हट गये। उस महाभयानक युद्ध में महाधनुर्द्धर कौरव और पाण्डव लोग ४० परस्पर प्रहार करने के लिए एक दूसरे की ओर दौड़ने लगे। इस समर में सृञ्जयों के केश खुल गये, कवच कट गये और रथ टूट गये। शस्त्र और धनुष न रहने पर वे कौरवसेना के साथ बाहुयुद्ध करने लगे। उधर महा पराक्रमी महाबाहु भीष्म क्रोधपूर्वक पाण्डवपक्ष की सेना को नष्ट करने लगे। उनके बाणों से असंख्य हाथी, हाथियों के सवार, घोड़े और सवार, रथ, रथों ४३ के सवार और पैदल इतने गिरे कि समरभूमि उनसे व्याप्त हो गई।

चौहत्तरवाँ अध्याय

पाँचवें दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय ने कहा—महाराज, युद्धप्रिय महावीर सात्यकि ने बोझ को सह सकनेवाला उत्तम धनुष खींचकर शत्रुपक्ष की सेना के ऊपर विषैले साँप-सदृश सुवर्णपुङ्खयुक्त बाण बरसाना शुरू किया। उस समय वे अर्जुन से सीखा हुआ प्रगाढ़, लघु, चित्र हस्तलाघव (हाथ की फुर्ती) दिखाने लगे। धनुष चढ़ाकर बाण छोड़ते हुए, फिर तरकस से बाण निकालकर धनुष पर चढ़ाते हुए और उन्हें छोड़कर शत्रुओं को मारते हुए सात्यकि, बरसते हुए मेघ के समान, देख पड़ते थे। सात्यकि को पराक्रमपूर्वक शत्रुसेना का नाश करते देखकर राजा दुर्योधन ने उनका सामना करने के लिए दस हज़ार रथी योद्धा भेजे। धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ वीर्यशाली सात्यकि ने दिव्य अस्त्र से उन सब वीरों को मार डाला।

महावीर सात्यकि इस प्रकार दारुण कर्म करके धनुष हाथ में लिये भूरिश्रवा से युद्ध करने लगे। कुरुकुल की कीर्ति बढ़ानेवाले महाबाहु भूरिश्रवा ने सात्यकि के हाथों कौरव-सेना का संहार होते देखकर, क्रोध से आँखें लाल करके, उन पर आक्रमण किया। इन्द्रधनुष के समान बहुत बड़ा धनुष चढ़ाकर वे फुर्ती के साथ, विषैले साँप और वज्र के समान, असंख्य बाण सात्यकि के ऊपर बरसाने लगे। उन मृत्युतुल्य बाणों की चोट असह्य होने के कारण साथ की सेना सात्यकि को छोड़कर इधर-उधर भागने लगी। तब विचित्र कवच, शस्त्र ११ और ध्वजा आदि से शोभित महाबली सात्यकि के दस महारथी पुत्र उन्हें असहाय देखकर, भूरिश्रवा के समीप आकर, कहने लगे—हे कौरव! आओ, हममें से एक के साथ या दसों के साथ युद्ध करो। आज या तो तुम हमको मारकर यश प्राप्त करोगे, और या हमी तुमको हराकर अपने पिताजी को प्रसन्न करेंगे।

सात्यकि के पुत्रों के ये वचन सुनकर प्रशंसनीय वीर भूरिश्रवा उनके सामने जाकर कहने लगे—हे वीरो, तुम्हारे वचन सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। तुमको साधुवाद है। तुम सब मिलकर ही युद्ध करो। मैं तुम सबको युद्ध में मारूँगा। अब सात्यकि के दसों धनुर्द्धर-श्रेष्ठ फुर्तीले पुत्र प्रबल वेग से आक्रमण करके भूरिश्रवा पर बाण बरसाने लगे। महाराज, तीसरे पहर अकेले भूरिश्रवा उन दसों वीरों से घोर युद्ध करने लगे। वर्षाऋतु में मेघ जैसे पहाड़ पर पानी बरसाते हैं वैसे ही वे वीर योद्धा भूरिश्रवा पर चारों ओर से बाणों की वर्षा करने लगे। २० महारथी भूरिश्रवा ने भी उन वीरों के चलाये हुए, यमदण्ड और वज्र के समान, भयङ्कर बाणों को पास तक नहीं आने दिया, बीच में ही काट डाला। इसके बाद वे वीर भूरिश्रवा को चारों ओर से घेरकर मार डालने की चेष्टा करने लगे। महावीर भूरिश्रवा ने कुपित होकर विविध

बाणों से उनके धनुष काटकर उनके सिर काट डाले। वे भूरिश्रवा के बाणों से मरकर, वज्रपात से टूटे हुए वृक्षों की तरह, पृथ्वी पर गिर पड़े।

वृष्णिवंशी महावीर सात्यकि युद्ध में अपने महाबली पुत्रों का मरना देखकर क्रोध से गरजते हुए भूरिश्रवा के पास आये। अब उन दोनों वीरों ने परस्पर आक्रमण करके घोर युद्ध किया। दोनों के रथ चूर्ण हो गये, घोड़े और सारथी नष्ट हो गये। तब वे तीक्ष्ण तलवार और ढाल लेकर पृथ्वी पर कूद पड़े और एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। उस समय युद्ध-भूमि में दोनों की अपूर्व शोभा हुई। इसी समय भीमपराक्रमी भीमसेन ने जल्दी से ढाल-तलवार हाथ में लिये हुए सात्यकि को अपने रथ पर चढ़ा लिया। उधर दुर्योधन ने भी शीघ्रता के साथ आकर सब योद्धाओं के सामने भूरिश्रवा को अपने रथ पर बिठा लिया।

३०

महाराज, पाण्डव लोग क्रोधपूर्वक आक्रमण करके महारथी भीष्म के साथ दारुण युद्ध करने लगे। क्रमशः भगवान् सूर्य का बिंब लाल हो उठा; क्योंकि सन्ध्याकाल निकट था। महावीर अर्जुन ने फुर्ती के साथ उतने ही समय में पचीस हज़ार रथियों का संहार कर डाला। दुर्योधन की आज्ञा से वे महारथी वीर, अर्जुन पर आक्रमण करके, उसी तरह नष्ट हो गये जिस तरह पतङ्ग आग में गिरकर भस्म हो जाते हैं। तब युद्धचतुर मत्स्य और केकयदेश के वीरों ने अभिमन्युसहित अर्जुन पर आक्रमण किया। इसी समय सूर्यदेव अस्ताचल पर पहुँच गये। अन्धकार होने के कारण सब सैनिक भ्रान्त होने लगे। सन्ध्याकाल देखकर भीष्म ने युद्ध रोकने की आज्ञा दी। कौरवों और पाण्डवों की सारी सेना और वाहन बहुत थक गये थे। सब लोग अपने-अपने डेरों को लौट चले।

३९ सृञ्जय, पाण्डव और कौरवगण अपनी-अपनी सेना के साथ डेरों पर आकर विश्राम करने लगे।

पचहत्तरवाँ अध्याय

क्रौञ्चव्यूह और मकरव्यूह की रचना

सञ्जय कहते हैं—महाराज, सवेरा होने पर विश्राम के बाद उठकर सुसज्जित होकर पाण्डव और कौरव फिर युद्धभूमि में उपस्थित हुए। चारों ओर शङ्ख, नगाड़े आदि का शब्द होने लगा। दोनों सेनाओं के उत्तम जुते हुए रथ, सजे हुए हाथी, सवारों सहित घोड़े और कवचधारी पैदल चारों ओर देख पड़ने लगे। उनका घोर कोलाहल दूर-दूर तक सुनाई पड़ने लगा।

तब राजा युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न को, शत्रुपक्ष के लिए भयङ्कर, मकरव्यूह रचने की आज्ञा दी। आज्ञा पाकर रथी लोग मोर्चेबन्दी से खड़े होने लगे। महाराज द्रुपद और महावीर अर्जुन उस व्यूह के मस्तक भाग में स्थित हुए। महारथी नकुल और सहदेव उसके दोनों नेत्रों की जगह पर नियुक्त हुए। भीमसेन मुखभाग में स्थित हुए। अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, राक्षस घटोत्कच, सात्यकि और धर्मराज गर्दन की जगह पर खड़े हुए। महाराज विराट और धृष्टद्युम्न असंख्य सेना साथ लेकर उसके पृष्ठभाग की रक्षा करने लगे। केकयदेश के पाँचों भाई राजकुमार वामभाग की और राजा धृष्टकेतु तथा वीर्यशाली चेकितान दक्षिण भाग की रक्षा करने लगे। महारथी श्रीमान् कुन्तिभोज और शतानीक बहुत सी सेना साथ लेकर १० उसके दोनों चरणों की रक्षा करने लगे। सोमकगण सहित वीर शिखण्डी और [नागकन्या से उत्पन्न] महाबली इरावान् उसके पुच्छभाग की रक्षा करने लगे। पाण्डवगण सूर्योदय के समय इस तरह मकराकार महाव्यूह रचकर फिर संग्राम के लिए कौरवों के आगे आये। वह चतुरङ्गिणी सेना असंख्य हाथी, घोड़े, रथ, पैदल, ऊँची फहराती हुई ध्वजा, छत्र, तीक्ष्ण उज्ज्वल अस्त्र-शस्त्र आदि से बहुत शोभा को प्राप्त हुई।

राजन्, महावीर भीष्म ने पाण्डव-सेना की व्यूह-रचना देखकर कौरव-सेना में क्रौञ्चव्यूह की रचना की। श्रेष्ठ धनुर्द्धर द्रोणाचार्य उस व्यूह के मुखभाग की रक्षा करने लगे। अश्वत्थामा और कृपाचार्य दोनों नेत्रों की जगह स्थित हुए। काम्बोज, वाह्लीकगण और कृतवर्मा उसके मस्तकस्थान में नियुक्त हुए। शूरसेन और असंख्य शूर राजाओं के साथ महाराज दुर्योधन उसकी गर्दन की जगह स्थित हुए। प्राग्ज्योतिषपुर के राजा भगदत्त, मद्रराज शल्य और सिन्धुदेश के राजा जयद्रथ, सौवीर और केकयदेश की असंख्य सेना साथ लेकर, उसके वक्षःस्थल की रक्षा करने लगे। राजा सुशर्मा अपनी सेना साथ लेकर वामपक्ष की रक्षा करने लगे। तुषार, यवन, शक और चूचुपगण दक्षिणपक्ष की रक्षा करने लगे। श्रुतायु, शतायु २० और भूरिश्रवा एक दूसरे की सहायता के लिए जाँघों की जगह स्थित हुए।

इसके बाद कौरव और पाण्डव परस्पर युद्ध करने लगे। दोनों ओर के वीर प्राणों का मोह छोड़कर भिड़ गये। उस संकुल युद्ध में हाथियों के सवार रथों के ऊपर, रथी लोग

हाथियों के ऊपर, घुड़सवार घुड़सवारों पर, घुड़सवार लोग रथों-घोड़ों और हाथियों के ऊपर, रथी लोग हाथियों के सवारों पर और हाथियों के सवार घुड़सवारों के ऊपर आक्रमण करके प्रहार करने लगे। पैदल, रथी और घुड़सवार परस्पर घोर आक्रमण करने लगे। भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और अन्य महारथी वीर राजाओं से सुरक्षित पाण्डव-सेना नक्षत्रमण्डली-मण्डित रात्रि के समान शोभित हुई। महाराज! आपके पक्ष की सेना भी भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, शल्य और दुर्योधन आदि अनेक वीरों के द्वारा सुरक्षित होकर ग्रहगणशोभित आकाश-मण्डल के समान जान पड़ती थी। इसके बाद वेगशाली महारथ पर स्थित महापराक्रमी भीमसेन ने युद्ध-भूमि में आचार्य द्रोण को देखकर उनकी सेना पर आक्रमण किया। तब आचार्य द्रोण ने क्रोध करके भीमसेन के मर्मस्थलों में नव बाण मारे। ३० भीमसेन ने उस प्रहार से विह्वल और क्रुद्ध होकर उनके सारथी को मार डाला। अब महावीर द्रोणाचार्य ख़ुद घोड़ों की रास पकड़कर रथ चलाते हुए, आग जैसे रुई को जलाती है वैसे, पाण्डवों की सेना को भस्म करने लगे। राजन्, इस तरह भीष्म और द्रोण के प्रहारों से पीड़ित और उद्विग्न होकर सृञ्जय और केकयगण उनके सामने से भागने लगे। इसी प्रकार भीमसेन और अर्जुन के बाणों से पीड़ित आपकी सेना भी, मद पिये हुए वेश्या के समान, विमूढ़ हो गई। दोनों ओर की सेना मरकर नष्ट होने लगी। परस्पर भिड़ी हुई दोनों सेनाओं का घोर युद्ध देखकर हम लोग विस्मित हो गये। हे भारत, शस्त्र धारण किये कौरव और पाण्डव शत्रु-सेना का विनाश करते हुए भयानक संग्राम करने लगे। ३७

छिहत्तरवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र का खिन्न होना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, हमारी सेना असंख्य है। व्यूह-रचना भी शास्त्रोक्त विधि के अनुसार की जाती है। हमारे योद्धा युद्ध में ढीठ, हम पर अनुरक्त, उत्साही, प्रसन्नचित्त,

मद्यपान आदि व्यसनों से अछूते और अनेक युद्धों में पराक्रम दिखा चुके हैं। हमारी सेना में कोई अत्यन्त वृद्ध, बालक, दुर्बल या बहुत मोटा नहीं है। सब सैनिक फुर्तीले, नम्र और लम्बे हैं; वे चौड़े छातेवाले हैं। उनकी भुजाएँ मोटी और दृढ़ हैं। हमारी सेना अपार है और शस्त्र तथा कवच आदि से सुसज्जित है। सब योद्धा खड्गयुद्ध, मल्लयुद्ध, गदायुद्ध और प्रास, ऋष्टि, तोमर, परिघ, भिन्दिपाल, शक्ति, मुशल आदि शस्त्रों के युद्ध में सुशिक्षित हैं। वे कम्पनयुद्ध, चापयुद्ध, कणपयुद्ध, चित्रयुद्ध, क्षेपणीययुद्ध और मुष्टियुद्ध आदि में सर्वथा समर्थ हैं। उनका निशाना नहीं चूकता। सब लोग सब तरह की कसरतों का और सब तरह की युद्धविद्या का प्रत्यक्ष अभ्यास किये हुए हैं। सब तरह के शस्त्र चलाना उन्हें अच्छी तरह मालूम है। वे हाथी आदि पर चढ़ने, उतरने, दूर पर कूदने, अच्छी तरह दृढ़ प्रहार और हमला करने तथा हटने आदि में निपुण हैं। हमने सबको हाथी, घोड़े, रथ आदि की सवारियों में बहुत बार परीक्षा लेकर अच्छे उचित वेतन पर नौकर रक्खा है। हमारी सेना में जो लोग रक्खे गये हैं वे गोष्ठी, उपकार, बन्धुओं की सिफ़ारिश, सम्बन्ध या सौहार्द आदि के कारण नहीं रक्खे गये हैं। सभी योद्धा १० कुलीन, आर्य, समृद्धिशाली, यशस्वी और मनस्वी हैं। उनके सम्बन्धी तथा भाई-बन्धु सदा संतुष्ट रक्खे जाते हैं और उनके भी उपकार करने में कमी नहीं होती। हमारी सेना जगत् में प्रसिद्ध है। अनेक बार जिनके काम देखे जा चुके हैं ऐसे मुख्य, लोकपाल-तुल्य, स्वजन हमारी सेना के सञ्चालक हैं। पृथ्वी भर में प्रसिद्ध, अपनी इच्छा से हमारे अनुगत, अनेक क्षत्रिय वीर अपनी सेना और अनुचर आदि के साथ हमारी सेना की रक्षा करते हैं। समुद्र जैसे अनेक नदियों से पूर्ण होता है, वैसे ही हमारी सेना में अनेक राजाओं की सेनाएँ आकर शामिल हुई हैं। हमारी सेना के हाथी, घोड़े आदि वाहन पक्ष-हीन होने पर भी पक्षियों के समान तेज़ हैं। हमारी सेना समुद्रतुल्य है। अनेक योद्धा उसमें जल की तरह भरे पड़े हैं। बहुतेरे वाहन उसमें लहरों के समान हैं। क्षेपणी, खड्ग, गदा, शक्ति, शर, प्रास आदि शस्त्र जलजीवों के समान हैं। ध्वजा, गहने, रत्नपट्ट आदि उसकी शोभा बढ़ा रहे हैं। दौड़ते हुए घोड़ों का वेग देखकर ऐसा जान पड़ता है कि वह सैन्यसागर हवा के वेग से क्षोभ को प्राप्त हो रहा है। उस अपार सेना में सिंहनाद, शङ्खनाद आदि का शब्द उसके गरजने का निर्घोष सा सुन पड़ता है। द्रोण, भीष्म, कृतवर्मा, कृपाचार्य, दुःशासन, जयद्रथ, भगदत्त, विकर्ण, अश्वत्थामा, शकुनि, बाह्लीक आदि अनेक लोकप्रसिद्ध पराक्रमी महारथी उस सेना की रक्षा कर रहे हैं। इतने पर भी जब वह सेना पाण्डवों के हाथ से मारी जा रही है तब मैं इसे अपने दुर्भाग्य अथवा दैव-कोप के सिवा और क्या कहूँ? मेरे पक्ष के समान सेना और युद्ध का उद्योग प्राचीन ऋषियों और मनुष्यों ने भी आज तक न देखा होगा। ऐसी भारी सशस्त्र सेना युद्ध में अनायास मारी २० जा रही है! यह भाग्य का ही दोष है! हे सञ्जय, मुझे यह सब विपरीत ही जान पड़ता

है। अहो, ऐसी दुर्जय सेना भी युद्ध में पाण्डवों को नहीं मार सकी! अवश्य ही पाण्डवों की ओर से देवता आकर लड़ रहे हैं और मेरी सेना को नष्ट कर रहे हैं। सञ्जय! महात्मा विदुर ने नित्य मुझसे हित की बातें कहीं, मुझे समझाया, परन्तु मेरे पुत्र मन्दमति दुर्योधन ने एक नहीं सुनी। महात्मा विदुर सर्वज्ञ हैं। उन्होंने इस विरोध का फल पहले ही दिव्य ज्ञान-शक्ति से देख लिया था। उन्होंने जो कुछ कहा था, वही हो रहा है; अथवा विधाता ने ही यह लिख रक्खा था। यह होनी ही थी। होनी को कौन टाल सकता है! विधाता २६ ने जो पहले लिख रक्खा है वह अवश्य होगा।

सतहत्तरवाँ अध्याय

भीमसेन और द्रोणाचार्य के पराक्रम का वर्णन

सञ्जय ने कहा—महाराज, आप अपने ही दोष से ऐसे दुःख और सङ्कट में पड़े हैं। आप धर्मसङ्कट की जिन बातों को जानते थे उनका ज्ञान दुर्योधन को नहीं था। इस कारण

दुर्योधन की अपेक्षा आप ही इसमें अधिक दोषी हैं। पहले आपके ही दोष से जुए का खेल हुआ और आपके ही दोष से युद्ध हुआ। इसलिए अब अपनी भूल का फल भोगिए। लोग अपने किये का फल इस लोक या परलोक में अवश्य भोगते हैं। सो आपको यह फल ठीक ही मिला है। अब आप इस सङ्कट का, भीमसेन आदि से अपने पक्ष के युद्ध का, हाल सुनिए।

महापराक्रमी भीमसेन ने तीक्ष्ण बाणों से भीष्म के द्वारा सुरक्षित सेना के व्यूह को तोड़ डाला। उन्होंने उसके भीतर घुसकर दुःशासन, दुर्विषह, दुःसह, दुर्मद, जय, जयत्सेन, विकर्ण, चित्रसेन, सुदर्शन, चारुमित्र, सुवर्मा, दुष्कर्ण, कर्ण आदि दुर्योधन के भाइयों और बहुत से महारथियों को देखा। भीमसेन सिंहनाद करते हुए उनके पास पहुँचे। भीमसेन को देखकर दुःशासन आदि वीर आपस में कहने लगे कि भाइयो, इस

समय हम सब मिलकर भीमसेन को जीवित ही पकड़ लेंगे। दुर्योधन के भाइयों ने यह निश्चय १० करके भीमसेन को चारों ओर से घेर लिया। उस समय महावीर भीमसेन प्रलयकाल में क्रूर महाग्रहों से घिरे हुए सूर्य के समान जान पड़े। भीमसेन व्यूह के भीतर जा करके, देवासुर-संग्राम में दानवों के सामने महेन्द्र के समान, निर्भय भाव से खड़े हो गये।

अब शस्त्रों के युद्ध में निपुण हज़ारों रथी श्रेष्ठ अस्त्र-शस्त्र उठाकर भीमसेन को, चारों ओर से घेरकर, मारने को उद्यत हुए। भीमसेन भी आपके पुत्रों की कुछ परवा न करके कौरव-सेना के हाथियों, घोड़ों, रथों और उनके सवारों को मारने तथा तोड़ने लगे। भीमसेन उधर कौरव-सेना के प्रधान-प्रधान पुरुषों को मार रहे थे, इधर आपके पुत्र उन्हें घेरकर जीता ही पकड़ने की चेष्टा करने लगे। उनके इरादे को जानकर बली भीमसेन ने उनको मारने का विचार किया। तब वे रथ से उतरकर गदा हाथ में लेकर अकेले ही दुर्योधन की अपार सेना को चौपट करने लगे।

इस प्रकार जब महावीर भीमसेन कौरव-सेना में घुस गये तब धृष्टद्युम्न, द्रोणाचार्य से लड़ना छोड़कर, भीमसेन के पास पहुँचने की चेष्टा करने लगे। आपकी महती सेना को छिन्न-भिन्न करके राह साफ़ करते हुए धृष्टद्युम्न भीमसेन के ख़ाली रथ के पास जा पहुँचे। उदास और अचेत-से धृष्टद्युम्न की आँखों में आँसू भर आये। वे साँसें लेते हुए बेचैनी के साथ दुःखित भाव से सारथी से पूछने लगे—मेरे प्राणों से भी प्यारे भीमसेन कहाँ हैं? भीमसेन २० के सारथी विशोक ने हाथ जोड़कर धृष्टद्युम्न से कहा—महाबली भीमसेन मुझे यहाँ छोड़कर अकेले ही कौरव-सेना के भीतर घुस गये हैं। हे पुरुषसिंह, वे जाते समय मुझसे कह गये हैं कि हे सूत, 'कौरवगण मुझे मारने या पकड़ने को तैयार हैं। जब तक मैं उन्हें मारकर यहाँ लौट न आऊँ तब तक घोड़ों को रोककर तुम यहाँ ठहरो।' हे राजकुमार, वे मुझसे यों कहकर गदा लेकर शत्रुसेना में घुस पड़े। उन्हें देखकर शत्रुसेना प्रसन्नता से कोलाहल करने लगी। भयानक युद्ध करते हुए आपके सखा भीमसेन महाव्यूह को तोड़कर भीतर घुस गये हैं।

भीमसेन के सारथी विशोक के ये वचन सुनकर धृष्टद्युम्न ने फिर कहा—हे सूत! रण में भीमसेन को अकेले छोड़कर, पाण्डवों का स्नेह त्यागकर, मैं किसी तरह जीवित नहीं रह सकता। यदि मैं भीमसेन को यों शत्रुओं के बीच अकेला छोड़कर चला जाऊँगा तो सब क्षत्रिय मुझे क्या कहेंगे! जो व्यक्ति अपने सहायक को छोड़कर आप निर्विघ्न अपने घर चला जाता है उसका इन्द्र आदि देवता अनिष्ट करते हैं। भीमसेन मेरे सखा, सम्बन्धी और भक्त हैं। मैं भी शत्रुनाशन भीमसेन का अत्यन्त अनुगत भक्त हूँ। चाहे जो हो, मैं इस समय वहीं जाऊँगा जहाँ भीमसेन गये ३० हैं। हे सूत, जैसे इन्द्र दानवों को मारते हैं वैसे ही मैं शत्रुओं को नष्ट करूँगा।

महाराज, जिस राह से भीमसेन गदाप्रहार के द्वारा गजसेना को नष्ट करते हुए गये थे उसी राह से महावीर धृष्टद्युम्न शत्रुसेना में घुसकर भीमसेन के पास पहुँचे। वहाँ जाकर

उन्होंने देखा कि महावीर भीमसेन शत्रुसेना को और सब राजाओं को गदा के प्रहार से मार-मारकर वृक्षों की तरह गिरा रहे हैं। रथी, घुड़सवार, हाथियों के सवार, पैदल, घोड़े और हाथी सभी चित्रयुद्ध करनेवाले भीमसेन की गदा के भयङ्कर प्रहार से अत्यन्त पीड़ित होकर आर्त-शब्द कर रहे हैं। कौरवसेना में हाहाकार मच गया। उधर अस्त्रविद्याविशारद वीरगण भीमसेन को चारों ओर से घेरकर, निर्भय भाव से, उन पर बाण बरसा रहे थे।

इस प्रकार सारी सेना एकत्र होकर युद्धनिपुण भीमसेन के ऊपर हमला कर रही थी। यह देखकर महाबली धृष्टद्युम्न ने बाणों से क्षत-विक्षत, पैदल, अकेले, क्रोध-विष उगलते हुए, प्रलयकाल में दण्डपाणि यमराज के समान, गदा हाथ में लिये भीमसेन को आश्वास दिया। धृष्टद्युम्न ने पास जाकर भीमसेन को अपने रथ पर चढ़ा लिया और अच्छी तरह गले से लगा-कर उनके घावों की पीड़ा दूर की। उसी समय एकाएक राजा दुर्योधन ने वहाँ आकर अपने भाइयों से कहा—हे कौरवो, यह दुरात्मा धृष्टद्युम्न भीमसेन के पास सहायता करने को पहुँच
४० गया है। आओ, हम सब बहुत सी सेना साथ लेकर इन दोनों को मारने का यत्न करें। ऐसा यत्न करना चाहिए जिसमें तुम्हारे दोनों शत्रु अपनी सेना की सहायता न पा सकें।

राजन्! आपके पुत्रगण बड़े भाई की यह आज्ञा पाकर उसी समय, तनिक भी देर न करके, धृष्टद्युम्न को मारने के लिए, धनुष के शब्द से पृथ्वी को कँपाते हुए, प्रलयकाल के धूम-केतुओं के समान भयङ्कर वेग से भीमसेन और धृष्टद्युम्न के पास पहुँचे। मेघ जैसे पहाड़ पर जल बरसाते हैं, वैसे ही वे लोग धृष्टद्युम्न के ऊपर बाण बरसाने लगे। चित्रयुद्ध में निपुण महावीर धृष्टद्युम्न तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित होने पर भी विचलित नहीं हुए। कौरवों को मारने के लिए उन्होंने सम्मोहन-अस्त्र का प्रयोग किया; और इन्द्र जैसे दानवों पर बाण-वर्षा करें वैसे ही वे बाण बरसाने लगे। धृष्टद्युम्न के सम्मोहन-अस्त्र के प्रभाव से आपके सब पुत्र कालग्रस्त पुरुष की तरह मोह के वश होकर अचेत हो गये। यह देखकर कौरव-सेना रथों, घोड़ों और हाथियों को लेकर इधर-उधर भागने लगी।

महाराज, उधर शस्त्रविशारद द्रोणाचार्य ने द्रुपद राजा को अत्यन्त दारुण तीन तीक्ष्ण बाण मारे। द्रोणाचार्य के बाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर, पुराने वैर को याद कर, वे उनके सामने से हट गये। महाप्रतापी द्रोणाचार्य ने द्रुपद को परास्त देखकर अपना शङ्ख बजाया। उस शङ्ख-नाद को सुनकर सब सोमकगण बहुत ही डर गये। [श्रेष्ठ योद्धा भीमसेन अमृत-तुल्य जल पीकर, विश्राम करके, स्वस्थ हुए। वे फिर तैयार होकर धृष्टद्युम्न के पास युद्धभूमि में आये और शत्रुसेना को नष्ट करने लगे।] उधर द्रोणाचार्य ने जब सुना कि धृष्टद्युम्न ने सम्मो-हन-अस्त्र के द्वारा दुर्योधन आदि आपके पुत्रों को मोहित और अचेत कर दिया है, तब वे
५० शीघ्रता के साथ उनके पास पहुँचे। वहाँ पहुँचकर द्रोणाचार्य ने देखा कि धृष्टद्युम्न और भीम-

वे उनके सामने से हट गये। पृ० २०४८

सेन युद्धभूमि में सेना का संहार कर रहे हैं और आपके सब पुत्र मूर्च्छित हो रहे हैं। तब आचार्य ने प्रज्ञास्त्र का प्रयोग करके सम्मोहनास्त्र को शान्त कर दिया। अब दुर्योधन आदि महारथी फिर सचेत होकर जय की इच्छा से भीमसेन और धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध करने लगे।

हे भारत! धर्मराज युधिष्ठिर ने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा—हे वीरो, तुम लोग शीघ्र धृष्टद्युम्न और भीमसेन के पास जाओ। अभिमन्यु आदि बारह वीर रथी जाकर शीघ्र धृष्टद्युम्न और भीमसेन की ख़बर लावें। उनकी कुछ ख़बर न पाने से मेरा चित्त व्याकुल हो रहा है। धर्मराज की यह आज्ञा पाकर, अपने पौरुप का अभिमान रखनेवाले, वे सब योद्धा ठीक दोपहर के समय भीमसेन और धृष्टद्युम्न के पास चले। अभिमन्यु को आगे करके, बहुत सी सेना साथ लेकर, केकयराज, धृष्टकेतु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र शत्रुसेना की ओर चले। सूचीव्यूह के आकार से सेना ले चलकर उन वीरों ने कौरवों की रथ-सेना को छिन्न-भिन्न करना शुरू किया। भीमसेन के भय से व्याकुल और धृष्टद्युम्न के बाणों से पीड़ित आपकी सेना अभिमन्यु आदि महारथियों की राह को नहीं रोक सकी। नशा पिये हुए बेहोश स्त्री की तरह कुरुपक्ष के सैनिक राह में खड़े थे। सुवर्णमण्डित ध्वजाओं से शोभायमान ६१ रथों पर सवार महाधनुर्द्धर अभिमन्यु आदि वीरगण, शत्रुसेना को नष्ट करते हुए, भीमसेन और धृष्टद्युम्न की ओर शीघ्रता से बढ़ने लगे। अभिमन्यु आदि वीरों को आते देखकर भीमसेन और धृष्टद्युम्न भी बहुत प्रसन्न हुए।

धृष्टद्युम्न ने जब द्रोणाचार्य को आते देखा तब आपके पुत्रों को मारने की इच्छा छोड़ दी। इसके बाद भीमसेन को शीघ्र केकयराज के रथ पर बिठाकर वे अपने गुरु, धनुर्विद्या-विशारद, द्रोणाचार्य से लड़ने चले। प्रतापी द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न को क्रोध से व्याकुल होकर अपनी ओर आते देख एक बाण से उनका धनुप काट डाला। दुर्योधन के हित के लिए, प्रभु के ऋण से छुटकारा पाने के लिए, द्रोणाचार्यजी धृष्टद्युम्न के ऊपर सैकड़ों बाण बरसाने लगे। शत्रुवीरनाशन धृष्टद्युम्न ने दूसरा धनुष लेकर बीस तीक्ष्ण सुवर्णपुङ्ख बाण द्रोणाचार्य को

मारे। द्रोणाचार्य ने फिर सेनापति धृष्टद्युम्न का धनुष काट डाला। इसके बाद चार बाण मारकर उन्होंने धृष्टद्युम्न के रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। साथ ही एक भल्ल
७० बाण से धृष्टद्युम्न के सारथी को भी मार गिराया। अब महावीर धृष्टद्युम्न फुर्ती के साथ उस रथ से उतरकर अभिमन्यु के उत्तम रथ पर सवार हो गये।

हे कौरव, उस समय द्रोणाचार्य के विकट बाणों के प्रहार से पाण्डव-सेना भाग खड़ी हुई। भीमसेन, धृष्टद्युम्न आदि देखते रहे; किन्तु सैनिकों को रोक नहीं सके। महातेजस्वी द्रोणाचार्य के तीक्ष्ण बाणों से मरती हुई वह सारी सेना, क्षोभ को प्राप्त समुद्र के समान, विचलित और भ्रान्त हो उठी। शत्रुसेना की यह दशा देखकर आपके पक्ष के लोग बहुत प्रसन्न हुए। आचार्य द्रोण को क्रुद्ध होकर शत्रुसेना का संहार करते देख कौरव-पक्ष के योद्धा
७५ लोग उन्हें साधुवाद देते हुए उनकी प्रशंसा करने लगे।

अठहत्तरवाँ अध्याय

युद्ध-वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज, मोह दूर होने पर राजा दुर्योधन सचेत होकर फिर भीमसेन पर बाण बरसाने लगे। आपके सब पुत्र मिलकर भीमसेन से युद्ध करने लगे। महाबली भीमसेन फिर अपने रथ पर बैठकर दुर्योधन के पास आये। शत्रुओं को मारनेवाला विचित्र दृढ़ धनुष लेकर, उस पर डोरी चढ़ाकर, भीमसेन वेग के साथ दुर्योधन के अङ्गों में तीक्ष्ण बाण मारने लगे। वीर दुर्योधन ने भी भीमसेन के मर्मस्थल में नाराच बाण मारा। दुर्योधन के प्रहार से अत्यन्त पीड़ित होने पर महाबाहु भीमसेन ने क्रोध से आँखें लाल करके दो बाण दुर्योधन की भुजाओं में और एक बाण छाती में मारा। भीम के भयानक बाणों की गहरी चोट खाकर भी दुर्योधन विचलित नहीं हुए, अचल पर्वत की तरह अपने स्थान पर स्थित रहे।

भीमसेन और दुर्योधन को इस तरह परस्पर प्रहार करते देखकर दुर्योधन के सब छोटे भाई, पहले की सलाह याद करके, भीमसेन को जीते ही पकड़ने के लिए चारों ओर से घेरने चले। वे लोग प्राणों की परवा छोड़कर चारों ओर से भीम पर बाण बरसाने लगे। उन वीरों को अपनी ओर आते देख भीमसेन भी, हाथियों के सामने गजराज की तरह, उन सबकी ओर
१० दौड़े। यशस्वी भीमसेन ने कुपित होकर आपके पुत्र चित्रसेन को एक दारुण नाराच बाण मारा। हे भारत, इसके बाद आपके अन्यान्य पुत्रों को भी अनेक प्रकार के सुवर्णपुङ्ख तीक्ष्ण बाण मारे। उस समय युधिष्ठिर के भेजे हुए अभिमन्यु आदि बारहों महारथी वहाँ पहुँच
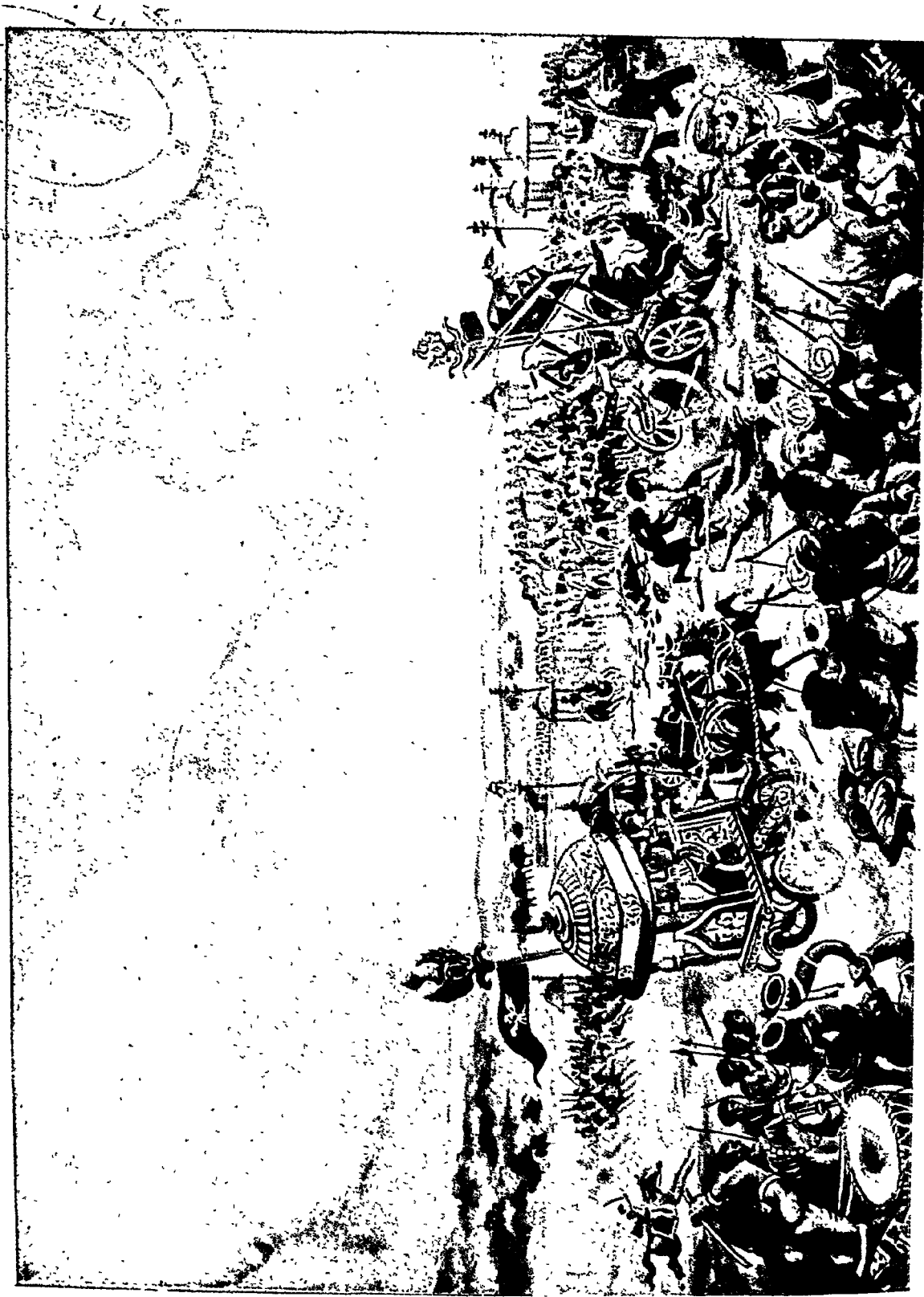
अभिमन्यु उन्हें तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से पीड़ित करने लगे। पृ० २०५१

गये। भीमसेन को इस तरह दुर्योधन के भाइयों के बीच घिरते देखकर वे लोग आपके पुत्रों को रोकने और भीमसेन की सहायता पहुँचाने के लिए दौड़े।

राजन्! आपके पुत्रों ने रथों पर स्थित, सूर्य और अग्नि के तुल्य तेजस्वी, शूर, महाधनुर्द्धर, श्रीसम्पन्न, सुवर्ण के मुकुट धारण किये उन वीरों को देखकर भीमसेन को पकड़ने का इरादा छोड़ दिया। महाबली भीमसेन को छोड़कर आपके पुत्र भाग गये। भीमसेन के लिए यह असह्य हुआ कि आपके पुत्र जान लेकर भाग जा सके। भीमसेन पीछा करके तीक्ष्ण बाणों से उन्हें पीड़ित करने लगे। वीर धृष्टद्युम्न और भीमसेन के साथ महापराक्रमी अभिमन्यु आपके पुत्रों का पीछा करते हुए उन्हें तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से पीड़ित करने लगे। दुर्योधन आदि वीरगण धनुष लेकर, फुर्तीले घोड़ों से युक्त रथों पर चढ़कर, उन महारथियों के पास पहुँचे। राजन्, जिस समय कौरवों और पाण्डवों से यह महाघोर युद्ध होने लगा, उस समय दिन का तीसरा पहर था। महावीर अभिमन्यु ने विकर्ण के चारों घोड़े मार डाले और पचीस क्षुद्रक २० बाणों से उन्हें घायल किया। विकर्ण पहले रथ को छोड़कर चित्रसेन के विचित्र रथ पर सवार हुए। एक ही रथ पर उन दोनों भाइयों को देखकर अभिमन्यु ने असंख्य बाणों से उन्हें ढक दिया। तब दुर्जय और विकर्ण ने लोहमय पाँच बाण अभिमन्यु की छाती में मारे, किन्तु महावीर अभिमन्यु सुमेरु पर्वत के समान तनिक भी व्यथित नहीं हुए।

इधर केकय देश के पाँचों राजकुमारों से दुःशासन अद्भुत युद्ध करने लगे। द्रौपदी के पुत्रों ने क्रुद्ध होकर दुर्योधन को भयङ्कर बाण मारे। दुर्योधन भी तीक्ष्ण बाणों से उनमें से हर एक को भयानक रूप से घायल करने लगे। द्रौपदी के पुत्रों के बाणों से छिन्न-भिन्न और रुधिर से तर होकर दुर्योधन गेरू के झरनों से शोभित पर्वत के समान देख पड़ने लगे।
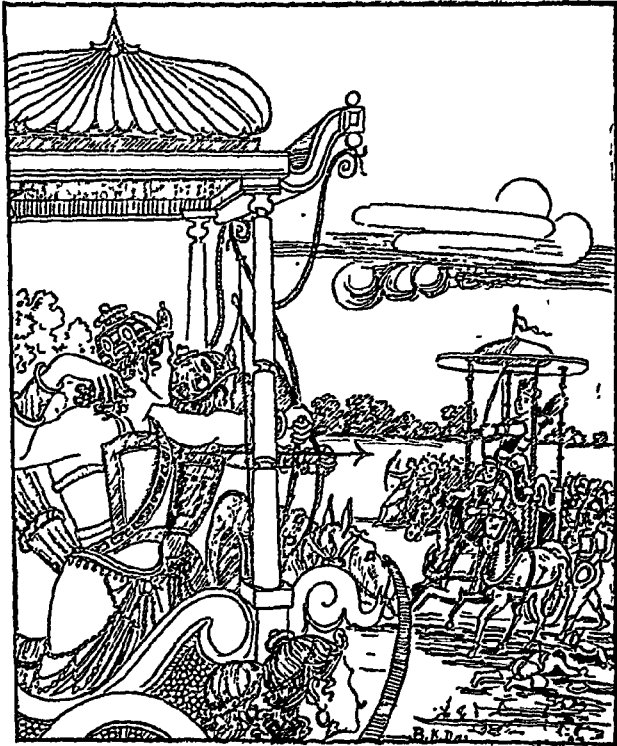
उधर प्रतापी भीष्म पितामह, पशुओं को पशुपाल की तरह, पाण्डवसेना को मारने और भगाने लगे। उस समय सेना के दक्षिण भाग में शत्रुमर्दन अर्जुन के गाण्डीव धनुष का शब्द

३० सुन पड़ने लगा। युद्धभूमि के बीच कौरवों और पाण्डवों की सेना में हज़ारों शूरवीर पुरुषों के कवन्ध उठ-उठकर युद्ध करने लगे। योद्धा लोग रथरूप नौकाओं पर चढ़कर उस अपार सैन्य-सागर के पार जाने की चेष्टा कर रहे थे। संग्राम में मारे गये मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि का रक्त उसमें जल के समान भरा हुआ था। असंख्य वाण भँवर के समान देख पड़ते थे। घोड़ों की गति लहरों की समता कर रही थी। हाथियों के शरीर टापू ऐसे उतरा रहे थे। युद्धभूमि में हज़ारों वीरों के कटे हुए सिर, हाथ आदि अङ्ग और कवचशून्य शरीर इधर-उधर पड़े हुए थे। रक्त से तर हज़ारों मस्त हाथियों के शरीरों के ढेर लगे हुए थे, जिनसे समरभूमि पर्वतमयी सी जान पड़ती थी। यह अद्भुत दृश्य दिखाई पड़ रहा था कि दोनों ओर कोई भी सैनिक युद्ध से विमुख होना नहीं चाहता था। महाराज, आपके पक्ष के योद्धा लोग जय ३६ और यश पाने की इच्छा से, जीवन का मोह छोड़कर, पाण्डवों से युद्ध कर रहे थे।

उन्नासीवाँ अध्याय

छठे दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय ने कहा कि राजन्, सूर्यदेव का विम्ब अस्ताचल के पास पहुँचकर लाल रङ्ग का हो चला। उसी समय राजा दुर्योधन ने घोर युद्ध करके भीमसेन को मार डालने के लिए भयानक आक्रमण किया। जन्मवैरी दुर्योधन को आते देखकर कुपित भीमसेन ने कहा—हे दुर्योधन, अगर तुम युद्ध छोड़कर भाग न जाओगे तो आज मैं तुमको जीता न छोड़ूँगा। मैं बहुत दिनों से जिस समय की राह देख रहा था, वही समय आ पहुँचा है। आज तुमको मार-कर मैं जननी कुन्ती के क्लेशों को, वनवास के क्लेशों को और द्रौपदी के मन की व्यथा को दूर करूँगा। हे गान्धारी के पुत्र! पहले ईर्ष्या के वश होकर तुमने पाण्डवों का अपमान किया था, उसी पाप का फल यह प्राणसङ्कट उपस्थित है। कर्ण और शकुनि की सलाह मानकर, पाण्डवों को तुच्छ समझकर, तुम मनमाना अन्याय कर चुके हो। श्रीकृष्ण जब सन्धि के लिए गये तब तुमने मोहवश होकर उनका अपमान किया और फिर अपने दूत उलूक के द्वारा अनेक कटु वचन कहला भेजे। जान-बूझकर तुमने जो ये पाप किये हैं उन्हें शान्त करने के लिए मैं यहाँ तुमको, तुम्हारे वन्धु-बान्धवों को और अनुचरों को भी मारूँगा।

महाराज, अब भीमसेन ने प्रचण्ड धनुष चढ़ाया। उस धनुष को वारम्वार घुमाते हुए १० भीमसेन ने वज्रतुल्य, चमकीले, अग्निशिखा के समान छब्बीस वाण दुर्योधन को मारे। फिर दो वाणों से दुर्योधन का धनुष काटकर दो वाण उनके सारथी को मारे। चार वाणों से बढ़िया घोड़ों को मार डाला, दो वाणों से ऊपर का छत्र काट डाला और छः बाणों से ऊँची ध्वजा

काट गिराई। अद्भुत फुर्ती के साथ ये काम करके भीमसेन ऊँचे स्वर से गरजने लगे। जैसे मेघ में बिजली चमकती है, वैसे ही दुर्योधन के विविध रत्न-भूषित रथ से सुन्दर ध्वजा गिर पड़ी। सब राजाओं ने आश्चर्य के साथ देखा कि कुरुराज की वह सूर्य के समान प्रभा-पूर्ण, मणिमय, समुज्ज्वल नागचिह्नयुक्त ध्वजा गिर पड़ी। अब भीमसेन ने हँसकर, गजराज के मस्तक पर अंकुश-प्रहार की तरह, कुरुराज को दस बाण मारे। तब महारथी सिन्धुराज जयद्रथ, प्रधान-प्रधान वीरों के साथ, आकर दुर्योधन के पार्श्वदेश की रक्षा करने लगे। इसी समय महारथी कृपाचार्य ने क्रोधी राजा दुर्योधन को, भीमसेन के बाणों से अत्यन्त आहत और पीड़ित देखकर, अपने रथ पर बिठा लिया। राजा दुर्योधन रथ के ऊपर अचेत-से होकर बैठ गये। सिन्धुराज जयद्रथ ने भीमसेन को जीतने के लिए हज़ारों रथों के बीच में घेर लिया। उधर धृष्टकेतु, २० पराक्रमी अभिमन्यु, कैकेयगण और द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने आपके पुत्रों से युद्ध शुरू किया। तब चित्रसेन, सुचित्र, चित्राङ्ग, चित्रदर्शन, चारुचित्र, सुचारु, नन्द और उपनन्द, ये आपके आठों यशस्वी पुत्र अभिमन्यु से लड़ने लगे। वीर अभिमन्यु ने विचित्र धनुष से निकले हुए वज्र या मृत्यु के समान सन्नतपर्व तीक्ष्ण पाँच-पाँच बाण हर एक योद्धा को मारे। वे लोग अभिमन्यु के इस पराक्रम को न सह सकने के कारण, पर्वत पर जैसे मेघ जल बरसाते हैं वैसे ही, अभिमन्यु के ऊपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। युद्धनिपुण अभिमन्यु उनके बाणप्रहार से अत्यन्त पीड़ित होकर बहुत क्रुद्ध हो उठे। देवासुर-संग्राम में इन्द्र ने जैसे असुरों को पीड़ित किया था वैसे ही वे उन लोगों को पीड़ित करने लगे। प्रधान रथी अभिमन्यु ने फुर्ती के साथ विकर्ण के ऊपर सर्प-सदृश चौदह भल्ल बाण चलाकर उनके रथ की ध्वजा काट डाली और सारथी तथा घोड़ों को भी मार गिराया। इसके बाद वे फिर विकर्ण पर पैने बाणों की वर्षा करने लगे। वे कंकपत्र-युक्त बाण क्रुद्ध नाग की तरह विकर्ण के शरीर को फोड़कर पृथ्वी में घुस गये। ३० वे सुवर्णपुंख बाण विकर्ण के रक्त में सनकर रक्त वमन करते हुए-से जान पड़ने लगे। विकर्ण के अन्य भाई उन्हें साङ्घातिक रूप से घायल देखकर, उनकी रक्षा करने के लिए, अभिमन्यु आदि बारहों महारथियों की ओर दौड़े। इस तरह उन लोगों का परस्पर घोर समर होने लगा। युद्धपरायण दोनों ओर के वीर एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। दुर्मुख ने श्रुतकर्मा को सात बाण मारे। फिर एक बाण से रथ की ध्वजा काटकर सात बाणों से सारथी को मार डाला। इसके बाद सोने की जाली से ढके हुए, वायु के समान वेग से जानेवाले, घोड़ों को भी छः बाणों से मार डाला। महारथी श्रुतकर्मा ने बिना सारथी और बिना घोड़ों के रथ पर से उल्का के समान प्रज्वलित एक भयानक शक्ति दुर्मुख के ऊपर फेंकी। वह विकट शक्ति दुर्मुख के कवच को तोड़कर पृथ्वी में घुस गई। श्रुतकर्मा को रथ-हीन देखकर महाबली सुतसोम ने सब सेना के सामने अपने रथ पर बिठा लिया।

४० अब महावीर श्रुतकीर्ति आपके पुत्र यशस्वी जयत्सेन को मारने के लिए उनकी ओर चले। महावीर श्रुतकीर्ति धनुष चढ़ाकर उन पर बाण बरसाने लगे। इसी समय आपके पुत्र जयत्सेन ने तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से उनका धनुष काट डाला। शतानीक ने अपने भाई का धनुष कटते देखकर जयत्सेन पर आक्रमण किया। शतानीक ने दृढ़ धनुष चढ़ाकर जयत्सेन को दस बाण मारे। फिर महावीर शतानीक ने गजराज की तरह गरजकर सब प्रकार के आवरणों को तोड़नेवाले तीक्ष्ण बाण जयत्सेन की छाती में मारे। इस प्रकार नकुल के पुत्र शतानीक ने जब जयत्सेन को पीड़ित किया तब दुष्कर्ण ने क्रोध करके जयत्सेन के सामने ही शतानीक का बाणसहित धनुष काट डाला। अब महाबली शतानीक ने बोझ को सँभालनेवाला अन्य श्रेष्ठ धनुष लेकर दुष्कर्ण से "ठहरो, ठहरो" कहकर क्रुद्ध साँप के समान भयङ्कर बाण बरसाना शुरू किया। उन्होंने एक बाण से दुष्कर्ण का धनुष काटकर दो बाणों से सारथी को मार डाला। इसके बाद फुर्ती के साथ सात बाण दुष्कर्ण को मारे। इसी बीच में बारह तीक्ष्ण बाणों से उनके वायु-
५० गामी घोड़ों को मार डाला। शतानीक ने एक भल्ल बाण ऐसा मारा, जिससे दुष्कर्ण का हृदय फट गया। उस प्रहार से वज्राहत वृक्ष की तरह मरकर दुष्कर्ण पृथ्वी पर गिर पड़े।

राजन्! दुष्कर्ण की मृत्यु देखकर दुर्मुख, दुर्जय, दुर्मर्षण, शत्रुञ्जय और शत्रुसह, ये आपके पाँचों पुत्र शतानीक को मारने के लिए बाणों की वर्षा करते हुए उनकी ओर दौड़े। उधर केकय देश के राजकुमार पाँचों भाई उन पाँचों महावीरों से युद्ध करने दौड़े। यह देखकर अत्यन्त क्रुद्ध आपके पाँचों पुत्र विचित्र कवच धारणकर, धनुष हाथ में लेकर, विचित्र भूषणों से भूषित घोड़ों से युक्त और पताकाओं से अलंकृत रथों पर बैठकर, केकय देश के राजकुमारों पर आक्रमण करने चले। महागज जैसे महागजों पर आक्रमण करने के लिए दौड़ते हैं, वैसे ही आपके पाँचों राजकुमार चले। सिंह जैसे वन में घुसते हैं वैसे ही वे लोग शत्रुसेना के भीतर घुसे। दोनों ओर के सैनिक यमराज की नगरी को मृतकों से परिपूर्ण करनेवाला घोर युद्ध करने लगे। वीर योद्धा एक दूसरे को मारने और प्रहार करने लगे। रथों से रथों की, हाथियों से हाथियों की और घोड़ों से घोड़ों की मुठभेड़ होने लगी। उसी समय सूर्यनारायण अस्ताचल पर पहुँच
६० गये। रथी और घुड़सवार लोग कट-कटकर गिर रहे थे। तब पितामह भीष्म ने क्रोध से अधीर होकर तीक्ष्ण बाणों से केकय और पाञ्चाल देश की सेना को मारकर अपनी सेना को लौटा लिया। सब लोग अपने शिविरों को लौट चले। इधर धृष्टद्युम्न और भीमसेन भी कौरवों की सेना को नष्ट करके युधिष्ठिर के पास पहुँचे। धर्मराज युधिष्ठिर भी धृष्टद्युम्न और
६४ भीमसेन से मिलकर, प्रेमपूर्वक उनका मस्तक सूँघकर, अपने शिविर को लौट चले।

अस्सी अध्याय

भीष्म और दुर्योधन का संवाद

सञ्जय ने कहा—राजन्, रक्त से भीगे हुए क्षत्रियगण अपने शिविरों को गये। परस्पर द्रोह रखनेवाले कौरवों और पाण्डवों ने रात को विश्राम किया। सवेरा होने पर परस्पर यथोचित पूजा और सत्कार करके सबने फिर कवच आदि पहनकर युद्ध की तैयारी की। महाराज, आपके पुत्र दुर्योधन के शरीर में अनेक घाव थे और उनसे निकला हुआ रक्त शरीर में लाल चन्दन सा शोभित हो रहा था। चिन्ता से व्याकुल दुर्योधन ने भीष्म पितामह के पास आकर कहा—पाण्डव पक्ष के योद्धा लोगों ने और पाण्डवों ने हमारी भयानक, रौद्र, व्यूह-रचना से सुरक्षित, अनेक ध्वजाओं से शोभित सेना को छिन्न-भिन्न, पीड़ित, निहत और मोहित करके भारी कीर्ति प्राप्त की है। हमारे दुर्भेद्य, मृत्युद्वार-तुल्य मकरव्यूह में घुसकर भीमसेन ने यमदण्ड-सदृश घोर बाणों से मुझे अधमरा कर दिया है। भीमसेन को कुपित

देखकर डर के मारे मैं मूर्च्छित सा हो रहा हूँ। मुझे शान्ति नहीं मिलती। हे सत्यसन्ध, मैं आपके प्रसाद से पाण्डवों को मारकर विजय प्राप्त करना चाहता हूँ।

शस्त्र-धारियों में श्रेष्ठ, अविचलित, मनस्वी भीष्म पितामह दुर्योधन को कुपित और दीन देखकर मुसकाते हुए कहने लगे—राजन! मैं शत्रुसेना में प्रवेश करके बड़े यत्न के साथ, यथाशक्ति पराक्रम करके, तुमको विजय और सुख का भागी बनाना चाहता हूँ। मैं तुम्हारे लिए पराक्रम करने में तनिक भी कसर नहीं रखता; किन्तु ये रौद्ररूप, यशस्वी, अस्त्र-निपुण, महाशूर अनेक महारथी राजा समर में पाण्डवों की सहायता कर रहे हैं। वे युद्ध में न थकनेवाले वीर तुम्हारी सेना के ऊपर क्रोध का विष उगलते हैं। तुमने उनसे वैर बढ़ा रक्खा है। उन वीर्यशाली वीरों को समर में इस समय कौन एकाएक जीत सकता है? परन्तु हे वीर, मैं जीवन का मोह

१० छोड़कर तुम्हारे हित के लिए पूरी चेष्टा के साथ युद्ध करूँगा। मैं अपने जीवन की रक्षा न करके तुम्हारे शत्रुओं से लड़ूँगा। तुम्हारे लिए मैं शत्रुसेना की कौन कहे, सम्पूर्ण देवताओं और दैत्यों को भस्म कर सकता हूँ। मैं पाण्डवों से घोर युद्ध करके तुम्हारा प्रिय करूँगा।

यह सुनकर दुर्योधन बहुत प्रसन्न हुए। उन्हें प्रतीति हो गई कि पितामह ने जो कुछ कहा है, वही करेंगे। अब इन्होंने सब राजाओं को और सारी सेना को युद्ध के लिए युद्धभूमि में चलने की आज्ञा दी। दुर्योधन की आज्ञा पाकर हज़ारों हाथी, घोड़े, रथ, पैदल और प्रसन्नचित्त सब राजा लोग शीघ्रतापूर्वक शिविरों से निकले। अनेक शस्त्रों से शोभित आपकी अपार चतुरङ्गिणी सेना युद्धभूमि में पहुँचकर बहुत ही शोभायमान हुई। शस्त्र-अस्त्र चलाने में चतुर वीर क्षत्रियों के द्वारा सञ्चालित आपकी सेना रथ, हाथी, घोड़े आदि के झुण्डों से शोभित हो रही थी। सेना के चलने से इतनी धूल उड़ी कि उससे सूर्य का प्रकाश छिप गया। रथों और हाथियों के ऊपर बड़े-बड़े झण्डे हवा से फहरा रहे थे। उस युद्धभूमि में, अनेक चिह्नों से युक्त, श्रेणीबद्ध हाथियों के झुण्ड चारों ओर आकाश में बिजलीसहित मेघों के समान शोभायमान हो रहे थे। सत्ययुग में देवता और दैत्य जब समुद्र को मथ रहे थे तब समुद्र में जैसा घोर गम्भीर शब्द हुआ था, वैसा ही शब्द वीरों के धनुष चढ़ाने पर सुनाई पड़ रहा था। उग्र हाथियों से युक्त, विविध रूपों और वर्णों से शोभित, क्रुद्ध, शत्रुसेना को मारनेवाली वह आपकी सेना उस
१९ समय प्रलयकाल के मेघों के समान जान पड़ने लगी।

इक्यासी अध्याय

द्वन्द्वयुद्ध। अर्जुन के पराक्रम का वर्णन

सञ्जय ने कहा कि महाराज, उस दिन चिन्ता में मग्न आपके पुत्र दुर्योधन से भीष्म ने ये उत्साह बढ़ानेवाले वचन कहे—राजन्! मेरी समझ में यह आता है कि मैं, द्रोण, शल्य, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, विकर्ण, भगदत्त, शकुनि, विन्द, अनुविन्द, वाह्लीक देश के वीरों सहित वाह्लीक, सोमदत्त, जयद्रथ, त्रिगर्तराज, बलवान् और दुर्जय मगधनरेश, कोसलनरेश बृहद्बल, चित्रसेन, विविंशति, कृपाचार्य; अनेक देशों की सशस्त्र पैदल सेना, महाध्वजाओं से शोभित रथों के हज़ारों योद्धा, घोड़ों के सवार, हाथियों के सवार और तुम्हारे लिए युद्ध करने को आये अनेक देशों के असंख्य योद्धा अगर जीवन का मोह छोड़कर युद्ध करें तो वे देवताओं को भी हरा सकते हैं। राजन्, यह अवश्य है कि मुझे सदा तुम्हारे हित की ही बात कहनी चाहिए; पर सच तो यह है कि श्रीकृष्ण जिनके सहायक हैं उन इन्द्र के समान पराक्रमी पाण्डवों को देवताओं सहित इन्द्र भी युद्ध में नहीं जीत सकते; तो भी मैं सर्वथा तुम्हारा कहा करूँगा।

अत्यन्त क्रुद्ध होकर महावीर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा। पृ० २०४७
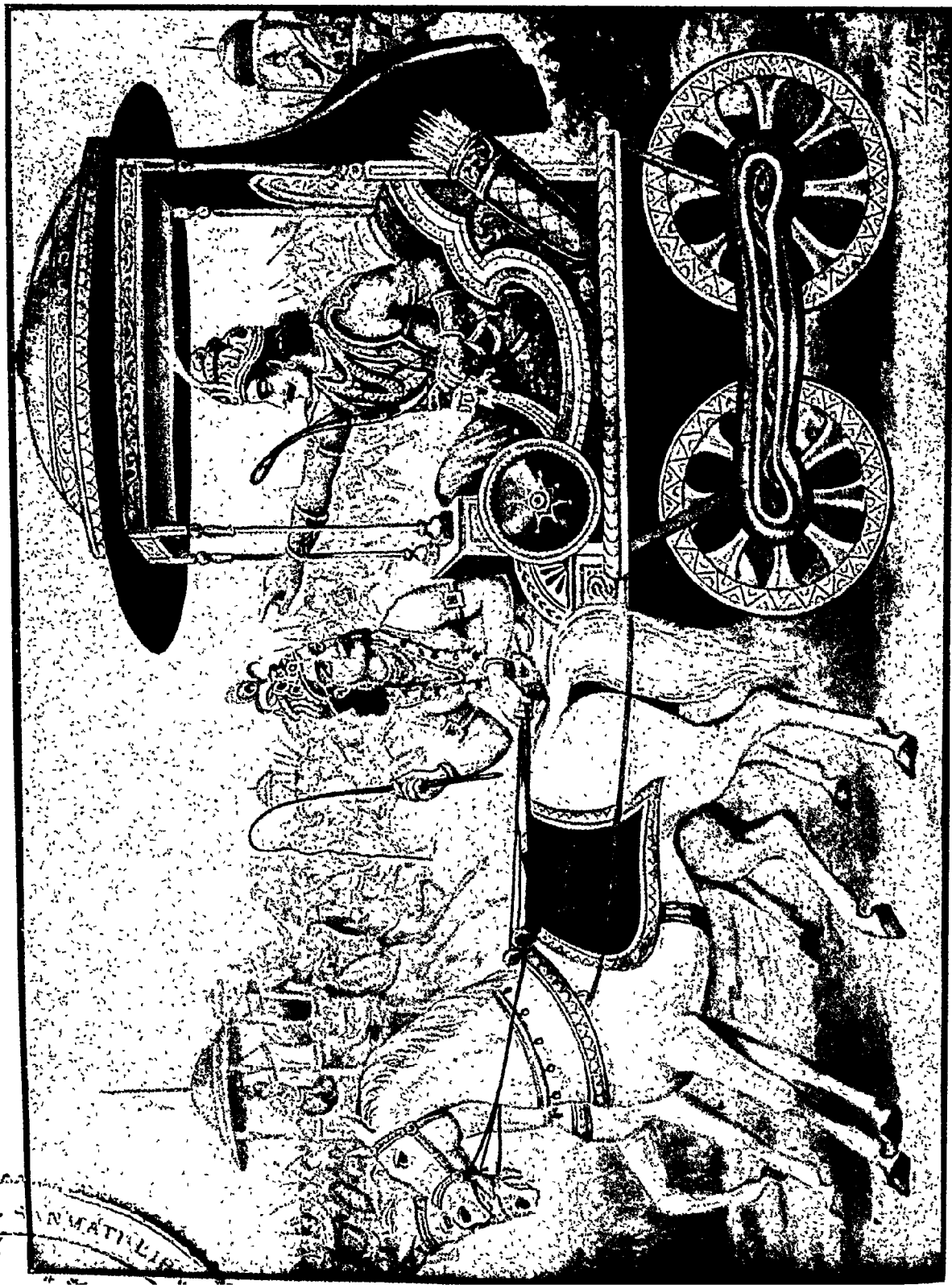
या तो पाण्डवों को मैं जीत लूँगा, अथवा पाण्डव ही मुझे जीत लेंगे। यही मेरी प्रतिज्ञा है। अब भीष्म ने वीर्य बढ़ानेवाली विशल्यकरणी नाम की श्रेष्ठ ओषधि दुर्योधन को दी। उसके सेवन से दुर्योधन के घाव अच्छे हो गये और पीड़ा जाती रही। १०

दूसरे दिन सबेरे व्यूह-रचना में निपुण भीष्म ने कई हज़ार रथों से घिरे हुए अस्त्र-शस्त्र-सम्पन्न मण्डल-व्यूह की रचना की। यह व्यूह हाथियों और घोड़ों से दुर्गम, असंख्य पैदल योद्धाओं से परिपूर्ण और ऋष्टि तोमर आदि शस्त्र धारण करनेवाले लोगों से चारों ओर सुरक्षित था। व्यूह इस क्रम से बनाया गया कि एक हाथी के साथ सात रथ थे, एक रथ के साथ सात घुड़सवार थे, एक घोड़े के साथ दस धनुर्द्धर वीर थे, और एक धनुर्द्धर के साथ सात पैदल थे। महावीर भीष्म इस तरह व्यूह बनाकर उसकी रक्षा करने लगे। दस हज़ार घोड़े, दस हज़ार हाथी, दस हज़ार रथ और चित्रसेन आदि पराक्रमी महारथी भी कवच आदि पहनकर भीष्म की रक्षा करने लगे। सभी महाबली राजा जब कवच आदि पहनकर तैयार हो गये तब राजा दुर्योधन कवच पहनकर रथ पर सवार हुए। उस समय वे स्वर्ग में स्थित इन्द्र के समान शोभायमान हुए। आपके पुत्र घोर सिंहनाद करने लगे। लगातार रथों की घरघराहट और बाजों का शब्द बढ़ने लगा। शत्रुओं के लिए अभेद्य, महावीर भीष्मरचित, कौरवों की सेना का मण्डलाकार व्यूह बहुत ही शोभित हुआ। उसका मुख पश्चिम की ओर था। २०

धर्मराज युधिष्ठिर ने मण्डल-व्यूह देखकर वज्र-व्यूह की रचना की। उनकी ओर के रथ, हाथी और घोड़े यथास्थान स्थित हो गये। योद्धा लोग सिंहनाद करने लगे। दोनों ओर के वीर पुरुष तरह-तरह के अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध करने और व्यूह तोड़ने के सङ्कल्प से आगे बढ़े। महावीर द्रोण मत्स्यराज से, अश्वत्थामा शिखण्डी से, महाराज दुर्योधन द्रुपद से, नकुल और सहदेव मद्रराज शल्य से तथा अवन्ति देश के विन्द और अनुविन्द इरावान् से द्वन्द्वयुद्ध करने लगे। अन्य राजा लोग मिलकर महावीर अर्जुन से भिड़ गये। महाबली भीमसेन ने बड़े यत्न के साथ वेग से हार्दिक्य पर आक्रमण किया। अभिमन्यु ने चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण पर आक्रमण किया। जैसे मदमत्त हाथी परस्पर भिड़ते हैं वैसे ही राक्षस घटोत्कच राजा भगदत्त से युद्ध करने लगा। उधर राक्षस अलम्बुष क्रोध से अधीर होकर वीरता का दावा रखनेवाले सात्यकि के सामने आया। भूरिश्रवा का धृष्टकेतु से, धर्मराज युधिष्ठिर का श्रुतायुष् से और चेकितान का कृपाचार्य से घोर युद्ध छिड़ गया। अन्यान्य वीरगण तत्परता के साथ भीमसेन के सामने उपस्थित हुए। उस समय हज़ारों क्षत्रिय राजा शक्ति, तोमर, नाराच, गदा, परिघ आदि शस्त्र लेकर चारों ओर से अर्जुन पर वार करने लगे। उनके बीच में घिर जाने पर, अत्यन्त क्रुद्ध होकर, महावीर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—हे श्रीकृष्ण! देखो, महानुभाव भीष्म ने दुर्योधन के लिए व्यूह-रचना की है; बहुत से वीर समर के लिए सामने खड़े हैं। भाइयों सहित त्रिगर्त देश के ३०

राजा भी युद्ध करने आये हैं। इस समय युद्ध की इच्छा से जो लोग मेरे सामने आये हैं, उनको मैं तुम्हारे सामने ही मार डालूँगा। अब धनुष की डोरी बजाकर वीर अर्जुन सब वीरों पर बाण-वर्षा करने लगे। वर्षाकाल में जैसे बादलों की जलधारा से तालाब भर जाते हैं, वैसे ही राजाओं के बाणजाल से श्रीकृष्ण और अर्जुन ढक गये। यह देखकर आपकी सेना अत्यन्त आनन्द कोलाहल करने लगी। ४० देवता, ऋषि, गन्धर्व और नाग-गण अत्यन्त विस्मित हुए।

तब अर्जुन ने क्रोध से अधीर होकर शत्रुसेना पर ऐन्द्र अस्त्र छोड़ा। हम लोग अर्जुन का अद्भुत पराक्रम देखने लगे। वे अपने अस्त्रों से शत्रुओं के अस्त्रों को रोककर सबको घायल करने लगे। कौरवों की सेना के हज़ारों राजाओं में ऐसा कोई न था जिसे दो, तीन या एक बाण से अर्जुन ने घायल न किया हो। उन्होंने अस्त्र के प्रभाव से सेनाभर के हाथियों, घोड़ों, रथों के सवारों और पैदलों को दो-दो तीन-तीन बाणों से घायल कर दिया। अर्जुन के बाणों से पीड़ित सब लोग रक्षा के लिए पितामह भीष्म के पास पहुँचे। अथाह सङ्कट-सागर में पड़े सैनिकों के लिए भीष्म पितामह उबारनेवाली नाव हुए। तूफ़ान उठने से महासागर की तरह, अर्जुन के प्रहारों ४६ से आप की सारी सेना क्षोभ को प्राप्त हो गई।

बयासी अध्याय

द्रोणाचार्य के हाथों विराट के पुत्र शंख का मारा जाना

सञ्जय ने कहा—महाराज, इस प्रकार युद्ध आरम्भ होने के बाद त्रिगर्तराज सुशर्मा युद्ध छोड़कर हट गये और सारी सेना भाग चली। अर्जुन के बाणों से कौरव-सेना जब घबरा गई तब भीष्म पितामह शीघ्रता के साथ अर्जुन को रोकने के लिए चले। भीष्म को अर्जुन के सामने जाते देखकर अर्जुन के पराक्रम से विस्मित दुर्योधन शीघ्रता के साथ सब राजाओं के पास

जाकर, महाबली सुशर्मा को प्रसन्न और उत्साहित करते हुए, कहने लगे—हे महानुभाव, ये जीवन का मोह न रखनेवाले कुरुश्रेष्ठ भीष्म पितामह अर्जुन के साथ संग्राम करने को अपनी सेना साथ लिये शत्रुसेना में जा रहे हैं। तुम लोग यत्नपूर्वक इनकी रक्षा करो। राजा लोग और उनकी सेना के योद्धा 'जो आज्ञा' कहकर पितामह भीष्म के पीछे-पीछे चले।

अर्जुन को आते देखकर पितामह उनके सामने आये। सफ़ेद घोड़ों से शोभित, वानर-चिह्नयुक्त ध्वजा से अलङ्कृत और महामेघ के समान शब्द के साथ चलनेवाले रथ पर चढ़े अर्जुन को आते देखकर आपके पक्ष के सैनिकगण डर के मारे आर्तनाद करने लगे। दोपहर के सूर्य के समान तेजस्वी श्रीकृष्ण, घोड़ों की रास हाथ में लिये, रथ पर विराजमान थे। उनकी ओर कोई आँख उठाकर देख नहीं सकता था। वैसे ही सफ़ेद घोड़ोंवाले रथ पर, सफ़ेद धनुष धारण किये, आकाश में स्थित श्वेत शुक्र ग्रह के समान भीष्म पितामह की ओर पाण्डव लोग भी अच्छी तरह देख नहीं सकते थे। त्रिगर्तदेश के राजा, राजपुत्र, राजा के भाई और अन्य महारथी लोग भीष्म के चारों ओर रहकर उनकी रक्षा कर रहे थे। १०
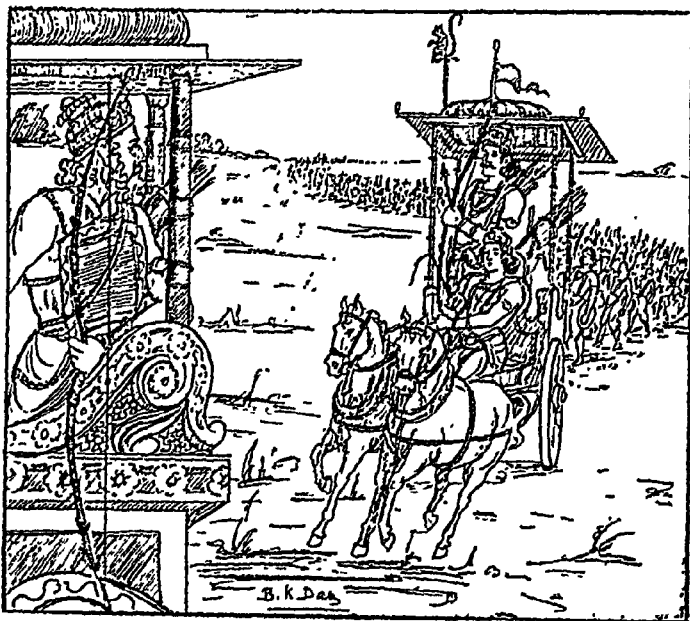
द्रोणाचार्य ने एक विकट बाण विराट के हृदय में मारकर कई बाणों से उनका धनुष और ध्वजा काट डाली। विराट ने उसी दम वह कटा हुआ धनुष फेंककर और एक बहुत ही दृढ़ धनुष हाथ में लिया। उस पर ज्वलित-मुख सर्प के समान बहुत से बाण चढ़ाकर उन्होंने तीन बाण द्रोण को मारे, चार बाणों से उनके घोड़े मार डाले, एक बाण से उनकी ध्वजा काट डाली, एक बाण से उनका धनुष काट डाला और पाँच बाणों से उनके सारथी को मार गिराया। द्रोणाचार्य ने भी क्रोध से अधीर होकर आठ बाणों से उनके घोड़े और सारथी को मार डाला। तब विराट अपने रथ से उतरकर कुँअर शङ्ख के रथ पर चढ़ गये और अपने कुमार के साथ उन्होंने द्रोणाचार्य के ऊपर इतने बाण बरसाये कि वे प्रहार नहीं कर सके। द्रोणाचार्य ने क्रोध करके शङ्ख को एक कठिन बाण मारा। वह बाण शङ्ख का हृदय फाड़कर, रक्त पीकर, रुधिररञ्जित हो पृथ्वी में २०

घुस गया। द्रोण के बाण से पीड़ित राजकुमार शङ्ख पिता के सामने पृथ्वी पर गिर पड़े। उनके हाथ से धनुष-बाण छूटकर गिर गया। विराट ने जब अपने पुत्र की मृत्यु देखी, तब वे मुँह फैलाये हुए काल के समान द्रोणाचार्य को छोड़कर भयभीत हो युद्ध से हट गये।

अब महारथी द्रोणाचार्य पाण्डवपक्ष की सेना का, सैकड़ों-हज़ारों की संख्या में, संहार करने लगे। शिखण्डी ने अश्वत्थामा के पास जाकर उनकी भौंहों के बीच में तीन बाण मारे। मस्तक में लगे हुए तीन बाणों से अश्वत्थामा तीन उन्नत शिखरों से शोभित सुवर्णमय सुमेरु पर्वत के समान जान पड़ने लगे। उन्होंने क्रुद्ध होकर शिखण्डी के सारथी, ध्वजा और घोड़े आदि को कई बाणों से नष्ट कर दिया। अब शिखण्डी रथ से उतरकर तीक्ष्ण तलवार और ढाल लेकर क्रोध-
३० पूर्वक बाज़ पक्षी की तरह झपटते हुए शत्रुसेना को नष्ट करने लगे। अश्वत्थामा को उन पर प्रहार करने का अवकाश ही न मिला। यह सबको बड़े आश्चर्य की बात जान पड़ी। इसके बाद वे क्रोध से अधीर होकर शिखण्डी के ऊपर हज़ारों बाण बरसाने लगे। बलशाली शिखण्डी ने तीक्ष्ण तलवार से उन दारुण बाणों को टुकड़े-टुकड़े कर डाला। तब अश्वत्थामा ने फुर्ती दिखाकर कई बाणों से शतचन्द्र-शोभित ढाल-तलवार और कवच काटकर शिखण्डी के शरीर को छिन्न भिन्न करना शुरू किया। शिखण्डी ने वह चमकीला खण्डित खड्ग अश्वत्थामा पर खींच-कर मारा; परन्तु अश्वत्थामा ने उस प्रलयकाल के अग्नि के समान चमकते हुए खड्ग को तत्काल काट डाला। फिर फुर्ती से शिखण्डी को कई बाण मारे। उन बाणों से शिखण्डी का शरीर छिन्न-भिन्न हो गया; वे जल्दी से सात्यकि के रथ पर चले गये।

इसके बाद सात्यकि ने क्रोधान्ध होकर क्रूरकर्मा राक्षस अलम्बुष को बहुत ही पैने बाण मारे। राक्षस अलम्बुष ने एक अर्धचन्द्र बाण से सात्यकि का धनुष काटकर वैसे ही अनेक बाणों
४० से उनको पीड़ित किया। उसने राक्षसी माया का आश्रय लेकर बाणवर्षा से अँधेरा-सा कर दिया। उस समय वीर सात्यकि ने अद्‌भुत पराक्रम दिखाया। वे उस माया और बाणवर्षा से तनिक भी नहीं घबराये। यशस्वी सात्यकि ने अर्जुन से प्राप्त ऐन्द्र-अस्त्र छोड़ा; उस अस्त्र के प्रभाव से सब माया दूर हो गई। वर्षाकाल का बादल जैसे पहाड़ पर पानी बरसाता है, वैसे ही सात्यकि भी राक्षस अलम्बुष पर बाणों की वर्षा करने लगे। उनके प्रहार से व्याकुल और भीत होकर राक्षस अलम्बुष दूसरी जगह चला गया। इन्द्र के लिए भी दुर्जय उस राक्षस को हराकर वीर सात्यकि सिंह की तरह गरजने लगे। कुरुपक्ष के वीर बाण-वर्षा से पीड़ित और भीत होकर युद्धभूमि से भाग खड़े हुए।

इसी समय महाबली धृष्टद्युम्न ने राजा दुर्योधन को विकट बाणों से विह्वल कर दिया;
५० किन्तु दुर्योधन ने भी फुर्ती के साथ धृष्टद्युम्न के मर्मस्थलों में नब्बे बाण मारे। तब सेनापति धृष्टद्युम्न ने क्रुद्ध होकर दुर्योधन का धनुष काट डाला, चारों घोड़ों को मार गिराया और उन्हें

तीक्ष्ण सात बाणों से पीड़ित किया। राजा दुर्योधन रथ से उतरकर, खड्ग लेकर, पैदल ही धृष्टद्युम्न की ओर दौड़े। महाबली शकुनि ने शीघ्रता से आकर दुर्योधन को अपने रथ पर चढ़ा लिया। शत्रुदमन धृष्टद्युम्न राजा दुर्योधन को हराकर उनकी सेना को नष्ट करने लगे।

मेघ जैसे सूर्य पर आक्रमण करें वैसे ही कृतवर्मा ने भीमकर्मा भीम पर आक्रमण करके उन्हें बाणों से ढक दिया। भीमसेन भी क्रोधपूर्वक हँसते हुए कृतवर्मा पर बाण बरसाने लगे; किन्तु वे उससे विचलित नहीं हुए। वे तीक्ष्ण बाणों से भीमसेन को व्यथित करने लगे। भीमसेन ने उनके चारों घोड़े मारकर ध्वजा काट डाली, सारथी को मार डाला और उन्हें भी अनेक बाणों से घायल किया। इस प्रकार व्यथित और घायल कृतवर्मा दुर्योधन के सामने ही, ६० बिना घोड़ों के रथ से उतरकर, अपने साले वृषक के रथ पर चले गये। भीमसेन क्रोध करके कौरव-सेना के पीछे दौड़कर दण्डपाणि यमराज की तरह उसे नष्ट करने लगे। ६२

तिरासी अध्याय

द्वन्द्व-युद्ध का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, मैंने तुम्हारे मुँह से अपने पक्ष के बहुत से वीरों के साथ पाण्डवपक्ष के वीरों के द्वन्द्वयुद्ध का हाल सुना। तुम तो नित्य पाण्डवों को ही प्रसन्न और विजयी बतलाते हो; मेरी ओर के किसी वीर की विजय-वार्ता, प्रसन्नता या प्रशंसा नहीं सुनाते। तुम जो युद्ध में मेरे पुत्रों और वीरों को सदा परास्त, उदास और पराक्रम-हीन बताते हो, सो इसका कारण दैव ही है, इसमें सन्देह नहीं।

सञ्जय ने कहा—राजन्, हमारे सभी योद्धा श्रेष्ठ हैं। वे यथाशक्ति समय-समय पर पौरुष दिखाने में कुछ कसर नहीं रखते। किन्तु जैसे खारी समुद्र से मिलने पर गङ्गा आदि महानदियों का मीठा जल खारी हो जाता है, वैसे ही हमारे पक्ष के वीरों का पराक्रम पाण्डवों के सामने निष्फल हो जाता है। आपके पक्ष के वीर भरसक दुष्कर कर्म करके जय की चेष्टा करते हैं, इसलिए आप उनको दोष न दीजिए। महाराज, आपके ही दोष से यह लोकनाशक संग्राम छिड़ा है। आप अपने ही दोष पर इस तरह शोक न करें। पुण्यात्माओं के लोकों को पाने की इच्छा से क्षत्रियगण युद्ध में जीवन का मोह छोड़कर लड़ते हैं; नित्य स्वर्ग की इच्छा से शत्रुसेना में घुसकर वे आगे ही बढ़कर वार करते हैं। दिन के पूर्व १० भाग में देवासुर-संग्राम के समान जो भयानक युद्ध हुआ उसका ब्योरा आप मन लगाकर सुनिए। उस युद्ध में असंख्य योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए।

राजन्, अवन्ती देश के राजा रणदुर्मद महाधनुर्धर विन्द और अनुविन्द इरावान् को देख-कर उनके सामने आये। वे वीर घोर युद्ध करने लगे। इरावान् ने कुपित होकर उन देवरूपी दोनों भाइयों को तीक्ष्ण बाणों से घायल किया। चित्र-युद्ध में निपुण उन दोनों भाइयों ने भी इरावान् को अनेक बाण मार-कर घायल कर डाला। शत्रु-वध की इच्छा से यत्नपूर्वक उन लोगों ने ऐसा युद्ध किया कि देखनेवाले दङ्ग रह गये। जो काम एक वीर करता था वही, उसके जवाब में, दूसरा भी करता था। किसी के परा-क्रम में कुछ भी विशेषता नहीं देख पड़ती थी। युधामन्यु ने चार बाणों से अनुविन्द के

चारों घोड़े मारकर दो भल्ल बाणों से उनका ध्वज और धनुष काट डाला। यह अद्भुत कर्म जान पड़ा। तब अनुविन्द अपना रथ छोड़कर विन्द के रथ पर चले गये। उन्होंने दूसरा दृढ़ धनुष हाथ में लिया। एक ही रथ पर स्थित दोनों भाई वीर इरावान् के ऊपर शीघ्रगामी और तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। उनके चलाये हुए सुवर्णभूषित बाणों ने आकाश में जाकर सूर्यमण्डल को छिपा लिया। इरावान् ने भी कुपित होकर उन दोनों भाइयों पर बाण बरसाये और उनके सारथी को मार डाला। जब सारथी मर गया तब घोड़े रथ को लेकर इधर-उधर भागने लगे। उन दोनों भाइयों को विमुख करके इरावान् अपना पौरुष दिखाते हुए आपकी सेना को नष्ट करने लगे। युधामन्यु के प्रहारों से पीड़ित होकर दुर्योधन की महासेना, विष पिये हुए मनुष्य की तरह, उद्भ्रान्त होकर इधर-उधर फिरने लगी।

२०

इधर महापराक्रमी घटोत्कच सूर्यवर्ण ध्वजा से शोभित रथ पर बैठकर भगदत्त से लड़ने के लिए दौड़ा। जैसे पहले तारकामय-युद्ध में वज्रपाणि इन्द्र ऐरावत पर चढ़कर शोभित हुए थे, वैसे ही भगदत्त गजराज पर चढ़कर घटोत्कच के सामने आये। समर देखने आये हुए देव-ताओं, गन्धर्वों और ऋषियों ने देखा कि घटोत्कच और भगदत्त में कोई किसी से कम पराक्रम नहीं प्रकट कर रहा था। जैसे इन्द्र ने दानवों को भयभीत कर दिया था वैसे ही राजा भगदत्त
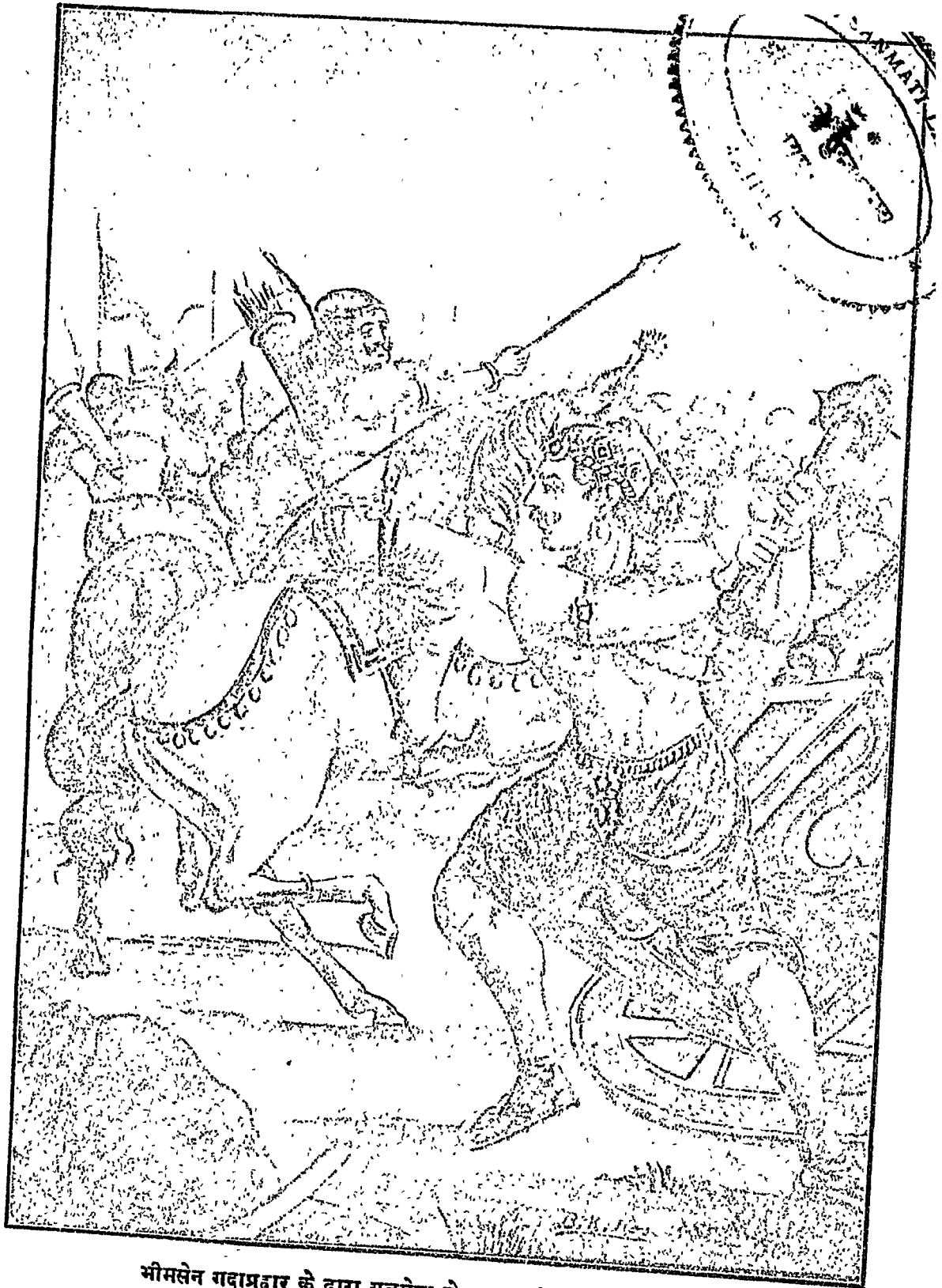
भीमसेन गदाप्रहार के द्वारा गजसेना को नष्ट करते हुए गये थे। २०४७

दानवराज नमुचि जैसे युद्ध से भाग खड़ा हुआ था वैसे ही शक्ति को व्यर्थ देखकर घटोत्कच डर के मारे भाग खड़ा हुआ। २०६३

ने पाण्डवसेना को भयभीत करके खदेड़ दिया। पाण्डवों की सेना इस तरह डरकर, अपनी रक्षा करनेवाला कोई न देख, भागने लगी। राजन्, उस समय हमने भगदत्त के सामने केवल घटोत्कच को ही देख पाया। बाक़ी महारथी उत्साहहीन होकर भाग खड़े हुए थे। पाण्डवों की ३० सेना घटोत्कच को देखकर फिर लौट पड़ी। आपकी सेना में घोर कोलाहल मच गया। पर्वत के ऊपर बरस रहे मेघ की तरह घटोत्कच भगदत्त के ऊपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगा। भगदत्त ने घटोत्कच के बाणों को काटकर उसके मर्मस्थल में कई बाण मारे। जैसे तोड़े जाने पर भी पर्वत विचलित नहीं होता वैसे ही घटोत्कच अनेक बाणों की चोट खाकर भी विचलित नहीं हुआ। भगदत्त ने क्रुद्ध होकर घटोत्कच को चौदह तोमर मारे। उसने बात की बात में उन तोमरों को काट डाला और कङ्कपत्रयुक्त सत्तर बाण भगदत्त को मारे। उन्होंने हँसते-हँसते बाणों से घटोत्कच के चारों घोड़ों को मार डाला। बिना घोड़ों के रथ पर से घटोत्कच ने भगदत्त के हाथी को एक दारुण शक्ति मारी। भगदत्त ने उस सुवर्ण-दण्ड-शोभित शक्ति को आते देखकर उसके तीन टुकड़े कर डाले। वह शक्ति कट-कुटकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। पहले दानवराज नमुचि जैसे युद्ध से भाग खड़ा हुआ था वैसे ही शक्ति को व्यर्थ देखकर घटोत्कच डर के मारे भाग खड़ा हुआ। दुर्जय महाबली घटोत्कच को ४० हराकर, जङ्गली हाथी जैसे कमलवन को रौंदता फिरे वैसे ही, भगदत्त हाथी से और बाण-प्रहार से पाण्डवसेना को नष्ट करते हुए विचरने लगे।

महाराज, इधर मद्रराज शल्य अपने भानजे नकुल-सहदेव से युद्ध करने लगे। उन्होंने बाणवर्षा करके उनको ढक दिया। मामा शल्य को युद्ध करते देखकर सहदेव ने अपने बाणों से वैसे ही उन्हें छा लिया जैसे बादल सूर्य को छिपा लेते हैं। बाणजाल में छिपे हुए शल्य अपने भानजों का पराक्रम देखकर बहुत प्रसन्न हुए, और माता के सम्बन्ध का ख़याल करके नकुल-सहदेव को भी हर्ष हुआ। फिर महारथी शल्य ने हँसकर नकुल के रथ के चारों घोड़ों को मार डाला। महारथी नकुल उस बिना घोड़ों के रथ से कूदकर सहदेव के रथ पर चले गये। तब वे दोनों भाई एक ही रथ पर सवार होकर, धनुष चढ़ाकर, क्रोधपूर्वक शल्य के रथ पर असंख्य बाण बरसाने लगे। भानजों के बाणों से आच्छन्न होकर भी पुरुषसिंह शल्य पर्वत की तरह अटल खड़े रहे और हँस-हँसकर उन बाणों को काटने लगे। सहदेव ने क्रुद्ध ५० होकर एक चमकीला उग्र बाण निकालकर शल्य की छाती में मारा। वह तीक्ष्ण बाण शल्य का हृदय फाड़कर पृथ्वीतल में घुस गया। उस प्रहार से बहुत घायल और व्यथित होने के कारण शल्य मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उनका सारथी उनके रथ को समरभूमि से ले भागा। हे भारत, आपके पक्ष की सेना इस तरह शल्य को समर से हटते देखकर समझी कि अब शल्य जीवित नहीं हैं। महारथी नकुल-सहदेव इस तरह मामा को युद्ध में हराकर प्रसन्नता-

पूर्वक शङ्खध्वनि और सिंहनाद करने लगे। राजन्, जैसे इन्द्र और उपेन्द्र ने दैत्य-सेना को
५७ भगा दिया था वैसे ही नकुल-सहदेव आपकी सेना को नष्ट करने लगे।

चौरासी अध्याय

युधिष्ठिर आदि के युद्ध का वर्णन

सञ्जय ने कहा—महाराज! सूर्यदेव जब आकाश के बीच में आये, दोपहरी हो गई, तब धर्मराज युधिष्ठिर श्रुतायुष् के पास अपना रथ ले गये। युधिष्ठिर ने श्रुतायुष् को नव बाण मारे। उन बाणों से बचकर श्रुतायुष् ने सात बाण युधिष्ठिर को मारे। वे बाण कवच तोड़कर युधिष्ठिर के शरीर में घुसकर उनका रक्त पीने लगे। ऐसा जान पड़ा, मानों वे उनके प्राणों को खोज रहे हैं। धर्मराज ने श्रुतायुष् के प्रहार से व्यथित होकर एक वराहकर्ण बाण उनके हृदय में मारा, और एक भल्ल बाण से उनकी ध्वजा काटकर गिरा दी। श्रुतायुष् ने फिर युधिष्ठिर को बहुत तीक्ष्ण सात बाण मारे। युगान्तकाल में अग्नि जैसे प्राणियों को जलाने के लिए प्रज्वलित हो उठता है वैसे ही राजा युधिष्ठिर क्रोध की आग से जल उठे। उनको कुपित देखकर प्रलय की आशङ्का से देवता, गन्धर्व, राक्षस आदि उद्विग्न हो उठे; सारा जगत् व्याकुल हो गया। सबने यही
१० समझा कि आज़ राजा युधिष्ठिर कुपित होकर तीनों लोकों को भस्म कर डालेंगे। सब लोकों की कल्याण-कामना और युधिष्ठिर के कोप की शान्ति के लिए देवता और ऋषि-मुनि स्वस्त्ययन-पाठ करने लगे। धार्मिक-श्रेष्ठ युधिष्ठिर प्रलयकाल के सूर्य की सी भयङ्कर मूर्ति धारण करके, क्रोध से आँखें लाल करके, ओंठ चबाने लगे। यह देखकर कौरवपक्षवालों ने जीवन की आशा छोड़ दी। किन्तु इसके उपरान्त धर्मराज युधिष्ठिर ने धैर्य का आश्रय लेकर क्रोध को शान्त किया। उन्होंने श्रुतायुष् का धनुष काट डाला, सारथी और घोड़ों को मार डाला और सब सेना के सामने उनकी छाती में एक नाराच बाण मारा। युधिष्ठिर का ऐसा पौरुष देखकर रथ से उतरकर श्रुतायुष् भाग खड़े हुए। उनकी यह दशा देखकर राजा दुर्योधन की सेना शीघ्रता के साथ इधर-उधर भागने लगी। मुँह फैलाये हुए काल के समान युधिष्ठिर को आते देखकर सेना भागी और वे चुन-चुनकर प्रधान वीरों को मारने लगे।

उधर यादवश्रेष्ठ महारथी चेकितान अपनी सेना-सहित कृपाचार्य से युद्ध करने लगे।
२० उन्होंने कृपाचार्य के ऊपर असंख्य बाण बरसाये। कृपाचार्य ने भी उन बाणों को काटकर अपने बाणों से चेकितान को घायल कर दिया। वीर कृपाचार्य ने एक भल्ल बाण से चेकितान का धनुष काट डाला, दूसरे से सारथी को मार डाला और अन्य बाणों से उनके घोड़ों को और

पार्श्वरक्षक तथा सारथी को मार डाला। तब चेकितान ने फुर्ती के साथ रथ पर से उतरकर, वीर-घातिनी गदा लेकर, कृपाचार्य के घोड़ों सहित रथ और सारथी को चूर कर दिया। अब कृपाचार्य ने पृथ्वी पर खड़े-खड़े सोलह बाण चेकितान को मारे। वे बाण चेकितान के शरीर को भेदते हुए पृथ्वी में घुस गये। इन्द्र जैसे वृत्रासुर को मारने के लिए उद्यत हुए थे वैसे चेकितान ने क्रोधपूर्वक कृपाचार्य को मारने के लिए गदा चलाई। कृपाचार्य ने कई हज़ार बाण मारकर उस भारी गदा को निष्फल कर दिया। तब क्रोध करके चेकितान ने म्यान से तलवार निकाल ली, और वे कृपाचार्य की ओर झपटे। कृपाचार्य भी धनुष छोड़कर गदा हाथ में लेकर यत्नपूर्वक बड़े वेग से चेकितान की ओर दौड़े। दोनों वीर परस्पर पैतरे बदलकर खड्गयुद्ध करने लगे। अन्त को लड़ते-लड़ते थककर

प्रहारों से घायल और अचेत होकर, दोनों ही पृथ्वी पर गिर पड़े। युद्धप्रिय भीमसेन अपने मित्र चेकितान की यह दशा देखकर सब सेना के आगे ही उन्हें अपने रथ पर उठा ले गये। उधर आपके साले शूर शकुनि ने भी श्रेष्ठ रथी कृपाचार्य को अपने रथ पर बिठा लिया। ३१

अब महावीर धृष्टकेतु ने क्रुद्ध होकर भूरिश्रवा के हृदय में नब्बे उग्र बाण मारे। जैसे दोपहर के समय सूर्य का मण्डल अपनी तेज़ किरणों से शोभा को प्राप्त होता है वैसे ही भूरिश्रवा की, धृष्टकेतु के बाण लगने से, अपूर्व शोभा हुई। इसके बाद बहुत से बाण बरसाकर उन्होंने धृष्टकेतु के सारथी और घोड़ों को मार डाला तथा रथ को तोड़ डाला। फिर असंख्य बाणों से उन्हें भी छिपा दिया। धृष्टकेतु वह रथ छोड़कर शतानीक के रथ पर सवार हुए। सोने का कवच पहने हुए रथी चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण, अभिमन्यु से युद्ध करने लगे। जैसे शरीर में वात, पित्त और कफ का परस्पर युद्ध हो वैसे ही ये तीनों वीर अभिमन्यु से लड़ने लगे। अभिमन्यु ने उनके रथ तो नष्ट कर दिये, किन्तु भीमसेन की प्रतिज्ञा का स्मरण करके उन्हें जान से नहीं मारा। ४०

इसी समय अलौकिक तेजस्वी भीष्म पितामह, राजा दुर्योधन आदि सब वीरों की रक्षा के लिए, बालक अभिमन्यु से लड़ने चले। यह देखकर अर्जुन ने कहा—हे श्रीकृष्ण, जहाँ पर वे

बहुत से रथ हैं वहीं पर शीघ्र मेरा रथ ले चलो। वह देखो, युद्धचतुर सब वीर पुरुष मेरी सेना को मार रहे हैं। तब कृष्ण भगवान् सफ़ेद घोड़ों से शोभित रथ को उधर ही ले चले। क्रुद्ध होकर महावीर अर्जुन कौरवों का सामना करने पहुँच गये। उन्हें आते देखकर कौरव पक्ष के वीरगण घोर भयसूचक शब्द से चीत्कार करने लगे। भीष्म पितामह के बाहुबल से सुरक्षित राजाओं के पास पहुँचकर अर्जुन ने सुशर्मा से कहा—सुशर्मा, तुम मेरे पहले के शत्रु और इस
५० संग्राम में एक प्रधान योद्धा हो। आज तुम अपनी दुर्नीति का फल भोगोगे। मैं तुमको मृत पुरखों से मिलने के लिए यमराज के यहाँ भेज दूँगा। ये कठोर वचन सुनकर सुशर्मा ने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने आगे-पीछे और आसपास स्थित राजमण्डली के साथ सम्मुख जाकर, धनुष चढ़ाकर, तीक्ष्ण बाणों से—मेघ से सूर्य के समान—अर्जुन को आच्छन्न कर
५५ दिया। इसी तरह कौरवों और पाण्डवों का परस्पर युद्ध होने लगा।

पचासी अध्याय

युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—राजन्, राजाओं के बाणों से अत्यन्त पीड़ित अर्जुन छेड़े हुए साँप की तरह लम्बी साँसें लेते हुए अद्भुत कर्म करने लगे। उन्होंने सभी महारथियों के बाण काटने के बाद बलपूर्वक सबके धनुष काट डाले। उन सबको एकदम नष्ट कर डालने के लिए एक साथ अर्जुन ने सबको बाण मारे। इससे उन सबके कवच कट गये, वे घायल हो गये और उन घावों से रक्त बहने लगा। अनेकों के सिर कट गये। उनकी लाशें पृथ्वी पर गिरने लगीं। राजकुमारों की मृत्यु देखकर सुशर्मा खुद अर्जुन के सामने पहुँचे। उनके पृष्ठरक्षक बत्तीस योद्धा अर्जुन के पास पहुँचकर, उन्हें घेरकर, धनुष चढ़ाकर पर्वत पर मेघों की जलवर्षा की तरह उन पर बाण बरसाने लगे। उन बाणों से व्यथा और क्षोभ को प्राप्त होकर क्रुद्ध अर्जुन ने तीक्ष्ण साठ बाणों से उन्हें मार डाला। प्रसन्नचित्त यशस्वी मनस्वी अर्जुन इस तरह सब रथियों को जीतकर और बहुत सी सेना को मारकर भीष्म को मारने के लिए शीघ्रता के साथ आगे बढ़े। त्रिगर्तराज सुशर्मा अपने भाइयों और भाई-बन्धुओं की मृत्यु देखकर, अपने साथी अन्य राजाओं को साथ लेकर, अर्जुन को मारने की इच्छा से उनकी ओर चले। सुशर्मा आदि को श्रेष्ठ अस्त्रधारी अर्जुन का पीछा करते देखकर उनके रथ की रक्षा के लिए शिखण्डी आदि वीरगण अस्त्र-शस्त्र लेकर चले। सुशर्मा आदि को, अपनी ओर आते देखकर, अर्जुन ने गाण्डीव धनुष चढ़ाकर तीक्ष्ण बाण बरसाकर भगा दिया। फिर वे भीष्म से लड़ने चले। राह में उन्हें रोकने के लिए दुर्योधन और
११ जयद्रथ आदि राजा आते देख पड़े। वीर अर्जुन दमभर बलपूर्वक उनसे युद्ध करके, उन्हें पीछे

छोड़कर, भीष्म के सामने जाने के लिए आगे बढ़े। उधर प्रबल राजा युधिष्ठिर भी कुपित होकर शल्य से लड़ना छोड़ नकुल, सहदेव और भीमसेन के साथ भीष्म से लड़ने के लिए आ गये। शल्य को मारना युधिष्ठिर के ही हिस्से में था, पर उस समय शल्य को छोड़कर वे अर्जुन की सहायता के लिए भीष्म के सामने आ गये। श्रेष्ठ महारथी पाँचों पाण्डव मिलकर एक साथ भीष्म से लड़ने आये; किन्तु चित्रयुद्ध में निपुण भीष्म तनिक भी व्यथित नहीं हुए।

इतने में सत्यसन्ध पराक्रमी राजा जयद्रथ ने वहाँ आकर, श्रेष्ठ धनुप से कई बाण चलाकर, सब पाण्डवों के धनुप काट डाले। क्रोध से अधीर वीर दुर्योधन ने अग्नि के समान बहुत से बाण युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव और वासुदेव को मारे। दानव जैसे देवताओं के ऊपर प्रहार करें वैसे कृपाचार्य, शल्य, शल और चित्रसेन आदि ने भी श्रीकृष्ण और पाण्डवों को चारों ओर से तीक्ष्ण बाण मारे। पाण्डव और श्रीकृष्ण क्रोध से अधीर हो उठे। भीष्म ने शिखण्डी का धनुप काट डाला, इससे डरकर वे रणभूमि से हटने लगे। उस समय कुपित

होकर युधिष्ठिर ने शिखण्डी से कहा—हे वीर, तुम अपने पिता के आगे मुझसे यह प्रतिज्ञा कर चुके हो कि "मैं सूर्यवर्ण तीक्ष्ण बाणों से भीष्म पितामह को मारूँगा। यह मैं सत्य कहता हूँ।" २० फिर इस समय युद्ध में अपनी प्रतिज्ञा क्यों नहीं पूरी करते? देवव्रत को क्यों नहीं मारते? झूठी प्रतिज्ञा करनेवाले मत बनो। प्रतिज्ञा, धर्म, कुलकीर्ति और अपने यश की रक्षा करो। देखो, काल जैसे क्षण भर में जगत् का संहार करता है वैसे ही भयानक वेग से तीक्ष्ण बाण बरसाकर पितामह मेरी सेना का संहार कर रहे हैं। इस समय धनुप कट जाने पर समर से हटकर, भीष्म से हारकर, बन्धुओं और भाइयों को छोड़कर तुम कहाँ जा रहे हो? यह काम तुम्हारे योग्य नहीं है। हे द्रुपदपुत्र, तुम अनन्तपराक्रमी भीष्म का पराक्रम और अपनी सेना का भागना देखकर डर गये हो। तुम्हारा चेहरा उदास देख पड़ता है। वीर युद्ध छिड़ा हुआ है, अर्जुन कहाँ पीछे हैं। ऐसे समय प्रसिद्ध वीर होकर तुम भीष्म से क्यों डर रहे हो?

धर्मराज के ऐसे रूखे और तिरस्कार-पूर्ण वचन सुनकर वीर शिखण्डी भीष्म-वध के लिए, पूरी शक्ति लगाकर, चेष्टा करने लगे। शिखण्डी बड़े वेग के साथ भीष्म पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। उधर शल्य ने दुर्जेय अमोघ अस्त्र का प्रयोग करके उन्हें बीच में ही रोक लिया। प्रलयकाल की आग के समान प्रकाशपूर्ण अस्त्र को देखकर इन्द्रतुल्य पराक्रमी शिखण्डी तनिक भी विचलित नहीं हुए। शिखण्डी ने वहीं खड़े रहकर अनेक बाणों से उस अस्त्र को व्यर्थ कर दिया। उन्होंने शल्य के अस्त्र को व्यर्थ करने के लिए वारुण-अस्त्र का प्रयोग किया। आकाश में स्थित देवगण और पृथ्वी पर राजा लोग वह अस्त्र के द्वारा अस्त्र का रोका जाना देखने लगे। उधर पितामह भीष्म ने राजा युधिष्ठिर का धनुष और विचित्र ध्वजा ३० काटकर सिंहनाद किया। भीमसेन ने जब युधिष्ठिर को भयपीड़ित देखा तब वे धनुष-बाण छोड़कर, गदा हाथ में लेकर, पैदल ही जयद्रथ के ऊपर झपटे। गदा लिये भीमसेन को झपटकर आते देखकर जयद्रथ ने यमदण्ड-तुल्य तीक्ष्ण पाँच सौ बाण मारे। उन बाणों का कुछ ख़याल न करके कुपित भीमसेन ने जयद्रथ के बढ़िया घोड़ों को गदा से मार डाला। तब इन्द्रतुल्य राजकुमार चित्रसेन भीमसेन को मारने के लिए शस्त्र उठाकर वेग से दौड़े। भीमसेन भी एकाएक सिंहनाद करके गदा घुमाते हुए चित्रसेन पर झपटे। कौरवपक्ष के वीर उस यम-दण्डतुल्य गदा को देखकर उसके उग्र प्रहार से बचने के लिए, आपके पुत्र चित्रसेन को छोड़कर, भाग खड़े हुए। वह गदा गिरने के पहले ही चित्रसेन ढाल-तलवार लेकर, पर्वत-शिखर से कूदते हुए सिंह की तरह, निर्भय भाव से रथ से कूद पड़े। महाराज, दुर्योधन आदि वीरगण चित्रसेन की इस विचित्र चातुरी को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। वे सिंहनाद करने और आपके पुत्र की शूरता को सराहने लगे। वह गदा उस विचित्र रथ पर गिरकर घोड़े, सारथी और रथ को चूर-चूर ४० करके, आकाश से गिरी हुई भारी उल्का की तरह, वेग से पृथ्वी में धँस गई।

छियासी अध्याय

सातवें दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय ने कहा—महाराज! आपके पुत्र विकर्ण ने मनस्वी चित्रसेन का रथ टूटा देखकर, शीघ्र वहाँ जाकर, उन्हें अपने रथ पर बिठा लिया। उस भयानक संग्राम में भीष्म शीघ्रता-पूर्वक युधिष्ठिर की ओर बढ़े। यह देखकर सृञ्जयगण और उनके वाहन हाथी, घोड़े आदि डर से काँप उठे। उन्होंने समझ लिया कि युधिष्ठिर मृत्यु के मुख में पड़ गये। तब नकुल और सहदेव के साथ स्वयं धर्मराज युधिष्ठिर महाधनुर्द्धर नरश्रेष्ठ भीष्म के सामने जाकर बाण
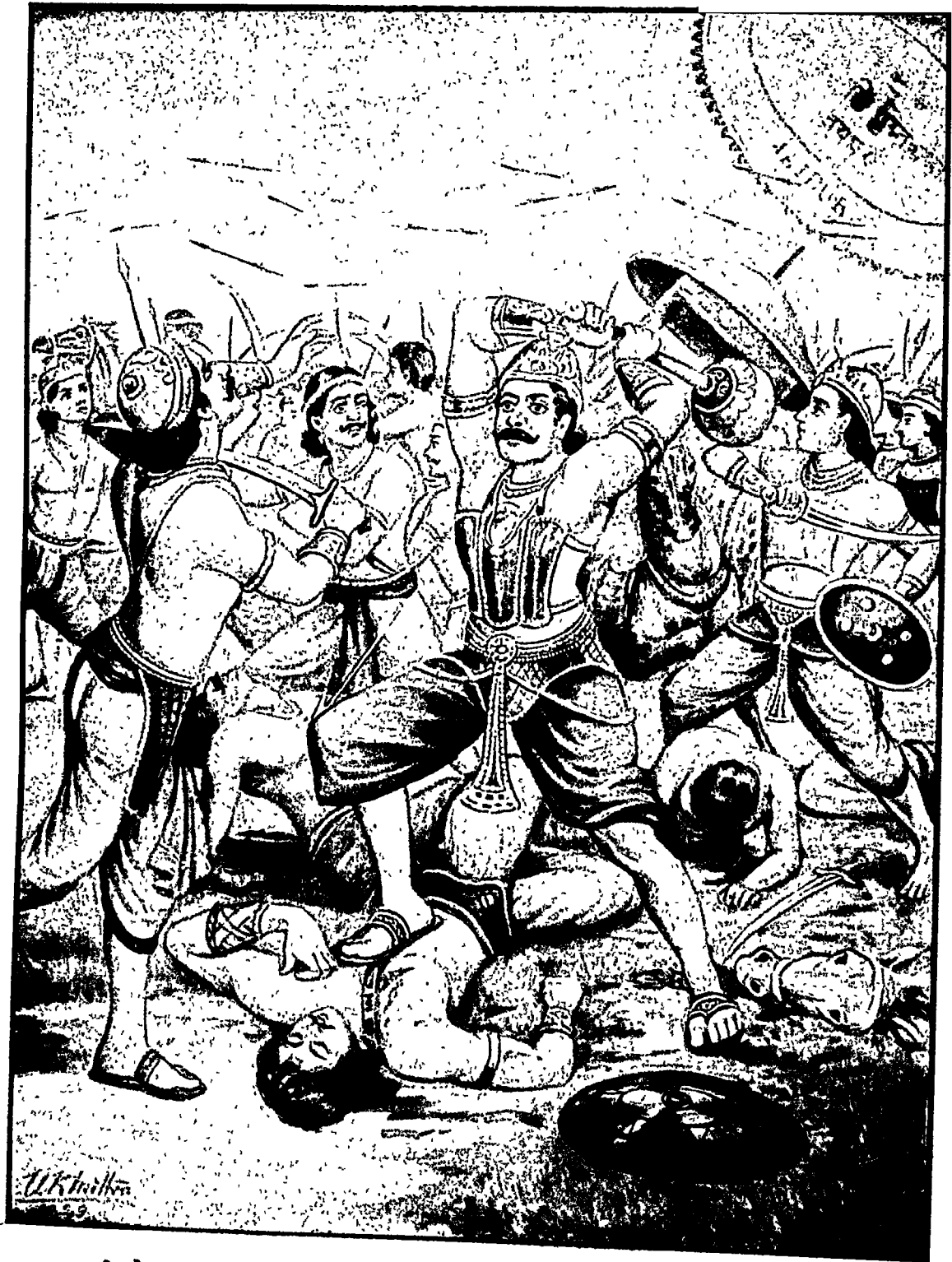
भीमसेन भी एकाएक सिंहनाद करके गदा घुमाते हुए चित्रसेन पर झपटे। पृ० २०६८

बरसाने लगे। उनके बाणजाल से भीष्म का रथ वैसे ही छिप गया जैसे घनघटा से सूर्य का बिम्ब छिप जाता है। भीष्म ने युधिष्ठिर आदि के उन असंख्य बाणों का कुछ ख़याल नहीं किया। वे युधिष्ठिर आदि पर असंख्य बाण छोड़ने लगे। वे बाण आकाश में उड़ते हुए पक्षियों के झुण्डों की तरह जान पड़ते थे। भीष्म ने पल भर में युधिष्ठिर को बाणों से अदृश्य सा कर दिया।

तब राजा युधिष्ठिर ने क्रोध से अधीर होकर भीष्म को विषैले साँप के समान एक नाराच बाण मारा। महारथी भीष्म ने युधिष्ठिर के उस कालतुल्य बाण को राह में ही काट डाला; १० और उनके सुवर्णभूषणभूषित घोड़ों को भी मार डाला। अब धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर फुर्ती से वह रथ छोड़कर नकुल के रथ पर चढ़ गये। शत्रुनाशन भीष्म क्रोध से विह्वल होकर, नकुल-सहदेव के आगे जाकर, उन पर बाणवर्षा करने लगे। नकुल और सहदेव को भीष्म के बाणों से अत्यन्त पीड़ित देखकर राजा युधिष्ठिर, पितामह के वध के लिए, अत्यन्त चिन्तित हो उठे। उन्होंने अपने पक्ष के मित्र राजाओं को आज्ञा दी कि सब लोग मिलकर पितामह को मार डालो।

यह आज्ञा पाकर सब राजाओं ने असंख्य रथों के द्वारा चारों ओर से भीष्म को घेर लिया। महावीर भीष्म अत्यन्त क्रुद्ध होकर, मण्डलाकार धनुष घुमाकर, बाण बरसाते और पाण्डवपक्ष के वीरों को मार-मारकर गिराते हुए विचरने लगे। उस समय पाण्डवसेना के वीर योद्धा लोग भीष्म को मृगों के बीच सिंह के समान देखकर डर से अचेत-से हो गये। मृगों को सिंह के समान पाण्डव-सेना को मारते और डराते हुए भीष्म पितामह सिंहनाद करने लगे। उनके तर्जन-गर्जन से शत्रुसेना भागने लगी। क्षत्रियों ने देखा कि सूखी घास के ढेर को या वन को हवा की सहायता से प्रचण्ड आग जैसे जलाती है वैसे ही भीष्म पितामह सेना को नष्ट करते हुए फिर रहे हैं। सुनिपुण पुरुष जैसे ताड़ के पके फलों को पेड़ से तोड़-तोड़कर गिराता है, वैसे ही भीष्म २० रथियों के सिरों को अपने बाणों से काट-काटकर गिरा रहे थे। भीष्म के बाणों से कटे वीरों के सिर पृथ्वी पर, शिलापात के समान, शब्द के साथ गिर रहे थे।

राजन्, इस तरह वह युद्ध क्रमशः अत्यन्त घोर हो उठा। सैनिक लोग इधर-उधर हट गये और व्यूह-रचना नष्ट हो गई। हर एक वीर दूसरे वीर को बुला-बुलाकर उससे युद्ध करने लगा। द्रुपद के पुत्र शिखण्डी भीष्म से "ठहरो-ठहरो" कहकर उनकी ओर दौड़े। महावीर भीष्म शिखण्डी के स्त्रीभाव का ख़याल करके उन्हें छोड़कर सृञ्जयगण की ओर युद्ध करने चले गये। सृञ्जयगण प्रसन्नतापूर्वक शङ्खनाद और सिंहनाद करने लगे। उस समय सूर्यदेव पश्चिम दिशा में पहुँच चुके थे। प्राणों की ममता छोड़कर कौरव और पाण्डव दारुण युद्ध करने लगे। महाबली धृष्टद्युम्न और पराक्रमी सात्यकि असंख्य तोमर, शक्ति, बाण आदि शस्त्रों से कौरवपक्ष की सेना को पीड़ित करने लगे। उनके बाणों से अत्यन्त व्यथित होने पर भी सैनिक लोग बहादुरी के
३० साथ लड़ते रहे। वीरगण और भी उत्साह के साथ शत्रुओं की सेना का संहार करने लगे।

धृष्टद्युम्न के बाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर बहुत से सैनिक ऊँचे स्वर से चिल्लाने लगे। उनका घोर चीत्कार सुनकर अवन्ति देश के राजा विन्द और अनुविन्द धृष्टद्युम्न के पास पहुँचे। उन्होंने धृष्टद्युम्न के घोड़े मारकर उनको भी बाणों से छिपा दिया। धृष्टद्युम्न शीघ्रता के साथ बिना घोड़ों के रथ से उतरकर सात्यकि के रथ पर चले गये। धर्मराज युधिष्ठिर क्रुद्ध होकर, बहुत सी सेना साथ लेकर, विन्द और अनुविन्द के सामने आये। यह देखकर राजा दुर्योधन भी बहुत सी सेना साथ ले विन्द और अनुविन्द की रक्षा के लिए उनके पास पहुँचे।

इधर पराक्रमी अर्जुन, क्रुद्ध होकर, दानवों को मारने के लिए उद्यत इन्द्र की तरह कौरवसेना का संहार करने लगे। दुर्योधन का हित चाहनेवाले द्रोणाचार्य भी क्रुद्ध होकर, आग जैसे रुई के ढेर को जलाती है वैसे, पाञ्चालसेना को नष्ट करने लगे। दुर्योधन आदि
४० आपके पुत्र, भीष्म के आसपास रहकर, पाण्डवों से युद्ध करने लगे।

सूर्य भगवान् क्रमशः लाल रङ्ग के होकर जब अस्ताचल पर पहुँच गये तब दुर्योधन ने अपने पक्ष की सेना से कहा—तुम लोग शीघ्रता के साथ शत्रुसेना का संहार करो। यह आज्ञा सुनकर सब योद्धा लोग युद्धभूमि में असाधारण पराक्रम दिखाते हुए दुष्कर काम करने लगे। उस समय रणभूमि में भयङ्कर रक्त की नदी बह चली। अत्यन्त भयानक शब्द करते हुए सियारों के झुण्ड उसके किनारे विचरने लगे। राक्षस, पिशाच आदि मांसाहारी जीव चारों ओर दिखाई पड़ने लगे। इस तरह वह रणभूमि सैकड़ों-हज़ारों भूतों से परिपूर्ण होकर अत्यन्त भयानक हो उठी।

सन्ध्या होने पर असंख्य सेना सहित सुशर्मा आदि राजाओं को हराकर पराक्रमी अर्जुन अपने शिविर को लौटे। नकुल, सहदेव और असंख्य सेना को साथ लेकर युधिष्ठिर भी शिविर में लौट आये। भीमसेन भी राजा दुर्योधन आदि प्रधान रथियों को हराकर अपने शिविर को लौटे। भीष्म पितामह के साथ महारथी लोग और दुर्योधन आदि अपने शिविर को लौट पड़े।

द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, शल्य और कृतवर्मा भी सैनिकों के साथ अपने डेरों को लौटे। ५०
सात्यकि और धृष्टद्युम्न भी योद्धाओं के साथ अपने शिविरों में गये। इस प्रकार कौरव और पाण्डव पक्ष के वीर रात्रि के समय लौट गये। अपने-अपने डेरे में जाकर उन्होंने परस्पर यथोचित सत्कार दिखलाया तथा रक्षा का प्रबन्ध, गुल्म की स्थापना आदि काम किये। घायलों के अङ्गों से शल्य आदि निकाले गये, मरहम-पट्टी हुई। स्नान करके, कपड़े बदलकर, सब लोग आनन्द के साथ आमोद-प्रमोद करने लगे। ब्राह्मण लोग स्वस्त्ययन-पाठ और वन्दीजन प्रशंसा करने लगे। कौरवों और पाण्डवों के डेरे स्वर्ग के विमान-से जान पड़ते थे। उस समय वहाँ युद्ध की चर्चा भी नहीं थी। योद्धा लोग इस तरह आमोद-प्रमोद करके सो रहे। हाथी, घोड़े आदि भी विश्राम करने लगे। शान्ति हो जाने से उस स्थान की परम शोभा हुई। ५७

सत्तासी अध्याय

दोनों पक्षों की व्यूह-रचना

सञ्जय ने कहा—राजन्, इस प्रकार कौरव और पाण्डव पक्ष के वीरगण रात भर सुख की नींद सोकर सबेरे फिर युद्ध के लिए तैयार हो अपने शिविरों से निकले। दोनों ओर की सेना में युद्धयात्रा के समय समुद्र के उमड़ पड़ने का सा घोर कोलाहल होने लगा। उस समय राजा दुर्योधन, चित्रसेन, विविंशति, महारथी भीष्म और महाबली द्रोणाचार्य आदि वीरों ने जमा होकर व्यूह की रचना की। भीष्म ने समुद्र-सा अपार गम्भीर महाव्यूह बनाया। मालव, अवन्ती और दक्षिण के देशों की सेना तथा राजा लोग भीष्म के साथ सारी सेना के आगे चले। उनके पीछे पराक्रमी द्रोणाचार्य चले। उनके साथ कुलिन्द, पारद और क्षुद्रक-मालव आदि देशों के राजा अपनी-अपनी सेना साथ लेकर चले। द्रोणाचार्य के पीछे मगध, कलिङ्ग और पिशाच आदि देशों की सेना साथ लिये प्राग्ज्योतिषपुर के राजा प्रतापी भगदत्त का दल चला। उनके पीछे मेकल, कुरुविन्द और त्रिपुरा आदि देशों की सेना साथ लिये कोशलेश्वर बृहद्बल चले। उनके पीछे त्रिगर्त और प्रस्थल देश के राजा सुशर्मा बहुत सी, काम्बोज और यवन देश की, सेना साथ लेकर चले। उनके पीछे द्रोण के पुत्र प्रतापी अश्वत्थामा सिंहनाद से पृथ्वीमण्डल को कँपाते हुए चले। उनके पीछे राजा दुर्योधन सब भाइयों और सैन्य-सामन्तों को साथ लिये हुए चले। उनके पीछे अद्वितीय रणकुशल कृपाचार्य चले। इस तरह वह समुद्र-तुल्य सेना महाव्यूह की रचना करके युद्ध के लिए आगे बढ़ी। पताका, सफ़ेद छत्र, विचित्र अङ्गद आदि गहने, बहुमूल्य कपड़े और धनुष आदि अस्त्र-शस्त्र उस सेना की अपूर्व शोभा बढ़ा रहे थे। १०

महाराज, उधर महारथी युधिष्ठिर ने कौरवों का महाव्यूह देखकर उसके जवाब में दूसरा व्यूह रचने के लिए अपने प्रधान सेनापति धृष्टद्युम्न से तत्काल कहा कि हे वीरश्रेष्ठ, कौरवों ने समुद्र-तुल्य व्यूह की रचना की है। तुम भी इसके जवाब में कोई दुर्भेद्य श्रेष्ठ व्यूह झटपट बनाओ। "जो आज्ञा" कहकर महाबली धृष्टद्युम्न ने उसी दम शत्रु के व्यूह को तोड़नेवाला शृङ्गाटक (सिंघाड़े के आकार का) व्यूह बनाया। उस व्यूह के शृङ्गद्वारों में कई हज़ार रथ, हाथी, घोड़े और पैदल सेना साथ लेकर वीर भीमसेन और सात्यकि स्थित हुए। नाभिदेश में कपिध्वज अर्जुन, मध्यदेश में धर्मराज युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव विराजमान हुए। व्यूह-रचना की कला में निपुण और-और धनुर्द्धर राजा लोग अपनी-अपनी सेना के साथ जगह-जगह उस व्यूह की रक्षा

२० करने लगे। उनके पीछे प्रधान रथी अभिमन्यु, राजा विराट, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और राक्षस घटोत्कच आदि रक्खे गये। पाण्डवगण इस तरह महाव्यूह सुसज्जित करके जय की इच्छा से युद्ध में प्रवृत्त हुए। उस समय चारों ओर तुमुल शङ्खध्वनि, भेरी आदि बाजों का शब्द, सिंहनाद, आस्फोटन (ताल ठोकना) और आह्वान आदि का शब्द सेना के कोलाहल से मिलकर आकाश तक गूँज उठा।

तब शूर-वीर योद्धा लोग एक दूसरे से भिड़कर परस्पर टकटकी लगाकर देखने लगे। फिर अपने-अपने समकक्ष को ललकारकर, नाम ले-लेकर, युद्ध के लिए बुलाने और प्रहार करने लगे। दोनों ओर के योद्धा लोग घोर संग्राम करने लगे। मुँह फैलाये हुए विषैले साँप के समान भयङ्कर नाराच बाण—मेघ में चमकती हुई बिजली के समान—तेल से साफ़ की हुई शक्तियाँ और साफ़ कपड़ों से ढकी हुई पर्वत-शिखर-तुल्य स्वर्णमण्डित गदाएँ युद्धभूमि में इधर-उधर वीरों पर गिरने लगीं। निर्मल आकाश के समान नीली चमकीली तलवारें [खाँड़े, कटारी], शत-
२१ चन्द्रशोभित सुदृढ़ ढालें चारों ओर युद्धभूमि की शोभा बढ़ाती हुई चमकती देख पड़ने लगीं। दोनों ओर के वीर परस्पर घोरतर युद्ध के लिए उद्यत देवताओं और दैत्यों के समान जान पड़ते

थे। श्रेष्ठ क्षत्रिय रथी, रथयुग से शत्रुपक्ष के रथयुगों को खींचते हुए, भिड़कर युद्ध करने लगे। सर्वत्र भिड़कर युद्ध करते हुए हाथियों के दाँत दाँतों से टकराने लगे और उनसे धुएँ सहित आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं। कोई-कोई हाथी के सवार प्रास नामक शस्त्र के प्रहार से मरकर पर्वत के शिखर पर से टूटकर गिरे हुए बड़े वृक्ष के समान जान पड़े। पैदल योद्धा लोग नखर और प्रास आदि शस्त्रों से शत्रुपक्ष के पैदलों को मारने और गिराने लगे। इस तरह कौरवों और पाण्डवों की सेना के योद्धा परस्पर भिड़कर एक दूसरे को मारने और मरने लगे।

उस समय महावीर भीष्म रथ की घरघराहट से युद्धभूमि को कँपाते और धनुष की ध्वनि से पाण्डवों को तथा उनकी सेना को मोहित करते आ पहुँचे। धृष्टद्युम्न आदि पाण्डवपक्ष के महारथी भी भयानक शब्द और सिंहनाद करते हुए आगे बढ़े। इस तरह दोनों ओर के मनुष्य, रथ, हाथी और घोड़े परस्पर भिड़ गये और घोर कोलाहल के साथ दारुण युद्ध होने लगा। ४०

अट्ठासी अध्याय

भीमसेन के हाथों दुर्योधन के आठ छोटे भाइयों का वध

सञ्जय ने कहा—राजन्! पाण्डव लोग महापराक्रमी, सूर्य के समान तेजस्वी, महावीर भीष्म की क्रुद्ध भयानक मूर्ति को युद्धभूमि में अच्छी तरह देख नहीं सकते थे। पाण्डवपक्ष के योद्धा लोग राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से भीष्म के ऊपर बाण बरसाते हुए युद्ध करने के लिए आगे बढ़े। तब युद्धप्रिय वीर भीष्म पितामह असंख्य तीक्ष्ण बाण चलाकर सोमक, सृञ्जय और पाञ्चाल वीरों को मारने और गिराने लगे। युद्ध में उत्साह रखनेवाले पाञ्चालगण और सोमकगण भीष्म के बाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर भी हटे नहीं। वे जीवन की आशा छोड़कर लड़ते हुए उन पर आक्रमण करने लगे। पराक्रमी भीष्म ने किसी का हाथ काट डाला, किसी का सिर काट डाला। उन्होंने रथी योद्धाओं के रथों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। युद्धभूमि में भीष्म के बाणों के प्रभाव से घोड़ों से गिरे—मरे—हुए घुड़सवारों के सिर, सवारों से ख़ाली पृथ्वी पर पड़े हुए पर्वतशिखर सदृश गजराज और रथ आदि जगह-जगह हज़ारों की संख्या में देख पड़ने लगे।

हे नर-नाथ, उस समय पाण्डवपक्ष से एकमात्र महारथी साहसी भीमसेन बल-पराक्रम प्रकट करते हुए महावीर भीष्म पर आक्रमण करके उन्हें रोकने की चेष्टा करने लगे। भीमसेन और भीष्म से भयानक संग्राम होने लगा। पाण्डव लोग उत्साह और प्रसन्नता प्रकट करते हुए सिंहनाद करने लगे। अपने भाइयों सहित राजा दुर्योधन भीष्म की रक्षा करते देख पड़ते थे। श्रेष्ठ रथी भीमसेन ने भीष्म के सारथी को मार डाला। तब उनके रथ को लेकर घोड़े इधर-उधर अस्त-व्यस्त गति से भागने लगे। १०

इसी अवसर में वली भीमसेन ने तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से राजकुमार सुनाभ का सिर काट डाला। महाराज ! आपके पुत्र महारथी सुनाभ के मरने पर सगे भाई की हत्या से अत्यन्त क्रुद्ध होकर अतुल-पराक्रमी आदित्यकेतु, वह्वाशी, कुण्डधार, महोदर, अपराजित, पण्डितक और दुर्जय विशालाक्ष, ये सातों राजकुमार भीमसेन से लड़ने के लिए दौड़े। ये सब विचित्र कवच, ध्वजा और अस्त्र-शस्त्रों से शोभित थे। वज्रपाणि इन्द्र ने जैसे वृत्रासुर को पीड़ित किया था वैसे ही वीर महोदर ने भीमसेन को वज्रतुल्य नव बाण मारे। इसी तरह आदित्यकेतु ने सत्तर बाण, वह्वाशी ने पाँच बाण, कुण्डधार ने नब्बे बाण, विशालाक्ष ने पाँच बाण, पण्डितक ने तीन बाण और भीमसेन को परास्त करने की इच्छा रखनेवाले अपराजित ने बहुत से बाण मारे।

२० पराक्रमी भीमसेन शत्रुओं के बाण-प्रहार को न सह सके, क्रोध से अधीर हो उठे। उन्होंने बाँयें हाथ से धनुष चढ़ाकर शीघ्रगामी तीक्ष्ण-धार बाण से अपराजित का, सुन्दर नासिका से मनोहर, मुण्ड काट डाला। फिर सब सेना के सामने एक भल्ल बाण से कुण्डधार को मार गिराया। पण्डितक पर भी एक तीक्ष्ण बाण छोड़ा। कालप्रेरित विषैले साँप के समान वह बाण पण्डितक के प्राण लेकर पृथ्वी में घुस गया। पहले के शत्रुकृत प्रहार का क्लेश स्मरण करके उन्होंने तीन बाणों से विशालाक्ष का सिर काट डाला। एक नाराच बाण महोदर की छाती में मारा। उस प्रहार से वे मरकर पृथ्वी पर गिर पड़े। वीर भीमसेन ने फिर फुर्ती के साथ एक बाण से आदित्यकेतु के रथ की ध्वजा काटकर दूसरे तीक्ष्ण भल्ल बाण से उनका सिर भी काट डाला। ऐसे ही एक बाण से क्रुद्ध भीमसेन ने वह्वाशी को मार डाला। इस प्रकार आठ राजकुमारों की मृत्यु देखकर आपके और पुत्र भाग खड़े हुए। उन्होंने समझ लिया कि भीम ने द्रौपदी के अपमान के समय दुर्योधन

३० के सब भाइयों को मारने की जो प्रतिज्ञा की थी, उसे वे अवश्य पूर्ण करेंगे। भाइयों की मृत्यु के शोक से अत्यन्त व्याकुल राजा दुर्योधन ने अपने योद्धाओं को आज्ञा दी कि इस दुरात्मा भीमसेन को सब लोग मिलकर शीघ्र मार डालो।

राजन्, इस प्रकार भाइयों की मृत्यु देखकर आपके अन्य पुत्र विदुरजी की बातों को स्मरण करने लगे। महाप्राज्ञ विदुर ने जो हितकारी कल्याणप्रद बातें कही थीं उन्हें न मानने का यह फल अब आपको मिल रहा है। [उन्होंने जो परिणाम बताया था वही होता देख पड़ रहा है। उनकी भविष्यवाणी अक्षर-अक्षर ठीक उतर रही है।] आपने उस समय लोभ, मोह और पुत्रस्नेह के वश होकर सत्यवादी विदुर के सत्य और हित-वचनों पर ध्यान नहीं दिया। महाबाहु भीमसेन जिस तरह कौरवों को मार रहे हैं उसे देखकर यही मालूम होता है कि वे आपके पुत्रों को मारने के लिए ही पैदा हुए हैं।

भाइयों की मृत्यु से बहुत विह्वल होकर महाबाहु दुर्योधन भीष्म के पास जाकर अत्यन्त दुःख के साथ विलाप करने लगे—पितामह, भीमसेन ने युद्ध में मेरे शूर भाइयों को मार डाला। हमारी सेना शत्रुओं को मारने के लिए यद्यपि बहुत यत्न कर रही है, फिर भी हमारे ही सैनिक मारे जा रहे हैं। आप उदासीन भाव से युद्ध कर रहे हैं, नित्य हम लोगों के प्रति उपेक्षा का भाव दिखा रहे हैं। भाग्य के दोष से मैं कुमार्ग पर चला [और युद्ध ठान दिया], इसके सिवा और क्या कहा जा सकता है!

दुर्योधन के ये क्रूर वचन सुनकर, आँखों में आँसू भरकर, आपके चाचा भीष्म ने कहा—देखो दुर्योधन! पहले ही मैंने, द्रोण ने, विदुर ने और यशस्विनी गान्धारी ने तुमसे युद्ध न करने के लिए कहा था, किन्तु तुम नहीं समझे। हे शत्रुदमन, मैं पहले ही तुमसे शर्त कर चुका हूँ कि मुझको और द्रोण को तुम कभी युद्ध के बारे में उलाहना न देना; हम अपनी इच्छा के अनुसार यथाशक्ति युद्ध करेंगे। मैं तुमसे फिर कहे देता हूँ कि भीमसेन युद्ध में धृतराष्ट्र के जिस पुत्र को पावेंगे उसे नित्य अवश्य मारेंगे। यह सच समझो। इसलिए हे राजन्! तुम युद्ध के लिए दृढ़ मति करके, स्वर्गलाभ को परम फल समझकर, पाण्डवों से युद्ध करो। इन्द्र सहित देवता और दैत्य मिलकर भी पाण्डवों को नहीं जीत सकते। इसलिए युद्ध में स्थिर मति करके पाण्डवों से लड़ो। ४० ४४

नवासी अध्याय

युद्ध का वर्णन

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! एक भीमसेन के हाथों मेरे अनेक पुत्रों की मृत्यु देखकर भीष्म, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य ने क्या किया? दिन-दिन मेरे पुत्र मारे जा रहे हैं, इससे मुझे यह निश्चय होता है कि मेरे पुत्रों पर दैव का ही कोप है। महात्मा द्रोण, भीष्म, महात्मा कृपाचार्य, भूरिश्रवा, भगदत्त, अश्वत्थामा तथा और-और शूर और संग्राम में पीठ न दिखानेवाले क्षत्रियों की सहायता पाकर भी मेरे पुत्र विजयी नहीं होते, बल्कि हारते ही जाते हैं; इसे दुर्भाग्य के सिवा और क्या कहा जा सकता है! पहले मैं, भीष्म, विदुर, गान्धारी आदि ने हित-कामना से दुर्बुद्धि दुर्योधन को बहुत समझाया-बुझाया, युद्ध न करने के लिए कहा, किन्तु मोह-वश उसने किसी का कहना नहीं सुना। उसी का यह घोर फल मिल रहा है—कुपित भीम-सेन नित्य मेरे मूढ़ पुत्रों को मार रहे हैं, यह विदुर की बात न मानने का ही फल है।

सञ्जय ने कहा—स्वामी! पहले विदुर ने आपसे कहा था कि राजन्, आप पुत्रों को द्यूत-क्रीड़ा से रोकिए; पाण्डवों के साथ द्रोह या दुर्व्यवहार न कीजिए। किन्तु महाराज! रोगी जैसे दवा नहीं पीता, दवा पीना उसे नहीं रुचता, वैसे ही आपने अपने हितचिन्तक विदुर, भीष्म, द्रोण, गान्धारी और अन्य सुहृदों की बातें नहीं मानीं। इसी कारण इस समय कौरवों का नाश हो रहा है। ख़ैर, जो होना था सो तो हो ही गया, अब आप युद्ध का वर्णन सुनिए। १२ उस दिन दोपहर के समय ऐसा घोर युद्ध हुआ कि उसमें असंख्य क्षत्रिय मारे गये। धर्मपुत्र युधिष्ठिर की आज्ञा से पाण्डवों की सब सेना भीष्म को मार डालने के लिए सुसज्जित होकर आगे बढ़ी। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सेना सहित महारथी सात्यकि, सोमकगण सहित राजा विराट, राजा द्रुपद, केकयदेश की सेना साथ लिये धृष्टकेतु और कुन्तिभोज आदि महारथी चारों ओर से भीष्म पर हमला करने के लिए चले। दुर्योधन की आज्ञा से जो महारथी लोग भीमसेन पर आक्रमण करने आ रहे थे उनसे लड़ने के लिए महाबली अर्जुन, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और चेकितान चले। क्रोध से अधीर हो रहे भीमसेन, घटोत्कच और अभिमन्यु कौरवों के सामने २० आये। पाण्डवों और कौरवों के तीन-तीन दल, अलग होकर, परस्पर लड़ने और मारने-मरने लगे। महारथी द्रोण कुपित होकर सोमकों और सृञ्जयों को यमपुर भेजने के इरादे से उनसे लड़ने लगे। महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्य के बाणों से पीड़ित होकर सृञ्जयगण घोर आर्तनाद करने लगे। द्रोण के बाणों से पीड़ित होकर बहुत से क्षत्रिय व्याधि-पीड़ित मनुष्यों की तरह युद्धभूमि में गिरकर तड़पने लगे। युद्धभूमि में कुछ लोग अस्पष्ट शब्द से कराह रहे थे, कुछ ज़ोर से चिल्ला रहे थे, कुछ विलाप कर रहे थे और कुछ लोग वैसे ही हाय-हाय कर रहे थे जैसे भूख-प्यास से व्याकुल मनुष्य किया करते हैं। वहाँ तरह-तरह के आर्तनाद लगातार सुनाई पड़ते थे।

इधर क्रोधान्ध भीमसेन दूसरे काल की तरह कौरव-सेना को नष्ट करने लगे। परस्पर प्रहार करते हुए सैनिकों के रक्त से लहराती हुई नदी बह चली। राजन्, वह कौरव-पाण्डवों का युद्ध ऐसा घोर हुआ कि उसमें मरे हुए मनुष्यों से यमपुरी भर गई होगी। भीमसेन क्रोध-पूर्ण स्वर से सिंहनाद करते हुए दुर्योधन के हाथियों की सेना में घुसकर उसे छिन्न-भिन्न करने लगे। भीमसेन के नाराच बाणों की चोट खाकर बड़े-बड़े हाथी बैठ जाते थे। अनेकों हाथी गिर रहे थे, अनेकों डरकर चिल्लाते और आर्तनाद करते भाग रहे थे। बड़े-बड़े हाथियों की सूँड़ें कट गईं, शरीर फट गये और वे क्रौञ्च पक्षी की तरह आर्तनाद करते हुए पृथ्वी पर गिरने लगे। उधर नकुल और सहदेव घोड़ों के दल में घुस पड़े और सुवर्ण के गहनों से भूषित सैकड़ों-हज़ारों घोड़ों को काट-काटकर गिराने लगे। घोड़ों के कटे-फटे अङ्गों और शरीरों से पृथ्वी भर गई। राजन्! किसी घोड़े की जीभ कट गई, कोई घोड़ा थककर ज़ोर-ज़ोर से हाँफने लगा, कोई घोड़ा घायल पक्षी का सा आर्तनाद करने लगा और कोई घोड़ा मर गया। इस तरह अनेक चेष्टाएँ करते हुए पीड़ित घोड़ों का दल नष्ट-भ्रष्ट हो गया। हे भारत, महावीर अर्जुन सैकड़ों राजाओं को अपने बाणों से मार-मारकर गिराने लगे। उस समय युद्धभूमि बहुत ही भयानक देख पड़ने लगी। टूटे हुए रथ, कटी हुई ध्वजा, कटे हुए श्रेष्ठ शस्त्र, चामर, व्यजन, चमकीले छत्र, हार, निष्क, केयूर, कुण्डल-शोभित सिर, पगड़ियाँ, पताका, घोड़ों के जोत, लगामें, रासें और अनेक प्रकार के अन्य सामान सारी युद्धभूमि में जहाँ-तहाँ बिखरे पड़े थे। उनसे वह भूमि वैसे ही शोभित हो रही थी जैसे वसन्त-ऋतु में तरह-तरह के फूलों से किसी बड़े बाग़ की शोभा होती है। महाराज! भीष्म, महारथी द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा आदि क्रुद्ध होकर पाण्डवसेना को नष्ट कर रहे थे, और पाण्डवपक्ष के भीम, अर्जुन, अभिमन्यु आदि योद्धा क्रुद्ध होकर कौरव-सेना का संहार कर रहे थे। ४०

नब्बे अध्याय

शकुनि के भाइयों का और इरावान् का वध

सञ्जय ने कहा—राजन्, इस प्रकार लोकनाशक महासंग्राम आरम्भ होने पर सुबल के पुत्र शकुनि पाण्डवों पर आक्रमण करने चले। यदुवंशी शत्रुदमन हार्दिक्य (कृतवर्मा) भी पाण्डवों की सेना से लड़ने के लिए आगे बढ़े। काम्बोज देश के, नदी-तट के देश के, आरट्ट देश के, सिन्धु देश के, वनायु देश के, स्थलज और पहाड़ी देश के असंख्य घोड़ों पर सवार वीरों ने पाण्डवसेना पर आक्रमण किया। तीतर के रङ्ग के, फुर्तीले, सुवर्ण के साज से अलङ्कृत और सुवर्ण के जालों से सुरक्षित बढ़िया घोड़ों से युक्त रथ पर अर्जुन के पुत्र इरावान् उधर से कौरवसेना का वेग रोकने के लिए आगे बढ़े। पराक्रमी इरावान् नागराज ऐरावत की कन्या के गर्भ में अर्जुन

के वीर्य से उत्पन्न हुए थे। गरुड़ ने उस कन्या के पहले पति को मार डाला था। तब उस दुःखित कन्या को ऐरावत ने सन्तान-हीन देखकर अर्जुन के अर्पण कर दिया। काम के वश और अनुगत उस स्त्री को अर्जुन ने, सन्तान उत्पन्न करने के लिए, स्त्री-रूप से स्वीकार कर लिया। इस प्रकार दूसरे के क्षेत्र में अर्जुन के वीर्य से इरावान् का जन्म हुआ। इरावान् नागलोक में ही माता के पास रहे और उसी ने उन्हें पाल-पोसकर बड़ा किया। इरावान् का चाचा अश्वसेन
१० अर्जुन से द्रोह रखता था, उसने इरावान् को उसी विद्वेष के कारण त्याग दिया। सत्यविक्रमी नागराज इरावान् ने उस समय सुना कि अर्जुन इन्द्रलोक को गये हैं। तब वे आकाश-मार्ग से इन्द्रलोक में पिता के पास गये। वहाँ पहुँचकर इरावान् ने नम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर, अपना परिचय देकर, अर्जुन से कहा—प्रभो! आपका कल्याण हो, मैं आपका पुत्र हूँ। फिर इरावान् ने अपनी माता के साथ अर्जुन के समागम का हाल कहा। अर्जुन को भी पहले का सब वृत्तान्त स्मरण हो आया। उन्होंने अपने ही समान सब गुणों से युक्त पुत्र को गले से लगाकर प्रसन्नतापूर्वक कहा—पुत्र, तुम प्रीतिपूर्वक यहीं इन्द्रलोक में रहो। जब युद्ध होगा तब तुम हमारी सहायता करना। पिता की आज्ञा स्वीकार करके इरावान् वहीं रहने लगे। इस समय युद्ध उपस्थित होने पर वही इरावान् यथेष्ट वेग और वर्णवाले, सुवर्णभूषित, विचित्र घोड़े लेकर युद्धभूमि में आ गये। वे घोड़े समुद्र के बीच में उड़ते हुए हंसों के समान शोभा दे रहे थे। वे दिव्य घोड़े आपके घोड़ों के बीच घुसकर थूथन से थूथन में और छाती से छाती में प्रहार करते हुए आगे बढ़े। उनके वेग से और चलने से उड़ते हुए गरुड़ के पङ्खों का सा घोर शब्द
२१ होने लगा। राजन्, आपके पक्ष के घोड़े और घुड़सवार भी भिड़कर प्रहार करने लगे। उस घोर युद्ध में दोनों ओर के घोड़े थक गये। शूरों के बाण चुक गये। घोड़े मारे गये और वे खुद भी अधिक परिश्रम करने के कारण सुस्त हो गये। वे वीर परस्पर प्रहार करके मरने लगे। वीरगण और घोड़े मर-मरकर पृथ्वी पर गिरने लगे।

वह घुड़सवार सेना थोड़ी ही रह गई। उसी समय युद्धनिपुण शकुनि अपने महाबली गज, गवाक्ष, वृषभ, चर्मवान्, आर्जव और शुक नाम के छः भाइयों के साथ युद्ध के लिए उपस्थित हुए। उनके साथ महापराक्रमी योद्धाओं की सेना चली। शकुनि और उनके भाई वायुवेगगामी बढ़िया घोड़ों पर सवार होकर सेना के अगले भाग में स्थित हुए। राजन्, गान्धार देश के राजा और उनके छहों भाई स्वर्ग की गति अथवा विजय की इच्छा से उत्साहपूर्वक अपने युद्धकुशल रौद्ररूप बली सैनिकों के साथ शत्रुओं की सेना में घुसे। इरावान्
३० ने उनको अपनी सेना में घुसते देखकर, विचित्र अलङ्कारों और शस्त्रों से सुशोभित और श्रेष्ठ घोड़ों पर सवार, अपने सैनिकों से कहा—हे वीरो! ऐसा उपाय करो जिसमें ये शत्रुपक्ष के योद्धा अनुचरों और वाहनों सहित मारे जायँ।

अब इरावान् के सब योद्धा शत्रुओं की दुर्जय सेना पर आक्रमण करके उसे नष्ट करने लगे। शकुनि और उनके भाई अपनी सेना को शत्रुसेना के हाथों नष्ट होते देख क्रोध से अधीर होकर इरावान् पर आक्रमण करने के लिए दौड़े। उन्होंने इरावान् को चारों ओर से घेर लिया। तब दोनों ओर घोर युद्ध होने लगा। वे वीर परस्पर दारुण प्रहार करने लगे। महाराज, शकुनि के भाइयों ने इरावान् को तीक्ष्ण प्रास नाम के शस्त्र मारे। इससे इरावान् के शरीर से रक्त वहने लगा। वे अंकुश से आहत गजराज के समान क्रोध से विह्वल हो गये। बहुत लोगों के प्रहार करने पर भी धीर इरावान् विचलित नहीं हुए। शत्रुदमन इरावान् ने क्रोधान्ध होकर सबको अत्यन्त तीक्ष्ण बाण मारे। उन बाणों के लगने से शकुनि के भाई अचेत-से हो गये। इरावान् ने उन्हीं प्रासों से, जो उनके

शरीर में घुस गये थे, शकुनि के भाइयों को घायल किया। इसके बाद वीर इरावान् शकुनि के भाइयों को मारने के लिए तीक्ष्ण तलवार और सुदृढ़ ढाल लेकर पैदल ही उनकी ओर दौड़े। ४० उधर शकुनि के भाइयों की मूर्च्छा दूर हुई और वे क्रुद्ध होकर इरावान् पर आक्रमण करने को दौड़े। महाबली इरावान् भी तलवार के हाथ फेंकते, फुर्ती दिखाते उनकी ओर बढ़ने लगे। शकुनि के छहों भाई तेज़ घोड़ों पर सवार थे, और शीघ्रता के साथ घोड़ों को घुमा रहे थे; किन्तु किसी तरह वे इरावान् के ऊपर आक्रमण न कर पाये। इरावान् को पैदल देख चारों ओर से घेरकर शकुनि के भाइयों ने पकड़ लेना चाहा। वे जब पास पहुँच गये तब इरावान् ने तीक्ष्ण तलवार से उनके शरीरों, अङ्गों और आयुधों तथा अलङ्कारों से युक्त हाथों को काटना शुरू किया। एक वृषभ को छोड़कर शेष पाँचों भाई छिन्न-भिन्न होकर मर गये। वृषभ भी बहुत घायल हो गये, किन्तु उस भयङ्कर संग्राम से किसी तरह उनके प्राण बच गये।

महाराज! ऋष्यशृङ्ग का पुत्र राक्षस अलम्बुष बड़ा मायावी था। वह आपकी ओर से युद्ध करता था। भीमसेन पहले उसके मित्र बक दैत्य को मारकर उसके वैरी बन चुके थे।

शकुनि के भाइयों की मृत्यु देखकर दुर्योधन मन ही मन बहुत डरे। उन्होंने क्रुद्ध होकर अल-म्बुष के पास जाकर कहा—हे वीर! वह देखो, अर्जुन का पुत्र इरावान् बड़ा मायावी होने के
५० कारण मेरे योद्धाओं को मार रहा है। इसने मेरा बड़ा अप्रिय किया है। तुम भी मायायुद्ध में बड़े चतुर हो। तुम जहाँ चाहो, जा सकते हो। भीमसेन से तुम्हारी घोर शत्रुता है। इसलिए तुम तुरन्त जाकर इरावान् को मार डालो। दुर्योधन के यों कहने पर घोररूप राक्षस अलम्बुष सिंहनाद करता हुआ अर्जुन के पुत्र इरावान् के पास जाने के लिए आगे बढ़ा। उसके साथ ऐसे युद्धनिपुण योद्धाओं की सेना भी चली जो निर्मल प्रास नाम के शस्त्रों से युद्ध करते थे। उधर महाबली इरावान् क्रुद्ध होकर शीघ्रता के साथ उस राक्षस को रोकने चले। इरा-वान् को आते देखकर महाबली राक्षस अलम्बुष शीघ्रता के साथ माया का प्रयोग करने लगा। इरावान् के साथ जितने घोड़े और सेना थी, उतने ही घोड़े और उन पर सवार शूल-पट्टिश-धारी घोर राक्षस उसने प्रकट किये। दोनों ओर के सवार और घोड़े परस्पर लड़कर मर गये। सब सेना नष्ट हो जाने पर, वृत्रासुर और इन्द्र के समान, युद्ध में अजेय दोनों वीर आमने-सामने आये। राक्षस को अपनी ओर आते देखकर महाबली इरावान् भी क्रुद्ध होकर उसकी ओर
६० दौड़े। राक्षस जब पास पहुँचा तब इरावान् ने तीक्ष्ण खड्ग से उसका धनुष और तर्कस काट डाला। धनुष कट जाने पर वह कामरूपी राक्षस अत्यन्त क्रुद्ध इरावान् को माया से मोहित-सा करता हुआ आकाश में वेग से चला गया। दुर्द्धर्ष इरावान् भी आकाश में पहुँच गये और बाणों से राक्षस के मर्मस्थलों को काटने लगे। राक्षसश्रेष्ठ अलम्बुष बारम्बार बाणों से अङ्ग काटे जाने पर भी नहीं मरा। वह माया से फिर-फिर जवान और साङ्गोपाङ्ग बन जाता था। राजन, राक्षसों में मायाबल पैदाइशी होता है; वे अपनी अवस्था और रूप को इच्छा के अनुसार बदल सकते हैं। इसी कारण उस राक्षस के अङ्ग बारम्बार काटे जाने पर भी वैसे ही हो जाते थे।

इरावान् भी अत्यन्त क्रुद्ध होकर परश्वध शस्त्र से बारम्बार उस बली राक्षस के अङ्गों को काटने लगे। जैसे कोई वृक्ष काटा जा रहा हो, वैसे काटा जा रहा वह राक्षस गरजने लगा। उसके शरीर से रक्त की धाराएँ बह चलीं। उस राक्षस ने संग्राम में अपने शत्रु यशस्वी इरावान् को प्रबल और वेगशाली देख, महाभयङ्कर रूप रखकर, फिर माया का प्रयोग किया।
७० क्रुद्ध होकर उसने सबके सामने मायाबल से इरावान् को पकड़ लेना चाहा। तब दुरात्मा राक्षस की वैसी माया देखकर इरावान् भी क्रुद्ध होकर माया का प्रयोग करने लगे। संग्राम से न हटनेवाले कुपित इरावान् ने अपनी माता के वंश का आश्रय ग्रहण किया। असंख्य नागों ने आकर इरावान् का साथ दिया। शेषनाग का सा भारी रूप रखकर इरावान् ने और अन्य अनेक नागों ने अलम्बुष को घेर लिया। उसने अपने को घिरा हुआ देखकर, दम भर सोच-कर, मायाबल से गरुड़ का रूप रख लिया और सब नागों को भक्षण कर लिया। मातृवंश

नष्ट होने पर इरावान् माया से मोहित हो गये। उसी अवसर में अलम्बुप ने तलवार से उनका सिर काट डाला। मुकुट और कुण्डलों से शोभित, कमल और चन्द्रमा के समान, इरावान् का सिर काटकर उस राक्षस ने पृथ्वी पर गिरा दिया। उस राक्षस ने जब अर्जुन के पुत्र को मार डाला तब दुर्योधन, उनके भाई और सब राजा प्रसन्न होकर आनन्द मनाने लगे।

उस समय फिर दोनों सेनाओं में घोर युद्ध होने लगा। उस युद्ध में हाथियों, घोड़ों और पैदलों को हाथी नष्ट करने लगे; रथों, घोड़ों और हाथियों को पैदल सेना ने मारना शुरू किया; पैदलों, रथों और घोड़ों को रथी लोग बाणवर्षा से छिन्न भिन्न करने लगे। दूर होने के कारण अर्जुन को अपने पुत्र इरावान् के मरने की ख़बर नहीं मिली। वे उधर भीष्म की रक्षा करनेवाले शूर राजाओं के दल को मारने लगे। राजन्, हज़ारों सृञ्जयगण और आपके पक्ष के योद्धा परस्पर प्रहार करके युद्ध की आग में प्राणों की आहुति देने लगे। बहुत से वीरों के धनुष कटने और रथ टूटने पर केश खुल गये। वे उसी दशा में परस्पर भिड़कर बाहुयुद्ध करने लगे। शत्रुओं को पीड़ा पहुँचानेवाले पितामह भीष्म भी पाण्डवसेना को विचलित करते हुए मर्मभेदी बाणों से महारथी वीरों को मारने लगे। उन्होंने युधिष्ठिर की बहुत सी सेना—हाथियों, घोड़ों, घुड़सवारों, रथियों और पैदलों—को मारा। महाराज, उस समय वे इन्द्र के समान पराक्रमी जान पड़ने लगे। भीमसेन, धृष्टद्युम्न और सात्यकि भी अत्यन्त पराक्रम के साथ भयानक युद्ध कर रहे थे। ख़ासकर द्रोणाचार्य का पराक्रम देखकर पाण्डव बहुत ही डर गये। वे द्रोणाचार्य के प्रहारों से पीड़ित होकर कहने लगे—आचार्य द्रोण अकेले ही हम सबको और हमारी सेना को नष्ट कर सकते हैं। फिर इस समय तो पृथ्वी के सभी श्रेष्ठ योद्धा उनके साथ हैं। अब वे क्या नहीं कर सकते? ८० ९०

राजन्, उस भयानक संग्राम में कोई भी शत्रु के प्रहार को चुपचाप नहीं सह सकता था। सभी भूतग्रस्त-से होकर प्रबल वेग से युद्ध कर रहे थे। देवासुर-संग्राम के समान भयानक उस युद्ध में कोई भी प्राणों का मोह रखकर युद्ध करता नहीं दिखाई देता था। ९३

इक्यानबे अध्याय

दुर्योधन और घटोत्कच का युद्ध

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, इरावान् को युद्ध में मरा देखकर पाण्डवों ने क्या किया? सञ्जय ने कहा—महाराज, समर में इरावान् की मृत्यु देखकर घटोत्कच ने क्रोध से घोर सिंहनाद किया। उसके गरजने के शब्द से पर्वत, वन, समुद्र आदि सहित पृथ्वी, अन्तरिक्ष, दिशा, विदिशा आदि सब काँपने लगे। वह महाशब्द सुनकर आपके सैनिक काँपने लगे; उनके

शरीर से पसीना बहने लगा और पैर जकड़-से गये। राजन्, उस समय आपके पक्ष के सब सैनिक सिंह से डरे हुए हाथी की तरह दीन भाव से इधर-उधर छिपने लगे। राक्षस घटोत्कच वह भयङ्कर शब्द करके, घोर रूप रखकर, शूल हाथ में लिये काल की तरह दौड़ा। उसके साथ विविध अस्त्र-शस्त्र धारण किये अनेक भयावने राक्षस भी चले।

इसके बाद भयानक राक्षस घटोत्कच को आते और उसके डर से अपनी सेना को युद्ध से हटते देखकर राजा दुर्योधन धनुष हाथ में लेकर सिंहनाद करते हुए घटोत्कच की ओर चले। वङ्गदेश के राजा दस हज़ार मस्त हाथियों का दल लेकर दुर्योधन के साथ चले। दुर्योधन को १० आते देखकर राक्षस घटोत्कच अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनकी ओर चला। तब राक्षससेना के साथ दुर्योधन की सेना का घोर युद्ध होने लगा। शस्त्र धारण किये हुए राक्षसगण घनघटा के समान हाथियों की सेना को आते देख, क्रुद्ध होकर, बादल में बिजली कड़कने का सा शब्द करते हुए दौड़े। वे हाथियों के योद्धाओं को बाण, शक्ति, नाराच, भिन्दिपाल, शूल, मुद्गर, परश्वध आदि से और बड़े-बड़े हाथियों को पर्वतों के शिखरों और वृक्षों से मारने लगे। राजन्! उस समय देख पड़ा कि राक्षसों के प्रहार से कुछ हाथियों के मस्तक फट गये, कुछ के शरीर कट-फट गये और कुछ के शरीर से रक्त की धारा बहने लगी।

इस प्रकार गजसेना जब नष्ट हो गई और शेष हाथी भाग खड़े हुए तब महाराज दुर्योधन क्रोध के आवेश से जीवन की ममता छोड़कर राक्षसों पर हमला करने और तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। वे अत्यन्त कुपित होकर मुख्य-मुख्य राक्षसों को मारने लगे। दुर्योधन २० ने महावीर वेगवान्, महारौद्र, विद्युज्जिह्व और प्रमाथी इन चार प्रधान राक्षसों को चार ही बाणों से मार डाला। इसके बाद वे सारी राक्षससेना के ऊपर कठोर बाण बरसाने लगे।

महाराज, दुर्योधन का यह अद्भुत कार्य देखकर घटोत्कच बहुत कुपित हुआ। वह वज्रपात के समान घोर शब्द करनेवाला सुदृढ़ धनुष चढ़ाकर दुर्योधन की ओर चला। राजन्, उस काल-सदृश

राक्षस को अपनी ओर आते देखकर वीर धीर दुर्योधन तनिक भी विचलित नहीं हुए। घटोत्कच ने अत्यन्त क्रोध से दुर्योधन को ललकारकर कहा—"रे दुर्मति क्षत्रिय! तूने मेरे पिता और उनके भाइयों को कपट के पाँसों से हराकर बहुत दिन तक प्रवास में रहने के लिए विवश किया; एक धोती पहने हुए रजस्वला द्रौपदी को सभा में बुलवाकर क्लेश दिया और उनका अपमान किया; मेरे पिता और चाचा जब वनवास में थे तब तेरे आज्ञाकारी बहनोई नीच सिन्धुराज जयद्रथ ने तेरा प्रिय करने की इच्छा से पाण्डवों का कुछ भी ख़याल न करके, उनकी अनुपस्थिति में, द्रौपदी को ज़बरदस्ती ले जाकर कष्ट पहुँचाया। तेरे इन सब दुष्कर्मों का फल आज मैं तुझको दूँगा। जो तू प्राण बचाकर युद्ध से भाग नहीं गया तो अवश्य मैं तेरे प्राण लेकर माता-पिता का ऋण चुकाऊँगा।" वीर घटोत्कच इस तरह तीव्र वचन कहकर क्रोध के मारे दाँतों से ओठ चबाने और ओठ चाटने लगा। उसने धनुष चढ़ाकर, मेघ जैसे पर्वत पर पानी बरसाते हैं वैसे, दुर्योधन पर बाण-वर्षा करके उनके रथ को छिपा दिया। ३१

बानबे अध्याय

घटोत्कच का युद्ध

सञ्जय ने कहा—महाराज, गजराज जैसे बादल की बूँदों को सहज ही सह लेता है वैसे ही दुर्योधन ने घटोत्कच के प्रहार अनायास सह लिये। अत्यन्त क्रुद्ध होकर, नाग की तरह लम्बी साँसें लेकर, दुर्योधन दम भर के लिए सोच में पड़ गये। इसके बाद उन्होंने उस राक्षस को तीक्ष्ण पचीस नाराच बाण मारे। गन्धमादन पहाड़ पर कुपित साँप जैसे गिरें वैसे ही वे बाण सहसा घटोत्कच के ऊपर गिरे। हाथी के जैसे मद बहता है वैसे ही घटोत्कच के शरीर से रक्त बहने लगा। उन बाणों से व्यथित और घायल घटोत्कच ने अत्यन्त क्रोधान्ध

होकर दुर्योधन को मारने के इरादे से एक बड़ी उल्का के समान प्रज्वलित और पहाड़ों को तोड़ डालनेवाली महाशक्ति अपने हाथ में ली। घटोत्कच को वह शक्ति तानते देखकर पर्वत सदृश

ऊँचे हाथी पर सवार वङ्गदेश के राजा ने अकस्मात् दुर्योधन के रथ के आगे आकर उनको हाथी की आड़ में कर लिया। राजन्, महावीर घटोत्कच ने जब देखा कि वङ्गाधिप ने दुर्योधन के रथ को छिपा लिया तब उसने वह महाशक्ति वङ्गराज के हाथी पर ही खींचकर मारी। उस शक्ति की चोट खाकर वह हाथी मुँह से रक्त उगलता हुआ गिर पड़ा और मर गया। वङ्गनरेश फुर्ती के साथ हाथी पर से पृथ्वी पर कूद पड़े। उस श्रेष्ठ हाथी की मृत्यु और अपनी सेना का भागना देखकर राजा दुर्योधन को बड़ा दुःख हुआ। अपनी सेना को भागते और पराभव स्वीकार करते देखकर, अभिमान और क्षत्रिय-धर्म के ख़याल से, दुर्योधन पर्वत की तरह अटल होकर वहीं खड़े रहे। इसके बाद क्रुद्ध होकर उन्होंने एक कालाग्नि के समान चमकीला भयङ्कर तीक्ष्ण बाण धनुष पर चढ़ाकर उस रौद्र राक्षस को मारा। मायावी राक्षस ने उस बाण के प्रहार को सहज ही निष्फल कर दिया। वह क्रोधान्ध होकर सारी सेना को डराता हुआ प्रलयकाल के मेघ के समान घोर सिंहनाद करने लगा।

पितामह भीष्म उस राक्षस का भयानक शब्द सुनकर द्रोणाचार्य के पास जाकर कहने लगे—हे आचार्य! यह राक्षस जैसा घोर शब्द करके गरज रहा है, उससे जान पड़ता है कि दुर्योधन से इसका विकट युद्ध हो रहा है। आपका कल्याण हो, आप जाकर राजा दुर्योधन की इससे रक्षा करें; क्योंकि संग्राम में कोई प्राणी इसे हरा नहीं सकता। यह राक्षस महाबाहु दुर्योधन पर आक्रमण करके उनको सता रहा है। इस समय दुर्योधन की इससे रक्षा करना हम सबका सर्वोपरि कर्तव्य है।

तब सब महारथी लोग फुर्ती से दुर्योधन के पास जाकर उनकी रक्षा करने लगे। द्रोणाचार्य, सोमदत्त, वाह्लीक, जयद्रथ, कृपाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य, विन्द, अनुविन्द, बृहद्बल, अश्वत्थामा, विकर्ण, चित्रसेन और विविंशति आदि सब महारथी और उनके अनुगत कई हज़ार रथी

योद्धा चटपट दुर्योधन के पास पहुँचने का उद्योग करने लगे। शूल, मुद्गर आदि विविध शस्त्र धारण करनेवाले सजातीय राक्षसों से रक्षित घटोत्कच ने उन महारथियों द्वारा सुरक्षित दुर्दमनीय सेना को आते देखकर बड़ा और श्रेष्ठ धनुष चढ़ाकर बाण बरसाना शुरू किया। वह उतनी सेना देखकर भी विचलित नहीं हुआ, मैनाक पर्वत की तरह अटल खड़ा रहा।

दुर्योधन की सब सेना के साथ घटोत्कच घोर युद्ध करने लगा। योद्धाओं के धनुष की टङ्कार जलकर चिटकनेवाले बाँस के शब्द के समान सुन पड़ती थी। कवचों पर बाणों के टकराने का शब्द फटते हुए पर्वत का सा शब्द जान पड़ता था। वीरों के चलाये हुए तोमर आकाश में उड़नेवाले साँप-से देख पड़ते थे। राक्षस घटोत्कच ने क्रुद्ध होकर भयानक सिंह-नाद किया और फिर धनुष चढ़ाकर अर्धचन्द्र बाण से द्रोणाचार्य का धनुष और तीक्ष्ण भल्ल बाण से सोमदत्त की ध्वजा काट डाली। अब वह फिर गरजने लगा। फिर कान तक धनुष की डोरी खींचकर उसने बाह्लीक के हृदय में तीन बाण, कृपाचार्य को एक बाण, चित्रसेन को तीन बाण और विकर्ण के जत्रुदेश में कई बाण मारे। महाबली विकर्ण का शरीर घटोत्कच के बाणों से छिन्न-भिन्न और रक्त से तर हो गया। वे अचेत होकर रथ पर बैठ गये। ३०

इसके बाद प्रभावशाली घटोत्कच ने कुपित होकर भूरिश्रवा को पन्द्रह बाण मारे। वे नाराच वेग से भूरिश्रवा के कवच को फाड़कर पृथ्वी में घुस गये। घटोत्कच ने विविंशति और अश्वत्थामा के सारथियों को कई बाण मारकर घायल कर दिया। दोनों सारथी बाणों की चोट से अत्यन्त व्यथित होकर घोड़ों की रास छोड़कर रथों पर गिर पड़े। महाबली घटोत्कच ने अर्धचन्द्र बाण से सिन्धुराज जयद्रथ की सुवर्णभूषित वराहचिह्नयुक्त ध्वजा काट गिराई। अन्य कई बाणों से उनका धनुष भी काट डाला। क्रोध से लाल आँखें करके घटोत्कच ने चार नाराच बाणों से अवन्तिराज के रथ के चारों घोड़े मार डाले। फिर कई तीक्ष्ण बाण राजकुमार बृहद्बल को मारे। घटोत्कच के बाणों से अत्यन्त व्यथित होकर पराक्रमी बृहद्बल रथ पर गिर पड़े। इसके बाद रथ पर सवार राक्षसराज घटोत्कच ने क्रोध से विह्वल होकर विषैले साँप-सदृश भयङ्कर तीक्ष्ण बाण मारकर युद्धनिपुण शल्य को भी घायल कर दिया। ४० ४३

तिरानबे अध्याय

घटोत्कच का युद्ध

सञ्जय ने कहा—महाराज, राक्षस घटोत्कच इस तरह कौरवपक्ष के सब वीरों को युद्ध-क्षेत्र से हटा करके दुर्योधन को मारने के इरादे से उनकी ओर बढ़ा। आपके पक्ष के सब योद्धा

घटोत्कच को महारथी दुर्योधन की ओर जाते देखकर, ऊँचे दृढ़ धनुष खींचते और सिंहनाद करते हुए उसी तरह घटोत्कच के ऊपर बाण बरसाने लगे, जिस तरह शरत्काल के मेघ पर्वत पर पानी बरसाते हैं। महापराक्रमी घटोत्कच, अंकुश-पीड़ित गजराज की तरह, सैनिकों के बाणों से पीड़ित होकर सहसा गरुड़ की तरह आकाश में चला गया और वहाँ जाकर शरद् ऋतु के मेघ के समान ज़ोर से गरजने लगा। उसके सिंहनाद से आकाश, पृथ्वी, दिशा और विदिशा आदि स्थान गूँज उठे।

धर्मराज युधिष्ठिर ने राक्षस घटोत्कच का विकट सिंहनाद सुनकर भीमसेन से कहा—भाई, वह घटोत्कच का भीषण सिंहनाद सुन पड़ता है। इसलिए वह वीर अवश्य ही महारथी धृतराष्ट्र के पुत्रों से युद्ध कर रहा है। जान पड़ता है, यह युद्ध घटोत्कच के लिए अत्यन्त भयावह हो रहा है। वह इस समय सङ्कट में जान पड़ता है। उधर पितामह भीष्म क्रुद्ध होकर पाञ्चालसेना का संहार करने गये हैं। वीर अर्जुन शत्रुओं से युद्ध करके पाञ्चालों की रक्षा कर रहे हैं। भाई भीम, इस समय ये दो कार्य हैं। तुम शीघ्र जाकर प्राणसङ्कट में पड़े हुए घटोत्कच की रक्षा और अर्जुन की सहायता करो।

बड़े भाई की आज्ञा पाकर महाबली भीमसेन अपने सिंहनाद से शत्रुपक्ष के राजाओं को भीत और उद्विग्न करते हुए, पर्वकाल में उमड़ रहे समुद्र की तरह, बड़े वेग से दौड़े। भीमसेन के साथ युद्धदुर्मद सत्यधृति, सौचित्ति, श्रेणिमान्, वसुदान, काशिराज-तनय अभिभू, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, अभिमन्यु, क्षत्रदेव, क्षत्रधर्मा और अपनी सेना सहित अनूपाधिपति राजा नील आदि वीर चले। इन लोगों ने घटोत्कच के पास जाकर उसे, लड़नेवाले और सदा मस्त रहनेवाले, छः हज़ार हाथियों के बीच में कर लिया। इस प्रकार सब लोग घटोत्कच की रक्षा करने लगे। रथों के पहियों की घरघराहट, सिंहनाद और घोड़ों की टापों के शब्द से पृथ्वी काँपने लगी कौरवपक्ष की सब सेना पाण्डवसेना का कोलाहल सुनकर भीमसेन के डर से घबरा उठी। सब सैनिक उत्साहहीन उदास भाव से घटोत्कच को छोड़कर लौट पड़े।

इस समय दोनों ओर से घोर युद्ध होने लगा। उस भयङ्कर समर में सब महारथो परस्पर आक्रमण करते हुए विविध शस्त्रों से प्रहार करने लगे। दोनों ओर के घुड़सवार, हाथियों के सवारों से और पैदल योद्धा रथियों से ललकारकर प्राणपण से युद्ध करने लगे। उस समय रथों के पहियों से तथा पैदलों, हाथियों और घोड़ों के दौड़ने से धुएँ के रङ्ग की गहरी धूल उड़कर आकाश तक छा गई। नहीं जान पड़ता था कि कौन अपना है और कौन पराया है। पुत्र पिता को और पिता पुत्र को नहीं पहचान पाता था। मनुष्यों के गरजने का शब्द और अस्त्रों की झनकार प्रेतों के शब्द के समान जान पड़ती थी। हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों के रक्त की नदी बह चली। मृत मनुष्यों के केश उसमें सेवार और घास के समान देख पड़ते थे। मनुष्यों के मस्तक कट-कटकर पृथ्वी पर गिरते थे, उससे शिलापात का सा शब्द होता था। राजन्! उस समय धड़, छिन्न-भिन्न हाथी और घोड़े युद्धभूमि में सब जगह पड़े हुए देख पड़ते थे। महारथी लोग तरह-तरह के शस्त्र चलाकर एक दूसरे को मारने के लिए झपट रहे थे। २१

सवारों के द्वारा सञ्चालित घोड़े शत्रुपक्ष के घोड़ों से भिड़ते और अन्त को एक दूसरे के प्रहार से दोनों मरकर गिर पड़ते थे। क्रोध से लाल आँखें किये हुए मनुष्य परस्पर आक्रमण करके गिर पड़ते और एक में गुँथे हुए ही मर जाते थे। महावत के चलाये हुए हाथी, शत्रुपक्ष के पताकाओं से शोभित हाथियों के सामने जाकर, उन पर दाँतों की चोट करते थे। घायल और ख़ून से तर हाथी बिजली सहित बादलों के समान देख पड़ते थे। दाँतों के वार से कुछ हाथियों की सूँड़ फट गई थी और कुछ हाथियों के मस्तक तोमर के प्रहार से कट गये थे। वे इधर-उधर चिल्लाते हुए दौड़ते फिरते थे और आकाश में गरजते हुए बादलों के समान जान पड़ते थे। कुछ हाथियों की सूँड़ें कट गईं और कुछ के शरीर घायल हो गये। जिनके पक्ष कट गये हों उन पर्वतों के समान वे हाथी पृथ्वी पर गिरने लगे। हाथियों ने बड़े-बड़े हाथियों की कोखें दाँतों से फाड़ डालीं। उनके शरीरों से वैसे ही रक्त की धारा बह चली जैसे पहाड़ों से गेरू आदि धातुएँ बह चलें। नाराच बाणों से निहत और तोमरों से घायल गरजते हुए हाथी [सवार मरकर गिर जाने से] शिखरशून्य पर्वत-से देख पड़ने लगे। कुछ मदान्ध हाथी अङ्कुशहीन होने पर क्रुद्ध होकर इधर-उधर रथों, घोड़ों और पैदलों को रौंदने लगे। शत्रुपक्ष के घुड़सवारों के प्रास, तोमर आदि शस्त्रों की चोट खाकर घोड़ों के दल इधर-उधर भागने और सब सेना को उद्विग्न करने लगे। वीरवंशों में उत्पन्न क्षत्रिय रथी योद्धा, मरने का दृढ़ निश्चय करके, अपनी शक्ति की पराकाष्ठा दिखाते हुए निर्भय होकर रथी योद्धाओं से लड़ने लगे। योद्धाओं के लिए वह रणभूमि स्वयंवर की सभा-सी हो रही थी। वे विजयकीर्ति या स्वर्गगति पाने की इच्छा से [उन्मत्त-से होकर] परस्पर प्रहार करने लगे। महाराज, इस संग्राम में दुर्योधन की अधिकांश सेना परास्त होकर भाग खड़ी हुई। ३० ४० ४३

चौरानबे अध्याय

घटोत्कच का युद्ध

सञ्जय ने कहा—महाराज, इसके बाद राजा दुर्योधन ने अपनी सेना को विमुख देखकर क्रोध करके भीमसेन की ओर रथ दौड़ाया। वे भीमसेन के ऊपर बाण बरसाने लगे। लोम-युक्त, सान पर तीक्ष्ण किये गये, एक अर्धचन्द्र बाण से उन्होंने भीमसेन का धनुष काट डाला और एक पर्वतभेदी तीक्ष्ण बाण उनकी छाती में मारा। दुर्योधन का बाण इस वेग से लगा कि भीमसेन को ओठ दबाकर ध्वजा का सहारा लेना पड़ा। उनको व्यथित और शिथिल देखकर राक्षस घटोत्कच प्रज्वलित अग्नि के समान क्रोध से उत्तेजित हो उठा।

अभिमन्यु आदि श्रेष्ठ वीर भी गरजते और ललकारते हुए दुर्योधन के पास पहुँचे। उन्हें क्रोध करके दुर्योधन की ओर बढ़ते देखकर द्रोणाचार्य ने अपने महारथियों से कहा—तुम लोग शीघ्र राजा दुर्योधन के पास जाकर उनकी सहायता और रक्षा करो। वे इस समय विपत्ति के सागर में पड़ गये हैं। देखो पाण्डवसेना के महारथी लोग भीमसेन के अनुगामी होकर, जय की इच्छा से, अस्त्र-शस्त्र बरसाकर, सिंह-नाद से राजाओं को उद्विग्न करते हुए, दुर्योधन के समीप आ रहे हैं। द्रोण के ये वचन सुनकर महावीर कृप, भूरिश्रवा, अश्वत्थामा, विविंशति, चित्रसेन, विकर्ण, जयद्रथ, बृहद्बल और अवन्तिदेश के विन्द-अनुविन्द आदि योद्धा फुर्ती के साथ महाराज दुर्योधन को अपने बीच में करके उनकी रक्षा करने लगे। पाण्डवपक्ष और कौरवपक्ष के वे वीर बीस पग आगे बढ़कर परस्पर प्रहार करने लगे। महात्मा द्रोण ने धनुष चढ़ाकर भीमसेन को छब्बीस बाण मारे। पानी की धारा जैसे पहाड़ को ढक लेती है वैसे ही द्रोणाचार्य ने बाणों से भीमसेन को ढक दिया।

भीमसेन ने फुर्ती से द्रोणाचार्य के वाम पार्श्व में दस बाण मारे। उन बाणों से द्रोणाचार्य बहुत व्यथित और अचेत होकर रथ के ऊपर बैठ गये। यह देखकर महाराज दुर्योधन और अश्वत्थामा

दोनों भीमसेन की ओर चले। काल की तरह उन दोनों वीरों को आते देखकर वीर भीमसेन रथ से उतर पड़े। वे एक भारी गदा लेकर पहाड़ की तरह अचल भाव से खड़े हो गये। गदा हाथ में लिये भीमसेन ऊँचे शिखरवाले कैलास पर्वत के समान शोभायमान थे। दुर्योधन और अश्वत्थामा भीमसेन की ओर झपटे, और उधर से भीमसेन भी उनकी ओर झपटे। उस समय द्रोणाचार्य आदि कौरवपक्ष के वीर, श्रेष्ठ रथी भीमसेन को मार डालने के लिए, उनके पास पहुँचकर हृदय में विविध शस्त्र मारकर उन्हें पीड़ा पहुँचाने लगे। २

महाबली भीमसेन जब कौरवपक्ष के वीरों के बाणों से अत्यन्त व्यथित होकर प्राण-सङ्कट की अवस्था में पड़ गये तब पाण्डवपक्ष के अभिमन्यु आदि महारथी, प्राणों की ममता छोड़कर, उनकी सहायता के लिए दौड़ पड़े। भीमसेन के प्रिय मित्र अनूपेश्वर राजा नील क्रुद्ध होकर अश्वत्थामा के सामने आये। महाराज नील सदा अश्वत्थामा से स्पर्धा रखते थे। इन्द्र ने जैसे दुर्धर्ष, तेजस्वी, त्रिभुवन को त्रास पहुँचानेवाले विप्रचित्ति को मारा था वैसे ही महावीर नील धनुष चढ़ाकर बाण बरसाकर अश्वत्थामा को पीड़ा पहुँचाने लगे। नील के बाणों से अश्वत्थामा का शरीर ख़ून से तर हो गया। वे क्रुद्ध होकर नील को मार डालने का यत्न करने लगे। अश्वत्थामा ने वज्रसदृश शब्द से पूर्ण धनुष पर विचित्र सात भल्ल बाण चढ़ाये। उन्होंने छः भल्ल बाणों से नील के चारों घोड़े मार डाले और ध्वजा काट डाली। सातवाँ बाण नील की छाती में मारा। उस प्रहार से अचेत-से होकर नील रथ पर बैठ गये। ३१

राजा नील को अचेत देख क्रोध से विह्वल राक्षस घटोत्कच, अपने साथी राक्षसों को लेकर, बड़े वेग से अश्वत्थामा का सामना करने आया। और राक्षस भी आक्रमण करने चले। महाबली अश्वत्थामा ने घटोत्कच को देखते ही झपटकर बाणों से भयानक राक्षसों को मारना और गिराना शुरू किया। घटोत्कच ने अपने आगे के राक्षसों को अश्वत्थामा के बाणों से भागते देखकर क्रुद्ध हो, अश्वत्थामा को मोहित करने के लिए, अपनी भयङ्कर माया प्रकट की। ४०

राक्षस की माया से मोहित होकर कौरवपक्ष के वीर पुरुष युद्ध से हट गये। राक्षस के बाणों ने उनके अङ्ग छिन्न-भिन्न कर दिये। असंख्य सैनिक ख़ून से तर होकर, धरती पर गिरकर, कातर दृष्टि से एक दूसरे को देख रहे थे। द्रोण, दुर्योधन, शल्य, अश्वत्थामा आदि कौरव-पक्ष के वीर युद्ध छोड़-छोड़कर हट गये। रथीगण मरने और राजा लोग मर-मरकर गिरने लगे। सैकड़ों-हज़ारों घोड़ों और सवारों के शरीर छिन्न-भिन्न हो गये। मरे और अधमरे लोगों से वहाँ की पृथ्वी भर गई। आपकी सेना को शिविर की ओर भागते देखकर मैं और भीष्म दोनों पुकार-पुकारकर उनसे कहने लगे—"हे सैनिको! भागो नहीं, युद्ध करो। यह सब मायावी घटोत्कच की माया है। इससे मत डरो।" परन्तु राक्षस की माया के प्रभाव से अत्यन्त मोहित होने के कारण वे लोग नहीं ठहरे। हमारी बातों का ख़याल न करके वे भागने लगे।

महाराज; इस तरह जय प्राप्त करके घटोत्कच और पाण्डवगण सिंहनाद करने लगे। पाण्डवसेना में शङ्ख और नगाड़े बजने लगे। उनका शब्द सब ओर छा गया। सूर्यास्त का समय
५० हो आया। घटोत्कच के बाणों से छिन्न-भिन्न होकर आपकी सेना इधर-उधर भागने लगी।

पञ्चानबे अध्याय

भगदत्त का पराक्रम

सञ्जय ने कहा—हे नरनाथ, महाराज दुर्योधन ने पितामह भीष्म के पास जाकर विनीत भाव से प्रणाम किया। फिर लम्बी साँसें ले-लेकर अपनी हार और घटोत्कच की जीत का हाल विस्तार के साथ कहा कि हे पितामह, पाण्डवगण जैसे कृष्ण का आश्रय पाकर उन्हीं के भरोसे युद्ध कर रहे हैं वैसे ही मैंने आपके और गुरु के भरोसे पर पाण्डवों से युद्ध ठाना है। हे शत्रुदमन, मैं और मेरी ग्यारह अक्षौहिणी सेना आपके अधीन है; फिर भी घटोत्कच की सहायता से भीमसेन आदि पाण्डवों ने युद्ध में मुझे जीत लिया! सूखा पेड़ जैसे आग से जलता है वैसे ही मेरा शरीर क्रोध से जल रहा है। इसलिए अब वही उपाय कीजिए जिससे मैं आपका आश्रय लेकर दुष्ट राक्षस को मार सकूँ।

राजा दुर्योधन के ये वचन सुनकर भीष्म ने कहा—राजन्, इस कार्य के लिए तुमको
१० जो करना होगा सो मैं कहता हूँ, सुनो। तुम सदा, सब अवस्थाओं में, अपनी रक्षा करते रहो। और देखो, राजा या तो राजा से युद्ध करता है, [या राजकुमार से] इसलिए तुम धर्मराज, भीमसेन, अर्जुन, नकुल या सहदेव से ही युद्ध करना। मैं, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, शल्य, सौमदत्ति, विकर्ण और दुःशासन आदि तुम्हारे भाई, सब लोग तुम्हारे लिए महाबली राक्षस घटोत्कच से युद्ध करेंगे। अथवा यदि तुमको उस राक्षस से ऐसा ही सन्ताप पहुँचा है तो ये इन्द्र के समान प्रतापी महाराज भगदत्त उस राक्षस के साथ युद्ध करने जायँ। महावीर भीष्म ने दुर्योधन से यह कहकर सबके सामने भगदत्त से कहा—महाराज, तुम शीघ्र जाकर सब योद्धाओं के सामने यत्नपूर्वक युद्ध में प्रचण्ड अधम राक्षस को रोको। जैसे इन्द्र ने तारकासुर को मारा था वैसे इस राक्षस को जीतो। तुम्हारा पराक्रम अद्भुत है और अस्त्र भी दिव्य हैं। तुम पहले असुरों के साथ युद्ध कर चुके हो। अतएव इस समय अपने
२० से स्पर्धा रखनेवाले दुरात्मा घटोत्कच को शीघ्र मारो।

पराक्रमी सेनापति भीष्म की आज्ञा पाकर राजा भगदत्त, सुप्रतीक नाम के हाथी पर चढ़कर, सिंहनाद करते हुए शत्रुओं की ओर चले। पाण्डवपक्ष के महारथी भीमसेन, अभिमन्यु, राक्षस घटोत्कच, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, सत्यधृति, क्षत्रदेव, चेदिराज, वसुदान और दशार्णदेश के राजा आदि वीर लोग भी प्रलयकाल के मेघ के समान गरजते हुए भगदत्त को आते देखकर,

क्रुद्ध होकर, उनकी ओर चले। इसके बाद भगदत्त के साथ पाण्डवों का घोर संग्राम होने लगा। रथी लोग हाथियों और रथों के ऊपर बड़े वेग से बाण बरसाने लगे। सवारों के द्वारा सुशिक्षित मस्त हाथी स्वयं घायल होकर भी दूसरे हाथियों से निर्भय भाव से भिड़ने लगे। मदान्ध और क्रोधान्ध गजराज परस्पर भिड़कर दाँतों का प्रहार करने लगे। चामरभूषित घोड़े, प्रास हाथ में लिये हुए सवारों के द्वारा चलाये जाकर, वेग के साथ परस्पर आक्रमण और प्रहार करने लगे। सैकड़ों-हज़ारों पैदल सेना के दल परस्पर शक्ति, तोमर आदि शस्त्रों के प्रहार करके पृथ्वी पर गिरने लगे। रथों पर बैठकर रथी लोग कर्णी, नालीक और तोमर आदि बाणों से वीरों को मारकर सिंहनाद करने लगे। ३०

राजन्! इस तरह रोंगटे खड़े कर देनेवाला संग्राम मच जाने पर महाधनुर्द्धर भगदत्त, झरनों से शोभित पहाड़ के समान बहते हुए मदजल से सुशोभित, हाथी पर चढ़कर चारों ओर बाण बरसाते हुए भीमसेन की ओर दौड़े। वर्षाकाल का मेघ जैसे जलधारा से पर्वत को ढक देता है वैसे ही उन्होंने भीमसेन को बाणों से छिपा दिया। महावीर भीम ने क्रोध से अधीर होकर सौ से अधिक हाथी के चरणरक्षकों को बाणों से मार डाला। महा-तेजस्वी राजा भगदत्त ने उनको मरा हुआ देख क्रुद्ध होकर अपने हाथी को भीमसेन के रथ की ओर बढ़ाया। भगदत्त के द्वारा सञ्चालित वह हाथी धनुष से छूटे हुए तीर की तरह भीमसेन के ऊपर झपटा। इसी समय पाण्डवपक्ष के सब महारथी भीमसेन के पीछे-पीछे वेग से आगे बढ़े। अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, दशार्णराज, क्षत्रदेव, चेदिराज, चित्रकेतु और केकय-गण क्रोध के मारे महाधनुष चढ़ाकर, चारों ओर से घेरकर, उस हाथी पर दिव्य अस्त्र छोड़ने लगे। वह गजराज बाणों के प्रहार से बहुत ही घायल हो गया। उसके शरीर से रक्त बहने लगा। वह गेरू से रँगे हुए गिरिराज की तरह शोभायमान हुआ। ३६

दशार्ण देश के राजा पर्वततुल्य ऊँचे हाथी पर चढ़कर भगदत्त के हाथी की ओर बढ़े। तटभूमि जैसे महासागर के जल को रोकती है वैसे ही सुप्रतीक ने उस हाथी के वेग को रोका और उस हाथी ने भगदत्त के सुप्रतीक हाथी का वेग रोका। यह देखकर पाण्डवगण और उनकी सेना "वाह वाह" करने लगी। तब राजा भगदत्त ने क्रुद्ध होकर शत्रु के हाथी को चौदह तोमर मारे। साँप जैसे बाँबी में घुसता है वैसे ही वे तोमर, हाथी पर पड़े हुए सुवर्ण-मय कवच को तोड़कर, उसके शरीर में घुस गये। दशार्णाधिपति का हाथी इससे बहुत घायल होकर भयानक शब्द से चिल्लाने लगा और वेग से चलनेवाली आँधी जैसे पेड़ों को तोड़ती है वैसे अपने ही पक्ष की सेना को रौंदता हुआ बड़े वेग से भागा।

इस तरह दशार्णराज का हाथी भाग जाने पर पाण्डवपक्ष के सब महारथी युद्ध के लिए उद्यत होकर, भीमसेन को आगे करके, सिंह की तरह गरजते और तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्र बरसाते

५१ हुए भगदत्त पर आक्रमण करने चले। महाधनुर्द्धर भगदत्त ने उन कुपित वीरों का सिंहनाद सुनकर, बहुत ही क्रुद्ध होकर, निर्भय भाव से अपने हाथी को उनकी ओर बढ़ाया। अङ्कुश का इशारा पाते ही गजराज सुप्रतीक प्रलयकाल के संवर्तक अग्नि के समान क्रोध से प्रज्वलित हो उठा। वह सामने पड़नेवाले हाथियों, घोड़ों, सवारों और सैकड़ों-हज़ारों पैदलों तथा रथों को रौंदता हुआ तेज़ी से दौड़ा। पाण्डवों की सेना आग में पड़े चमड़े की तरह डर से सङ्कुचित हो उठी।

उधर प्रदीप्त-मुख और प्रदीप्त-नयन महाबली घटोत्कच बड़ा भयानक रूप धारण करके, क्रोध से प्रज्वलित होकर, पर्वत को भी तोड़ सकनेवाला एक भयङ्कर शूल हाथ में लेकर राजा ६० भगदत्त की ओर दौड़ा। उसने हाथी को, मारने के लिए, वह शूल मारा। यह देखकर कुपित महाराज भगदत्त ने एक तीक्ष्ण अर्धचन्द्र बाण मारकर उस शूल के दो टुकड़े कर डाले। इन्द्र के चलाये वज्र के समान वह शूल दो टुकड़े होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। अब भगदत्त ने "ठहर जा, ठहर जा" कहकर एक अग्निशिखातुल्य घोर शक्ति राक्षस को मारी। उस सुवर्ण-दण्ड-भूषित शक्ति को आकाश में आते हुए वज्र की तरह देखकर घटोत्कच ने उछलकर पकड़ लिया और सिंहनाद करके भगदत्त के सामने ही घुटनों से उसके दो टुकड़े कर डाले। उसका यह कार्य अत्यन्त अद्भुत जान पड़ा। देवलोक में देवता, गन्धर्व और मुनिगण उस राक्षस के इस अद्भुत कर्म को देखकर बहुत विस्मित हुए। भीमसेन और उनके साथी वीरगण 'वाह वाह" के शब्द से पृथ्वी-मण्डल को प्रतिध्वनित करने लगे। परम-प्रसन्न पाण्डवों का सिंहनाद सुनकर महा-धनुर्द्धर भगदत्त अत्यन्त अधीर हुए। दृढ़ धनुष चढ़ाकर वे पाण्डवों के महा-७० रथियों को डरवाने लगे। वे शत्रुपक्ष के वीरों पर भयानक अग्नितुल्य बाण

बरसाने लगे। उन्होंने भीमसेन को एक बाण, घटोत्कच को नव बाण, अभिमन्यु को तीन बाण और केकयकुमारों को पाँच बाण मारे। इसके बाद धनुष पर एक बाण चढ़ाकर क्षत्रदेव के दाहने हाथ में मारा। इससे क्षत्रदेव के हाथ से धनुष और बाण गिर पड़ा। भगदत्त ने फिर

पाँच तीक्ष्ण बाण द्रौपदी के पुत्रों को मारे। फिर महावीर भीमसेन के घोड़ों को मारकर तीन बाणों से ध्वजा काट डाली और अन्य तीन बाणों से सारथी को घायल कर दिया। उनका सारथी विशोक उस प्रहार से अत्यन्त पीड़ित होकर रथ पर गिर पड़ा।

अब श्रेष्ठ रथी भीमसेन गदा लेकर रथ से उतर पड़े, और बड़े वेग से शत्रु की ओर दौड़े। उन्हें शृङ्गयुक्त पर्वत की तरह आते देखकर कौरवपक्ष के वीर डर से विह्वल हो उठे। उधर अर्जुन चारों ओर शत्रुओं की सेना को मारते हुए उस स्थान पर आये जहाँ भीम और घटोत्कच के साथ भगदत्त का युद्ध हो रहा था। महारथी भाइयों को युद्ध करते देखकर वे भी शत्रुसेना के ऊपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। राजा दुर्योधन ने हाथी, घोड़े, रथ आदि से परिपूर्ण और भी बहुत सी सेना युद्ध के लिए भेजी। अर्जुन उस नई आती हुई कौरव-सेना को मारने के लिए उसकी ओर चले। राजा भगदत्त अपने हाथी से पाण्डवसेना को रौंदवाते हुए बड़े वेग से युधिष्ठिर की ओर चले। उस समय शस्त्र उठाये हुए पाञ्चाल, सृञ्जय, केकय आदि के साथ भगदत्त का घोर संग्राम होने लगा। उसी समय भीमसेन ने श्रीकृष्ण और अर्जुन से इरावान् की मृत्यु का हाल कहा। ८०, ८६

छियानवे अध्याय

आठवें दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय ने कहा—महाराज, अपने पुत्र इरावान् की मृत्यु का हाल सुनकर अर्जुन को बड़ा दुःख हुआ। क्रोध से विह्वल होकर नाग की तरह साँसें लेते हुए वे श्रीकृष्ण से कहने लगे—हे केशव, पहले ही महामति विदुर ने कौरवों और पाण्डवों के प्रियजन-वियोगरूप अति घोर भय का हाल जानकर हमको और दुर्योधन आदि को युद्ध न करने का उपदेश दिया था। देखो, हमने कौरवपक्ष के बहुत से वीरों को और कौरवों ने हमारे बहुत से वीरों को मार डाला है। मित्र! लोग धन के लिए ही बुरे और निन्दित काम करते हैं। हम भी उसी धन के लिए जातिवधरूप पाप कर रहे हैं। धन को धिक्कार है! जाति-भाइयों को मारकर धनी बनने की अपेक्षा मर जाना ही निर्धन मनुष्य के लिए अच्छा है। हे वासुदेव, इन भाइयों और जाति-वालों को मारकर हमें क्या लाभ होगा? दुष्ट दुर्योधन और शकुनि के अपराध तथा कर्ण की कुमन्त्रणा से ये सब वीर क्षत्रिय मारे जा रहे हैं। अब मेरी समझ में आया है कि पहले राजा युधिष्ठिर दुर्योधन से आधा राज्य या केवल पाँच गाँव माँगकर अच्छा ही काम कर रहे थे; किन्तु दुष्ट दुर्योधन उस समझौते पर राज़ी नहीं हुआ। हे केशव, इस समय इन वीर क्षत्रियों की मृत्यु देखकर मैं आप अपनी निन्दा कर रहा हूँ! क्षत्रियवृत्ति को धिक्कार है! जाति-

भाइयों से लड़ने की इच्छा मुझे बिलकुल नहीं है; किन्तु मैं युद्ध न करूँगा तो वीर क्षत्रिय-
१० गण मुझे कायर समझेंगे। इसी से मैं युद्ध कर रहा हूँ। हे मधुसूदन, दुर्योधन की सेना के बीच शीघ्र मेरा रथ ले चलो। मैं अपने बाहुबल से इस अ-पार समर-सागर के पार जाऊँगा। नामर्द की तरह वृथा पछतावे में पड़ना और समय गँवाना उचित नहीं है।

शत्रुपक्ष के वीरों को मारनेवाले अर्जुन के ये वचन सुनकर कृष्णचन्द्र, पवन के वेग से चलनेवाले घोड़ों को हाँककर, उधर ही रथ ले चले। पर्वकाल में उमड़ते हुए समुद्र में जैसा शब्द होता है वैसा ही कोलाहल उस समय कौरवों की सेना में होने लगा। तीसरे पहर भीष्म के साथ पाण्डवों का घोर युद्ध होने लगा। जिस तरह वसुगण इन्द्र को चारों ओर से घेरे रहते हैं उसी तरह धृतराष्ट्र के पुत्र द्रोणाचार्य को अपने बीच में करके भीमसेन की ओर बढ़े। अब महारथी भीष्म, कृपाचार्य, भगदत्त और सुशर्मा अर्जुन से लड़ने चले। कृतवर्मा और वाह्लीक सात्यकि से लड़ने चले। राजा अम्बष्ठक अभिमन्यु से लड़ने चले। अन्य महारथी लोग अपने समान महारथियों से लड़ने लगे। इसके बाद दोनों पक्षों में महाभयानक युद्ध होने लगा।

आपके पुत्रों को देखकर महावीर भीमसेन आहुति पड़ने से प्रज्वलित अग्नि के समान क्रोध से प्रज्वलित हो
२० उठे। आपके पुत्र वैसे ही भीमसेन पर बाण बरसाने लगे जैसे बादल पहाड़ पर पानी बरसाते हैं। पराक्रमी भीमसेन क्रोध से ओठ चाटते हुए आपके पुत्रों पर बाण बरसा रहे थे। उन्होंने तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से व्यूढ़ोरस्क नाम के राजकुमार का सिर काट डाला। फिर एक तीक्ष्ण भल्ल बाण मारकर कुण्डली नाम के राजकुमार को वैसे ही मार डाला जैसे सिंह मृग को मार डालता है। अब वे फुर्ती के साथ आपके अन्य पुत्रों पर बाण बरसाने लगे। राजन्! भीमसेन के अव्यर्थ बाणों के प्रहार से अनाधृष्य, कुण्डभेदी, वैराट, दीर्घलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु और कनकध्वज नामक आपके पुत्र मरकर रथ पर से गिर पड़े। पृथ्वी पर पड़े हुए वे वीर राजकुमार उखड़कर गिरे हुए
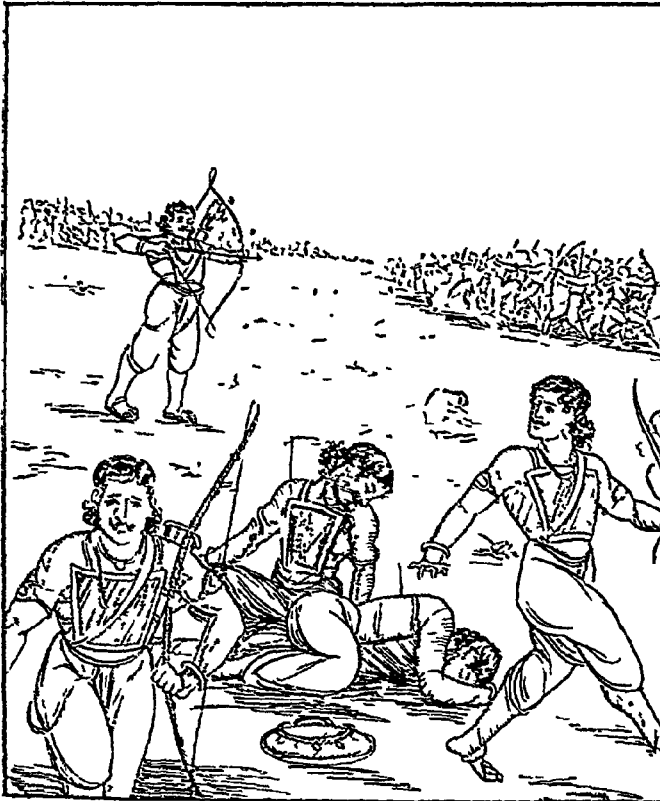
पुष्प-पूर्ण आम के वृक्षों की तरह देख पड़े। महाबाहु भीमसेन को साक्षात् काल के समान सामने देखकर आपके अन्य पुत्र डर के मारे इधर-उधर भागने लगे।

महाराज, महावीर द्रोणाचार्य भीमसेन के हाथों आपके पुत्रों की मृत्यु देखकर उन पर तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करने लगे। द्रोण के बाणों से पीड़ित होकर भी भीमसेन ने आपके पुत्रों को मारकर अपने अद्भुत पौरुष का परिचय दिया। बली साँड़ जैसे आकाश से गिरती हुई बूँदों के वेग को सहज ही सह लेता है, वैसे ही भीमसेन भी द्रोणाचार्य के बाणों को सहने लगे। भीमसेन ने एक साथ द्रोणाचार्य का सामना किया और आपके पुत्रों को भी मारा, यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। महाराज, बाघ जैसे मृगों के झुण्ड में घूमता और क्रीड़ा करता है वैसे ही महाबली भीमसेन भी आपके पुत्रों के बीच में विचरते हुए युद्ध की क्रीड़ा करने लगे। एक भेड़िया जैसे हज़ारों पशुओं को मार डालता है वैसे ही भीमसेन आपके पुत्रों के बीच में जाकर उन्हें भगाने लगे। ३०

इधर महारथी भीष्म, भगदत्त और कृपाचार्य अतुलबलधारी अर्जुन को बड़े वेग से आते देखकर फुर्ती के साथ उन्हें रोकने लगे। अतिरथी योद्धा अर्जुन ने अपने दिव्य अस्त्रों से उनके अस्त्रों को निष्फल कर दिया। वे चुन-चुनकर कौरवसेना के मुख्य वीरों को मारने लगे। अभिमन्यु ने असंख्य बाण मारकर राजा अम्बष्ठ के रथ के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। अभिमन्यु के बाणों से रथ टूटते देखकर राजा अम्बष्ठ रथ से उतर पड़े और अभिमन्यु पर तलवार का वार करके हार्दिक्य के रथ पर चढ़ गये। युद्धनिपुण शत्रुदमन अभिमन्यु ने अम्बष्ठ के उस खड्ग को टुकड़े-टुकड़े कर डाला। यह देखकर सब सैनिक "वाह वाह" करने लगे। ४०

महाराज, धृष्टद्युम्न आदि पाण्डवपक्ष के योद्धा आपकी सेना से और आपके योद्धा उनकी सेना से भिड़कर घोर युद्ध करने लगे। दोनों पक्ष के सैनिक परस्पर भिड़कर एक दूसरे के केश पकड़कर खींचते और नख, दाँत, घूँसे, घुटने, थप्पड़, खड्ग, कुहनी आदि के प्रहारों से मरते और मारते थे। युद्ध के आवेश में आकर पिता पुत्रों को और पुत्र पिता आदि को मार रहे थे। शत्रुपक्ष के बाणों से योद्धाओं के अङ्ग कट-फट जाते थे। मरे हुए लोगों के सुवर्णमण्डित पीठ और मूठ-वाले मनोहर धनुष और बहुमूल्य अलङ्कार युद्धभूमि में इधर-उधर दिखाई दे रहे थे। सोने-चाँदी से शोभित, पैने बाण केंचुल से निकले हुए नागों की तरह रणभूमि में गिरते थे। हाथीदाँत की मूठों से शोभित सुवर्णमण्डित खड्ग, ढालें, प्रास, पट्टिश, सुवर्णमण्डित ऋष्टि, शक्ति, बढ़िया कवच, भारी मूसल, भिन्दिपाल, विचित्र स्वर्णभूषित धनुष, तरह-तरह के परिघ, चामर, व्यजन और अन्य कई तरह के अस्त्र-शस्त्रों को हाथ में लिये महारथी वीर मर जाने पर भी दूर से जीवित-से जान पड़ते थे। बहुतों के शरीर गदा के प्रहार से चिथड़ा हो गये थे, बहुतों के सिर मूसल की चोट से फट गये थे और बहुत से योद्धा हाथी, घोड़े, रथ आदि के नीचे कुचल गये थे। ऐसे ४९

असंख्य मनुष्य जहाँ-तहाँ पड़े हुए थे। हाथियों, घोड़ों और मनुष्यों के शरीरों के ढेरों से वह पृथ्वी पर्वतमयी सी जान पड़ती थी। शस्त्रों से छिन्न-भिन्न नर-शरीरों से और शक्ति, ऋष्टि, तोमर, बाण, खड्ग, पट्टिश, प्रास, बर्छी, परशु, परिघ, भिन्दिपाल और शतघ्नी आदि से पृथ्वी पटी पड़ी थी। महाराज! उनमें से कोई चुपचाप पड़ा था, कोई धीरे-धीरे कराह रहा था, कोई ज़ोर से चिल्ला रहा था और कोई बिलकुल मरा पड़ा था। केयूरभूषित चन्दनचर्चित बाहु, हाथी ६० की सूँड़ के समान जाँघें, चूड़ामणि और कुण्डलों से भूषित सिर सर्वत्र कटे पड़े थे। उनसे रणभूमि की अपूर्व बीभत्स शोभा हो रही थी। ख़ून से सने हुए स्वर्णमय कवच चारों ओर पड़े हुए थे, जिनसे वह युद्धभूमि अग्निशिखामयी-सी प्रतीत होती थी। सुवर्णपुङ्ख बाण, धनुष, तर्कस, किङ्किणीजालभूषित टूटे हुए रथ, ख़ून से तर निकली हुई जीभ, घोड़े, रथ, अनुकर्ष, पताका, मटमैली ध्वजा, महाशङ्ख आदि सर्वत्र पड़े थे। उनसे वह पृथ्वी अलङ्कारों से भूषित स्त्री के समान शोभायमान हो रही थी। हाथियों की सूँड़ें कट गई थीं और वे पृथ्वी पर पड़े थे। प्रास के प्रहार से घायल और गहरी यन्त्रणा से पीड़ित हाथी चीत्कार करते हुए सूँड़ें पटक रहे थे। उनसे वह पृथ्वी झरनों से शोभित पहाड़ों से व्याप्त-सी जान पड़ती थी। तरह-तरह के कम्बल, हाथियों की विचित्र झूलें, वैदूर्यमणिमण्डित दण्ड, अङ्कुश, घण्टा, फटे हुए विचित्र ७० आसन, विचित्र कण्ठभूषण, सोने की ज़ञ्जीरें, छिन्न-भिन्न यन्त्र, काञ्चनमण्डित तोमर, धूल से सने हुए छत्र, कवच, सवारों की अङ्गदभूषित कटी हुई भुजाएँ, विमल तीक्ष्ण प्रास, यष्टि, पगड़ी, सुवर्णमय विचित्र बाण, घोड़ों के परिमर्दित विचित्र कम्बल, राङ्कव कम्बल, राजाओं के मस्तक की विचित्र चूड़ामणि, छत्र, चामर, व्यजन और वीरों के मनोहर कुण्डलों से शोभित श्मश्रुयुक्त प्रकाशपूर्ण सिर इधर-उधर पड़े थे। उनसे वह पृथ्वी ग्रह-नक्षत्र-भूषित आकाश के समान शोभा पा रही थी।

हे नरनाथ, दोनों पक्ष के वीर जब अधिकता से मारे जा चुके तब मरने से बचे हुए योद्धा थककर भागने और कुचले जाने लगे। इतने में महाभयङ्कर रात्रि आ गई। उस समय समरभूमि में कुछ नहीं सूझता था। तब कौरवों और पाण्डवों ने युद्ध समाप्त कर दिया। ८० सब लोग अपने-अपने डेरे में जाकर विश्राम करने लगे।

सत्तानबे अध्याय

पाण्डवों को परास्त करने की सलाह

सञ्जय ने कहा—राजन्! इसके बाद राजा दुर्योधन, शकुनि, दुःशासन और कर्ण मिलकर सलाह करने लगे कि किस तरह सेना सहित पाण्डवों को परास्त किया जाय। दुर्योधन ने कर्ण और शकुनि को सम्बोधन करके कहा—हे वीरो! समझ में नहीं आता कि द्रोणाचार्य,

भीष्म, कृपाचार्य, शल्य और भूरिश्रवा, ये लोग पाण्डवों को क्यों नहीं परास्त करते या मारते। पाण्डव लोग जीवित रहकर विना किसी बाधा के हमारे पक्ष की सेना को नष्ट कर रहे हैं। हे कर्ण, मेरी सेना और अस्त्र-शस्त्र दिन-दिन घटते जा रहे हैं। सुनता हूँ, पाण्डवों को देवता भी नहीं मार सकते। वे ऐसे ही शूर हैं। मैं उन्हें किस तरह मारूँगा या परास्त करूँगा? मुझे बड़ा सन्देह और चिन्ता हो रही है।

कर्ण ने कहा—राजन्, आप शोक न करें। मैं आपका प्रिय करूँगा। केवल पितामह भीष्म को शीघ्र इस रण से अलग हो जाने दो। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि भीष्म अस्त्र-शस्त्र त्यागकर युद्ध से हट जायँ तो मैं, उनके सामने ही, सोमकों सहित पाण्डवों को मार डालूँगा। भीष्म पितामह पाण्डवों पर बहुत दया रखते हैं। इस कारण वे कभी पाण्डवों को परास्त नहीं कर सकेंगे। भीष्म अत्यन्त समर-प्रिय हैं। वे अभिमानी भीष्म कैसे पाण्डवों को जीतकर युद्ध को समाप्त कर देंगे? राजन्, आप शीघ्र भीष्म के शिविर में जाइए। वे आपके गुरुजन, वृद्ध और मान्य हैं। आप उनसे प्रार्थनापूर्वक अनुरोध कीजिए जिससे शस्त्र रखकर वे युद्ध से अलग हो जायँ। वे शस्त्रत्याग कर देंगे तो आप निश्चय जानिए, मैं अकेला ही बन्धु-बान्धव-सुहृद्गण-सहित पाण्डवों को मार डालूँगा।

१०

राजन्, कर्ण के वचन सुनकर दुर्योधन ने दुःशासन से कहा—भाई, शीघ्र मेरे साथियों को तैयार होने की आज्ञा दो। अब दुर्योधन ने कर्ण से कहा कि हे शत्रुदमन, मैं भीष्म को अस्त्र-शस्त्र त्यागकर युद्ध से अलग होने के लिए राज़ी करके अभी तुम्हारे पास आता हूँ। भीष्म युद्ध करना छोड़ देंगे तो तुम शीघ्र युद्ध करके पाण्डवों को मारना।

महाराज, कर्ण से यों कहकर देवताओं के बीच में इन्द्र के समान अपने भाइयों के साथ राजा दुर्योधन भीष्म के पास जाने को तैयार हुए। दुःशासन ने पराक्रमी दुर्योधन को घोड़े पर सवार कराया। सिंह के समान रोबीले वीर दुर्योधन ने अङ्गद, मुकुट और हाथों के अन्य

आभूषण पहने। वे मजीठ के फूल के समान कान्तिवाले, सुनहरे रङ्ग के, शरीर में सुगन्धित
२१ चन्दन और अङ्गराग लगाये हुए थे। साफ़ कपड़े और गहने पहने सूर्य के समान तेजस्वी राजा दुर्योधन फुर्ती से भीष्म के शिविर को चले। जैसे देवगण देवलोक में इन्द्र की रक्षा करने के लिए उनके पीछे-पीछे चलते हैं वैसे ही दुर्योधन के भाई और अन्य महारथी वीर तथा सुहृद्गण शस्त्र लेकर, दुर्योधन की रक्षा के लिए, उनके पीछे चले। कोई हाथी पर, कोई घोड़े पर और कोई रथ पर चढ़कर चले।

कौरवों के द्वारा पूजित, भाइयों के बीच में स्थित, राजा दुर्योधन सूतमागधगण के मुँह से अपनी स्तुति सुनते हुए भीष्म के शिविर को चले। वे राह में हाथी की सूँड़ के समान सुदृढ़, सब शत्रुओं को पीड़ा पहुँचानेवाला, दाहना हाथ उठाकर अनुगत लोगों के प्रणामों को स्वीकार
३० करते, नाना देश-निवासियों की बातें सुनते और स्तुति करनेवालों को पुरस्कार देते चले। भृत्यगण सुवर्णमय मशालें लेकर उनके चारों ओर दौड़ते चले। सुगन्धित तेल से जलनेवाली मशालों के बीच राजा दुर्योधन चमकीले ग्रहों के मध्य में चन्द्रमा के समान शोभायमान हुए। सुनहरी पगड़ी पहने नौकर लोग बेंत से भीड़ हटाते हुए आगे-आगे चलने लगे।

राजा दुर्योधन धीरे-धीरे भीष्म के शिविर में पहुँचकर सवारी से उतरे और पितामह के पास गये। उन्हें प्रणाम करके, सर्वतोभद्र महामूल्य ग़लीचे के ऊपर सोने के सिंहासन पर बैठकर, हाथ जोड़कर आँखों में आँसू भरे हुए वे गद्गद स्वर से कहने लगे—हे शत्रुनाशन! हम आपका सहारा लेकर पाण्डवों की कौन कहे, देवताओं और दानवों को भी युद्ध में परास्त करने का साहस कर सकते हैं। इसलिए हे पितामह, इन्द्र जैसे दानवों को परास्त करते हैं वैसे ही आप पाण्डवों को परास्त कीजिए। हे महामति! आप सब सोमकों, पाञ्चालों, कैकेयों और करूषों को परास्त
४० करने का वादा कर चुके हैं। इस समय वह अपना वचन सत्य कीजिए। अथवा जो आप पाण्डवों पर दया या हम पर विद्वेष की दृष्टि रखने के या हमारे अभाग्य के कारण पाण्डवों को मार डालना न चाहते हों तो फिर युद्धप्रिय कर्ण को युद्ध करने की आज्ञा दे दीजिए। वे समर में बन्धु-बान्धवों-सहित पाण्डवों को परास्त करके मार डालने के लिए तैयार हैं।
४३ कौरवश्रेष्ठ दुर्योधन भीष्म से यह कहकर चुप हो रहे।

अट्ठानबे अध्याय

भीष्म पितामह और दुर्योधन का संवाद

सञ्जय कहते हैं—हे राजन्, वाक्य-बाण द्वारा दुर्योधन ने भीष्म पितामह के मर्मस्थल में चोट पहुँचाई। वे दुःख से अत्यन्त कातर और व्यथित होकर महानाग की तरह साँसें लेते हुए चुप रहे। दूसरे काल के समान भीष्म की आँखें क्रोध से लाल होकर ऊपर चढ़ गईं। वे

इस तरह देखने लगे मानो देवता-दैत्य-गन्धर्व-मनुष्य आदि सहित तीनों लोकों को भस्म कर डालेंगे; किन्तु उन्होंने कोई अप्रिय या रूखी बात नहीं कही। दम भर बाद शान्त-भाव से समझाते हुए पितामह बोले—सुनो दुर्योधन, मैं प्राणों की परवा न करके यथाशक्ति यत्नपूर्वक तुम्हारा प्रिय करने की चेष्टा कर रहा हूँ। तब भी तुम ऐसे वचन-बाणों से क्यों मेरे मर्मस्थल को चोट पहुँचाते हो? अर्जुन ने खाण्डव-दाह के समय इन्द्र आदि देवताओं को जीतकर अग्नि को तृप्त किया था, वही उनके पराक्रम का यथेष्ट प्रमाण है। गन्धर्वगण जब तुमको पकड़कर ले चले थे, तुम्हारे शूर भाई और कर्ण तुमको छोड़कर भाग गये थे तब अर्जुन, तुमको छुड़ाकर, अपने पराक्रम का यथेष्ट परिचय दे चुके हैं। विराट नगर में गायें हरने के समय हम सब योद्धा मिलकर भी अकेले अर्जुन का कुछ नहीं कर सके; बल्कि उन्होंने हम सबको जीत लिया। यही उनके बल का यथेष्ट परिचय है। उस समय अर्जुन कुपित द्रोणाचार्य को, मुझको, महारथी अश्वत्थामा को और कृपाचार्य को जीतकर हम सबके कपड़े उतार ले गये थे; वही उनके बल का श्रेष्ठ निदर्शन है। अपने को शूर और मर्द मानकर सदा अभिमान करनेवाले कर्ण को १० भी उस समय जीतकर अर्जुन उसके कपड़े ले गये थे और उसके वे कपड़े बालिका उत्तरा को दिये थे; वही उनके पराक्रम का अच्छा नमूना है। इन्द्र भी जिन्हें हरा नहीं सके उन निवात-कवच दानवों को अर्जुन ने सहज में मार डाला; यही उनके बल का श्रेष्ठ प्रमाण है। राजन्! नारद आदि महर्षि जिन्हें महाशक्तिसम्पन्न, सृष्टि-स्थिति-प्रलयकारी, सबके ईश्वर, देवदेव, परमात्मा और सनातन पुरुष कहते हैं, वह शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी, विश्व-रक्षक, वासुदेव अर्जुन के सहायक और रक्षक हैं। उन महाप्रतापी यशस्वी अर्जुन को युद्ध में कौन परास्त कर सकता है?

हे दुर्योधन, मोह के वश होने से तुम्हें कार्य-अकार्य का ज्ञान नहीं है। मृत्यु के वश मनुष्य जैसे साधारण वृक्षों को सुवर्णमय देखता है वैसे ही तुम सब बातों को विपरीत देख रहे हो। तुमने आप ही पहले अन्याय करके सृञ्जयों और पाण्डवों के साथ वैरभाव उत्पन्न किया है। इस समय हम लोगों के सामने उनको युद्ध में हराकर अपना पौरुष दिखाओ। या तो मैं शिखण्डी के सिवा सब सृञ्जयों और पाञ्चालों को मारकर तुम्हारा प्रिय करूँगा या मैं स्वयं उनके हाथ से मारा जाऊँगा। शिखण्डी अपने पिता के यहाँ पहले स्त्री-रूप में उत्पन्न होकर पीछे २० यक्ष के वरदान से पुरुष हुआ है। वास्तव में वह स्त्री ही है। हे भारत, मैं प्राण भले दे दूँगा, परन्तु उस पर वार नहीं करूँगा। क्योंकि पहले विधाता ने उसे स्त्री-रूप से उत्पन्न किया है। हे दुर्योधन, अब तुम जाकर आराम करो। मैं कल महाघोर युद्ध करूँगा। जब तक पृथ्वी रहेगी, तब तक मेरे उस युद्ध की चर्चा रहेगी।

सञ्जय कहते हैं—हे धृतराष्ट्र, भीष्म ने जब आपके पुत्र दुर्योधन से यह कहा तब उन्होंने सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम किया। फिर वे अपने शिविर में आकर सुख से लेटकर विश्राम

करने लगे। रात बीत गई। सवेरा होने पर उठकर दुर्योधन ने सब राजाओं को आज्ञा दी कि हे वीरो, तुम लोग सेना तैयार करो। आज भीष्म कुपित होकर सोमकों को मारेंगे।

राजन्, रात को भीष्म ने दुर्योधन के उन वचनों को अपने लिए तिरस्कार समझा। वे पराधीनता की बहुत निन्दा करके खिन्न होकर अर्जुन से युद्ध करने के बारे में सोचते रहे। उनके ३० इस भाव को समझकर दुर्योधन ने दुःशासन से कहा—हे दुःशासन, तुम भीष्म की रक्षा के लिए असंख्य रथी और सेना के बाईस बड़े-बड़े दल भेजो। मैं बहुत दिनों से सोचता आ रहा हूँ कि सेना सहित पाण्डवों को मारकर राज्य प्राप्त करूँगा। इस घड़ी वही समय उपस्थित है। इस समय युद्ध में सब तरह भीष्म की रक्षा करना ही मुझे श्रेयस्कर जान पड़ता है क्योंकि वे हमारे प्रधान सहायक हैं। वे सुरक्षित रहेंगे तो पाण्डव अवश्य मारे जायँगे। महात्मा भीष्म ने कहा है कि "मैं शिखण्डी पर कभी प्रहार नहीं करूँगा; क्योंकि वह पहले स्त्री था। इसी कारण वह इस युद्ध में मेरे लिए त्याज्य है। मैं पहले, पिता के हित की इच्छा से, विवाह और राज्य का अधिकार छोड़ चुका हूँ। राजन्, तुमसे सत्य कहता हूँ कि मैं स्त्री पर या स्त्रीपूर्व पुरुष पर कभी प्रहार नहीं करूँगा। युद्धारम्भ के पहले ही मैं तुमसे कह चुका हूँ कि शिखण्डी पहले स्त्री था, पीछे पुरुष हुआ है। वह शिखण्डी मुझसे युद्ध करेगा, तो मैं उस पर बाण नहीं चलाऊँगा। शिखण्डी के सिवा और जो कोई पाण्डवों की जय चाहनेवाले क्षत्रिय मेरे सामने आ जायँगे, उनको मैं मारूँगा।" भाई, शस्त्रविद्या में निपुण पितामह मुझसे यह कह चुके हैं। इस कारण सब ४० तरह उनकी रक्षा करना हमारा मुख्य कर्तव्य है। वन में अरक्षित सिंह को भी भेड़िये मार डालते हैं। इसलिए ऐसा यत्न करो जिससे भीष्मरूप सिंह शिखण्डीरूप भेड़िये के हाथ से न मारे जा सकें। मामा शकुनि, शल्य, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और विविंशति आदि सब मुख्य योद्धा यत्न के साथ भीष्म की ही रक्षा करें। उनके सुरक्षित होने से हमारी विजय निश्चित है।

तब शकुनि आदि वीरगण दुर्योधन की आज्ञा के अनुसार, चारों ओर असंख्य रथों से घेरकर, भीष्म की रक्षा करने लगे। राजन्! आपके पुत्रगण आनन्द और उत्साह के साथ सिंहनाद से आकाशमण्डल और पृथ्वीमण्डल को कँपाते हुए, पाण्डवों के हृदय में क्षोभ उत्पन्न करके, भीष्म के आसपास स्थित हुए। जैसे देवासुर-संग्राम में देवताओं ने इन्द्र की रक्षा की थी, वैसे वे सब महारथी लोग भीष्म पितामह की रक्षा करने लगे। अब दुर्योधन ने फिर दुःशासन से कहा—भाई दुःशासन, युधामन्यु और उत्तमौजा नाम के दोनों वीर अर्जुन के रथ के बायें और दाहने पहिये की रक्षा करते हैं। उनके द्वारा सुरक्षित होकर अर्जुन अवश्य शिखण्डी की रक्षा करेंगे। इसलिए जो हम भीष्म की रक्षा नहीं करेंगे तो अर्जुन के द्वारा सुरक्षित शिखण्डी अवश्य उनको मारेगा। अतएव इस समय वही उपाय करना है, जिससे भीष्म को शिखण्डी न मार सके।

दुर्योधन के ये वचन सुनकर, बहुत सी सेना साथ लेकर, दुःशासन भीष्म के पीछे उनकी रक्षा करते हुए युद्ध करने चले। इधर महारथी अर्जुन ने भीष्म को महारथियों के बीच सुरक्षित देखकर सेनापति धृष्टद्युम्न से कहा—हे पाञ्चाल-राजकुमार, शिखण्डी को भीष्म के आगे खड़ा कर दो। आज मैं ख़ुद समर में शिखण्डी की रक्षा करूँगा। ५१

निन्नानबे अध्याय

सर्वतोभद्र व्यूह की रचना और अनेक उत्पात देख पड़ना

सञ्जय ने कहा—हे महाराज, इसके बाद सेना साथ लेकर महात्मा भीष्म युद्ध के लिए शिविर से बाहर निकले और सर्वतोभद्र नाम के व्यूह की रचना करने लगे। महावीर कृपाचार्य, कृतवर्मा, शैब्य, शकुनि, सिन्धुपति जयद्रथ, काम्बोजराज सुदक्षिण और आपके सब पुत्रों को साथ लेकर, सब सेना के आगे, व्यूह के मुख में महारथी प्रतापी भीष्म पितामह खड़े हुए। द्रोणाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य और भगदत्त कवच पहनकर व्यूह के दक्षिणभाग की रक्षा करने लगे। महारथी अश्वत्थामा, सोमदत्त और विन्द, अनुविन्द अपनी सेना साथ लेकर वामभाग की रक्षा करने लगे। त्रिगर्त-देश के राजा सुशर्मा के साथ महाराज दुर्योधन व्यूह के मध्यस्थल में स्थित हुए। श्रेष्ठ रथी राक्षस अलम्बुष और महारथी श्रुतायुष् कवच पहनकर व्यूह के पृष्ठभाग की रक्षा में तत्पर हुए। कौरवपक्ष के कवचधारी वीर इस तरह व्यूहरचना करके प्रज्वलित अग्नि के समान देख पड़ने लगे।

इधर धर्मराज युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल और सहदेव अपने व्यूह के अग्रभाग में स्थित होकर उसकी रक्षा करने लगे। महावीर धृष्टद्युम्न, विराट, सात्यकि, शिखण्डी, अर्जुन, राक्षस घटोत्कच, महाबाहु चेकितान, महाबली कुन्तिभोज, श्रेष्ठ धनुर्द्धर योद्धा अभिमन्यु, प्रतापी द्रुपद, युयुधान, युधामन्यु और केकय देश के पाँचों भाई राजकुमार बहुमूल्य दृढ़ कवच पहनकर उस व्यूह की रक्षा करते हुए समरभूमि में शोभायमान हुए। इस प्रकार दुर्भेद्य दारुण महाव्यूह की रचना करके पाण्डव भी युद्ध के लिए उद्यत हुए। ६

कौरवपक्ष के वीर राजा लोग भीष्म को आगे करके युद्ध के लिए पाण्डवों की ओर बढ़े। युद्ध में उत्साह रखनेवाले भीमसेन आदि पाण्डव भी विजय की इच्छा से भीष्म की ओर बढ़े। उस समय युद्ध के मैदान में बारम्बार सिंहनाद, किलकिला-रव, हाथियों की चिंघार, घोड़ों और रथों का शब्द तथा अस्त्रों की झनकार चारों ओर छा गई। पाण्डव भी वीरनाद, सिंहनाद तथा शङ्खनाद करके उत्साह के साथ कौरवों के सामने आ गये। क्रकच, गोविषाण, भेरी, मृदङ्ग, पणव, दुन्दुभि और शङ्ख आदि बाजों का घोर शब्द आकाशमण्डल तक गूँज उठा।

कौरव लोग भी शत्रुपक्ष के जवाब में प्रतिनाद करते हुए पाण्डवों की सेना पर बड़े वेग से आक्रमण करने लगे। इस तरह दोनों ओर की सेना परस्पर भिड़कर घोर युद्ध करने लगी।

राजन्, उस समय रणभूमि में इतना शब्द और कोलाहल होने लगा कि उससे पृथ्वी २१ काँप उठी। मांसाहारी पक्षी भयानक शब्द करते हुए आकाश में मँडलाने लगे। उज्ज्वल प्रभा के साथ उदय हुए सूर्य का मण्डल प्रभाशून्य हो गया। अमङ्गलसूचक सियार-सियारियों के झुण्ड चिल्लाते हुए इधर-उधर फिरने लगे। वे होनेवाले घोर लोकक्षय की सूचना दे रहे थे। आनेवाले घोर भय की सूचना देती हुई विकट आँधी ज़ोर से चलने लगी। दिशाओं में आग लगने का सा लाल प्रकाश (दिग्दाह) दिखाई पड़ने लगा। आकाश से धूल और रुधिरयुक्त हड्डियाँ बरसने लगीं। वाहनों की आँखों से आँसू बहने लगे। वाहन चिन्तित-से देख पड़ने लगे; वे बारम्बार मल-मूत्र-त्याग करने लगे। सहसा अदृश्य पुरुषभोजी राक्षसों के तरह-तरह के भयानक शब्द सुन पड़ने लगे। गीदड़, गिद्ध, कौए और कुत्ते आदि मांसाहारी पशु-पक्षी आकाश से रणभूमि में टूट पड़ते और पृथ्वी पर दौड़ते देख पड़ने लगे। कुत्ते तरह-तरह से विकट कर्णकटु शब्द करते और भूँकते हुए फिरने लगे। सूर्य के चारों ओर से प्रज्वलित उल्काएँ पृथ्वी पर गिरकर महाभय की सूचना देने लगीं। इस तरह आकाश और पृथ्वी में अनेक अनिष्टसूचक उत्पात देख पड़ने लगे।

महाराज, उस घोर युद्ध के समय पाण्डवों और कौरवों की बड़ी बड़ी सेनाएँ—जिनमें हाथी, घोड़े, राजा आदि थे—पवनवेग से कम्पित वनों की तरह शङ्ख, मृदङ्ग आदि बाजे बजाती हुई आगे बढ़ीं। कोलाहलपूर्ण सेनाओं के चलने का दृश्य देखकर ऐसा जान पड़ता ३० था कि दो महासागर क्षोभ को प्राप्त हो रहे हैं।

सौ अध्याय

अभिमन्यु और अलम्बुष का युद्ध

सञ्जय कहते हैं—राजन्! इसके बाद महातेजस्वी वीर अभिमन्यु पिङ्गल रङ्ग के घोड़ों से युक्त रथ पर बैठकर, मेघ जैसे जल बरसाता है वैसे, बाण बरसाते हुए दुर्योधन की सेना की ओर दौड़े। अनन्त सेना के भीतर घुसते हुए अस्त्र-शस्त्रधारी वीर अभिमन्यु को कौरव लोग किसी तरह नहीं रोक सके। अभिमन्यु के धनुष से छूटे हुए शत्रुनाशक तीक्ष्ण बाण कौरवपक्ष के क्षत्रियों को मार-मारकर गिराने लगे। युद्धचतुर अभिमन्यु क्रुद्ध होकर यमदण्ड-सदृश भीषण और काले नाग के समान ज़हरीले बाण बरसाकर रथ सहित रथी, घोड़े सहित घुड़सवार और हाथी सहित हाथी के सवार को मारकर गिराने लगे। राजा लोग उनके अद्भुत कार्य और

पराक्रम को देखकर, प्रसन्न होकर, प्रशंसा करने लगे। हवा जैसे रुई के ढेर को उड़ा देती है वैसे ही वीर अभिमन्यु के बाण कौरवपक्ष की सेना को भगाकर तितर-बितर करने लगे। दल-दल में फँसे हुए हाथी की सी दशा सब सैनिकों की हो गई। अभिमन्यु के प्रहार से पीड़ित होकर भागते हुए सैनिकों की रक्षा कर सकनेवाला कोई योद्धा नहीं देख पड़ता था। महापराक्रमी अभिमन्यु अनायास शत्रुसेना को भगाकर प्रज्वलित अग्नि के समान शोभायमान हुए। १०
काल-प्रेरित पतङ्ग जैसे अग्नि के प्रताप को नहीं सह सकते, वैसे ही कौरव-सेना अभिमन्यु के पराक्रम को नहीं सह सकी। शत्रुसेना का संहार करते हुए वीर अभिमन्यु वज्रपाणि इन्द्र के समान देख पड़ते थे। सुवर्ण से मढ़ी हुई पीठवाला उनका धनुष घनघटा में बिजली के समान शोभायमान हो रहा था। फूले हुए वृक्षों के वन से उड़ते हुए भौंरों की तरह अभिमन्यु के धनुष से छूटे, भन्नाते हुए, तीक्ष्ण बाण समरभूमि में चारों ओर जा रहे थे। सुवर्णमय रथ पर सवार वीर अभिमन्यु ने महावीर द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, जयद्रथ, कृपाचार्य और बृहद्बल को अचेत कर दिया। वे फुर्ती और ख़ूबसूरती के साथ बाण बरसाते हुए युद्धभूमि में विचरने लगे। कौरवसेना का संहार करता हुआ अभिमन्यु का धनुष हमेशा खिंचा हुआ ही देख पड़ता था। वह सूर्य की तरह चमक रहा था। शूर क्षत्रियों ने शत्रुसेना का संहार करते हुए फुर्तीले अभिमन्यु के अद्भुत कर्म देखकर समझा कि इस लोक में दो अर्जुन हैं।

राजन्! अभिमन्यु के बाणों से पीड़ित कौरवसेना, मद पिये हुए स्त्री की तरह, भ्रान्त होकर तितर-बितर होने लगी। युद्धप्रिय अभिमन्यु ने शत्रुसेना के प्रधान वीरों को विचलित करके और सारी सेना को भगाकर अपने सुहृदों को उसी तरह प्रसन्न कर दिया, जिस तरह मयासुर को जीतकर इन्द्र ने देवताओं को प्रसन्न किया था। कौरवपक्ष की सब सेना अभिमन्यु के २०
प्रहारों से पीड़ित होकर भागती हुई मेघगर्जन के समान ऊँचे स्वर से आर्तनाद करने लगी।

महाराज दुर्योधन ने जब तूफ़ान से उमड़े हुए समुद्र के शब्द के समान भयभीत कौरवसेना की चिल्लाहट सुनी तब राक्षसराज अलम्बुष को बुलाकर कहा—हे वीर राक्षसश्रेष्ठ! महावीर अर्जुन का पुत्र अभिमन्यु दूसरे अर्जुन की तरह, देवसेना को भगानेवाले वृत्रासुर की तरह, अकेला ही अपने पराक्रम से कौरवसेना को पीड़ित करके भगा रहा है। तुम सब प्रकार की युद्धविद्या में निपुण हो। उसे रोकनेवाला तुम्हारे सिवा और कोई नहीं देख पड़ता। इसलिए तुम शीघ्र जाकर युद्ध में उसे मार डालो। हम लोग भीष्म और द्रोण आदि के साथ जाकर अर्जुन को मारेंगे।

दुर्योधन की आज्ञा पाते ही राक्षसश्रेष्ठ अलम्बुष वर्षाकाल के बादलों की तरह गरजता हुआ अभिमन्यु की ओर चला। उसके घोर शब्द को सुनकर पाण्डवों की भारी सेना वायु से लहराते हुए समुद्र के समान विचलित हो उठी। उसके शब्द से ही डरकर बहुत से सैनिक मर गये। महाराज, उस समय रथ पर स्थित महापराक्रमी अभिमन्यु धनुष-बाण हाथ

३० में लेकर उस राक्षस के सामने आये। अलम्बुष ने अभिमन्यु को देखते ही क्रुद्ध होकर उन पर आक्रमण किया। राक्षस को देखकर पाण्डवों की सेना डर गई और भागने लगी। बल नाम का दैत्य जैसे देवसेना के पीछे दौड़ा था, वैसे ही बाण बरसाता हुआ अलम्बुष पाण्डवसेना के पीछे दौड़ा। वह घोररूप राक्षसराज अपना पराक्रम दिखाता और असंख्य बाण बरसाता हुआ पाण्डवसेना को भगाने और नष्ट करने लगा। पाण्डवों की भारी सेना अत्यन्त व्यथित और भय से व्याकुल होकर चारों ओर भागने लगी। महाराज, मस्त हाथी जैसे कमलवन को रौंदता है वैसे ही राक्षसराज अलम्बुष पाण्डवसेना का संहार करता हुआ द्रौपदी के पुत्रों के सामने दौड़ा। द्रौपदी के पाँचों पुत्र उस राक्षस को देखकर, अत्यन्त क्रुद्ध होकर, सूर्य के सामने पाँच ग्रहों की तरह, उसके सामने दौड़े। प्रलयकाल में पाँच ग्रह जैसे चन्द्रमा को पीड़ा पहुँचावें, वैसे ही द्रौपदी के पुत्र उस राक्षस को पीड़ित करने लगे। महाप्रतापी प्रतिविन्ध्य ने उस राक्षसराज को तीक्ष्ण, कुण्ठित न होनेवाले, कई बाण मारे। उन बाणों से अलम्बुष का कवच कट गया और वह सूर्य-किरणरञ्जित काले मेघ के समान शोभाय-
४० मान हुआ। प्रतिविन्ध्य के सुवर्णभूषित ज़हरीले बाण राक्षस के शरीर में घुस गये। उनसे वह प्रज्वलित शिखर-युक्त पर्वत के समान देख पड़ा।

अब द्रौपदी के पाँचों पुत्र एक साथ सुवर्णभूषित बाण मारकर अलम्बुष को पीड़ा पहुँचाने लगे। महावीर्यशाली क्रुद्ध अलम्बुष नाग-तुल्य उन बाणों से घायल होने के कारण घोर व्यथा से अचेत हो गया। दम भर में होश आने पर वह दूने क्रोध से विह्वल हो उठा। उसने फुर्ती के साथ बाणों से द्रौपदी के पुत्रों के धनुष, बाण और ध्वजाएँ काट डालीं। फिर उस महावीर राक्षस ने हर एक को पाँच-पाँच बाण मारे। उसने उनके घोड़ों और सारथियों को भी मार डाला। यह अद्भुत कर्म करके, अन्य अनेक तीक्ष्ण बाण मारकर, उसने सबको घायल कर दिया। महारथी राक्षस इस तरह द्रौपदी के पाँचों पुत्रों को, रथहीन करके, मारने के लिए तेज़ी से आगे बढ़ा।

महापराक्रमी अभिमन्यु ने जब देखा कि बली राक्षस द्रौपदी के पुत्रों को पीड़ित कर
५० रहा है तब वे शीघ्रता के साथ अपना रथ बढ़ाकर उसके पास पहुँचे। राजन्, उस समय महाप्रतापी अभिमन्यु के साथ राक्षसराज अलम्बुष घोर युद्ध करने लगा। कौरवपक्ष और पाण्डवपक्ष के सब योद्धा, युद्ध छोड़कर, उन वृत्रासुर और इन्द्र के समान पराक्रमी दोनों वीरों का घोर अद्भुत संग्राम देखने लगे। कालानल-तुल्य वे दोनों वीर क्रोध से लाल आँखों से परस्पर इस तरह देखते थे मानों दृष्टि से ही भस्म कर डालेंगे। पहले देवासुर-युद्ध में शम्बरा-
५४ सुर और इन्द्र का जैसा भयङ्कर संग्राम हुआ था वैसा ही भयङ्कर समर इस समय होने लगा।

एक सौ एक अध्याय

अभिमन्यु का अलम्बुष को हराना

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, महारथियों और शूरों को समर में मारते हुए अभिमन्यु से अलम्बुष ने किस तरह कैसा युद्ध किया? शत्रुदमन अभिमन्यु ने ही उस राक्षसराज से कैसा युद्ध किया? महाबली भीमसेन, राक्षस घटोत्कच, नकुल, सहदेव, सात्यकि और अर्जुन आदि ने मेरी सेना से कैसा युद्ध किया? युद्ध का सब हाल तुम जानते हो और वर्णन करने में भी निपुण हो। इसलिए यह सब वृत्तान्त कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन्! महावीर अभिमन्यु और अलम्बुष ने जैसा युद्ध किया, अर्जुन-भीमसेन-नकुल और सहदेव ने समर में जैसा पराक्रम प्रकट किया और आपके पक्ष के भीष्म, द्रोण आदि महारथी वीरों ने निर्भय होकर जो-जो अद्भुत कर्म किये, सो सब मैं आपके आगे कहता हूँ। राक्षसराज अलम्बुष सिंहनाद के साथ बारम्बार तरज-गरजकर "ठहर, ठहर" कहता हुआ बड़े वेग से अभिमन्यु पर आक्रमण करने चला। अभिमन्यु भी सिंहनाद करते हुए पिता के शत्रु राक्षसराज अलम्बुष की ओर वेग से चले। दिव्य अस्त्र चलाने में निपुण महारथी अभिमन्यु और मायावी श्रेष्ठ रथी अलम्बुष दोनों, देव-दानव के समान, शीघ्र ही आमने-सामने पहुँच गये। महावीर अभिमन्यु ने राक्षस को पहले तीन और फिर पाँच बाण मारे। जैसे ११ महावत गजराज को अङ्कुश मारे वैसे ही फुर्तीले अलम्बुष ने क्रुद्ध होकर अभिमन्यु की छाती में ताककर नव तीक्ष्ण बाण मारे। इसके बाद फुर्ती के साथ और एक हज़ार बाण मारे। मर्मस्थल में उन बाणों के लगने से अभिमन्यु क्रोध से अधीर हो उठे। उन्होंने भी महाभयङ्कर नव बाण राक्षस की छाती में मारे। वे बाण उसके शरीर को फोड़कर मर्मस्थल में पहुँच गये। बाणों से घायल और रक्त से नहाया हुआ वह राक्षस फूले हुए ढाक के पेड़ोंवाले पहाड़ के समान शोभायमान हुआ। वे सुवर्णपुङ्ख बाण राक्षस के शरीर में घुस गये थे, इस कारण वह शिखरों से शोभित पहाड़ सा जान पड़ता था।

क्रोधी अलम्बुष ने भी इन्द्र-सदृश अभिमन्यु को असंख्य बाणों से ढक दिया। राक्षस के धनुष से छूटे हुए यमदण्डतुल्य बाण अभिमन्यु के शरीर को फोड़कर धरती में घुस गये। इसी तरह अभिमन्यु के बाण भी अलम्बुष के शरीर को फोड़कर पृथ्वी में घुस गये। इन्द्र ने २१ जैसे मय दानव को समर से हटा दिया था, वैसे ही महावीर अभिमन्यु ने तीक्ष्ण बाण मारकर राक्षस को व्यथित और युद्ध से विमुख कर दिया। अब उस राक्षस ने शत्रुओं को नष्ट करनेवाली तामसी माया प्रकट की। उससे चारों ओर गहरा अँधेरा छा गया। कोई किसी को नहीं देख सकता था; अभिमन्यु को, अपने को या ग़ैर को देख सकना असम्भव हो गया। महापराक्रमी अभिमन्यु ने वह घोर अन्धकार देखकर प्रकाशमय सौर अस्त्र का प्रयोग किया।

सूर्यास्त्र के प्रभाव से राक्षस की माया का घोर अन्धकार दूर हो गया और सारे जगत् में प्रकाश फैल गया। राक्षस ने और भी बहुतेरी मायाएँ प्रकट कीं, किन्तु वीर अभिमन्यु ने दिव्य अस्त्रों से उन मायाओं को मिटा दिया। इसके बाद अभिमन्यु असंख्य तीक्ष्ण बाण मारकर उस राक्षस को पीड़ा पहुँचाने लगे। सब अस्त्रों के जाननेवाले अमितपराक्रमी अभिमन्यु के द्वारा सब माया नष्ट होने पर प्रहार-पीड़ित और भय से व्याकुल वह राक्षस रथ छोड़कर भाग खड़ा हुआ। कूटयुद्ध करनेवाला वह राक्षस जब इस तरह हारकर भाग गया तब महावीर अभिमन्यु फिर बाण-वर्षा करके कौरवसेना को पीड़ित करने लगे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि मदान्ध जङ्गली हाथी कमलों के वन को रौंदकर उजाड़ रहा है।

३०

महारथी भीष्म ने सैनिकों को संग्राम से भागते देख तीक्ष्ण बाण बरसाकर अभिमन्यु का आगे बढ़ना रोका। महारथी दुर्योधन और उनके भाई भी अकेले अभिमन्यु को चारों ओर से घेरकर असंख्य बाण मारने लगे। तब अर्जुन के तुल्य पराक्रमी और बल-वीर्य में श्रीकृष्ण के समान महावीर अभिमन्यु, पिता और मामा के समान, युद्ध में अनेक अद्भुत कार्य और कौशल दिखाने लगे। महावीर्यशाली अर्जुन भी उस समय कौरव-सेना को मारते हुए अभिमन्यु को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते भीष्म के पास पहुँच गये। राहु जैसे ग्रसने के लिए सूर्य के पास जाता है वैसे ही भीष्म भी अर्जुन के समीप आये। राजन्! आपके पुत्रगण असंख्य रथ, हाथी, घोड़े आदि साथ लेकर चारों ओर से भीष्म पितामह की रक्षा करने लगे। इधर पाण्डवपक्ष के योद्धा भी चारों ओर से अर्जुन की सहायता करते हुए घोर युद्ध में प्रवृत्त हुए।

इसी समय कृपाचार्य ने, भीष्म के सामने उपस्थित, अर्जुन को पचीस तीक्ष्ण बाण मारे। सिंह जैसे गजराज पर झपटता है वैसे ही सात्यकि भी पाण्डवों के हित के लिए कृपाचार्य के सामने पहुँचे। वे अनेक तीक्ष्ण बाण मारकर कृपाचार्य को पीड़ित करने लगे। इससे क्रुद्ध होकर कृपाचार्य ने फुर्ती के साथ कङ्कपत्रभूषित नव बाण सात्यकि की छाती में मारे। तब सात्यकि

४०

ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर बड़े वेग से, धनुष चढ़ाकर, प्राण लेनेवाला एक बाण कृपाचार्य को मारा। अश्वत्थामा ने उस वज्रतुल्य बाण को वेग से आते देखकर एक बाण से काटकर गिरा दिया।

अब महारथी सात्यकि कृपाचार्य को छोड़कर, आकाशमण्डल में राहु जैसे चन्द्रमा की ओर दौड़ता है वैसे, अश्वत्थामा की ओर दौड़े। महावीर अश्वत्थामा ने उनका धनुप काट डाला और उन पर असंख्य बाण बरसाये। सात्यकि ने उसी दम फुर्ती से दूसरा मज़बूत धनुष हाथ में लेकर साठ बाण अश्वत्थामा के हृदय में और दोनों हाथों में मारे। उन बाणों के प्रहार से अश्वत्थामा बहुत व्यथित होकर क्षण भर के लिए अचेत हो गये; वे ध्वजा का डण्डा पकड़कर रथ पर बैठ गये। होश आने पर उन्होंने क्रुद्ध होकर सात्यकि को एक घोर नाराच बाण मारा। वह बाण सात्यकि के शरीर को फोड़कर वैसे ही धरती में घुस गया जैसे वसन्तऋतु में बलवान् साँप का बच्चा बिल में घुस जाता है। फिर एक भल्ल बाण से सात्यकि के रथ की ध्वजा काटकर वे सिंहनाद करने लगे। वर्षाऋतु में मेघ जैसे सूर्य को छिपा लेते हैं वैसे ही अश्वत्थामा ने बाणों से सात्यकि को अदृश्य कर दिया। राजन्! सात्यकि भी उन बाणों को काटकर, अपने बाणों से अश्वत्थामा को अदृश्य करके, मेघों को चीरकर निकले हुए सूर्य की तरह अश्वत्थामा को सताने लगे। इसके बाद फिर हज़ारों बाण बरसाकर उन्होंने अश्वत्थामा को जर्जर कर दिया। ५०

पुत्र अश्वत्थामा को राहुग्रस्त चन्द्रमा के समान पीड़ित देखकर द्रोणाचार्य सात्यकि की ओर दौड़े, और अश्वत्थामा की जान बचाने के लिए उन्होंने सात्यकि को तीक्ष्ण बाण मारा। तब सात्यकि ने भी गुरु-पुत्र अश्वत्थामा को छोड़कर द्रोणाचार्य को लोहमय बीस बाण मारे। उधर महापराक्रमी अर्जुन भी कुपित होकर द्रोणाचार्य की ओर दौड़े। इसके बाद द्रोण और अर्जुन दोनों, आकाश में बृहस्पति और शुक्र की तरह, घोर युद्ध करने लगे। ५६

एक सौ दो अध्याय

द्रोणाचार्य के साथ अर्जुन का युद्ध

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, पुरुपश्रेष्ठ द्रोणाचार्य और अर्जुन दोनों ने किस तरह युद्ध किया? बुद्धिमान् द्रोणाचार्य को अर्जुन बहुत ही प्रिय हैं, और अर्जुन भी द्रोणाचार्य का बहुत मान करते हैं। उन दोनों, सिंह के समान उत्साही, वीरों ने किस तरह युद्ध किया?

सञ्जय ने कहा—महाराज, क्षत्रियधर्म के अनुयायी द्रोणाचार्य युद्ध में अर्जुन को अपना प्रिय नहीं समझते, और अर्जुन भी गुरु पर कठोर प्रहार करने में कुछ कसर नहीं रखते। क्षत्रियों का धर्म ही यह है कि वे युद्ध में किसी का ख़याल नहीं करते। वे नाते का ख़याल छोड़कर पिता और भाई आदि से कठिन युद्ध करते हैं। महाराज, अर्जुन ने द्रोणाचार्य को तीन तीक्ष्ण बाण मारे; किन्तु अर्जुन के धनुप से छूटे हुए उन बाणों से द्रोणाचार्य विचलित नहीं

हुए। तब फिर अर्जुन उनके ऊपर बाणों की वर्षा-सी करने लगे। गहन वन में अग्नि के समान आचार्य द्रोण क्रोध से प्रज्वलित हो उठे। उन्होंने फुर्ती के साथ अति तीक्ष्ण असंख्य बाणों से अर्जुन को ढक दिया। तब राजा दुर्योधन ने द्रोणाचार्य के पार्श्वभाग की रक्षा और सहायता के लिए त्रिगर्तदेश के राजा सुशर्मा को भेजा। राजा सुशर्मा कुपित होकर, धनुष चढ़ाकर, तीक्ष्ण
१० बाणों से अर्जुन को पीड़ा पहुँचाने लगे। सुशर्मा का पुत्र भी लोहमय बाण अर्जुन को मारने लगा। उन पिता-पुत्र के चलाये हुए बाण आकाश में, शरद् ऋतु में, उड़ते हुए हंसों के समान जान पड़ने लगे। जैसे पक्षी चारों ओर से आकर स्वादिष्ठ फलों से पूर्ण झुके हुए वृक्ष के भीतर प्रवेश करते हैं, वैसे ही वे बाण चारों ओर से आकर अर्जुन के शरीर में घुसने लगे। महारथी अर्जुन ने सिंहनाद करके पिता और पुत्र दोनों को बहुत से बाण मारे। सुशर्मा और उनका पुत्र दोनों ही कालतुल्य अर्जुन के बाणों से घायल होकर भी, जीवन की ममता छोड़कर, अर्जुन से घोर युद्ध करने लगे। वे अर्जुन के ऊपर लगातार बाणों की वर्षा करने लगे। पर्वत जैसे वर्षा को अपने ऊपर रोकता है वैसे ही वीर अर्जुन अपने बाणों से उनके बाणों को रोकने लगे। उस समय हम लोग अर्जुन के हाथों की फुर्ती देखने लगे। हवा जैसे मेघमाला को दमभर में छिन्न-भिन्न कर डालती है, वैसे ही अकेले अर्जुन बहुत से योद्धाओं के शस्त्रों की वर्षा को छिन्न-भिन्न करने और रोकने लगे। अर्जुन के उस अद्भुत कर्म और युद्धकौशल को देखकर देवता और दानव बहुत सन्तुष्ट हुए।

महावीर अर्जुन ने कुपित होकर त्रिगर्तसेना के ऊपर वायव्य अस्त्र छोड़ा। उससे प्रबल आँधी उत्पन्न हुई, जिससे आकाशमण्डल क्षोभ को प्राप्त हुआ, वृक्ष उखड़-उखड़कर गिरने लगे, सैनिक लोग नष्ट होने लगे और सारी सेना अस्तव्यस्त तथा नष्टभ्रष्ट होने लगी। द्रोणाचार्य ने उस दारुण वायव्य-अस्त्र का उत्पात देखकर, उसे व्यर्थ करने के लिए, घोर पर्वतास्त्र का प्रयोग किया। उससे आँधी शान्त हो गई, दसों दिशाएँ निर्मल देख पड़ने लगीं। इसके बाद महारथी अर्जुन ने अपने युद्धकौशल से त्रिगर्तराज के असंख्य रथी योद्धाओं को उत्साहहीन और पराक्रम-शून्य करके युद्ध से हटा दिया।

तब राजा दुर्योधन, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, शल्य, सुदक्षिण, विन्द, अनुविन्द और वाह्लीक देश की सेना सहित राजा वाह्लीक असंख्य रथों के द्वारा चारों ओर से अर्जुन को घेरकर उन पर प्रहार करने लगे। महाबली श्रुतायुष् और राजा भगदत्त ने बड़े भारी हाथियों के दल से चारों ओर से भीमसेन को घेर लिया। भूरिश्रवा, शल और शकुनि, ये तीनों वीर बहुत सी सेना के द्वारा नकुल और सहदेव को घेरकर उनपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। सेना सहित आपके सब पुत्रों को साथ लिये भीष्म पितामह ने धर्मराज युधिष्ठिर पर आक्रमण किया।

महाराज, पराक्रमी भीमसेन ने हाथियों की बड़ी सेना को अपनी ओर आते देखा तो वे रथ से उतर पड़े और गदा हाथ में लेकर उसी ओर दौड़े। वन में विचरनेवाले सिंह की तरह क्रोध से ओठ चाटते हुए भीमसेन का भयानक रूप ही देखकर बहुत से सैनिक डर से व्याकुल हो उठे। हाथियों पर सवार योद्धाओं ने गदा हाथ में लिये भीमसेन को खड़े देखकर चारों ओर से घेर लिया। सूर्य जैसे मेघों के बीच में शोभित होते हैं वैसे ही उस गजदल के बीच भीमसेन की शोभा हुई। हवा ३१ जैसे बादलों को तितर-बितर कर देती है वैसे ही भीमसेन अपनी गदा के विकट प्रहार से उस गजदल को मारने और भगाने लगे। बड़े-बड़े हाथी भीमसेन की गदा की मार खाकर मेघ-गर्जन के समान चिल्लाने और आर्तनाद करने लगे। हाथियों ने भी भीमसेन के शरीर में दाँतों के प्रहार किये। उनके शरीर से रक्त बह चला, जिससे वे फूले हुए अशोकवृक्ष के समान शोभायमान हुए। भीमसेन ने कुपित होकर किसी-किसी हाथी के दाँत उखाड़ लिये, और दण्डपाणि यम-राज की तरह उन्हीं दाँतों के प्रहार से उनके मस्तक फाड़कर वे उन्हें धरती पर गिराने लगे। भीम के शरीर में मेदा और मज्जा लिपी हुई थी, ख़ून से तर गदा उनके कन्धे पर थी; इस वेष में वे शूलपाणि रुद्र के समान देख पड़ते थे। जो बड़े-बड़े हाथी मरने से बचे थे वे अपनी ही सेना को रौंदते हुए चारों ओर भागने लगे। कौरवपक्ष की सेना फिर युद्ध से भागकर अस्तव्यस्त हो गई। ३९

एक सौ तीन अध्याय

भीष्म के पराक्रम का वर्णन

सञ्जय ने कहा—राजन्, इसी दिन दोपहर के समय सोमकों के साथ भीष्म पितामह भयानक युद्ध करने लगे। महारथी भीष्म बाणों की आग में सैकड़ों-हज़ारों क्षत्रियों को भस्म करने लगे। जैसे बैल अन्न के ढेर को रौंदते हैं वैसे ही देवव्रत भीष्म पाण्डवों की सेना का संहार करने लगे। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, विराट और महारथी द्रुपद भीष्म के पास जाकर उनपर असंख्य बाण बरसाने लगे। शत्रुनाशन भीष्म ने तीन-तीन बाण धृष्टद्युम्न और विराट को और एक नाराच बाण द्रुपद को मारा। धृष्टद्युम्न आदि महारथी भीष्म के बाणों से आहत होकर लात से मारे गये साँप की तरह क्रोध से विह्वल हो उठे। यद्यपि शिखण्डी लगातार भीष्म के

मर्मस्थल में बाण मारने लगे, किन्तु महाव्रत भीष्म ने उन्हें पहले की स्त्री समझकर उन पर प्रहार नहीं किया। धृष्टद्युम्न ने क्रोध से अत्यन्त प्रज्वलित होकर भीष्म के हाथों में अग्निसदृश दो बाण मारे, और एक बाण छाती में मारा। महारथी द्रुपद ने भी भीष्म को पचीस बाण मारे। विराट ने पितामह को दस बाण और शिखण्डी ने पचीस बाण मारे। राजन्, उन बाणों से बहुत ही घायल होकर भीष्म ख़ून से तर हो गये। वे उस समय वसन्त में लाल फूलों से शोभित
१० अशोकवृक्ष के समान देख पड़ने लगे। तब उन्होंने कुपित होकर [शिखण्डी को छोड़कर और] सबको तीन-तीन बाण मारे। इसके बाद एक भल्ल बाण से द्रुपद का धनुष काट डाला। राजा द्रुपद ने दूसरा धनुष लेकर पाँच बाण भीष्म को और तीन बाण उनके सारथी को मारे।

तब भीमसेन, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, केकयगण, यादवश्रेष्ठ सात्यकि और धृष्टद्युम्न, ये लोग द्रुपद की रक्षा करने के लिए भीष्म की ओर चले। महाराज, आपके पक्ष के सब वीर भी सेना साथ लेकर भीष्म की रक्षा करने के लिए पाण्डवों की ओर दौड़े। उस समय दोनों ओर के रथी, हाथी, घोड़े और पैदल परस्पर भिड़कर घोर युद्ध करने लगे। रथी रथी के साथ, हाथी हाथी के साथ, घोड़े घोड़ों के साथ, सवार सवारों के साथ और पैदल सैनिक पैदल सैनिकों के साथ भिड़कर यमपुरी को जाने लगे। राजन्! स्थान-स्थान पर दारुण बाणों के प्रहार से टूट-फूटकर, सारथी और रथी से शून्य होकर, बड़े-बड़े रथ समरभूमि में इधर-उधर फिरने लगे। मैंने देखा कि गन्धर्व नगर-सदृश, वायुवेगगामी घोड़ों से युक्त, बड़े-बड़े रथ आदमियों और घोड़ों को रौंदते हुए इधर-उधर
२० दौड़ने लगे। हे भूपाल! बृहस्पति के समान नीति में निपुण, कुबेर के समान सम्पत्तिशाली, इन्द्र के समान शूर, कुण्डल-पगड़ी-निष्क-अङ्गद-कवच आदि से अलङ्कृत, देवपुत्र के समान रथी राजा लोग बड़े-बड़े देशों के नरेश होकर भी, रथ नष्ट हो जाने पर, साधारण मनुष्यों की तरह इधर-उधर भागते देख पड़ने लगे। सवारों के न रहने पर बड़े-बड़े हाथी अपनी ही सेना को कुचलते हुए घोर शब्द करके गिरने लगे। जल-भरे मेघ के समान काले हाथी मेघगर्जन के समान शब्द करते बड़े वेग से इधर-उधर भागते और बिगड़ते देख पड़ने लगे। उनके ऊपर से विचित्र चामर, सुवर्ण-दण्ड-शोभित सफ़ेद छत्र, पताका, ढाल, तलवार, तोमर आदि सामान इधर-उधर गिरने लगा। ऐसे ही हाथियों के न रहने पर उनके सवार लोग उस घमासान युद्ध में इधर-उधर दौड़ते देख पड़ने लगे। अनेक देशों के सुवर्ण-भूषण-भूषित हज़ारों बढ़िया घोड़े हवा के वेग से इधर-उधर भागते देख पड़ने लगे। घोड़ों के मर जाने पर बहुत से घुड़सवार ढाल-तलवार हाथ में लिये कहीं औरों को भगा रहे थे और कहीं आप ही भाग रहे थे। कोई हाथी दूसरे हाथी के पीछे भागता
३० हुआ राह में रथ, पैदल, घोड़े आदि को पैरों से रौंदता चला जाता था। बहुत से रथ पृथ्वी पर गिरे हुए घोड़ों को और बहुत से घोड़े पृथ्वी पर गिरे हुए पैदलों को रौंदते चले जाते थे। उस महा-भयानक रण में इस प्रकार एक दूसरे को कुचलता और रौंदता चला जा रहा था।

रक्त की एक बड़ी भारी नदी वह चली। उस लहराती हुई नदी में आँतें लहरों की जगह देख पड़ती थीं। हड्डियों के ढेर उसकी तटभूमि थे। केश उसमें सेवार और घास की जगह थे। टूटे हुए रथ उसके भीतर के गहरे कुण्ड थे। बाण ही भँवर थे; घोड़ों की लाशें मछलियाँ थीं। कटे हुए सिर कमल के फूल थे। हाथियों के शरीर बड़े-बड़े ग्राह थे। कवच और पगड़ियाँ फेने की जगह वह रही थीं। धनुष ही उसका वेगशाली प्रवाह था। तलवारें कच्छप की जगह थीं। पताका और ध्वजाएँ किनारे पर के वृक्षों की जगह थीं। मनुष्यों की लाशें उसके कगारे थे। मांसाहारी पक्षी हंसों के समान उसके आस-पास उड़ रहे थे। वह नदी यम के राज्य को बढ़ा रही थी। बहुत से शूरवीर महारथी क्षत्रिय निर्भय भाव से नौका के समान घोड़े-हाथी-रथ आदि पर चढ़कर उस नदी के पार जा रहे थे। जैसे वैतरणी नदी मरे हुओं को यमपुर में पहुँचाती है वैसे ही वह रक्त की नदी डरपोंक और मूर्च्छित-से पुरुषों को रणभूमि से दूर हटाने लगी।

क्षत्रियगण उस महाघोर हत्याकाण्ड को देखकर चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे—"हे क्षत्रियो, दुर्योधन के अपराध से सब क्षत्रिय नष्ट हो रहे हैं। महाराज धृतराष्ट्र ने ही लोभ और मोह के वश तथा पापपरायण होकर गुणी पाण्डवों से द्वेष क्यों किया?" महाराज, इस प्रकार सब क्षत्रिय ४० पाण्डवों की प्रशंसा और आपके पुत्रों की निन्दा से भरी तरह-तरह की बातें आपस में कर रहे थे। सब योद्धा क्षत्रियों के मुँह से ऐसी बातें सुनकर सबके अपराधी आपके पुत्र राजा दुर्योधन ने भीष्म, द्रोण, कृप और शल्य से कहा—"हे वीरो, तुम लोग अहङ्कार छोड़कर युद्ध करो। देर क्यों कर रहे हो?" राजन्, तब उसी द्यूतक्रीड़ा के कारण फिर कौरवों और पाण्डवों का घोर युद्ध होने लगा। पहले व्यास, विदुर आदि महात्माओं ने बारम्बार आपको मना किया था परन्तु आपने उनकी बात नहीं मानी, उसी का यह दारुण फल अब प्रत्यक्ष देखिए। राजन्! पाण्डव या कौरव और उनके सैनिक अनुगत बन्धु-बान्धव आदि सभी, प्राणों का मोह छोड़कर, घोर युद्ध कर रहे हैं। इस भयङ्कर स्वजन-विनाश का कारण चाहे दैव (होनी) को मानिए, चाहे अपने अनुचित व्यवहार को मानिए और चाहे अपने हितचिन्तकों का कहा न मानने की ग़लती को मानिए। ४७

एक सौ चार अध्याय

सात्यकि के साथ भीष्म का युद्ध

सञ्जय ने कहा—राजन्, पुरुषसिंह अर्जुन तीक्ष्ण बाण बरसाकर त्रिगर्तराज सुशर्मा के साथियों को यमपुर भेजने लगे। सुशर्मा ने पहले सत्तर बाण श्रीकृष्ण को और फिर नव बाण अर्जुन को मारे। महारथी अर्जुन ने अनायास सुशर्मा के बाणों को व्यर्थ करके उसके सहायक कई योद्धाओं को मार डाला। सुशर्मा के बचे हुए साथी योद्धा, प्रलयकाल में काल के समान संहार करनेवाले, अर्जुन के बाणों से पीड़ित होकर डर के मारे प्राण लेकर भाग खड़े हुए। कोई

घोड़े को, कोई हाथी को और कोई रथ को छोड़कर जिधर राह मिली उधर पैदल ही भाग खड़ा हुआ। पैदल सेना के लोग भी उस महारण में शस्त्र-अस्त्र फेंककर, किसी की राह न देखकर, इधर-उधर भागने लगे। त्रिगर्तराज सुशर्मा और अन्य राजा लोग उन्हें बारम्बार उत्साहित करते और ठहरने के लिए कहते थे, परन्तु उनमें से कोई भी नहीं ठहरा।

महाराज! दुर्योधन ने सुशर्मा की सेना को जब भागते देखा तब वे आप सब सेना के आगे हुए, और भीष्म पितामह को अपने आगे करके सुशर्मा के प्राण बचाने के लिए उद्योग करते
१० हुए अर्जुन की ओर बढ़ने लगे। अपने भाइयों के साथ केवल दुर्योधन ही बाणवर्षा करते हुए अर्जुन के सामने ठहरे, और सब योद्धा भाग गये। उधर कवचधारी पाण्डव भी पूर्ण उद्योग के साथ अर्जुन की सहायता करने के लिए भीष्म पितामह के सामने आये। युद्ध में अर्जुन का अमित पराक्रम जानकर भी वे लोग उत्साह के साथ कोलाहल और सिंहनाद करते हुए चारों ओर से भीष्म पर आक्रमण करने चले। तालचिह्न-युक्त पताका से शोभित रथ पर बैठे हुए शूर भीष्म पितामह ने तीक्ष्ण बाणों से पाण्डवसेना को ढक दिया।

राजन्, इस तरह दोपहर के समय कौरवों के साथ पाण्डवों का घमासान युद्ध होने लगा। महारथी सात्यकि ने कृतवर्मा को पाँच बाण मारे। इसके बाद उन्होंने और भी हज़ारों बाण बरसाये। राजा द्रुपद ने पहले तीक्ष्ण बाणों से द्रोणाचार्य को घायल करके फिर सत्तर बाण उनको और पाँच बाण उनके सारथी को मारे। भीमसेन ने प्रपितामह राजा वाह्लीक को बाणों से घायल करके घोर सिंहनाद किया। पहले चित्रसेन ने बहुत से तीक्ष्ण बाण अभिमन्यु को मारे। शूर अभिमन्यु शत्रुओं पर हज़ारों बाण बरसा रहे थे। चित्रसेन के प्रहार करने पर उन्होंने भी चित्रसेन को तीन बाण मारे। महाराज, जैसे आकाश में महाघोर ग्रह बुध
२० और शनैश्चर शोभायमान हों वैसे ही वे दोनों वीर युद्ध करते समय शोभा को प्राप्त हुए। वीर शत्रुओं का संहार करनेवाले अभिमन्यु ने नव बाणों से चित्रसेन के सारथी और चारों घोड़ों को मारकर सिंहनाद किया। वीर चित्रसेन बिना घोड़ों के रथ से कूदकर फुर्ती के साथ अपने भाई दुर्मुख के रथ पर चले गये। पराक्रमी द्रोणाचार्य ने बहुत से तीक्ष्ण बाण द्रुपद को और उनके सारथी को मारे। राजा द्रुपद सब सेना के सामने द्रोण के बाणों से पीड़ित होकर, उनके साथ अपने पिछले वैर को स्मरण कर, घोड़ों को तेज़ी से हँकवाकर उनके सामने से हट गये। भीमसेन ने दम भर में सब सेना के सामने महाराज वाह्लीक के घोड़ों को और रथ सहित सारथी को नष्ट कर दिया। राजन्, पुरुषश्रेष्ठ वाह्लीक प्राणसङ्कट की अवस्था में पड़कर डर के मारे फुर्ती के साथ टूटे रथ से कूदकर लक्ष्मण कुमार के रथ पर चढ़ गये। सात्यकि ने कई तरह के बाण मारकर कृतवर्मा को युद्ध से हटा दिया। इसके बाद वे भीष्म के पास पहुँचे। वहाँ उन्होंने फुर्ती के साथ भयानक लोमवाही साठ बाण भीष्म को मारे।

वे इतनी फुर्ती के साथ मण्डलाकार धनुष घुमाकर बाण बरसा रहे थे कि देखने से जान पड़ता था मानो रथ पर नृत्य कर रहे हैं।

तब भीष्म पितामह ने हेमचित्रित वेगवती नागिन-सी एक तीक्ष्ण शक्ति हाथ में ली, और वह शक्ति पूरे ज़ोर से सात्यकि को मारी। महायशस्वी सात्यकि उस मृत्युतुल्य अमोघ शक्ति को सहसा आते देखकर बड़ी फुर्ती के साथ उसका वार बचा गये। वह भयङ्कर शक्ति बड़ी उल्का के समान पृथ्वी में घुस गई। अब वीर सात्यकि ने अपनी शक्ति उठाकर बड़े वेग से भीष्म के रथ पर फेंकी। सात्यकि के बाहुबल से चलाई गई बड़े वेग से आती हुई वह शक्ति मनुष्यों पर आक्रमण करनेवाली कालरात्रि के समान जान पड़ी। परन्तु भीष्म ने उस शक्ति को सहसा गिरते देख दो तीक्ष्ण क्षुरप्र बाणों से काटकर गिरा दिया। वह शक्ति दो टुकड़े होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस शक्ति को काटने के बाद शत्रुदमन भीष्म ने क्रोध की हँसी हँसकर सात्यकि की छाती में नव बाण मारे। तब भीष्म के अतुल पराक्रम से सात्यकि की रक्षा करने के लिए पाण्डवों ने भीष्म को चारों ओर से घेर लिया। जय की इच्छा रखनेवाले कौरव और पाण्डव परस्पर प्रहार करते हुए घोर युद्ध करने लगे। ३० ३८

एक सौ पाँच अध्याय

शल्य और युधिष्ठिर का युद्ध

सञ्जय कहते हैं कि राजन्, पितामह भीष्म को वर्षाकाल के मेघों से घिरे हुए सूर्य की तरह पाण्डवों की सेना के घिराव में देखकर राजा दुर्योधन ने दुःशासन से कहा—भाई! वह देखो, शत्रुदमन भीष्म को पाण्डवों की सेना ने घेर लिया है। इस समय उन महावीर की रक्षा और सहायता करना हमारा परम कर्तव्य है। यदि हम पितामह की रक्षा कर सकेंगे तो वे अकेले ही पाञ्चालों और पाण्डवों को मार डालेंगे। भीष्म समर में अनेक अद्भुत दुष्कर कार्य करनेवाले और हमारे प्रधान रक्षक हैं। इसलिए तुम अपनी सारी सेना के साथ जाकर पितामह की रक्षा करो।

दुर्योधन की आज्ञा पाकर वीर दुःशासन ने भीष्म को अपनी सेना के बीच में कर लिया। सब लोग बड़ी सावधानी से पितामह की रक्षा करने लगे। नकुल, सहदेव और धर्मराज से प्रधान रथी शकुनि लड़ने लगे। निर्मल प्रास, ऋष्टि और तोमर आदि शस्त्र धारण करनेवाले, सुशिक्षित, युद्धनिपुण वीर शकुनि के साथ थे। वे महावेगशाली पताका-शोभित घोड़ों पर सवार थे। ऐसे हज़ारों घुड़सवारों ने शकुनि के साथ जाकर तीनों पाण्डवों को घेर लिया। राजा दुर्योधन ने पाण्डवों की गति रोकने के लिए दस हज़ार घुड़सवार सेना और भेज दी। गरुड़ की तरह तेज़ चलनेवाले घोड़ों के दल आने पर उनकी टापों से समरभूमि मानों काँप उठी और टापों की आवाज़ से गूँज उठी। आग लगने पर जलते हुए बाँसों की पोरें फटने से जैसा १०

शब्द होता है वैसा ही शब्द घोड़ों की टापें पृथ्वी पर पड़ने से हो रहा था। उनकी टापों से उड़ी हुई धूल के बादल आकाश में छा गये और उससे सूर्यमण्डल छिप गया। जैसे हंसों के घुसने से सरोवर का जल क्षोभ को प्राप्त होता है वैसे ही वेगसम्पन्न घुड़सवार सेना आने पर पाण्डवों की सेना में हलचल मच गई। उस समय वहाँ घोड़ों की हिनहिनाहट और अस्त्र-शस्त्रों की झनकार के सिवा और कुछ नहीं सुन पड़ता था।

तटभूमि जैसे वर्षाकाल की पूर्णिमा के दिन क्षोभ को प्राप्त महासागर के प्रचण्ड वेग को रोकती है वैसे ही राजा युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव ने उन घुड़सवार वीरों के वेग को रोक दिया। तीनों वीर भाई तीक्ष्ण बाणों और प्रासों से उनके सिर काटने लगे। घुड़सवार लोग पाण्डवों के बाणों से मरकर, पर्वतकन्दरा में स्थित नागों द्वारा निहत महानागों की तरह, गिरने
२१ लगे। उनके सिर पेड़ से टपकनेवाले पके हुए ताल-फल के समान पृथ्वी पर गिरते देख पड़ते थे। बहुत से घोड़े भी सवारों के साथ मरकर चारों ओर गिरने लगे। पाण्डवों के बाणों से अत्यन्त व्यथित घोड़े, सिंह के सताये मृगों की तरह, प्राण लेकर भागने लगे। तीनों पाण्डव इस तरह युद्ध में शत्रुपक्ष को हराकर भेरी, शङ्ख आदि बजाने लगे।

राजा दुर्योधन ने अपने घुड़सवारों को हारकर भागते देख मद्रराज शल्य से कहा—राजन्! वह देखो, पाण्डवश्रेष्ठ युधिष्ठिर और नकुल-सहदेव हमारे सामने ही हमारी सेना को मारकर भगा रहे हैं। हे महाभाग, आपका बल-विक्रम पृथ्वी में प्रसिद्ध है। इसलिए तटभूमि जैसे समुद्र के वेग को रोकती है वैसे आप भी ज्येष्ठ पाण्डव को रोकिए।

महाराज, प्रतापी राजा शल्य दुर्योधन के ये वचन सुनकर असंख्य रथों के साथ युधिष्ठिर के समीप चले। राजा युधिष्ठिर ने शल्य को भारी सेना के साथ बड़े वेग से अपनी ओर आते
३० देखकर उन्हें अनायास रोक लिया। युधिष्ठिर ने शल्य की छाती में दस बाण मारे। नकुल और सहदेव ने भी सात बाण मारे। मद्रराज शल्य ने भी तीनों को तीन-तीन बाण मारे। इसके बाद क्रुद्ध होकर फिर युधिष्ठिर को तीक्ष्ण साठ बाण और नकुल-सहदेव को दो-दो बाण मारे।

राजन्, शत्रुवीरनाशक महाबाहु भीमसेन ने जब राजा युधिष्ठिर को मृत्यु के पञ्जे में फँसे और शल्य के वशवर्ती देखा तब वे बड़े वेग से उनके पास दौड़े गये। सूर्य उस समय पश्चिम-
३५ आकाश में पहुँच चुके थे। दोनों ओर के वीर प्राणों का मोह छोड़कर घमासान युद्ध करने लगे।

एक सौ छः अध्याय

नवम दिन के युद्ध की समाप्ति

सञ्जय कहते हैं—राजन्, इसके बाद पराक्रमी भीष्म क्रोध से उत्तेजित होकर तीक्ष्ण बाणों से सेना सहित पाण्डवों को पीड़ित करने लगे। उन्होंने भीमसेन को बारह, सात्यकि को

नव, नकुल को तीन, सहदेव को सात और युधिष्ठिर के हृदय तथा हाथों में बारह बाण मारे। इसके बाद कई बाणों से धृष्टद्युम्न को घायल करके वे सिंहनाद करने लगे। तब नकुल ने बारह, सात्यकि ने तीन, धृष्टद्युम्न ने सत्तर, भीमसेन ने सात और युधिष्ठिर ने बारह बाण भीष्म पितामह को मारे। महाबली द्रोणाचार्य ने सात्यकि और भीमसेन को यमदण्डतुल्य पाँच-पाँच उग्र बाण मारे। जैसे कोई गजराज को अंकुश मारे वैसे सात्यकि और भीमसेन ने भी ब्राह्मणश्रेष्ठ द्रोणाचार्य को तीन-तीन तीक्ष्ण बाण मारे। सौवीर, कितव, प्राच्य, प्रतीच्य, उदीच्य, मालव, अभीषाह, शूरसेन, शिवि और वसाति देश के योद्धा लोग तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित होकर भी संग्राम में भीष्म को छोड़कर नहीं भागे। अन्य अनेक देशों के योद्धा और राजा भी विविध शस्त्र लेकर पाण्डवों से युद्ध करने लगे। पाण्डवगण भी अपनी सेना के साथ चारों ओर से पितामह भीष्म को घेरकर उन पर प्रहार करने लगे।

उस समय रथों से घिरे हुए भीष्म वन में दावानल की तरह प्रज्वलित होकर शत्रुसेना को बाणों से नष्ट करने लगे। रथसमूह भीष्मरूप अग्नि के कुण्ड थे। धनुष उसकी ज्वाला था। ११ तलवार, गदा, शक्ति आदि शस्त्र ईंधन थे। बाण चिनगारियाँ थे। वे गृध्रपक्षशोभित सुवर्णपुङ्ख तीक्ष्ण इषु, कर्णी, नालीक, नाराच आदि बाणों से पाण्डवसेना को व्याप्त करके ध्वजाओं को काट-काटकर गिराने लगे। ध्वजाएँ कट जाने से सब रथ मुण्डित तालवृक्षों के समान देख पड़ने लगे। इसके बाद वे हाथियों, रथों और घोड़ों पर सवार योद्धाओं को मार-मारकर पृथ्वी पर गिराने लगे। उनके धनुष की डोरी का विकट शब्द सुनकर सब प्राणी डर से काँपने लगे। महाराज, महावीर भीष्म के धनुष से निकले हुए अमोघ बाण शत्रुओं के कवच तोड़कर शरीर के भीतर घुसने लगे। इसके बाद मैंने देखा कि वेग से चलनेवाले घोड़े—रथी और सारथी से शून्य—रथों को खींचते हुए युद्धभूमि में इधर-उधर फिर रहे हैं। उच्चकुल में उत्पन्न, युद्ध में कभी पीठ न दिखानेवाले, सुवर्णनिर्मित ध्वजाओं से शोभित रथों पर बैठे हुए, देहत्याग का निश्चय किये हुए चौदह हज़ार चेदि, काशि और करूष देश के योद्धा महारथी ज्योंही मुँह फैलाये हुए काल के समान भीष्म के सामने आये त्योंही हाथी, घोड़े आदि अपने वाहनों के साथ मर-मरकर यमपुर को सिधारने लगे। सैकड़ों-हज़ारों योद्धाओं में किसी के रथ का युगकाष्ठ और अन्य २० अंश और किसी के रथ के पहिये बाणों से छिन्न-भिन्न होते देख पड़ते थे। टूटे हुए रथ, वरूथ, कटे हुए बाण, कवच, पट्टिश, गदा, भिन्दिपाल, तरकस, चक्र, खड्ग, कटे हुए कुण्डल-शोभित सिर, तलत्राण, अंगुलित्राण और कटकर गिरी हुई ध्वजा-पताका आदि से वह युद्धभूमि परिपूर्ण थी। सैकड़ों-हज़ारों हाथी, घोड़े और उनके सवार मारे गये। सब महारथी भीष्म के बाणों से अत्यन्त व्यथित होकर युद्धभूमि से भागने लगे। पाण्डवगण किसी तरह उन्हें नहीं लौटा सके। हे भारत, उस समय पाण्डवों की सेना महेन्द्रसदृश महावीर भीष्म के बाणों की चोट

से ऐसी अस्तव्यस्त हो गई कि दो आदमी भी एक साथ नहीं भागते थे। सब अपनी-अपनी जान लेकर भाग रहे थे, दूसरे की ओर देखते भी नहीं थे। रथ, हाथी, घोड़े, पैदल और ध्वजाओं से पूर्ण पाण्डवसेना अचेत-सी होकर हाहाकार और आर्तनाद करने लगी। दैवदुर्विपाक में पड़कर पिता पुत्र को, पुत्र पिता को और प्रिय बन्धु प्रिय बन्धु को मारने लगा। युधिष्ठिर ३० की सब सेना कवच फेंककर, बाल खोलकर, "त्राहि त्राहि" करती हुई चारों ओर भागी। रथों के अङ्ग-भङ्ग हो गये। अनेक रथ उलट-पुलट गये। सिंह के आक्रमण से घबराई और डरी हुई गउओं के झुण्ड की सी दशा पाण्डवसेना की देख पड़ी। सब लोग आर्तनाद कर रहे थे।

युधिष्ठिर की सेना को यों भागते देखकर वासुदेव ने रथ रोककर अर्जुन से कहा—हे धनञ्जय, यह तुम्हारा अभीष्ट समय उपस्थित है। इस समय तुम मोह को छोड़कर युद्ध करो। हे पुरुषसिंह, वीर भीष्म पर प्रहार करो। तुमने एक समय विराटनगर में सञ्जय के आगे कहा था कि भीष्म, द्रोण आदि कौरवपक्ष के योद्धा मुझसे लड़ने आवेंगे तो मैं उनको मारूँगा; उनके साथी भी जीते नहीं बचेंगे। इस समय अपनी उन बातों को पूर्ण करो। सन्ताप और मोह छोड़कर क्षत्रियधर्म के अनुसार युद्ध करो।

सञ्जय कहते हैं—राजन्! श्रीकृष्ण के ये वचन सुनकर अर्जुन ने तिरछी दृष्टि से देखकर, मुँह लटकाकर, अनिच्छापूर्वक कहा—हे हृषीकेश, अवध्य गुरुजन को मारकर नरक का कारणस्वरूप राज्य प्राप्त करने की अपेक्षा मुझे वनवास के दुःख भोगना ही अच्छा जान पड़ता है। तुम्हारी बात न मानना भी मेरी शक्ति के बाहर है। रथ चलाओ। मैं तुम्हारी आज्ञा से दुर्द्धर्ष कुरुपितामह वृद्ध भीष्म को आज युद्ध में मार गिराऊँगा।

अब भगवान् वासुदेव सूर्य के समान तेजस्वी दुर्निरीक्ष्य भीष्म की ओर सफ़ेद रङ्ग के ४० अर्जुन के घोड़ों को हाँककर ले चले। युधिष्ठिर की सब सेना अर्जुन को भीष्म से लड़ने के लिए उद्यत देखकर आप से ही फिर लौट पड़ी। महावीर भीष्म बारम्बार सिंहनाद करके अर्जुन के रथ पर बाण बरसाने लगे। क्षण भर में ही भीष्म के बाणों से अर्जुन का रथ ऐसा छिप

गया कि घोड़े, सारथी और रथ कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था। निडर वासुदेव धैर्य के साथ उन भीष्म के बाणों से व्याकुल घोड़ों को चलाने लगे। तब महावीर अर्जुन ने मेघगर्जन का सा गम्भीर शब्द करनेवाले दिव्य गाण्डीव धनुष को लेकर तीक्ष्ण बाणों से भीष्म का धनुष काट डाला। महावीर भीष्म ने उसी दम और एक बड़ा धनुष उठाकर उस पर प्रत्यञ्चा चढ़ाई। तुरन्त ही कुपित अर्जुन ने फुर्ती से वह धनुष भी काट डाला। भीष्म ने प्रसन्न होकर इस फुर्ती के लिए "शाबाश अर्जुन, शाबाश!" कहकर अर्जुन की प्रशंसा की। भीष्म ने फिर दूसरा धनुष हाथ में लिया। वे फिर अर्जुन के रथ पर बाण छोड़ने लगे। वासुदेव भी तरह-तरह की गतियों से घोड़े चलाकर ५० भीष्म के बाणों को व्यर्थ करते हुए सारथी के काम में निपुणता की पराकाष्ठा दिखाने लगे। मतलब यह कि श्रीकृष्ण इस होशियारी से रथ को घुमाते थे कि भीष्म का लक्ष्य और बाण ख़ाली जाते थे। वासुदेव और अर्जुन शरीर फिर भी भीष्म के बाणों से घायल हो रहे थे और वे दोनों पुरुषसिंह परस्पर सींगों की मार से घायल श्रेष्ठ साँड़ की तरह शोभायमान हो रहे थे।

महाराज, श्रीकृष्ण ने देखा कि इधर अर्जुन मन लगाकर युद्ध नहीं करते और उधर भीष्म लगातार दृढ़ बाण बरसाकर, दोनों ओर की सेना के मध्यस्थल में खड़े होकर, दोपहर के प्रतापपूर्ण सूर्य की तरह तप रहे हैं—पाण्डवपक्ष के प्रधान-प्रधान वीर योद्धाओं को मारकर उन्होंने प्रलय सा मचा रक्खा है। वासुदेव को यह असह्य हुआ। वे क्रोध के मारे अर्जुन के घोड़ों की रास छोड़कर रथ से उतर पड़े और कोड़ा हाथ में लिये बारम्बार सिंहनाद करके भीष्म को मारने के लिए उनकी ओर दौड़े। श्रीकृष्ण की आँखें क्रोध से लाल हो रही थीं। अमित तेजस्वी प्रतापी महायोगी श्रीकृष्ण के दौड़ने के समय पग-पग पर पृथ्वी मानों फटने

लगी। राजन्! यह देखकर आपके पक्ष के सैनिक भय से विह्वल हो उठे, उनके हृदय धड़कने लगे। श्रीकृष्ण जब दौड़े तब सब सैनिक "भीष्म मरे, भीष्म मरे" कहकर चिल्लाने लगे। ६० गजराज पर आक्रमण करने के लिए झपटते हुए सिंह की तरह गरजते हुए श्रीकृष्ण जब भीष्म के

सामने चले तब वे बिजली से शोभित मेघ के समान जान पड़े। क्योंकि उनका शरीर मरकत-मणि के समान साँवला था, और उस पर रेशमी पीताम्बर बहार दिखा रहा था।

पराक्रमी भीष्म महात्मा वासुदेव को अपनी ओर इस तरह झपटते देखकर तनिक भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने वैसे ही दिव्य धनुष खींचकर कहा—हे वासुदेव, आपको प्रणाम है। आइए, आज इस महायुद्ध में मुझे मारकर वीरगति दीजिए। हे देव, आप यदि मुझे युद्ध में मारेंगे तो उसको भी मैं अपने लिए श्रेय समझूँगा। हे गोविन्द, आपके इस व्यवहार से आज त्रिभुवन के लोग मुझे और भी सम्मान देंगे। हे निष्पाप, मैं आपका दास हूँ; मुझ पर जी भरकर प्रहार कीजिए।

इधर अर्जुन भी श्रीकृष्ण के पीछे रथ से कूद पड़े। उन्होंने दौड़कर पीछे से श्रीकृष्ण के दोनों हाथ पकड़ लिये। अर्जुन के यों रोकने पर भी कुपित श्रीकृष्ण नहीं रुके, और उसी तरह उनको भी खींचते हुए वेग से आगे बढ़े। दस पग आगे जाने पर, किसी तरह पैर जमाकर, अर्जुन उन्हें रोक सके। क्रोध से आँखें लाल करके साँप की तरह बारम्बार साँसें लेते हुए श्रीकृष्ण से

७१ सखा अर्जुन ने स्नेहपूर्ण नम्र स्वर में कहा—हे महाबाहु, लौट चलिए। हे केशव, आप पहले युद्ध न करने की प्रतिज्ञा कर चुके हैं, उसे झूठ न कीजिए। आप शस्त्र लेकर पितामह से लड़ेंगे तो लोग आपको मिथ्यावादी कहेंगे। यह सब भार तो मेरे ऊपर है। मैं पितामह को मारूँगा। मैं शस्त्र, सत्य और सुकृत की शपथ खाकर कहता हूँ कि संग्राम में सब शत्रुओं को उनके भाई-बन्धुओं-सहित अवश्य मारूँगा। आप अभी देखेंगे कि मैं पूर्णचन्द्र तुल्य पितामह को रथ से गिरा दूँगा।

महानुभाव श्रीकृष्ण अर्जुन के ये वचन सुनकर वैसे ही क्रोधपूर्ण भाव से फिर रथ पर चले गये। अर्जुन और श्रीकृष्ण के रथ पर जाते ही महारथी भीष्म फिर मेघ जैसे पर्वत पर जल बरसावें वैसे उन पर बाण बरसाने लगे। सूर्य जैसे वसन्त ऋतु में अपनी किरणों से सब पदार्थों का तेज हरते हैं वैसे ही पितामह भीष्म बाणों से सबके प्राण हरने लगे। पाण्डवगण जैसे कौरवों की सेना को भगा रहे थे वैसे ही भीष्म पाण्डवों की सेना को भगाने लगे। इस प्रकार भागते हुए, निरुत्साह, उदास सैकड़ों-हज़ारों पाण्डवपक्ष के वीर मर-मरकर गिरने लगे। वे मध्याह्न काल के सूर्य के समान तेज से प्रज्वलित, अलौकिक पराक्रमी, दुष्कर कर्म करनेवाले

८१ भीष्म की ओर आँख उठाकर देख भी नहीं सकते थे। उनकी ओर देखते ही पाण्डवगण डरने लगे।

हे भारत! पाण्डवपक्ष के सब सैनिक भीष्म के प्रहार से भागकर, कीचड़ में फँसी गउओं के झुण्ड के समान, उत्पीड़ित चींटियों के समान और बलवान् व्यक्ति से लड़नेवाले दुर्बल पुरुषों के समान, शरणहीन होकर भीष्म की ओर फिरकर देख भी नहीं सकते थे। महापराक्रमी भीष्म बाण-रूप किरणों के द्वारा, सूर्य के समान, सब राजाओं को सन्ताप पहुँचाने लगे। राजन्, इस तरह पाण्डवों की महासेना भीष्म के बाणों से नष्ट होने लगी। उस समय भगवान् सूर्यदेव अस्ताचल पर

८५ पहुँच गये। सैनिक लोग बहुत थक गये थे। वे युद्ध के विश्राम के लिए व्याकुल हो उठे।

महाभारत के स्थायी ग्राहक बनने के नियम

(१) जो सज्जन हमारे यहाँ महाभारत के स्थायी ग्राहकों में अपना नाम और पता लिखा देते हैं उन्हें महाभारत के अङ्कों पर २०) सैकड़ा कमीशन काट दिया जाता है। अर्थात् १।) प्रति अङ्क के बजाय स्थायी ग्राहकों को १) में प्रति अङ्क दिया जाता है। ध्यान रहे कि डाकव्यय स्थायी और फुटकर सभी तरह के ग्राहकों को अलग देना पड़ेगा।

(२) साल भर या छः मास का मूल्य १२) या ६). दो आना प्रति अङ्क के हिसाब से रजिस्ट्री खर्च सहित १२॥) या ६॥) जो सज्जन पेशगी मनीआर्डर-द्वारा भेज देंगे, केवल उन्हीं सज्जनों को डाकखर्च नहीं देना पड़ेगा। महाभारत की प्रतियाँ राह में गुम न हो जायँ और ग्राहकों की सेवा में वे सुरक्षित रूप में पहुँच जायँ, इसी लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजने का प्रबन्ध किया गया है।

(३) इसके प्रत्येक खण्ड के लिए अलग से बहुत सुन्दर जिल्दें भी सुनहले नाम के साथ तैयार कराई जाती हैं। प्रत्येक जिल्द का मूल्य ।॥) रहता है परन्तु स्थायी ग्राहकों को वे ॥) ही में मिलती हैं। जिल्दों का मूल्य महाभारत के मूल्य से बिलकुल अलग रहता है।

(४) स्थायी ग्राहकों के पास प्रतिमास प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होते ही बिना विलम्ब वी० पी० द्वारा भेजा जाता है। बिना कारण वी० पी० लौटाने से उनका नाम ग्राहक-सूची से अलग कर दिया जायगा।

(५) ग्राहकों को चाहिए कि जब किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार करें तो कृपा कर अपना ग्राहक-नम्बर जो कि पता की स्लिप के साथ छपा रहता है और पूरा पता अवश्य लिख दिया करें। बिना ग्राहक-नम्बर के लिखे हज़ारों ग्राहकों में से किसी एक का नाम ढूँढ निकालने में बड़ी कठिनाई पड़ती है और पत्र की कार्रवाई होने में देरी होती है। जब कि एक ही नाम के कई-कई ग्राहक हैं। इसलिए सब प्रकार का पत्र-व्यवहार करते तथा रुपया भेजते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखना चाहिए।

(६) जिन ग्राहकों को अपना पता सदा अथवा अधिक काल के लिए बदलवाना हो, अथवा पते में कुछ भूल हो, उन्हें कार्यालय को पता बदलवाने की चिट्ठी लिखते समय अपना पुराना और नया दोनों पते और ग्राहक-नम्बर भी लिखना चाहिए। जिससे उचित संशोधन करने में कोई दिक़्क़त न हुआ करे। यदि किसी ग्राहक को केवल एक दो मास के लिए ही पता बदलवाना हो, तो उन्हें अपने हलके के डाकख़ाने से इसका प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

(७) ग्राहकों से सविनय निवेदन है कि नया आर्डर या किसी प्रकार का पत्र लिखने के समय यह ध्यान रक्खें कि लिखावट साफ़ साफ़ हो। अपना नाम, गाँव, पोस्ट और ज़िला साफ़ साफ़ हिन्दी या अँगरेज़ी में लिखना चाहिए ताकि अङ्क या उत्तर भेजने में दुबारा पूछ-ताछ करने की ज़रूरत न हो। "हम परिचित ग्राहक हैं" यह सोच कर किसी को अपना पूरा पता लिखने में लापरवाही न करनी चाहिए।

(८) यदि कोई महाशय मनी-आर्डर से रुपया भेजें, तो 'कूपन' पर अपना पता-ठिकाना और रुपया भेजने का अभिप्राय स्पष्ट लिख दिया करें, क्योंकि मनीआर्डरफ़ार्म का यही अंश हमको मिलता है।

सब प्रकार के पत्रव्यवहार का पता—

मैनेजर महाभारत विभाग, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

Printed and Published by K. [illegible]

आवश्यक सूचनायें

(१) हमने प्रथम खण्ड की समाप्ति पर उसके साथ एक महाभारत-कालीन भारतवर्ष का प्रामाणिक सुन्दर मानचित्र भी देने की सूचना दी थी। इस सम्बन्ध में हम ग्राहकों को सूचित करते हैं कि पूरा महाभारत समाप्त हो जाने पर हम प्रत्येक ग्राहक को एक परिशिष्ट अध्याय बिना मूल्य भेजेंगे जिसमें महाभारत-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण खोज, साहित्यिक आलोचना, चरित्र-चित्रण तथा विश्लेषण आदि रहेगा। उसी परिशिष्ट के साथ ही मानचित्र भी लगा रहेगा जिसमें पाठकों को मानचित्र देख कर उपरोक्त बातें पढ़ने और समझने आदि में पूरी सुविधा रहे।

(२) महाभारत के प्रेमी ग्राहकों को यह शुभ समाचार सुन कर बड़ी प्रसन्नता होगी कि हमने कानपुर, उन्नाव, काशी (रामनगर), कलकत्ता, ग़ाज़ीपुर, बरेली, मथुरा (वृन्दावन), जोधपुर, बुलन्दशहर, प्रयाग और लाहौर आदि में ग्राहकों के घर पर ही महाभारत के अङ्क पहुँचाने का प्रबन्ध किया है। अब तक ग्राहकों के पास यहीं से सीधे डाक-द्वारा प्रतिमास अङ्क भेजे जाते थे जिसमें प्रति अङ्क तीन चार आना ख़र्च होता था पर अब हमारा नियुक्त किया हुआ एजेंट ग्राहकों के पास घर पर जाकर अङ्क पहुँचाया करेगा और अङ्क का मूल्य भी ग्राहकों से वसूल कर ठीक समय पर हमारे यहाँ भेजता रहेगा। इस अवस्था पर ग्राहकों को ठीक समय पर प्रत्येक अङ्क सुरक्षित रूप में मिल जाया करेगा और वे डाक, रजिस्टरी तथा मनीआर्डर इत्यादि के व्यय से बच जायँगे। इस प्रकार उन्हें प्रत्येक अङ्क केवल एक रुपया मासिक देने पर ही घर बैठे मिल जाया करेगा। यथेष्ट ग्राहक मिलने पर अन्य नगरों में भी शीघ्र ही इसी प्रकार का प्रबन्ध किया जायगा। आशा है जिन स्थानों में इस प्रकार का प्रबन्ध नहीं है, वहाँ के महाभारतप्रेमी सज्जन शीघ्र ही अधिक संख्या में ग्राहक बन कर इस अवसर से लाभ उठावेंगे। और जहाँ इस प्रकार की व्यवस्था हो चुकी है वहाँ के ग्राहकों के पास जब एजेंट अङ्क लेकर पहुँचे तो ग्राहकों को रुपया देकर अङ्क ठीक समय पर ले लेना चाहिए जिसमें उन्हें ग्राहकों के पास बार बार आने जाने का कष्ट न उठाना पड़े। यदि किसी कारण उस समय ग्राहक मूल्य देने में असमर्थ हों तो अपनी सुविधानुसार एजेंट के पास से जाकर अङ्क ले आने की कृपा किया करें।

(३) हम हिन्दी-भाषा-भाषी सज्जनों से एक सहायता की प्रार्थना करते हैं। वह यही कि हम जिस विराट् आयोजन में संलग्न हुए हैं आप लोग भी कृपया इस पुण्य-पर्व में सम्मिलित होकर पुण्य-सञ्चय कीजिए अपनी राष्ट्र-भाषा हिन्दी का साहित्य-भाण्डार पूर्ण करने में सहायक हूजिए और इस प्रकार सर्वसाधारण का हित-साधन करने का उद्योग कीजिए। सिर्फ़ इतना ही करें कि अपने दस-पाँच हिन्दी-प्रेमी इष्ट-मित्रों में से कम से कम दो स्थायी ग्राहक इस वेद तुल्य सर्वाङ्गसुन्दर महाभारत के और बना देने की कृपा करें। जिन पुस्तकालयों में हिन्दी की पहुँच हो वहाँ इसे ज़रूर मँगवावें। एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न रह जाय जिसके घर यह पवित्र ग्रन्थ न पहुँचे। आप सब लोगों के इस प्रकार साहाय्य करने से ही यह कार्य्य अग्रसर होकर समाज का हितसाधन करने में समर्थ होगा।

—प्रकाशक

विषय-सूची

द्रोणपर्व

(द्रोणाभिषेकपर्व)

विषय-सूची।

रंगीन चित्रों की सूची

विशेष सूचना—कुछ विशेष कारणवश इस अङ्क में हम दश चित्रों की जगह नव ही चित्र दे सके हैं। आगामी अङ्क में इस कमी की पूर्ति के लिए ग्यारह चित्र दिये जायँगे।

—व्यवस्थापक

एक सौ सात अध्याय

पाण्डवों का भीष्म के पास जाकर उनसे उनके वध का उपाय पूछना

सञ्जय ने कहा—हे भारत, दिन डूब गया था। युद्धभूमि में कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था। सन्ध्या के समय राजा युधिष्ठिर ने अपने पक्ष की सेना को महारथी भीष्म के प्रहार से पीड़ित हो, अस्त्र-शस्त्र फेंककर, भागते और सोमकगण को हारकर निरुत्साह होते देखकर अत्यन्त चिन्तित हो सेनापति को युद्ध रोकने की आज्ञा दी। राजन्, इस प्रकार पाण्डवपक्ष की सेना को युद्ध से लौटते देखकर आपके पक्ष की सेना ने भी युद्ध बन्द कर दिया। शस्त्र-प्रहार से छिन्न-भिन्न महारथी योद्धा लोग अपने-अपने शिविर को लौट चले। भीष्म के बाणों से पीड़ित पाण्डवगण उनके अद्भुत युद्धकौशल को स्मरण करके किसी तरह शान्ति नहीं प्राप्त कर सकते थे। वे बहुत ही बेचैन हो उठे। उधर आपके पुत्र भीष्म की पूजा और प्रशंसा करते हुए उन्हें अपने बीच में करके शिविर को गये।

जीवों को अचेत करके नींद में सुलानेवाली भयङ्कर रात हो आई। दुर्द्धर्ष पाण्डव और सृञ्जय रात के समय श्रीकृष्ण आदि यादवों के साथ डेरे में बैठकर सलाह करने लगे। राजा युधिष्ठिर ने देर तक सोचकर श्रीकृष्ण की ओर देखकर कहा—हे वासुदेव! ये महाबली भीष्म मेरी सेना को वैसे ही नष्ट कर रहे हैं जैसे मस्त हाथी नरकुल के वन को रौंदता है। वे प्रज्वलित आग की तरह मेरी सेना को भस्म कर रहे हैं। तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्र चलाने में चतुर महाप्रतापी पितामह क्रोधपूर्वक धनुष हाथ में लेकर, महानाग तक्षक के समान, अमोघ बाण बरसाते हैं। हम लोगों को उनकी ओर देखने तक का साहस नहीं होता। कुपित यमराज, वज्रपाणि इन्द्र, पाशधारी वरुण और गदापाणि कुबेर को चाहे कोई जीत भी ले, किन्तु शस्त्रधारी कुपित भीष्म को कोई युद्ध में नहीं परास्त कर सकता। इसलिए हे वासुदेव! तुम बताओ, अब मैं क्या करूँ? मैं भीष्म से बहुत डर रहा हूँ। वे नित्य मेरी सेना नष्ट करते जा रहे हैं। मैं फिर वन में जाकर रहना ही अपने लिए अच्छा समझता हूँ। अब युद्ध करने को जी नहीं चाहता। जैसे पतङ्गे मरने के लिए ही जलती हुई आग की ज्योति के ऊपर आक्रमण करते हैं, वैसे ही भीष्म से हमारा लड़ना है। हे यदुकुल-तिलक, राज्य के लोभ से युद्ध ठानकर मैं इस समय विनाश के मुख पर स्थित हूँ। मेरे ये शूर भाई भी भीष्म के बाणों से अत्यन्त पीड़ित हो रहे हैं। मेरे कारण, भ्रातृस्नेह के वश होकर, ये लोग भी राज्य से भ्रष्ट हुए और वन में रहे। हे मधुसूदन, मेरे ही कारण द्रौपदी ने अब तक इतने क्लेश सहे। मैं इस समय जीवन को ही ग़नीमत समझता हूँ; क्योंकि जीवन के ही लाले पड़े हैं। मैं इस समय यह सोच रहा हूँ कि [युद्ध बन्द करके] जीवन बचा लूँ। अब धर्म और तप करने में ही अपना जीवन बिताऊँगा। हे श्रीकृष्ण, अगर

मुझे और मेरे भाइयों को तुम अपने अनुग्रह का पात्र समझते हो तो इस समय हित की बात मुझे बताओ। ऐसा उपदेश दो, जो धर्म का विरोधी न हो और जिससे मेरा हित भी हो।

युधिष्ठिर के ये वचन सुनकर श्रीकृष्ण को दया आ गई। वे उन्हें समझाते हुए बोले—हे सत्यवादी धर्मपुत्र, आप उदास न हों। आपके चारों भाई बल और पराक्रम में श्रेष्ठ हैं। वे शत्रुओं को नष्ट करनेवाले और दुर्जय हैं। अर्जुन और भीमसेन अग्नि तथा वायु के समान तेजस्वी हैं। नकुल और सहदेव ऐसे बलवान् हैं कि इन्द्र के समान देवताओं पर भी प्रभुता कर सकते हैं। इन पर भी आपको विजय का भरोसा न हो तो मुझे अपना सुहृद् और हितचिन्तक समझकर भीष्म से लड़ने की आज्ञा दीजिए। महाराज, आपके कहने से ऐसा कौन काम है जिसे मैं महा-युद्ध में नहीं कर सकता? यदि अर्जुन स्वयं भीष्म को मारना नहीं चाहते तो मैं, दुर्योधन आदि के सामने ही, नरश्रेष्ठ भीष्म को मारूँगा। हे पाण्डव, महावीर भीष्म के मरने से ही अगर विजय पा सकोगे तो मैं अकेला ही कुरुवृद्ध भीष्म को मार डालूँगा। राजन्, युद्ध में मेरा इन्द्र के समान पराक्रम देखिएगा। महास्त्र छोड़ते हुए भीष्म को मैं रथ से गिरा दूँगा। जो व्यक्ति पाण्डवों का शत्रु है, वह मेरा भी शत्रु है। मुझे आप किसी बात में अलग न समझिए। आपके पक्ष के लोग मेरे हैं और मेरे पक्ष के लोग आपके अधीन हैं। ख़ासकर अर्जुन के साथ मेरा विशेष सम्बन्ध है। अर्जुन मेरे भाई, सखा, सम्बन्धी और शिष्य हैं। मैं उनके लिए अपने शरीर का मांस भी काटकर दे सकता हूँ। वीर अर्जुन भी मेरे लिए प्राण तक दे सकते हैं। हम दोनों मित्रों की परस्पर यह प्रतिज्ञा है कि एक दूसरे को सङ्कट से उबारेगा। इसलिए हे धर्मराज, मुझे आप आज्ञा दें, मैं समर के लिए तैयार हो जाऊँ। अर्जुन ने उपप्लव्य नगर में, उलूक दूत के आगे, प्रतिज्ञा की थी कि "मैं भीष्म को मारूँगा"। मुझे अर्जुन की यह प्रतिज्ञा सर्वथा पूरी करनी है। अर्जुन की अनुमति पाकर मैं अवश्य उसे पूर्ण कर सकता हूँ। अथवा युद्ध में यह कार्य करना अर्जुन के लिए कठिन नहीं है, इसलिए वही संग्राम में शत्रुदमन भीष्म को मारेंगे। अर्जुन उद्यत होकर रण में और के लिए असाध्य काम भी सहज ही कर सकते हैं। वे युद्ध में दैत्य-दानवों-सहित देवताओं को भी मार सकते हैं। फिर भीष्म को मार लेना कौन बड़ी बात है? भीष्म महावीर होने पर भी इस समय कर्तव्यज्ञान से शून्य हो रहे हैं। वे इस समय क्षुद्र सैनिकों पर अपना पराक्रम दिखाते हैं। उनकी बुद्धि भ्रष्ट-सी हो गई है, इसी से जान पड़ता है कि उनके जीवन की अवधि थोड़ी ही रह गई है।

युधिष्ठिर ने कहा—हे वासुदेव, तुम जो कह रहे हो सो ठीक है। सब कौरव मिलकर भी तुम्हारे वेग को नहीं सह सकते। तुम हमारे पक्ष में हो, इसलिए अवश्य ही हमारी इच्छाएँ पूरी होंगी। हे गोविन्द! तुमको हमने सहायक पाया है इसलिए भीष्म क्या हैं, हम इन्द्र सहित देवताओं को भी हरा सकते हैं। किन्तु हे माधव! तुम युद्ध न करने की प्रतिज्ञा कर

चुके हो इसलिए, आत्मगौरव की रक्षा का ख़याल करके, मैं तुम्हें युद्ध में लिप्त करना और मिथ्या-वादी बनाना ठीक नहीं समझता। तुम युद्ध न करके यों ही मुझको उचित सहायता दो। मुझसे युद्ध के पहले भीष्म वादा कर चुके हैं कि वे युद्ध तो दुर्योधन की ओर से करेंगे, परन्तु मुझे विजय की सलाह देंगे। इसलिए हे माधव, वे अवश्य ही विजय की अच्छी सलाह मुझे देंगे और उनकी कृपा से हमें राज्य प्राप्त होगा। हे वासुदेव, इस समय हम सब मिलकर उनके पास चलें। आओ, उन्हीं से चलकर उनके वध का उपाय पूछें। वे अवश्य हमको हमारे हित की बात बतावेंगे। जो तुमको यह सलाह रुचे तो हम लोग उनके पास चलकर सलाह लें। वे जैसा बतावें वैसा ही हम लोग करें। हे मधुसूदन, बचपन में जब हमारे पिता का स्वर्गवास हो गया था तब उन्होंने हमारा लालन-पालन किया था। वे देवव्रत भीष्म इस समय ५० अवश्य हमें अच्छी सलाह देंगे। किन्तु हमारे इस क्षत्रिय-धर्म को धिक्कार है कि हम लोग उन्हीं वृद्ध पितामह, पिता के प्रिय पिता, को मारना चाहते हैं।

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, तब श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा—हे धर्मपुत्र, आपने जो कहा वह मुझे भी पसन्द है। देवव्रत भीष्म समर में शत्रुओं को देखकर ही नष्ट कर सकते हैं। इस कारण उनके वध का उपाय जानने के लिए उन्हीं के पास जाना चाहिए। आप विशेष रूप से पूछेंगे तो वे अपने वध का उपाय बता देंगे। इसलिए आइए, हम सब कुरुपितामह से पूछने चलें। हम लोग उनकी बताई हुई सलाह के माफ़िक़ शत्रुओं से लड़ेंगे और विजय प्राप्त करेंगे।

राजन्! महावीर पाण्डवगण और श्रीकृष्ण यह सलाह करके, धनुष आदि शस्त्र और कवच त्यागकर, सब मिलकर भीष्म के शिविर में पहुँचे। सबने सिर झुकाकर प्रणाम और पूजा की। सब उनके शरणागत हुए। तब कुरुपितामह भीष्म ने हर एक से स्वागत और कुशल पूछकर कहा—हे वीरो! बताओ, तुम्हारी प्रीति के लिए मैं क्या करूँ? वह कार्य दुष्कर ६० होने पर भी मैं उसे सब तरह यत्नपूर्वक करने को तैयार हूँ।

पितामह ने जब प्रसन्नतापूर्वक बारम्बार इस तरह पूछा तब दीन भाव से, स्नेहपूर्ण स्वर से, युधिष्ठिर ने कहा—हे धर्मज्ञ पितामह, हम लोग जय और राज्य किस तरह पावेंगे? किस तरह हम अपने अधीन वीर क्षत्रियों को इस नाश से बचा सकेंगे? आप कृपाकर अपनी मृत्यु का उपाय हमको बता दीजिए। हे वीर, समर में हम किस तरह आपके वेग को सह सकते हैं? युद्ध में आप पर प्रहार करने का, आपको मारने का, साधारण मौक़ा भी हमें नहीं देख पड़ता। आप सदा समर में मण्डलाकार धनुष धारण किये बाण बरसाते देख पड़ते हैं। आप किस समय धनुष हाथ में लेते हैं, कब डोरी खींचते हैं, कब बाण चढ़ाते और कब छोड़ते हैं, यह कुछ भी हम लोगों को नहीं देख पड़ता। रथ के ऊपर आप दूसरे सूर्य के समान देख पड़ते हैं। रथ, घोड़े, हाथी, मनुष्य आदि को आप लगातार अपने बाणों से गिराते ही रहते हैं।

आपको भला कौन पुरुष समर में जीत सकता है ? आपने लगातार बाण-वर्षा करके मेरी इतनी बड़ी सेना नष्ट कर दी है। इसलिए हे पितामह, इस समय आप वही उपाय बताइए जिससे हम युद्ध में आपको जीत सकें, राज्य प्राप्त कर सकें और मेरी सेना का विनाश भी न हो।

राजन्, तब भीष्म ने पाण्डवों से कहा—हे कुन्तीनन्दन, मेरे जीते जी युद्ध में विजय प्राप्त करना तुम्हारे लिए सम्भव नहीं। युद्ध में मुझे मारने पर ही तुम लोग जय प्राप्त कर सकोगे। ७० इसलिए अगर समर में जय प्राप्त करना चाहते हो तो शीघ्र मुझ पर कठोर प्रहार करो। मैं तुमको आज्ञा देता हूँ, तुम जी भरकर मुझ पर बाण चलाओ। इसे मैं तुम्हारा सौभाग्य समझता हूँ कि तुम लोग यह जान गये कि मुझे मारे बिना तुम्हें जय नहीं प्राप्त हो सकती। मेरे मरने से ही सब कौरवों का मरना समझकर मुझे मारने का यत्न झटपट करो।

युधिष्ठिर ने कहा—हे पितामह, आप संग्राम में दण्डपाणि यमराज की तरह देख पड़ते हैं। इसलिए वह उपाय बताइए जिससे हम युद्ध में आपको जीत सकें। हम लोग समर में इन्द्र, वरुण और यमराज को भी जीत सकते हैं; किन्तु आपको तो इन्द्र सहित सब देवता और दैत्य भी नहीं जीत सकते, फिर हम हैं क्या चीज़ !

भीष्म ने कहा—हे पाण्डव, तुम ठीक कह रहे हो। मैं संग्राम में यत्नपूर्वक धनुष-बाण लेकर खड़ा होऊँ तो इन्द्र सहित सब देवता और दैत्य भी मिलकर मुझे नहीं जीत सकते। मैं यदि अस्त्र-शस्त्र त्याग दूँ तभी वे मुझे मार सकते हैं। हे धर्मपुत्र! शस्त्र का त्याग किये हुए, कवच-हीन, गिरे हुए, ध्वजाहीन, भागते हुए, डरे हुए, शरणागत, स्त्री-जाति, स्त्रियों का नाम रखनेवाले, विकलाङ्ग, अपने पिता के एकमात्र पुत्र, सन्तानहीन और नपुंसक आदि के साथ युद्ध करना मुझे पसन्द नहीं है। राजन्, मेरी पहले की प्रतिज्ञा स्मरण करो। मैं पुरुष-भाव को प्राप्त स्त्री-जाति से या नपुंसक से कभी युद्ध नहीं कर सकता। जो महारथी युद्धनिपुण द्रुपद का पुत्र शिखण्डी तुम्हारी सेना में है वह पहले स्त्री था, पीछे यक्ष के वरदान से पुरुष हो गया है। यह ८१ वृत्तान्त तुम लोग भी अच्छी तरह जानते हो। इस समय महारथी अर्जुन उसी शिखण्डी को आगे करके मुझ पर तीक्ष्ण बाण मारें। शिखण्डी अमङ्गलध्वज और पहले का स्त्री है, इसलिए धनुष-बाण हाथ में रहने पर भी मैं उस पर प्रहार नहीं करूँगा। अर्जुन उसी शिखण्डी की आड़ में रहकर बारम्बार बाण मारें। युद्ध के लिए उद्यत मुझको महाभाग श्रीकृष्ण या महारथी अर्जुन के सिवा और कोई नहीं मार सकता। इसलिए वीर अर्जुन यत्नपूर्वक गाण्डीव धनुष हाथ में लेकर; शिखण्डी को आगे करके, मुझ पर प्रहार करें और मुझे गिरा दें। तब तुम अवश्य जय प्राप्त कर सकोगे। हे युधिष्ठिर, मेरी सलाह के अनुसार काम करोगे तो कौरवों को जीत लोगे।

सञ्जय कहते हैं—महाराज ! महात्मा श्रीकृष्ण और पाण्डवगण पितामह भीष्म से उनकी मृत्यु का यह उपाय जानकर, उन्हें प्रणाम करके, अपने शिविर को लौट गये। अब भीष्म को

प्राणत्याग के लिए उद्यत देखकर, दुःख और सन्ताप से खिन्न होकर, लज्जितभाव से अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा—हे वासुदेव! मैं बचपन में धूल में खेलते-खेलते जिनकी गोद में बैठकर जिन्हें धूल से भर देता था, जिन्हें पिता कहता था तो "मैं तुम्हारा पिता नहीं, तुम्हारे पिता का पिता हूँ" कहकर जो मुझसे स्नेह करते थे, उन्हीं महात्मा वृद्ध पितामह से इस समय मैं कैसे युद्ध करूँगा? किस तरह तीक्ष्ण बाण मारकर उनकी हत्या करूँगा? हे वासुदेव, महात्मा भीष्म मेरी सारी सेना को भले ही नष्ट कर दें, किन्तु मैं उनसे कभी न लड़ूँगा। नाश हो और चाहे जय, मैं उन्हें नहीं मार सकता। हे श्रीकृष्ण! आप ही कहिए, क्या मेरा यह कर्तव्य नहीं है? ९०

श्रीकृष्ण ने कहा—सुनो अर्जुन, तुम पहले युद्ध में भीष्म को मारने की प्रतिज्ञा कर चुके हो। क्षत्रिय होकर अब उस प्रतिज्ञा को असत्य कैसे करोगे? हे पार्थ, युद्धदुर्मद क्षत्रिय भीष्म को क्षत्रियधर्म के अनुसार मार गिराओ। उन्हें मारे बिना तुमको जय नहीं मिल सकती। यह बात, अर्थात् तुम्हारे हाथ से भीष्म की मौत, पहले ही देवता निश्चित कर चुके हैं। तुम्हें विवश होकर वही करना होगा। देवताओं का निश्चय कभी टल नहीं सकता। मुँह फैलाये हुए काल के समान दुर्द्धर्ष भीष्म का सामना तुम्हारे सिवा कोई नहीं कर सकता। यहाँ तक कि इन्द्र भी युद्ध में भीष्म को नहीं मार सकते। इसलिए मेरी बात सुनो, चित्त को स्थिर करके भीष्म को मारो। महामति बृहस्पति ने एक समय इन्द्र से कहा था कि अपना बड़ा, वृद्ध और गुणी पुरुष—गुरुजन होकर भी—अगर आततायी की तरह अपने को मारने आवे तो उसे मार डालना चाहिए। इसमें कोई दोष नहीं है। हे पार्थ! क्षत्रियों का यही सनातन-धर्म है कि वे ईर्ष्या छोड़कर यज्ञ करें, शत्रुओं से युद्ध करें और प्रजा की रक्षा करें। १००

अर्जुन ने कहा—हे श्रीकृष्ण, शिखण्डी के ही हाथ से भीष्म की मृत्यु होना निश्चित है; क्योंकि शिखण्डी को सामने देखकर ही भीष्म युद्ध से विमुख हो जाते हैं। मैंने यही उपाय पसन्द किया है कि मैं शिखण्डी को अपने आगे करके भीष्म को मारूँगा। केवल शिखण्डी भीष्म से युद्ध करेंगे, और मैं अन्य महारथियों को अपने बाणों से रोकूँगा। मैंने भीष्म के मुँह से सुना है कि शिखण्डी पहले स्त्री थे। इसी कारण पितामह भीष्म उनसे युद्ध नहीं करेंगे।

महाराज, पाण्डवगण श्रीकृष्ण के साथ इस तरह भीष्म-वध का निश्चय करके प्रसन्नता-पूर्वक अपने डेरों में आये और बिछौने पर लेटकर विश्राम करने लगे। १०७

एक सौ आठ अध्याय

शिखण्डी और भीष्म का संवाद

धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, शिखण्डी ने भीष्म के साथ किस तरह संग्राम किया? पितामह भीष्म ने पाण्डवों के साथ दसवें दिन कैसा युद्ध किया?

सञ्जय ने कहा—राजन् ! सूर्योदय होने पर चारों ओर भेरी, मृदङ्ग, तूर्य, शङ्ख आदि बाजे बजने लगे। पाण्डवगण उस दिन शिखण्डी को आगे करके युद्ध के लिए चले। शत्रुओं के लिए दुर्भेद्य महाव्यूह की रचना करके शिखण्डी उसके अग्र भाग में स्थित हुए। महावीर भीमसेन और अर्जुन उनके रथ के दोनों पहियों की रक्षा में नियुक्त हुए। द्रौपदी के पाँचों पुत्र और अभिमन्यु शिखण्डी के पृष्ठरक्षक हुए। भीमसेन आदि पूर्वोक्त योद्धाओं की रक्षा का कार्य सात्यकि, चेकितान और महारथी धृष्टद्युम्न करने लगे। धृष्टद्युम्न की रक्षा के लिए पाञ्चाल नियुक्त हुए। हे भारत ! उनके पीछे राजा युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव एकत्र होकर सिंहनाद करते हुए चले। उनके पीछे अपनी सारी सेना लेकर राजा विराट चले। विराट के पीछे राजा द्रुपद चले। पाँचों भाई केकय-कुमारों और महाबली धृष्टकेतु को उस व्यूह के जघनस्थल की रक्षा का भार सौंपा गया। महाराज, पाण्डवगण इस तरह अपनी सेना का व्यूह बनाकर, १० प्राणों की ममता छोड़कर, कौरव-सेना के सामने चले।

इधर कौरवगण भी महारथी भीष्म को सब सेना के आगे करके पाण्डवों की सेना की ओर अग्रसर हुए। आपके महाबली पराक्रमी पुत्रगण चारों ओर से दुर्द्धर्ष वीर भीष्म की रक्षा करने लगे। भीष्म के पीछे क्रमशः महाधनुर्द्धर द्रोणाचार्य, गुरुपुत्र अश्वत्थामा, हाथियों की सेना साथ लिये राजा भगदत्त, कृपाचार्य, कृतवर्मा आदि महारथी चले। काम्बोजपति सुदक्षिण, मगधराज जयत्सेन, शकुनि, बृहद्बल और सुशर्मा आदि अन्य वीरगण कौरवसेना के जघनभाग की रक्षा करने लगे। हे भारत! महारथी भीष्म नित्य ऐसे ही असुर, राक्षस या पिशाचों के दुर्भेद्य व्यूह रचकर युद्ध करते थे।

इसके बाद दोनों पक्ष के वीर योद्धा यम-राज्य की आबादी बढ़ानेवाला संग्राम करने लगे। वीरगण उत्साह के साथ परस्पर प्रहार करने लगे। अर्जुन आदि पाण्डव शिखण्डी को आगे करके तरह-तरह के बाण बरसाते हुए संग्राम के लिए भीष्म के पास चले। महाराज, आपकी सब सेना भीमसेन के बाणों की चोट खाकर रक्त से तर हो-होकर मरने लगी। नकुल, सहदेव २० और सात्यकि, तीनों वीर कौरवपक्ष की सेना में घुसकर बलपूर्वक उसे पीड़ित करने लगे। पाण्डवों और सृञ्जयों के बाणों से मारे जाते हुए कौरवपक्ष के सैनिक, पाण्डवपक्ष की सेना को रोकने में असमर्थ और निराश्रय होकर, इधर-उधर भागने लगे।

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, महापराक्रमी भीष्म ने हमारी सेना को पाण्डवों के द्वारा पीड़ित होते देखकर क्रुद्ध होकर क्या किया ? वे सोमकों पर प्रहार करते-करते किस तरह युद्ध के लिए पाण्डवों के पास पहुँचे ? यह सब मुझसे कहो।

सञ्जय ने कहा—हे राजेन्द्र ! कौरवसेना को पाण्डवों और सृञ्जयों के प्रहार तथा युद्धकौशल से पीड़ित देखकर महाबाहु भीष्म ने जो कुछ किया, सो मैं कहता हूँ, ध्यान देकर सुनिए।

महाबली पाण्डवगण प्रसन्नतापूर्वक कौरवपक्ष की सेना को मारते हुए भीष्म के सामने जाने लगे। महाधनुर्द्धर भीष्म अपने पक्ष के घोड़े, हाथी, मनुष्य आदि को शत्रुओं के बाणों से मरते देखकर क्रोध से अधीर हो उठे। वे जीवन की आशा छोड़कर नाराच, वत्सदन्त और अञ्जलिक बाणों से पाञ्चाल, सृञ्जय, पाण्डव आदि पर प्रहार करने लगे। उन्होंने लगातार बाण-वर्षा करके पाँचों पाण्डवों का आगे बढ़ना रोक दिया। वे क्रोध के आवेश से विविध अस्त्र-शस्त्र बरसाकर, ३० असंख्य हाथियों और घोड़ों को गिराकर, भयानक रूप से शत्रुपक्ष पर आक्रमण करने लगे। उन्होंने घोड़े के सवार को घोड़े से, हाथी के सवार को हाथी से, रथ के सवार को रथ से और पैदल सैनिक को बाण मारकर भूमि पर गिरा दिया। असुरगण जैसे इन्द्र के सामने लड़ने को उपस्थित हों, वैसे ही पाण्डवगण महारथी भीष्म को संग्राम-भूमि में आते देखकर उनके सामने आये। महावीर भीष्म इन्द्र के वज्र ऐसे बाण छोड़ने लगे। उस समय उनका भयानक रूप और मण्डलाकार घूमता हुआ बड़ा धनुष ही चारों ओर सैनिकों को देख पड़ने लगा। हे भारत, आपके पुत्रगण महावीर भीष्म का ऐसा अद्भुत विक्रम और पुरुषार्थ देखकर आश्चर्य के साथ उनकी बड़ाई करने लगे। देवताओं ने जैसे अपने शत्रु विप्रचित्ति राक्षस को देखा था, वैसे ही पाण्डवगण उदास दृष्टि से भीष्म की ओर देखने लगे। मुँह फैलाये हुए यमराज के समान भयङ्कर भीष्म को देखकर सबके छक्के छूट गये। कोई उन्हें रोक नहीं सका। राजन्, दसवें दिन के युद्ध में महावीर भीष्म वन जलानेवाले दावानल के समान प्रज्वलित होकर शिखण्डी के साथ की रथ-सेना को भस्म करने लगे। ४०

कुपित साँप और यमराज के समान भीष्म की छाती में शिखण्डी ने तीन तीक्ष्ण बाण मारे। महापराक्रमी भीष्म ने शिखण्डी की ओर देखकर, क्रोध की हँसी हँसकर, अनिच्छा के साथ कहा—हे शिखण्डी, तुम मुझे बाण भले मारो; परन्तु मैं किसी तरह तुमसे युद्ध नहीं करूँगा; क्योंकि विधाता ने तुमको शिखण्डिनी के रूप में उत्पन्न किया है।

भीष्म के ये वचन सुनकर, क्रोध से अत्यन्त अधीर होकर, ओठ चाटते हुए शिखण्डी ने कहा—हे क्षत्रियकुल के काल भीष्म, मैं तुमको अच्छी तरह जानता हूँ। तुमने परशुराम के साथ युद्ध किया था, यह भी मैं जानता हूँ। तुम्हारा दिव्य प्रभाव भी मुझे मालूम है। तो भी मैं अपने और पाण्डवों के हित के लिए तुमसे संग्राम करूँगा। मैं शपथ करके कहता हूँ कि तुमको अवश्य मारूँगा। हे भीष्म, मेरी प्रतिज्ञा तुमने सुन ली। अब जो चाहे सो करो। यदि तुम मुझको बाण न मारोगे तो भी जब तक जीते रहोगे तब तक किसी तरह छुटकारा न पाओगे। इसलिए इस संसार को एक बार अच्छी तरह देख लो।

सञ्जय कहते हैं—अब शिखण्डी ने भीष्म को अत्यन्त कठोर पाँच बाण मारे। महारथी ५० अर्जुन ने शिखण्डी के वचन सुनकर, वही ठीक मौक़ा समझकर, शिखण्डी से कहा—हे वीर

शिखण्डी ! मैं तुम्हारी सहायता करूँगा, तुम बाण-वर्षा से शत्रुओं को मारकर क्रोधपूर्वक वेग से महावीर भीष्म पर आक्रमण करो। महारथी भीष्म तुमको पीड़ित नहीं करेंगे, मैं तुम्हारे साथ हूँ। आज तुम यत्नपूर्वक भीष्म से समर करने के लिए तैयार हो जाओ। जो तुम भीष्म को मारे विना समर से लौटोगे तो लोग झूठी प्रतिज्ञा करनेवाला कहकर तुम्हारा उपहास करेंगे। इसलिए ऐसा उपाय करो जिससे समाज में हमारा उपहास न हो। तटभूमि जैसे समुद्र के वेग को रोकती है वैसे मैं द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, दुर्योधन, चित्रसेन, विकर्ण, जयद्रथ, विन्द, अनुविन्द, काम्बोजराज सुदक्षिण, शूर भगदत्त, महारथी मगधराज जयत्सेन, वीर्यशाली भूरिश्रवा, राक्षस अलम्बुष, त्रिगर्तराज सुशर्मा और अन्य महारथी कौरवों को रोककर ६० उनसे तुम्हारी रक्षा करूँगा। तुम पितामह भीष्म को मारने की चेष्टा करो।

एक सौ नव अध्याय

भीष्म और दुर्योधन की बातचीत

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, पाञ्चालपुत्र शिखण्डी ने क्रुद्ध होकर पितामह भीष्म के साथ कैसे युद्ध किया? किस तरह उन पर आक्रमण किया? पाण्डव-सेना के किस-किस महारथी ने जय प्राप्त करने की इच्छा से अस्त्र-शस्त्र लेकर शिखण्डी की रक्षा की? उस दसवें दिन महावीर भीष्म ने पाण्डवों और सृञ्जयों से किस तरह युद्ध किया? हे सञ्जय, मुझे यह समाचार असह्य हो रहा है कि शिखण्डी ने भीष्म पर आक्रमण किया। जिस समय युद्ध से विमुख भीष्म पर आक्रमण किया गया उस समय उससे भीष्म का रथ तो नहीं टूटा? उनका धनुष तो नहीं कट गया?

सञ्जय ने कहा—महाराज, संग्राम के समय महारथी भीष्म का न तो रथ ही टूटा और न धनुष ही कटा। वे सन्नतपर्व तीक्ष्ण विचित्र बाणों से शत्रुसेना को नष्ट करने लगे। राजन्! आपके पक्ष के बहुत से महारथी योद्धा हाथियों और घुड़सवार सेना को साथ लेकर, भीष्म को आगे करके, युद्ध करने लगे। समरविजयी भीष्म, अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, समर में लगातार शत्रुसेना का संहार करने लगे। वे महावीर दसवें दिन के युद्ध में जब शत्रुसेना का संहार करने लगे तब क्या पाञ्चालगण और क्या पाण्डवगण, कोई भी उनके प्रबल वेग और विक्रम को रोकने १० या सहने में समर्थ नहीं हुआ। वे सम्पूर्ण शत्रुदल पर सैकड़ों-हज़ारों तीक्ष्ण बाण बरसाते जाते थे। सारी शत्रुसेना एक साथ मिलकर भी पाशपाणि यमराज के समान भीष्म को समर में परास्त नहीं कर सकी—उनके वेग के आगे ठहर नहीं सकी।

राजन् ! उधर अजेय अर्जुन भी सब रथी लोगों के मन में भय उत्पन्न करके, युद्धभूमि में जाकर, ज़ोर से सिंहनाद करने लगे। वे बारम्बार धनुष घुमाकर बाणों की वर्षा करते हुए साक्षात् काल की तरह विचरने लगे। उनके भयानक शब्द से आपके पक्ष के सैनिक घबरा उठे। सिंह के खदेड़े हुए मृगों की तरह डरकर वे लोग अर्जुन के आगे से भागने लगे।

तब राजा दुर्योधन ने विजयी अर्जुन को विजय प्राप्त करके सिंहनाद करते और अपनी सेना को घबराकर भागते देखकर, दुःखित हो, पितामह के पास जाकर कहा—हे पितामह, दावानल जैसे जङ्गल को भस्म करता है वैसे ही अर्जुन हमारी सेना को बाणों की वर्षा से भस्म कर रहे हैं। वह देखिए, मेरी सेना हर बार हर जगह अर्जुन के प्रहार से पीड़ित होकर भाग रही है। हे शत्रुतापन, पशुपाल जैसे वन में पशुओं को पीटता है वैसे ही अर्जुन मेरी सेना को पीड़ा पहुँचा रहे हैं। एक तो अर्जुन ही उनको मारकर भगा रहे हैं, उस पर भीमसेन, सात्यकि, चेकितान, नकुल, सहदेव, महारथी अभिमन्यु, महाबली धृष्टद्युम्न और राक्षस घटोत्कच भी उन्हें मार रहे हैं। हे महारथी, आप देवतुल्य पराक्रमी हैं। आपके सिवा इस भागती हुई सेना को और कोई नहीं फेर सकता। न तो कोई इन्हें युद्ध में ठहरा सकता है, और न पाण्डवसेना के इन महारथियों से युद्ध ही कर सकता है। इसलिए आप शीघ्रता के साथ मेरी सेना की रक्षा कीजिए। २१

राजन्! देवव्रत भीष्म दुर्योधन के ये वचन सुनकर, पलभर सोचकर, उन्हें समझाते और धीरज देते हुए बोले—हे दुर्योधन, तुम ध्यान से मेरी बात सुनो। मैंने पहले तुम्हारे आगे प्रतिज्ञा की थी कि मैं प्रतिदिन दस हज़ार योद्धा मारकर युद्ध से लौटूँगा। पुत्र, मैंने जो प्रतिज्ञा की थी, उसे पूर्ण करता रहा हूँ। मैं आज भी युद्ध में बहुत बड़ा काम करूँगा। आज या तो मुझे पाण्डवगण मारेंगे और या मैं उनको मारूँगा। दो में एक बात होगी। आज मैं युद्धभूमि की वीरशय्या पर सोकर, अथवा पाण्डवों को ही सुलाकर, प्रभु का ऋण चुकाऊँगा।

महाबली भीष्म दुर्योधन से इतना कहकर क्षत्रियों पर बाण बरसाते हुए पाण्डवों की सेना पर वेग से आक्रमण करने चले। पाण्डवों की सेना उनके आक्रमण से तितर-बितर होने लगी। ३० तब पाण्डवगण भी अपनी सेना के बीच घुसते हुए, क्रुद्ध नागराज के समान, भीष्म को घेरकर रोकने की चेष्टा करने लगे। हे कौरव, दसवें दिन भीष्म ने अपने पराक्रम के अनुसार देखते ही देखते शत-सहस्र सेना का नाश कर डाला। जैसे सूर्य अपनी किरणों से पृथ्वी का रस (जल) खींचते हैं वैसे ही भीष्म अपने बाणों से पाञ्चालों के तेज, उत्साह और प्राणों को हरने लगे। राजन्! वे सवारों सहित दस हज़ार घोड़ों, इतने ही वेगशाली हाथियों और दो लाख पैदलों को मारकर युद्धभूमि में जलती हुई आग के समान देख पड़ने लगे। पाण्डवों में से कोई भी उन उत्तरायण में तप रहे सूर्य के समान तेजस्वी प्रतापी भीष्म की ओर अच्छी तरह आँख उठाकर देख तक नहीं सकता था। महाधनुर्द्धर भीष्म के द्वारा इस तरह पीड़ित होने पर सब पाञ्चाल और

पाण्डव मिलकर उन्हें मारने के लिए उन पर आक्रमण करने दौड़े। उस समय योद्धाओं से घिरे हुए भीष्म काले मेघों से घिरे हुए स्वर्ण-गिरि सुमेरु के समान शोभायमान हुए। आपके पुत्र-गण भी भारी सेना के साथ एकत्र होकर भीष्म के चारों ओर आकर उनकी रक्षा करने लगे।
३९ इसके बाद फिर घोर संग्राम होने लगा।

एक सौ दस अध्याय

अर्जुन और दुःशासन का युद्ध

सञ्जय ने कहा कि महाराज, अर्जुन ने संग्राम में भीष्म का पराक्रम देखकर शिखण्डी से कहा—हे शिखण्डी, तुम भीष्म के साथ युद्ध करो। आज उनसे बिलकुल मत डरो। मैं तीक्ष्ण बाण मारकर आज उन्हें श्रेष्ठ रथ से गिरा दूँगा। हे धृतराष्ट्र, तब शिखण्डी अर्जुन के ये वचन सुनकर भीष्म की ओर रथ बढ़ाकर शीघ्रता के साथ चले। सेनापति धृष्टद्युम्न और अभिमन्यु भी आगे बढ़े। वृद्ध राजा विराट, द्रुपद और कुन्तिभोज कवच पहनकर आपके पुत्र के सामने ही पितामह भीष्म पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। नकुल, सहदेव, महावीर्यशाली धर्मराज और अन्य सब योद्धाओं ने मिलकर भीष्म पर आक्रमण किया। राजन्! आपके पक्ष के सब योद्धाओं ने शत्रुपक्ष के वीरों को जिस तरह रोका, जिस तरह उन पर यथाशक्ति उत्साह के साथ आक्रमण किया, सो सब मैं कहता हूँ, सुनिए।

भीष्म से लड़ने के लिए जानेवाले चेकितान को, बैल को व्याघ्र-बालक के समान, चित्रसेन ने रोका। भीष्म के पास शीघ्रता से जानेवाले और उन पर प्रहार करने का यत्न कर रहे धृष्टद्युम्न को कृतवर्मा ने रोका। भीष्म के वध की इच्छा से आगे जानेवाले क्रुद्ध भीमसेन
१० को भूरिश्रवा ने फुर्ती के साथ रोका। अनेक बाण बरसाते हुए शूर नकुल को भीष्म का जीवन चाहनेवाले विकर्ण ने रोका। भीष्म के रथ के पास जाते हुए सहदेव को कुपित कृपाचार्य ने रोका। क्रूरकर्मा महाबली घटोत्कच को भीष्म के मारने के लिए उद्यत देखकर बली राजकुमार दुर्मुख ने आगे बढ़कर रोक लिया। क्रुद्ध सात्यकि को दुर्योधन ने रोका। भीष्म के रथ के पास जानेवाले अभिमन्यु को काम्बोजनरेश सुदक्षिण ने रोका। शत्रुदमन विराट और वृद्ध द्रुपद को अश्वत्थामा ने रोका। भीष्म का वध चाहनेवाले ज्येष्ठ पाण्डव युधिष्ठिर को द्रोणाचार्य ने रोका। अपने तेज से दसों दिशाओं को प्रकाशित कर रहे और शिखण्डी को आगे करके वेग से भीष्म के सामने जाते हुए अर्जुन को महाधनुर्धर दुःशासन ने रोका। इसी तरह भीष्म के सामने जानेवाले पाण्डव पक्ष के अन्य महारथियों को भी आपके पक्ष के अन्य योद्धाओं ने रोका।

महाराज, धृष्टद्युम्न सब सैनिकों से यह पुकारकर कहते हुए अकेले महारथी भीष्म की ओर दौड़े कि "हे वीरो, देखो ये अर्जुन भीष्म से लड़ने जा रहे हैं; तुम लोग निर्भय होकर चलो और आक्रमण करो। भीष्म के बाण तुम्हारे अङ्ग को छू भी न सकेंगे। समर में अर्जुन से लड़ने का साहस इन्द्र भी नहीं कर सकते, फिर भ्रष्टबुद्धि, क्षीणबल, अल्प जीवनवाले भीष्म क्या उनका सामना कर सकेंगे?" पाण्डव पक्ष के महारथी लोग धृष्टद्युम्न के ये वचन सुनकर प्रसन्नतापूर्वक भीष्म के रथ की ओर दौड़े। आपके पक्ष के पुरुषश्रेष्ठ वीर भी प्रसन्नता के साथ प्रवाह की तरह आते हुए शत्रुओं के वेग को रोकने लगे। २१

राजन्, भीष्म के जीवन की रक्षा करने के लिए महारथी दुःशासन निर्भय होकर अर्जुन के सामने आये। शूर पाण्डव भी उधर से भीष्म के रथ के पास पहुँचने के लिए आपके पुत्रों पर आक्रमण करने को बढ़े। उस समय वहाँ पर हमने यह एक विचित्र बात देखी कि दुःशासन के रथ के पास पहुँचकर अर्जुन फिर आगे नहीं बढ़ सके। जैसे तटभूमि क्षोभ को प्राप्त समुद्र के वेग को रोक लेती है, वैसे ही वीर दुःशासन ने क्रुद्ध अर्जुन को रोक लिया। वे दोनों ही श्रेष्ठ रथी, दुर्जय, चन्द्र के समान सुन्दर और सूर्य के समान तेजस्वी थे। दोनों ही कुपित होकर परस्पर मार डालने की इच्छा से मयासुर और इन्द्र के समान आक्रमण करने लगे। महाराज, दुःशासन ने अर्जुन को तीन और श्रीकृष्ण को बीस तीक्ष्ण बाण मारे। अर्जुन ने श्रीकृष्ण को पीड़ित देखकर क्रोध करके दुःशासन को एक सौ नाराच बाण मारे। वे नाराच दुःशासन के सुदृढ़ कवच को तोड़कर उनके शरीर का रक्त पीने लगे। तब दुःशासन ने अत्यन्त कुपित होकर तीक्ष्ण तीन बाण अर्जुन के मस्तक में मारे। मस्तक में घुसे हुए उन तीन बाणों से वीर अर्जुन उन्नत शिखरवाले सुमेरु पर्वत, अथवा फूले हुए ढाक के पेड़ के समान बहुत ही शोभायमान हुए। राहु जैसे पर्व के समय चन्द्रमा को सताता है, वैसे ही अर्जुन भी दुःशासन को बाणवर्षा में छिपाकर पीड़ा पहुँचाने लगे। उन बाणों से पीड़ित होकर दुःशासन ने बहुत से कङ्कपत्रयुक्त, शिला पर रगड़कर तीक्ष्ण किये गये, बाणों से अर्जुन को घायल किया। अर्जुन ने तीन बाणों से दुःशासन का धनुष काटकर रथ भी काट डाला। तब दुःशासन ने दूसरा धनुष लेकर पच्चीस बाण अर्जुन के हाथों और वक्षःस्थल में मारे। इसके बाद अर्जुन क्रुद्ध होकर यमदण्डतुल्य असंख्य असह्य बाण दुःशासन को मारने लगे। किन्तु वे बाण पास तक नहीं पहुँचने पाये और दुःशासन ने उन्हें काट डाला। इस तरह अर्जुन को विस्मित करके वे तीक्ष्ण बाणों से उनको पीड़ा पहुँचाने लगे। तब अर्जुन ने क्रोध से अधीर होकर असंख्य सुवर्णपुङ्ख तीक्ष्ण बाण बरसाना शुरू किया। अर्जुन के छोड़े हुए वे बाण तालाब में घुस रहे हंसों की तरह दुःशासन के दृढ़ शरीर में घुस गये। दुःशासन बहुत ही पीड़ित और अचेत से होकर शीघ्रता के साथ, अर्जुन को छोड़कर, भीष्म के रथ के पास चले गये। उस अथाह विपत्ति में डूब रहे दुःशासन के लिए भीष्म पितामह आश्रय- ३० ४०

स्वरूप द्वीप हो गये। महापराक्रमी दुःशासन दम भर में सचेत होकर उसी तरह तीक्ष्ण बाण बरसाकर अर्जुन को रोकने लगे, जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को रोका था। किन्तु इससे अर्जुन न तो
४८ तनिक भी व्यथित हुए और न संग्राम से ही विमुख हुए।

एक सौ ग्यारह अध्याय

द्वन्द्वयुद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज, कवचधारी वीर सात्यकि को भीष्म पर आक्रमण करने के लिए उद्यत देखकर महा धनुर्द्धर राक्षस अलम्बुष उन्हें रोकने लगा। सात्यकि ने अत्यन्त क्रुद्ध होकर नव बाण अलम्बुष को मारे। तब राक्षस ने भी अत्यन्त कुपित होकर सात्यकि को नव बाण मारे। सात्यकि ने क्रुद्ध होकर राक्षस के ऊपर असंख्य बाण छोड़े। महाराज, अलम्बुष भी तीक्ष्ण बाणों से सात्यकि को पीड़ित करके सिंहनाद करने लगा। राक्षस के बाणों से अत्यन्त पीड़ित होकर भी तेजस्वी सात्यकि धैर्य धारण करके हँसते हुए सिंहनाद करने लगे।

जैसे गजराज को कोई बारम्बार अङ्कुश का प्रहार करे वैसे ही क्रुद्ध भगदत्त आकर सात्यकि को अनेक तीक्ष्ण बाण मारने लगे। तब श्रेष्ठ रथी सात्यकि उस राक्षस को छोड़कर प्राग्ज्योतिष-पति भगदत्त के ऊपर सुतीक्ष्ण शीघ्रगामी बाण बरसाने लगे। भगदत्त ने हाथ की फुर्ती दिखाकर तीक्ष्ण भल्ल बाण से सात्यकि का बड़ा भारी धनुष काट डाला। शत्रुनाशन सात्यकि उसी दम
१० दूसरा धनुष लेकर भगदत्त को अति तीक्ष्ण बाणों से घायल करने लगे। महाधनुर्द्धर भगदत्त का शरीर सात्यकि के बाणों से जर्जर हो गया। वे क्रोध के मारे ओठ चाटने लगे। सुवर्ण और वैडूर्य-मणि से शोभित, यमदण्डसदृश भयङ्कर एक लोहमयी शक्ति उन्होंने ताककर सात्यकि को मारी। महावीर सात्यकि ने उसी दम एक तीक्ष्ण बाण से उसके दो टुकड़े कर डाले। वह कटी हुई शक्ति प्रभाहीन महाउल्का की तरह पृथ्वी पर गिर पड़ी।

महाराज दुर्योधन ने भगदत्त की शक्ति को व्यर्थ होते देखकर असंख्य रथसेना से सात्यकि को घेरकर भाइयों से कहा—भाइयो, ऐसा यत्न करो कि सात्यकि जीते-जी इस रथ के घेरे से बाहर न निकलने पावे। मैं समझता हूँ, सात्यकि के मरने पर पाण्डवों के बल का बहुत बड़ा हिस्सा नष्ट हो जायगा। राजन्! यह सुनकर आपके सब महारथी कुमार, बड़े भाई की आज्ञा के अनुसार, भीष्म से लड़ने के लिए उद्यत सात्यकि के साथ युद्ध करने लगे।

काम्बोजराज महावीर सुदक्षिण पितामह भीष्म के सामने जाते हुए अभिमन्यु को रोकने लगे। अमित पराक्रमी अभिमन्यु ने पहले बहुत से बाण मारकर पीछे चौंसठ तीक्ष्ण बाण सुदक्षिण को मारे। वीर सुदक्षिण ने भी, भीष्म के प्राणों की रक्षा के मतलब से, अभिमन्यु को

रोकने के लिए पाँच बाण उनको और नव बाण सारथी को मारे। राजन्, वे दोनों वीर इसी तरह भयङ्कर संग्राम करने लगे। २०

जब भीष्म पर हमला करने को शिखण्डी आगे बढ़े तब महारथी विराट और द्रुपद क्रोध से अधीर होकर कौरवों की भारी सेना को छिन्न-भिन्न करते हुए भीष्म की ओर चले। उधर से महावीर अश्वत्थामा कुपित होकर उनके सामने आये। उक्त दोनों वीर राजाओं के साथ अश्वत्थामा घोर संग्राम करने लगे। विराट ने दस भल्ल बाण और द्रुपद ने तीन तीक्ष्ण बाण अश्वत्थामा को मारे। अश्वत्थामा भी दोनों वीर राजाओं को लगातार असंख्य बाणों से घायल कर रहे थे। परन्तु आश्चर्य की बात है कि दोनों वीर राजा, वृद्ध होने पर भी, अनायास अश्वत्थामा के शीघ्रगामी दारुण बाणों को काटते जाते थे।

मदोन्मत्त जङ्गली हाथी जैसे दूसरे जङ्गली हाथी पर हमला करता है, वैसे ही वीर कृपाचार्य ने महारथी सहदेव के पास जाकर उनको सुवर्णभूषित सत्तर बाण मारे। सहदेव ने बाणों से कृपाचार्य का धनुष काट डाला और नव बाण मारे। महावीर कृपाचार्य ने भीष्म का ३० जीवन बचाने के लिए उसी दम दूसरा दृढ़ धनुष लेकर सहदेव की छाती में दस बाण मारे। सहदेव ने भी भीष्मवध की इच्छा से, आगे बढ़ने के लिए, कृपाचार्य की छाती में कई बाण मारे। हे भारत, इस तरह वे दोनों वीर परस्पर कठिन युद्ध करने लगे।

शत्रुनाशन विकर्ण ने क्रोध से उन्मत्त होकर नकुल को साठ बाण मारे। महाबली नकुल ने उस प्रहार से अत्यन्त व्यथित होकर विकर्ण को बड़े वेग से सतत्तर बाण मारे। इस तरह दोनों वीर भीष्म की रक्षा और वध के लिए, मैदान में लड़ते हुए दो साँड़ों के समान, परस्पर प्रहार करने लगे।

घटोत्कच भी कौरवसेना को मारकर भीष्म की तरफ़ बढ़ रहा था, इसी समय पराक्रमी दुर्मुख राजकुमार उसके सामने पहुँचे। घटोत्कच ने क्रोधवश होकर दुर्मुख की छाती में एक तेज़ बाण मारा। उसके बदले में दुर्मुख ने साठ बाण घटोत्कच की छाती में मारे।

महारथी धृष्टद्युम्न भी वेग के साथ भीष्म की ओर बढ़ते जा रहे थे। महारथी कृतवर्मा ने
४० सामने आकर उनको रोका। धृष्टद्युम्न को कृतवर्मा ने पहले लोहमय पाँच बाण मारे, फिर पचास बाण उनकी छाती में ललकारकर मारे। अब धृष्टद्युम्न ने कृतवर्मा को कङ्कपत्रयुक्त नव बाण मारे। इस प्रकार भीष्म की रक्षा और वध के लिए वे दोनों वीर परस्पर युद्ध करने लगे। महाबली भीमसेन भी तेज़ी के साथ पितामह की ओर जा रहे थे। इसी समय "ठहरो, ठहरो" कहते हुए भूरिश्रवा फुर्ती के साथ उनके सामने आये। उन्होंने आते ही तीक्ष्ण सुवर्णपुङ्ख नाराच बाण उनकी छाती में मारा। महाप्रतापी भीमसेन उस बाण से अत्यन्त पीड़ित होकर स्कन्द की शक्ति से विदीर्ण क्रौञ्च पर्वत के समान देख पड़े। इसके बाद भीष्मवध के लिए उद्योग करनेवाले भीमसेन कुपित होकर सूर्य-सदृश चमकीले पैने बाण भूरिश्रवा को और भूरिश्रवा, भीष्म की रक्षा की इच्छा से, वैसे ही बाण भीमसेन को मारने लगे। इसी तरह यत्न के साथ दोनों वीर परस्पर युद्ध करने लगे।

उधर राजा युधिष्ठिर भी सेना साथ लिये हुए भीष्म के सामने जा रहे थे। उन्हें द्रोणा-
५० चार्य ने आकर रोका। प्रभद्रकगण द्रोणाचार्य के रथ का मेघगर्जन-सम शब्द सुनकर काँपने लगे। वह भारी सेना द्रोणाचार्य के बाणों से पीड़ित होकर पग भर भी आगे न बढ़ सकी। राजन्, आपके पुत्र चित्रसेन ने चेकितान का मार्ग रोका। दोनों वीर अपनी-अपनी शक्ति की पराकाष्ठा दिखाते हुए भयङ्कर युद्ध करने लगे। इधर दुःशासन भी यह चिन्ता करते हुए, कि किस तरह भीष्म के जीवन की रक्षा होगी, अर्जुन को रोकने की जी-जान से चेष्टा करने लगे। किन्तु बार-बार रोके जाने पर भी अन्त में दुःशासन को हटाकर अर्जुन आगे बढ़ ही गये और कौरवसेना को नष्ट-भ्रष्ट करने लगे। दुर्योधन की सेना इसी तरह जगह-जगह पर पराक्रम
५८ दिखाकर भी पाण्डव पक्ष की सेना के हाथों सताई जाने लगी।

एक सौ बारह अध्याय

द्रोणाचार्य्य और अश्वत्थामा का संवाद

सञ्जय कहते हैं—महाराज, महायोद्धा महारथी मस्त हाथी के समान पराक्रमी द्रोणाचार्य महाधनुष घुमाते हुए पाण्डवसेना के भीतर घुसकर महारथियों को मारते हुए सेना को भगा रहे थे। शकुन-शास्त्र के ज्ञाता द्रोण ने अनेक उत्पात और असगुन देखकर शत्रुसेना के संहार में प्रवृत्त अपने पुत्र अश्वत्थामा से कहा—बेटा, यह वही दिन जान पड़ता है जिस दिन भीष्म को मारने के लिए महाबली अर्जुन परम यत्न करेंगे। क्योंकि आज मेरे बाण तरकस के भीतर से स्वयं बाहर निकले पड़ते हैं, धनुष फड़क रहा है। सब अस्त्र-शस्त्र प्रयोग करने पर

भी प्रयुक्त नहीं होते और मेरी बुद्धि क्रूर कर्म में अनुरक्त हो रही है। सब दिशाओं में मृग और पक्षी अशान्त होकर घोर शब्द कर रहे हैं। गिद्ध नीचे होकर कौरवसेना के ऊपर मँडलाते हैं। सूर्यमण्डल की प्रभा फीकी सी पड़ गई है। दिशाओं का रङ्ग लाल देख पड़ता है। पृथ्वी सब ओर शब्दायमान, व्यथित और कम्पित सी हो रही है। कङ्क, गिद्ध, बगले आदि पक्षी बारम्बार बोल रहे हैं। अशुभरूप गिदड़ियों और गीदड़ों के दल महाभय की सूचना देते हुए घोर शब्द कर रहे हैं। सूर्यमण्डल के बीच से बड़ी-बड़ी उल्काएँ गिर रही हैं। कबन्ध-चिह्नयुक्त मण्डल सूर्यबिम्ब के चारों ओर देख पड़ता है। यह उत्पात घोर भय की सूचना देता हुआ यह जता रहा है कि आज असंख्य राजा मारे जायँगे। चन्द्र और सूर्य के बिम्ब में मण्डल पड़ा हुआ है। धृतराष्ट्र के देव-मन्दिरों की देवमूर्तियाँ काँपती, हँसती, नाचती और रोती सी हैं। प्रचण्ड लक्षणयुक्त सूर्य के बायें सब ग्रह स्थित हैं। चन्द्रमा औंधे उदित हुए हैं। सब राजाओं के शरीर तेज और कान्ति से हीन देख पड़ते हैं। दुर्योधन की सेना में कवच-धारी वीर शोभा को नहीं प्राप्त होते। दोनों सेनाओं में चारों ओर पाञ्चजन्य शङ्ख और गाण्डीव धनुष का भारी शब्द सुन पड़ता है। यह निश्चय है कि आज अर्जुन युद्ध में दिव्य अस्त्रों के बल से सब राजाओं को हराकर भीष्म के ऊपर आक्रमण करेंगे। १०

हे वत्स, महावीर भीष्म और अर्जुन के युद्ध का ख़याल करने से मेरे रोंगटे खड़े हो रहे हैं और मन में खेद की गहरी छाया पड़ रही है। इस पाप विचारवाले, कपट में प्रवीण शिखण्डी को आगे करके अर्जुन भीष्म से लड़ने गये हैं। भीष्म की प्रतिज्ञा है कि वे अमङ्गल-ध्वज शिखण्डी पर प्रहार नहीं करेंगे। क्योंकि शिखण्डी को विधाता ने स्त्री-रूप में पैदा किया था, पीछे दैवयोग से वह पुरुष हो गया। इसी से भीष्म उस पर प्रहार नहीं करेंगे। [किन्तु वही शिखण्डी आज क्रुद्ध होकर भीष्म पर आक्रमण कर रहा है।] यही सोचने से मैं मूढ़ सा हो रहा हूँ। अर्जुन भीष्म से युद्ध करने को चढ़ दौड़े हैं। युधिष्ठिर का कुपित होना, भीष्म और अर्जुन का युद्ध होना और अस्त्रों के प्रयोग के लिए मेरा उद्यम मात्र करना, किन्तु पहले की तरह अस्त्रों का उपस्थित न होना, सूचित करता है कि प्रजा का अमङ्गल अवश्य होगा। वीर अर्जुन उत्साही, बलवान्, शूर, अस्त्रविद्या में निपुण, महापराक्रमी, फुर्तीले, दूर तक निशाना मारने में प्रवीण और दृढ़ धनुष-बाण धारण करनेवाले हैं; वे बल-बुद्धि से युक्त, निमित्तज्ञ, इन्द्र सहित सब देवताओं के लिए भी अजेय, क्लेश को जीते हुए, श्रेष्ठ योद्धा, सदा रण में विजय पानेवाले और भयानक अस्त्रों के ज्ञाता हैं। तुम शीघ्र जाकर उन्हें रोकने का यत्न करो। देखो, आज के इस घोर संग्राम में भयानक हत्याकाण्ड होगा। अर्जुन क्रोध से विह्वल होकर सन्नतपर्व सुवर्णभूषित विचित्र बाणों से वीरों के सुवर्णचित्रित सुदृढ़ कवच, ध्वजाएँ, तोमर, धनुष, उज्ज्वल प्रास, तीक्ष्ण शक्तियाँ और हाथियों के ऊपर के झण्डे काट-काटकर गिरा २०

रहे हैं। पुत्र! हम लोग राजा दुर्योधन के अधीन हैं, वही हमें जीविका देते हैं। इस समय हमें अपने प्राणों की रक्षा का ख़याल छोड़कर लड़ना चाहिए। बेटा, स्वर्गप्राप्ति की ओर लक्ष्य रखकर यश और विजय प्राप्त करने जाओ। वह देखो, वीर अर्जुन रथ की नौका पर बैठकर रथ-हाथी-घोड़ों की चाल के आवर्त से पूर्ण, महाघोर, अत्यन्त दुर्गम युद्ध-नदी के पार जा रहे हैं। युधिष्ठिर के ब्राह्मणभक्ति, इन्द्रियदमन, दान (त्याग), तप और श्रेष्ठ उच्च चरित्र आदि सद्‌गुणों का फल इसी लोक में दिखाई दे रहा है। जिनके भाई बलवान् भीमसेन, अर्जुन, ३१ नकुल और सहदेव हैं; जिनके सहायक और सुहृद् साक्षात् वासुदेव हैं उन्हीं तपस्वी युधिष्ठिर का कष्ट-शोकजनित कोप दुर्मति दुर्योधन की सेना को भस्म कर रहा है। श्रीकृष्ण की सहायता से सब ओर दुर्योधन की सेना को छिन्न-भिन्न और नष्ट-भ्रष्ट करते हुए अर्जुन देख पड़ रहे हैं। तिमि और घड़ियाल आदि जल-जन्तुओं से भयानक और बड़ी-बड़ी लहरों से पूर्ण महासागर के समान क्षोभ को प्राप्त कौरवसेना में अर्जुन ने हलचल डाल दी है। सर्वत्र हाहाकार और किल-किलारव सुन पड़ता है। बेटा, तुम पाञ्चालराज धृष्टद्युम्न को रोकने के लिए जाओ और मैं राजा युधिष्ठिर पर, सामने जाकर, आक्रमण करता हूँ। अमित तेजस्वी युधिष्ठिर की सेना का भीतरी भाग, समुद्र के भीतरी भाग की तरह, सुरक्षित और सब ओर से दुर्गम है। चारों ओर से अति-रथी, श्रेष्ठ, योद्धा उसकी रक्षा कर रहे हैं। सात्यकि, अभिमन्यु, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, नकुल और सहदेव राजा युधिष्ठिर की रक्षा कर रहे हैं। वह देखो, श्रीकृष्ण के समान लम्बे-चौड़े, महाशाल वृक्ष के तुल्य ऊँचे, श्यामवर्ण, महाबली अभिमन्यु दूसरे अर्जुन के समान सेना के आगे आ रहे हैं। तुम शीघ्र श्रेष्ठ धनुष और उत्तम अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर धृष्टद्युम्न और भीमसेन से जाकर युद्ध करो। हे पुत्र, इस संसार में कौन नहीं चाहता कि मेरा प्रिय पुत्र बहुत दिनों तक जीवित रहे? किन्तु मैं क्षत्रिय-धर्म के अनुसार तुम्हें ऐसे भयानक युद्ध में मरने-मारने के लिए भेजने को विवश हूँ। वह देखो, यमराज और वरुण के समान पराक्रमी ४१ योद्धा भीष्म भारी सेना का संहार कर रहे हैं।

एक सौ तेरह अध्याय

भीमसेन और अर्जुन का पराक्रम

सञ्जय ने कहा—महाराज! भगदत्त, कृपाचार्य, शल्य, कृतवर्मा, विन्द, अनुविन्द, जय-द्रथ, चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण, ये आपके पक्ष के दस योद्धा अनेक देशों की भारी सेना साथ लेकर उस युद्ध में भीष्म के लिए यश की प्रत्याशा से भीमसेन के साथ युद्ध करने लगे। शल्य ने नव, कृतवर्मा ने तीन और कृपाचार्य ने नव बाण कसकर भीमसेन को मारे। चित्रसेन, विकर्ण और भगदत्त ने दस-दस बाण भीमसेन को मारे। जयद्रथ ने तीन, विन्द और

अनुविन्द ने पाँच-पाँच और दुर्मर्षण ने बीस बाण भीमसेन को मारे। राजन्, तब महाबली भीमसेन ने भी सबके सामने धृतराष्ट्रपक्ष के इन महारथियों में से हर एक को अलग-अलग बाण मारे। उन्होंने शल्य को सात और कृतवर्मा को आठ बाण मारकर कृपाचार्य का बाणयुक्त धनुष भी बीच से काट डाला। इसके बाद धनुष न रहने पर ख़ाली हाथ खड़े हुए कृपाचार्य को सात बाणों से घायल किया। फिर विन्द और अनुविन्द को तीन-तीन बाणों से पीड़ित करके दुर्मर्षण को बीस, चित्रसेन को पाँच, विकर्ण को दस और जयद्रथ को पहले पाँच और फिर तीन बाण मारे। महाबली भीमसेन इस तरह सबको घायल करके आनन्द के साथ सिंहनाद करने लगे। १०

महारथी कृपाचार्य ने दूसरा धनुष लेकर भीमसेन को सुतीक्ष्ण दस बाणों से पीड़ित किया। अंकुश की चोट खाये हुए मस्त गजराज की तरह उन बाणों की चोट खाकर महाबाहु भीमसेन अत्यन्त कुपित हो उठे। उन्होंने कृपाचार्य को एक साथ बहुत से बाण मारे। इसके बाद साक्षात् काल के समान भीमसेन ने जयद्रथ के चारों घोड़े मारकर तीन बाणों से सारथी को भी मार डाला। महारथी जयद्रथ बिना घोड़े और सारथी के रथ पर से पर नीचे कूदकर भीमसेन के ऊपर तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। उन्होंने दो भल्ल बाणों से जयद्रथ का धनुष काट डाला। सारथी और घोड़ों को मरा और धनुष तथा रथ को कटा देखकर जयद्रथ जल्दी से चित्रसेन के रथ पर चढ़ गये। इस तरह महावीर भीमसेन अकेले ही अपने बाणों से सब महारथियों को पीड़ित और जयद्रथ को रथहीन करके सबके सामने ही अद्भुत कार्य करने लगे।

राजन्, भीमसेन के इस पराक्रम को शल्य न सह सके। वे "ठहरो, ठहरो" कहकर, तीक्ष्ण धारवाले चमकीले बाण धनुष पर चढ़ाकर, भीमसेन को पीड़ित करने लगे। तब शल्य की सहायता के लिए कृपाचार्य, कृतवर्मा, महावीर राजा भगदत्त, विन्द, अनुविन्द, चित्रसेन, दुर्मर्षण, विकर्ण, पराक्रमी जयद्रथ, ये सब मिलकर फुर्ती के साथ भीमसेन को बाण मारने लगे। भीमसेन ने उनमें से हर एक को पाँच-पाँच बाण मारे। इसके बाद शल्य को पहले सत्तर और फिर दस बाण मारे। शल्य ने भी भीमसेन को पहले नव और फिर पाँच बाण मारे। फिर एक भल्ल बाण उनके सारथी को मारा। महारथी प्रतापी भीमसेन अपने सारथी विशोक को बाण की चोट से विह्वल देखकर क्रोध से अधीर हो उठे। उन्होंने शल्य के दोनों हाथों में और छाती में तीन बाण मारे। उसके बाद अन्य धनुर्द्धरों को तीन-तीन बाणों से घायल करके वे सिंहनाद करने लगे। तब वे सब महारथी मिलकर यत्नपूर्वक महाबली भीमसेन से लड़ने लगे। सबने भीमसेन के मर्मस्थलों में एक साथ तीन-तीन बाण मारे। जैसे पर्वत मेघों की जलवर्षा से व्यथित नहीं होता, वैसे ही महारथी भीम उन वीरों के बाणों से अत्यन्त घायल होकर रत्ती भर भी व्यथित नहीं हुए। उन्होंने क्रुद्ध होकर फिर शल्य को तीन, कृपाचार्य को नव और भगदत्त को सैकड़ों बाण मारकर एक तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से वीर कृतवर्मा का बाण- २० ३१

युक्त धनुष काट डाला। शत्रुओं को पीड़ा पहुँचानेवाले कृतवर्मा ने दूसरा धनुष लेकर एक नाराच बाण भीमसेन की भौंहों के बीच में मारा। तब भीमसेन ने फिर शल्य को नव, भगदत्त को तीन, कृतवर्मा को आठ और कृपाचार्य आदि महारथियों को दो-दो बाण मारे। वे लोग भी सुतीक्ष्ण दृढ़ बाणों से भीमसेन को पीड़ा पहुँचाने लगे। उन महारथियों के द्वारा अत्यन्त पीड़ित होकर भी भीमसेन विचलित नहीं हुए। वे उन लोगों को और उनके प्रहारों को तृण-तुल्य तुच्छ समझकर युद्धभूमि में विचरने लगे। वे सब महारथी भी एकलक्ष्य होकर भीमसेन के ऊपर सैकड़ों-हज़ारों बाण बरसाने लगे। राजन्, महावीर भगदत्त ने सुवर्णदण्डयुक्त भयङ्कर महाशक्ति भीमसेन को मारी। महाबाहु जयद्रथ ने तोमर और पट्टिश, कृपाचार्य ने शतघ्नी, शल्य ने बाण और अन्य धनुर्द्धरों में से हर एक ने पाँच-पाँच शिलीमुख नाम के उग्र बाण भीमसेन को मारे। ४० पराक्रमी भीमसेन ने क्षुरप्र बाण से तोमर, तीन बाणों से पट्टिश और कङ्कपत्रयुक्त नव बाणों से शतघ्नी को तिल के पेड़ की तरह काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। राजा भगदत्त की चलाई हुई शक्ति को भी उन्होंने काट गिराया। उनकी ओर जो अन्य भयानक बाण आ रहे थे, उन्हें अपने शीघ्रगामी बाणों से काटकर उन्होंने व्यर्थ कर दिया। यह सब अद्भुत कर्म करके हरएक महारथी को उन्होंने तीन-तीन बाण मारे।

उधर महारथी अर्जुन भीमसेन को अकेले कई महारथियों से लड़ते और उनके प्रहारों को व्यर्थ करके उन्हें पीड़ित करते देखकर शीघ्रता के साथ अपना रथ उनके पास ले आये। उन दोनों महारथियों को एकत्र होते देखकर दुर्योधन आदि को जय प्राप्त करने की आशा छोड़ देनी पड़ी। भीष्म को मारने और भीमसेन को सहायता पहुँचाने के लिए महारथी अर्जुन उन दसों महारथियों को, जिनसे भीमसेन युद्ध कर रहे थे, विविध बाणों से पीड़ित करने लगे। इसके बाद वे शिखण्डी को आगे करके भीष्म के पास जाने को तैयार हुए।

तब राजा दुर्योधन ने अर्जुन और भीमसेन को मार डालने के लिए राजा सुशर्मा से ५० कहा—हे त्रिगर्तराज, तुम शीघ्र अपनी सारी सेना साथ लेकर अर्जुन और भीमसेन के पास पहुँचो और उन्हें मार डालने की चेष्टा करो। राजा दुर्योधन की आज्ञा के अनुसार त्रिगर्तराज सुशर्मा हज़ारों रथों की सेना साथ लेकर आगे बढ़े। उन्होंने भीमसेन और अर्जुन को चारों ५३ ओर से घेर लिया। अब कौरवों के साथ अर्जुन का घोर संग्राम होने लगा।

एक सौ चौदह अध्याय

भीमसेन और अर्जुन का पराक्रम

सञ्जय ने कहा—महाराज, अतिरथी अर्जुन आपके पक्ष की सेना को पीड़ा पहुँचाते हुए शल्य के पास पहुँचे। उन्होंने असंख्य सुवर्णपुङ्ख तीक्ष्ण बाणों से अपना मार्ग रोकने की चेष्टा

भीमसेन और अर्जुन, गायों के झुण्ड में मांस-लोलुप दो सिंहों की तरह, कौरवपक्ष की रथसेना के बीच में उसका संहार करते हुए......विचरने लगे ।—२१३७

ऐसी दशा में आपके पिता बाल-ब्रह्मचारी भीष्म, आपके पुत्रों के सामने ही पूर्व की ओर सिर करके रथ से नीचे गिर पड़े।—२१५४

करनेवाले शल्य का रथ ढक दिया। इसके बाद सुशर्मा, कृपाचार्य, भगदत्त, जयद्रथ, चित्रसेन, विकर्ण, कृतवर्म्मा, दुर्मर्षण, विन्द और अनुविन्द आदि महारथियों में से हर एक को तीन-तीन कङ्कपत्रयुक्त बाण मारे। जयद्रथ चित्रसेन के रथ पर चले गये। वहाँ से उन्होंने अर्जुन और भीमसेन को बहुत बाण मारे। शल्य और महारथी कृपाचार्य ने बहुत से मर्मभेदी बाण मारकर अर्जुन को पीड़ित किया। हे भारत, चित्रसेन आदि आपके पुत्रों में से हर एक ने भीमसेन और अर्जुन को पाँच-पाँच तीक्ष्ण बाण मारे। उधर महारथी अर्जुन और भीमसेन त्रिगर्तदेश की भारी सेना को विकट बाणों से पीड़ित और उन्मथित करने लगे। त्रिगर्तराज सुशर्मा अर्जुन को नव बाण मारकर, शत्रुसेना को त्रास पहुँचाकर, ऊँचे स्वर से सिंहनाद करने लगे। रथों पर स्थित अन्य योद्धा भी बाण बरसाकर भीमसेन और अर्जुन को घायल करने लगे। श्रेष्ठ रथी और उदार-प्रकृति भीमसेन और अर्जुन, गायों के झुण्ड में मांसलोलुप दो सिंहों की तरह, कौरव पक्ष की रथसेना के बीच उसका संहार करते हुए विचित्र रूप से विचरने लगे। वे युद्धभूमि के बीच सैकड़ों शूरों के बाण सहित धनुष काटकर उनके सिरों को धड़ से अलग करने लगे। उस युद्ध में सैकड़ों घोड़े मरे और घायल हुए; हजारों हाथी और उनके सवार मर-मरकर पृथ्वी पर गिर पड़े। बहुत से रथ भी टूट गये। सैकड़ों रथी और घुड़सवार मारे गये। हज़ारों शूर भी डर के मारे काँपते हुए देख पड़े। रण में मारे गये हाथियों, घोड़ों, पैदलों और टूटे हुए रथों से सारी युद्ध-भूमि पूर्ण हो उठी। हे भारत, इस युद्ध में मैंने अर्जुन का अद्भुत पराक्रम देखा। वे अपने बाणों से उन असंख्य वीरों को अनायास हत और आहत कर रहे थे। १०

कटे हुए छत्र, ध्वजा, अंकुश, परिस्तोम, केयूर, अङ्गद, हार, कम्बल, पगड़ी, ऋष्टि, चामर-व्यजन, राजाओं के कटे हुए चन्दनचर्चित हाथ और जङ्घा आदि अङ्ग सर्वत्र बिखरे हुए देख पड़ते थे। महाराज, आपके पुत्र राजा दुर्योधन भीमसेन और अर्जुन का ऐसा अद्भुत बल और पराक्रम देखकर भीष्म पितामह के पास गये। कृपाचार्य, कृतवर्मा, जयद्रथ, विन्द और अनुविन्द उस समय भी युद्ध से विमुख न होकर दोनों पाण्डवों का २०

सामना करते रहे। महाधनुर्द्धर अर्जुन और महाबली भीमसेन उसी तरह कौरव-सेना को पीड़ित करने लगे। कौरव पक्ष के वीरगण भी फुर्ती के साथ महारथी अर्जुन के रथ के ऊपर हज़ारों-लाखों-करोड़ों मयूरपंख-शोभित तीक्ष्ण बाण बरसाने लगे। महावीर अर्जुन अपने बाणों से उन बाणों को विफल करके महारथी क्षत्रियों को मृत्यु के मुख में पहुँचाने लगे। इतने में महारथी शल्य ने कुपित होकर अर्जुन की छाती में कई भल्ल बाण मारे। अर्जुन ने उन बाणों से तनिक भी व्यथित न होकर पाँच बाणों से शल्य का धनुष और हस्तावाप काट डाला। फिर बहुत से बाण उनके मर्मस्थल में मारे। तब शल्य क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने और एक दृढ़ धनुष लेकर तीन बाण अर्जुन को, पाँच बाण वासुदेव को और नव बाण भीमसेन की दोनों भुजाओं और छाती में मारे।

हे भारत! इसी समय मगधराज जयत्सेन और द्रोणाचार्य, दुर्योधन की आज्ञा से, उसी स्थान पर आये जहाँ भीमसेन और अर्जुन कौरवों की बहुत बड़ी सेना को मार रहे थे। महारथी मगधराज ने भीमायुधधारी भीमसेन को आठ बाण मारे। पराक्रमी भीमसेन ने भी पहले दस और फिर पाँच बाण जयत्सेन को मारे। इसके बाद एक भल्ल बाण मारकर उनके सारथी को रथ से नीचे गिरा दिया। सारथी के मर जाने पर मगधराज के घोड़े इधर-उधर दौड़ते हुए सब सेना के सामने ही उनका रथ युद्धस्थल से ले भागे। इसी अवसर में महावीर द्रोणाचार्य ने सामने आकर पैंसठ बाणों से भीमसेन को घायल किया। महापराक्रमी भीमसेन ने भी पैंसठ तीक्ष्ण भल्ल बाण द्रोणाचार्य को मारे। प्रबल आँधी जैसे मेघों को छिन्न-भिन्न कर देती है वैसे ही अर्जुन भी बाणों से सेना सहित सुशर्मा को क्षत-विक्षत करने लगे। ३१

महारथी भीष्म पितामह, राजा दुर्योधन और कोशलेश्वर बृहद्बल, तीनों वीर क्रुद्ध होकर भीमसेन और अर्जुन के समीप गये। इधर पाण्डवगण भी धृष्टद्युम्न के साथ भीष्म के सामने आये। भीष्म उस समय मुँह फैलाये हुए यमराज के समान जान पड़ते थे। शिखण्डी ने महाबली भीष्म को सामने पाते ही निर्भय भाव से उन पर आक्रमण किया। महाराज, इस तरह राजा युधिष्ठिर आदि पाण्डव और सृञ्जयगण शिखण्डी को और कौरवगण भीष्म को आगे करके युद्ध करने लगे। कौरव लोग भीष्म की जय चाहते हुए पाण्डवों के साथ घोरतर संग्राम करने लगे। वे लोग संग्रामरूप द्यूतक्रीड़ा में प्रवृत्त होकर जयलाभ के लिए भीष्म के जीवन की बाज़ी लगाकर युद्ध करने लगे। हे राजेन्द्र, उस समय धृष्टद्युम्न ने अपने सैनिकों को आज्ञा देते हुए पुकारकर कहा—हे वीरश्रेष्ठ रथी योद्धाओ, तुम लोग निर्भय होकर भीष्म पर आक्रमण करो। सेनापति धृष्टद्युम्न के ये वचन सुनकर पाण्डवों की सेना, प्राणों का मोह छोड़कर, भीष्म पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ी। जैसे महासमुद्र तटभूमि को ग्रहण करता है, वैसे ही भीम-पराक्रमी भीष्म ने उस सेना पर धावा बोल दिया। ३६ ४७

एक सौ पन्द्रह अध्याय

संग्राम से भीष्म का जी ऊबना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, महावीर्यशाली शान्तनु-नन्दन पितामह भीष्म ने दसवें दिन पाण्डवों और सृञ्जयों से किस तरह युद्ध किया ? कौरवों ने किस तरह पाण्डवों के आक्रमण को रोका ? यह सब हाल मुझसे कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन्, मैं आपके आगे कौरवों और पाण्डवों के दारुण युद्ध का वृत्तान्त कहता हूँ, आप मन लगाकर सुनिए। महारथी अर्जुन के दिव्य अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से जैसे आपके पक्ष के वीर नित्य मरते थे वैसे ही पाण्डवों की महासेना को भीष्म भी, अपनी पूर्वोक्त प्रतिज्ञा के अनुसार, नित्य मारते थे। कौरवों सहित भीष्म को एक ओर, और पाञ्चालों सहित अर्जुन को दूसरी ओर, युद्ध करते देखकर लोग यह सन्देह करने लगे कि किस पक्ष की जय होगी। सब यही समझने लगे कि आज प्रलय हो जायगा। दसवें दिन अर्जुन और भीष्म के भयङ्कर युद्ध में घोर हत्याकाण्ड होते देख पड़ा। राजन् ! उस भयानक संग्राम में महारथी, श्रेष्ठ अस्त्रों के ज्ञाता, भीष्म पितामह नित्य दस हज़ार योद्धाओं को मारते थे। जिनके नाम और गोत्र भी नहीं मालूम थे, ऐसे अन्यान्य देशों के शूर और युद्ध में पीठ न दिखानेवाले योद्धा भीष्म के हाथों मारे गये। इस तरह दस दिन तक पाण्डव-सेना का संहार करने से अन्त को धर्मात्मा भीष्म अपने जीवन से ऊब गये। उनके मन में यह इच्छा हुई कि मैंने बहुत लोगों की हत्या की है। अब मुझे मर ही जाना चाहिए। अतएव अपनी मृत्यु की इच्छा करके, और "अब मनुष्य-हत्या नहीं करूँगा" ऐसा इरादा करके, भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा—हे पाण्डव ! तुम सब शास्त्रों के जाननेवाले हो, इसलिए मैं जो धर्मवर्द्धक और स्वर्गदायक वचन कहता हूँ उन्हें सुनो। पुत्र, मैंने बहुत से प्राणियों को रण में मारा है। मेरे बहुत बड़े जीवन का अधिक अंश इसी क्रूर कर्म के करने में बीता है। इस समय जीवन से मेरा जी ऊब गया है। मैं अब ज़िन्दा रहना नहीं

१०

चाहता। इसलिए जो तुम मेरा प्रिय करना चाहते हो तो पाञ्चालों और सृञ्जयों सहित अर्जुन को आगे करके मुझे मारने का यत्न करो।

प्रियदर्शन पाण्डवश्रेष्ठ युधिष्ठिर ने देवव्रत भीष्म की यह इच्छा जानकर उसी समय सृञ्जयों के साथ उन पर आक्रमण किया। धृष्टद्युम्न और युधिष्ठिर यह कहकर अपनी सेना को आक्रमण के लिए उत्साहित करने लगे कि "हे सैनिक वीरो, दौड़ो, आक्रमण करो, युद्ध करो और भीष्म को जीत लो। शत्रुदमन सत्यप्रतिज्ञ अर्जुन और महाबाहु भीमसेन तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे सृञ्जयगण, संग्राम में भीष्म से तुम्हें रत्ती भर भी डर नहीं है। हम लोग शिखण्डी को २० आगे करके आज भीष्म को अवश्य मार लेंगे।" महाराज! दसवें दिन इस तरह प्रतिज्ञा करके, ब्रह्मलोक अथवा विजय की प्राप्ति के लिए यत्न करते हुए पाण्डवगण, कुपित शिखण्डी और अर्जुन को आगे करके भीष्म की ओर बढ़े।

राजन्! तब आपकी ओर दुर्योधन की आज्ञा से अनेक देशों के महाबली राजा लोग, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, सब भाइयों के साथ बलवान् दुःशासन और कौरव पक्ष की सेना, सब लोग मिलकर समरभूमि के बीच भीष्म की रक्षा करने लगे। आपके पक्ष के शूर योद्धा लोग महाव्रत भीष्म के अनुगामी होकर, शिखण्डी को आगे करके आते हुए, पाण्डवों से घोर युद्ध करने लगे। उधर चेदि और पाञ्चालदेश के श्रेष्ठ वीरों को साथ लेकर कपिध्वज महारथी अर्जुन, शिखण्डी को आगे रखकर, भीष्म से लड़ने लगे। सात्यकि अश्वत्थामा से, धृष्टकेतु पौरव से, युधामन्यु अनुचरों सहित दुर्योधन से, सेना सहित राजा विराट सेना सहित महाबली जयद्रथ से, महाराज युधिष्ठिर सेना सहित महाधनुर्द्धर शल्य से, सुरक्षित भीमसेन गजारोही सेना से और भाइयों सहित ३० सेनापति धृष्टद्युम्न अधृष्य, अनिवार्य, सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगे। कर्णिकारचिह्नयुक्त ध्वजावाले रथ पर स्थित वीर अभिमन्यु से लड़ने के लिए सिंहकेतुवाले रथ पर स्थित राजकुमार बृहद्बल आगे बढ़े। आपके अन्य पुत्र और अन्य राजा लोग शिखण्डी और अर्जुन को मार डालने की इच्छा से उन पर आक्रमण करने चले।

इस प्रकार दोनों ओर की भारी सेनाएँ अपना पराक्रम दिखाती हुई इधर से उधर परस्पर आक्रमण करने के लिए दौड़ीं। उस समय उनके वेग से पृथ्वी काँपने लगी। संग्राम में भीष्म को लड़ते देखकर आपकी और पाण्डवों की सेना दोनों, प्राणों का मोह छोड़कर, घोर युद्ध करने लगीं। प्रहार के लिए चेष्टा करते हुए और परस्पर आक्रमण के लिए दौड़ते हुए वीरों का घोर कोलाहल दसों दिशाओं में व्याप्त हो गया। शङ्ख-नगाड़े आदि का शब्द, हाथियों का शब्द और सब सैनिकों का दारुण सिंहनाद चारों ओर सुन पड़ने लगा। वीरों के उत्कृष्ट हार, अङ्गद और किरीट आदि की प्रभा के आगे सब राजाओं की चन्द्र-सूर्य के समान प्रभा फीकी पड़ गई। उड़ी हुई धूल मेघ की घटा सी छा गई। उसके बीच शस्त्रों की चमक बिजली सी जान पड़ती

थी। दोनों दलों के योद्धा जो धनुष चढ़ाते थे उसका शब्द, बाणों का शब्द, शङ्ख-नगाड़े आदि का शब्द और चलते हुए रथों की घरघराहट का शब्द मेघगर्जन सा प्रतीत होता था। पाश, शक्ति, ऋष्टि और बाण आदि असंख्य शस्त्रों से परिपूर्ण आकाशमण्डल प्रकाश-हीन सा हो गया। ४० रथी लोग रथी वीरों को और घुड़सवार योद्धा घुड़सवार योद्धाओं को मार-मारकर गिराने लगे। हाथियों को हाथी और पैदलों को पैदल मारने लगे। महाराज, जैसे मांस की बोटी के लिए दो बाज़ लड़ते हैं वैसे ही भीष्म के जीवन के लिए कौरव और पाण्डव तुमुल युद्ध करने लगे। वे एक दूसरे को मारने और जीतने के लिए घोर युद्ध कर रहे थे। ४३

एक सौ सोलह अध्याय

संकुल युद्ध का वर्णन

सञ्जय ने कहा—राजन्, महापराक्रमी अभिमन्यु भीष्म को मारने के लिए असंख्य-सेना-परिवृत राजा दुर्योधन से युद्ध करने लगे। राजा दुर्योधन ने अति तीक्ष्ण नव बाण अभिमन्यु को मारे। फिर कुपित होकर तीन बाण और भी उनकी छाती में मारे। तब अभिमन्यु ने क्रोध करके मृत्यु की जिह्वा के समान भयङ्कर लोहमयी शक्ति दुर्योधन के रथ पर फेंकी। राजन्, आपके पुत्र दुर्योधन ने उस भयानक शक्ति को आते देखकर तीक्ष्ण क्षुरप्र बाण से उसके दो टुकड़े कर डाले। हे भारत, महावीर अभिमन्यु ने दुर्योधन की छाती और भुजाओं में पहले तीन और फिर दस बाण मारे। उन दोनों वीरों का वह घोर और विचित्र युद्ध देखकर सब दर्शक बहुत प्रसन्न हुए और राजा लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। भीष्म को मारने और अर्जुन की विजय के लिए वीर अभिमन्यु दुर्योधन से घोर युद्ध करने लगे।

उधर शत्रुनाशन ब्राह्मणश्रेष्ठ अश्वत्थामा ने कुपित होकर सात्यकि की छाती में एक नाराच बाण मारा। सात्यकि ने भी गुरुपुत्र अश्वत्थामा के मर्मस्थलों में कङ्कपत्रभूषित नव बाण मारे। १० उन्होंने भी सात्यकि के दोनों हाथों और छाती में पहले नव और फिर तीस बाण मारे। महा-यशस्वी सात्यकि ने अश्वत्थामा के बाणों से बहुत घायल और व्यथित होकर उनको फिर तीन बाण मारे। पौरव ने धृष्टकेतु के ऊपर असंख्य बाण बरसाये, तब धृष्टकेतु ने तीस बाणों से पौरव को घायल किया। महारथी पौरव ने धृष्टकेतु का धनुष काट डाला और अनेक तीक्ष्ण बाणों से शत्रु को पीड़ित करके घोर सिंहनाद किया। धृष्टकेतु ने जल्दी से दूसरा धनुष लेकर पौरव को तिहत्तर तीक्ष्ण बाण मारे। इसी तरह वे दोनों महाबली महारथी एक-दूसरे पर असंख्य बाण बरसाते हुए घोर युद्ध करने लगे। दोनों ने दोनों के धनुष काट डाले और रथ तथा घोड़े भी नष्ट कर दिये। इसके बाद रथहीन दोनों योद्धा खड्ग-युद्ध करने के लिए तैयार हुए। जैसे

महावन में एक सिंहनी के लिए दो सिंह परस्पर झपटें, वैसे ही वे दोनों वीर शतचन्द्रयुक्त
२० दृढ़ ढालें और शततारकाचित्रित उज्ज्वल तलवारें लेकर एक दूसरे पर झपटे। वे आगे बढ़कर, पीछे हटकर, तरह-तरह के पैंतरे दिखाते हुए परस्पर आक्रमण और युद्ध करने लगे। अत्यन्त कुपित पौरव ने "ठहर-ठहर" कहकर धृष्टकेतु के सिर पर तलवार का वार किया। चेदिराज धृष्टकेतु ने भी बढ़कर पुरुषश्रेष्ठ पौरव के कन्धे पर तीक्ष्ण तलवार मारी। महाराज, वे दोनों वीर इस तरह वेग से परस्पर प्रहार करके अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। तब आपके पुत्र जयत्सेन पौरव को, अपने रथ पर बिठाकर, समर-भूमि से हटा ले गये। क्रुद्ध प्रतापी सहदेव धृष्टकेतु को लेकर समर से हट गये।

राजन्, आपके पुत्र चित्रसेन ने पाण्डवदल के सुशर्मा नामक राजा को लोहमय बाणों से घायल कर दिया। इसके बाद साठ बाण, फिर नव बाण और मारे। सुशर्मा ने भी क्रुद्ध होकर चित्रसेन को सौ बाण मारे। फिर तीस बाण और मारे।

महाराज, उस भीष्म-सम्बन्धी समर में अपने यश और कुल के मान को बढ़ाते हुए कुमार
३० अभिमन्यु राजा बृहद्बल से घोर युद्ध करने लगे। अर्जुन जिसमें अनायास भीष्म को मार सकें, इसलिए पराक्रमी अभिमन्यु भी उनकी सहायता कर रहे थे। कोशलेश वीर बृहद्बल ने अभिमन्यु को पहले लोहमय पाँच बाण मारे, उसके बाद फिर बीस तीक्ष्ण बाण मारे। अभिमन्यु ने उस प्रहार से तनिक भी विचलित न होकर बृहद्बल को आठ लोहमय बाण मारे। उसके बाद शत्रु का धनुष काटकर कङ्कपत्रयुक्त तीस विकट बाण और मारे। राजपुत्र बृहद्बल भी दूसरा धनुष लेकर अभिमन्यु को अनेक प्रकार के बाणों से पीड़ित करने लगे। जैसे देवासुर-युद्ध में बलि और इन्द्र लड़े थे वैसे ही दोनों वीर क्षत्रिय कुपित होकर, भीष्म के वध और रक्षा के लिए, परस्पर घोर और विचित्र युद्ध कर रहे थे।

महाराज, उधर भीमसेन हाथियों के दल में घुसकर उनका संहार करने लगे। जैसे वज्रपाणि इन्द्र पर्वतों को तोड़ रहे हों वैसे ही गदा हाथ में लेकर हाथियों को मारते हुए भीमसेन

शोभायमान हुए। उनके प्रहार से पर्वततुल्य हाथी घोर चीत्कार से पृथ्वी को कँपाते हुए गिरने लगे। अञ्जन के समान काले रङ्ग के, पहाड़ ऐसे ऊँचे, गजराज पृथ्वी पर गिरकर इधर-उधर बिखरे हुए पहाड़ों के समान जान पड़ते थे।

महाधनुर्द्धर राजा युधिष्ठिर, अपनी सेना के द्वारा सुरक्षित होकर, समर के लिए उद्यत मद्रराज शल्य को पीड़ित करने लगे। शल्य भी भीष्म की रक्षा के लिए पराक्रम दिखाकर महारथी युधिष्ठिर को पीड़ा पहुँचाते हुए युद्ध करने लगे। उधर सिन्धुराज जयद्रथ ने राजा विराट को पहले तीक्ष्ण नव बाणों से पीड़ित करके फिर तीस तीक्ष्ण बाण उनकी छाती में मारे। राजा विराट ने क्रुद्ध होकर जयद्रथ की छाती में तीस तीक्ष्ण बाण मारे। विचित्र धनुष, खड्ग, कवच, शस्त्र, ध्वजा आदि से सुशोभित दोनों वीर राजा इस तरह घोर संग्राम करने लगे। ४०

राजन्, महात्मा द्रोणाचार्य राजकुमार धृष्टद्युम्न के सामने जाकर घोर और अद्भुत युद्ध करने लगे। उन्होंने धृष्टद्युम्न का धनुष काटकर फुर्ती के साथ पचास बाण मारे। शत्रुनाशन धृष्टद्युम्न ने दूसरा धनुष लेकर द्रोणाचार्य के ऊपर अनेक बाण छोड़े। महारथी द्रोणाचार्य ने उन बाणों को अपने बाणों से निष्फल कर दिया। इसके बाद बहुत तीक्ष्ण पाँच बाण द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न को मारे। तब उन्होंने अत्यन्त कुपित होकर यमदण्डतुल्य भारी गदा द्रोणाचार्य के ऊपर फेंकी। द्रोणाचार्य ने सोने की पट्टियों से मढ़ी उस गदा को आते देखकर पचास बाणों से उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। द्रोण के बाणों से कटकर चूर्ण सी हो गई वह गदा पृथ्वी पर गिर पड़ी। शत्रुतापन धृष्टद्युम्न ने गदा का प्रहार व्यर्थ होते देखकर एक लोहे की बनी शक्ति द्रोणाचार्य के ऊपर फेंकी। द्रोण ने नव बाणों से वह शक्ति काटकर गिरा दी, और अनेक तीक्ष्ण बाणों से धृष्टद्युम्न को पीड़ित किया। भीष्म के कारण द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न ने इस तरह महाघोर युद्ध किया। ५०

महावीर अर्जुन भीष्म को देखकर, जङ्गली हाथी जैसे दूसरे जङ्गली हाथी पर हमला करने के लिए दौड़ता है वैसे ही, तीक्ष्ण बाण बरसाते हुए उनकी ओर चले। महाप्रतापी राजा भगदत्त मदान्ध हाथी पर सवार थे। अर्जुन को आते देखकर, उन्हें रोकने के लिए, वे आगे बढ़े। भगदत्त को हाथी पर से बाण बरसाते देख महारथी अर्जुन यत्नपूर्वक उन पर बाण छोड़ने लगे। उस महारण में वीर अर्जुन चाँदी के समान चमकीले लोहे के बाण उस गजराज को मारने लगे। अर्जुन बारम्बार शिखण्डी से कहने लगे—"भीष्म के पास जाओ, बढ़ो, उन्हें मारो।" तब राजा भगदत्त अर्जुन को छोड़कर शीघ्रता के साथ राजा द्रुपद के रथ के पास चले। इधर शिखण्डी को आगे करके अर्जुन फुर्ती के साथ भीष्म की ओर चले। उस समय घमासान युद्ध होने लगा। उधर से कौरव पक्ष के वीर भी कुपित होकर चिल्लाते और सिंहनाद करते हुए वेग के साथ अर्जुन की ओर दौड़े। उस समय अर्जुन का अद्भुत पराक्रम ६०

देख पड़ा। हवा जैसे आकाश में मेघों को छिन्न-भिन्न कर डालती है, वैसे ही वीर अर्जुन आपके पुत्रों की सेनाओं को नष्ट-भ्रष्ट करने लगे।
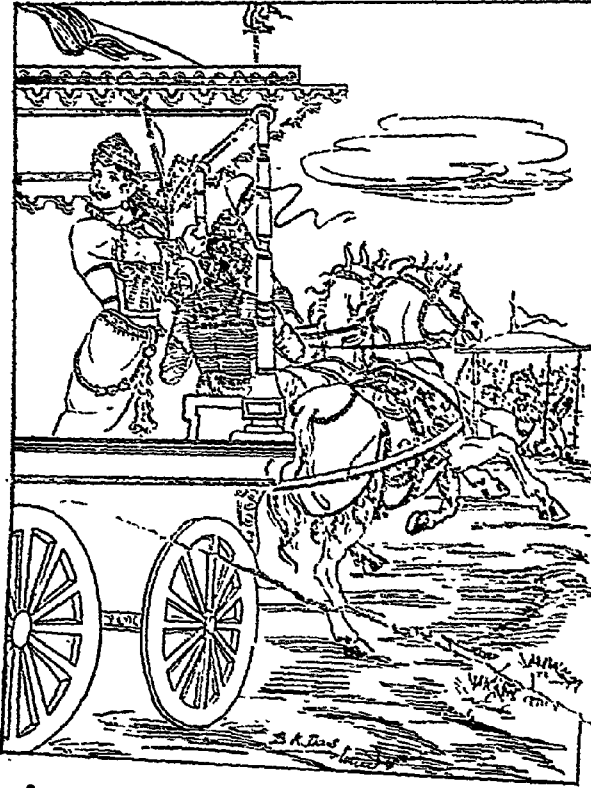
पितामह भीष्म को देखकर शिखण्डी फुर्ती के साथ अव्यग्र भाव से उन पर बाण बरसाने लगे। रथरूप कुण्ड में प्रज्वलित, धनुषरूप ज्वाला से शोभित, खड्ग, गदा, शक्ति आदि शस्त्ररूप ईंधन से प्रज्वलित, बाणरूप चिनगारियों से परिपूर्ण भीष्म-रूप अग्नि युद्ध में उस समय क्षत्रिय वीरों को भस्म करने लगा। आग जैसे हवा की सहायता से बढ़कर वन को भस्म करती है वैसे ही भीष्म भी दिव्य अस्त्र छोड़ते हुए शत्रुसेना में प्रज्वलित हो उठे। अर्जुन के अनुगामी सब सोमकों को नष्ट करके भीष्म ने सारी पाण्डवसेना को हरा दिया। उस महायुद्ध में महावीर भीष्म ने सब दिशाओं को अपने बाणों से ... सिंहनाद और मरते हुए वीरों के आर्तनाद से प्रतिध्वनित कर दिया। वे सुवर्णपुङ्खयुक्त तीक्ष्ण बाणों से रथियों, ... घुड़सवारों और घोड़ों को मार-मारकर गिराने लगे। उनके बाणों से हज़ारों रथों के झुण्ड मुण्डहीन धड़ों से परिपूर्ण होकर छूटे हुए ताड़ के वन से जान पड़ने लगे। रथों, हाथियों और घोड़ों की पीठ से ... मनुष्यों से

७१ ख़ाली हो गईं। बिजली की कड़क से भी भयङ्कर उनके धनुष की प्रत्यञ्चा का शब्द ... सुनकर सैनिक लोग काँप उठे। भीष्म के धनुष से छूटे हुए बाण निशाने से कभी नहीं चूकते थे। वे अमोघ बाण वीरों के शरीरों को फोड़कर उस पार निकल जाते थे। मैंने देखा कि रथी और सारथी से ख़ाली रथों को वायुवेगगामी घोड़े इधर-उधर लिये फिर रहे हैं। महाराज! काशी, करूष आदि देशों के उच्च कुल में उत्पन्न महारथी, संग्राम से कभी विमुख न होनेवाले शूर, सुवर्णमण्डित ध्वजाओं से शोभित रथों पर स्थित चौदह हज़ार क्षत्रिय अपनी चतुरङ्गिणी सेना सहित भीष्म के हाथ से मारे गये। मुँह फैलाये हुए महाकाल के समान भीष्म के सामने जो आया उसी को लोगों ने समझ लिया कि अब यह बच नहीं सकता। सोमकवंश के सब महारथी योद्धाओं को भीष्म ने मार डाला। उस समय वीर अर्जुन और पराक्रमी शिखण्डी के

८० सिवा और कोई भीष्म के सामने जाने का साहस नहीं कर सका।

एक सौ सत्रह अध्याय

दु:शासन का पराक्रम

सञ्जय ने कहा—महाराज, भीष्म के पास पहुँचकर शिखण्डी ने उनकी छाती में दस तीक्ष्ण भल्ल बाण मारे। भीष्म ने क्रोध से प्रज्वलित तीव्र तिर्छी दृष्टि से देखा; ऐसा जान पड़ा मानों वे उन्हें भस्म कर देंगे। किन्तु शिखण्डी को जन्म की स्त्री जानकर सब लोगों के सामने भीष्म ने उन पर प्रहार नहीं किया। परन्तु शिखण्डी ने यह भीष्म का भाव नहीं जाना। महारथी भीष्म के पास खड़े हुए शिखण्डी से अर्जुन ने कहा—"हे वीर शिखण्डी, अब विचार और संशय की ज़रूरत नहीं। बस, भीष्म को मारने में जल्दी करो। युधिष्ठिर की सेना में तुम्हारे सिवा और कोई मुझे ऐसा नहीं देख पड़ता, जो पितामह भीष्म के सामने खड़ा होकर इनसे युद्ध कर सके। हे पुरुषसिंह, यह मैं तुमसे सत्य कह रहा हूँ।" अर्जुन के यों कहने पर शिखण्डी तरह-तरह के बाण बरसाते हुए भीष्म की ओर दौड़े। महाराज, आपके पिता देवव्रत भीष्म शिखण्डी के प्रहारों का कुछ ख़याल न करके क्रुद्ध अर्जुन के ऊपर बाण बरसाने लगे। वे तीक्ष्ण बाणों से पाण्डवों की महासेना को मारने लगे। राजन्, सेना सहित सब पाण्डव वैसे ही भीष्म को घेरने और बाणों से ढकने लगे, जैसे मेघमण्डली सूर्य को ढक लेती है। हे भरतश्रेष्ठ, चारों ओर से घिरे हुए भीष्म पितामह वन में आग के समान प्रज्वलित होकर युद्धभूमि में शूरों को भस्म करने लगे। १०

उस भयङ्कर संग्राम में आपके पुत्र दु:शासन का अद्भुत पौरुष देख पड़ा। वे अकेले ही अर्जुन आदि पाण्डवों से लड़ते थे और उन्हें रोककर भीष्म की रक्षा कर रहे थे। दु:शासन के इस कर्म को देखकर सब लोग बहुत सन्तुष्ट हुए। सब पाण्डव मिलकर भी दु:शासन को नहीं रोक सकते थे। दु:शासन रणभूमि में रथी शूरों को रथ-हीन करके हाथियों और घोड़ों को नष्ट करने लगे। उनके बाणों से विदीर्ण हाथी और धनुर्द्धर घुड़सवार पृथ्वी पर गिरने लगे। सैकड़ों हाथी उनके बाणों से पीड़ित होकर इधर-उधर भागने लगे। जैसे ईंधन पाकर आग प्रज्वलित होती है, वैसे ही दु:शासन प्रज्वलित होकर पाण्डवों की सेना को भस्म करने लगे। पाण्डवों में से महारथी अर्जुन के सिवा और कोई उन्हें जीतने के लिए उनके पास जाने का साहस नहीं कर सकता था। महावीर अर्जुन ही सबके सामने उन्हें जीतकर भीष्म की ओर अग्रसर हुए। भीष्म के बाहुबल का सहारा पाये हुए वीर दु:शासन, अर्जुन से हारकर भी, धीरज धरकर बारम्बार उन्हें रोकने की चेष्टा करने लगे। उस युद्ध में अर्जुन की बड़ी शोभा हुई। २१

उधर शिखण्डी और किसी से न लड़कर वज्रतुल्य कठोर और साँप के समान विषैले बाणों से भीष्म को ही घायल करने लगे। किन्तु वे बाण भीष्म को तनिक भी पीड़ा नहीं

पहुँचा सके। मुसकाते हुए भीष्म उन बाणों को वैसे ही रोक लेते थे जैसे गर्मी का सताया हुआ मनुष्य जल की धारा अपने ऊपर गिरने देता है। क्षत्रियों ने घोररूप भीष्म को देखा कि वे पाण्डवों की सेना को बाणवर्षा से नष्ट कर रहे हैं।

इसके बाद राजा दुर्योधन ने अपने सब सैनिकों से कहा—वीरो, तुम लोग शीघ्र चारों ओर से अर्जुन पर आक्रमण करो। धर्मज्ञ भीष्म तुम सबकी रक्षा करेंगे। हे नरपतियो, सुवर्णभूषित तालचिह्नयुक्त ध्वजावाले रथ पर विराजमान भीष्म ही हम लोगों के मङ्गल और रक्षक हैं। भीष्म तुम्हारे पास ही हैं, इसलिए तुम लोग निडर होकर पाण्डवों से युद्ध करो। सब देवता भी मिलकर भीष्म का सामना नहीं कर सकते, फिर पाण्डव हैं ही क्या चीज़। इसलिए
३० पाण्डवों से डटकर लड़ो। मैं ख़ुद तुम लोगों के साथ यत्नपूर्वक अर्जुन से युद्ध करूँगा।

राजन्! आपके पक्ष के सब महाबली योद्धा दुर्योधन के ये वचन सुनकर, निर्भय होकर, अर्जुन से युद्ध करने लगे। पतङ्ग जैसे आग पर आक्रमण करते हैं वैसे ही वे विदेह, कलिङ्ग, दासेरक, निषाद, सौवीर, वाह्लीक, दरद, प्रतीच्य, औदीच्य, मालव, अभीषाह, शूरसेन, शिवि, वसाति, शाल्व, शक, त्रिगर्त, अम्बष्ठ, केकय आदि देशों और जातियों के वीर कुपित होकर अर्जुन से लड़ने चले। महावीर अर्जुन ने सब दिव्य अस्त्रों का ध्यान किया और फिर उन्हीं अस्त्रों से संयुक्त बाण छोड़कर वे उन शत्रुओं को, आग जैसे पतङ्गों को जलाती है वैसे, भस्म करने लगे। उन महावेगवाले अस्त्रों के प्रभाव से युक्त हज़ारों बाण गाण्डीव धनुष से एक साथ निकलने लगे। गाण्डीव धनुष आकाश में बिजली की तरह चमकने लगा। उन बाणों से राजाओं के रथों की ध्वजाएँ कट-कटकर गिरने लगीं। बाणों से पीड़ित राजा लोग अर्जुन के सामने ठहर नहीं सके। ध्वजा, रथ, रथी, घोड़े, घुड़सवार, हाथी और उनके सवार अर्जुन के बाणों से पीड़ित और छिन्न-भिन्न होकर पृथ्वी पर गिरने लगे। अर्जुन की भुजाओं से छूटे हुए बाण सर्वत्र
४० व्याप्त हो गये। लाशों से पृथ्वी पट गई। दुर्योधन की सब सेना चारों ओर भागने लगी।

महारथी अर्जुन ने इस तरह कौरव-सेना को भगाकर दुःशासन के ऊपर बहुत से बाण छोड़े। वे लोहमय बाण दुःशासन के शरीर को चीरकर साँप जैसे बाँबी में घुसते हैं वैसे धरती में घुस गये। अब अर्जुन ने दुःशासन के सारथी और घोड़ों को भी मार डाला। फिर बीस बाणों से विविंशति का रथ तोड़कर उनको पाँच बाण मारे। अर्जुन ने कृपाचार्य, शल्य और विकर्ण के रथ नष्ट करके उन्हें बहुत से लोहमय बाण मारे। इस प्रकार महारथी कृप, शल्य, दुःशासन, विकर्ण और विविंशति, सब रथ-हीन होकर अर्जुन से हारकर युद्धभूमि से भाग खड़े हुए। हे भरतश्रेष्ठ, दोपहर के पहले इन महारथियों को जीतकर अर्जुन धूम-रहित अग्नि के समान प्रज्वलित हो उठे। बाणों से किरणमण्डित सूर्य के समान शोभा को प्राप्त अर्जुन अन्य राजाओं को भी पीड़ित करने लगे। बाण-वर्षा और दिव्य अस्त्रों के प्रभाव से सब महारथियों को विमुख

करके अर्जुन ने कौरवों और पाण्डवों की सेना के बीच रक्त की महानदी बहा दी। [पाण्डव और सृञ्जयगण भीष्म के ऊपर पूरा ज़ोर लगाकर आक्रमण करने लगे। भीष्म को भी प्रबल पराक्रम के साथ उनका सामना करते देखकर, समर में मरने से स्वर्गलोक मिलेगा—यह सोचकर, आपके पुत्र और उनके अधीन राजा लोग पाण्डवों का सामना करने लगे। कोई भी रण से नहीं भागा। उधर पाण्डवगण भी आपके पुत्रों से प्राप्त अपने पहले के क्लेशों को स्मरण करके निर्भय भाव से युद्ध करने लगे। उन शूरों ने निश्चय कर लिया कि जीतेंगे तो राज्य पावेंगे, और मर जायँगे तो स्वर्गलोक को जायँगे। यह सोचकर प्रसन्नतापूर्वक शत्रुओं से प्राणपण पराक्रम के साथ सब लड़ रहे थे।] रथी लोगों के बाणों से नष्ट-भ्रष्ट रथों और हाथियों के समूह सर्वत्र पड़े हुए थे। हाथियों के तोड़े रथ और पैदलों के मारे हुए घोड़े गिरे पड़े थे। हाथी, घोड़े, पैदल तथा रथों, घोड़ों और हाथियों के सवार मरे पड़े थे। उनके सिर और शरीर कट-कटकर सर्वत्र बिखरे पड़े थे। कुण्डल और अङ्गद आदि आभूषणों से भूषित महारथी राजपुत्र गिर रहे थे और कुछ गिरे पड़े थे। उनकी लाशों से सारा मैदान भरा पड़ा था। कुछ लोग रथों के पहियों के नीचे पड़कर कट गये थे और कुछ के शरीर हाथियों के पैरों से कुचल गये थे। पैदल और घुड़सवार इधर-उधर दौड़ रहे थे। हाथी और रथों के योद्धा चारों ओर मर-मरकर गिर रहे थे। जिनके पहिये, युग और ध्वजा आदि अङ्ग टूट गये हैं ऐसे रथ पृथ्वी पर पड़े हुए थे। हाथी, घोड़े और रथ आदि के सवारों के रक्त से सनी हुई वह पृथ्वी शरद ऋतु के सन्ध्या काल के लाल मेघ के समान देख पड़ती थी। कुत्ते, कौए, गिद्ध, भेड़िये, सियार आदि भयङ्कर मांसाहारी पशु-पक्षी भोजन पाकर बड़े आनन्द से बोल रहे थे। उस समय सब दिशाओं में तरह-तरह की कठोर गर्म और रूखी हवा चलने लगी। चीत्कार करते और गरजते हुए राक्षस, भूत, प्रेत आदि साक्षात् देख पड़ने लगे। सुवर्णभूषित डोर और पताकाएँ सहसा हवा से उड़ने लगीं। हज़ारों सफ़ेद छत्र और ध्वजा सहित महारथी इधर-उधर बिखरे हुए देख पड़ने लगे। बाणों से पीड़ित होकर पताकाओं से शोभित बड़े-बड़े हाथी इधर-उधर भागने लगे। गदा, शक्ति, धनुष आदि शस्त्र हाथों में लिये हज़ारों क्षत्रिय पृथ्वी पर इधर-उधर पड़े देख पड़ते थे। ५० ६०

महाराज! तब भीष्म पितामह दिव्य अस्त्र का प्रयोग करके सब योद्धाओं के सामने अर्जुन की ओर चले; किन्तु कवचधारी शिखण्डी ने सामने आकर उन्हें रोक लिया। तब भीष्म ने उस अग्नि-तुल्य अस्त्र का उपसंहार कर लिया। इसी अवसर में अर्जुन ने पितामह को मोहित करके आपकी सेना को मारना शुरू किया। ६५

एक सौ अठारह अध्याय

भीष्म के पराक्रम का वर्णन

सञ्जय ने कहा—हे भरतश्रेष्ठ, उस समय सेनाओं के व्यूह टूट गये। सब लोग जीवन की आशा छोड़कर स्वर्ग पाने की इच्छा से घोर युद्ध करने लगे। उस समय युद्ध के नियमों का ख़याल किसी को नहीं रहा। साधारणतः रथी रथी से, घुड़सवार घुड़सवार से, हाथी का सवार हाथी के सवार से और पैदल पैदल से लड़ता है; परन्तु उस समय यह नियम जाता रहा। जो जिसे पाता था वह उसी पर प्रहार कर देता था। सब उन्मत्त से हो रहे थे। दोनों सेनाओं में बेतरह हलचल मच गई। मनुष्य, हाथी, घोड़े आदि इस तरह बिखरकर महाघोर संग्राम करने लगे। कोई किसी को नहीं पहचानता था; यहाँ तक कि लोग अपने ही पक्षवालों पर प्रहार कर रहे थे।

तब शल्य, कृपाचार्य, चित्रसेन, दुःशासन और विकर्ण, पाँचों वीर रथों पर बैठकर पाण्डव पक्ष की सेना को मारने और मथने लगे। पानी में डूबती हुई नाव के समान उस मारी जाती हुई पाण्डव-सेना ने अपनी रक्षा करनेवाला किसी को न देखा। जैसे जाड़े की ऋतु गाय आदि पशु-पक्षियों को कष्ट पहुँचाती है, वैसे ही पितामह भीष्म पाण्डवों को मर्मस्थल में पीड़ा पहुँचाने लगे। तुरन्त ही महावीर अर्जुन अपने बाणों से मेघवर्ण बड़े-बड़े हाथियों को मार-मारकर गिराने लगे। प्रधान-प्रधान योद्धा अर्जुन के बाणों से उन्मथित होकर गिरने लगे। आर्तनाद करते हुए बड़े-बड़े गज पृथ्वी पर गिरने लगे। आभूषणों से भूषित वीरों के शरीरों
१२ और कुण्डल-मण्डित मुण्डों से वह पृथ्वी व्याप्त हो गई। महापराक्रमी भीष्म और महारथी अर्जुन ने इस तरह पराक्रम दिखाकर घोर संहार कर डाला। युद्ध में पितामह को इस तरह पराक्रम के साथ लड़ते देखकर आपके सब पुत्र अपनी-अपनी सेना लेकर लौट पड़े। युद्ध में मरकर स्वर्ग पाने की इच्छा से वे लोग उस समय पाण्डवों से युद्ध करने लगे। हे महाभाग, पाण्डव भी आपके पुत्रों से प्राप्त अपने क्लेशों को स्मरण करके निर्भय होकर प्रसन्नतापूर्वक स्वर्ग लोक अथवा विजय की इच्छा से कौरवों के साथ लड़ने लगे।

उस समय पाण्डवों के सेनापति धृष्टद्युम्न ने अपने सेनावालों से कहा—"हे सोमकगण, हे सृञ्जयगण, तुम लोग शीघ्र भीष्म के ऊपर आक्रमण करो।" अब सोमक और सृञ्जयगण भीष्म के बाणों से अत्यन्त घायल और पीड़ित होने पर भी, सेनापति की आज्ञा से उत्साहित होकर, शीघ्रता के साथ बाण बरसाते हुए भीष्म के ऊपर चारों ओर से आक्रमण करने लगे। उनके बाणों के प्रहार से कुपित होकर आपके पिता देवव्रत भीष्म सृञ्जयों से युद्ध करने लगे। पहले महात्मा परशुराम से भीष्म ने जो शत्रुदल नष्ट करनेवाली अस्त्रविद्या पाई थी, उसी अस्त्रविद्या के बल

से वे नित्य शत्रुसेना का संहार करते थे। उसी अस्त्रविद्या के प्रभाव से नव दिन तक नित्य उन्होंने पाण्डव-सेना के दस-दस हज़ार वीरों को मारा। हे भरतश्रेष्ठ, दसवें दिन अकेले भीष्म ने मत्स्य और पाञ्चाल देश की सेना के साथ युद्ध करके हज़ार हाथी के सवार, दस हज़ार घुड़सवार, पाँच हज़ार रथी, चौदह हज़ार पैदल और सात महारथी योद्धा मारे। इनके सिवा हाथी और घोड़े तो असंख्य मारे। इस प्रकार शिक्षा के प्रभाव से सब राजाओं की सेना का नाश करके उन्होंने विराट के प्रिय भाई शतानीक को मारा। शतानीक के साथी एक हज़ार वीर राजा भी भीष्म के भल्ल बाणों से मारे गये। समर में योद्धा लोग घबराकर अर्जुन को पुकारने और चिल्लाने लगे। पाण्डव-सेना के जो वीर अर्जुन के साथ-साथ भीष्म के सामने आये, वे ही मारे गये। दसों दिशाओं में बाण बरसाते हुए भीष्म पाण्डव-सेना भर को उन्मथित करके सेना के अग्रभाग में खड़े हुए। महाराज, दसवें दिन ऐसा अद्भुत संग्राम करने के बाद धनुष हाथ में लिये भीष्म पितामह दोनों सेनाओं के बीच में बहुत ही शोभायमान हुए। दोपहर के सूर्य के समान तपनेवाले भीष्म की ओर कोई राजा आँख उठाकर देख भी नहीं सकता था। इन्द्र ने जैसे दानवों को पीड़ित किया था वैसे ही भीष्म भी पाण्डवों को और उनकी सेना को पीड़ित करने लगे। ३०

महाराज, इस तरह पराक्रम करके सेना के अग्रभाग में स्थित भीष्म को देखकर श्रीकृष्ण ने प्रसन्नतापूर्वक अर्जुन से कहा—"हे धनञ्जय, ये पितामह भीष्म दोनों सेनाओं के बीच में खड़े हैं। इस समय इन्हें बलपूर्वक मारने से ही तुम्हें जय-प्राप्ति होगी। इसलिए जहाँ पर भीष्म तुम्हारी सेना को छिन्न-भिन्न कर रहे हैं वहीं पर इन्हें बलपूर्वक रोक रक्खो। भीष्म के बाणों की चोट को तुम्हारे सिवा और कोई नहीं सह सकता।" श्रीकृष्ण के यों कहने पर अर्जुन उस समय भीष्म पर असंख्य बाण बरसाने लगे। ध्वजा, रथ, घोड़े आदि सहित भीष्म को अर्जुन ने अपने बाणों से अदृश्य कर दिया। कुरुश्रेष्ठ भीष्म भी अर्जुन के बाणों को अपने बाणों से काट-कूट करके नष्ट करने लगे। इसी बीच में अर्जुन ने भीष्म के बाणों से पीड़ित

और शोकसागर में निमग्न पाञ्चालराज द्रुपद, पराक्रमी धृष्टकेतु, महाबली भीमसेन, धृष्टद्युम्न, नकुल, सहदेव, चेकितान, पाँचों भाई केकयकुमार, महाबाहु सात्यकि, अभिमन्यु,
४० घटोत्कच, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, शिखण्डी, वीर्यशाली कुन्तिभोज, विराट और युधिष्ठिर आदि सब पाण्डवपक्ष के वीरों की रक्षा की।

तब शिखण्डी बढ़िया धनुष और बाण लेकर वेग से भीष्म पर आक्रमण करने दौड़े। रणनिपुण अर्जुन भी भीष्म के रक्षक अनुचरों को मारकर शिखण्डी की रक्षा करने के लिए भीष्म की ओर चले। महारथी सात्यकि, चेकितान, धृष्टद्युम्न, राजा विराट, राजा द्रुपद, नकुल, सहदेव, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और अन्य सब वीर, अर्जुन के द्वारा सुरक्षित होकर, भीष्म को सामने देखकर ताक-ताककर तीक्ष्ण बाण मारने लगे। संग्राम से न भागनेवाले, दृढ़ धनुष धारण किये हुए वे वीर, भीष्म के ऊपर, कठोर प्रहार करने लगे। महात्मा भीष्म ने खेल की तरह उन सब वीरों के बाणों को खण्ड-खण्ड करके पाण्डव-सेना को मथना शुरू किया। शिखण्डी बारम्बार भीष्म के ऊपर बाण बरसा रहे थे; किन्तु उन्हें पहले की स्त्री समझकर भीष्म
५० ने कोई बाण नहीं मारा। पितामह ने द्रुपद की सेना के सात रथी योद्धा मार डाले। उस समय मत्स्य, पाञ्चाल और चेदि देश के सैनिक किलकिला शब्द करके एक भीष्म के ही ऊपर आक्रमण करने दौड़े। सूर्य को जैसे मेघ ढक लेते हैं वैसे ही मनुष्य, रथ, घोड़े, हाथी आदि की चतुरङ्गिणी सेना ने चारों ओर से भीष्म को घेर लिया। उस देवासुर-संग्राम के समान
५४ घोर युद्ध में शिखण्डी को आगे करके अर्जुन भीष्म के ऊपर बाण बरसाने लगे।

एक सौ उन्नीस अध्याय

भीष्म का गिरना

सञ्जय ने कहा—हे राजेन्द्र! पाण्डवगण और सृञ्जयगण इस तरह मिलकर, शिखण्डी को आगे करके, चारों ओर से पितामह भीष्म को घेरकर उन पर शतघ्नी, परिघ, परशु, मुद्‌गर, मूसल, प्रास, क्षेपणीय, बाण, शक्ति, तोमर, कम्पन, नाराच, वत्सदन्त, भुशुण्डी आदि शस्त्रों के प्रहार करने लगे। वीरों के प्रहारों से मर्मस्थलों में पीड़ा पहुँचने पर भी भीष्म विचलित नहीं हुए। उनका कवच छिन्न-भिन्न हो गया। भीष्म के श्रेष्ठ अस्त्रों का उदयरूप अग्नि शत्रुओं को भस्म कर रहा था। धनुष-बाण उस प्रज्वलित अग्नि की ज्वाला से जान पड़ते थे। रथचक्र का शब्द उस अग्नि का ताप था। भीष्म पितामह शत्रुओं के लिए प्रलयकाल के अग्नि के समान हो रहे थे। विचित्र धनुष ज्वाला के समान था। बड़े-बड़े वीर ईंधन के समान उसमें गिरकर जल रहे थे।

पितामह भीष्म रथों के भीतर से निकलकर फिर शत्रुपक्ष के राजाओं के बीच विचरकर सबको मारने लगे। द्रुपद और धृष्टकेतु को लाँघकर पितामह भीष्म पाण्डवों की सेना में जा घुसे। सात्यकि, भीमसेन, अर्जुन, धृष्टद्युम्न, विराट और द्रुपद, इन छः महारथियों के कवच काटकर भीष्म पितामह अकेले ही भयानक शब्द और वेग से युक्त, मर्मस्थल को फाड़नेवाले, तीक्ष्ण बाण मारने लगे। सात्यकि आदि छहों महारथियों ने भीष्म के उन तीक्ष्ण बाणों को विफल करके उन्हें दस-दस बाण मारे। महारथी शिखण्डी जो सुवर्णपुङ्ख, तीक्ष्णधार, बाण भीष्म को मारते थे उन बाणों से भीष्म को तनिक भी चोट नहीं पहुँचती थी। तब कुपित अर्जुन शिखण्डी को आगे करके भीष्म के सामने पहुँचे। उन्होंने तीक्ष्ण बाणों से भीष्म का धनुष काट डाला। उनके धनुष को कटते देखकर, उत्तेजित होकर कृतवर्मा, द्रोणाचार्य, जयद्रथ, भूरिश्रवा, शल, शल्य और भगदत्त ये वीर श्रेष्ठ और तीक्ष्ण बाण बरसाते हुए अर्जुन की ओर दौड़े। ये सातों महारथी अपने दिव्य अस्त्रों का प्रभाव दिखाते हुए अर्जुन के पास पहुँचे। प्रलयकाल में उमड़ रहे सागर के गरजने का सा शब्द करते हुए ये लोग "मारो, जल्दी करो, पकड़ लो, छेद डालो, काट डालो" इत्यादि बातें कहने लगे। अर्जुन के रथ के पास उन लोगों का कोलाहल सुनकर पाण्डव पक्ष के सात महारथी सात्यकि, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, विराट, द्रुपद, घटोत्कच और अभिमन्यु उधर ही चले। ये लोग कुपित होकर धनुष चढ़ाते हुए फुर्ती के साथ अर्जुन के समीप पहुँचे। देवासुर-संग्राम में देवताओं के साथ दानवों का जैसे घोर संग्राम हुआ था, वैसे ही कौरव पक्ष के सात वीरों के साथ पाण्डव पक्ष के सात वीरों का घोर युद्ध होने लगा।

भीष्म का धनुष कट जाने पर शिखण्डी ने दस बाण उनको और दस बाण सारथी को मारे। फिर एक बाण से उनके रथ की ध्वजा काट डाली। भीष्म ने दूसरा धनुष हाथ में लिया। अर्जुन ने फुर्ती के साथ तीन बाणों से उसे भी काट डाला। इस तरह भीष्म ने जो धनुष लिया वही अर्जुन ने काट डाला। तब कुपित होकर ओठ चाट रहे भीष्म ने अर्जुन के रथ पर एक प्रज्वलित वज्रतुल्य और पहाड़ को भी तोड़ डालनेवाली शक्ति फेंकी। अर्जुन ने पाँच

भल्ल बाणों से उस शक्ति के पाँच टुकड़े करके पृथ्वी पर गिरा दिये। क्रुद्ध अर्जुन के बाणों से
३० कटी हुई वह शक्ति बादल के बीच से गिरते हुए बिजली के टुकड़ों के समान जान पड़ने लगी।

उस शक्ति को इस तरह निष्फल देखकर भीष्म बहुत ही कुपित हुए। वे सोचने लगे कि अगर महाप्रतापी योगेश्वर वासुदेव इनके रक्षक न होते तो मैं पाँचों पाण्डवों को एक ही धनुष से मार सकता था। किन्तु पाण्डव मारे नहीं जा सकते, और स्त्री-जाति होने के कारण शिखण्डी भी अवध्य है। इन दोनों कारणों से अब मैं पाण्डवों के साथ युद्ध न करूँगा। पिता ने दूसरे विवाह के समय—निषाद-कन्या काली से व्याह करने के समय—मुझ पर प्रसन्न होकर मुझे दो वर दिये थे। एक तो यह कि मैं जब चाहूँ तब मरूँ और दूसरा यह कि युद्ध में कोई मुझे जीत न सके। मैं समझता हूँ कि मेरी मृत्यु का यही उपयुक्त समय है। क्योंकि ज़िन्दगी से मैं ऊब चुका हूँ।

पितामह भीष्म यों सोच रहे थे कि इसी समय आकाश में स्थित ऋषियों और वसुओं ने भीष्म के इस विचार को जानकर कहा—"हे तात भीष्म! तुम जो सोच रहे हो वही हमें पसन्द है। इसलिए अपना और हमारा प्रिय करने को तुम युद्ध बन्द करके अपना कर्तव्य करो।" महाराज, ऋषियों के यों कहने पर अनुकूल, सुगन्धित, जलकणयुक्त और धीमी हवा चलने लगी। देवलोक में नगाड़े बजने लगे और भीष्म के ऊपर आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। ऋषियों के पूर्वोक्त वचन भीष्म के सिवा और किसी ने नहीं सुने। वेदव्यास
४० की कृपा के प्रभाव से मुझे भी वे वचन सुन पड़े। हे नरनाथ, सब लोगों के प्रिय भीष्म के रथ से गिरने की बात जानकर सब देवता भी घबरा गये।

महातपस्वी भीष्म ने देवताओं और ऋषियों के उक्त वचन सुनकर, सब आवरणों को तोड़कर शरीर में घुसनेवाले तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित होकर भी, अर्जुन पर प्रहार करना छोड़ दिया। उस समय शिखण्डी ने कुपित होकर और भी वेग से भीष्म की छाती में नव बाण मारे। किन्तु जैसे भूकम्प के समय भी पर्वत नहीं हिलते वैसे ही शिखण्डी के उन बाणों से भीष्म विचलित नहीं हुए। तब महाधनुर्द्धर अर्जुन ने हँसकर क्रोध के साथ गाण्डीव धनुष खींचकर पचीस क्षुद्रक बाण भीष्म को मारे। अर्जुन फुर्ती के साथ और भी सैकड़ों-हज़ारों बाण भीष्म के मर्मस्थलों और सब अङ्गों में मारने लगे। इसी तरह और योद्धा भी भीष्म को हज़ारों बाण मारने लगे। सत्यपराक्रमी भीष्म ने अपने बाणों से उन सब बाणों को नष्ट कर दिया। महारथी शिखण्डी ने सुवर्णपुङ्ख तीक्ष्ण बाण भीष्म को मारे। परन्तु उन बाणों के
५० लगने से भीष्म को तनिक भी व्यथा नहीं हुई।

अब अर्जुन ने कुपित होकर, शिखण्डी को आगे करके, भीष्म का धनुष काट डाला। दस बाण उनके सारथी को मारे, एक बाण से ध्वजा काट डाली और नव बाण उनके शरीर में

ऋषियों और वसुओं ने भीष्म के इस विचार को जान कर कहा—हे तात भीष्म, तुम जो सोच रहे हो वही हमें पसन्द है ।—२१५२

मारे। इस पर भीष्म ने दूसरा धनुष लिया। अर्जुन ने तीन भल्ल बाणों से उसे भी काट डाला। इसके बाद भीष्म ने जितने धनुष हाथ में लिये उन सबको अर्जुन ने फुर्ती के साथ अपने बाणों से काट डाला। तब भीष्म ने अर्जुन के ऊपर प्रहार करने का उद्योग छोड़ दिया। किन्तु अर्जुन ने फिर भी उनके मर्मस्थल में पचीस क्षुद्रक बाण मारे।

महारथी भीष्म का शरीर अर्जुन के बाणों से बहुत ही घायल हो गया। तब भीष्म ने कहा—वीर दुःशासन, ये पाण्डव पक्ष के महारथी अर्जुन कुपित होकर लगातार हज़ारों बाण मुझी को मार रहे हैं। वज्रपाणि इन्द्र समेत सब देवता, दानव और राक्षस आदि भी मिलकर न तो मुझे जीत सकते हैं और न अर्जुन को; फिर मनुष्य जाति के महारथी वीर मेरा क्या कर सकते हैं?

महावीर भीष्म दुःशासन से यों कह रहे थे, इसी समय शिखण्डी के पीछे स्थित अर्जुन अत्यन्त तीक्ष्ण बाण मारकर भीष्म को घायल करने लगे। गाण्डीव धनुष से छूटे हुए बहुत ही तीक्ष्ण भयानक बाणों से अत्यन्त वेधे जाते हुए भीष्म ने हँसकर फिर दुःशासन से कहा—हे दुःशासन, ये जो वज्रतुल्य बाण लगातार आकर मेरे शरीर में लग रहे हैं, वे शिखण्डी के बाण नहीं हैं। ये जो मूसल के समान बाण आकर दृढ़ कवच को तोड़कर मेरे मर्मस्थलों को छेद रहे हैं, वे शिखण्डी के बाण नहीं हो सकते। ये जो वज्र के समान वेग से आकर ब्रह्मदण्ड के समान मेरे शरीर में लगते हैं और मेरे जीवन को क्षीण कर रहे हैं, वे बाण शिखण्डी के नहीं हैं। ये जो गदा और परिघ के समान बाण यमदूत की तरह आकर मेरे प्राणों को नष्ट कर रहे हैं, वे बाण शिखण्डी के नहीं हैं। ये जो क्रुद्ध उत्तेजित नाग के समान बाण तेज़ी से आकर मेरे मर्मस्थल में प्रवेश कर रहे हैं, वे शिखण्डी के नहीं हैं। ये बाण जो मेरे शरीर को छेद रहे हैं, कभी शिखण्डी के नहीं हैं। ये बाण तो अर्जुन के ही हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। गाण्डीव धनुष धारण करनेवाले महावीर महाबली अर्जुन के सिवा और किसी क्षत्रिय का प्रहार मुझे क्लेश नहीं पहुँचा सकता।

९०

इतना कहकर माने अर्जुन को भस्म कर डालने की इच्छा से भीष्म ने उन पर एक शक्ति फेकी। अर्जुन ने सब कौरवों के सामने ही तीन बाणों से उस शक्ति के तीन टुकड़े कर डाले। मृत्यु अथवा विजय, दो में से एक के लिए भीष्म ने सुवर्णभूषित ढाल और तलवार हाथ में ली। भीष्म रथ पर से उतरने भी नहीं पाये कि अर्जुन ने फुर्ती के साथ तीक्ष्ण बाणों से उस ढाल और ७० तलवार के सौ टुकड़े कर डाले। अर्जुन का यह काम अत्यन्त अद्भुत जान पड़ा।

राजन्, इसी समय राजा युधिष्ठिर ने अपने सैनिकों से कहा—"हे वीरो, तुम लोग शीघ्र भीष्म के ऊपर आक्रमण करो। तुम्हें भीष्म से डरना न चाहिए।" तब सब लोग मिलकर अकेले भीष्म के ऊपर आक्रमण करने के लिए तोमर, प्रास, बाण, पट्टिश, खड्ग, नाराच, वत्सदन्त और भल्ल आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर दौड़े। उस समय पाण्डव लोग और उनके पक्ष के वीर लोग घोर सिंहनाद करने लगे। उधर भीष्म की जय चाहनेवाले आपके पुत्र भी अकेले भीष्म की रक्षा करते हुए घोर सिंहनाद करने लगे। उस समय भीष्म और अर्जुन के युद्ध में कौरव और पाण्डव परस्पर भिड़कर बड़ी विकट लड़ाई लड़ने लगे। जैसे समुद्र में भारी हलचल मचे, वैसे ही दोनों सेनाएँ थोड़ी देर तक बड़े वेग से दौड़-दौड़कर परस्पर प्रहार और प्राणनाश करती रहीं। पृथ्वी में रक्त की कीचड़ मच गई। ऊँचा और नीचा कुछ नहीं जान पड़ता था। पृथ्वी का रूप बड़ा भयङ्कर हो उठा। महात्मा भीष्म ने दसवें दिन भी दस हज़ार योद्धाओं को मारकर मर्मस्थलों में अत्यन्त घायल और पीड़ित होने पर युद्ध रोक दिया। उधर महारथी अर्जुन सेना के अग्रभाग में खड़े होकर बाणवर्षा से कौरव-सेना को मारने और भगाने लगे। महाराज, ८० हमारे पक्ष के सब योद्धा अर्जुन के बाणों से अत्यन्त व्यथित और भीत होकर भागने लगे। राजन्! सौवीर, कितव, प्राच्य, प्रतीच्य, उदीच्य, मालव, अभीषाह, शूरसेन, शिबि, वसाति, शाल्व, त्रिगर्त, अम्बष्ठ और केकय, इन देशों के वीरों ने और उनकी सेना के लोगों ने संग्राम में अर्जुन के बाणों से पीड़ित और अत्यन्त घायल होकर भी भीष्म का साथ नहीं छोड़ा। अब पाण्डव पक्ष के सब वीरों ने मिलकर भीष्म को चारों ओर से घेर लिया। [शिखण्डी को आगे करके अर्जुन तो भीष्म पर प्रहार कर रहे थे और अन्य वीरगण बाणों की वर्षा करके कौरव-सेना के योद्धाओं को दूर भगा रहे थे।] उस समय पाण्डव पक्ष के लोग भीष्म के रथ के पास "गिरा दो, पकड़ लो, युद्ध करो, छिन्न-भिन्न कर दो" इत्यादि कहते हुए घोर कोलाहल करने लगे।

महाराज, भीष्म के शरीर में दो अंगुल भी ऐसी जगह न थी जहाँ वीर अर्जुन के बाण न घुस गये हों। राजन्! ऐसी दशा में आपके पिता बाल-ब्रह्मचारी भीष्म, आपके पुत्रों के सामने ही, पूर्व की ओर सिर करके रथ से नीचे गिर पड़े। उस समय सूर्य के अस्त होने में कुछ ही देर थी। आकाश में देवता और पृथ्वी में सब राजा लोग हाहाकार करने लगे। महात्मा भीष्म को रथ से नीचे गिरते देखकर हम लोगों के हृदय भी उनके साथ ही गिर पड़े। सब धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ पितामह

गङ्गा ने भीष्म की इच्छा जानकर महर्षियों को हंसरूप में उनके पास भेजा ।—२१९९

भीष्म जिस समय इन्द्र की ध्वजा के समान पृथ्वी पर गिरे उस समय पृथ्वी काँप उठी और घोर शब्द होने लगा। पितामह के शरीर में इतने बाण घुसे हुए थे कि रथ से नीचे गिरने पर भी उनका शरीर पृथ्वी में नहीं छू गया। वे उन्हीं बाणों की शय्या पर गिर गये। उस समय उनके हृदय में दिव्य सात्त्विक भाव का उदय हो आया। पृथ्वी काँप उठी और मेघ जल बरसाने लगे। ९१

राजन्! गिरते समय भीष्म ने सूर्य को दक्षिणायन में देखा था, इसी लिए उन्होंने उस समय प्राण-त्याग नहीं किये। उपयुक्त समय न देखकर वे फिर सचेत हो गये। उसी समय अन्तरिक्ष से उन्हें यह आकाशवाणी सुन पड़ी "सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ पुरुषसिंह महात्मा भीष्म ने दक्षिणायन सूर्य में कैसे प्राण-त्याग किये?" यह देववाणी सुनकर भीष्म ने उत्तर दिया—"मैं अभी जीता हूँ।" पितामह भीष्म इस तरह दक्षिणायन काल में गिरकर भी सद्गति की इच्छा से उत्तरायण सूर्य की बाट जोहने लगे।

हिमवान् की कन्या और भीष्म की माता गङ्गा ने भीष्म की इच्छा जानकर महर्षियों को हंसरूप में उनके पास भेजा। भीष्म को देखने वे महर्षि उस स्थान पर आये, जहाँ वे पुरुषसिंह बाणों की शय्या पर पड़े हुए थे। हंसरूपी ऋषियों ने वहाँ पहुँचकर, भीष्म को देखकर, उनकी प्रदक्षिणा की। सूर्य के दक्षिण ओर स्थित ऋषियों ने परस्पर कहा—"महात्मा होकर भीष्म कैसे दक्षिणायन सूर्य में प्राण-त्याग करेंगे?" महामति भीष्म ने मन में विचारकर उन ऋषियों की ओर देखकर कहा—"मैंने मन में निश्चय कर लिया है कि दक्षिणायन सूर्य में प्राण-त्याग नहीं करूँगा। हे हंसो, मैं सच कहता हूँ, उत्तरायण सूर्य होने पर प्राणत्याग कर मैं अपने धाम को जाऊँगा। उत्तरायण सूर्य आने तक मैं जीता रहूँगा; क्योंकि पिता ने मुझको मृत्यु पर आधिपत्य का वर दिया है कि मैं जब चाहूँ तभी मरूँ। इसी से मैं जीवित हूँ। उपयुक्त समय आने पर मरूँगा।" हंसों से इतना कहकर भीष्म उसी शरशय्या पर लेटे रहे। १०१

राजन्, कुरुकुलतिलक महात्मा महाबली और अवध्य भीष्म के गिरने पर पाण्डव और सृञ्जयगण आशातीत आनन्द के मारे सिंहनाद करने लगे। महासत्त्व पितामह के हत होने पर आपके पुत्र किङ्कर्तव्य-विमूढ़ और शोक से व्याकुल हो उठे। कुरुवंश के सब लोग घबरा गये। कृपाचार्य और दुर्योधन आदि लम्बी-लम्बी साँसें लेते हुए रोने लगे। खेद के मारे बहुत देर तक वे जड़ की तरह खड़े रहे। उनकी इन्द्रियाँ निश्चेष्ट हो गईं। युद्ध के लिए वे उद्यत न हो सके। जैसे किसी ने उनके पैरों को पकड़ लिया हो इस तरह वे लोग पाण्डवों पर आक्रमण करने के लिए नहीं दौड़ सके। महापराक्रमी और अवध्य भीष्म के गिरने पर कुरुराज दुर्योधन को चारों ओर शून्य और अँधेरा देख पड़ने लगा। हम लोगों के सब अङ्ग अर्जुन के बाणों से क्षत-विक्षत हो रहे थे, हमारे अनेक वीर और अजेय भीष्म भी मारे जा चुके थे। अर्जुन से हारे हुए हम लोग कुछ अपना कर्तव्य न निश्चित कर सके। ११

पाण्डव लोग इस लोक में विजय और परलोक के लिए परम गति प्राप्त करके आनन्द से शङ्ख बजाने लगे। सृञ्जय, सोमक और पाञ्चालगण आनन्द से पुलकित हो उठे। सैकड़ों तुरही और नगाड़े बजने लगे। महाबली भीमसेन बारम्बार सिंहनाद करते हुए ताल ठोंकने और उछलने लगे। भीष्म के मरने पर दोनों पक्ष के सैनिक शस्त्रों को रखकर चिन्ता करने लगे। कुछ लोग चिल्लाने लगे और कुछ लोग खेद और दुःख से अचेत-से हो गये। कुछ लोग क्षत्रिय-धर्म की निन्दा करने लगे और कुछ लोग महात्मा भीष्म की प्रशंसा करने लगे। ऋषिगण, पितृगण और भरतकुल के स्वर्गवासी पूर्व-पुरुषगण भीष्म को साधुवाद देने लगे। महावीर भीष्म शरशय्या पर पड़े-पड़े उत्तरायण सूर्य की प्रतीक्षा करते हुए १२२ योगधारणपूर्वक महोपनिषद (गायत्री या प्रणव) का जप करने लगे।

एक सौ बीस अध्याय

दोनों पक्ष के वीरों का भीष्म के पास आना और उनको तकिया देना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! पिता के लिए आजन्म ब्रह्मचारी रहनेवाले देवतुल्य महात्मा भीष्म के गिर जाने पर, उनसे हीन, मेरे पक्ष के योद्धाओं की क्या दशा हुई? जब घृणा के कारण भीष्म ने द्रुपद के पुत्र शिखण्डी पर वार नहीं किया, तभी मैंने समझ लिया कि पाण्डवों के हाथों कौरव मारे गये। हा! इससे बढ़कर और क्या दुःख होगा? पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर भी मुझ दुर्मति का हृदय सौ टुकड़े होकर फट क्यों नहीं जाता? मेरा हृदय अवश्य ही वज्र का बना हुआ है। हे सुव्रत, जय की इच्छा रखनेवाले कुरुसिंह भीष्म ने युद्ध में गिरने के बाद और जो कुछ किया हो वह मेरे आगे कहो। देवव्रत को बारम्बार शत्रुओं ने बाणों से मारा, यह अनर्थ मुझसे नहीं सहा जाता। जिन पराक्रमी भीष्म को पहले दिव्य अस्त्रों के द्वारा परशुराम भी नहीं मार सके, वही भीष्म आज पाञ्चालकुमार शिखण्डी के हाथ से मारे गये!

सञ्जय ने कहा—राजन्, पितामह भीष्म सन्ध्या के समय रथ से गिरकर कौरवों को विषादमग्न और पाण्डवों तथा पाञ्चालों को आनन्दित करते हुए शरशय्या पर लेट गये। उनका शरीर पृथ्वी से ऊपर ही रहा। असंख्य बाणों से छिन्न-भिन्न होकर भीष्म जब रथ से गिरे तब सब लोग हाहाकार करने लगे। सीमावृक्ष की तरह दोनों सेनाओं के बीच में जब भीष्म १० गिर पड़े तब दोनों पक्ष के क्षत्रिय अत्यन्त भयभीत और उद्विग्न हो उठे। कवच और ध्वजा जिनकी कट गई है ऐसे पितामह भीष्म के गिरने पर कौरव और पाण्डव दोनों ने युद्ध बन्द कर दिया। उस समय आकाश में घना अँधेरा छा गया और अस्त होते हुए सूर्य की प्रभा मलिन हो गई। पृथ्वी के फटने का सा दारुण शब्द होने लगा। पुरुषश्रेष्ठ भीष्म को शरशय्या पर

पड़े देखकर सब प्राणी कहने लगे कि ये महात्मा श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी और ब्रह्मज्ञानियों की गति हैं। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखकर सिद्ध-चारणों-सहित ऋषिगण आपस में कहने लगे कि इन्होंने पूर्व-समय में अपने पिता शान्तनु को कामपीड़ित देखकर, उन्हें सुखी करने के लिए, जन्म-भर नैष्ठिक ब्रह्मचारी रहने का प्रण किया था। महाराज, भरतवंश के पितामह भीष्म के मारे जाने पर आपके पुत्रों को कुछ नहीं सूझ पड़ता था कि वे क्या करें। वे श्रीहीन लज्जित विषाद-मग्न होकर, सिर झुकाकर, शोक करने लगे। उधर संग्रामभूमि में स्थित पाण्डव लोग विजय पाकर सुवर्णभूषित महाशङ्ख बजाने लगे। अनेक तुरही और नगाड़े आदि बजाकर पाण्डवों की सेना हर्ष प्रकट करने लगी। महाबली शत्रु के मारे जाने के कारण परम आनन्दित भीमसेन बालकों की तरह उछलने और कूदने लगे। किन्तु कौरवगण घबरा गये। कर्ण और २० दुर्योधन [सन्ताप, क्षोभ और क्रोध के मारे] बारम्बार साँसें लेने लगे। सब लोग व्यग्रभाव से इधर-उधर दौड़ते हुए हाहाकार करने लगे।

भीष्म के गिरने पर दुर्योधन की आज्ञा से कवचधारी दुःशासन अपनी सेना लेकर बड़े वेग से द्रोणाचार्य के दल में गये। दुःशासन को आते देखकर, ये क्या कहेंगे, इस कौतूहल से सब कौरवों ने उनको चारों ओर से घेर लिया। दुःशासन ने द्रोणाचार्य के पास जाकर भीष्म के गिरने का हाल कहा। वह अप्रिय समाचार सुनते ही द्रोणाचार्य मूर्च्छित हो गये। होश आने पर प्रतापी द्रोणाचार्य ने अपनी सेना को युद्ध बन्द कर देने की आज्ञा दी। कौरवों को युद्ध बन्द करते देखकर पाण्डवों ने भी शीघ्रगामी घोड़ों पर दूतों को भेजकर युद्ध बन्द करा दिया।

सब सेनाएँ युद्ध बन्द करके जमा हुईं। तब सब राजा लोग कवच खोलकर भीष्म के पास आये। सैकड़ों-हज़ारों योद्धा युद्ध बन्द करके, प्रजापति के पास देवताओं की तरह, पितामह भीष्म के पास आये। इस तरह पाण्डव और कौरव दोनों, शरशय्या पर लेटे हुए, भीष्म ३० के पास आकर उन्हें प्रणाम करके सामने खड़े हो गये। तब धर्मात्मा भीष्म ने उन सबसे स्नेह

के साथ कहा—महाभाग क्षत्रियो, मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। महारथी वीरो, मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। हे वीरो, मैं तुम्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुआ।

हे भरतश्रेष्ठ, भीष्म का सिर नीचे लटक रहा था। उन्होंने सबका स्वागत करने के बाद कहा— 'हे राजाओ! मेरा सिर बहुत नीचे लटक रहा है, इसलिए मुझे तकिया दो।" राजा लोग और कौरवगण उसी समय बढ़िया कोमल मूल्यवान् तकिये लेकर दौड़े आये; किन्तु भीष्म ने उनके लिए अनिच्छा प्रकट करके हँसकर कहा—"नरपतियो, ये तकिये वीरशय्या के योग्य नहीं हैं।" अब अर्जुन की ओर देखकर कहा—हे महाबाहु अर्जुन, मेरा सिर बहुत नीचे लटक रहा है। तुम इस वीरशय्या के योग्य जो तकिया समझते हो, वह मुझे दो।

सञ्जय कहते हैं कि महाराज! तब अर्जुन ने आँखों में आँसू भरकर, श्रेष्ठ गाण्डीव धनुष चढ़ाकर, पितामह को प्रणाम करके कहा—पितामह, मैं आपका आज्ञापालक हूँ। हे धनुर्द्धर-श्रेष्ठ, कुरुश्रेष्ठ! आज्ञा दीजिए क्या करूँ? भीष्म ने कहा—बेटा, मेरा सिर नीचे लटक रहा है। अर्जुन! तुम समर्थ, सब धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ, क्षत्रिय-धर्म के ज्ञाता और बुद्धिमान् हो। तुम सत्व और गुण से सम्पन्न वीर पुरुष हो। इसलिए वीर-शय्या के योग्य तकिया मुझे दो।

४०

"जो आज्ञा" कहकर, अपना कर्तव्य विचारकर, शत्रुविजयी अर्जुन ने गाण्डीव को अभिमन्त्रित किया और तीक्ष्ण धारवाले तीन बाण लेकर उस पर चढ़ाये। फिर पितामह को प्रणाम करके वे तीनों बाण मस्तक में मारे। उन बाणों पर तकिये के समान भीष्म का सिर ठहर गया। सुहृदों का आनन्द बढ़ानेवाले अर्जुन ने ठीक तकिया दिया, यह देखकर धर्मात्मा धर्मार्थतत्त्व के ज्ञाता भीष्म उन पर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अर्जुन का अभिनन्दन करके सब कौरवों की ओर देखकर कहा—हे अर्जुन, तुमने इस वीरशय्या के योग्य तकिया मुझे दिया। तुम यह न देकर और तरह का तकिया देते, तो मैं कुपित होकर तुमको शाप दे देता। हे महाबाहु, संग्राम में धर्मनिरत क्षत्रियों के लिए ऐसी ही शय्या और ऐसा ही तकिया चाहिए।
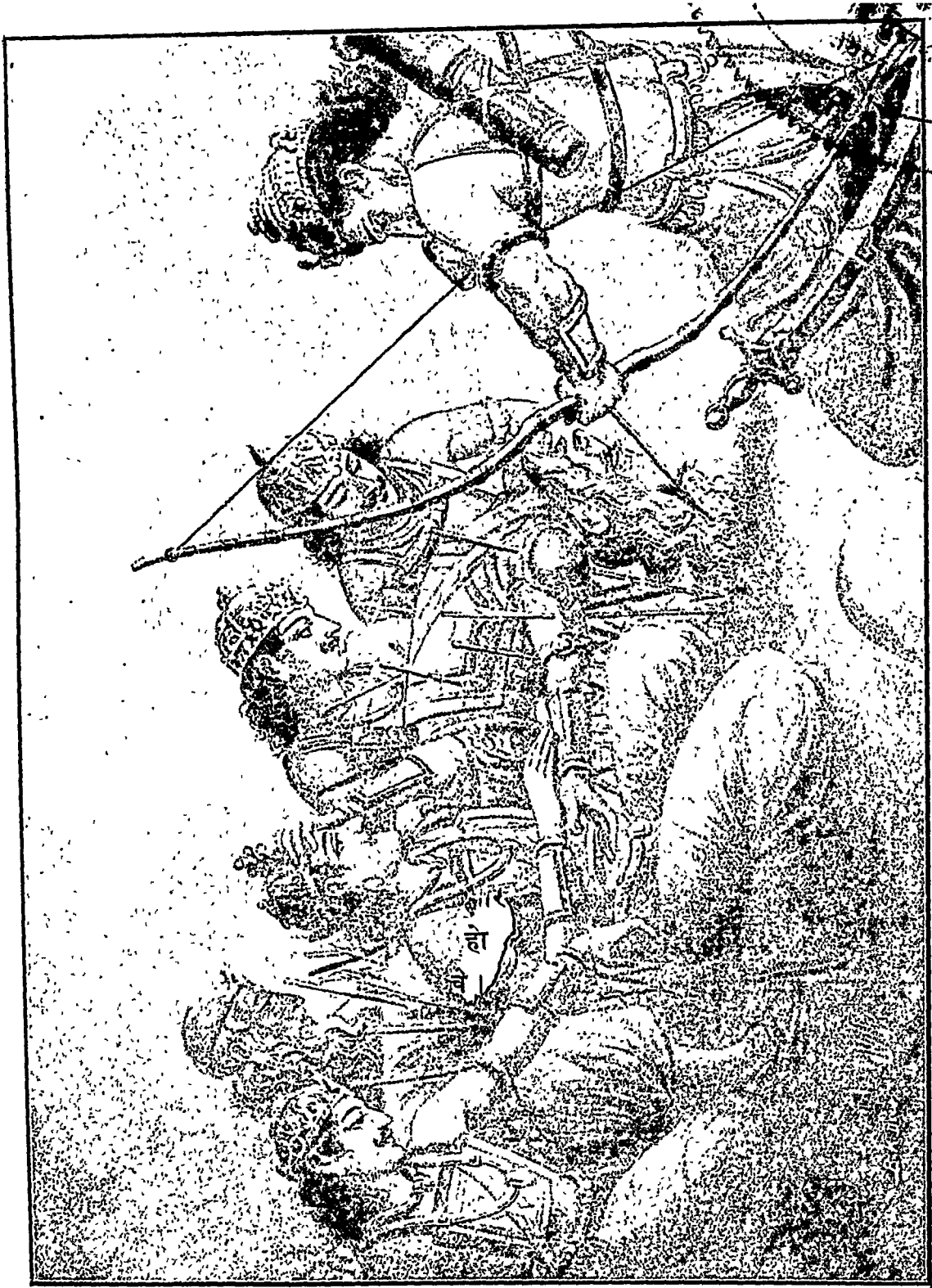
अर्जुन ने गाण्डीव को अभिमन्त्रित किया और......तीन बाण लेकर उस पर चढ़ाये। फिर पितामह को प्रणाम करके वे तीनों बाण उनके मस्तक में मारे।—२१२८

महाराज धृतराष्ट्र सञ्जय से इस तरह पूछते पूछते हार्दिक शोक से व्याकुल और अपने पुत्रों की जय से निराश हो अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़े।—२१८२

महात्मा भीष्म ने अर्जुन से यों कहकर उनके पास खड़े हुए राजाओं और राजपुत्रों से कहा—राजाओ और राजपुत्रो, देखो, अर्जुन ने मुझे यह तकिया दिया है। मैं सूर्य के उत्तरायण होने तक इसी शय्या पर लेटा रहूँगा। सूर्य जब सात घोड़ों से युक्त और तेज से प्रदीप्त रथ पर चढ़कर उत्तरायण मार्ग में प्राप्त होंगे तब जो लोग मेरे समीप आवेंगे वे देखेंगे कि मैं अपने प्रियतम प्राणों को छोड़ूँगा। इस समय तुम लोग मेरे इस निवासस्थान के चारों ओर खाई खोद दो। मैं यहीं शरशय्या पर भगवान् सूर्य की उपासना करूँगा। मेरा यह भी अनुरोध है कि तुम लोग परस्पर वैर-भाव छोड़कर यह युद्ध बन्द कर दो। ५०

सञ्जय कहते हैं—अब दुर्योधन की आज्ञा से शल्य-चिकित्सा में निपुण सुशिक्षित वैद्य लोग मरहम-पट्टी का सब सामान लेकर, चिकित्सा के लिए, भीष्म पितामह के पास आये। धर्मात्मा भीष्म ने उन्हें देखकर राजा दुर्योधन से कहा—तुम इन चिकित्सकों को जो कुछ देना है वह धन देकर सत्कार के साथ विदा कर दो। मैंने क्षत्रिय की प्रशंसनीय गति प्राप्त की है, इस समय इन वैद्यों की क्या ज़रूरत है? हे राजा लोगो, मैं शरशय्या पर लेटा हुआ हूँ; यह मेरा धर्म नहीं है कि चिकित्सा कराकर फिर आरोग्य होने की इच्छा करूँ। देखो, इन बाणों की ही चिता में मुझे भस्म करना।

राजा दुर्योधन ने पितामह भीष्म की यह आज्ञा सुनकर वैद्यों को, यथोचित धन देकर, सत्कार के साथ विदा कर दिया। महाराज, अनेक देशों के निवासी राजा लोग महातेजस्वी भीष्म की यह धर्मनिष्ठा और धर्मानुकूल मृत्यु की व्यवस्था देखकर चकरा गये। उन सब राजाओं, कौरवों और पाण्डवों ने भीष्म के पास जाकर उन्हें प्रणाम किया, और तीन बार उनकी प्रदक्षिणा की। फिर उनके चारों ओर रक्षक नियुक्त करके सब लोग चिन्ता करते हुए अपने-अपने शिविर को गये। सन्ध्या हो जाने पर रुधिर-लिप्त, घायल और थके हुए सब लोग दीन भाव से अपने डेरों में पहुँचे। ६१

भरतकुल-पितामह भीष्म के युद्ध में गिरने पर प्रसन्न पाण्डवगण अपने शिविर में एकत्र हुए। उस समय महात्मा श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के पास आकर कहा—महाराज, आपने समर में अमर-सदृश भीष्म को गिराकर आज जय प्राप्त की, इससे बढ़कर सौभाग्य क्या हो सकता है। देवता, मनुष्य, दानव आदि कोई भी इन युद्ध-निपुण सत्यव्रत भीष्म को युद्ध में परास्त नहीं कर सकता; किन्तु आपकी घोर दृष्टि में पड़कर ही आज उनकी मृत्यु हुई। आप जिसको कोप की दृष्टि से देखें वह किसी तरह नहीं बच सकता।

तब धर्मराज ने जनार्दन को सम्बोधन करके कहा—हे श्रीकृष्ण, तुम्हारे ही प्रसाद और अनुग्रह से आज हमने जय पाई है। तुम्हारे ही कोप से कौरव परास्त हुए हैं। तुम हमारे लिए परम आश्रय और भक्तों को अभय देनेवाले हो। तुम जिनके हितैषी और रक्षक हो,

उनकी जय होने में आश्चर्य ही क्या है ? तुमको सर्वथा अपना आश्रय बना लेनेवाला जो पा जाय वह थोड़ा है। मैं यही समझता हूँ।

धर्मराज के ये वचन सुनकर महात्मा श्रीकृष्ण मुसकराकर बोले—महाराज, ऐसे नम्र ७१ वचन कहना सर्वथा आपके ही योग्य काम है।

एक सौ इक्कीस अध्याय

अर्जुन का भीष्म को जल पिलाना

सञ्जय बोले—महाराज ! रात बीतने पर सवेरे फिर कौरव, पाण्डव और उनके अधीन अन्य राजा लोग शरशय्या पर पड़े हुए महारथी भीष्म के पास गये। उन्हें सबने प्रणाम किया। हज़ारों कन्याएँ वहाँ जाकर भीष्म के ऊपर चन्दनचूर्ण, खीलें, माला-फूल आदि बरसाने लगीं। प्रजा जैसे भगवान् सूर्य की उपासना करती है वैसे ही स्त्रियाँ, बालक, वृद्ध और अन्यान्य दर्शक लोग भीष्म को देखने के लिए उनकी सेवा में उपस्थित होने लगे। बाजे बजानेवाले, नट, नर्तक और अनेक प्रकार के शिल्पी लोग भी भीष्म के पास गये। कौरव और पाण्डवगण अस्त्र, शस्त्र, कवच आदि युद्ध की सज्जा त्यागकर, पहले की ही तरह प्रीतिपूर्वक अवस्था की छुटाई-बड़ाई के क्रम से, भीष्म के पास बराबर-बराबर बैठे। असंख्य राजाओं के बीच तेजस्वी भीष्म से शोभित वह भरतकुल की सभा आकाश में स्थित सूर्यमण्डल के समान शोभित हुई। देवगण जैसे इन्द्र की उपासना करते हैं वैसे ही सब नरपति भीष्म के पास शोभायमान हुए। महात्मा भीष्म असंख्य बाणों से विंधे हुए और पीड़ित होकर भी धैर्य से उस वेदना को सँभाले हुए थे। उन्होंने नागराज की तरह लम्बी साँस लेकर, सब राजाओं की ओर देखकर, पीने के ११ लिए जल माँगा। उसी समय क्षत्रियगण चारों ओर से अनेक प्रकार के उत्तम भोजन और स्वादिष्ठ शीतल जल से भरे कलश ले आये। भीष्म ने वह जल देखकर राजाओं से कहा—हे नरपालो, मैं इस शरशय्या पर लेटा हुआ हूँ सही, किन्तु अब मनुष्यलोक में मेरा निवास नहीं है। केवल उत्तरायण की प्रतीक्षा में मेरे प्राण अटके हुए हैं [वास्तव में मैं मृततुल्य और परलोकवासी हो चुका हूँ। यह समय ऐसा नहीं कि मैं इस लोक का सुन्दर भोजन और यह जल ग्रहण करूँ]। इस प्रकार राजाओं की निन्दा करके महात्मा भीष्म फिर बोले—हे नरपतियो, इस समय अर्जुन को देखने की मुझे बड़ी इच्छा है।

महाराज, तब महाबाहु अर्जुन ने पितामह के पास जाकर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर कहा—हे पूज्य पितामह, मुझे क्या आज्ञा है ? धर्मात्मा भीष्म ने पराक्रमी अर्जुन को सामने देखकर, उनका सत्कार करके, प्रसन्नतापूर्वक कहा—बेटा अर्जुन, तुम्हारे बाणों की जलन से मेरा

तब महावीर अर्जुन ने रथ पर बैठकर गाण्डीव धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाई ।—२१६१
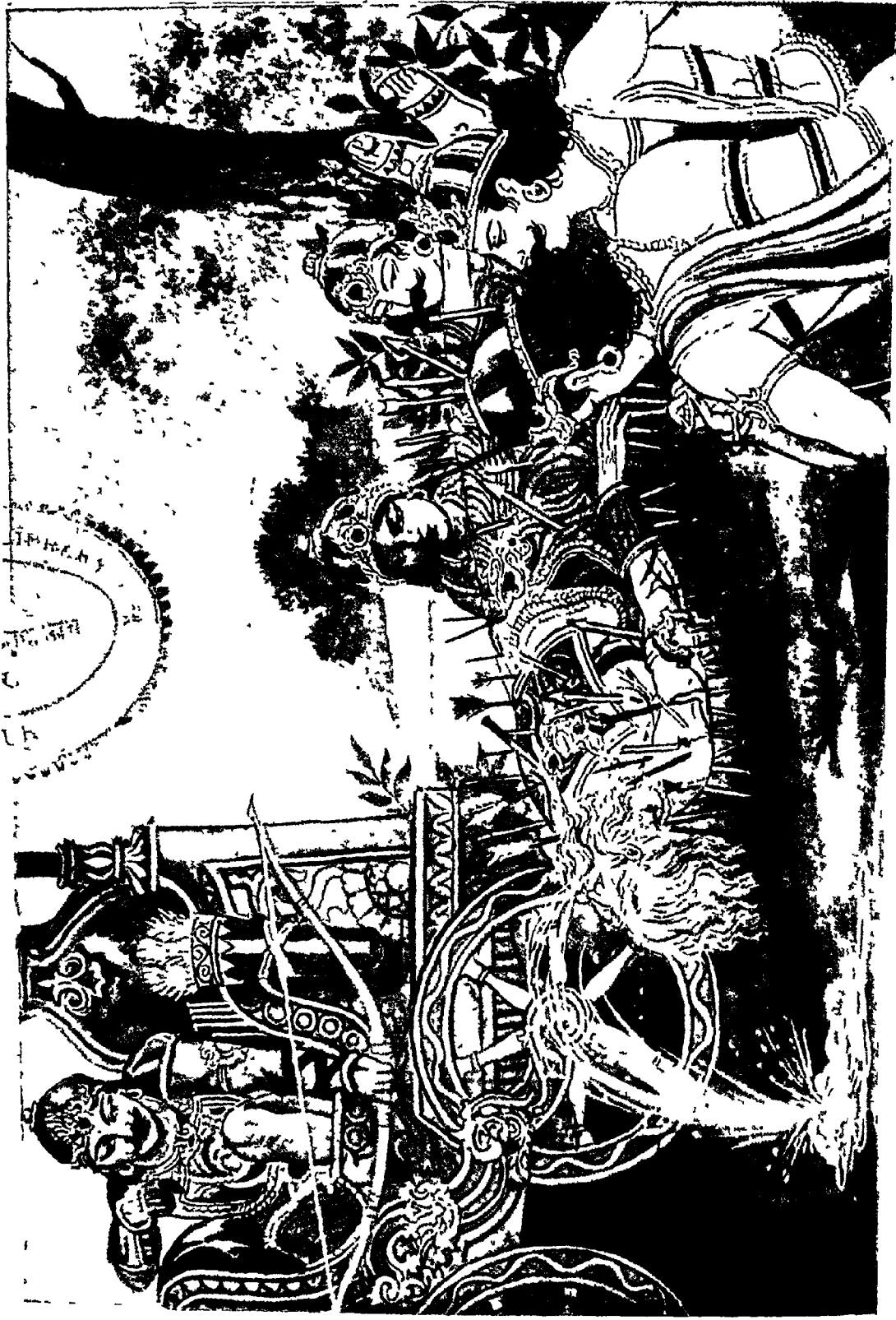
शरीर जल रहा है, मर्मस्थलों में व्यथा हो रही है और मुँह सूख रहा है। मैं वेदना से अत्यन्त पीड़ित हूँ। इसलिए तुम जल देकर मेरी प्यास बुझाओ। हे महारथी, तुम्हारे सिवा और कोई मुझे उपयुक्त रूप से जल नहीं पिला सकता।

तब महावीर अर्जुन ने रथ पर बैठकर गाण्डीव धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाई। वज्र की कड़क के समान वह प्रत्यञ्चा का शब्द सुनकर सब राजा और अन्य लोग डर गये। इसके बाद महारथी अर्जुन ने शरशय्या पर पड़े हुए सर्वशास्त्रज्ञ भरतकुल-श्रेष्ठ पितामह की प्रदक्षिणा करके धनुष पर प्रज्वलित बाण चढ़ाया। फिर उसे अभिमन्त्रित कर, पर्जन्य अस्त्र का प्रयोग करके, भीष्म के दक्षिण पार्श्व में पृथ्वी पर वह बाण मारा। तुरन्त ही पृथ्वी फट गई और उसी स्थान से सुगन्धपूर्ण अमृततुल्य मधुर निर्मल शीतल जल की धारा ऊपर निकली। वह जल पीकर महात्मा भीष्म बहुत प्रसन्न और तृप्त हो गये। इन्द्रसदृश पराक्रमी अर्जुन ने इस तरह भीष्म को जल पिलाया। अर्जुन का यह अद्भुत कार्य देखकर सब राजा लोग अत्यन्त विस्मित होकर दुपट्टे हिलाने लगे तथा कौरव लोग जाड़े से पीड़ित गायों की तरह डर के मारे काँपने लगे। उस समय चारों ओर शङ्ख और नगाड़े बजने लगे। २०

महाराज, इस तरह भीष्म ने तृप्त होकर सब राजाओं के आगे अर्जुन की प्रशंसा करके कहा—हे महाबाहु, तुमने जो काम आज कर दिखाया वह तुम्हारे लिए कुछ विचित्र नहीं है। पहले नारद ऋषि ने मुझसे कहा था कि तुम पुरातन ऋषि नर हो। इन्द्र भी सब देवताओं के साथ मिलकर जो काम करने का साहस नहीं कर सकते वह कार्य तुम, श्रीकृष्ण की सहायता से, अकेले ही करोगे। हे अर्जुन, पृथ्वीमण्डल भर पर तुम अद्वितीय अर्थात् सर्वश्रेष्ठ धनुर्द्धर हो। जैसे सब प्राणियों में मनुष्य, पक्षियों में गरुड़, जलाशयों में सागर, चौपायों में गाय, तेजस्वी पदार्थों में आदित्य, पर्वतों में हिमालय और जातियों में ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, वैसे ही तुम सब धनुर्धारियों में श्रेष्ठ हो। मैं, विदुर, द्रोणाचार्य, बलराम, जनार्दन कृष्ण और सञ्जय, सबने बारम्बार दुर्योधन को हित का उपदेश किया; किन्तु मन्दमति दुर्योधन ने अश्रद्धापूर्वक किसी का कहा नहीं माना। इस कारण शास्त्रमर्यादा का उल्लङ्घन करनेवाला दुर्मति दुर्योधन भीमसेन के बल से बहुत शीघ्र नष्ट होगा। ३०

भीष्म के इन तिरस्कार-वाक्यों को सुनकर कौरवेन्द्र दुर्योधन बहुत ही उदास हुए। उनको दुःखित देखकर महात्मा भीष्म ने कहा—हे दुर्योधन, तुम इस समय क्रोध छोड़ दो। बुद्धिमान् बलविक्रमशाली अर्जुन ने जिस तरह मुझे जल पिलाया, सो तुमने प्रत्यक्ष देख लिया। इस लोक में ऐसा काम और कौन कर सकता है? आग्नेय, वारुण, सौम्य, वायव्य, वैष्णव, ऐन्द्र, पाशुपत और ब्राह्म आदि सब दिव्य अस्त्र महात्मा श्रीकृष्ण और अर्जुन के सिवा और कोई नहीं जानता। भैया, जिनके ऐसे अलौकिक कार्य हैं उन्हें कोई परास्त नहीं कर सकता। राजन्, ४१

इन सत्यपरायण युद्धनिपुण पाण्डवों के साथ मेल कर लो। सर्वशक्तिमान् महात्मा श्रीकृष्ण जिनके पक्ष में हैं उनके साथ मेल कर लेना ही भला है। मरने से बचे हुए तुम्हारे भाई और शेष राजा लोग जब तक मारे न जायँ, उसके पहले ही मेल कर लो। जब तक युधिष्ठिर का कोप रूप प्रज्वलित अग्नि तुम्हारी सारी सेना को भस्म नहीं कर देता, उसके पहले ही मेल कर लो। जब तक नकुल, सहदेव और भीमसेन तुम्हारी सेना के महावीरों को नष्ट नहीं कर देते, उसके पहले ही महावीर पाण्डवों के साथ मेल कर लेना अच्छा है। यही मेरी सम्मति है। मेरी
५० मृत्यु से ही इस युद्ध का अन्त हो जाय। हे दुर्योधन, पाण्डवों के साथ होनेवाले युद्ध की शान्ति के लिए मैंने जो तुमसे कहा है वह तुम्हारे और तुम्हारे कुल के लिए अत्यन्त श्रेयस्कर है। इस-लिए क्रोध त्यागकर शान्त भाव से पाण्डवों के साथ मेल कर लो। अर्जुन ने अब तक जो किया है वही तुम्हारे सावधान होने के लिए काफ़ी है। मेरे विनाश से ही इस घोर हत्याकाण्ड की समाप्ति हो जाय और तुम लोग शान्ति प्राप्त करो। पाण्डवों को आधा राज्य दे दो; युधिष्ठिर इन्द्रप्रस्थ में जाकर राज्य करें। हे कुरुराज! राजाओं की निन्दित नीच वृत्ति जो मित्रद्रोह है, उसमें लिप्त होकर अकीर्ति मत बटोरो। मेरे अन्त से ही प्रजा शान्ति का सुख भोगे। वैर भुलाकर सब राजा लोग प्रसन्नतापूर्वक परस्पर मिलें। राजन्! पिता पुत्र को, भानजा मामा को, भाई भाई को और मित्र मित्र को फिर पावे। मैं सत्य कहता हूँ, तुम मोह के आवेश से अगर फिर युद्ध करोगे तो अन्त को अवश्य तुम्हारा सर्वनाश होगा।

महाराज, महात्मा भीष्म सब राजाओं के आगे राजा दुर्योधन से यों कहकर चुप हो रहे। क्योंकि उनके मर्मस्थल के घावों में वेदना हो रही थी। सञ्जय ने कहा—राजन्, जो व्यक्ति मर रहा है उसे दवा जैसे नहीं रुचती वैसे ही महात्मा भीष्म के धर्मार्थ-सङ्गत परम-
५७ हितकर वचन आपके पुत्र दुर्योधन को नहीं रुचे।

एक सौ बाईस अध्याय

भीष्म और कर्ण की भेंट

सञ्जय ने कहा—राजन्, भीष्म जब चुप हो गये तब सब राजा लोग उठकर अपने स्थानों को गये। उस समय पुरुषश्रेष्ठ कर्ण, भीष्म के गिरने का समाचार सुनकर, कुछ संकुचित होकर शीघ्रता के साथ उनके पास पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा कि जन्म-(सेंठे की)शय्या पर पड़े हुए कार्त्तिकेय के समान भीष्म पितामह शरशय्या पर आँखें मूँदे पड़े हैं। कर्ण की आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने गद्गद स्वर से कहा—हे कुरुश्रेष्ठ भीष्म! मैं वही राधेय कर्ण हूँ, जो सदा आपकी आँखों र चढ़ा हुआ था और जिसको, निरपराध होने पर भी, आप द्वेष्य समझते थे।

पितामह भीष्म ने कर्ण के ये वचन सुनकर धीरे-धीरे आँखें खोलीं। फिर रक्षकों को वहाँ से हटाकर एकान्त में उन्होंने, पिता जैसे पुत्र को गले से लगाता है वैसे ही, स्नेहपूर्वक एक हाथ से कर्ण को हृदय से लगा लिया। इसके बाद उन्होंने कहा—हे कर्ण, आओ आओ। तुम मेरे प्रतियोगी हो। सदा मेरे साथ लाग-डाँट रखनेवाले तुम्हीं एक हो। हे कर्ण, जो तुम इस समय मेरे पास न आते तो कभी तुम्हारा भला न होता। हे महाबाहु, मैंने नारदजी और व्यासजी के मुँह से सुना है कि तुम राधा के पुत्र नहीं, कुन्ती के बेटे हो। तुम्हारे पिता अधिरथ नहीं, साक्षात् सूर्यदेव हैं। भैया! मैं सच

कहता हूँ, तुम पर रत्ती भर भी द्वेष का भाव मेरे हृदय में नहीं है। मैंने तुम्हारा तेज घटाने के लिए ही सदा तुम्हारे लिए कठोर वाक्यों का प्रयोग किया है। हे कर्ण! तुम्हारा जन्म धर्मलोप से हुआ है, इसी कारण तुमसे पाण्डवों को अनेक कष्ट और दुःख पहुँचे हैं। तुम्हारी बुद्धि और प्रकृति इसी कारण गुणियों से द्वेष रखती है। इसी से कुरुसभा में मैंने अनेक बार तुमको रूखे और कड़वे वचन सुनाये हैं। मैं जानता हूँ कि युद्ध में तुम बहुत निपुण हो और तुम्हारा पराक्रम तथा बल शत्रुओं के लिए अत्यन्त असह्य है। हे कर्ण! तुम ब्रह्मनिष्ठ, शूर और श्रेष्ठ दानी हो। तुम बाणसन्धान और हाथ की फुर्ती में वीर अर्जुन और श्रीकृष्ण के बराबर हो। तुम्हारे समान पुरुष संसार में बहुत ही कम होंगे। यह सब जानकर भी तुम्हारे कारण पाण्डवों और कौरवों में फूट पड़ने के डर से मैं सदा तुमको दुर्वचन कहता रहा हूँ। कर्ण, तुमने काशिपुर में जाकर कुरुराज की कन्या के लिए एक धनुपमात्र की सहायता से सब राजाओं को परास्त किया था। युद्धनिपुण दुर्द्धर्ष प्रबल मगधराज जरासन्ध भी तुम्हारे समान नहीं थे। तुम युद्ध करने में देवसदृश हो। हे कर्ण, पौरुष के द्वारा कोई होनी को टाल नहीं सकता। इस समय जो तुम मेरा प्रिय करना चाहते हो तो अपने भाई पाण्डवों से मिल जाओ। मेरी मृत्यु से ही वैर की यह आग बुझ जाय और सब राजा कुशल से रहें।

कर्ण ने कहा—हे महात्मा, आप जो कुछ कह रहे हैं वह सब ठीक है। मैं सचमुच कुन्ती का पुत्र हूँ, सूत का नहीं। किन्तु कुन्ती ने जब मुझे त्याग दिया था तब सूत ने ही मुझे पाल-

पालकर बड़ा किया। उसके बाद दुर्योधन के ऐश्वर्य और कृपा से मैं अब तक सुख भोग रहा हूँ। इन बातों को मैं मिथ्या या वृथा नहीं कर सकता। दृढ़व्रत श्रीकृष्ण जैसे पाण्डवों के लिए यश, धन, पुत्र, स्त्री और शरीर तक का त्याग करने के लिए तैयार रहते हैं वैसे ही मैं पुत्र, स्त्री आदि अपना सब कुछ दुर्योधन को अर्पण कर चुका हूँ। हे कौरव, क्षत्रियों के लिए व्याधि-मृत्यु अनुचित है और पाण्डवगण भी दुर्योधन पर अत्यन्त कुपित हैं। अतएव कई कारणों से यह अवश्यम्भावी युद्ध किसी तरह रुक नहीं सकता। मेल होने की कोई आशा नहीं। यह तो आप मानते ही हैं कि कोई मनुष्य पौरुष के द्वारा होनी को टाल नहीं सकता। आप लोगों ने पृथ्वी के लोगों के नाश की सूचना देनेवाले घोर उत्पात देखे थे और कुरु-सभा में उनका वर्णन भी किया था। इसलिए यह हत्याकाण्ड, यह युद्ध, किसी तरह बन्द नहीं होगा। मैं जानता हूँ कि श्रीकृष्ण सहित पाण्डव अजेय हैं—इन्हें कोई जीत नहीं सकता। अन्य पुरुषों के द्वारा अजेय समझकर भी मैं उनसे युद्ध करने का उत्साह रखता हूँ। मैं समझता हूँ कि मैं युद्ध में पाण्डवों को जीत लूँगा। हम लोगों का यह दारुण वैरभाव किसी तरह दूर नहीं किया जा सकता। इसलिए आप मुझे क्षत्रिय-धर्म के अनुसार अर्जुन से युद्ध करने की आज्ञा दीजिए। मैं युद्ध के लिए निश्चय कर चुका हूँ। हे वीर, मैं चाहता हूँ कि आपसे आज्ञा लेकर मैं युद्ध करूँ। मैंने क्रोध या चञ्चलता के कारण आपको जो कुछ बुरा-भला कहा हो उसे, और मेरे दुर्व्यवहार को, क्षमा कीजिए।

भीष्म ने कहा—हे कर्ण, यदि यह दारुण वैरभाव तुम नहीं छोड़ सकते तो मैं तुमको युद्ध की आज्ञा देता हूँ। तुम क्षत्रिय-धर्म के अनुसार स्वर्ग की इच्छा से युद्ध करो। सुस्ती और क्रोध छोड़कर, शक्ति और उत्साह के अनुसार, सदाचार का पालन करते हुए, शत्रुओं से लड़ो और दुर्योधन का काम करो। मैं तुमको अनुमति देता हूँ कि जो चाहते हो सो पाओ। अर्जुन के द्वारा तुम उन लोकों को पाओगे जिन्हें लोग क्षत्रिय-धर्म का पालन करने से प्राप्त करते हैं। अहङ्कार छोड़कर, बल और वीरता का आश्रय लेकर, युद्ध करो। क्षत्रिय के लिए धर्मयुद्ध से बढ़कर शुभ कर्म दूसरा नहीं है। मैं तुमसे सच कहता हूँ कि मेल के लिए मैंने बहुत दिनों तक यत्न किया, किन्तु किसी तरह कृतकार्य नहीं हो सका।

सञ्जय ने कहा—महाराज! महात्मा भीष्म के यों कहकर चुप हो जाने पर प्रणाम करके ३९ कर्ण, आज्ञा लेकर, वहाँ से चल दिये। रथ पर चढ़कर वे दुर्योधन के पास जाने को चले।

महर्षि वेदव्यास-प्रणीत

महाभारत का अनुवाद

द्रोणपर्व

द्रोणाभिषेकपर्व

पहला अध्याय

जनमेजय का प्रश्न। वैशम्पायन का धृतराष्ट्र के पुत्रों की दशा का वर्णन करना

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥

जनमेजय ने कहा—भगवन्, तेजस्वी बलवीर्यशाली अलौकिक अतुल-सत्त्वधारी और अद्वितीय पराक्रमी भीष्म पितामह की शिखण्डी के हाथ से मृत्यु सुनकर शोक से व्याकुल राजा धृतराष्ट्र ने क्या किया? उनके पुत्र दुर्योधन ने भीष्म, द्रोण आदि महारथियों की सहायता से महा-योद्धा पाण्डवों को परास्त करके राज्य भोगने की इच्छा की थी। श्रेष्ठ योद्धा भीष्म के मारे जाने पर दुर्योधन ने क्या किया? यह सब हाल कहिए।

वैशम्पायन कहते हैं—महाराज! राजा धृतराष्ट्र, भीष्म की मृत्यु का हाल सुनकर, चिन्ता और शोक से ऐसे घबरा गये कि किसी तरह उनके चित्त की अशान्ति नहीं मिटी। वे दिन-रात उसी चिन्ता में डूबे रहते थे। इसी समय सायङ्काल में सञ्जय युद्धस्थल से हस्तिनापुर में धृतराष्ट्र के पास आये। पुत्रों के जीतने की इच्छा रखनेवाले राजा धृतराष्ट्र ने जब से भीष्म के मरने का हाल सुना था तभी से वे खिन्न होकर विलाप कर रहे थे। सञ्जय के आने पर उनसे धृतराष्ट्र ने पूछा—हे सञ्जय, कालप्रेरित कौरवों ने महाबली भीष्म के मरने पर अत्यन्त शोक-

१० पीड़ित होकर क्या किया? मैं तो समझता हूँ कि वीर पाण्डवों की सेना त्रिभुवन के हृदय में डर उत्पन्न कर सकती है।

सञ्जय ने कहा—राजन्, संग्राम में भीष्म के गिरने पर आपके पुत्रों ने जो कुछ किया, सो मैं कहता हूँ। महाराज, सत्यपराक्रमी भीष्म के गिरने पर आपके पक्ष के और पाण्डव-पक्ष के वीर अलग-अलग सलाह करने लगे। महाराज, आपके पक्ष के लोगों को पितामह की मृत्यु से आश्चर्य था और पाण्डव-पक्ष के लोग आनन्दित थे। दोनों ओर के लोग क्षत्रियधर्म के अनुसार भीष्म के पास गये। सबने उनको प्रणाम किया। पाण्डवों ने तीक्ष्ण सन्नतपर्व बाणों के द्वारा पितामह के लिए तकिये और बिछौने की रचना की और उनके चारों ओर रक्षक नियुक्त कर दिये। इसके बाद वे सब परस्पर सम्भाषण करके, पितामह की अनुमति लेकर और उनकी प्रदक्षिणा करके, फिर युद्ध के लिए युद्धभूमि में आये। दोनों पक्ष के वीर, क्रोध से लाल आँखें किये, एक-दूसरे को देख रहे थे। उनके सिर पर काल सवार था। दोनों पक्ष की सेना युद्ध के लिए निकली। उसमें २० तुरही, भेरी आदि बाजे बजने लगे। दूसरे दिन सबेरे कालग्रस्त कौरवगण कोपवश होकर, महात्मा भीष्म के हितकारी उपदेश को न मानकर, अस्त्र-शस्त्र ले-लेकर युद्धभूमि में पहुँच गये।

राजन्, आपकी और दुर्योधन की जयाशारूप मूढ़ता के कारण कौरवों को मौत का न्योता मिल गया है। कौरव और उनके पक्ष के राजा लोग भीष्म के शरशय्याशायी होने पर उसी तरह चिन्तित हुए, जिस तरह ख़ूनी जानवरों से भरे वन में बिना रक्षक के बकरियाँ और भेड़ें घबरा जाती हैं। महाराज! आपके पक्ष की सेना भीष्म के बिना नक्षत्र-हीन आकाश की तरह, वायुहीन अन्तरिक्ष की तरह, बिना फ़सलवाले खेत की तरह, अशुद्ध वाक्य की तरह और राजा बलि को जब वामनजी ने बलपूर्वक बाँध लिया था उस समय की नायकविहीन असुरसेना की तरह उद्विग्न, विचलित और श्रीहीन हो गई। राजन्, आपकी सेना उस समय विधवा सुन्दरी की तरह, जिसका पानी सूख गया हो उस नदी की तरह, भेड़ियों ने जिसे घेर रक्खा हो और जिसका साथी यूथप मार डाला गया हो उस मृगी की तरह तथा शरभ ने जिसमें रहनेवाले सिंह को मार डाला हो उस कन्दरा की तरह उद्विग्न, विचलित और श्रीहीन हो गई। तूफ़ान में फँसी नाव की जो हालत समुद्र में होती है वही दशा आपकी सेना की हुई। ठीक निशाना लगानेवाले वीर पाण्डव आपकी सेना को अत्यन्त पीड़ित करने लगे। घोड़े, रथ, हाथी और पैदल ३० सब नष्ट-भ्रष्ट होने लगे। सब सैनिक उत्साहहीन, उदास और विकल देख पड़ने लगे। भीष्म के बिना कौरव पक्ष के राजा और सैनिक मानों पाताल में डूबने लगे।

उस समय कौरवों ने कर्ण को सब धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ भीष्म-तुल्य जानकर अपनी रक्षा के लिए याद किया। जैसे गृहस्थ का मन साधु अतिथि की ओर और आपत्ति में पड़े हुए व्यक्ति का मन अपने मित्र की ओर दौड़ता है, वैसे ही कौरवों का ख़याल कर्ण की ओर गया। उस समय

सब राजा लोग कर्ण को अपना हितैषी और समर्थ समझकर "कर्ण ! कर्ण !" चिल्लाने लगे। उन्होंने कहा—महायशस्वी कर्ण ने इन दस दिनों तक शत्रुओं से युद्ध नहीं किया। उन्हें उनके मन्त्रियों, साथियों और मित्रों सहित शीघ्र बुलाओ; देर न करो। महावीर कर्ण दो रथी योद्धाओं के तुल्य तथा रथी और अतिरथी योद्धाओं में अग्रगण्य हैं। बड़े-बड़े शूर उनका सम्मान करते हैं। वे यमराज, इन्द्र, वरुण, कुवेर आदि लोकपालों और बड़े-बड़े असुरों से भी युद्ध कर सकते हैं; तथापि वल-विक्रमशाली रथी-महारथी आदि की गिनती के समय पितामह भीष्म ने उनको अर्द्धरथी कहा। इसी से क्रोधवश होकर कर्ण ने भी भीष्म के आगे प्रतिज्ञा की थी कि "हे पितामह, तुम्हारे जीते जी मैं युद्ध नहीं करूँगा। इस महासंग्राम में अगर तुम्हारे हाथ से पाँचों पाण्डव मारे गये तो मैं, दुर्योधन की अनुमति लेकर, वनवास करने चल दूँगा। और जो पाण्डवों के हाथों मरकर तुम स्वर्गवासी हुए तो मैं अकेला उन सब क्षत्रियों को मारूँगा, जिन्हें तुम पूर्ण रथी और महारथी कह रहे हो।" महाराज, आपके पुत्र दुर्योधन की सम्मति से यशस्वी कर्ण ने दस दिन तक शत्रुओं से युद्ध नहीं किया। महावली भीष्म ही युधिष्ठिर-पक्ष के योद्धाओं को नष्ट करते रहे। महापराक्रमी सत्यसन्ध महाशूर भीष्म के मारे जाने पर आपके पुत्र और उनके पक्ष के राजा लोग कर्ण को वैसे ही स्मरण करने लगे जैसे पार जाने की इच्छा रखनेवाले लोग नाव को याद करते हैं। सब लोग यों चिल्लाने लगे—हा कर्ण ! यही तुम्हारे पराक्रम प्रकट करने का समय है। राजन्, कर्ण ने परशुराम से अस्त्र-विद्या सीखी है, और उनका पराक्रम दुर्निवार्य है, यही समझकर हमारे पक्ष के आदमियों को कर्ण की ही याद आई। जैसे बड़ी आपत्ति के समय लोग अपने मित्र को ही याद करते हैं वैसे ही पाण्डवों के द्वारा पीड़ित कौरव-सेना कर्ण को स्मरण करने लगी। राजन्, जैसे विष्णु भगवान् सदा देवताओं को महाभय से उबारते रहते हैं वैसे ही युद्धभूमि में इस महाभय से महाबाहु कर्ण भी हमारी रक्षा कर सकते हैं। ४०

वैशम्पायन कहते हैं कि सञ्जय को इस तरह बारम्बार कर्ण का ही नाम रटते देखकर विषैले नाग की तरह लम्बी साँस छोड़कर धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, दुर्योधन आदि तुम सब ने जब अत्यन्त उद्विग्न और पीड़ित होकर कर्ण को याद किया तब क्या कर्ण ने भी तुम्हारी रक्षा करना स्वीकार किया ? सत्यपराक्रमी धनुर्द्धरश्रेष्ठ कर्ण ने आर्त शरणागत कौरव दल की प्रार्थना को विफल तो नहीं किया ? भीष्म पितामह की मृत्यु से कौरवों की जो हानि हुई थी, पितामह का जो स्थान ख़ाली हुआ था, उसे पुरुषसिंह कहे जानेवाले कर्ण ने शत्रुओं को डरवाते हुए पूरा भी किया ? उन्होंने आर्त होकर रक्षा के लिए चिल्लानेवाले अपने मित्रों की जयाशा को सफल भी किया ? मेरे पुत्रों के भले और विजय के लिए कर्ण ने प्राणों का मोह छोड़कर शत्रुओं से युद्ध किया कि नहीं ? ५० ५३

दूसरा अध्याय

कर्ण की प्रतिज्ञा और युद्ध के लिए यात्रा

सञ्जय बोले—हे नरनाथ! धनुर्द्धरश्रेष्ठ कर्ण को जब महात्मा भीष्म के गिरने का समाचार मिला तब वे अथाह सागर में टूटकर डूबते हुए जहाज़ के समान विपत्तिसागर में पड़ी हुई आपके पुत्र की सेना को, सगे भाई की तरह, उबारने के लिए उसके पास आये। पिता जैसे पुत्रों की रक्षा करने के लिए दौड़े वैसे ही महावीर कर्ण आपके पुत्रों की और उनके दल की रक्षा करने के लिए शीघ्रता के साथ वहाँ आये। महापराक्रमी शत्रु-समूहनाशन कर्ण [परशुराम के दिये हुए धनुष को साफ़ करके, उस पर प्रत्यञ्चा चढ़ाकर, काल अग्नि और वायु के तुल्य प्राणनाशक और शीघ्रगामी बाणों को उछालते हुए] कौरवों से कहने लगे—चन्द्रमा में जैसे श्री नित्य रहती है वैसे ही जिन द्विज-शत्रुहन्ता कृतज्ञ भीष्म में धृति, बुद्धि, पराक्रम, ओज, सत्य, स्मृति, प्रिय वाणी, ईर्ष्या का अभाव आदि वीरों के सब गुण मौजूद थे, वे शत्रुपक्ष के वीरों को मारनेवाले पितामह अगर आज मौत का शिकार बन गये तो मैं अन्य सब वीरों को मरा हुआ सा ही समझता हूँ। ब्रह्मचारी भीष्म की मृत्यु को देखकर किसे कल सूर्योदय होने का भी निश्चय होगा? [भीष्म की मृत्युरूप अनहोनी होने पर सूर्योदय न होने की अनहोनी पर भी विश्वास किया जा सकता है।] मृत्युविजयी भीष्म की भी जब मृत्यु हो गई तब हम लोगों के जीवन की क्या आशा है? सच है, इस लोक में कर्म के अनित्य सम्बन्ध से कोई भी वस्तु अविनाशी नहीं है, एक न एक दिन सभी का नाश होगा। वसुओं के समान महाप्रभावशाली और वसुओं के तेज से उत्पन्न भीष्म पितामह वसुलोक को जाकर वसुओं में लीन हो गये। अब धन, पुत्र, पृथ्वी, कौरवगण और इस सब सेना के लिए शोक करो। भीष्म के बिना हम सबकी शोचनीय दशा हो गई है।

सञ्जय कहते हैं—महाराज, महाप्रतापी भीष्म को मृत और कौरवों को शत्रुओं से परास्त देखकर कर्ण की आँखों में आँसू आ गये; वे दुःखित होकर बारम्बार साँसें लेने लगे। महाराज, आपके पुत्र और सैनिकगण वीर कर्ण के ये वचन सुनकर ज़ोर से रोने लगे।

राजन्, अब फिर भयङ्कर संग्राम आरम्भ हुआ। राजा लोग शत्रुसेनाओं में घुसकर उनका संहार करने लगे, सब सैनिक सिंहनाद करते दिखाई पड़ने लगे। उस समय महारथी-श्रेष्ठ १० कर्ण सब योद्धाओं को प्रसन्न और उत्साहित करते हुए बोले—भाइयो, इस अनित्य जगत् में मुझे कुछ भी स्थिर नहीं देख पड़ता। हर एक वस्तु नाश होनेवाली है। अगर ऐसी बात नहीं है, तो फिर आप लोगों के देखते-देखते वीरवर पितामह भीष्म को पाण्डवों ने कैसे मार गिराया? महारथी भीष्म पृथ्वी पर पड़े हुए सूर्य के समान दिखाई पड़ रहे हैं। जैसे पहाड़ को भी उलटने के लिए तैयार आँधी को साधारण वृक्ष नहीं रोक सकते, वैसे ही हमारे पक्ष के राजा लोग इस

समय भीष्म के विना अर्जुन के पराक्रम के सामने नहीं ठहर सकते। कौरव-सेना के प्रधान वीर भीष्म के मारे जानें से सव सैनिक अनाथ, आर्त और उत्साह-हीन हो रहे हैं। मैं इस समय उसी तरह इस कुरु-सेना की रक्षा करूँगा, जिस तरह महात्मा भीष्म कर रहे थे। इस समय यह मेरा कर्त्तव्य हो गया है। जव कि युद्धप्रेमी महापराक्रमी भीष्म मारे गये हैं और मेरे ऊपर यह कर्त्तव्यभार आ पड़ा और जव यह जगत् और जीवन सदा रहने का है नहीं तव भला मैं क्यों डरने लगा ? मैं शीघ्रता के साथ सीधे निशाने पर पहुँचनेवाले वाणों से शत्रुसेना को मारता हुआ रणभूमि में विचरण करूँगा। अगर विजय प्राप्त कर सका तो जगत् में श्रेष्ठ यश पाऊँगा और शत्रुओं के हाथ से मारा गया तो रणभूमि में वीर-गति पाऊँगा। युधिष्ठिर धैर्य, वुद्धि, धर्म और उत्साह से युक्त हैं; भीमसेन में सौ हाथियों का वल है; अर्जुन इन्द्र के पुत्र और जवान हैं; इसलिए देवता भी पाण्डवों की सेना को सहज में नहीं जीत सकते। यमराज के तुल्य माद्री के दोनों पुत्र और सात्यकि सहित साक्षात् वासुदेव जिस पक्ष में हैं, वह यमराज के मुख के समान है। कोई भी कायर उसके सामने पहुँचकर जीता नहीं लौट सकता। मनस्वी लोग वढ़े हुए तप को तप से ही और वल को वल से ही रोकते हैं। मेरा मन निश्चित रूप से शत्रुओं को रोकने और अपनी रक्षा करने के लिए पर्वत के समान अटल है। इस प्रकार मैं आज शत्रुओं के प्रभाव को रोकता हुआ जाते ही उन लोगों को जीत लूँगा। मित्रों के प्रति शत्रुओं के द्रोह को मैं सह नहीं सकता। जो सेना के भाग खड़े होने पर साथ दे, वही मित्र है। या तो मैं सत्पुरुषों के योग्य इस श्रेष्ठ कार्य को करूँगा, और या शत्रुओं के हाथ से मरकर भीष्म का अनुगामी होऊँगा। नारियों और कुमारों का रोना-चिल्लाना सुनकर और दुर्योधन का पौरुष प्रतिहत होने पर मेरा यही कर्तव्य है, यह मैं जानता हूँ। इसी लिए मैं आज राजा दुर्योधन के शत्रुओं को मारूँगा। पाण्डवपक्ष को मारने और कौरवपक्ष की रक्षा करने के लिए इस भयङ्कर रण में या तो मैं अपने प्रिय प्राण दूँगा, और या युद्ध में शत्रुओं को मारकर दुर्योधन को राज्य दूँगा। मुझे सुवर्णमय मणिरत्नमण्डित विचित्र उज्ज्वल कवच पहनाओ, सूर्य के समान प्रभा-युक्त शिरस्त्राण मेरे सिर पर रक्खो। वाण-पूर्ण सोलह तरकस और दिव्य धनुप ले आओ। तलवारें, शक्तियाँ, भारी गदाएँ, सुवर्णमण्डित विचित्र शङ्ख, सोने की शृङ्खला आदि सव युद्ध-सामग्री लाओ। कमल-चिह्नयुक्त विजयसूचक पताका को, कपड़ों से साफ़ करके, ले आओ। विचित्र माला और खीलें आदि माङ्गलिक वस्तुएँ उपस्थित करो। सफ़ेद मेघसदृश, हृष्ट-पुष्ट, मन्त्र से पवित्र किये गये जल से नहलाये गये, तेज़, वढ़िया, सुवर्ण के अलङ्कारों से अलङ्कृत घोड़े शीघ्र लाओ। सुवर्णमाल्य से शोभित, चन्द्र-सूर्य-सदृश कान्तियुक्त, रत्नों से भूषित, वाहनों से युक्त और संग्राम की सामग्री से परिपूर्ण वढ़िया रथ मेरी सवारी के लिए अभी लाओ। वेगशाली विचित्र चाप, उत्तम और ज़ोर को सहनेवाली धनुप की डोरियाँ, वाणपूर्ण वड़े-वड़े तरकस और कवच आदि सव

२०

सामग्री लाओ। प्रस्थानकाल में शुभसूचक जलपूर्ण सुवर्णकलश और दही भरा हुआ बर्तन लाओ। मुझे माला पहनाकर जयसूचक नगाड़े बजाओ।

हे सूत! तुम शीघ्र वहाँ पर मेरा रथ ले चलो जहाँ वीर भीमसेन, अर्जुन, युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव हैं। मैं युद्धभूमि में उनके सामने पहुँचकर या तो उन्हें मारूँगा, और या ३० भीष्म की तरह शत्रुओं के हाथ से मारा जाऊँगा। जिस सेना में सत्यपरायण युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, सात्यकि, श्रीकृष्ण और सब सृञ्जय मौजूद हैं उसे मैं, सब राजाओं के साथ मिलकर आक्रमण करने पर भी, अजेय ही मानता हूँ। किन्तु मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि सर्वनाशक मृत्यु भी सावधान होकर सदैव अगर अर्जुन की रक्षा करे तो भी मैं युद्ध में उनको अवश्य मारूँगा, अथवा भीष्म की तरह उनके हाथों से मारा जाऊँगा। केवल मैं ही उन शूरवीर पाण्डवों की सेना के बीच युद्ध करने न जाऊँगा, प्रत्युत ये सब सहायक शूर राजा भी मेरे साथ अपना पराक्रम दिखावेंगे। ये मेरे सहायक राजा और योद्धा लोग मित्रद्रोही, कच्ची भक्ति रखनेवाले, कायर या पापी नहीं हैं।
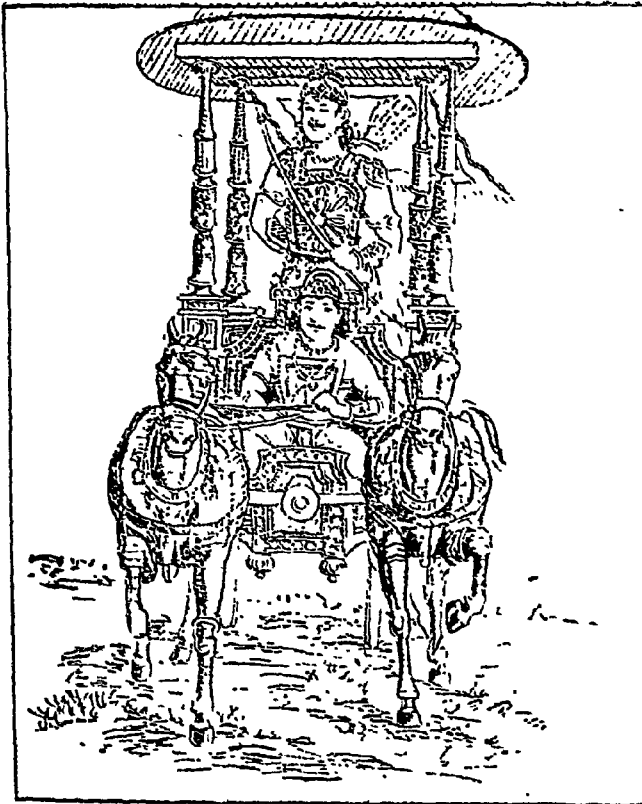
सञ्जय कहते हैं—राजन्, अब सुवर्ण-मुक्ता-मणि-रत्नमण्डित उत्तम दृढ़ रथ कर्ण के सामने लाया गया। उसमें सुन्दर पताका फहरा रही थी, और हवा से बातें करनेवाले बढ़िया घोड़े जुते हुए थे। उसी रथ पर बैठकर महारथी कर्ण विजय के लिए रवाना हुए। सब कौरव उग्रधन्वा वीर कर्ण की स्तुति वैसे ही करने लगे, जैसे इन्द्र की स्तुति देवता करते हैं। श्रेष्ठ योद्धा कर्ण रथ पर बैठकर वहाँ चले जहाँ भीष्म पितामह शरशय्या पर शयन कर रहे थे। सुवर्ण-मुक्ता-मणि-रत्नमण्डित, ध्वजायुक्त, अश्वशोभित रथ पर कर्ण उसी तरह शोभायमान हुए जिस तरह गरजते हुए बादल पर सूर्य विराजमान हों। अग्नितुल्य तेजस्वी शुभरूप महारथी महाधनुर्द्धर कर्ण अग्निपिण्ड-सदृश उस रथ पर बैठकर ३७ विमान पर स्थित इन्द्र के समान शोभा को प्राप्त हुए।

तीसरा अध्याय

कर्ण का भीष्म के पास जाकर उनसे युद्ध के लिए आज्ञा माँगना

सञ्जय कहते हैं—राजन्, कर्ण ने जाकर देखा कि महापराक्रमी महात्मा भीष्म शरशय्या पर पड़े हुए हैं। जैसे तूफ़ान ने समुद्र को सुखा डाला हो, वैसे ही अर्जुन ने सर्वक्षत्रान्तक गुरु पितामह भीष्म को दिव्य अस्त्रों के द्वारा गिरा दिया था। भीष्म के गिरते ही आपके पुत्रों की जय की आशा, कल्याण और रक्षाकवच खण्डित सा हो गया। महात्मा भीष्म कौरवों के लिए वैसे ही आश्रय-स्वरूप थे, जैसा अथाह में डूबकर थाह चाहनेवाले आदमी के लिए टापू होता है। यमुना के प्रवाह के समान असंख्य बाण उनके अङ्गों में छिदे हुए थे। इन्द्र के वज्र-प्रहार से पृथ्वी पर पड़े हुए मैनाक पर्वत के समान, आकाश से गिरे हुए सूर्य के समान, वृत्रासुर से पराजित इन्द्र के समान भीष्म पितामह पृथ्वी पर पड़े हुए थे। युद्ध में सब शत्रुसेना को अपने पराक्रम से मूढ़ बनानेवाले, सब सैनिकों में श्रेष्ठ, धनुर्द्धरों के शिरोमणि, आपके चाचा महाव्रत भीष्म को अर्जुन के बाणों से शिथिल होकर वीरोचित शरशय्या पर पड़े देखकर कर्ण शोक और मोह के आवेश से विह्वल हो उठे। उनकी आँखों में आँसू भर आये। वे तुरन्त रथ से उतरकर पैदल ही महात्मा भीष्म के पास पहुँचे। हाथ जोड़कर प्रणाम करके कर्ण ने कहा—पितामह, आपका कल्याण हो। मैं कर्ण हूँ। अपनी कल्याणमयी दृष्टि से मेरी ओर देखिए, और पवित्र वाक्यों से मुझे कृतार्थ कीजिए। आप ऐसे धर्मनिष्ठ वृद्ध को पृथ्वी पर इस तरह पड़े देखकर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस लोक में कोई भी अपने पुण्य का फल नहीं भोगता। हे कुरुश्रेष्ठ, मुझे तो कौरवों में अब कोई कोप-सञ्चय, मन्त्रणा, व्यूहरचना और अस्त्र-प्रयोग में आप सा निपुण नहीं देख पड़ता। विशुद्ध बुद्धि से युक्त आप ही कौरवों को इस विपत्ति के पार लगानेवाले थे, सो आप बहुत से योद्धाओं को मारकर अब पितृलोक को जानेवाले हैं। जैसे क्रुद्ध बाघ मृगों को चौपट करते हैं, वैसे ही अब से पाण्डव लोग कुरुसेना का संहार करेंगे। हे पितामह, अर्जुन के पराक्रम को जाननेवाले कौरव अब गाण्डीव धनुष के शब्द से वैसे ही डरेंगे जैसे वज्र के शब्द से असुर डरते हैं। अब गाण्डीव धनुष से छूटे हुए बाणों का शब्द, वज्र की कड़क के समान, कौरवों को और उनके पक्ष के अन्य राजाओं को भयविह्वल बनावेगा। हे वीर, जैसे प्रज्वलित आग बड़ी-बड़ी ज्वालाओं से वृक्षों को जलाती है वैसे ही अर्जुन के बाण धृतराष्ट्र-पुत्रों को भस्म करेंगे। हवा और आग दोनों मिलकर महावन में बड़े-बड़े वृक्षों और घास-फूस-लता वग़ैरह को भस्म कर डालते हैं। सो अर्जुन तो अग्नि के तुल्य हैं, और कृष्ण वायु के समान हैं। हे भरतकुलदीपक! पाञ्चजन्य शङ्ख और गाण्डीव धनुष का शब्द सुनकर सब सेना डर जायगी। हे वीर, आपके न रहने से सब राजा लोग अर्जुन के रथ के शब्द को नहीं सह सकेंगे। पण्डित और वीर लोग जिनके अलौकिक कर्मों का बखान किया करते हैं,

१०

२०

जिन्होंने निवातकवच आदि दानवों को मारा और साक्षात् शङ्कर को संग्राम में सन्तुष्ट करके साधारण मनुष्यों के लिए दुर्लभ वरदान प्राप्त किये तथा जिनकी रक्षा सदा श्रीकृष्ण करते हैं, उन समराभिमानी अर्जुन से युद्ध करके आपके सिवा कोई भी राजा उनको परास्त नहीं कर सकता। आपने क्षत्रियकुल के काल, सुरासुर-पूजित, महाशूर परशुरामजी को अपने पराक्रम से रण में जीत लिया था। ऐसा कौन वीर है, जिसे आपने परास्त नहीं किया? किन्तु काल की कैसी विचित्र गति है कि वही आप आज अर्जुन के बाणों से घायल होकर पृथ्वी पर पड़े हुए हैं। मैं उन युद्धशूर पाण्डव अर्जुन को आपकी अनुमति लेकर मारने की इच्छा रखता हूँ। विषैले नाग के समान दृष्टि से ही वीरों के प्राण हर लेनेवाले शूर अर्जुन को २५ मैं, आपकी अनुमति मिलने से, अपने अस्त्रबल के द्वारा मार सकूँगा।

चौथा अध्याय

भीष्म की आज्ञा पाकर कर्ण की युद्धयात्रा

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, कर्ण के ये वचन सुनकर पितामह भीष्म प्रसन्नतापूर्वक देश-काल के अनुकूल वचन बोले—हे कर्ण! सागर जैसे नदियों का, सूर्य जैसे ज्योतिर्मय पदार्थों का, सज्जन पुरुष जैसे सत्य का, उर्वरा भूमि जैसे सब बीजों का और मेघ जैसे सब प्राणियों के जीवन का आश्रय हैं, वैसे ही तुम अपने सुहृद कौरवों के आश्रयस्थल हो। देवता जैसे इन्द्र के आश्रित हैं वैसे ही तुम्हारे बान्धव कौरव तुम्हारे आश्रित हों। नारायण जैसे देवताओं का आनन्द बढ़ाते हैं वैसे ही तुम अपने मित्र कौरवों का आनन्द बढ़ाओ। हे वीर कर्ण, तुमने पहले कौरवों का प्रिय करने के लिए राजपुर में जाकर अपने बल-वीर्य से काम्बोजगण को जीता था। गिरिव्रज में स्थित नग्नजित् आदि राजाओं, अम्बष्ठों, विदेहों, गान्धारों और हिमवान् पर्वत के दुर्ग में रहनेवाले रणकर्कश किरातों को जीतकर तुमने दुर्योधन के अधीन कर दिया था। हे वीर! तुमने दुर्योधन के हित के लिए उत्कल, मेकल, पौण्ड्र, कलिङ्ग, अन्ध्र, निषाद, त्रिगर्त, वाह्लीक, आदि देशों में जाकर वहाँ के रहनेवाले बड़े-बड़े वीरों को अपने पराक्रम से जीता था। इस समय दुर्योधन जैसे सजातीय कुल और बान्धव आदि समेत सब कौरवों का आश्रयस्थल १० हैं, वैसे ही तुम भी उनके रक्षक बनो। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ, जाओ, शत्रुओं से युद्ध करो। सब कौरवों को अपना अनुगामी बनाकर दुर्योधन को विजयी बनाओ। दुर्योधन के समान तुम भी मेरे पौत्रतुल्य हो। धर्म से जैसे मैं दुर्योधन का पितामह हूँ वैसे ही तुम्हारा भी हूँ। क्योंकि पण्डित लोग सत्सङ्गति के सम्बन्ध को जातिसम्बन्ध से भी अधिक माननीय बताते हैं। हे वीर कर्ण, कौरवों के साथ तुम्हारा वही सम्बन्ध हो गया है। सज्जन लोग

इसी लिए ग़ैरों से भी मित्रता करना चाहते हैं। मेरी सम्मति यह है कि तुम सत्यप्रतिज्ञ होकर, उसी सम्बन्ध के खयाल से, ममतापूर्वक दुर्योधन की तरह कौरव-सेना की रक्षा करो।

महाराज! भीष्म के ये वचन सुनकर, उनके चरणों में प्रणाम करके, महावीर कर्ण रथ पर सवार हुए और शीघ्रता के साथ युद्धभूमि की ओर चले। कर्ण ने सब राजाओं की बढ़िया सेना को देखकर उसे यथास्थान स्थापित और उत्साहित किया। विशाल वक्षःस्थलवाले बड़े-बड़े वीर सिपाही अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर युद्ध के लिए तैयार खड़े थे।

सब सेना के आगे चलनेवाले वीर कर्ण को लौटकर युद्ध के लिए तैयार देखकर दुर्योधन आदि कौरव बहुत प्रसन्न हुए। सभी वीर ताल ठोंककर, उछल-उछलकर, सिंहनाद और धनुष की डोरियों का शब्द करके अपना उत्साह प्रकट करते हुए वीर कर्ण की अभ्यर्थना करने लगे। १८

पाँचवाँ अध्याय

दुर्योधन के पूछने पर कर्ण का द्रोणाचार्य को सेनापति बनाने का प्रस्ताव करना

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, कर्ण को रथ के ऊपर सामने देखते ही दुर्योधन ने प्रसन्न होकर कहा—हे मित्र, तुम्हारे द्वारा सुरक्षित अपनी सेना को मैं सर्वथा सनाथ समझता हूँ। बताओ, अब हमें क्या करना चाहिए? जो हमारे लिए हित और हमारी शक्ति से साध्य हो, वह निश्चित करके कहो।

कर्ण ने कहा—राजन्, आप हम सबके प्रभु और श्रेष्ठ बुद्धिमान् हैं। आप ही कर्तव्य-निर्द्धारण कीजिए। प्रधान स्वामी या राजा स्वयं जैसे कर्तव्य का निश्चय कर सकता है, वैसे दूसरा आदमी नहीं कर सकता। हे नरनाथ, हम लोग आपके ही मुँह से आज्ञा सुनना चाहते हैं। मुझे निश्चय है कि आप अनुचित या अनुपयुक्त नहीं कहेंगे।

दुर्योधन ने कहा—कर्ण! अवस्था, पराक्रम और ज्ञान में वृद्ध पितामह भीष्म ने सेनापति होकर सब योद्धाओं के साथ दस दिन तक अच्छी तरह युद्ध चलाया और मेरी सेना की रक्षा की। महायशस्वी पितामह ने अपने युद्ध-कौशल से मेरे शत्रुओं को भी मारा और अपनी सेना की भी रक्षा की। ऐसा दुष्कर कर्म करके महात्मा भीष्म स्वर्गलोक की यात्रा को तैयार हो चुके। अब हमारा पहला काम उपयुक्त सेनापति को चुनना है। तुम किसको सेनापति बनाने के योग्य समझते हो? जैसे बिना मल्लाह के नाव पल भर भी जल में नहीं रह सकती वैसे ही सेनापति के बिना सेना क्षण भर युद्धभूमि में नहीं टिक सकती। सेनापति के न होने पर, सारथी से ख़ाली रथ अथवा बिना मल्लाह की नाव के समान, सेना भी इधर-उधर बहकी-बहकी फिरती है। सेना का ठीक-ठीक सञ्चालन करने के लिए एक योग्य सेनापति का होना परम

आवश्यक है। पथप्रदर्शक मुखिया के विना मुसाफ़िरों के झुण्ड जैसे कष्ट पाते हैं वैसे ही सेना-
१० पति-हीन सेना में भी सब दोष होते हैं। अतएव तुम विचारकर देखो कि हमारे पक्ष में जितने महानुभाव वीर हैं, उनमें ऐसा योग्य पुरुष कौन है जो महापराक्रमी भीष्म के उपरान्त उपयुक्त सेनापति हो सके। तुम जिसको पसन्द करोगे उसी को हम सहर्ष अपना सेनापति बनावेंगे।

कर्ण ने कहा—राजन्! आपकी सेना में जितने श्रेष्ठ पुरुष हैं वे सब सत्कुल में उत्पन्न, समर-विशारद, ज्ञानी, महाबली, महापराक्रमी, बुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, युद्ध में पीठ न दिखानेवाले और सेनापति होने के उपयुक्त हैं। किन्तु सब श्रेष्ठ महारथी एक साथ सेनापति नहीं बनाये जा सकते। इन सबमें से जिस एक में अधिक गुण देख पड़ें उसी को इस समय सेनापति बनाना चाहिए। किन्तु इन परस्पर समान स्पर्धा रखनेवाले वीरों में से किसी एक को जो आप सेनापति बना देंगे तो शेष सब शायद खिन्न होकर उस तरह उत्साह से आपके हित के लिए युद्ध न करें। इसलिए मेरी राय में योद्धाओं के आचार्य वृद्ध गुरु और सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणजी को ही सेनापति बनाना ठीक है। यही सबसे अधिक इस पद के उपयुक्त हैं। शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ और नीतिज्ञान में बृहस्पति तथा शुक्र के समान महात्मा द्रोणाचार्य के रहते और कौन सेनापति-पद के योग्य हो सकता है? आपके पक्ष के राजाओं में ऐसा कौन है जो सेनापति होकर युद्ध के लिए जानेवाले गुरुवर द्रोणाचार्य का साथ न दे? राजन्! ये महात्मा आपके गुरु हैं, फिर सेनापतियों, शस्त्रधारियों और बुद्धिमानों में भी श्रेष्ठ हैं। हे दुर्योधन, जैसे युद्ध में असुरों को जीतने के लिए देवताओं ने कार्त्तिकेय को अपना सेनापति बनाया था वैसे ही आप शीघ्र
२१ द्रोणाचार्यजी को अपनी सेना का प्रधान सेनापति बनाइए।

छठा अध्याय

दुर्योधन का द्रोणाचार्य से सेनापतित्व स्वीकार करने के लिए प्रार्थना करना

सञ्जय कहते हैं कि महाराज, कर्ण के वचन सुनकर राजा दुर्योधन ने सेना के मध्य में स्थित द्रोणाचार्य से प्रार्थना की—महात्मन्, आप वर्ण में श्रेष्ठ हैं; कुल, अवस्था, बुद्धि, वीरता, चतुरता आदि में भी बड़े हैं। आप शत्रुओं के लिए दुर्धर्ष हैं। अर्थज्ञान, नीति, विजय, तपस्या, कृतज्ञता आदि गुणों में दूसरा कोई आपकी बराबरी नहीं कर सकता। हमारे पक्ष के राजाओं में आपके समान उपयुक्त सेनापति और कोई नहीं है। भगवन्, सब देवताओं की जैसे इन्द्र रक्षा करते हैं वैसे ही आप हम सबके रक्षक बनिए। हे द्विजश्रेष्ठ, आपको सेनापति बनाकर हम अपने शत्रुओं को जीतना चाहते हैं। जैसे रुद्रों में कपाली, वसुओं में पावक, यक्षों में कुबेर, देवगण में इन्द्र, ब्राह्मणों में वशिष्ठ, तेजस्वियों में सूर्य, पितरों में यमराज, जलचारियों

में वरुण, नक्षत्रों में चन्द्रमा, दानवों में शुक्राचार्य और सम्पूर्ण विश्व में सृष्टि-स्थिति-प्रलयकर्ता प्रभु नारायण श्रेष्ठ हैं, वैसे ही इन सेनापति-पद के लिए उपयुक्त क्षत्रियों में आप श्रेष्ठ सेनापति हैं। इसलिए मेरी प्रार्थना स्वीकार करके आप मेरी सेना के सेनापति बनिए। हे निष्पाप, यह ग्यारह अक्षौहिणी सेना आपके अधीन होकर युद्ध करे। भगवन्, इन्द्र जैसे दानवों को जीतते हैं वैसे ही शत्रुओं के विरुद्ध इस सेना से व्यूहरचना करके आप मेरे शत्रुओं को जीतिए। कार्त्तिकेय जैसे देवताओं के आगे-आगे चले थे, वैसे ही आप हम लोगों की सेना के अग्रगामी सेनापति हों। जैसे बड़े साँड़ के पीछे बैल चलते हैं वैसे ही हम लोग युद्धभूमि में आपके अनुगामी होंगे। अपने दिव्य धनुष का शब्द करते हुए महायोद्धा उग्रधन्वा अर्जुन जब संग्राम में आपको आगे देखेंगे तो कभी प्रहार नहीं करेंगे। हे पुरुषसिंह, आप यदि मेरे सेनापति बनेंगे तो मैं युद्ध में बन्धु-बान्धव और अनुगामी राजाओं सहित युधिष्ठिर को जीत लूँगा। १०

सञ्जय कहते हैं—महाराज, दुर्योधन के यों कहने पर सब राजा लोग सिंहनाद से आपके पुत्र को प्रसन्न करते हुए "द्रोणाचार्य की जय" कहने लगे। सैनिकगण भी महत् यश की इच्छा से प्रसन्नतापूर्वक दुर्योधन की बातों का समर्थन करते हुए द्रोणाचार्य की अभ्यर्थना करने लगे। अब महायशस्वी द्रोणाचार्य ने आपके पुत्र से यों कहा। १३

सातवाँ अध्याय

सेनापति के पद पर द्रोणाचार्य का अभिषेक

द्रोणाचार्य ने कहा—हे दुर्योधन! मैं वेद के छहों अङ्ग, मनुवर्णित अर्थविद्या, भगवान् शूलपाणि का पाशुपत अस्त्र और अन्य अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र तथा उनका प्रयोग अच्छी तरह जानता हूँ। तुम लोगों ने जय की इच्छा करके मुझमें जिन-जिन गुणों का होना बतलाया है उन गुणों का परिचय, तुम्हारा हित करने के लिए, देता हुआ मैं पाण्डवों से युद्ध करूँगा। किन्तु राजन्, मैं द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न को किसी तरह न मार सकूँगा। वह पुरुषश्रेष्ठ मुझे मारने के लिए ही उत्पन्न हुआ है। मैं सब सोमकों और पाञ्चालों को मारूँगा, और सब सैनिकों के साथ युद्ध करूँगा किन्तु प्रसन्न पाण्डवगण जी खोलकर मुझसे नहीं लड़ेंगे।

सञ्जय कहते हैं—महाराज, इस प्रकार द्रोणाचार्य की अनुमति पाकर आपके पुत्र दुर्योधन ने विधिपूर्वक उनको सेनापति बनाया। पूर्व समय में जैसे इन्द्र आदि देवताओं ने कार्त्तिकेय को अपना सेनापति बनाकर उनका अभिषेक किया था, वैसे ही दुर्योधन आदि राजाओं ने मिलकर सेनापति-पद पर द्रोणाचार्य को स्थापित किया, उनका अभिषेक किया। उस समय कौरवगण विचित्र बाजे और शङ्ख बजाकर हर्ष प्रकट करने लगे। अब ब्राह्मणों ने पुण्याह-पाठ और

स्वस्तिवाचन किया, सूत-मागध-वन्दीजन स्तुतिगान करने लगे, ब्राह्मण लोग शुभ आशीर्वाद के साथ जय-जयकार करने लगे और सुन्दरी स्त्रियाँ नाचने-गाने लगीं। इस प्रकार विधिपूर्वक द्रोणाचार्य का सत्कार और अभिषेक करके, सेनापति बनाकर, कौरवों ने समझ लिया कि अब पाण्डव परास्त हो गये।

सञ्जय कहते हैं—सेनापति बनाये जाने पर महारथी द्रोणाचार्य युद्ध की इच्छा से कौरवसेना की व्यूहरचना करके आपके पुत्रों के साथ युद्ध के लिए चले। सिन्धुनरेश जयद्रथ, कलिङ्गनरेश और आपके पुत्र विकर्ण उनके दक्षिण भाग में सुसज्जित सेना के साथ स्थित हुए। गान्धार देश के प्रधान-प्रधान घुड़सवार, जिनके हाथों में उज्ज्वल प्रास चमक रहे थे, शकुनि की मातहती में उस सैन्य-भाग की रक्षा के लिए, उसके पीछे, चले। कृपाचार्य, कृतवर्मा, चित्रसेन, विविंशति और दुःशासन आदि वीर योद्धा द्रोणाचार्य के वाम भाग की रक्षा में नियुक्त हुए। राजा सुदक्षिण की अधीनता में वीर काम्बोज, शक और यवनगण शीघ्रगामी घोड़ों पर सवार हो इस सैन्यभाग की रक्षा के लिए पीछे-पीछे चले। इसी तरह मद्र, त्रिगर्त, अम्बष्ठ, प्रतीच्य, उदीच्य, मालव, शिवि, शूरसेन, शूद्र, मलद, सौवीर, कितव, प्राच्य और दाक्षिणात्य देशों के राजा और उनकी सेना—दुर्योधन और कर्ण को आगे करके—अपने पक्ष को आनन्दित और उत्साहित करती हुई आगे बढ़ी। सब धनुर्द्धरों में श्रेष्ठ महारथी कर्ण सब सेना के हृदय में बल और उत्साह बढ़ाते हुए सबके आगे चले। उनकी बहुत बड़ी ध्वजा सूर्य के समान चमक रही थी और हाथियों के बाँधने की सुवर्ण-शृङ्खला से रथ में बँधी हुई थी। उसे देखकर कुरु-सेना के हृदय में हर्ष और युद्ध के लिए उत्साह बढ़ रहा था। उस समय कर्ण को देखकर सब लोगों को भीष्म की मृत्यु का शोक भूल गया। कौरव और उनके पक्ष के राजा लोग शोक-हीन हो गये। बहुतेरे सुभट एकत्र होकर आपस में कहने लगे कि पाण्डवगण वीर कर्ण को देखते ही युद्धभूमि से भाग खड़े होंगे। पराक्रम और वीर्य में हीन पाण्डवों की कौन कहे, देवगण सहित इन्द्र भी समर में कर्ण को परास्त नहीं कर सकते। पराक्रमी भीष्म ने रण में

पाण्डवों की रक्षा की थी, उनको नहीं मारा था, किन्तु कर्ण उन्हें युद्ध में अवश्य अपने तीक्ष्ण बाणों से नष्ट कर देंगे। महाराज, योद्धा लोग इस तरह प्रसन्नतापूर्वक कर्ण की प्रशंसा करते हुए रणभूमि की ओर चले। हे नरनाथ, द्रोणाचार्य ने हमारी सेना में शकट-व्यूह की रचना की थी।

उधर युधिष्ठिर ने भी प्रसन्नतापूर्वक क्रौञ्च-व्यूह की रचना की। अपने रथ की वानर-युक्त ध्वजा को उड़ाते हुए महावीर अर्जुन और महात्मा श्रीकृष्ण उस व्यूह के मुखभाग में स्थित थे। सब योद्धाओं में श्रेष्ठ और सब धनुर्द्धरों के तेज के समूह-स्वरूप महातेजस्वी अर्जुन की ध्वजा आकाशमार्ग में स्थित होकर सारी सेना को प्रकाशित कर रही थी। उसे देखकर जान पड़ने लगा, मानों प्रलयकाल का सूर्य पृथ्वी को भस्म करने के लिए उदित हुआ है। अर्जुन सब योद्धाओं में, श्रीकृष्ण सब प्राणियों में, गाण्डीव धनुष सब धनुषों में और सुदर्शन चक्र सब चक्रों में श्रेष्ठ है। इन चारों श्रेष्ठ तेजों को धारण किये हुए, सफ़ेद घोड़ों से शोभित अर्जुन का रथ उद्यत कालचक्र के समान शत्रुसेना के आगे स्थित था। इस प्रकार कौरव-सेना के अग्रभाग में कर्ण और पाण्डव-सेना के अग्रभाग में अर्जुन खड़े होकर जय की और परस्पर वध की इच्छा से क्रुद्ध होकर एक दूसरे की ओर देखने लगे। ३०

महारथी द्रोणाचार्य जब युद्ध के लिए चले तब उनके सिंहनाद और शङ्खनाद से पृथ्वी काँप उठी। कौओं के समान काली तीव्र धूल हवा से उड़कर आकाशमण्डल में छा गई, इससे सूर्य भी छिप गये। आकाशमण्डल में बादल न होने पर भी मांस, हड्डी और रक्त की वर्षा होने लगी। हज़ारों गिद्ध, बाज़, कौए, कङ्क आदि मांसाहारी पक्षी सेनाओं के ऊपर मँडराने लगे। गीदड़ों के झुण्ड, भयानक चीत्कार करते हुए, मांस खाने और रक्त पीने की इच्छा से बारम्बार आपकी सेना के दाहने भाग में चक्कर लगाने लगे। बड़ी-बड़ी उल्काएँ, अपनी पूँछ फैलाये घोर शब्द करती और जलती हुई, संग्रामभूमि में गिरने लगीं। सेनापति के चलने के समय बिजली की चमक और कड़कड़ाहट के साथ सूर्य के चारों ओर बड़ा भारी मण्डल पड़ गया। कौरव-सेना के प्रस्थान के समय ये और अन्य अनेक घोर उत्पात दिखाई पड़ने लगे, जो कि युद्ध में वीरों की मृत्यु की सूचना दे रहे थे। ४०

अब परस्पर वध की इच्छा रखनेवाले सैनिकों में युद्ध होने लगा। कौरवों और पाण्डवों की सेना का घोर कोलाहल जगत् भर में फैल गया। जय की इच्छा रखनेवाले क्रुद्ध कौरव और पाण्डव एक दूसरे पर तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार करने लगे। महातेजस्वी महारथी द्रोणाचार्य सैकड़ों-हज़ारों तीक्ष्ण बाणों से शत्रुसेना को छिन्न-भिन्न करते हुए वेग से आगे बढ़े। उनको इस तरह युद्ध के लिए उद्यत देखकर पाण्डव और सृञ्जयगण भी अलग-अलग उन पर बाणों की वर्षा और उन्हें रोकने की चेष्टा करने लगे। द्रोणाचार्य भी पाण्डवों की महासेना और पाञ्चालों के दल में हलचल डालते हुए उन्हें छिन्न-भिन्न करने लगे। द्रोणाचार्य

के अनेक दिव्य अस्त्रों से व्यथित और पीड़ित पाण्डवों और पाञ्चालों की सेना वैसे ही तितर-बितर होने लगी जैसे हवा के झोंके से बादल फट जाते हैं। इन्द्र के प्रहार से पीड़ित असुरों के समान द्रोणाचार्य के प्रहारों से पीड़ित धृष्टद्युम्न आदि पाञ्चाल काँप उठे। तब दिव्य अस्त्रों के जाननेवाले धृष्टद्युम्न ने भी बाणवर्षा करके द्रोणाचार्य की सेना को उसी तरह छिन्न-भिन्न और पीड़ित किया। बली धृष्टद्युम्न ने अपने बाणों की वर्षा से द्रोणाचार्य की बाणवर्षा को रोककर सब कौरवों को अपने तीक्ष्ण बाणों से घायल कर दिया। महावीर द्रोणाचार्य अपनी
५० भागती हुई सेना को रोककर और युद्धभूमि में ठहराकर धृष्टद्युम्न की ओर दौड़े। जैसे क्रुद्ध होकर इन्द्र दानवों के ऊपर बाणवर्षा करें वैसे ही द्रोण भी धृष्टद्युम्न के ऊपर बाण बरसाने लगे। सिंह के मारे मृगों के समान द्रोण के बाणों से पीड़ित पाण्डव और सृञ्जयगण बारम्बार युद्ध से हटने लगे। जैसे जलती हुई लकड़ी घुमाई जाय वैसे ही द्रोणाचार्य बाणवर्षा करते हुए पाण्डवों की सेना में विचरने लगे। यह एक अद्भुत दृश्य देखने में आया। शास्त्रोक्त विधि से सुसज्जित आचार्य का रथ आकाश में घूमनेवाले नगर के समान देख पड़ रहा था। स्फटिक-सदृश उज्ज्वल ध्वजदण्ड से शोभित रथ के घूमते रहने से उसकी छोटी-छोटी पताकाएँ फहरा रही थीं। घोड़े हिनहिना रहे थे। उसकी गति देखकर अपने पक्ष के लोग प्रसन्न थे और शत्रुपक्ष के लोग डर
५४ रहे थे। ऐसे उत्तम रथ पर चढ़ हुए महात्मा द्रोणाचार्य शत्रुसेना का संहार करने लगे।

आठवाँ अध्याय

सञ्जय का द्रोणाचार्य के पराक्रम का वर्णन करके उनकी मृत्यु का समाचार कहना

सञ्जय ने कहा—महाराज, द्रोणाचार्य को इस प्रकार सारथी-रथ-हाथी-घोड़े आदि का संहार करते देखकर उनके प्रहार से व्यथित पाण्डवों की सेना और पाण्डवगण उनका सामना नहीं कर सके। तब राजा युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न और अर्जुन से कहा—हे वीरो, तुम सावधान होकर सब ओर से घेरकर द्रोणाचार्य को रोको। अब अर्जुन, धृष्टद्युम्न और उनके अनुगामी केकयनरेश, भीमसेन, अभिमन्यु, घटोत्कच, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, विराट, द्रुपद, शिखण्डी, द्रौपदी के पाँचों पुत्र, धृष्टकेतु, सात्यकि, चेकितान, युयुत्सु और अन्य राजा लोग द्रोणाचार्य के सामने जाकर अपने कुल और पराक्रम के अनुरूप अनेक अद्भुत कार्य करने लगे। रण में अपनी सेना को पाण्डवों की बाण-वर्षा से भागते देखकर महाबली द्रोणाचार्य ने लाल-लाल आँखें चढ़ाकर पाण्डवों की ओर देखा। युद्धदुर्मद द्रोणाचार्य तीव्र कोप के वश होकर रथ पर बैठे-बैठे ही बाणवर्षा से वैसे ही शत्रुसेना को सब ओर छिन्न-भिन्न करने लगे, जैसे आँधी मेघों को तितर-बितर कर डालती है। वृद्ध होने पर भी तरुणतुल्य बली और फुर्तीले द्रोणाचार्य क्रोध से उन्मत्त की तरह हाथी, घोड़े, रथ, मनुष्य

आदि की ओर इधर-उधर जा-जाकर उन्हें नष्ट करने लगे। वायु के समान वेगशाली द्रोणाचार्य के घोड़े स्वाभाविक लाल रङ्ग के थे, उस पर रक्त में सन जाने के कारण और भी लाल हो गये। इधर-उधर वेग से दौड़ने पर भी वे थके नहीं, आसानी से चारों ओर घूमने लगे। वे घोड़े अच्छी नस्ल के थे। क्रुद्ध काल के समान द्रोणाचार्य को आते देखकर पाण्डवपक्ष के योद्धा लोग इधर-उधर भागने लगे। इधर-उधर भागते, लौटते, युद्ध को देखते और ठहरते योद्धाओं का दारुण कोलाहल चारों ओर गूँज उठा। शूरों के हृदय में हर्ष और कायरों के हृदय में भय उत्पन्न करनेवाला वह कोलाहल आकाश और पृथ्वी में भर गया। द्रोणाचार्य युद्धभूमि में वारम्वार अपना नाम सुना-सुनाकर असंख्य वाणों से शत्रु-सेना को आच्छन्न करते हुए भयानक हो उठे। बली द्रोणाचार्य साक्षात् काल

११

की तरह पाण्डवों की सेना के बीच विचर रहे थे। वे उग्र रूप धारण करके शूरों के सिर और अलङ्कार-शोभित भुजाएँ काट-काटकर गिराते हुए घोर सिंहनाद कर रहे थे। द्रोणाचार्य ने वाणों की वर्षा से शत्रुसेना के रथों को रथियों और सारथियों से ख़ाली कर दिया। द्रोणाचार्य के वाणों की वर्षा और हर्षसूचक सिंहनाद से योद्धा लोग जाड़े से पीड़ित गायों के समान काँपने लगे। द्रोणाचार्य के रथ-चक्रों की घरघराहट, प्रत्यञ्चा के शब्द और धनुष के निर्घोष से आकाश में घोर प्रतिध्वनि होने लगी। उनके धनुष से लगातार निकले हुए हज़ारों वाण सब दिशाओं में व्याप्त हो गये, और हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि के ऊपर वेग से गिरने लगे। पाण्डवों और सृञ्जयों ने देखा कि धनुष और अन्य अस्त्र-शस्त्रों से प्रज्वलित अग्नि के समान द्रोणाचार्य उनकी सेना को भस्म कर रहे हैं। पाण्डव और सृञ्जयगण उनके पास पहुँचकर उन्हें रोकने की चेष्टा करने लगे। महापराक्रमी द्रोणाचार्य ने हाथियों, रथों, पैदलों और घोड़ों सहित पाण्डव-सेना का संहार करके बहुत शीघ्र पृथ्वी पर रक्त की कीच कर दी। वे ऐसे वाण बरसाने लगे और दिव्य अस्त्रों का प्रयोग करने लगे कि चारों ओर हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि के ऊपर वाण ही वाण दिखाई पड़ने लगे। उनके रथ की ध्वजा बादलों में बिजली की तरह सर्वत्र घूमती दिखाई पड़ रही थी।

२०

अब वीर द्रोणाचार्य केकयदेश के पाँचों राजकुमारों को और पाञ्चालराज द्रुपद को अपने बाणों से पीड़ित करके हाथ में धनुष-बाण लिये युधिष्ठिर की सेना के बीच और आगे बढ़े। इतना पराक्रम और परिश्रम करके वे तनिक भी नहीं थके। उन्हें देखकर सिंहनाद करते हुए भीमसेन, अर्जुन, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, काशिराज और शिवि, ये सब वीर उन पर बाणों की वर्षा करने लगे। द्रोणाचार्य के धनुष से निकले हुए तीक्ष्ण और सुवर्णमय विचित्र पुङ्ख से शोभित बाण हाथी, घोड़े और नौजवान योद्धा आदि के शरीरों को फाड़कर पृथ्वी में घुस जाते थे। उनके विचित्र पङ्ख रक्त में भीग जाते थे। बाणों के प्रहार से कट-कटकर गिरे हुए योद्धा, रथ, हाथी, घोड़े आदि से परिपूर्ण रणभूमि काले मेघों से व्याप्त आकाश की तरह शोभायमान हुई। महाराज! आपके पुत्रों का विभव और विजय चाहनेवाले वीर द्रोणाचार्य ने सात्यकि, भीमसेन, अर्जुन, धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, द्रुपद, काशिराज आदि अन्यान्य सब वीरों को अपने अद्भुत पराक्रम से पीड़ित और व्यथित किया। महाराज! ये और अन्य अनेक अद्भुत कार्य करके, प्रलयकाल के प्रचण्ड सूर्य के समान सब लोकों को तपाकर, अन्त को महात्मा द्रोणाचार्य भी इस लोक को छोड़कर स्वर्ग को सिधार गये। सुवर्णमण्डित रथ पर सवार द्रोणाचार्य इस तरह सैकड़ों-
३० हज़ारों शूरों को मारकर पाण्डवों से लड़ते-लड़ते धृष्टद्युम्न के हाथ से मारे गये। धैर्यशाली महावीर द्रोणाचार्य, समर में जमकर लड़नेवाले वीरों की एक अक्षौहिणी से भी अधिक सेना का संहार करने के बाद, परमगति को प्राप्त हुए। महाराज, अनेक अद्भुत कर्म करके क्रूरकर्मा अशुभ पाञ्चालों और पाण्डवों के हाथों महारथी द्रोणाचार्य मारे गये। युद्ध में आचार्य की मृत्यु होने पर आकाश में सिद्धगण, देवगण और पृथ्वी पर आपके पक्ष के सैनिक लोग घोर शोकसूचक कोलाहल करने लगे। सब प्राणी बारम्बार कहने लगे कि अहो, धिक्कार है! उनके इस शब्द की प्रतिध्वनि आकाश, अन्तरिक्ष, पृथ्वी और सब दिशाओं में गूँज उठी। देवों, पितरों और आचार्य के भाई-बन्धुओं ने देखा कि महारथी द्रोणाचार्य पृथ्वी पर मरे पड़े हैं। पाण्डव लोग इस तरह जय प्राप्त करके आनन्द से सिंहनाद करने और शङ्ख
३६ बजाने लगे। उनके सिंहनाद से पृथ्वी काँपने लगी।

नवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र का शोकाकुल होना

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय, द्रोणाचार्य तो सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ और सब शस्त्रों के युद्ध में निपुण थे। उन्हें जिस समय पाण्डवों और सृञ्जयों ने मिलकर मारा उस समय वे क्या कर रहे थे? उनका रथ टूट गया था या धनुष कट गया था, अथवा वे असावधान थे,

जो उनकी मृत्यु हुई? शत्रुओं के लिए दुर्द्धर्ष, सुवर्णपुङ्ख असंख्य तीक्ष्ण बाण बरसानेवाले, फुर्तीले, कृतविद्य, विचित्र युद्ध में अद्वितीय, बहुत दूर तक बाण को पहुँचा सकनेवाले, दिव्य अस्त्रों के ज्ञाता, अस्त्रयुद्ध के पारगामी, जितेन्द्रिय, द्विजश्रेष्ठ द्रोणाचार्य को धृष्टद्युम्न कैसे मार सका? मेरी समझ में पौरुष की अपेक्षा दैव ही प्रबल है। ऐसा न होता तो रण में दारुण कर्म करनेवाले, सावधान, महारथी द्रोण के हाथ में धनुष-बाण रहने पर भी धृष्टद्युम्न उन्हें कैसे मार डालता? चतुर्विध अस्त्रों के जाननेवाले, शस्त्रधारियों के आचार्य द्रोण की मृत्यु होना तुम बता रहे हो! सुवर्णमय और व्याघ्रचर्ममण्डित रथ पर चढ़नेवाले द्रोणाचार्य के मारे जाने की ख़बर पाकर मेरा शोक किसी तरह शान्त नहीं होता। हे सञ्जय, यह निश्चय है कि पराये दुःख को सुनकर उस दुःख से किसी के प्राण नहीं निकलते। तभी तो मन्दमति मैं, द्रोणाचार्य की मृत्यु का समाचार सुनकर भी, अब तक जीवित हूँ। इस समय मुझे दैव ही प्रधान और प्रबल जान पड़ता है; पौरुष निरर्थक है। हाय! मेरा यह हृदय वज्र का बना हुआ है जो द्रोण की मृत्यु सुनकर भी इसके सौ टुकड़े नहीं हो जाते! गुण सीखने की इच्छा से ब्राह्म और दैव अस्त्र सीखने के लिए ब्राह्मण- १० कुमार और राजपुत्र जिनकी सेवा करते थे वही द्रोणाचार्य आज मृत्यु के वश कैसे हुए? हे सञ्जय! समुद्र का सूख जाना, सुमेरु का जड़ से उखड़ना, सूर्य का पृथ्वी पर गिर पड़ना और द्रोणाचार्य का मरना समान है। द्रोणाचार्य की मृत्यु मेरे लिए असह्य हो रही है।

दुष्टों का दमन और धर्मात्मा पुरुषों की रक्षा करनेवाले शत्रुदमन द्रोणाचार्य ने दुर्मति दुर्योधन के लिए ही अपने प्राण दिये। मेरे दुर्मति पुत्रों की जय की आशा जिन पर निर्भर थी, जो बुद्धि में बृहस्पति और शुक्र के समान थे, वे द्रोणाचार्य किस तरह मारे गये? द्रोणाचार्य के रथ के घोड़े सुवर्णमय जाल ओढ़े रहते थे; वे घोड़े सब प्रकार के शस्त्रों के प्रहार को बचा जाते थे और संग्राम के समय दृढ़ता से डटे रहते थे; वे शङ्ख-दुन्दुभि-नाद, हाथियों की चिंघार और प्रत्यञ्चाओं के घोर घोष को सुनकर भी भड़कते नहीं थे; वे अनायास शस्त्रों और बाणों की वर्षा को सह लेते थे; वे बहुत परिश्रम करने पर भी थकते या हाँफते नहीं थे और शत्रुओं की हार की सूचना देते थे; वे लाल रङ्ग के, ऊँचे-पूरे, हवा के समान वेग से चलनेवाले, शान्त, सुशिक्षित, कभी विह्वल न होनेवाले सिन्धु देश के घोड़े क्या पराजित हो गये थे? सुवर्णभूषित और नरवीर द्रोणाचार्य के द्वारा शोभित रथ में जुते हुए वे घोड़े पाण्डवों की सेना में घुसकर उसके पार क्यों नहीं पहुँच सके? सत्यपराक्रमी द्रोणाचार्य ने सुवर्णमण्डित श्रेष्ठ रथ पर बैठकर युद्धभूमि में २० क्या-क्या किया था? हे सञ्जय! सब लोकों के धनुर्द्धर वीरों ने जिनसे अस्त्र-शस्त्र-विद्या सीखी थी, उन सत्यसन्ध बली द्रोणाचार्य ने किस तरह युद्ध किया था? उग्रधन्वा इन्द्रसदृश धनुर्द्धर-श्रेष्ठ द्रोणाचार्य के सामने कौन-कौन योद्धा युद्ध करने आये थे? सुवर्णमण्डित रथ पर विराजमान उन महाबली द्रोणाचार्य को दिव्य अस्त्र छोड़ते देखकर पाण्डव क्या भाग खड़े हुए थे? अथवा

सेनापति धृष्टद्युम्न, अर्जुन आदि भाई और सब सेना को साथ लिये हुए धर्मराज ने चारों ओर से द्रोणाचार्य को घेर लिया था? अवश्य अर्जुन ने अपने तीक्ष्ण बाणों से और राजाओं को द्रोणाचार्य के पास सहायता के लिए नहीं पहुँचने दिया होगा, तभी पापकर्मा धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य को मार सका। अर्जुन के द्वारा सुरक्षित तेजस्वी रौद्ररूप धृष्टद्युम्न के सिवा और कोई मुझे द्रोणाचार्य को मारनेवाला नहीं देख पड़ता। मैं समझता हूँ कि जैसे चींटियाँ साँप को घेरकर व्याकुल कर देती हैं वैसे ही नराधम पाञ्चालों की सेना तथा केकय, चेदि, करूप, मत्स्य और अन्यान्य देशों के क्षुद्र राजाओं के द्वारा घेरे और व्याकुल किये गये दुष्कर कर्म करनेवाले आचार्य को धृष्टद्युम्न ने मारा होगा। जैसे नदियों में सागर श्रेष्ठ है वैसे ही द्रोणाचार्य सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ थे। उन्होंने सब वेद, वेदाङ्ग और इतिहास-पुराण पढ़े थे। वे ब्राह्मण भी थे
३० और क्षत्रियधर्म के अनुयायी भी थे। वे शस्त्र और शास्त्र दोनों में पारङ्गत थे। वे वृद्ध ब्राह्मण शस्त्र के द्वारा कैसे मारे गये? मैंने क्रोधवश सदा पाण्डवों को क्लेश पहुँचाया; किन्तु द्रोणाचार्य ने क्लेश के अयोग्य पाण्डवों को सदा स्नेह की दृष्टि से देखा, और अर्जुन को सबसे बढ़कर युद्ध-विद्या सिखाई। उसी का यह फल उन्हें मिला। सब धनुर्द्धर योद्धा जिनके शिष्य हैं, जिनकी दी हुई शिक्षा से अपनी जीविका चलाते हैं, उन द्रोणाचार्य को राज्यश्री पाने की इच्छा रखनेवाले पाण्डवों ने कैसे मारा? द्रोणाचार्य सत्यवादी, सत्यप्रतिज्ञ और पुण्यात्मा थे। वे महासत्त्व, महाबली और देवताओं में जैसे इन्द्र श्रेष्ठ हैं वैसे ही वीर पुरुषों में श्रेष्ठ थे। उन फुर्तीले, दृढ़धन्वा, शत्रुमर्दन, बलवान् द्रोणाचार्य को, क्षुद्र मछलियाँ जैसे तिमि नामक महामत्स्य को मार डालें वैसे ही, पाण्डवों ने कैसे मार डाला? द्रोणाचार्य के सामने पहुँचकर विजय की इच्छा रखनेवाला कोई भी व्यक्ति जीवित नहीं बच सकता था। वेदपाठियों के वेदपाठ का शब्द और धनुर्विद्या सीखनेवालों के धनुष का शब्द सदा द्रोणाचार्य के यहाँ सुनाई पड़ता था। अर्थात् शास्त्र पढ़नेवाले और धनुर्विद्या सीखनेवाले विद्यार्थी सदा उनके पास बने रहते थे। कभी दीन न होनेवाले, पुरुषसिंह, श्रीयुक्त, अपराजित और धनुर्द्धरों के आचार्य द्रोण को रथियों ने किस तरह मार डाला? जिनका यश और बल दुर्द्धर्ष था, उन सिंह और गजराज के सदृश पराक्रमी द्रोणाचार्य को सब नरेन्द्रों के सामने धृष्टद्युम्न ने कैसे मारा? हे सञ्जय! दुर्गम गति से जानेवाले किन वीरों ने द्रोणाचार्य के आगे रहकर युद्ध किया था? कौन वीर योद्धा द्रोणाचार्य के पास रहकर उनकी रक्षा कर रहे थे और कौन वीर उनके पश्चाद्भाग की रक्षा करते थे? महात्मा द्रोणाचार्य के रथ के दहिने पहिये और बाँयें पहिये की रक्षा करनेवाले कौन वीर थे? संग्राम के समय कौन लोग द्रोणाचार्य के आगे
४० स्थित थे? किन वीरों ने द्रोणाचार्य से युद्ध करके वीरगति प्राप्त की? किन वीरों ने परम धैर्य के साथ आचार्य का सामना किया था? मन्दमति कायर क्षत्रिय, जो उनके सहायक

और रक्षक थे, उन्हें छोड़कर भाग तो नहीं गये थे ? उसी समय में तो कहीं उन्हें अकेले पाकर शत्रुओं ने नहीं मार डाला ? महाशूर द्रोणाचार्य कभी विकट आपत्ति या सङ्कट के समय भी शत्रु के डर से युद्ध में पीठ नहीं दिखाते थे। उन्हें शत्रुओं ने किस तरह मारा ? घोर सङ्कट और विपत्ति के आ पड़ने पर भी आर्य पुरुष का कर्तव्य है कि यथाशक्ति अपना पराक्रम दिखलावे, डरे और भागे नहीं। महात्मा द्रोणाचार्य में यह बात थी। हे सञ्जय! शोक के मारे मैं घबरा रहा हूँ, मुझे मूर्च्छा आ रही है। तुम अभी चुप रहो। जब मेरा जी ठिकाने होगा तब मैं तुमसे सब वृत्तान्त पूछूँगा। ४५

दसवाँ अध्याय

धृतराष्ट्र का सचेत होकर फिर सञ्जय से द्रोण के मारे जाने का वृत्तान्त पूछना

वैशम्पायन कहते हैं—हे जनमेजय! महाराज धृतराष्ट्र सञ्जय से इस तरह पूछते-पूछते हार्दिक शोक से व्याकुल और अपने पुत्रों की जय से निराश हो, अचेत होकर, पृथ्वी पर गिर पड़े। तब अचेत पड़े हुए राजा धृतराष्ट्र को दासियाँ हवा करने लगीं, सुगन्धित शीतल जल छिड़कने लगीं। कुरुकुल की स्त्रियों ने बूढ़े राजा को अचेत होकर गिरते देखकर चारों ओर से घेर लिया। उन्होंने उन्हें हाथों से छूकर धीरे-धीरे पृथ्वी से उठाकर सिंहासन पर बिठाया। उन स्त्रियों की आँखों में आँसू भर आये। वे चारों ओर से हवा करने और उनकी सेवा करने लगीं। कुछ समय के बाद धृतराष्ट्र को होश आया किन्तु उनका शरीर उस समय भी काँप रहा था। उन्होंने फिर सञ्जय से सब वृत्तान्त पूछा।

धृतराष्ट्र ने कहा—हे सञ्जय! जैसे उदय हो रहे सूर्य अपने तेज से अँधेरे को नष्ट कर देते हैं वैसे ही शत्रुसेना को नष्ट करनेवाले द्रोणाचार्य के पास आते हुए राजा युधिष्ठिर का सामना किस वीर ने किया था ? जैसे अपने विपक्षी यूथप हाथियों के द्वारा न जीता जा सकनेवाला, वेग से चलनेवाला, मस्त गजराज अन्य गजराज को हथिनी के समागम से प्रसन्न देखकर कुपित होकर उस पर आक्रमण करने के लिए चलता है, वैसे ही वीरश्रेष्ठ युधिष्ठिर ने शत्रुसेना में प्रवेश करके रण में वीरों को मारा होगा। महात्मा युधिष्ठिर अकेले ही अपनी दारुण क्रोधदृष्टि से दुर्योधन की सेना को भस्म कर सकते हैं। युधिष्ठिर महावीर, धीर, सत्य- १० वादी, जय की इच्छा रखनेवाले और अतुल पराक्रमी धनुर्द्धर हैं; वे दृष्टि से ही शत्रु को नष्ट करने की शक्ति रखनेवाले, जितेन्द्रिय, जगन्मान्य, दुर्द्धर्ष और अजातशत्रु हैं। उनसे लड़ने के लिए मेरे पक्ष के कौन-कौन वीर अग्रसर हुए थे ? जो बड़े वेग से एकाएक द्रोणाचार्य के सामने गये होंगे, जो रण में शत्रुसेना के बीच बड़े-बड़े अद्भुत कर्म करते हैं, उन महाकाय, महान्

उत्साही, दस हज़ार हाथियों का बल रखनेवाले भीमसेन ने जब द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया तब उनको मेरे पक्ष के किन-किन वीरों ने रोका ?

मेघ-सदृश, परम पराक्रमी अर्जुन जब, वज्रवर्षा करते हुए इन्द्र जैसे जल बरसाते हैं वैसे, बाण बरसाते हुए तल-घोष से और रथ के घर्घरनाद से सब दिशाओं को पूर्ण करते हुए सामने आये थे तब हमारे पक्ष के वीरों की क्या दशा हुई थी ? गाण्डीव धनुप धारण करनेवाले अर्जुन जब मेघ के समान गृध्रपत्रयुक्त बाण बरसाते हुए दुर्योधन आदि के आगे आये तब, हमारी सेना की क्या दशा हुई ? अर्जुन का धनुष बिजली की तरह चमक रहा होगा। रथ घटा के समान घिरे हुए होंगे। रथ का घर्घर शब्द ही मेघगर्जन सा प्रतीत हो रहा होगा। बाणों का शब्द ही बिजली की कड़कड़ाहट जान पड़ती होगी। मन और मनोरथ के समान वेग से वे सर्वत्र विचर रहे होंगे। क्रोध से मेघ को भी मात करनेवाले अर्जुन ने मर्मभेदी बाणों से जल की तरह रक्त बहाकर सब दिशाओं को प्लावित कर दिया होगा। भयङ्कर सिंहनाद करते हुए अर्जुन आकाश को बाणों से व्याप्त करते हुए जिस समय सामने आये होंगे उस समय २१ उन्हें देखकर हमारे पक्ष के राजाओं का क्या हाल हुआ होगा ? जब भयानक कर्म करते हुए अर्जुन तुम लोगों के सामने आये थे तब गाण्डीव धनुष का शब्द सुनकर ही तो हमारी सेना नहीं भाग खड़ी हुई थी ? हवा जैसे मेघों को और सेंठे के वन को छिन्न-भिन्न करती है, वैसे ही अर्जुन ने तुम लोगों का वध तो नहीं किया ? जिन्हें सेना के आगे स्थित सुनकर ही योधाओं की छाती दहल जाती है, उन गाण्डीव-धनुषधारी अर्जुन का सामना कौन कर सकता है ? सैनिकों को विचलित, कम्पित और वीरों को भयविह्वल करनेवाले घोर संग्राम में किन वीरों ने द्रोणाचार्य का साथ नहीं छोड़ा, और कौन कायर डर के मारे रण से भाग खड़े हुए ? किन लोगों ने रण में प्राण त्यागकर प्रशंसनीय वीर-गति पाई ? मैं समझता हूँ कि समर में देवताओं को भी परास्त कर सकनेवाले अर्जुन के तेज, घोड़ों के वेग और वर्षाकाल की घनघटा के घोर गर्जन-सदृश गाण्डीव-घोष को मेरे सैनिक कभी नहीं सह सकते—अर्जुन का सामना नहीं कर सकते। मतलब यह कि जनार्दन जहाँ रथ हाँकनेवाले सारथी और अर्जुन रथी हैं, उस पक्ष को देवता भी नहीं हरा सकते।

जिस समय सुकुमार, युवा, शूर, दर्शनीय, बुद्धिमान्, युद्धनिपुण, धीर और सत्यपराक्रमी नकुल महासिंहनाद से सैनिकों को विह्वल करते हुए द्रोणाचार्य के पास पहुँचे थे उस समय ३० किन वीरों ने उनका सामना किया था ? सफ़ेद घोड़ों से युक्त रथ पर बैठनेवाले, समर में दुर्जय, आर्यव्रती, ह्रीमान्, अपराजित सहदेव विषैले नाग के समान क्रोध से फुफकारते हुए, शत्रुओं को पीड़ित करने के लिए, जब रणाङ्गण में आये थे तब किन-किन वीरों ने उनका सामना किया था ? जयद्रथ की विशाल सेना को दल-मलकर कमनीय, सर्वाङ्गसुन्दरी, भोजनन्दिनी

रानी को हर लानेवाले, अखण्ड ब्रह्मचर्य, सत्य, धैर्य और शौर्य को धारण करनेवाले, महाबली, सत्यकर्मा, उत्साही, अपराजित, संग्राम में वासुदेव-सदृश, वासुदेव के अनुज, अर्जुन की दी हुई शिक्षा पाकर अस्त्रादि के प्रयोग में औरों से श्रेष्ठ और अर्जुन के समकक्ष सात्यकि जब द्रोणाचार्य के पास पहुँचे थे तब किन-किन वीरों ने उन्हें रोका था ? वृष्णिवंश में श्रेष्ठ, सब धनुर्द्धरों में अग्रगण्य, अस्त्र-शस्त्र आदि के प्रयोग में निपुण, यश और अस्त्रविद्या में परशुराम के समान, और जैसे श्रीकृष्ण त्रिभुवन के आश्रयस्वरूप हैं वैसे ही उत्कृष्ट अस्त्रों के जानकार, प्रधान यादव सात्यकि सत्य, धैर्य, बुद्धि, और वीरता के आधार हैं। उनके वेग को किन-किन वीरों ने रोका था ? पाञ्चालों में श्रेष्ठ, कुलीनों के प्रेमपात्र, सत्कर्मनिरत, अर्जुन के हितचिन्तक, मेरे अनिष्ट के लिए उत्पन्न, यम कुवेर सूर्य इन्द्र चन्द्र वरुण के समान प्रसिद्ध महारथी उत्तमौजा जिस समय द्रोण के साथ प्राणपण से युद्ध करने को तैयार हुए थे उस समय किन-किन वीरों ने उन्हें रोका था ? जो महावीर धृष्टकेतु अकेले ही पाण्डवों की सहायता के लिए चेदि देश से आकर युद्ध में शामिल हुए हैं वे जब द्रोण पर आक्रमण करने चले थे तब उन्हें किसने रोका था ? जिन वीर ने गिरिद्वार में भागते हुए दुर्द्धर्ष राजपुत्र को मारा था, उन केतुमान् को द्रोण के पास आने से किसने रोका था ? ४२

जो पुरुषसिंह स्त्री और पुरुष दोनों के गुण-दोषों को जानते हैं, जो महात्मा भीष्म की मृत्यु का कारण हैं, वे उत्साही राजपुत्र शिखण्डी जब प्रसन्नतापूर्वक द्रोणाचार्य के सामने आये थे तब उन्हें किसने रोका था ? जो अर्जुन से भी अधिक गुणी हैं, जो अस्त्रविद्या सत्य और ब्रह्मचर्य के अखण्ड आधार हैं, जो वीरता में श्रीकृष्ण के सदृश, बल में अर्जुन के समान, तेज में आदित्य के तुल्य और बुद्धि में वृहस्पति की बराबर हैं, वे मुँह फैलाकर आते हुए काल के समान वीरवर अभिमन्यु जब द्रोणाचार्य के सामने आये थे तब किन वीरों ने उनका सामना किया था ? जिस समय वे तरुण प्रज्ञ युवा अभिमन्यु द्रोण पर आक्रमण करने वेग से चले थे उस समय तुम लोगों के मन की क्या दशा हुई थी ? जैसे सब नद-नदी आदि समुद्र की ओर वेग से जाते हैं वैसे ही द्रौपदी के पाँचों पुत्रों ने जब द्रोणाचार्य पर हमला किया था, तब उन्हें किन वीरों ने रोका था ? बाल्यावस्था में बारह वर्ष तक खेल-कूद छोड़कर, कठोर ब्रह्मचर्य धारण करके, भीष्म पितामह के पास रहकर युद्धकला सीखनेवाले धृष्टद्युम्न के चारों पुत्र—क्षत्रञ्जय, क्षत्रदेव, क्षत्रवर्मा और मानद—जब युद्धभूमि में देख पड़े थे तब उन्हें किन वीरों ने रोका था ? जिन्हें वृष्णिवंश के वीर यादव सौ वीरों से भी अधिक बलवान् और पराक्रमी समझते हैं, उन महाबली चेकितान को किन वीरों ने द्रोण की ओर बढ़ने से रोका था ? कलिङ्गकुमारी को हरण करनेवाले साहसी अनाधृष्टि वार्धक्षेमि को आचार्य पर हमला करने से किसने रोका था ? धर्मात्मा, सत्यनिष्ठ, लाल ध्वजा और लाल शस्त्रों से शोभित, लाल ५०

कवच धारण करनेवाले, देखने में बीरबहूटी के समान लाल, पाण्डवों के मौसेरे भाई, पाण्डवों की जय चाहनेवाले, पाँचों भाई केकय-राजकुमार जब द्रोणाचार्य को मारने के लिए आगे बढ़े थे तब उन्हें किन-किन वीरों ने रोका था ? वारणावत में क्रुद्ध और मारने को तत्पर होकर छः महीने तक युद्ध करके भी राजा लोग जिन्हें परास्त नहीं कर सके, जिन्होंने वाराणसीपुरी में स्त्री-लोभी महारथी काशिराज के पुत्र को भल्ल के द्वारा रथ से नीचे मार गिराया था, उन

६० सत्यपरायण युयुत्सु को द्रोणाचार्य के ऊपर आक्रमण करते समय किन-किन वीरों ने रोका था ? महाधनुर्द्धर, पाण्डवों के प्रधान मन्त्री और सेनापति, दुर्योधन के परम शत्रु और द्रोणवध के लिए ही उत्पन्न, धृष्टद्युम्न जिस समय मेरे सैनिकों को मारते और छिन्न-भिन्न करते हुए द्रोणाचार्य के सामने पहुँचे थे उस समय उनको किन-किन वीरों ने रोका था ? द्रुपदराज की गोद में पले और बढ़े हुए और अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा सुरक्षित शिखण्डी जब द्रोणाचार्य पर क्रोध करके झपटे थे तब उन्हें किन-किन वीरों ने रोका था ?

हे सञ्जय ! जिन्होंने चर्म-सदृश इस भूमण्डल को घेर रक्खा था, जिन शत्रुपक्ष के वीरों को मारनेवाले महारथी के रथ से भयानक शब्द उत्पन्न होता है, जिन्होंने स्वादिष्ठ उत्तम खाने-पीने के पदार्थ खिला-पिलाकर और यथेष्ट दक्षिणा देकर बिना किसी प्रकार के विघ्न के दस अश्वमेध यज्ञ किये हैं, जो पुत्र के समान अपनी प्रजा का पालन करते हैं, जिन्होंने यज्ञों में अगणित गोदान किये हैं, जिनके बराबर गोदान कभी कोई नहीं कर सका, और जिनका यह दुष्कर कार्य पूरा होने पर देवताओं ने जिनका नाम लेकर कहा था कि "इस जगत् में उशीनर-तनय के समान महात्मा कोई नहीं उत्पन्न हुआ, न होगा और न इस समय है", उन उशीनर के वंशधर शैव्य का सामना किसने किया था ? राजा विराट की रथ-सेना जब, मुँह फैलाये हुए

७१ काल की तरह, आचार्य पर आक्रमण करने आई थी तब उसे किन वीरों ने रोका था ? जो महापराक्रमी मायावी राक्षस भीमसेन से तत्काल उत्पन्न हुआ था, जिसे मैं बहुत ही डरता हूँ, जो पाण्डवों की जय चाहनेवाला और मेरे पुत्रों का कण्टक है, वह घटोत्कच जब द्रोणाचार्य के सामने आया था तब उसको किन-किन वीरों ने रोका था ?

हे सञ्जय ! ये सब और अन्यान्य वीरगण जिनके लिए प्राणपण से रण कर रहे हैं, और पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण जिनके सहायक और हितचिन्तक हैं, वे पाण्डव किस तरह परास्त हो सकते हैं। श्रीकृष्ण लोकगुरु, लोकनाथ, सनातन पुरुष, समर में मानवों को शरण देनेवाले, दिव्य-रूप और प्रभु हैं। पण्डित लोग उनके सम्पूर्ण दिव्य कर्मों का वर्णन करते हैं। मैं भी अपने

७७ चित्त को शान्त करने के लिए उन श्रीकृष्ण के गुणों का कीर्तन करूँगा।

इन्होंने वृषभ (वृषरूपधारी असुर)......को मारा है ।—२१८७

ग्यारहवाँ अध्याय

धृतराष्ट्रकृत श्रीकृष्ण-गुण-वर्णन

धृतराष्ट्र बोले—हे सञ्जय ! गोविन्द के अलौकिक कर्म सुनो। इन महात्मा ने लड़कपन में ही गोपमण्डली में पलकर अपने बाहुबल का परिचय त्रिभुवन भर में दिया था। इन्होंने उच्चैःश्रवा (इन्द्र के घोड़े) के समान बली और हवा के समान तेज़ चलनेवाले यमुनावन-वासी केशी दैत्य का दमन किया। [श्रीकृष्ण ने पूतना, शकटासुर, धेनुक, महाबली अरिष्टासुर आदि को मारा है। महाबाहु वासुदेव ने गोवर्द्धन गिरि उठाकर शिलावर्षा से व्रज को बचाया और दावानल भी बुझाया है।] इन्होंने ऋषभ (वृषरूपधारी असुर), प्रलम्बासुर, नरकासुर, जम्भ, महासुर पीठ और यमतुल्य मुर दानव को मारा है। निहत्थे श्रीकृष्ण ने पराक्रम के साथ रण में कंस को, जिसका सहायक महाबली अजेय जरासन्ध था, उसके साथियों समेत मार डाला है। महापराक्रमी, अक्षौहिणीपति, भोजराज के मध्यस्थ, कंस के भाई, शूरसेन देश के राजा, सुनामा को भी बलदेव सहित श्रीकृष्ण ने युद्ध में मारा और उसकी सेना को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। महाक्रोधी महर्षि दुर्वासा को, सेवा करके, अपनी पत्नी सहित श्रीकृष्ण ने एक समय प्रसन्न किया और उनसे अमोघ वर प्राप्त किये। श्रीकृष्ण स्वयंवर में गान्धारराज की कन्या को हर लाये, सब राजाओं को वहाँ हराया और उस कन्या के साथ उन्होंने व्याह किया। राजा लोग यह नहीं सह सके कि राजकन्या उन्हें न मिलकर श्रीकृष्ण को मिले। १० अशील घोड़ा जैसे चाबुक की चोट नहीं सह सकता, वैसे ही वे उसे न सहकर विवाह के अवसर पर बिगड़ खड़े हुए। श्रीकृष्ण ने बाण-रूप कोड़ों की मार से उनकी चमड़ी उधेड़ दी। जनार्दन श्रीकृष्ण ने अनेक अक्षौहिणी सेना के स्वामी महाबाहु जरासन्ध को कौशल से भीमसेन के हाथों द्वन्द्वयुद्ध में मरवा डाला। धर्मपुत्र युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर राजसेना के अगुआ महाबली चेदिराज शिशुपाल ने सबसे पहले श्रीकृष्ण को अर्घ्य (पूजा) मिलते देखकर उसका विरोध किया तब, इसी कारण, श्रीकृष्ण ने कुपित होकर पशु की तरह उसे तुरन्त मार डाला। श्रीकृष्ण ने शाल्व के पराक्रम से सुरक्षित दुर्द्धर्ष आकाशगामी मायामय सौभ नामक दैत्यपुर को पराक्रम से तोड़-फोड़कर समुद्र में गिरा दिया। उन्होंने अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, मगध, काशी, कोसल, वात्स्य, गार्ग्य, करूप, पौण्ड्र, अवन्ती, दाक्षिणात्य, पहाड़ी, दाशेरक, काश्मीर, औरसिक, पिशाच, मुद्गल, काम्बोज, वाटधान, चोल, पाण्ड्य, त्रिगर्त, मालव, दुर्जय, दरद, खश, शक और अन्य अनेक देशों और उनके राजाओं को जीता। अनुचरों सहित आये हुए महाशक्तिशाली कालयवन को उन्होंने अपने बाहुबल से मार भगाया। उन्होंने विकट जल-जन्तुओं से पूर्ण समुद्र के भीतर प्रवेश किया, और जल के भीतर जाकर वरुण देव को अपने वश में कर लिया।

उन माधव ने पाताल-तलवासी पञ्चजन दानव को युद्ध में मारकर दिव्य पाञ्चजन्य शङ्ख उससे
२० प्राप्त किया। महात्मा जनार्दन ने अर्जुन के साथ खाण्डव वन में अग्नि को तृप्त किया, और उनसे आग्नेयास्त्र तथा दुर्द्धर्ष चक्र प्राप्त किया। महावीर श्रीकृष्ण गरुड़ पर बैठकर अमरावती पुरी गये, और अमरावती-निवासी देवगण को भयविह्वल करके इन्द्र-भवन से पारिजात का वृक्ष उखाड़ लाये। इन्द्र उनके पराक्रम को अच्छी तरह जानते थे, इसी से लाचार होकर उन्हें सब सहना पड़ा।

हे सञ्जय! मैंने कभी यह नहीं सुना कि ऐसा कोई राजा है जिसे श्रीकृष्ण ने नहीं हराया, या नीचा नहीं दिखाया। उन कमल-लोचन महातेजस्वी श्रीकृष्ण ने सभा के बीच जैसा अद्भुत काम कर दिखाया था वैसा काम उनके सिवा और कौन कर सकता है? भक्ति से विशुद्धात्मा होकर मैंने परमेश्वर श्रीकृष्ण को देखा है। इसी से उनके सब कर्म मुझे प्रत्यक्ष से दिखाई पड़ रहे हैं। पराक्रमी बुद्धिमान् वासुदेव के कार्य अनन्त हैं, उनकी गिनती नहीं की जा सकती। महात्मा केशव की आज्ञा से गद, साम्ब, प्रद्युम्न, विदूरथ, अवगाह, अनिरुद्ध, चारुदेष्ण, सारण, उल्मुक, निशठ, पराक्रमी झिल्लीबभ्रु, पृथु, विपृथु, शमीक और अरिमेजय आदि अनेकानेक योद्धा वृष्णिवीर—उनके बुलाने पर—रण में पाण्डवों का ही पक्ष लेंगे। तब अवश्य ही मेरे सैनिक प्राणसंशय और सङ्कट में पड़ेंगे। जिस ओर महात्मा वासुदेव होंगे उसी ओर दस हज़ार हाथियों का बल रखनेवाले पराक्रमी कैलास पर्वत
३१ सदृश वनमाली बलदेव भी अवश्य होंगे।

हे सञ्जय! द्विजगण जिन्हें सबका पिता बतलाते हैं वे जनार्दन कृष्ण क्या पाण्डवों का पक्ष लेकर युद्ध करेंगे? वे जब पाण्डवों के हित की इच्छा से युद्ध के लिए तैयार होंगे तब कोई उनका सामना नहीं कर सकेगा। यदि कौरवगण पाण्डवों को जीत भी लें तो महाबाहु वासुदेव पाण्डवों के लिए शस्त्र धारण करके कौरवों को और उनके पक्ष के सब राजाओं को मारकर कुन्ती को सम्पूर्ण राज्य दे देंगे। जिस ओर श्रीकृष्ण सारथी हैं और अर्जुन योद्धा हैं, उसके सामने युद्ध में कौन ठहर सकेगा? अतएव, हे सञ्जय! मैं किसी तरह कौरवों के लिए कल्याण की प्राप्ति नहीं देखता। अब जिस तरह युद्ध हुआ, वह सब मैं विस्तार के साथ सुनना चाहता हूँ, मुझसे कहो।

अर्जुन श्रीकृष्ण की और श्रीकृष्ण अर्जुन की आत्मा हैं। अर्जुन में विजय और श्रीकृष्ण में शाश्वती कीर्ति सदा रहती है। हे सञ्जय! अर्जुन को इस त्रिभुवन में कोई योद्धा परास्त नहीं कर सकता। श्रीकृष्ण भी सर्वगुणालङ्कृत और अलौकिक शक्तिशाली हैं। दुष्ट दुर्योधन दैव-विडम्बना से मोहित और निकटवर्त्ती मृत्यु के वशीभूत है, इसी लिए अर्जुन और श्रीकृष्ण के
४० प्रभाव और पौरुष को नहीं जानता। ये दोनों महात्मा नर-नारायण का अवतार हैं। दोनों

महावीर श्रीकृष्ण गरुड़ पर बैठ कर अमरावती पुरी गये और अमरावती-निवासी देवगण को भय-विह्वल करके इन्द्र-भवन से पारिजात वृक्ष उखाड़ लाये।—२१८८

एक-प्राण दो-देह हैं। एक के ही दो रूप हैं। उनका पराभव असम्भव है, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। ये दोनों यशस्वी महात्मा चाहें तो हमारे पक्ष की सारी सेना को अकेले ही नष्ट कर सकते हैं। किन्तु मनुष्ययोनि में उत्पन्न होने के कारण ही मनुष्य-धर्म का पालन करते हुए वैसा नहीं करते। भीष्म और द्रोणाचार्य की मृत्यु ऐसी घटना है, जिसे युग का वदल जाना समझना चाहिए। इससे यह सिद्ध हो गया कि ब्रह्मचर्य, वेदपाठ, अथवा शस्त्र-शिक्षा आदि किसी के द्वारा मनुष्य मृत्यु से नहीं वच सकता। मृत्यु अनिवार्य है।

हे सञ्जय ! युद्धदुर्मद लोकपूजित अस्त्रनिपुण महावीर भीष्म और द्रोणाचार्य की युद्ध में मृत्यु सुनकर भी जो मैं जीवित हूँ, यही आश्चर्य है ! पहले युधिष्ठिर की राजलक्ष्मी और विभव देखकर मुझे बड़ी ईर्ष्या हुई थी। अब भीष्म और द्रोण की मृत्यु हो जाने के कारण मुझे युधिष्ठिर के आश्रित होकर रहना पड़ेगा। मेरी ही बदौलत कुरुवंश का यह विनाश हुआ है। हे सूत ! जिन लोगों की मृत्यु आ गई है, उनके लिए तिनके वज्र वन जाते हैं। जिनके क्रोध से संग्राम में महावीर भीष्म और द्रोणाचार्य की मृत्यु हुई है, वे युधिष्ठिर अवश्य ही अनन्त ऐश्वर्य के अधिकारी होंगे। अतएव धर्मपुत्र युधिष्ठिर के ही पक्ष में धर्म है; मेरे पुत्रों की ओर से वह विलकुल ही विमुख है। यह पापात्मा क्रूर काल सबका नाश किये विना नहीं रहेगा। हे तात ! मनस्वी लोग अपने मन में जो-जो मनोरथ करते हैं उन्हें प्रवल दैव मिथ्या कर देता है, उनकी सोची हुई वात नहीं होने पाती। जो यह दुश्चिन्त्य विषय उपस्थित हुआ है, इसके परिहार का उपाय नहीं है। खैर, अब तुम युद्ध का वृत्तान्त वर्णन करो। ५१

बारहवाँ अध्याय

दुर्योधन का द्रोणाचार्य से युधिष्ठिर को जीते पकड़ लाने का वरदान माँगना

सञ्जय ने कहा—महाराज ! मैंने सब हाल अपनी आँखों देखा है। जिस तरह पाण्डवों और सृञ्जयों के हाथों द्रोणाचार्य की मृत्यु हुई है, सो सब मैं आपके आगे विस्तारपूर्वक कहता हूँ।

महारथी भारद्वाज द्रोणाचार्य जब सेनापति बनाये गये तब सब सेना के बीच में खड़े होकर उन्होंने दुर्योधन से कहा—राजन् ! तुमने कौरवश्रेष्ठ भीष्म पितामह के अस्त्रत्याग के उपरान्त ही इस समय मुझे सेनापति का पद देकर जो मेरा सत्कार किया है, उसके अनुरूप फल अवश्य तुम पाओगे। हे भारत ! वतलाओ, तुम्हारी क्या इच्छा है ? मैं कौन सा काम करूँ, जिससे तुम्हारी इच्छा पूरी हो ?

तब राजा दुर्योधन ने कर्ण और दुःशासन आदि मन्त्रियों और स्वजनों से सलाह करके विजयी दुर्द्धर्ष द्रोणाचार्य से कहा—हे महामते ! यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वरदान देते हैं तो मैं यह माँगता हूँ कि आप श्रेष्ठ रथी युधिष्ठिर को जीते ही पकडकर मेरे सामने लाइए।

यह सुनकर द्रोणाचार्य ने सारी सेना को हर्षित और उत्साहित करने के लिए दुर्योधन से कहा—राजन्! राजा युधिष्ठिर धन्य हैं ; क्योंकि तुमने उनकी मृत्यु का वर न माँगकर जीते ही पकड़ लाने का वर माँगा। हे नरश्रेष्ठ! तुमने उनके वध की इच्छा क्यों नहीं की? हे दुर्योधन! तुमने मन्त्रणा-निपुण होकर भी युधिष्ठिर की मृत्यु क्यों नहीं चाही? युधिष्ठिर सचमुच अजातशत्रु हैं, उनका यह नाम सार्थक है। युधिष्ठिर का कोई शत्रु नहीं है। तुमने क्या अपने कुल की रक्षा करने के विचार से ही युधिष्ठिर की मृत्यु-कामना नहीं की? अथवा युद्ध में पाण्डवों को परास्त करके अन्त को उन्हें उनका राज्यांश देकर सौभ्रात्र बनाये रखने का इरादा कर लिया है? जो हो, राजा युधिष्ठिर के समान भाग्यवान् कोई नहीं है। उनका जन्म सार्थक है, उनका अजातशत्रु नाम भी आज सफल हुआ; क्योंकि तुम उनके महावैरी होकर भी उनसे इतना स्नेह रखते हो कि चाहे जिस कारण से हो, उनकी मृत्यु नहीं चाहते।

१०

हे भारत! बृहस्पतितुल्य व्यक्ति भी ऐसे अवसर पर अपने हृदय के भाव को नहीं छिपा सकता। इसी कारण उस समय दुर्योधन के हृदय का भाव एकाएक प्रकट हो गया। आचार्य की बात सुनकर वे प्रसन्नतापूर्वक कहने लगे—हे आचार्य! राजा युधिष्ठिर की मृत्यु होने से मैं विजय नहीं प्राप्त कर सकूँगा ; क्योंकि युधिष्ठिर को मार डालने पर पाण्डव (अर्जुन) क्रुद्ध होकर हम सबको मार डालेंगे। फिर सब पाण्डवों का विनाश तो देवता भी मिलकर नहीं कर सकते। अतएव युधिष्ठिर के मारे जाने पर चारों पाण्डव निःसन्देह हमारे कुल को निर्मूल कर डालेंगे। किन्तु इस समय यदि आप सत्यपरायण राजा युधिष्ठिर को जीते ही मेरे पास पकड़ लावेंगे तो मैं फिर उनसे जुआ खेल करके उन्हें हरा दूँगा, और तब वे और उनके अधीन पाण्डव वनवासी होने के लिए विवश होंगे। इस तरह मैं मुद्दत तक विजयी होकर राज्य कर सकूँगा। यही कारण है कि मैं राजा युधिष्ठिर को मारना नहीं चाहता।

अर्थतत्त्व के ज्ञाता, बुद्धिमान् द्रोणाचार्य ने दुर्योधन के इस बुरे विचार का हाल सुनकर उनके माँगे वर में एक शर्त लगा दी। आचार्य ने कहा—हे दुर्योधन! यदि संग्राम में महावीर

अर्जुन युधिष्ठिर की रक्षा नहीं कर सकेंगे तो तुम युधिष्ठिर को अपने वश में समझ लो। २० किन्तु अर्जुन के रहते यह बात नहीं हो सकती। इन्द्र सहित देवता और दानव मिलकर भी युद्धभूमि में पराक्रमी अर्जुन को परास्त नहीं कर सकते। इसी कारण मैं अर्जुन के सामने युधिष्ठिर को पकड़ लेने का साहस नहीं करता। अर्जुन मेरे प्रिय शिष्य हैं। उनकी अस्त्र-शिक्षा के लिए ही मैं आचार्य-पद पर रक्खा गया था। युवा और पुण्यात्मा अर्जुन ने मेरे सिवा इन्द्र और महादेव से भी बहुत से दिव्य अस्त्र पाये हैं। अर्जुन तुम्हारे बुरे व्यवहार से अत्यन्त क्रुद्ध हैं। इसी कारण मैं उनके आगे युधिष्ठिर को जीते ही पकड़ लेने का साहस नहीं करता। अतएव यदि किसी उपाय से अर्जुन को युद्धभूमि से हटा सको तो मैं अनायास युधिष्ठिर को जीते ही पकड़ लाकर तुम्हारी इच्छा पूरी कर सकता हूँ। हे पुरुषश्रेष्ठ! युधिष्ठिर को जान से न मारकर जीते पकड़ लेने से ही तुम्हें विजय प्राप्त होगी; और वे भी इस उपाय से मुट्ठी में आ जायँगे। नरोत्तम अर्जुन को हटा देने पर युधिष्ठिर यदि मेरे सामने, सम्मुख-युद्ध में, थोड़ी देर भी ठहर जायँगे तो मैं आज ही उन्हें पकड़कर तुम्हारे हवाले कर दूँगा। राजन्! अर्जुन के सामने समर में इन्द्रादि देवगण और दानवगण कोई भी युधिष्ठिर को पकड़ नहीं सकेगा।

सञ्जय कहते हैं—आचार्य द्रोण ने जब राजा युधिष्ठिर को पकड़ने के बारे में इस तरह निर्दिष्ट रूप से प्रतिज्ञा की तब आपके मूर्ख पुत्रों ने समझ लिया कि अब युधिष्ठिर पकड़ लिये गये। किन्तु दुर्योधन को अच्छी तरह मालूम था कि द्रोणाचार्य भीतर ही भीतर पाण्डवों के [ख़ासकर अर्जुन के] पक्षपाती और हितैषी हैं। इसी कारण द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा को शिथिल न होने देने के लिए, अनेक प्रकार की सलाह करके, दुर्योधन ने अपने पक्ष की सारी सेना में यह घोषणा करा दी कि आज आचार्य ने युधिष्ठिर को जीते ही पकड़ लेने की प्रतिज्ञा की है। ३१

तेरहवाँ अध्याय

द्रोणाचार्य से युधिष्ठिर को बचाने के लिए अर्जुन का प्रतिज्ञा करना

सञ्जय कहते हैं—महाराज! द्रोणाचार्य ने जब युधिष्ठिर को पकड़ने की दृढ़ प्रतिज्ञा की तब आपके पक्ष की सेना के लोग यह वृत्तान्त सुनकर वाद्यध्वनि, शङ्खनाद और सिंहनाद करके प्रसन्नता प्रकट करने लगे। उधर राजा युधिष्ठिर स्वजनों के बीच बैठे थे। उनके जासूसों ने तुरन्त जाकर उन्हें द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा का समाचार सुनाया। युधिष्ठिर ने अन्यान्य प्रधान लोगों को और भाइयों को तत्काल बुलाकर अर्जुन से कहा—हे पुरुषश्रेष्ठ! तुमने द्रोणाचार्य

की प्रतिज्ञा का हाल सुन लिया न ? अतएव अब ऐसा उपाय करो जिसमें उनकी यह प्रतिज्ञा पूरी न हो। हे वीर! शत्रुनाशन द्रोण ने जो अटल प्रतिज्ञा की है उसकी सीमा तुम्हीं हो; अर्थात् तुम मेरी रक्षा करते रहोगे तो वे मुझे पकड़ने का साहस नहीं कर सकते। इसलिए तुम मेरे पास रहकर द्रोणाचार्य से संग्राम करो, जिसमें दुर्योधन द्रोणाचार्य की सहायता से अपने सङ्कल्प को सिद्ध न कर सके।

अर्जुन ने कहा—महाराज! जैसे आचार्य का वध करना किसी तरह मेरा कर्तव्य नहीं है वैसे ही युद्धभूमि में अकेले अरक्षित भाव से आपको छोड़ जाना भी मेरा कर्तव्य नहीं है। युद्धभूमि में चाहे मुझे प्राण दे देने पड़ें, तथापि आचार्य के विपक्ष में मैं किसी तरह युद्ध न करूँगा। किन्तु दुर्योधन जो आपको जीवित पकड़कर विजय की १० इच्छा कर रहा है, वह मेरे जीते जी पूरी नहीं हो सकती। नक्षत्रों समेत आकाश भले ही गिर पड़े, पृथ्वी के टुकड़े-टुकड़े भले ही हो जायँ; किन्तु मेरे जीते जी आचार्य आपको नहीं पकड़ सकते। यदि वज्रपाणि इन्द्र अथवा विष्णु भगवान् सब देवताओं के साथ मिलकर स्वयं समर में दुर्योधन की सहायता करें तो भी वह आपको किसी तरह नहीं पकड़ सकता। हे राजेन्द्र! यद्यपि द्रोणाचार्य सब अस्त्रों के और अस्त्रविद्या के जाननेवालों में प्रधान हैं तथापि मेरे रहते आप के लिए भय नहीं है। राजन्! मेरी प्रतिज्ञा कभी विफल नहीं हुई और न आगे व्यर्थ हो सकती है। जहाँ तक स्मरण है, मैं कभी झूठ नहीं बोला; किसी से नहीं हारा; और न कभी किसी से कुछ वादा करके उसे मैंने रत्ती भर मिथ्या किया है।

महावीर अर्जुन के यों कहने पर पाण्डवों के शिविर में शङ्ख, भेरी, मृदङ्ग, डङ्के, तुरही आदि बाजे बजने लगे; वीरगण सिंहनाद और प्रत्यञ्चा के शब्द करने लगे; योद्धा लोग ख़म ठोकने लगे। ये अनेक प्रकार के निर्घोष आकाशमण्डल में गूँज उठे और उनकी प्रतिध्वनि दूर-दूर तक छा गई। उस समय शत्रु-पक्ष के शङ्खनाद आदि को सुनकर आपकी सेना में भी बाजे बजने लगे।

अब आपके और पाण्डव पक्ष के युद्ध चाहनेवाले वीर सैनिक मोर्चेबन्दी करके संग्राम की इच्छा से आगे बढ़े और एक दूसरे के पास पहुँच गये। उस समय कौरवों के साथ पाण्डवों का, और द्रोणाचार्य के साथ पाञ्चालों का लोमहर्षण संग्राम होने लगा। तब द्रोणाचार्य के द्वारा सुरक्षित कौरव-सेना को नष्ट करने के लिए सृञ्जयगण अधिक यत्नपूर्वक युद्ध करने लगे; परन्तु किसी तरह कृतकार्य न हो सके। दुर्योधन के पक्ष के महारथी लोग भी अर्जुन के द्वारा सुरक्षित सेना को नष्ट करने के लिए जी-जान से कोशिश करके भी उसमें सफलता न पा सके। दोनों ओर के सैनिक, रात्रिकाल के विविध पुष्पों से शोभित वृक्षों की श्रेणी के समान, निस्तब्ध देख पड़ने लगे। २०

इधर शत्रुनाशन द्रोणाचार्य सुवर्णमण्डित रथ पर बैठकर पाण्डवों की सेना को नष्ट-भ्रष्ट करते हुए उसके भीतर घुस गये और प्रज्वलित प्रतापी सूर्य के समान बाण बरसाते हुए चारों ओर विचरने लगे। पाण्डव और सृञ्जयगण रथ पर बैठे हुए, फुर्तीले, अकेले द्रोणाचार्य को अनेक-रूप और विभीषिकामय देखने लगे। द्रोणाचार्य के चलाये हुए बाण सब सैनिकों को भय-विह्वल करते हुए चारों ओर गिरने लगे। महारथी द्रोण उस समय आकाशमण्डल में विचरते हुए, असंख्य किरण-वेष्टित, मध्याह्न काल के सूर्य के समान देख पड़ने लगे। जैसे दानवगण समर में क्रुद्ध इन्द्र की ओर आँख उठाकर नहीं देख सकते वैसे ही उस समय पाण्डवों की सेना का कोई सुभट द्रोणाचार्य की ओर आँख उठाकर नहीं देख सकता था।

अब प्रबल प्रतापी द्रोणाचार्य शत्रुसेना को मोहित करते हुए फुर्ती के साथ बाण चला-कर धृष्टद्युम्न की सेना को पीड़ा पहुँचाने लगे। जहाँ पर धृष्टद्युम्न थे वहाँ पर द्रोणाचार्य ने इतने बाण बरसाये कि सब दिशाएँ और आकाशमण्डल बाणों से व्याप्त हो गया। द्रोणाचार्य उसी जगह पाण्डवों की सेना का संहार करने लगे। २९

चौदहवाँ अध्याय

युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—महाराज! तब द्रोणाचार्य पाण्डवों की सेना को, घास-फूस को आग की तरह, बाणों से भस्म करते हुए विचरने लगे। द्रोणाचार्य को क्रोध के मारे प्रदीप्त अग्नि के समान सब सेना को भस्म करते देखकर सृञ्जयगण भयविह्वल होकर काँपने लगे। द्रोणाचार्य के कानों तक खिंची हुई धनुष की डोरी का शब्द वज्र-निर्घोष के समान कानों के पर्दे फाड़ता हुआ चारों ओर सुनाई पड़ने लगा। फुर्ती के साथ हाथ चलानेवाले द्रोणाचार्य के बाण रथ, रथी, घुड़-सवार, हाथी, घोड़े, पैदल आदि को काट-काटकर गिराने लगे। जैसे गरजते हुए बादल हवा

की सहायता पाकर वर्षाकाल में शिलाओं की वर्षा करते हैं, वैसे ही द्रोणाचार्य भी सिंहनाद-पूर्वक बाण बरसाते हुए शत्रुपक्ष के लिए भयानक हो उठे। वे शत्रुसेना में विचरते हुए उसे क्षुब्ध करके शत्रुओं के हृदय में दारुण भय उत्पन्न करने लगे। उनके घूमते हुए रथ पर सुवर्ण-मण्डित धनुष बार-बार मेघों के बीच बिजली की तरह चमक रहा था। सत्यपरायण, प्राज्ञ, नित्य धर्म के अनुरागी द्रोणाचार्य ने क्रुद्ध होकर ऐसा घोर युद्ध किया कि रक्त की भयानक नदी बह चली। उस नदी में मांसाहारी जीव भरे पड़े थे। सेनाएँ ही उसका स्रोत थीं। ध्वजाओं को ही किनारे पर के वृक्षों के समान वह गिरा रही थी। जल की जगह पर उसमें रक्त था। हाथियों और घोड़ों की लाशों के ढेर तटभूमि की तरह देख
१० पड़ते थे। टूटे हुए कवच घन्नई की तरह जान पड़ते थे। मांस की कीचड़ थी और मेदा-मज्जा-हड्डी आदि ही बालू के समान थे। पगड़ियाँ फेने की तरह बह रही थीं। युद्ध के घिरे हुए मेघ से वह उत्पन्न हुई थी। उसमें प्रास और खड्ग रूपी मत्स्य थे। मनुष्य-हाथी-घोड़े आदि से वह दुर्गम थी। बाणों का वेग ही उसका प्रवाह था। लोगों की लाशें लकड़ियों के समान उसमें बह रही थीं। रथ कच्छप की तरह देख पड़ते थे। कटे हुए मस्तक कमल की तरह जान पड़ते थे। रथ-हाथी आदि उसके भीतर कुण्ड से जान पड़ते थे। उसमें पड़े अनेक आभूषण चमक रहे थे। बड़े-बड़े रथ सैकड़ों भवर से देख पड़ते थे। पृथ्वी से उठती हुई धूल ही उसमें उठनेवाली लहरों के समान जान पड़ती थी। महापराक्रमी वीर योद्धा तो सहज में उस नदी के पार जा सकते थे, किन्तु कायरों के लिए वह अत्यन्त दुस्तर थी। हज़ारों लाशें उसमें भरी पड़ी थीं। कङ्क गिद्ध आदि जीव उसके चारों ओर मँड़रा रहे थे। वह नदी हज़ारों महारथी वीरों को यमलोक को लिये जा रही थी। बड़े-बड़े त्रिशूल उसमें नाग से जान पड़ते थे। अनेक जीव पक्षियों के समान प्रतीत होते थे। कटे हुए छत्र हंसों के समान उसमें देख पड़ते थे; कटे हुए मुकुट पक्षियों के सदृश जान पड़ते थे। चक्र कच्छप से, गदाएँ मगर सी और बाण छोटी-छोटी मछलियों से उसमें बह रहे थे। भयानक बगलों, गिद्धों और गीदड़ों के झुण्ड उसके आस-पास घूम रहे थे। महाबली द्रोणाचार्य के द्वारा युद्ध में मारे गये हज़ारों वीरों को वह रक्त की नदी यमलोक पहुँचा रही थी। केश सेवार और घास के समान दिखाई पड़ रहे थे। द्रोणाचार्य ने कायरों के हृदय में भय उत्पन्न करनेवाली ऐसी महाभयानक रक्त की नदी युद्धभूमि में बहा दी। द्रोणाचार्य को इस तरह गरज-गरजकर अपनी सेना को भयविह्वल करते देख युधिष्ठिर आदि पाण्डवपक्ष के योद्धा
२० चारों ओर से द्रोणाचार्य पर आक्रमण करने और उन्हें रोकने चले। महापराक्रमी कौरवों ने जब उन शूरों को इस तरह आते देखा तब वे भी उन्हें रोकने के लिए चारों ओर से चले। उस समय उनका लोमहर्षण युद्ध होने लगा।

बहुत बड़े मायावी शकुनि समरभूमि में सहदेव के सामने आकर अनेक प्रकार के तीक्ष्ण बाणों के द्वारा उनको पीड़ित करने लगे। उन्होंने सहदेव के रथ की ध्वजा काट डाली और सारथी को भी घायल कर दिया। सहदेव ने भी क्रोध के वश होकर बाणों से शकुनि के धनुष, पताका, सारथी और घोड़ों को छिन्न-भिन्न करके शकुनि को साठ पैने बाण मारे। अब शकुनि रथ पर से उतर पड़े और गदा लेकर दौड़े। उन्होंने गदा के प्रहार से सहदेव के सारथी को मार गिराया। तब दोनों ही वीर रथ-हीन होकर गदा हाथ में लेकर शिखर-शोभित पहाड़ों की तरह युद्धभूमि में गदायुद्ध के पैंतरे दिखाते हुए क्रीड़ा सी करने लगे।

द्रोणाचार्य ने राजा द्रुपद को दस बाण मारे तब वे भी असंख्य बाणों से आचार्य को जर्जर करने लगे। आचार्य ने फिर उनसे भी अधिक पराक्रम के साथ असंख्य बाणों से द्रुपद को घायल कर डाला। भीमसेन ने विविंशति को अत्यन्त तीक्ष्ण बीस बाण मारे, परन्तु वे उस प्रहार से तनिक भी विचलित नहीं हुए। यह एक अद्भुत घटना हुई। विविंशति ने सहसा भीमसेन के घोड़े मार डाले और ध्वजा तथा धनुष की डोरी काट दी। इस पर विविंशति की सेना ने उनकी प्रशंसा की। अपने शत्रु का यह पराक्रम भीमसेन देख नहीं सके। उन्होंने भी शत्रु के घोड़ों को गदा के प्रहार से गर्दवर्द कर डाला। महाबली विविंशति मत्त गजराज की तरह क्रुद्ध होकर ढाल-तलवार हाथ में लेकर रथ से कूद पड़े और भीमसेन पर प्रहार करने के लिए झपटे। ३०

महावीर शल्य अपने भानजे नकुल को कुपित करने के लिए हँसकर लीलापूर्वक धनुष घुमाकर उन पर बाण बरसाने लगे। महापराक्रमी नकुल ने भी उनके सब घोड़े नष्ट कर दिये, सारथी को मार डाला तथा ध्वजा, छत्र और धनुष की डोरी काटकर शङ्ख बजाया। धृष्टकेतु ने भी कृपाचार्य के चलाये बाणों को काटकर उन्हें सत्तर बाण मारे और तीन बाणों से उनकी सुन्दर ध्वजा काटकर गिरा दी। कृपाचार्य भी बहुत से बाणों से धृष्टकेतु के बाणों को व्यर्थ करके घोर

युद्ध करने लगे। सात्यकि ने पहले हँसकर कृतवर्मा की छाती में लोहमय नाराच बाण, फिर और सत्तर बाण, और उसके बाद अन्य अनेक प्रकार के अगणित बाण मारे। वेग से चलने-वाली आँधी जैसे पहाड़ को नहीं कँपा सकती वैसे ही भोजराज कृतवर्मा सात्यकि को, पैने सतत्तर बाण मारकर भी, विचलित नहीं कर सके।

सेनापति धृष्टद्युम्न ने सुशर्मा के मर्मस्थलों में तीक्ष्ण बाण मारे। सुशर्मा ने भी तोमर के प्रहार से उनको अत्यन्त पीड़ित किया। महावीर राजा विराट मत्स्यदेश की सेना लेकर वीर कर्ण के सामने आये। उन्होंने अपने अपूर्व पराक्रम और युद्धकौशल से उन्हें आगे नहीं बढ़ने दिया। यह देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। सूतपुत्र कर्ण ने भी पौरुष प्रकट करते हुए तीक्ष्ण बाणों से मत्स्यसेना को छिन्न-भिन्न करना शुरू किया। राजा द्रुपद ख़ुद भगदत्त के ४० सामने आकर उनके साथ घोर युद्ध करने लगे। भगदत्त ने बाणों से द्रुपद के सारथी, ध्वजा, रथ आदि को नष्ट करके द्रुपद को घायल कर दिया। उन्होंने भी अत्यन्त कुपित होकर तीक्ष्ण बाण से भगदत्त के वक्षःस्थल को छेद दिया। अस्त्रविद्याविशारद भूरिश्रवा और शिखण्डी, ये दोनों वीरवर देखनेवालों को भयविह्वल बना देनेवाला दारुण युद्ध करने लगे। वीर्यशाली भूरिश्रवा ने असंख्य बाणों से महारथी शिखण्डी को ढक दिया। शिखण्डी ने भी क्रोध करके नब्बे बाण मारकर भूरिश्रवा के छक्के छुड़ा दिये। गर्वित राक्षस घटोत्कच और अलम्बुष, दोनों ही जय की इच्छा से तरह-तरह की आसुरी माया प्रकट करके अत्यन्त घोर युद्ध करते हुए, कभी-कभी अन्तर्द्धान होकर, दर्शकों के हृदय में आश्चर्य उत्पन्न करने लगे। देवासुर-युद्ध में जैसे आश्चर्य में डालनेवाले कार्य हुए थे वैसे ही कार्य दिखाते हुए चेकितान और अनुविन्द भयानक युद्ध करने लगे। पहले किसी समय वराहरूप विष्णु के साथ हिरण्याक्ष दानव का जैसा युद्ध हुआ था वैसा ही युद्ध लक्ष्मण और क्षत्रदेव करने लगे।

अब महाबली हार्दिक्य बहुत शीघ्र अश्वयुक्त और तेज़ी के साथ चल रहे रथ पर बैठकर ५० युद्ध की आकांक्षा से वीर अभिमन्यु के निकट पहुँचकर सिंहनाद करने लगे। महावीर अभिमन्यु उनके साथ भयानक युद्ध करने लगे। हार्दिक्य ने असंख्य बाणों से अभिमन्यु को घायल किया। अभिमन्यु ने भी तत्काल उनका छत्र, ध्वजा और धनुष काट डाला। अभिमन्यु ने और सात बाण हार्दिक्य को मारे तथा पाँच बाणों से उनके घोड़ों को और सारथी को पीड़ित करके वे सिंह की तरह बार-बार गरजकर सैनिकों के हृदय में हर्ष बढ़ाने लगे। अब अभिमन्यु ने शत्रु के प्राणों को हरनेवाला एक बाण धनुष पर चढ़ाना चाहा। किन्तु हार्दिक्य ने उस भयानक बाण को देखकर दो बाणों से मय धनुष के उसको काट डाला। शत्रुदमन अभिमन्यु ने कटे हुए धनुष को फेंककर युद्ध के लिए ढाल-तलवार हाथ में ली। उस खड्ग को घुमाते और अनेक ताराचिह्नों से शोभित ढाल चमकाते हुए वीर अभिमन्यु पराक्रम प्रकट करते हुए रणभूमि

में विचरने लगे। कभी ढाल-तलवार को घुमाते, कभी ऊपर फेरते और कभी हिलाते तथा तानते हुए अभिमन्यु ने ऐसी फुर्ती दिखाई कि किसी को ढाल और तलवार में कुछ भी अन्तर नहीं देख पड़ता था। अभिमन्यु सिंहनाद के साथ उछलकर हार्दिक्य के रथ पर चढ़ गये। पहले हार्दिक्य के बाल पकड़कर उन्हें आसन के नीचे खींच लिया, फिर लात मारकर सारथी के प्राण ले लिये और तलवार से ध्वजा काट गिराई। गरुड़ जैसे समुद्र को मथकर साँप को पकड़कर झकझोरते हैं वैसे ही अभिमन्यु ने हार्दिक्य को पकड़कर झकझोर डाला। उस समय जिनके बाल बिखरे हुए हैं वे पौरव हार्दिक्य सिंह के पछाड़े हुए अचेत साँड़ के समान जान पड़ने लगे। ६०

जयद्रथ ने देखा कि अनाथ की तरह हार्दिक्य मारे जा रहे हैं; अभिमन्यु ने उन्हें पटक दिया है और बाल पकड़कर प्राण लेने को उद्यत हैं। तब वे अत्यन्त क्रुद्ध होकर, सिंहनाद करके, सुवर्णजालयुक्त मयूरशोभित घुँघरूदार ढाल और तलवार लिये रथ से उतर पड़े। अभिमन्यु ने जयद्रथ को आते देखकर हार्दिक्य को छोड़ दिया, और रथ पर से कूदकर बाज़ की तरह वे जयद्रथ पर झपटे। अभिमन्यु ने शत्रुपक्ष के चलाये हुए प्रास, पट्टिश, खड्ग आदि शस्त्रों की वर्षा को ढाल पर रोकना और खड्ग से काटना शुरू कर दिया। पाण्डवसेना को अपना बाहुबल दिखाते हुए वीर अभिमन्यु, बाघ का बच्चा जैसे गजराज पर हमला करता है वैसे ही, ढाल-तलवार घुमाते हुए, अपने पिता के वैरी क्षत्रियश्रेष्ठ जयद्रथ के पास प्रहार करने के लिए पहुँचे। जैसे बाघ और सिंह दोनों परस्पर नखों और दाँतों से प्रहार करते हैं वैसे ही वे दोनों एक दूसरे को पाकर अत्यन्त उत्साह के साथ खड्ग-प्रहार करने लगे। ढाल और तलवार के करतबों में, प्रहार में, बचाने में और पैंतरे में दोनों वीर समान कौशल और फुर्ती दिखा रहे थे। दोनों ही दोनों पर समान रूप से प्रहार करते, पीछे हटते और भीतरी-बाहरी चोटें करते थे। दोनों वीर जिस समय भीतरी और बाहरी चोटों के पैंतरे काट रहे थे उस समय वे परदार पहाड़ से प्रतीत होते थे। महावीर अभिमन्यु ने मौक़ा पाकर जयद्रथ को तलवार मारी, जयद्रथ ने भी शत्रु का वार अपनी ढाल पर ७१

रोककर खड्ग-प्रहार किया, जिसे अभिमन्यु ने अपनी ढाल पर रोक लिया। जयद्रथ का वह दृढ़ खड्ग अभिमन्यु की ढाल में मढ़े हुए सोने के पत्तर में लगकर टूट गया। मैंने देखा कि उसी समय जयद्रथ अपने खड्ग को खण्डित देखकर, छः पग हटकर, पलक मारते ही फुर्ती के साथ अपने रथ पर चढ़ गये। इधर अभिमन्यु भी खड्गयुद्ध बन्द करके फिर श्रेष्ठ रथ पर जा बैठे। उनके पक्ष के योद्धा राजाओं ने उनको चारों ओर से घेर लिया। वीर अभिमन्यु ढाल-तलवार उछालकर जयद्रथ की ओर देखते हुए सिंहनाद करने लगे।

सूर्य जैसे सब दिशाओं को अपने तेज से तपाते हैं वैसे ही शत्रुदलन अभिमन्यु जयद्रथ को इस तरह परास्त करके शत्रुसेना को पीड़ित करने लगे। अब शल्य ने एक भयानक सुवर्ण-मण्डित लोहमय, अग्निशिखा की तरह चमकीली, शक्ति लेकर अभिमन्यु को ताककर मारी। गरुड़ जैसे उछलकर आये हुए नाग को पकड़ लेते हैं वैसे ही अभिमन्यु ने उछलकर उस शक्ति को पकड़ लिया और फिर अपनी तीक्ष्ण तलवार म्यान से निकाली। सब राजा लोग अभिमन्यु ८० के बल-वीर्य और अद्भुत पराक्रम को देखकर सिंहनाद करने लगे। अब अमित तेजस्वी शत्रु-वीरनाशन अभिमन्यु ने वही अभेद्य मणिखचित शक्ति शल्य के ऊपर चलाई। केचुल छोड़े हुए नाग के समान वह शक्ति शल्य के रथ पर पहुँची। उस शक्ति के प्रहार से सारथी मरकर गिर पड़ा। यह देखकर धृष्टकेतु, द्रुपद, विराट, युधिष्ठिर, कैकेय, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, भीम, नकुल, सहदेव और द्रौपदी के पुत्र सब अभिमन्यु को साधुवाद देते हुए चिल्लाने लगे। उस समय बहुविध बाणों के शब्द और सिंहनाद से समरभूमि गूँज उठी। अपराजित अभिमन्यु उस प्रशंसासूचक कोलाहल को सुनकर बहुत आनन्दित हुए। मेघमण्डल जैसे जल बरसाकर पर्वत के शिखर को ढक लेते हैं वैसे ही आपके पुत्रगण, शत्रुपक्ष के उस जयनाद और सिंहनाद को न सह सकने के कारण, एकाएक चारों ओर से अभिमन्यु पर बाण बरसाने लगे। शत्रुदमन शल्य ने सारथी की मृत्यु देखकर, अत्यन्त क्रुद्ध होकर, आपके पुत्रों की विजय ८७ की इच्छा से अभिमन्यु पर आक्रमण किया।

पन्द्रहवाँ अध्याय

शल्य का युद्ध से हट जाना

राजा धृतराष्ट्र कहते हैं—हे सञ्जय, तुमने जो इन वीरों के द्वन्द्वयुद्धों का वर्णन किया उसे सुनकर इस समय मुझे भी आँखें न होने का खेद हो रहा है। मनुष्य इस कुरु-पाण्डव-युद्ध को देवासुर-युद्ध के समान अद्भुत और आश्चर्य में डालनेवाला कहेंगे। यह बढ़िया युद्ध-वृत्तान्त सुनकर भी मुझे तृप्ति नहीं होती। इसलिए तुम मेरे आगे शल्य और अभिमन्यु के युद्ध का हाल फिर कहो।

सञ्जय ने कहा—राजन् ! शल्य ने जब अपने सारथी को मरते देखा तब अत्यन्त कुपित होकर, लोहे की भारी गदा लेकर, वे रथ से उतर पड़े। महाराज ! भीमसेन उन्हें कालदण्ड हाथ में लिये साक्षात् यमराज के समान देखकर अपनी गदा लेकर बड़े वेग से उनकी ओर झपटे। अभिमन्यु भी वज्रतुल्य गदा हाथ में लेकर शल्य को गदा-युद्ध के लिए ललकारने लगे। महाप्रतापी भीमसेन ने समझाकर अभिमन्यु को रोक लिया। वे ख़ुद शल्य के सामने पहाड़ के समान जाकर डट गये। उसी तरह मद्रराज शल्य भी महाबली भीमसेन को देखकर, गजराज की ओर सिंह की तरह, झपटे। उधर तुरही, हज़ारों शङ्ख और डङ्के बजने लगे; वीर योद्धा सिंहनाद करने लगे और एक दूसरे की ओर झपटते हुए पाण्डवों और कौरवों के बीच असंख्य साधुवाद और जयनाद सुनाई पड़ने लगे। संग्राम में शल्य को १० छोड़कर और कोई भीमसेन का वेग नहीं सह सकता था। वैसे ही भीमसेन के सिवा और कोई वीरश्रेष्ठ मद्रराज शल्य की गदा का वार नहीं सँभाल सकता था। सोने की पट्टियों से शोभित और अपने लोगों के मन में हर्ष बढ़ानेवाली भारी गदा भीमसेन के चलाने पर प्रज्वलित हो उठी। उधर विभाग के अनुसार मण्डलाकार से घूमकर पैंतरा काटते हुए शल्य की विशाल गदा भीमसेन के वज्रतुल्य कठोर अंगों से लगकर बिजली की तरह चमकने लगी। वे दोनों वीर दो बड़े साँड़ों की तरह, घूमती हुई गदाओं के ही सींगों से शोभित होकर, गरजते हुए मण्डलाकार गति से घूमने लगे। दोनों वीर समान रूप से पैंतरे बदलते और गदा-युद्ध का कौशल दिखाते हुए प्रहार कर रहे थे। शल्य की भारी गदा भीमसेन की गदा पर पड़कर भयानक आग उगलती हुई तत्काल टूट गई। भीमसेन की गदा भी शल्य की गदा पर पड़कर,

बरसात के सन्ध्याकाल में जुगनुओं से शोभित वृक्ष की तरह, चिनगारियों से शोभायमान हुई। अब मद्रराज शल्य ने दूसरी गदा चलाई। उस गदा से बारम्बार प्रहार के समय अग्नि की ज्वालाएँ निकल रही थीं, जिनसे आकाशमण्डल प्रकाशित हो उठता था। शत्रु के ऊपर

चलाई गई भीमसेन की गदा भी, भारी उल्कापिण्ड के समान, प्रज्वलित होकर शल्य की सेना को
२० सन्ताप और भय से विह्वल बनाने लगी। वे दोनों गदाएँ आपस में टकराकर फुफकारती हुई नागकन्याओं के समान आग उगल रही थीं। जैसे दो बड़े बाघ नखों से, या महागजराज दाँतों से, परस्पर भिड़कर आक्रमण करते हों वैसे ही मद्रराज शल्य और भीमसेन गदाओं से परस्पर आक्रमण करते हुए युद्धभूमि में विचरने लगे।

अब क्षण भर में ही भीमसेन और शल्य दोनों, दारुण गदा-प्रहार से निकलनेवाले रक्त से लिप्त होकर, फूले हुए ढाक के वृक्ष के समान शोभित हुए। उन दोनों पुरुषसिंहों के भयानक गदा-प्रहार से वज्रपात के समान भयानक शब्द उठकर सब दिशाओं में व्याप्त हो गया। जैसे पहाड़ फट जाने पर भी कम्पित नहीं होता, वैसे ही दाहने और बायें अङ्गों में बारम्बार शल्य के गदा मारने पर भीमसेन तनिक भी विचलित नहीं हुए, और मद्रराज भी भीमसेन की गदा की चोटें खाकर वज्राहत पर्वत के समान धैर्य धारण किये खड़े रहे। बली गजराज के समान तुल्य बलवाले दोनों वीर भारी गदाएँ उठाकर एक दूसरे पर चोट कर रहे थे और मण्डलाकार घूम-कर, अन्तरमार्ग में रहकर, फिर मण्डलाकार गति से विचरण करते थे। कभी आठ पग जाकर एकाएक उछलकर दोनों, दोनों को नष्ट करने के विचार से, एक दूसरे पर लोहे की भारी गदाओं की चोट करते थे। इस तरह बारम्बार वेग के साथ दौड़ने से और गदाओं की चोटों से घायल होकर दोनों वीर, इन्द्र की ध्वजा के समान, मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।

इधर महारथी कृतवर्मा गदा-प्रहार से पीड़ित, निश्चेष्ट, नाग के समान मूर्च्छा में पड़े हुए
३१ शल्य को विह्वल भाव से बारम्बार श्वास लेते देखकर बड़ी फुर्ती से उनके पास गये और चटपट उन्हें उठाकर रथ पर बिठाकर युद्धभूमि से हट गये। मैंने देखा कि मतवाले के समान विह्वल वीर्यशाली भीमसेन दम भर बाद होश में आकर उठ खड़े हुए। शल्य को समर से विमुख देखकर आपके पुत्रगण चतुरङ्गिणी सेना सहित डर से काँपने लगे। विजयशील पाण्डवों के द्वारा पीड़ित कौरवगण, शङ्का से व्याकुल होकर, आँधी के भगाये मेघों के समान चारों ओर भागने लगे। महाराज! महारथी पाण्डवगण इस प्रकार आपकी सेना को हराकर प्रज्वलित अग्नि के समान अपने तेज से शोभायमान हुए। पाण्डव पक्ष की सेना में चारों ओर वीर लोग प्रसन्नचित्त हो ऊँचे स्वर से सिंहनाद और जयनाद करने लगे; शङ्खध्वनियाँ होने लगीं
३७ तथा तुरही डङ्के मृदङ्ग आदि बाजे बजने लगे।

सोलहवाँ अध्याय

अर्जुन के युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—राजन् ! पराक्रमी वृषसेन ने अपनी सेना को इस तरह जब भागते देखा तब वे युद्धभूमि में अकेले ही अपनी अपूर्व अस्त्रविद्या के कौशल से कौरव-सेना की रक्षा करने लगे। युद्ध में वृषसेन ने अनेक प्रकार के असंख्य बाण चलाये। वे बाण पाण्डवों की सेना के हाथी, घोड़े, पैदल, रथी आदि को छेदकर इधर-उधर गिरने लगे। महाराज, उनके प्रज्वलित हज़ारों तीक्ष्ण बाण ग्रीष्म ऋतु के सूर्य की किरणों के समान सब ओर फैलकर रथियों और सवारों को अत्यन्त पीड़ित करके, आँधी के उखाड़े वृक्षों की तरह, एकाएक पृथ्वीतल पर गिराने लगे। महारथी वृषसेन अगणित घोड़ों, रथों और हाथियों को गिराते हुए रणभूमि में विचरने लगे।

युद्ध के मैदान में वृषसेन को, अकेले, निर्भय भाव से घूमते देखकर, सब राजाओं ने मिलकर चारों ओर से घेर लिया। इसी समय नकुल के पुत्र वीर शतानीक ने वृषसेन को मर्मभेदी दस नाराच बाण मारे। इसके बाद कर्ण के पुत्र वृषसेन ने भी शतानीक के धनुष और रथ की ध्वजा को काट डाला। द्रौपदी के पुत्रों ने भाई की यह दशा देखी तो वे उनके पास जाने के लिए वृषसेन की ओर दौड़े। उन्होंने बहुत से बाणों से वृषसेन को छिपा दिया। राजन्, मेघ जैसे जल बरसाकर उससे पर्वत को ढक देते हैं वैसे ही अश्वत्थामा आदि वीरगण वृषसेन को पीड़ित करनेवाले द्रौपदी के पुत्रों को अपने बाणों से अदृश्य करते हुए उनकी ओर दौड़े। पूर्व समय में दानवों के साथ देवताओं का जैसा भयानक संग्राम हुआ था वैसा ही १० लोमहर्षण रण कौरवों और पाण्डवों से होने लगा। पाण्डव, पाञ्चाल, कैकेय, मत्स्य और सृञ्जयगण शस्त्र ताने हुए कौरववीरों को मारने के लिए दौड़े। एक दूसरे के अपराधी कौरव और पाण्डवगण, विजय की इच्छा से, एक दूसरे को क्रूर दृष्टि से देखते हुए घोरतर युद्ध करने लगे। वे सब क्रुद्ध योद्धा आकाश में लड़ने के लिए उद्यत पक्षियों के राजा गरुड़ और नागों के समान जान पड़ते थे। भीम, कर्ण, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा, धृष्टद्युम्न, सात्यकि आदि दोनों ओर के वीरों के बाहुबल के प्रभाव से समरभूमि प्रलयकाल के उदय हुए सूर्य के समान प्रदीप्त हो उठी। देवासुर-संग्राम के समान परस्पर प्रहार करते हुए महाबल-शाली वीरगण घोरतम संग्राम करने लगे। कुछ ही समय में कौरवपक्ष के वीर भाग खड़े हुए और युधिष्ठिर की सेना कुरु-सेना को नष्ट करने लगी।

शत्रुओं के द्वारा कौरव-सेना को पीड़ित, भागते और क्षत-विक्षत होते देखकर द्रोणाचार्य उसे ढाढ़स बँधाते हुए कहने लगे कि हे शूरवीरो ! तुम भागो नहीं। अब लाल रङ्ग के

घोड़ोंवाले रथ पर बैठे द्रोणाचार्य ने, चार दाँतोंवाले गजराज की तरह, पाण्डव-सेना में घुस करके युधिष्ठिर पर आक्रमण किया। युधिष्ठिर भी कङ्कपत्रशोभित अनेक प्रकार के तीक्ष्ण बाण आचार्य को मारने लगे। आचार्य बड़ी फुर्ती से उनका धनुष काटकर उनकी ओर
२० झपटे। जैसे तटभूमि सागर के वेग को रोकती है वैसे ही पाञ्चालों के यश को बढ़ानेवाले कुमार ने, जो युधिष्ठिर के रथ-चक्र की रक्षा कर रहे थे, द्रोणाचार्य को रोक दिया। इस तरह कुमार के द्वारा द्रोणाचार्य को रोके जाते देखकर सब योद्धा सिंहनाद करते हुए कुमार को साधुवाद से सम्मानित करने लगे। महावीर कुमार ने अत्यन्त कुपित होकर आचार्य की छाती में एक बाण मारा। लगातार कई हज़ार बाणों से द्रोणाचार्य को हटा करके कुमार बारम्बार सिंहनाद करने लगे।

कौरव-सेना के रक्षक द्विजश्रेष्ठ द्रोणाचार्य ने फुर्तीले, संग्राम में न थकनेवाले, मन्त्रविद्या और अस्त्रविद्या में निपुण, आर्यव्रती, चक्र-रक्षक कुमार को परास्त करके पाण्डव-सेना के भीतर घुसकर अपूर्व रणकौशल दिखाना शुरू किया। द्रोण ने बारह बाण शिखण्डी को, बीस बाण उत्तमौजा को, पाँच बाण नकुल को, सात बाण सहदेव को, बारह बाण युधिष्ठिर को, तीन-तीन बाण द्रौपदी के पुत्रों को, पाँच बाण सात्यकि को और दस बाण राजा विराट को मारे। यों प्रधानता के अनुसार हर एक योद्धा को प्रहार से पीड़ित और विह्वल करते हुए द्रोणाचार्य युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए आगे बढ़े। तब आँधी से उमड़े हुए और क्षोभ को प्राप्त समुद्र के समान चले आते क्रुद्ध वीर द्रोणाचार्य को रोकने के लिए महारथी युगन्धर आगे बढ़े। द्रोणाचार्य ने अनेक तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठिर को पीड़ित करके एक
३१ भल्ल बाण मारकर युगन्धर को रथ से गिरा दिया।

अब कैकेय, विराट, सात्यकि, द्रुपद, शिवि, पाञ्चालदेशीय व्याघ्रदत्त, महाबली सिंहसेन और अन्यान्य महारथीगण युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिए अनेक प्रकार के बाण बरसाते हुए द्रोणाचार्य की राह रोककर खड़े हो गये। पाञ्चालदेशीय व्याघ्रदत्त ने फुर्ती के साथ द्रोणाचार्य को पचास तीक्ष्ण बाण मारे। इस अद्भुत कर्म को देखकर लोग ज़ोर से चिल्लाने लगे। उत्साहपूर्ण प्रसन्नचित्त सिंहसेन भी अन्य वीरों को भयविह्वल करते हुए द्रोणाचार्य को कई बाण मारकर हँसने लगे। महाबली द्रोणाचार्य क्रोध से आँखें फाड़कर, धनुष की डोरी को साफ़ करते हुए, तल-शब्द के साथ आगे बढ़े। आचार्य ने दो भल्ल बाणों से सिंहसेन और व्याघ्रदत्त के कुण्डलभूषित सिर काटकर पृथ्वी पर गिरा दिये। इस तरह पाण्डवपक्ष के वीरों को नष्ट करते हुए साक्षात् यमराज के समान द्रोणाचार्य महाराज युधिष्ठिर के रथ के पास पहुँचे। यतव्रत अजेय द्रोणाचार्य को युधिष्ठिर के पास पहुँचते देखकर पाण्डव-सेना के बीच महाकोलाहल उठा कि महाराज युधिष्ठिर पकड़े गये। राजन्, आपकी सेना के लोग आचार्य का पराक्रम देखकर कहने लगे कि आज़ राजा

दुर्योधन विजयी होकर कृतार्थ होंगे। इसमें सन्देह नहीं कि द्रोणाचार्य दम भर में ही युधिष्ठिर ४० को पकड़कर प्रसन्नतापूर्वक हमारे और महाराज दुर्योधन के पास ले आवेंगे।

महाराज, आपके सैनिक इस तरह कह ही रहे थे कि महावीर अर्जुन रथ के शब्द से सब दिशाओं को कम्पायमान और कौरव-सेना को पीड़ित करते हुए बड़े वेग से उस जगह आ पहुँचे जहाँ द्रोणाचार्य थे। अर्जुन ने युद्धभूमि में रक्त की महानदी बहा दी थी। उस नदी में जल की जगह रक्त था, बड़े-बड़े रथ भँवर से पड़ते दिखाई दे रहे थे। शूरों के शरीर और हाड़ उस नदी को और भी भयानक बना रहे थे। प्रेत-भूत आदि उसके किनारों पर भरे पड़े थे। बाण उसमें फेन से जान पड़ते थे और बहते हुए प्रास आदि शस्त्र मछली आदि जीव-जन्तुओं के समान देख पड़ते थे। महावीर अर्जुन वेग से उस नदी को लाँघकर एकाएक द्रोणाचार्य के पास पहुँच गये। महारथी अर्जुन ने द्रोणाचार्य की सेना को अपने युद्धकौशल से मोहित और बाणवर्षा से विह्वल करके उन पर घोर आक्रमण किया। महापराक्रमी अर्जुन इस फुर्ती के साथ धनुष पर बाण चढ़ाते और छोड़ते थे कि किसी को यह नहीं देख पड़ता था कि वे कब बाण निकालते हैं, कब धनुष पर चढ़ाते हैं और कब छोड़ते हैं। उनके धनुष से लगातार बाणों की वर्षा सी हो रही थी। अर्जुन के चलाये हुए अगणित बाणों से रणभूमि में चारों ओर अँधेरा छा गया—पृथ्वी, अन्तरिक्ष और आकाश कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था। सर्वत्र बाण ही बाण नज़र आते थे। धूल के उड़ने से वह अँधेरा और भी घना हो गया। उधर सूर्य भी अस्ताचल पर पहुँच गये। उस समय यह नहीं जान पड़ता था कि कौन शत्रु है, कौन मित्र है, कौन अपने दल का है और कौन शत्रुपक्ष का है।

तब द्रोणाचार्य और दुर्योधन आदि ने युद्ध बन्द कर दिया। अर्जुन ने भी शत्रुपक्ष को भयविह्वल और युद्ध से विमुख देखकर अपनी सेना को शिविर की ओर लौटने की आज्ञा दी। महाराज, जैसे मुनि लोग सूर्यदेव की स्तुति करते हैं वैसे ५० ही पाण्डव, सृञ्जय और पाञ्चालगण प्रसन्न होकर अर्जुन की प्रशंसा करने लगे। इस तरह

वैरियों को परास्त करके कृष्ण सहित अर्जुन प्रसन्नतापूर्वक अपने डेरे को लौटे। सब योद्धाओं के पीछे अर्जुन का रथ चला। हीरे, नीलम, पुखराज, पन्ने, मूँगे, मोती, मानिक, बिल्लौर आदि रत्नों और सुवर्ण से भूषित रथ पर बैठे हुए अर्जुन नक्षत्रों से शोभित आकाशमण्डल में
५४ पूर्ण चन्द्रमा के समान शोभायमान हुए।

संशप्तकवधपर्व

सत्रहवाँ अध्याय

संशप्तकगण से लड़ने के लिए अर्जुन का जाना

सञ्जय कहते हैं कि महाराज! कौरवों और पाण्डवों की सेनाएँ अपने-अपने शिविर में जाकर अपने-अपने स्थान पर विश्राम करने लगीं। महारथी द्रोणाचार्य ने शिविर में पहुँचकर बहुत ही उदास और लज्जित होकर राजा दुर्योधन की ओर देखकर कहा—राजन्! मैंने पहले ही तुमसे कह दिया था कि अर्जुन के सामने युद्ध में देवगण भी राजा युधिष्ठिर को नहीं पकड़ सकते। तुम लोगों ने युधिष्ठिर के पकड़ने का बड़ा यत्न किया, परन्तु सफलता नहीं प्राप्त कर सके। अर्जुन ने युधिष्ठिर को बचा लिया। तुम मेरी बात सत्य मानो। श्रीकृष्ण और अर्जुन को कोई नहीं जीत सकता। अतएव किसी उपाय से अर्जुन को रणभूमि से दूर हटा ले जाओ, तो युधिष्ठिर को मैं कल पकड़कर तुम्हारे पास ले आऊँगा। इसका उपाय यही है कि कोई योद्धा अर्जुन को लड़ने के लिए ललकार कर दूर हटा ले जाय। अर्जुन अवश्य उससे लड़ने को जायँगे, और उसे युद्ध में जीते बिना कभी न लौटेंगे। मैं इसी बीच में मौक़ा पाकर धृष्टद्युम्न के सामने ही, पाण्डव-सेना के भीतर घुसकर, युधिष्ठिर को पकड़ लाऊँगा। अर्जुन की अनुपस्थिति में युधिष्ठिर यदि मुझे देखकर डर से भाग न खड़े हुए तो मैं उनको अवश्य पकड़ लाऊँगा। अगर युधिष्ठिर संग्राम में दम भर भी ठहर गये तो मैं उन्हें और उनके साथियों को पकड़कर तुम्हारे
१० पास ले आऊँगा; अथवा जो वे युद्ध से भाग खड़े हुए तो वह भी विजय से बढ़कर है।

सञ्जय कहते हैं कि राजन्! द्रोणाचार्य के ये वचन सुनकर त्रिगर्तदेश के राजा सुशर्मा ने, अपने भाइयों के साथ, खड़े होकर दुर्योधन से कहा—महाराज! अर्जुन ने कई बार हमें परास्त किया है, हम पर चढ़ाई की है। हम लोगों ने उनका कोई अपराध नहीं किया, अर्जुन ही अकारण हम पर हमला करने के कारण अपराधी हैं। उन अपनी पराजयों को स्मरण करके हम सदा क्रोध की आग में भीतर ही भीतर जला करते हैं, यहाँ तक कि उसी

बेचैनी के मारे रात को हम सुख की नींद नहीं सो सकते। भाग्यवश ऐसा सुयोग प्राप्त हुआ है कि वही अर्जुन अस्त्र-शस्त्र धारण किये रणभूमि में हमारे सामने मौजूद हैं। आज हम अपनी इच्छा के अनुसार ऐसा काम करेंगे जिससे आपका भला होगा और हमें भी यश प्राप्त होगा। हम अर्जुन को युद्ध के लिए ललकार कर रण-भूमि के बाहर ले जायँगे और वहाँ उनको मार डालेंगे। आज पृथ्वी पर या तो अर्जुन नहीं रहेंगे, और या त्रिगर्त (हम लोग) नहीं रहेंगे। हम लोग यह प्रतिज्ञा करते हैं।

प्रस्थल के अधिपति त्रिगर्तनरेश सुशर्मा ने अपने पाँचों भाइयों—सत्यवर्मा, सत्यरथ, सत्यव्रत, सत्येपु और सत्यकर्मा—के साथ दस हज़ार रथों सहित युद्ध की शपथ ली। सुशर्मा के साथ मावेल्लक, ललित्थ, मद्रकगण, मालव, तुण्डिकेरगण और अनेक जनपदों (देशों) से आये हुए ख़ास-ख़ास दस हज़ार रथी भी युद्ध की शपथ लेने के लिए उद्यत हुए। तदनन्तर सब लोगों ने हवन के लिए अलग-अलग वेदियों पर अग्नि को लाकर स्थापित किया। इसके बाद सब योद्धा कुश-चीर और विचित्र कवच धारण करने लगे। घृतस्नात, मौर्वी-मेखला आदि से अलङ्कृत, कुश-चीर और कवच धारण किये, कृतकृत्य, जीवन के मोह को छोड़कर पवित्र लोक, यश और विजय की इच्छा रखनेवाले, पुत्रसम्पन्न, यजमान, वीर महारथीगण रण में शरीर त्यागकर—ब्रह्मचर्य वेदपाठ आदि प्रधान कर्मवाले बहुदक्षिणायुक्त यज्ञों से मिलनेवाले लोकों को—शीघ्र ही पहुँच जाने की इच्छा से हवन, ब्राह्मण-भोजन आदि श्रेष्ठ कर्म करने लगे। उन्होंने अलग-अलग भोजन कराकर, गऊ-सुवर्ण-वस्त्र-दक्षिणा आदि देकर, ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया। फिर परस्पर सम्भाषण और समरव्रत धारण करके, आग जलाकर दृढ़ निश्चय के साथ, सब लोगों को सुनाकर उन्होंने ऊँचे स्वर में अर्जुन को मारने के लिए प्रतिज्ञा की। वे अग्नि को छूकर, साक्षी बनाकर कहने लगे—"हे नरपतियो! अर्जुन को मारे बिना अगर हम युद्ध से लौटें, अथवा अर्जुन से डरकर युद्ध में भाग जायँ तो उन्हीं निकृष्ट लोकों को जायँ जहाँ मिथ्यावादी, मदिरा पीनेवाले, ब्रह्महत्या करनेवाले,

गुरुस्त्री-गामी, ब्राह्मण के धन और राजपिण्ड को हरनेवाले, किसी की धरोहर हज़म कर जाने-वाले, शरणागत को त्यागनेवाले और दीन वाणी कहते हुए को मारनेवाले पातकी जाते हैं। जो हम अर्जुन के सामने से हटें तो उन्हीं निकृष्ट लोकों को जायँ जहाँ शास्त्रविहित मार्ग को छोड़कर कुमार्ग पर चलनेवाले, नास्तिक, किसी के घर में आग लगा देनेवाले, गोहत्या करनेवाले, अपकारी, ब्रह्मद्रोही, अग्नि और माँ-बाप को छोड़ देनेवाले, मोहवश ऋतुकाल में अपनी पत्नी के पास न रहनेवाले, श्राद्ध के दिन स्त्री-सङ्ग करनेवाले, नपुंसक से युद्ध करनेवाले तथा अन्य अनेक पातकी जाते हैं। यदि आज हम समर में अर्जुन-वधरूप दुष्कर कर्म कर सकेंगे तो अवश्य उत्तम इष्ट लोकों को पावेंगे।" सुशर्मा आदि योद्धा इस तरह शपथ करके युद्ध के लिए चले और दक्षिण दिशा की ओर अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारते हुए समरभूमि में पहुँचे।

उनका युद्ध के लिए ललकारना सुनकर अर्जुन ने कहा—धर्मराजजी! मेरी यह प्रतिज्ञा है कि अगर कोई युद्ध के लिए ललकारे तो मैं उससे अवश्य युद्ध करूँगा। इस समय ये संश-प्तकगण युद्ध के लिए मुझे बुला रहे हैं। अतएव आप मुझे आज्ञा दीजिए जिससे मैं जाकर उन्हें उनके साथियों सहित नष्ट कर आऊँ। मैं उनके इस आह्वान को नहीं सह सकता। मैं आपके आगे प्रतिज्ञा करता हूँ कि उन्हें अवश्य ही मारूँगा। राजा युधिष्ठिर ने कहा—हे पार्थ! महारथी द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा का हाल तुमसे छिपा नहीं है, तुम सब सुन चुके हो। इस समय तुम वही करो जिसमें द्रोण की प्रतिज्ञा किसी तरह पूरी न होने पावे। अस्त्रविद्या में निपुण और युद्ध में न थकनेवाले द्रोणा-चार्य बड़े पराक्रमी हैं। उन्होंने मुझे पकड़कर दुर्योधन के पास ले जाने की प्रतिज्ञा की है। इस पर अर्जुन ने कहा—महाराज! आज मैं सत्यजित् को आपकी रक्षा का भार सौंपता हूँ; वही आपकी रक्षा करेंगे। इनके जीते जी आचार्य अपनी प्रतिज्ञा पूरी न कर सकेंगे। यदि दैवयोग से सत्यजित् वीरगति को प्राप्त हों तो फिर आप लोग युद्धभूमि में न ठहरिएगा।

सञ्जय कहते हैं—यह सुनकर महाराज युधिष्ठिर ने प्रीति-प्रफुल्ल नेत्रों से अर्जुन को देखकर गले से लगाया और वारम्बार आशीर्वाद देकर जाने की अनुमति दी। भूखा सिंह जैसे भूख मिटाने के लिए मृगों के झुण्ड की ओर झपटता है वैसे ही अर्जुन त्रिगर्त देश की सेना की ओर वेग से चले। इसी अवसर में दुर्योधन के क्रुद्ध सैनिकगण अर्जुन-परित्यक्त युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़े। अब दोनों ओर के योद्धा लोग वैसे ही महावेग से भिड़ गये जैसे वर्षाकाल में गङ्गा और सरयू वेग के साथ समुद्र में जा मिलती हैं। ४९

अठारहवाँ अध्याय

अर्जुन और संशप्तकगण का युद्ध

सञ्जय कहते हैं—महाराज! उधर संशप्तकगण समतल भूमि में ठहरकर, प्रसन्नतापूर्वक रथों का अर्धचन्द्राकार मोर्चा बनाकर, अर्जुन को आते देख हर्ष के साथ चिल्लाने और सिंहनाद करने लगे। वह शब्द चारों ओर और अन्तरिक्ष भर में भर गया। किन्तु चारों ओर मनुष्यों की भारी भीड़ थी, इस कारण उसकी प्रतिध्वनि नहीं हुई। अर्जुन ने उनको अत्यन्त प्रसन्न देखकर कृष्णचन्द्र से मुसकाकर कहा—हे वासुदेव! इन मरने के लिए तैयार त्रिगर्तदेश के लोगों को देखिए। ये लोग रोने की जगह प्रसन्नता और हर्ष प्रकट कर रहे हैं। अथवा इसमें सन्देह नहीं कि वे यह समझकर हर्ष प्रकट कर रहे हैं कि कापुरुषों के लिए दुष्प्राप्य उत्तम लोक उन्हें, युद्ध में मरने से, प्राप्त होंगे। अब त्रिगर्त लोगों की विशाल सेना के पास पहुँचकर अर्जुन ने बड़े ज़ोर से सुवर्णभूषित 'देवदत्त' शङ्ख बजाया, जिससे सब दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। संशप्तकगण की सेना उस शङ्ख के भयानक शब्द को सुनकर अत्यन्त शङ्कित और पत्थर की मूर्ति की तरह चेष्टारहित हो गई। उनके घोड़े डर से आँखें फाड़कर, कान खड़े करके, पैर और गर्दन समेटकर एक साथ रक्त उगलने और मल-मूत्र-त्याग करने लगे। कुछ समय के बाद संशप्तकगण होश में आये। उन्होंने अपनी सेना को सँभाल करके अर्जुन पर लगातार बाण बरसाना शुरू किया। अर्जुन ने संशप्तकों के चलाये तीक्ष्ण हज़ारों बाणों को केवल पन्द्रह बाणों से राह में ही टुकड़े-टुकड़े कर डाला। तब संशप्तकों में से हर एक ने अर्जुन को दस-दस बाण मारे। अर्जुन ने भी उनको तीन-तीन बाण मारे। अर्जुन को फिर उन्होंने पाँच-पाँच बाण मारे। अर्जुन ने उसके उत्तर में फिर दो-दो तीक्ष्ण बाण मारकर उनको घायल कर दिया। संशप्तकगण ने फिर कुपित होकर, जैसे जलधाराएँ तालाब को भर देती हैं वैसे ही, तीक्ष्ण बाणों की वर्षा से श्रीकृष्ण और अर्जुन सहित उनके रथ को पाट दिया। वन के बीच जैसे भौंरों की कतारें फूले हुए वृक्ष पर गिरती है वैसे ही उस समय अर्जुन के ऊपर हज़ारों बाण गिरने लगे। १०

अब सुबाहु ने बड़े, भारी और तीक्ष्ण लोहमय तीस बाण अर्जुन के किरीट में मारे। स्वर्णपुङ्खयुक्त बाण किरीट-मुकुट में लगने से अर्जुन उदित दिवाकर से, और सुवर्ण के अलङ्कारों से अलङ्कृत से, जान पड़ने लगे। तब अर्जुन ने भल्ल बाण मारकर सुबाहु का दृढ़ हस्तावाप (हाथों के बचाव के लिए पहना जानेवाला) काट डाला। अर्जुन सुबाहु पर सहस्रों बाणों की वर्षा करने लगे। तब सुशर्मा, सुरथ, सुधर्मा, सुधन्वा और सुबाहु ने अत्यन्त कुपित होकर दस-दस
२० बाण अर्जुन को मारे। अर्जुन ने उन सबको तीक्ष्ण बाणों से घायल करके भल्ल बाणों से उनकी ध्वजाएँ काट डालीं। अर्जुन ने क्रुद्ध होकर सुधन्वा का धनुष काटकर रथ के घोड़े मार डाले, और उसका शिरस्त्राण-शोभित सिर पृथ्वी पर काट गिराया। इससे सुधन्वा के अनुचर अत्यन्त विह्वल होकर भागकर दुर्योधन की सेना के पास जा खड़े हुए। जैसे सूर्यदेव अपनी किरणों से अँधेरे को नष्ट कर देते हैं वैसे ही वीर अर्जुन कुपित होकर, लगातार बाण बरसाकर, त्रिगर्तसेना का संहार करने लगे। त्रिगर्तसेना के लोग शङ्कित और छिन्न-भिन्न होकर रक्षक की खोज में इधर-उधर भागने लगे। संशप्तकगण अर्जुन को कोप से अत्यन्त अधीर देखकर बहुत ही डरे। अर्जुन के बाणों से घायल होकर वे लोग भयातुर मृगों के समान मोहाभिभूत होने लगे। त्रिगर्तराज सुशर्मा ने क्रुद्ध होकर संशप्तकगण से कहा—वीरो! डरकर भाग खड़े होना तुम लोगों का कर्तव्य नहीं है। तुम लोग दुर्योधन के सामने वैसी भयङ्कर शपथ खाकर यहाँ लड़ने आये हो। अब इस तरह रण से भागकर वहाँ प्रधान-प्रधान वीरों से क्या कहोगे? उन्हें क्या मुँह दिखाओगे? भागोगे तो लोग क्या तुमको हँसेंगे नहीं? अतएव तुम सब मिलकर यथाशक्ति युद्ध करो। मृत्यु का क्या डर है?

सब सैनिकगण सुशर्मा के उत्साहवाक्य सुनकर लौट पड़े। वे तत्क्षण महाकोलाहल करते हुए, शङ्ख बजाते हुए, हर्ष और सन्तोष के साथ लड़ने के लिए डट गये। संशप्तकगण
३१ और नारायणी सेना जीवन का मोह छोड़कर युद्ध करने लगी।

उन्नीसवाँ अध्याय

अर्जुन के घोर युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं कि महाराज! अर्जुन ने संशप्तकगण को लौटकर आते देख महात्मा वासुदेव से कहा—हे श्रीकृष्ण! झटपट संशप्तकगण के सामने रथ ले चलिए। जान पड़ता है, प्राण रहते ये युद्ध करना न छोड़ेंगे। हे वासुदेव! आज आप मेरे बाहुबल और धनुष का प्रभाव देखिए। रुद्रदेव ने जैसे पशुओं का संहार किया था वैसे ही मैं आज इन संशप्तकगण

का संहार करूँगा। वासुदेव ने अर्जुन के ये वचन सुनकर, मङ्गल-कामना द्वारा उनका अभिनन्दन करके, उनकी इच्छा के अनुसार रथ चलाया। सफ़ेद घोड़ों से युक्त वह रथ आकाशचारी विमान की तरह शोभायमान हुआ। राजन्! देवासुर-संग्राम में इन्द्र के रथ के समान वह अर्जुन का रथ अनेक प्रकार की गतियों से मण्डलाकार घूमने लगा।

तब विविध शस्त्र हाथ में लिये हुए नारायणी सेना ने दम भर में बाण बरसाकर वासुदेव सहित अर्जुन को अदृश्य कर दिया। महावीर अर्जुन ने भी परम कुपित होकर उस युद्ध में दूना पराक्रम प्रकट किया। उन्होंने फुर्ती के साथ गाण्डीव धनुष को हाथ से पोंछकर, क्रोधसूचक भौंहें टेढ़ी करके, 'देवदत्त' शङ्ख बजाया और शत्रुनाशन त्वाष्ट्र अस्त्र छोड़ा। उस अस्त्र के प्रभाव से एक ही अर्जुन के अलग-अलग हज़ारों रूप चारों ओर दिखाई पड़ने लगे। शत्रुपक्ष के योद्धा लोग उन अनेक प्रतिरूपों से ऐसे मोहित हो गये कि परस्पर एक दूसरे को अर्जुन समझकर मारने-काटने लगे। "ये कृष्ण और अर्जुन एकत्र मौजूद हैं," इस तरह कहते-कहते वे लोग माया से मोहित होकर परस्पर प्रहार करने लगे। महाराज! परम दिव्य त्वाष्ट्र अस्त्र से मोहित संशप्तकगण इस तरह परस्पर प्रहार करके नष्ट होने लगे। संग्राम में योद्धा लोग फूले हुए ढाक के पेड़ के समान शोभायमान हुए। अर्जुन के उस अस्त्र ने शत्रुओं को यमपुर भेज दिया और उनके बाणों को भस्म कर दिया। १०

अब अर्जुन हँसकर ललित्थ, मालव, मावेल्लक और त्रिगर्तदेश के योद्धाओं को तीक्ष्ण बाणों से पीड़ित करने लगे। वे सब महावीर भी कालप्रेरित होकर अर्जुन के ऊपर अनेक प्रकार के असंख्य बाण छोड़ने लगे। उन दारुण बाणों से अर्जुन, वासुदेव और उनका ध्वजासहित दिव्य रथ, सब अदृश्य हो गये। इसी अवसर में निशाना ठीक लग जाने से संशप्तकगण आपस में कोलाहल करने लगे। वे लोग श्रीकृष्ण और अर्जुन को विनष्ट समझकर प्रसन्नचित्त हो वस्त्रों को हिलाने लगे। हज़ारों योद्धा भेरी, मृदङ्ग, शङ्ख आदि बजाने और कोलाहल करने लगे। वासुदेव बहुत ही थककर और पसीने से तर होकर अर्जुन से बोले—पार्थ, तुम कहाँ हो? हे शत्रुनाशन, मैं तुम्हें देख नहीं पाता। तुम जीवित भी हो? यह सुनकर अर्जुन ने उसी समय वायव्य अस्त्र छोड़ा, जिससे वे सब बाण उड़ गये। उस अस्त्र से उत्पन्न वायु ने सूखे पत्तों की तरह हाथी, घोड़े, रथ और शस्त्र-अस्त्र आदि के साथ संशप्तकगण को उड़ाना शुरू कर दिया। राजन्, जैसे पक्षियों के झुण्ड वृक्षों पर से उड़ते हैं वैसे ही संशप्तकगण उस वायव्य अस्त्र से उड़ने लगे। अर्जुन इस प्रकार उन्हें, अत्यन्त व्याकुल करके, हज़ारों बाणों से पीड़ित करने लगे। अर्जुन भल्ल बाणों से किसी का सिर, किसी का सशस्त्र हाथ और किसी की हाथी की सूँड़ के समान जाँघें काट-काटकर पृथ्वी पर गिराने लगे। किसी की पीठ के टुकड़े-टुकड़े हो गये, किसी की भुजा के कई खण्ड हो गये, और किसी-किसी की आँख फूट गई। वीर अर्जुन २०

इस प्रकार शत्रुओं को छिन्न-भिन्न करके गन्धर्व नगर के समान सुसज्जित बड़े-बड़े रथों के टुकड़े-टुकड़े और हाथी-घोड़े आदि को विनष्ट करने लगे। कहीं-कहीं पर ध्वजाओं के कट जाने से मुण्डे रथ ठुण्डे ताड़ के पेड़ों के जङ्गल से प्रतीत होने लगे। कहीं पर योद्धा-बढ़िया धनुष-पताका से युक्त, ध्वज-दण्डमण्डित और अंकुशशोभित बड़े-बड़े गजराज वज्रपात से फटे हुए वृक्षयुक्त पहाड़ों के समान विदीर्ण होकर पृथ्वी पर गिरने लगे। चामरशोभित, कवच-धारी घोड़े अर्जुन के बाणों से मरकर आँखें निकालकर अपने सवारों सहित

३१ पृथ्वी पर धमाधम गिर रहे थे। तल-वार और नाराच बाण लगने से जिनके कवच कट गये हैं ऐसे हज़ारों पैदल योद्धा अर्जुन के बाणों से मर-मरकर गिरने लगे। कोई मर गया था, कोई मारा जा रहा था, कोई गिर पड़ा था, कोई गिर रहा था, कोई चक्कर खाकर गिरनेवाला था और कोई गिरकर निश्चेष्ट हो रहा था। उस समय वह युद्धभूमि बहुत ही भयानक हो उठी। युद्धभूमि में एकाएक दौड़-धूप होने से जो बहुत सी धूल उड़ी थी, वह अपार रक्त की वर्षा से बैठ गई। सैकड़ों-हज़ारों कवन्धों से परिपूर्ण होकर वह युद्ध का मैदान बहुत ही भयानक हो गया। उस समय, प्रलयकाल में पशु-संहार करनेवाले रुद्र की क्रीड़ाभूमि के समान अर्जुन का वह भयानक रथ शोभा को प्राप्त हुआ। संशप्तकगण की सेना के हाथी, घोड़े और रथ (के घोड़े) व्याकुल हो उठे। सब शत्रुसेना प्रहार से पीड़ित होकर भी अर्जुन के सामने पहुँचती और मर-मरकर इन्द्रपुरी को जा रही थी। उस समय वह समरभूमि मारे गये महारथियों से परिपूर्ण होकर अत्यन्त शोभित हुई। इधर अर्जुन समर में उन्मत्त हो उठे, उधर द्रोणाचार्य युधिष्ठिर को पकड़ने के लिए उनकी ओर चले। विशाल सुसज्जित सशस्त्र सेना, युधिष्ठिर को पकड़ने की इच्छा से फुर्ती से, द्रोणाचार्य के साथ
३९ चली। उस समय घोर संग्राम होने लगा।

बीसवाँ अध्याय

संकुल युद्ध का वर्णन

सञ्जय कहते हैं—राजन् ! द्रोणाचार्य ने वह रात बिता करके दुर्योधन को बहुत धीरज बँधाया। उधर युधिष्ठिर की रक्षा का काम अन्य वीरों को सौंपकर महावीर अर्जुन संशप्तक-गण को मारने गये, इधर द्रोणाचार्य युधिष्ठिर को पकड़ने की इच्छा से व्यूहरचना-पूर्वक अपनी विशाल सेना साथ लेकर पाण्डवों की सेना की ओर चले। युधिष्ठिर ने देखा कि द्रोणाचार्य अपनी सेना को सुपर्णव्यूह रचकर युद्ध में लाये हैं। तब युधिष्ठिर ने भी मण्डलार्द्धव्यूह अर्थात् अर्द्धचक्राकार व्यूह रचकर उनके विरुद्ध अपनी सेना को सञ्चालित किया। कौरव-सेना का व्यूह इस तरह था कि स्वयं महारथी द्रोणाचार्य उस व्यूह के मुख में स्थित थे। अपने अनुचरों और भाइयों सहित महाराज दुर्योधन उसके मस्तक में स्थित थे। कृतवर्मा और महातेजस्वी कृपाचार्य दोनों नेत्रों के स्थान पर थे। व्यूह के ग्रीवाभाग में भूतशर्मा, क्षेमशर्मा, पराक्रमी करकाक्ष, कलिङ्ग, सिंहल, प्राच्य, शूर आभीर, दशेरक, शक, यवन, काम्बोज, हंस-पथ, शूरसेन, दरद, मद्र और केकयगण हज़ारों हाथी, घोड़े, रथ और पैदल लिये हुए स्थित थे। भूरिश्रवा, शल्य, सोमदत्त और बाह्लीक अक्षौहिणी सेना साथ लिये उसके दक्षिण भाग की रक्षा कर रहे थे। अवन्ती देश के विन्द, अनुविन्द और काम्बोजराज सुदक्षिण अश्वत्थामा के आगे रहकर वाम भाग की रक्षा कर रहे थे। अम्बष्ठ, कलिङ्ग, मागध, पौण्ड्र, मद्रक, गान्धार, शकुन, प्राच्य, पार्वतीय और वसाति-गण पृष्ठभाग की रक्षा कर रहे थे। महारथी कर्ण के पुत्र अपने जातिवालों, बान्धवों और भाइयों सहित बहुत से देशों से आई हुई विशाल सेना साथ लिये उस व्यूह के पुच्छभाग में स्थित हुए। जयद्रथ, भीमरथ, सम्पाति, ऋषभ, जय, भूमिञ्जय, वृष, क्राथ और पराक्रमी निषधराज बहुत सी सेना साथ लेकर उसके वक्षःस्थल में स्थित हुए। हाथी, घोड़े, रथ, पैदल आदि के द्वारा द्रोणाचार्य का रचा हुआ वह सुपर्णव्यूह आँधी से चलायमान महासागर के समान आन्दोलित होने लगा। बड़े-बड़े वीर योद्धा लोग युद्ध की इच्छा से व्यूह के पक्ष-प्रपक्ष-स्थानों से, वर्षाकाल के बिजली से शोभित गरजते हुए मेघों के समान, निकलने लगे। सुसज्जित हाथी पर सवार प्राग्ज्योतिषेश्वर भगदत्त उस व्यूह के भीतर उदयाचल पर स्थित सूर्य के समान लगते थे। सेवकों ने भगदत्त के मस्तक पर फूलमाला से युक्त सफ़ेद छत्र लगाया, जिससे कार्त्तिकी पूर्णिमा को कृत्तिका नक्षत्रयुक्त चन्द्रमा के समान भगदत्त की शोभा हुई। उनका अञ्जनपुञ्ज-सदृश मदमत्त गजराज जलधाराओं से नहा रहे महापर्वत के समान शोभायमान हुआ। देवगण जैसे इन्द्र के आस-पास शोभा को प्राप्त होते हैं, वैसे ही विविध शस्त्र धारण किये हुए, विचित्र अलङ्कारों से शोभित, पहाड़ी राजा लोग भगदत्त के आस-पास शोभित हो रहे थे। ११

उधर धर्मराज युधिष्ठिर ने बहुत ही दृढ़ और दुर्भेद्य सुपर्णव्यूह की रचना देखकर सेना-
२० पति धृष्टद्युम्न से कहा—हे वीर! आज ऐसा उपाय करो जिसमें द्रोणाचार्य मुझे पकड़ न सकें।
धृष्टद्युम्न ने कहा—महाराज! आप निर्भय रहें, द्रोणाचार्य बहुत यत्न करके भी आपको पकड़ न सकेंगे। मैं अपनी सेना और साथियों सहित उन्हें रोकूँगा, उनकी सारी चेष्टा व्यर्थ कर दूँगा। मेरे जीते जी आप किसी तरह की चिन्ता न करें। आचार्य द्रोण मुझको किसी तरह परास्त नहीं कर सकते।

सञ्जय कहते हैं—अब महावीर धृष्टद्युम्न बाणों की वर्षा करते हुए आचार्य के सामने आये। द्रोणाचार्य अपने काल-स्वरूप अशुभदर्शन धृष्टद्युम्न को देखकर बहुत ही अप्रसन्न और उत्साहहीन हो गये। महाराज! उस समय आपके पुत्र दुर्मुख, द्रोणाचार्य को अत्यन्त उदास देखकर, उनका हित और सहायता करने के लिए धृष्टद्युम्न के सामने आये। तब वे दोनों वीर भयानक संग्राम करने लगे। धृष्टद्युम्न ने बड़ी फुर्ती के साथ दुर्मुख को अपने बाणों की वर्षा से ढक दिया और फिर लगातार बाण बरसाकर आचार्य को भी रोका। दुर्मुख ने धृष्टद्युम्न के द्वारा आचार्य को निवारित देखकर फुर्ती से जाकर अनेक चिह्नों से युक्त तीक्ष्ण बाणों के प्रहार से धृष्टद्युम्न को मोहित कर दिया। दोनों वीर इस तरह घोर संग्राम इधर करने लगे, उधर आचार्य द्रोण
३० युधिष्ठिर की सेना पर बाण बरसाने लगे। जैसे मेघमण्डल वायु के वेग से छिन्न-भिन्न हो जाता है वैसे ही युधिष्ठिर की सेना भी छिन्न-भिन्न होने लगी। वह युद्ध क्षण भर ऐसा घोर हुआ कि देखनेवाले दङ्ग हो गये। अन्त को योद्धा लोग उन्मत्त की तरह युद्ध की मर्यादा और नियम आदि तोड़ करके तुमुल युद्ध करने लगे। उस समय दोनों पक्ष के लोग अपने-पराये का कुछ ख़याल न करके जो सामने पड़ा उसी को मारने लगे। [धूल और बाणों से ऐसा अँधेरा छा गया कि] केवल अनुमान और चेतना के द्वारा एक दूसरे को जान सकता था, किन्तु वास्तव में कोई किसी को पहचान नहीं सकता था। वीरों के अङ्गों में चूड़ामणि, निष्क आदि अन्यान्य आभूषण और कनकमण्डित कवच चमक रहे थे, जिनसे वे योद्धा सूर्य के समान प्रतीत होते थे।

बगलों की क़तार से शोभित मेघमण्डल के समान वे चलते-फिरते हुए पताकायुक्त गजराज, घोड़े और रथ अत्यन्त मनोहर देख पड़ते थे। योद्धाओं को योद्धाओं ने मारा, घोड़े घोड़ों से भिड़ गये, हाथियों ने हाथियों को गिराया और रथियों ने रथियों को साफ़ किया। दम भर में हाथियों से हाथी भिड़ गये, और उनमें घोर युद्ध होने लगा। उन मदान्ध हाथियों के दाँतों की टक्कर और शरीर की रगड़ से धूमयुक्त आग प्रकट होने लगी। हाथियों के दांत और हौदों पर की पताकाएँ टूट-टूटकर गिरने लगीं और पूर्वोक्त प्रकार से आग प्रज्वलित हो उठी, जिससे वे गजराज आकाश में बिजली-युक्त बादलों के समान शोभा को प्राप्त होने लगे। जैसे शरद ऋतु के प्रथम आकाश-मण्डल में मेघ छा जाते हैं, वैसे ही उस रणभूमि में चारों ओर हाथी ही हाथी देख पड़ते थे। कोई हाथी घोर चीत्कार कर रहा था, कोई प्रहार से पीड़ित होकर पृथ्वी पर गिर रहा था। कोई-कोई हाथी तीक्ष्ण तोमर और बाणों के प्रहार से पीड़ित हो प्रलयकाल के मेघ की तरह चिल्लाता हुआ पृथ्वी पर गिरकर मर जाता था। कोई हाथी बाण और तोमर के प्रहार से विह्वल और शङ्कित होकर भाग खड़ा हुआ। कुछ हाथी दूसरे हाथियों के दाँतों के कठिन प्रहार से पीड़ित होकर प्रलयकाल के मेघगर्जन के समान भयानक आर्तनाद करने लगे। कोई हाथी दूसरे हाथी के प्रहार से पीड़ित होकर युद्ध छोड़कर भागा तो महावत ने उसको बारम्बार अङ्कुश मारे, जिससे उत्तेजित होकर वह फिर लौट पड़ा और क्रोधान्ध होकर शत्रुसेना को रौंदने लगा। ४१

महावतों में से किसी को दूसरे महावत ने बाण या तोमर मारे और वह मरकर हाथी की पीठ पर से पृथ्वी पर गिर पड़ा; उसके हाथों से अंकुश और शस्त्र छूटकर अलग गिर पड़े। महावतों के बिना ख़ाली हौदा लादे हुए हाथी आर्तनाद करने और परस्पर भिड़कर, छिन्न-भिन्न मेघखण्ड की तरह, पृथ्वी पर गिरने लगे। कुछ हाथी पीठ पर निहत, पातित और पतितायुध योद्धाओं को लादे हुए बेसिलसिले गैंड़े की तरह इधर-उधर फिर रहे थे। कुछ हाथी तोमर, ऋष्टि और परशु आदि शस्त्रों की चोट खाकर आर्तनाद करते हुए, फटे हुए पर्वतशिखर की तरह, धमाधम पृथ्वी पर गिर रहे थे। उनकी पर्वतसदृश देहों के धमाके से पृथ्वीतल एकाएक काँप उठता था और शब्दायमान होने लगता था। मारे गये महावत की लाश लादे हुए पताका-शोभित बड़े-बड़े हाथी मर-मरकर चारों ओर गिरे पड़े थे, जिनसे वह रणभूमि पर्वतमालाओं से घिरी हुई सी जान पड़ती थी। हाथियों पर बैठे हुए महावत रथियों के मारे भल्ल बाणों से आहत और भिन्न-हृदय होकर, अंकुश और तोमर छोड़कर, पृथ्वी पर गिरते देख पड़ते थे। कोई-कोई हाथी लोहमय नाराच बाणों की चोट खाकर क्रौञ्च पक्षी की तरह चिल्लाते हुए दोनों पक्ष की सेना को रौंदते हुए चारों ओर भागने लगे। ५०

उस समय वह रणभूमि छिन्न-भिन्न हाथियों, घोड़ों और रथों से परिपूर्ण तथा मांस और रक्त की भयानक कीचड़ से अत्यन्त दुर्गम हो उठी। बड़े-बड़े हाथी पहियोंदार और बे-पहियों के

बड़े-बड़े रथों को अपने दाँतों से तोड़ते-फोड़ते हुए उन्हें रथियों सहित ऊपर उछालने लगे। रथी वीरों से शून्य रथ, सवारों से ख़ाली घोड़े और हाथी शङ्कित और घबराये हुए चारों ओर भागने लगे। ऐसा संकुल युद्ध हुआ कि पिता पुत्र को और पुत्र पिता को न पहचानकर मारने-काटने लगा। इस तरह अत्यन्त घोर संग्राम होने पर ऐसा हो गया कि किसी को कुछ नहीं जान पड़ता था। रक्त की कीच में लोगों के पैर बित्ता-बित्ता भर धँस जाने लगे। उस समय ऐसा जान पड़ने लगा कि मानों वृक्ष प्रज्वलित दावानल के बीच में गाड़ दिये गये हों। कपड़े, कवच, छत्र और पताका आदि रक्त में संन जाने के कारण सभी कुछ रुधिरमय सा प्रतीत होने लगा। मरे और घायल होकर गिरे अधमरे घोड़े, हाथी, रथ और मनुष्य सब रथों के पहियों से छिन्न-भिन्न और खण्ड-खण्ड होने लगे। वह सेना का समुद्र ऐसा था कि बड़े-बड़े हाथी ही उसका महावेग थे, मनुष्यों की लोथें सेवार सी प्रतीत होती थीं और रथ भयानक आवर्त
६० से देख पड़ते थे। विजयाभिलाषी वीरगण वाहनरूप नौका पर बैठे उसमें नहा करके, निमग्न न होकर, शत्रुओं को मोह से अभिभूत करने लगे। अपने-अपने विशेष चिह्नों से अलङ्कृत वीरगण बाणों से अदृश्य हो उठे। बाण-प्रहार से उनके चिह्न नष्ट हो जाने के कारण कोई किसी को नहीं पहचान सकता था। महारथी द्रोणाचार्य उस भयानक संग्राम में शत्रुओं को
६३ मोहाभिभूत करके राजा युधिष्ठिर की ओर चले।

महाभारत के स्थायी ग्राहक बनने के नियम

(१) जो सज्जन हमारे यहाँ महाभारत के स्थायी ग्राहकों में अपना नाम और पता लिखा देते हैं उन्हें महाभारत के अङ्कों पर २०) सैकड़ा कमीशन काट दिया जाता है। अर्थात् १।) प्रति अङ्क के बजाय स्थायी ग्राहकों को १) में प्रति अङ्क दिया जाता है। ध्यान रहे कि डाकख़र्च स्थायी और फुटकर सभी तरह के ग्राहकों को अलग देना पड़ेगा।

(२) साल भर या छः मास का मूल्य १२) या ६), दो आना प्रति अङ्क के हिसाब से रजिस्ट्री ख़र्च सहित १३॥) या ६।॥) जो सज्जन पेशगी मनीआर्डर-द्वारा भेज देंगे, केवल उन्हीं सज्जनों को डाकख़र्च नहीं देना पड़ेगा। महाभारत की प्रतियाँ राह में गुम न हो जायँ और ग्राहकों की सेवा में वे सुरक्षित रूप से पहुँच जायँ, इसी लिए रजिस्ट्री द्वारा भेजने का प्रबन्ध किया गया है।

(३) इसके प्रत्येक खंड के लिए अलग से बहुत सुन्दर जिल्दें भी सुनहले नाम के साथ तैयार कराई जाती हैं। प्रत्येक जिल्द का मूल्य ।॥) रहता है परन्तु स्थायी ग्राहकों को वे ॥) ही में मिलती हैं। जिल्दों का मूल्य महाभारत के मूल्य से बिलकुल अलग रहता है।

(४) स्थायी ग्राहकों के पास प्रतिमास प्रत्येक अङ्क प्रकाशित होते ही बिना विलम्ब वी० पी० द्वारा भेजा जाता है। बिना कारण वी० पी० लौटाने से उनका नाम ग्राहक-सूची से अलग कर दिया जायगा।

(५) ग्राहकों को चाहिए कि जब किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार करें तो कृपा कर अपना ग्राहक-नम्बर जो कि पता की स्लिप के साथ छपा रहता है और पूरा पता अवश्य लिख दिया करें। बिना ग्राहक-नम्बर के लिखे हज़ारों ग्राहकों में से किसी एक का नाम ढूँढ़ निकालने में बड़ी कठिनाई पड़ती है और पत्र की कार्रवाई होने में देरी होती है। क्योंकि एक ही नाम के कई-कई ग्राहक हैं। इसलिए सब प्रकार का पत्र-व्यवहार करते तथा रुपया भेजते समय अपना ग्राहक-नम्बर अवश्य लिखना चाहिए।

(६) जिन ग्राहकों को अपना पता सदा अथवा अधिक काल के लिए बदलवाना हो, अथवा पते में कुछ भूल हो, उन्हें कार्यालय को पता बदलवाने की चिट्ठी लिखते समय अपना पुराना और नया दोनों पते और ग्राहक-नम्बर भी लिखना चाहिए। जिसमें उचित संशोधन करने में कोई दिक़्क़त न हुआ करे। यदि किसी ग्राहक को केवल एक दो मास के लिए ही पता बदलवाना हो, तो उन्हें अपने हलके के डाकख़ाने से उसका प्रबन्ध कर लेना चाहिए।

(७) ग्राहकों से सविनय निवेदन है कि नया आर्डर या किसी प्रकार का पत्र लिखने के समय यह ध्यान रक्खें कि लिखावट साफ़ साफ़ हो। अपना नाम, गाँव, पोस्ट और ज़िला साफ़ साफ़ हिन्दी या अँगरेज़ी में लिखना चाहिए ताकि अङ्क या उत्तर भेजने में दुबारा पूछ-ताछ करने की ज़रूरत न हो। "हम परिचित ग्राहक हैं" यह सोच कर किसी को अपना पूरा पता लिखने में लापरवाही न करनी चाहिए।

(८) यदि कोई महाशय मनी-आर्डर से रुपया भेजें, तो 'कूपन' पर अपना पता-ठिकाना और रुपया भेजने का अभिप्राय स्पष्ट लिख दिया करें, क्योंकि मनीआर्डरफ़ार्म का यही अंश हमको मिलता है।

सब प्रकार के पत्रव्यवहार का पता—

मैनेजर महाभारत विभाग, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

Printed and Published by K. Mittra at The I[illegible] Ltd [illegible]habad